

मणवानुं ठेकाणुं :

Published by:

श्री. अ. भा. श्वे. स्थानकुवासी  
जैन शास्त्रोद्धार समिति,  
ठे. गरेडियाकुवा रोड, ग्रीन डॉन  
पासे राजकुटा (सौराष्ट्र)

Shri Akhil Bharat S. S.  
Jain Shastroddhara Samiti,  
Garedia Kuva Road, RAJKOT  
(Saurashtra) W. Ry, India.



ये नाम केचिदिह नः प्रथयन्त्यवज्ञां,  
जानन्ति ते किमपि तान् प्रति नैष यत्नः ।  
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा,  
कालोद्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥ १ ॥



हरिगीतच्छन्द



करते अवज्ञा जो हमारीं यत्न ना उनके लिये ।  
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ॥  
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा ।  
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यान में यह लायगा ॥ १ ॥

मूल्य रु. २०-००

प्रथम आवृत्ति : प्रत १२००  
वीर संवत् : २४६२  
विक्रम संवत् २०२२  
धिसवीसन १९६६

: मुद्रक :  
महेश्वर मोहनदास शाह  
नीलकमल प्रिन्टरी, धीकांटा रोड  
अमदावाड.



श्रीमान् सेठ सा. चीमनलालजी सा. ऋषभचंदजी सा. अजीतवाले ( सपरिवार )





## श्रीमान् सेठ साहब चिमनलालजी-रिखवचन्दजी 'जीराबलाका' परिचय

भारतीय संस्कृति के निर्माण में ओसवाल जाति का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस जाति की बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता, शूरीरता और आत्मबलिदान के कारण भारत के उज्ज्वल इतिहास का निर्माण हुआ है। भारतीय स्वतंत्रता के संग्राम में भी इस जाती ने असाधारण योग प्रदान किया है। उदयपुर, जोधपुर बीकानेर सिरोही, किसनगढ़ आदि रियासतों के इतिहास इस जाति द्वारा प्रदर्शित दूरदर्शिता, राजनीतिज्ञता और वीरता से भरी हुई गाथाओं से ओतप्रोत है। इस जाति के वीरोंने अपने देश समाज और धर्म के प्रति जिस भक्ति का परिचय दिया है वह इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षर से अंकित है ! अपने देश और स्वामी के प्रति बफादार रहनेवाले और उनके लिए सर्वस्व अर्पण करनेवाले व्यक्तियों की नामावली में सर्व प्रथम नाम भामाशाह का आता है। इस जैनमंत्री की विपुल सम्पत्ति की सहायताने महाराणा प्रताप को नया जीवन प्रदान किया था, और मेवाड़ के गौरव की रक्षा की थी।

इसी गौरव पूर्ण जाति में श्रीमान् चिमनलालजी एवं रिखवचन्दजी का जन्म हुआ। आप प्रसिद्ध दोसी परिवार के हैं। दोसी यह ओसवाल जाति का एक गोत्र है। कहा जाता है कि वि. संवत् ११९७ में विक्रमपुर में सोनागरा राजपूत हरिसेन रहता था। आचार्य श्री जिनदत्तस्वरिने इसे जैन-धर्म का प्रतिबोध देकर ओसवाल जाति में मिलाया और दोसी गोत्र की स्थापना की। इस गोत्र के नाम को समुज्ज्वल करने वाले अनेक नररत्न हो गये हैं। दोसी परिवार में श्रीमान् भिवखूजी बड़े प्रसिद्ध हुए। आपने महाराणा राजसिंहजी (प्रथम) का प्रधानपद सम्भाला था। आपकी निगरानी में उदयपुर का रणहर राजसमुद्र नामक तालाब का काम जारी हुआ एवं पूर्ण हुआ। इस तालाब के बनवाने में (१०५०७६०८) रुपये खर्च हुए। इस तालाब का पूर्ण होने पर महाराणाराजसिंहजी ने राजसमुद्र के उद्घाटन उत्सव के अवसर पर दोसी भिवखूजी को एक हाथी और सिरोपाव प्रदान कर उनका सम्मान बढ़ाया था। दोसी पद्मोजी ने धर्मस्थानों का उद्धार किया था। बादशाह के फरमान

में उल्लेख है। कहने का सारांश यह है कि दोसी परिवार पहले से ही धार्मिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय कार्यों में उदारतापूर्वक तन, मन, धन से सेवा करता आ रहा है। श्रीमान् सेठ चिमनलालजी एवं रिखवचन्दजी सा. को इसी गौरवशाली गोत्र में जन्म लेने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इन सीधे-सादे दोनों भाईयों को देखकर यह कभी अनुमान नहीं लगाया जा सकेगा कि ये—एक बड़े श्रीमन्त होंगे। तथा श्रीमन्ताई के साथ बड़े दानवीर भी होंगे। मारवाड के इम दानी परिवार की प्रसिद्धि अन्य श्रीमन्तों की तरह चाहे न हो पाइ हो पर सेठ साहव चिमनलालजी एवं रिखवचन्दजी जैन समाज के 'गुदडी में छिपेलाल' हैं। अपनी सम्पत्ति का उपयोग परोपकारी कार्यों के करने में परम उदार हैं।

श्रीमान् चिमनलालजी सा० के पूर्वजों का राजघराने के साथ अच्छा सम्बन्ध रहा है। आप के दादा श्रीमान् गुलाबचन्दजी जोधपुर के रूमप रिवाना तहसील के कोठडी नामक गांव में रहते थे। आप ठिकाने के कोठार के काम को सम्भालते थे, राजकीय जिम्मेदारी के पद पर रहते हुए भी धार्मिक व सामाजिक जनसेवा के कार्यों में भी पूर्ण सहयोग प्रदान करते रहते थे। आपकी राजघराने में एवं समाज में अच्छी - प्रतिष्ठा थी। आप 'जीराबला' के उपनाम से प्रसिद्ध थे। आप बड़े मधुरभाषी एवं मिलनसार प्रकृति के उदारचेता सज्जन थे। आपको एक पुत्र हुआ जिसका नाम प्रेमचन्द रखा। प्रेमचन्दजी की उम्र अभी कोई ज्यादा नहीं हुई थी कि पिताजी की मृत्यु हो गई। पिताजी के अचानक स्वर्गवास से इनपर सारे परिवार के निर्वाह की जिम्मेदारी आ पड़ी। ये बड़े बहादूर थे। पिता के परंपरानुसार चलने वाले कुशल व्यापारी थे। इन्होंने अल्प समय में ही पिता की जैसी प्रतिष्ठा प्राप्त करली और कोठार का काम भी सम्भाल लिया। वि. सं. १९६४ में इनका शुभलग्न जूनाड़ा निवासी श्रीमान् सायबलालजी की सुपुत्री खेतुवाई के साथ सम्पन्न हुआ। खेतुवाई एक आदर्श महिला एवं स्ती साध्वी स्त्री हैं। खेतुवाई जैसी आदर्श पत्नी को पाकर श्रीमान् प्रेमचन्दजी बड़े सुखी थे। इनके दो पुत्र हुए श्री चिमनलालजी और रिखवचन्दजी। किन्तु इस सुख को विधाता नहीं देख सका जब चिमनलालजी पांच वर्ष के थे एवं श्री रिखवचन्दजी १॥ डेढ़ वर्ष के थे तब अचानक ही प्रेमचन्दजी साहव का स्वर्गवास हो गया। इनके स्वर्गवास से

सारा परिवार शोक निमग्न हो गया। बालक और परिवार के सदस्य विलाप विलाप कर रोने लगे। श्रीमती खेतुवाई पर पति द्वियोग का वज्रपात हुआ। ऐसे भयंकर संकट के समय खेतुवाईने असाधारण धैर्य का परिचय दिया। रोने देने में अपना बहुमूल्य समय नष्ट न कर दोनों बालकों के भविष्य को उज्ज्वल बनाने का विचार करने लगी। इधर पति के मृत्यु से आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गई। कोठार के काम से जो थोड़ी बहुत आमदनी होती थी वह भी अब समाप्त हो गई। कर्म की गति बड़ी गहन है। एक आपत्ति का अन्त नहीं हुआ था कि यह दूसरी आपत्ति का आरंभ हो गया। ऐसी विकट स्थिति में भी खेतुवाईने हिम्मत न छोड़ी किन्तु बड़े लाड प्यार से बच्चों का लालनपालन करने लगी। अपने चन्द्र जैसे आनंदप्रद बच्चों को देख कर अपना सारा दुःख भूल जाती थी। यह अपने का अपने बच्चों के सुनहरे स्वप्न में खोजाती थी।

ये दोनों बालक बड़े होते जा रहे थे। माता की ये ही आशा थी। बच्चों का पढ़ना लिखना भी परिस्थिति के अनुकूलतानुरूप होता था। जब श्रीमान् चिमनलालजी दस वर्ष के हुए तब इन्हें अपने पारिवारिक जीवन का भान हो आया। इन्होंने माता के इस बोझ को हलका करने का विचार किया। कोठडी एक छोटा गांव है इसलिये इसमें व्यापार की कोई गुंजाइश नहीं थी। अतः बालक चिमनलालने बाहर जा कर अर्थ उपार्जन का निश्चय किया। माता की आज्ञा प्राप्त कर दस वर्ष के चिमनलाल जी अपने सम्बन्धियों के साथ व्यापार करने के लिए चल पड़े। ये कर्णाटक के 'हिराकेरी' गांव में पहुंचे। इतनी छोटी उम्र में माता का वात्सल्य को छोड़कर अकेले ही अनजाने प्रदेश में पहुंच जाना कम हिम्मत का काम नहीं है। ये वहां की कन्नडी भाषा से अनभिज्ञ थे। बात बात पर मुश्किलें आती थीं किन्तु इन्होंने हिम्मत नहीं छोड़ी अल्प समय में ही इन्होंने स्थानीय कन्नडी भाषा सीख ली। नोकरी से व्यापार में लगे खूब श्रम किया किन्तु भाग्यदेवताने इनका साथ नहीं दिया अन्ततः निराश होकर अपने गांव कोठडी चले आये। यहाँ भी आपने कम परिश्रम नहीं किया। कई तरह के व्यापार करने पर भी आपके पल्ले असफलता ही पड़ी। अशुभ कर्म का अभी उदय था। अन्त में हार थक कर पुनः कर्णाटक के हलगेरी नामक गांव में जाकर कपड़े की दुकान करली। इस दुकान से आपको लाभ नहीं मिला। कमाने के स्थान में आपको लाभ में

नुकसान ही उठाना पड़ा यहाँ तक कि आप कर्जदार हो गये। धन चला गया किन्तु आप में नीति कायम थी। धन से भी आपने नीति को विशेष महत्ता दी। आप को माहुरों का कर्ज शूल की तरह चुभने लगा। आपने हर परिस्थिति में कर्ज से मुक्त होने का निश्चय किया। कर्ज चुकाने के लिए आपने वहाँ नोकरी करली। कर्ज चुका देने पर आप फिर से अपने गांव कोटडी चले आये।

वि. सं. १९८४ में श्री चिमनलालजी का शुभविवाह खण्डपनिवाहिं हिस्मतलालजी सुराणा की सुपुत्री श्री प्यारवाई के साथ सम्पन्न हुआ। विवाह के बाद वि. सं. १९८८ में आप कमाने के लिए अहमदाबाद पधार गये। आप के साथ आप के छोटे भ्राता रिखवचन्दजी साहव भी चले आये थे प्रारंभ में दोनों भाइयों ने दस रुपये प्रतिमास पर नौकरी करली। धीरे धीरे अपनी योग्यता व अपनी प्रतिभा के बल से दोनों भाइयों ने साधारण पंजीमे कपडे की दुकान खोली। आप इस व्यवसाय में साहसपूर्वक अग्रसर हुए, थोड़े ही वर्षों में आप की गणना नगर के प्रतिष्ठित लक्षाधिपति व्यापारियों में एवं प्रमुख व्यक्तियों में होने लगी।

आप के लघु भ्राता श्रीमान् रिखवचन्दजी का शुभविवाह 'अजित' निवासी श्री अन्नराजजी साहव की सुपुत्री पानवाई के साथ सम्पन्न हुआ। आप दोनों का पारिवारिक जीवन बड़ा सुखी है। आपके घर में सम्पन्न और सम्यक्ता का एकसा आदर है। आप दोनों भाइयों का अपसी प्रेम राम लक्ष्मण के प्रेम का स्मरण दिलाता है। परिवार के इस सुखमय जीवन को देखकर श्रीमती खेतुवाई फूली नहीं ममाती। ऐसा आनन्द का अवसर संसार की कम माताओं को ही प्राप्त होता है। इस समय खेतुवाई शरीर से (७५) वर्ष की वृद्धा है, किन्तु हृदय से युवा है। अब भी समय समयपर अपने परिवार को अपने जीवन के मुख्य अनुभवों से मार्ग दर्शन कराती होती हैं। सामायिक प्रतिक्रमण मुनिदर्शन आपके दैनिक जीवन के अंग हैं। आपका प्रायः समय धार्मिक कार्यों में ही व्यतीत होता है। आपका परिवार इस प्रकार है—

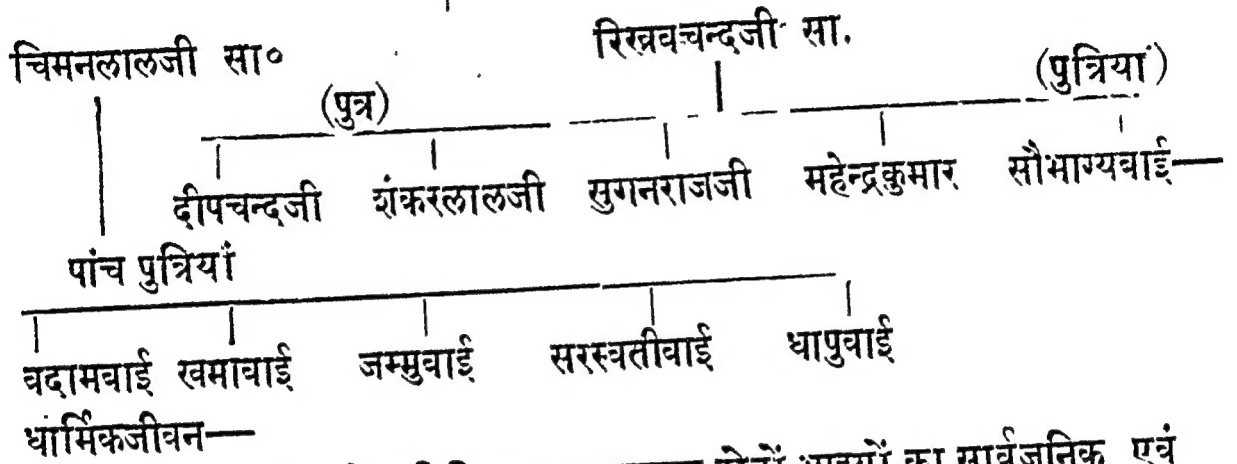
आप के दो पुत्र हैं श्रीमान् चिमनलालजी सा. एवं रिखवचन्दजी सा. श्रीमान् चिमनलालजी साहव की पांच पुत्रियां हैं जिनके नाम ये हैं—१ बदामवाई २ खमावाई ३ जम्मुवाई ४ सख्तीवाई ५ एवं धाणुवाई। श्रीमान्

रिखवचन्दजी साहव के श्री दीपचन्दजी, शंकरलालजी सुगनराजजी एवं महेन्द्रकुमारजी ये चार पुत्र एवं सौभाग्यवाई तथा पुष्पावाई ये दो पुत्रियां हैं।

इस परिवार का वंश वृक्ष इस प्रकार है—

गुलाबचन्दजी सा० (दादा)

प्रेमचन्दजी सा० (पिता)



धार्मिकजीवन—

व्यापारिक जीवन के अतिरिक्त आप भातृद्वय-दोनों भाइयों का सार्वजनिक एवं धार्मिक जीवन विशेष सराहनीय है। आपने सार्वजनिक कार्यों के लिये बहुत अधिक दान दिया है। आपने सर्वसाधारण के लिये समय समय पर अकाल रोग बाढ़ आदि के अवसरो पर भी काफी सहायताएं दी है। आपने कई व्यक्तियों को आर्थिक सहायता देकर धंधे में लगाया है। विद्यार्थियों को आर्थिक सहयोग देकर अपनी विद्याप्रियता का परिचय दिया है। पर्युषणपर्व आदि धार्मिक उत्सव के अवसर पर आसन, पूजनियां माला आदि धर्मोपकरण के साथ साथ अन्य कई उपयोगी वस्तुओं की भी प्रभावना करते रहते हैं। आपने निजी खर्च से वि.सं. २००४ में दीक्षा भी दिलवाई है।

साहित्यप्रेम—

जैनसाहित्य प्रकाशन कार्य में आपकी बड़ी दिलचस्पी है। कई ग्रन्थों के प्रकाशनों में आपका आर्थिक सहयोग रहा है। आप ने अभी अभी अखिल भारतीय श्वे० स्था० जैन शास्त्रोद्धारसमिति राजकोट को दानार्थ ५०००) पांच हजार रुपये प्रदान कर समिति के सन्माननीय सदस्य बने हैं। आपका यह साहित्य प्रेम सराहनीय है। साहित्यशिक्षा के प्रति आप उदार चेताओं का कितना ध्यान है यह उपरोक्त ज्ञान दान बता रहा है।

आपकी दैनिक जीवनचर्या में साप्ताहिक प्रतिक्रमण व्रत, पञ्चव्रताण मुनिदर्शन आदि आवश्यक अंग हैं। इन कामों में आप कभी प्रमाद नहीं करते। प्रतिवर्ष बाहर जाकर मुनिदर्शन का भी समय समय पर लाभ लेते रहते हैं। आप की उदारता सर्वतोमुखी है। आप अपनी जन्मभूमि कोठडी में निजी खर्च से अस्पताल बनाकर सरकार को अर्पण करने की भी उत्कट इच्छा रखते हैं। आपका इस समय निवास मारवाड में अजित गांव जि.जोधपुर में है। आपने वि.सं. २०१३ की साल में कोठडी छोड़ दिया था। आपकी धार्मिक भावना इसी प्रकार उत्तरोत्तर बढ़ती रहे यही शुभ कामना है।





# આધ્યમુરખીશ્રીઓ



શેઠશ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ  
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી શામજીભાઈ વેલજીભાઈ  
વીરાણી-રાજકોટ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર-અમદાવાદ.



શેઠશ્રી રામજીભાઈ શામજીભાઈ  
વીરાણી-રાજકોટ.



વચ્ચે બેઠેલા  
લાલાજી કિશનચંદજી સા. જોડરી  
ઉભેલા સુપુત્ર ચિ. મહેતાખચજી સા. જૈન  
નાના-અનિલકુમાર જૈન (દાયતા)



# આવમુરખીશ્રીઓ



શ્રી વૃજલાલ દુલ્લલજી પારેખ  
રાજકોટ.



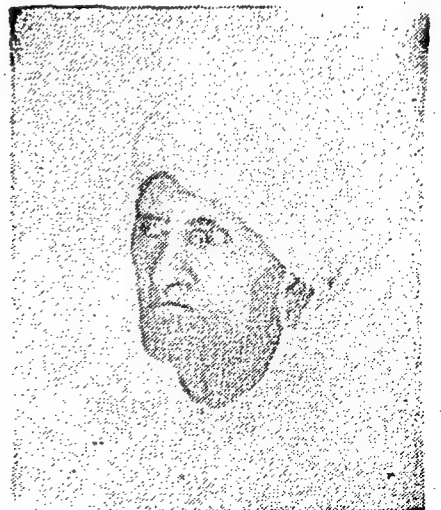
ડોહારી હરગોવિંદ જેયંદભાઈ  
રાજકોટ.



શેઠશ્રી મિશ્રીલાલજી લાલચંદજી સા. લુણિયા  
તથા શેઠશ્રી જેવંતરાજજી લાલચંદ સા.



(સ્વ.) શેઠશ્રી ધારશીભાઈ જીવણલાલ  
બારસી.



સ્વ. શ્રીમાન શેઠશ્રી મુકનચંદજી સા.  
બાલિયા પાલી મારવાડ

# આધ્યક્ષશ્રીઓ



(સ્વ.) શ્રી હરખંદ કાલીદાસ પારિયા  
ભાણવડ.

(સ્વ.) શ્રી રંગજીભાઈ મોહનલાલ શાહ  
અમદાવાદ.



શ્રી વિનોદકુમાર વીરાણી  
રાજકોટ.



(સ્વ.) શ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ  
અમદાવાદ.



શ્રી નર્સિંગભાઈ પંચાલાલભાઈ  
અમદાવાદ.



સ્વ. શ્રી આત્મારામ માણેકલાલ  
અમદાવાદ.

## આવમુરખીશ્રીઓ



સ્વ. શ્રેષ્ઠશ્રી હરિલાલ અનોપચંદ શાહ      સ્વ. શેઠ તારાચંદજી સાહેવ ગેલડા  
અંભાત.      મદ્રાસ.



૧. વચ્ચે બેઠેલા મોટાભાઈ શ્રીમાન્ મૂલચંદજી  
જવાહીરલાલજી અરડિયા  
૨. બાજુમાં બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી અરડિયા  
૩. ઉભેલા સૌથી નાનાભાઈ પૂનમચંદ અરડિયા



શ્રીમાન્ શેઠશ્રી  
સ્વીમરાજજી સા. ચોરડિયા

# राजप्रश्नीय सूत्र भाग दूसरे की विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
१	सूर्याभदेव के देवर्द्धि के संबन्ध में गौतमस्वामी का प्रश्न ... ..	१-४
२	सूर्याभदेव के ऋद्धि के संबन्ध में भगवान् का उत्तररूप कथनमें सूर्याभदेव के पूर्वभवजीव प्रदेशी राजा का वर्णन... ..	५-३८३
३	सूर्याभदेव का आगामिभवका वर्णन... ..	३८३-४४९

॥ समाप्त ॥



## शुद्धि पत्र

सुज्ञ पाठकगण,

सविनय निवेदन है कि शास्त्रों में ग्रुफ और प्रिंटिंग सम्बन्धी कई गलतीयां होना संभवित है, जो सुज्ञ वाचकवृन्द नीरक्षीरन्याय से समझ कर पढलेगे, पर जो शास्त्रीय गलती रह गई है जो देखने में अगर सुज्ञ वाचकजन द्वारा दृष्टिगोचर हुई हैं, इनका शुद्धिपत्र देने में आता है।

सूत्र का नाम	पृष्ठ	पङ्क्ति	अशुद्ध	शुद्ध
समवायङ्ग सूत्र	१६४	५	रामः खलु बलदेवो द्वादशवर्ष सहस्रा- णि सर्वायुषं	रामः खलु बलदेवो द्वादशवर्षशतानि सर्वायुषं
"	"	१६	बारह हजार वर्ष	बार सौ वर्ष
"	"	२८	भार ६७१२ वर्ष	भारसौ वर्ष
ज्ञाताधर्मकथाङ्ग-२६१		१	पहली पंक्ति	'त्रैमासिकीं' पद छूट गया है
सूत्र भा. २	"		पूरी होने पर	सो 'त्रैमासिकीं' यह पद बढाके पढ़ें
"	"	११		आठवीं भिक्षु प्रतिमा के अनन्तर 'प्रथम सात दिनरात प्रमाणवाली नववीं भिक्षु प्र- तिमा' यह पाठ छूटा है सो 'नववीं भिक्षु पडिमा' वहां इतना झोड के पढ़ें
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्रभा. ३,	३९७	१७	प्रवचनसिद्ध	प्रवचनविरुद्ध
"	"	२१	प्रवचनसिद्ध	प्रवचन विरुद्ध
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्रभा. २	१४७	१७	मध्यापान में आसक्त-	निद्राजनक द्रव्य में आसक्त
"	"	२६	मध्यापानभां आसक्त	निद्राजनक द्रव्य भां आसक्त
ज्ञातधर्मकथाङ्गसूत्रभा-३	३३४	३	भगवताऽऽवश्यकै-	भगवताऽऽनुयोगद्वारे
"	"	१७	आवश्यक सूत्रमें-	अनुयोगद्वारसूत्रमें
"	"	१६	आवश्यक सूत्रभां-	अनुयोगद्वार सूत्रभां

अन्तकृदशास्त्र	२९५	१० दसदस	दसअष्ट
"		११	'सत्तमवग्गे तेरसउदेसगा'
			इतना पाठ छूट गया है सो वहां समझ लेवे
आचाराङ्गसूत्रभा. २ १२२	८	नेत्तपरिण्णाणा अपरिहीणा फरस परिण्णाणा अपरि- हीणा	नेत्तपरिण्णाणा अपरि- हीणा जीहपरिण्णाणा अप- रिहीणा फरिस परिण्णाणा अपरिहीणा
आचाराङ्गसूत्रभा-२ २८१	१४	निन्यानवे	अट्टानवे
"	२६	न०वाथु	अट्टाथु
दशाश्रुतस्कध ४३०	२०	कालकर के ग्रैवेयक— आदि	कालकरके देवलोकमें से
"	२६	कालकरीने ग्रैवेयक आदि—	कालकरीने देवलोकभांन
ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रभा. २ ७३०	२१	गुणुशिलक चैत्य (नेन देरासर)	गुणुशिलक चैत्य (उद्यान जगीयो)
उत्तराध्ययनसूत्रभा. ३ १८० १-२	...	तृतीय देवलोक— गतः ततश्चुतो महा- विदेहे केवलिभूत्वा सिद्धिगतिं गमिष्यति	मोक्ष गतः
"	१२, १४, १५	वे चक्रवर्ती तृतीयदेव लोकमें गये वहाँसे चक्कर महाविदेहमें केवलीहोकर सिद्धि पदको प्राप्त करेंगे	वे चक्रवर्ती मोक्ष गये
"	२३-२४	...ते चक्रवर्ती भरीने त्रीण देवलोकभां गया अने त्यांनु आयुष्य पुर्ण करी त्यांनी यवी ने महाविदेहभां केवला थछने सिद्धि पद प्राप्त क्युं	ते चक्रवर्ती मोक्षभां गया
उत्तराध्ययनसूत्रभा. ४ ९२	१४	संयमयोगोंका उल्लंघन होताहै—	संयम योगों का उल्लंघन नहीं होता है
"	२४	संयम योगोंनु उल्लंघन थाय छे	संयम योगोंनु उल्लंघन थतुं नथी

भगवतीसूत्रभा.३	८९९	३	त्रिभागोन	त्रिभागोन
"	"	३-४	पल्योपमं	पल्योपमद्वयं
"	"	१३	तृतीयभागकम एक पल्योपम की	तृतीयभाग कम दो पल्योपम की
"	"	२८	...એક પલ્યોપમ કરતાં ત્રિભાગ ન્યૂન છે	તૃતીય ભાગ કમ છે પલ્યોપમની છે.
भगवतीसूत्रभा.३	८९९	२८	એ પલ્યોપમ કરતાં ત્રિભાગ અધિક	તૃતીય ભાગ અધિક એ પલ્યોપમ
उत्तगाध्ययन	४४८	२	...तपःकृत्वा तृतीय- भवे मुक्तिं गतः	तपः कृत्वा तस्मिन्नेव भवे मुक्तिं गतः ।
"	"	१३	तृतीय भव में मुक्ति लाभ किया	उसी भव में मुक्ति लाभ किया
"	"	२५	ત્રીજા ભવમાં મુક્તિ નો લાભ કરેલ છે	તેજ ભવમાં મુક્તિ નો લાભ કરેલ છે.
दशाश्रुतस्कन्ध	१७४	२	यतस्तै रत्नकृष्टार्द्ध पुद्गल	यतस्तैरुत्कृष्टदेशो- नार्धपुद्गल
"	१७४	१२	देशजन पुद्गल	देशजन अर्ध पुद्गल
"	१७४	१२	देशजन पुद्गल	देशजन अर्ध पुद्गल

दशाश्रुत स्कंध के दसवें अध्ययनमें हिंदी एवं गुजराती में दशों निदानों के प्रकरण में जहां-जहां ग्रैवेयक शब्द है वहां वहां 'सौधर्म' ऐसा पाठ सुधारकर पढ़ना चाहिए.

# राजप्रश्नीयसूत्र भा. २ दूसरेका शुद्धि पत्रक

		पेज	पार्श्व
अशुद्ध	शुद्ध	१	१२
मडंबसि	मडंबसि	२	२
कर्वटे	कर्वटे	२	२७
बेने	बेनी	२	२८
वस्तीभ	वस्तीभां	३	१३
देवज्जई	देवज्जई	४	३
भग्यतामुपगता	भोग्यतामुपगता	४	९
कवट	कर्वटे	४	१७
सबन्धिकं	सम्बन्धिकं	४	२२
अमंतेत्ता	आमंतेत्ता	५	१
जणयए	जणवए	५	१
नयरा	नयरी	५	२
सेयावयाए	सेयवियाए	५	१२
दुप्पयच्चउप्पय मियपपसु	दुप्पयचउप्पयमियपसु	५	१५
भगवतम्	भगवंतम्	६	७
के शिवामी	केशिस्वामी	६	११
निवास्थानभूत	निवासस्थानभूत	८	२४
चडे	चंडे	८	२६
अपड	आ	९	४
उत्कोचलांच	उत्कोचन	९	१६
उत्कोच-लांच	उत्कोचन	१०	१९
पटं जइ	पउंजइ	११	२
बहवेन	बहुत्वेन	१२	३
व्यापारतेन	व्यापारस्तेन	१२	२५
इष्टान्	इष्टान्	१२	२९
तस्स ण	तस्स णं	१३	७
अनुरद्धा	अनुरक्ता	१३	७
प्रमयुक्ता	प्रेमयुक्ता	१३	११
पुत्त	पुत्ते	१३	१३
यावत् शब्द प्रकट	यावत् शब्द यह प्रकट	१४	



અંતપુરુષં	અંત:પુરુષં	૧૫	૨૬
શાસ્ત્રામતિ	શાસ્ત્રેહામતિ	૧૦	૧
ક્રમબ્ધ	ક્રમબ્ધ	૧૦	૨૬
નિશ્ચયોભ	નિશ્ચયોભાં	૧૭	૩૧
કાર્યા મેં	કાર્યોં મેં	૧૮	૧૦
કથા	કથા	૧૮	૧૭
નિશંકપણે	નિ:શંકપણે	૧૮	૨૫
સકલાર્થનો	સકલાર્થનો	૧૯	૨૫
આયાગપ્રયોગ:	આયોગપ્રયોગ:	૨૦	૨
સપ્રયુક્ત:	સંપ્રયુક્ત:	૨૦	૪
મોજનાવશિષ્ટ	મોજનાવશિષ્ટે	૨૦	૫
શુશ્રૂષાદિ	શુશ્રૂષાદિ	૨૧	૧૭
અદૃષ્ટ	અદૃષ્ટ	૨૧	૨૫
તેણ	તેણ	૨૨	૧
સમૃદ્ધં	સમૃદ્ધ	૨૨	૧૮
જિતશત્રું નામ	જિતશત્રુનામ	૨૩	૨
ઉત્તરપોરસ્ત્યે	ઉત્તરપૌરસ્ત્યે	૨૩	૧૦
જિયસત્	જિયસત્ત	૨૩	૧૭
જિતશત્ર	જિતશત્રુ	૨૩	૧૯
જસા	જૈસા	૨૩	૨૧
અન્તેવાસાવ	અન્તેવાસીવ	૨૪	૧
પ્ર જિયસત્તસ્સ	જિયસત્તુસ્સ	૨૪	૮
પ મૂલ્ય—	મૂલ્યાર્થ	૨૪	૧૮
જિતશત્રાઃ	જિતશત્રો:	૨૫	૨
રાયકજ્ઞાણય	રાજકજ્ઞાણિય	૨૫	૨૦
વયાસા	વયાસી	૨૬	૮
પચ્ચપ્પિણહા	પચ્ચાપ્પિણહ	૨૬	૧૦
મહત્થ જાવ	મહત્થં જાવ	૨૭	૮
અભિમતરિયા	અભિમતરિયા	૨૭	૮
ત મહત્થં	તં મહત્થં	૨૭	૧૧
ચાઉઘંટ	ચાઉઘંટં	૨૮	૧૬
અનેત	અનેક	૩૦	૨૫
પરમ સૈમનસ્થિત	પરમ સૌમનસ્થિત	૩૨	૨૫

	पेज	पंक्ति
अशुद्ध	३३	२
काटुम्बक पुरुषान्	३३	८
सकङ्कठावतंसकं	३३	२०
शरशतद्वात्रिंशत्तूण	३३	३०
दोनोँ और	३४	१
स तोरणवरयुक्त	३४	२
सा है	३५	१४
था३	३५	२४
दूध्यक्षत दर्वाङ्कुरादीनि	६६	२
आरापण किया	३६	११
आयुध दसे	३७	१३
यत्रैव	३८	३
केकयाद्ध	३८	१३
जितश	३८	२१
जियसत्तस्स	३९	४
सावत्थाए	३९	६
० १०६	३९	१४
स्य	४०	१
श्रावत्स्या	४०	४
उपाग ति	४०	५
आद	४०	६
कुशल प्रभ्रादि	४०	८
सारहि	४०	२१
चउग्वंटं	४०	२९
जिमितभुक्तात्तराग	४१	२
प्रतोच्छति	४२	२२
एवं	४२	२२
टीकाथं	४२	३१
पञ्चविधन्	४३	३
जियम	४३	९
जेणव	४३	१७
दोनोँ ओर		
स तोरणवरयुक्त		
ऐसा है		
न्या३		
दूध्यक्षतदुर्वाङ्कुरादीनि		
आरोपण किया		
आयुध पदसे		
यत्रैव		
केकयाद्ध		
जितशत्रू		
जियसत्तस्स		
सावत्थीए		
विहरइ सू०		
तस्य		
श्रवस्त्या		
उपागच्छति		
आदि		
कुशलप्रश्नादि		
सारहि		
चाउग्वंटं		
जिमितभुक्तात्तराग		
प्रतीच्छति		
एव		
टीकाथं		
पञ्चविधान्		
जियमाए		
जेणेव		

ओयसी	ओयंसी	४४	१२
विद्या धानो	विद्याप्रधानो	४५	२
श्रावस्ती गरी	श्रावस्तीनगरी	४५	५
यत्रव	यत्रैव	४५	६
क्षान्तिप्रधान	क्षान्तिप्रधान	४५	९
सत्यप्रधान	सत्यप्रधान	४	१३
सुहणं	सुहेणं	४५	३०
तृको	पैतृको	४६	८
श्रावती	श्रावस्ती	४६	१२
तथ	तथा	४७	७
निकपटः	निष्कपटः	४८	१
वय	वयं	४९	८
लपरहित्यं	लेपराहित्यं	५१	७
व्य	द्रव्य	५१	३१
शौच छे	शौच छे	५१	३२
सिंघाडग	सिंघाडग	५४	६
उदयावस्था	उदयावस्था	५४	२१
धादिडेनो	डोधादिडेनो	५४	२३
महापथपथेषु	महापथपथेषु	५५	१२
जनोत्कलिकेति व	जनोत्कलिकेति वा	५५	१३
जनोर्मिरिति वा	जनोर्मिरिति वा	५५	१४
सारथि तं	सारथिस्तं	५६	१
लगां के	लगां के	५६	७
निभि	निमित्ते	५७	२८
महर्द्धिर्महर्द्धि	महर्द्धिर्महर्द्धि	५८	१
चतुपथ	चतुष्पथ	५९	११
मनुयां	मनुष्यों	५९	२०
लाथे	लाथे	५९	२०
इत्यारभ्य	इत्यारभ्य	६०	१
पजलि	पंजलि	६०	१२
गतोग्रेग्रु	गतोग्रेग्रु	६१	४

	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
अशुद्ध	वृंदावन्दएहि	६४	४
वदाविदएहि	करतलपरिगृहीतं	६४	१०
करतलपरिगृहीतं	श्रावस्त्यां	६४	११
श्रावस्त्यां	देवानुप्रिय !	६५	२
देवानुप्रिय !	व्याख्यातप्रायमिति	७०	२
व्याख्यातप्रायमिति	सव्वाओ	७०	६
सव्व ओ	दिसिं	७०	८
दिसिं	सव्वाओ	७०	१८
सव्वओ	सव्वाओ	७०	१८
सव्वओ	सव्वाओ	७०	१९
सव्वओ	सव्वाओ	७०	१९
सव्वओ	सव्वाओ	७०	१९
श्रूत्वा	श्रुत्वा	७२	६
अवितहमेय	अवितहमेयं	७३	३
धन्न	धन्नं	७३	८
चत्त सारही	चित्ते सारही	७३	१७
केशिन	केशिनं	७३	२२
गिहिधम्म	गिहिधम्मं	७३	१६
पाव्वयणं	पाव्वयणं	७४	२९
विच्छर्ध	विच्छर्ध	७६	१
शकोमि	शक्नोमि	७६	३
मैं ता	मैं तो	७६	१७
सातत शिक्ष	सात शिक्षा	७६	१८
न्देहरारतम्	सन्देहसहितम्	७९	१
एव	एवं	७९	१०
अश्वदिको	अश्वदिको	७९	१९
परिस्थिति	परिस्थिति	८०	१८
प देशाशिक	देशावकाशिक	८१	१३
प्राणुतपातथी	प्राणुतिपातथी	८१	२२
धल्ल पसरभाणु	धल्ल परिभाणु	८१	२३
अश्वरथस्तैव	अश्वरथस्तत्रव	८२	१०

अशुद्ध	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
गंधव्व	गंधव्व	८२	२
अट्टिमजपेमाणु-	अट्टिमिज्जपेमाणु-	८२	१०
अयं	अयं	८२	११
पुच्छणेणं	पुच्छणेणं	८२	१५
जियसत्तणा	जियसत्तुणा	८२	१७
श्रमणापासको	श्रमणोपासको	८३	१
अथुं	अथुं	८३	२६
पावथणाआ	पावयणाओ	८३	२८
निअत्थ	निअत्थ	८४	२६
परिपुष्णं	परिपुष्णं	८५	१३
फासुएसणिज्जेणं	फासुएसणिज्जेणं	८५	२७
पौपधोपयासैः	पौपधोपवासैः	८६	१
काङ्क्षारहितः	काङ्क्षारहितः	८८	६
चतुर्दश्यष्टमी पौर्णमास्यः	चतुर्दश्यष्टमी पौर्णमास्यः	८८	३
पौपध	पौपध	९१	१८
मुहुर्मुहुस्वलोकयन्	मुहुर्मुहुस्वलोकयन्	९२	६
विहरात	विहरति	९२	६
कयाइ	कयाइ	९२	७
सारहा	सारही	९२	११
छत्तेणं	छत्तेणं	९२	१६
अ भंते	अहं भंते !	९३	१६
पसिस्स	पसिस्स	९३	१९
पाउग्गहण	पाउग्गहणं	९४	२०
पुरसवग्गु	पुरिस्सवग्गु	९५	५
पहिले	पहिले-	९७	१७
महत्थ	महत्थं	९९	५
हता	हंता	९९	१०
अभिगमणिज्ज	अभिगमणिज्जे	९९	१०-११
परिवसति	परिवसंति	९९	१२
महार्थं	महार्थं	१००	२

अढाई	आढाई	१००	७
ष्येसिस्स	पएसिस्स	१००	१२
योग	योग्य	१०१	१३
	हंता	१०१	२६
हे चित्ते	हे चित्र	१०२	१०
रीसृपों	सरीसृपों	१०२	११
सो सग्गे	सोपसग्गे	१०२	१४
अलिमभनाय	अलिगभनीय	१०२	२३
	बहूनां द्विपदचतुष्पद—		
	मृगपशुपक्षिसरीसृपाणाम्	१०४	१
	द्विपदादयः	१०४	१
	पक्षिसरीसृपाणां	१०४	७
पक्षसरीसृपाणा	तद्वनप्रवेशरूपोऽर्थः	१०४	१०
तद्वनप्रवेशरूपोऽर्थः	कुमारसमणं	१०४	२०
कुमारसमणं	पज्जुवासिस्सति	१०४	२३
पज्जुवासिस्सति	अधर्मिष्ठः	१०४	२८
उधामिष्ठः	पीठफलकसेज्जासं	१०५	१
पीठलगसेज्जासं	युष्माकं	१०५	५
युष्माकं	नमंसिष्यंति	१०५	७
नमंसि यष्यंति	प्रातिहारिकेण	१०५	८
प्रतिहारिकेण	तुब्भं	१०५	१२
वुत्तुभं	तत्र	१०६	१२
त	सम्मानयिष्यन्ति	१०६	२९
सम्मानयिष्यन्ति	खाद्यं स्वाद्यं	१०७	३
खाद्यं स्वाद्यं	मज्झं	१०७	१५
मज्झं	यत्रैव	१०८	६
यत्रैव	कुमारसमणस्स	१०८	२३
कुमारसमणस्स	केकयाद्धंभां	१०८	२८
केकयाद्धंभां	दूइज्जमाणे	११०	६
दूइज्जमाणे	पाडिहारिणं	११०	२७
पाडिहारिणं	इत्यादि	१११	१
इत्यादि			

मृगवगम्	मृगवनम्	१११	१३
विणयेणं	विणएणं	१११	२६
नयरि	नयरिं	११२	१४
यत्रव	यत्रैव	११५	१
वरतरनी संपउत्तेहिं	वरतरुणी संपउत्तेहिं	११५	१८
गह	गिहे	११५	२४
वरतरणी संपउत्तेहिं	वरतरुणी संपउत्तेहिं	११५	३०
तत्रव	तत्रैव	११६	२
श्रावस्ती	श्रावस्तीं	११६	३
समापात्	समीपात्	११७	१
ससुपविष्टः	ससुपविष्टः	११७	१२
	कामभोगान्	११७	१७
	प्रत्यनुभवन्	११७	१७
सावत्याआ	सावत्थीओ	११८	२
केशीकुमार मणः	केशीकुमारश्रमणः	११८	७
वस्त्या	श्रावस्त्या	११८	८
श्वेदाविका	श्वेतविका	११८	९
कंसिकुमारसमणे	केसिकुमारसमणे	११८	२१
डो०४३	डे०४३	११८	२४
कुमार मणो	कुमार श्रमणो	११९	४
व्याख्या	व्याख्या	११९	१८
केशाकुमार श्रमण	केशीकुमारश्रमण	११९	१८
डे०४३	डे०४३	११९	२२
शृङ्गाटक	शृङ्गाटक	१२०	१४
णामं गायं	णामं गोयं	१२१	१४
अवकमंति	अवकमंति	१२१	१४
पूर्वानुपूर्वी	पूर्वानुपूर्वी	१२३	४
जसणं	जस्सणं	१२३	१५
विहरइ	विहरइ	१२३	२९
विउल	विउलं	१२४	९
जुत्तमेव	जुत्तामेव	१२४	११

	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
अशुद्ध	सज्जयं	१२४	१३
सज्जय	प्रासादपीठा	१२५	२
प्रा दपीठा	पग	१२५	१८
पण	इदयभां	१२५	२३
इदयभां	इदय	१२५	२४
इदय	पडिविसज्जे	१२६	१८
पडिविसज्जे	भृशवनोद्यधान	१२६	२५
भृशवनोद्यधान	विषुलं जीवियारिहं	१२६	३०
वि उलं जीवियारिहं	उसने	१२७	७
उ सने	पच्चप्पिणेह	१२७	१०
पच्चप्पिणेह	घंटोंवाले	१२७	१४
घंटोंवाले	हियए	१२७	३०
हियए	घंटोंवाला	१२८	१२
घंटोंवाला	इदय	१२८	२०
इदय	उद्यु	१२८	८
उद्यु	वहुणं	१२८	१३
वहुणं	परमसौमनस्यितः	१३०	१३
परमसौमनस्यितः	बहुगुणतरम्	१३०	१९
बहुगुणतरम्	आरामगयं वा	१३०	१९
आरामगयं वा	तं चेव	१३१	१०
तं चेव	नो लभइ	१३२	३
नो लभइ	केवलपन्नतं धम्मं	१३२	८
केवलपन्नतं धम्मं	केवलपन्नतं	१३२	१२
केवलपन्नतं	खाद्यस्वाद्येन	१३२	२१
खाद्यस्वाद्येन	छत्तेण	१३२	२३
छत्तेण	माहणं	१३५	१
माहणं	णं	१३५	१८
णं	आरामगतं	१३५	२१
आरामगतं	उवस्सगयं	१३५	२९
उवस्सगयं	पथुपासना	१३६	२
पथुपासना		१३६	१९
		१३६	२५



अशुद्ध	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
अर्थी	अर्थी	१३७	२७
विजानाहि	विजानीहि	१३८	३
त्र	तत्र	१३८	५
जीवा जावादि	जीवा जीवादि	१३९	९
पदार्थी	पदार्थी	१३९	१७
श्रमण	श्रमण	१४०	१३
दैवत	दैवतं	१४१	१
महानेन	माहनेन	१४१	८
उसका	उसकी	१४१	१३
मरणतायै	श्रवणतायै	१४२	१
चित्त	चित्ते	१४३	१२
टीकायै	टीकायै-	१४३	२८
चाउग्घटे	चाउग्घटे	१४४	४५
दिसि	दिसि	१४४	५
मानेप्याम	मानेप्यामि	१४४	१०
प्रदेशी	प्रदेशी	१४५	११
सारहिं	सारहिं	१४५	१२
धम्मणाइकरवमाणा	धम्ममाइकरवमाणा	१४५	१९
अयस्य	अवस्य	१४७	१९
नि सस्थाने	निवासस्थाने	१४७	२७
एयमाणत्तिय	एवमाणत्तियं	१४८	१-२
ए होउ	एवं होउ	१४८	१२
एत खलु	एतत्खलु	१४९	५
तं एहणं	तं एएणं	१४९	१८
तं आसे	ते आसे	१४९	१८
तं एइणं	तं एएण	१४९	३०
तं आसे	ते आसे	१४९	३०
रा किं	रात्रिकं	१५३	१०
राणि	रात्रिक	१५३	१९
दच्च	दच्चं	१५३	२९

शुद्धप्रावे । ।  
 चि सारथी  
 गथे।  
 ख स  
 अत्रय  
 अज्ज्ञत्थिए  
 निविण्णाणा  
 निर्विण्णाणं  
 चि सारथिमेव  
 मूर्वा  
 हाता है  
 जा  
 भस्तर वाणा  
 करेति  
 जढ  
 वय  
 पहीसी राया  
 खल  
 पुरि  
 अण्ण जवियत्तं  
 जी तिं  
 अन्नजीवितत्वम्  
 पवि चयं  
 जड जु पवासट्ठि  
 केशा  
 एसे  
 केसा कुमारसमणे  
 प्रासुकैपणीयान्नमात्र विनः  
 श्रुतज्ञान  
 प्ररार  
 केवलवाणे

शुद्धप्रावेश्यानि  
 चित्र सारथी  
 गथे।  
 खल्लु स  
 अत्रैव  
 अज्ज्ञत्थिए  
 निविण्णाणा  
 निविण्णाणं  
 चित्रसारथिमेव  
 चित्रसारथिमेव  
 हाता है  
 जो  
 भस्तकवाणा  
 करोति  
 जड्  
 वय्ये  
 पएसी राया  
 खल्लु  
 पुरिसं  
 अण्ण जीवियत्तं  
 जीवितं  
 अन्नजीवितत्वं  
 परिचयं  
 जडं पज्जुवासति  
 केशी  
 एसे  
 केसी कुमारसमणे  
 प्रासुकैपणीयान्न मात्र जीविनः  
 श्रुतज्ञान  
 प्रकार  
 केवलणाणे

१५४	१६
१५४	२०
१५४	३०
१५५	२
१५५	१०
१५७	३१
१५८	२७
१५८	२७
१५९	३
१६२	४
१६२	८
१६२	१४
१६२	२७
१६३	६
१६४	१६
१६४	२४
१६५	१४
१६६	२
१६६	१७
१६६	२१
१६७	३
१६७	११
१६७	१५
१६८	२
१६८	५
१६८	१४
१६८	१८
१७०	५
१७२	१३
१७४	११
१७४	१८

तथा	तद्यथा	१७५	११
आभिनिवो ज्ञानम्	आभिनिवोधिकज्ञानम्	१७६	४
अ विष्टम्	अङ्गप्रविष्टम्	१७६	५
श्रुतज्ञान विषयक	श्रुतज्ञानविषयकं	१७६	५
प्रज्ञप्तं	प्रज्ञप्तं	१७६	९
भिनिवोधिक ज्ञान	आभिनिवोधिक ज्ञान	१७६	१३
अवधि न	अवधिज्ञान	१७६	१९
क्षायोपशमिह	क्षायोपशमिह	१७६	२६
श्रुतज्ञानम्	श्रुतज्ञानम्	१७७	४
तत्	तत्	१७७	६
एतद्रूपं	एतद्रूपं	१७७	८
उपविसामि	उपविसामि	१७८	१३
चित्तेण	चित्तेण	१७८	२७
हेतुः	हेतुः	१७९	२
केसीकुमारश्रम	केशीकुमारश्रमण	१८०	१५
मनाऽमः	मनोऽम	१८५	१
करभरवृत्ति	करभरवृत्ति	१८५	५
त	तं	१८६	२२
अध ए	अधम्मि ए	१८६	२२
स्वभ्यापि	स्वभ्यापि	१८७	१०
शरीर	शरीर	१८७	२२
सरीर	सरीरं	१८७	२९
ना	नो	१८८	१३
मनाऽम	मनोऽम	१८८	१७
विशेषणावशिष्टो	विशेषण विशिष्टो	१८९	५
खल	खलु	१८९	६
पएसि	पएसि	१८९	१४
राय	रायं	१८९	१४
एव	एवं	१८९	१४
सूरियकता	सूरियकता	१८९	१५
तुम	तुमं	१८९	१५

	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
अशुद्ध	ण्हायं	१८९	१६
ण्हाय	च्छित्तं	१८९	१७
च्छित्त	सञ्चालंकार भूसियं	१८९	१७
सञ्चालंकार भूसिय	तुमं	१९०	२
तुम	परियणं	१९०	४
पाग्यणं	तं	१९०	६
त	सम्मं	१९०	११
सम्	णं	१९०	१२
ण	लोगं	१९१	५
लागं	पएसिं	१९१	१३
पएसि	पएसिं	१९१	१५
पएसि	देविं	१९१	१७
देवि	प्रदेशिन्	१९२	४
प्रदेशन्	डंडं	१९२	१०
हंडं	हत्थ भिन्नगं	१९२	२५
हत्थविन्नगं	व्यपरोपयेत्	१९३	१
व्यपरापय	शक्नोति	१९४	६
शक्नोति	शीघ्रमागन्तुं	१९५	१
शाघ्रमागन्तुं	शक्नोति	१९५	१
शक्नाति	शक्नोति	१९६	३
शक्ताति	"	"	५
"	तुमं इम वात	१९६	१२
तुमं सवात्	सूर्यकान्ता देवी	१९८	१
सूर्यकाता देवा	निजक	१९९	४
नि क	नगर्या मधार्मिको	२००	२
मगर्यामधार्मिको	करभरवृत्ति	२००	३
करभरवृत्ति	नो शक्नोति	२००	८
ना शक्नाति	शरीरयो	२०१	१
शरास्या	वयासी	२०१	५
वयासा	अहं	२०१	१३
अह			

अशुद्ध	शुद्ध	पेज	पङ्क्ति
आज्या	अज्या	२०२	४
सरीर	सरीरं	२०२	६
आगतु	आगतुं	२०२	६
अन्न	अन्नं	२०२	८
ना	नो	२०२	१४
वृत्त	वृत्ति	२०४	१
सा क्वाभवदति	सा क्वाभवदिति	२०६	७
इत्यात्राह	इत्यत्राह	२०८	३
वौच	पौत्र	२०८	७
वृत्ति	वृत्ति	२०८	९
"	"	"	१३
त माद्	तस्मात्	२०९	३
दिव्वेहि	दिव्वेहिं	२१०	१४
कामभोगेहि	कामभोगेहिं	"	१४
"	"	"	१७
अज्झाववण्णे	अज्झोववण्णे	२१०	१७
गधे	गंधे	२११	५
ठाणेहि	ठाणेहिं	२११	७
भिगार कडुच्छुय	भिगार कडुच्छुय	२११	१९
धार्मिकी	धार्मिको	२१२	२०
पडिसुणेज्जाहि	पडिसुणेज्जासि	२१२	२५
शीघ्रमागन्तम्	शीघ्रमागन्तुम्	२१३	३
विशेषणोंसे	विशेषणोंसे	२१३	७
देवलाक	देवलोक	२१३	११
हुणोववन्नए	अहुणोववण्णए	२१३	३०
उहे	उन्हे	२१४	१४
दिव्वेहि	दिव्वेहिं	२१४	१८
शक्काति	शक्कोति	२१५	२
अधुनापपन्नक	अधुनोपपन्नक	२१६	२
केश	केशी	२१७	१४

लामं	लागं	२१७	१७
सधिवालेहिं	संधिवालेहिं	२१९	१२
जीवित	जीवितं	२१९	१४
णग्गए	णिग्गए	२१९	२२
अन्न	अन्नं	२१९	२३
भते	भंते	२२०	१
अउकुभीए	अउकुंभिए	२२०	१
अन्न	अन्नं	"	३
अयामयेन	अयामयेन	२२१	३
वारिक	दौवारिक	२२०	८
किञ्चित्	किञ्चित्	२२२	२
जओ ण	जओ णं	२२२	१२
अवादित्	अवादीत्	२२२	५
रोएज्जा	रोएज्जा	२२२	२२
समपन्नाः	सम्पन्नाः	२२४	३
माडम्बक	माडम्बिक	२२४	१५
ग्रवाव	ग्रवाल	२२४	१८
पोयधु	पोयधु	२२४	२७
नाभ्त	नास्ति	२२८	१
काञ्चत्	किञ्चित्	२२८	१
सुण्डु	सुण्डु	२२८	३
भेरिच	भेरिं च	२२९	२६
से तेगं	से णूणं	२३०	२८
वहया	वहिया	२३०	२८
वा जाई	जाव राई	२३०	३१
अंकुण्ठितगतिः	अकुण्ठितगतिः	२३१	१६
सद्दहाहि	सद्दहाहि	२३१	२७
सरीर	सरीरं	२३२	१७
ऐ १	ऐसा	२३३	६
भते	भंते !	२३३	११
जीवयाओ	जावियाओ	२३२	१५

तामयस्कुम्भी	तामयस्कुम्भीं	२३४	१
कृमि कुम्भीं मिव	कृमि कुम्भी मिव	२३४	१
जण्हाणं	जम्हाणं	२३४	३०
पश्यमि	पश्यामि	२३६	४
प्रतज्ञा	प्रतिज्ञा	२३६	१३
सु तिष्ठि	सुप्रतिष्ठिता	२३६	१३
केसकु रसमणं	केसिकुमारसमणं	२३९	२३
सादृश्यम्	सादृश्यम्	२४१	२४१
अचर्मैष्टक दुदुघण	अचर्मैष्टकदुघण	२४३	१६
ता पभू	हंता पभू	२४४	४
अपः जत्तो	अपज्जतत्तो	२४४	८
नायमर्थसंः मर्थः	नायमर्थः समर्थः	२४५	३
ोरिल्लएणं	कोरिल्लएणं	२४५	२४
जैसे	जैसे	२४६	१३
एग	एगं	२४९	९
प्रज्ञा	प्रज्ञा	२४९	१८
गथी	नथी	२४९	२६
मं	महं	"	२७
परिह्वत्तए	परिवहत्तए	२५०	३२
जएणं	जइणं	२५१	२४
उथर	उथन	२५१	३०
प्रभु	प्रभुः	२५२	९
जैसा	जैसा	२५२	१७
पएसि	पएसि	२५३	१९
तरुणा	तरुणो	२५५	१
शिल्पापगतः	शिल्पोपगतः	२५५	१
ना	नो	२५६	२
रोजामम्	राजानम्	२५७	२
वाहयायामुपस्थानशालाया	वाहयायामुपस्थानशालायां	२६२	१६
वाहयायामुपस्थानशालायां	वाहयायामुपस्थानशालायां	२६२	२८
पएस	पएसिं	२६३	१७

		पेज	पङ्क्ति
अशुद्ध	शुद्ध	२६३	२१
जीयस्स	जीवस्स	२६५	२
खल	खलु	२६६	१
पएसा	पएसी	२६६	१
एव	एवं	२६६	१
वयासा	वयासी	२६८	७
पदाना	पदानां	२६९	१०
अम्ह	अम्हं	२७०	४
पा इ	पासइ	"	९
तसि	तंसि	२७०	११
एगत	एगंते	२७०	१३
सकपो	संकप्पे	२७०	१५
संकप्प	संकप्पं	२७१	१
झियायमाण	झियायमाणं	२७१	१
तेसि	तेसिं	२७१	१
उवएमलद्धे	उवएसलद्धे	२७१	९
खाइम	खाइमं	२७१	२२
रायं	रायं	२७२	१
कचित्	केचित्	२७२	१
वनापजीविन !	वनोपजीविन !	२७२	२
ज्यातिश्च	ज्योतिश्च	२७२	२
ज्यातिर्भाजनं च	ज्योतिर्भाजनं च	२७२	८
केइ पुरिसो	केइ पुरिसा	२७३	६
विज्झवेत्त	विज्झवेत्ता	२७५	१२
झियाइ	झियायइ	२७८	१६
वधइ	बंधइ	२७९	१
कराति	करोति	२७९	१
अरणि	अरणिं	२७९	७
आर	और	२७९	१४
तएण	तएणं	२७९	२६



त्वाणच्छसि	त्वमिच्छसि	२८०	५
अग्निपात्	अग्निपात्रे	२८२	१६
पारकरं	परिकरं	२८५	१५
पि वेशयति	परिवेशयति	२८६	२
परिषो	परिषदो	२८७	४
मञ्जे	मज्जे	२८७	१५
वर्तव्यावर्तव्यनिर्णयिकानां-	कर्तव्याकर्तव्यनिर्णयिकानां	२८८	३
वक्तुम्	वक्तुम्	२८८	९
अवहेलहितुम्	अवहेलयितुम्	२८८	१०
योग्याऽग्नि	योग्योऽस्मि	२८८	१२
भा :	भावः	२८८	१३
जाणाम	जाणामि	२८८	१९
अवस्ज्झ	अवरज्झइ	२८८	१९
पाडिलोमं	पडिलोमं	२८९	१०
वामधामेन	वामं वामेन	२९२	१
अनष्ट	अनिष्ट	२९२	९
स्य	यस्य	२९३	४
ऋपपरिपदि	ऋपि परिपदि	२९३	१९
विरुद्धेनत्यर्थः	विरुद्धेनेत्यर्थः	२९३	२९
त	तं	२९४	७
अयमे द्रूष	अयमेतद्रूष	२९४	११
यात्	यावत्	२९५	१
कारणेन	कारणेन	२९५	३-४
यावच्छे न	यावच्छब्देन	२९६	४
प्रतिलाम प्रतिलोमेन	प्रतिलोम प्रतिलोमेन	२९६	५
भङ्गत्रयाक्त	भङ्गत्रयोक्त	२९९	१३
क्व	किं	३०३	२
पएसा	पएसी	३०३	१६
व्यजने	व्येजते	३०४	३
हस्तामलक्ष	हस्तामलक्षवत्	३१२	२३
नातिनिपुणाः	नीतिनिपुणाः	३०८	३

धुकुंधू	कुंधू	३१२	२३
हस्ती	हस्ती	३१३	१
णिच्छिडाइ	णिच्छिडाइ	३१४	८
सर	सतर	३१८	१२
कार शालायाः	कार शालायाः	३१९	३
काट शालायाः	कार शालायाः	३१९	७
त	तं	३२१	१
अह	अहं	३२१	१
एव	एवं	३२१	३
मोक्षमामि	मोक्ष्यामि	३२१	७
समासरणं	समोसरणं	३२१	२७
एव	एवं	३२३	४
अङ्गाढबंधणवद्धे	अङ्गाढबंधणवद्धे	३२३	१९
करोंत	करेंति	३२४	५
तए ण	तए णं	३२५	७
विस्तारवाली	विस्तारवाली	३२६	१३
पासति	पासंति	३२७	२५
जाघ	जाघ	३२७	२८
सुवहं	सुवहं	३२८	८
पडिसुणेति	पडिसुणेति	३२८	१०
तउययारं	तउयभारं	३२८	१३
तत्थण	तत्थणं	३२८	१४
बंध ताए	बंधिताए	३२८	१५
वहुह	वहुहि	३२९	३१
गारंभ	गारंभ	३३०	१०
दासीदासगामहिगवेलकं	दासीदासगोमडिसगवेलकं	३३१	१
प्राथश्चित्ताः	प्राथश्चित्ताः	३३१	२
मानुष कान्	मानुष्यकान्	३३१	४
पचविहे	पंचविहे	३३१	३०
लाह	लोह	३३२	५
उ गच्छाइ	उवागच्छाइ	३३२	१९

प,२थे।	पा२थे।	३३३	२४
अग्राभिकायाः	अग्रमिकायाः	३३५	३
सर्मापे	समीपे	३३६	५
सङ् हो	सङ्ग्रहो	३३६	११
वर्णन	वर्णनं	३३७	५
प्रासादावन्तंसकान्	प्रासादावतंसकान्	३३७	१२
प्रा श्रित्ताः	प्रायश्चित्ताः	३३७	१६
धृतदध्यक्षताः	धृतदध्यक्षताः	३३७	१६
धिलास्यमानाः	विलास्यमानाः	३३७	२२
प्रत्यनुभवता	प्रत्यनुभवन्तो	३३७	२३
अल्पमूल्ये	अल्पमूल्ये	३३७	२६
द्वात्रिंशद्वद्वैः	द्वात्रिंशद्वद्वैः	३३७	३०
तित्मयः	विस्मयः	३३८	२
दुष्टा सानम्	दुष्टावसानम्	३३८	५
अहममि	अहममि	३३८	६
तमाद्धेतोः	तस्माद्धेतोः	३३८	११
अन्तराक्तः	अनन्तरोक्तः	३३८	१३
त	तं	३३८	१७
इच्छाम	इच्छामि	३३८	१७
देवानुप्रि णामन्तिके	देवानुप्रियानामन्तिके	३३९	१
णमंसेज्जा	णमंसेज्जा	३३९	९
सत् ।र	सत्कार	३३९	१२
त्र णामाचार्याणां	त्रयाणामाचार्याणां	३४२	२
जनामि	जानामि	३४२	२
वृत्ति	वृत्ति कल्पयेत्	३४२	५
मदन	मर्दन	३४२	१५
अक्षमत्वा	अक्षमयित्वा	३४२	४
णमंसेज्जा	णमंसेज्जा	३४२	९
सत् ।र	सत्कार	३४२	१२
केशाकुमारश्रमणः	केशीकुमारश्रमणः	३४४	१
प्रदेशा	प्रदेशी	३४४	१

कीदृशी	कीदृशी	३४४	७
खादिमेन	खादिमेन	३४५	३
केसि	केसि	३४५	१३
ए	एवं	३४६	१
कनलं	कहं	३४६	२५
अंतेउर	अंतेउर	३४८	७
परिणतो	परिणतो	३४९	२
म सि	मनसि	३४९	३
इ थमेव	इत्थमेव	३४९	३
प्रि लोम	प्रतिलोम	३४९	६
व्याख्या	व्याख्या	३४९	७
श्रः	श्रयः	३४९	७
शयन नन्तरं	शयनानन्तरं	३५०	४
िशुक	किंशुकः	३५०	७
सौमस्यितः	सौमनस्यितः	३५१	१०
बोधमिति	बोध्यमिति	३५१	१३
स्वकृत तिकूल	स्वकृत प्रतिकूल	३५१	२२
महातिमहालायां	महाति महालायायां	३५२	११
यङ्ग	सङ्ग	३५२	१५
उपदेय	उपदेश	३५२	२२
छरिकं प मुहाणं	सुरिकंतप्पमुहाणं	३५२	२८
पणसिराय	पणसिरायं	३५३	२५
पहात्तरेथ	पहात्तरेथ	३५३	२५
उवसोमेमाणा	उवसोमेमाणा	३५४	४
हासज्जइ	हसिज्जइ	३५४	७
भदन्द	भदन्त	३५५	२
णट्टसरलाइवा	णट्टसालाइवा	३५५	२२
रमणिज्जे	रमणिज्जे	३५५	२३
वनपण्डो	वनपण्डो	३५६	१
ना	नो	३५६	६
ना फलिए	नो फलिए	३५६	८

णां	णो	३५६	८
उवसोममाणे	उवसोभमाणे	३५६	९
तयाण	तयाणं	३५६	१६
”	”	”	२८
जयाण	जयाणं	३५६	२९
तयाण	तयाणं	३५७	२५
तजा	तया	३५७	२६
पुाव्व	पुर्व्वि	३५८	२९
केशाने	केशीने	३५९	९
हरितक । ज्य	हरितकराज्य	२५९	२५
जनेक	अनेक	३६१	१६
खादिमं	खादिमं	३६३	१०
अतेउरं च	अंतेउरं च	३६४	८
खल्ल	खलु	३६५	२
विमक्त,नि	विमक्तानि	३६६	१
यद्देनारभ्य	यद्दिनारभ्य	३६६	८
अतेउरं	अंतेउरं	३६६	१३
रज्ज	रज्जे	३६६	१६
रायं	राज्यं	३६७	१२
जपभियं	जप्पभियं	३६७	२४
केणां सत्थ	केणविसत्थ	३६७	१९
राज्यश्रिय	राज्यश्रियं	३६८	२
सेय	सेयं	३६९	७
विषय	विष	३६९	११
पूर्व्वसूत्रे	पूर्व्वसूत्रे	३७०	७
न सब	इन सब	३७०	१७
पडेजागरमाणी	पडिजागरमाणी	३७०	२२
अज्झत्थिए	अज्झत्थिए	३७०	२९
वलं= न्यं	वलं=सैन्यं	३७१	१
घा य थापनगृहम्	घान्यस्थापनगृहम्	३७१	२
विहरते	विहरति	३७१	४

शस्त्र योगेन	शस्त्रप्रयोगेन	३७१	५
मारयिवा	मारयित्वा	३७१	७
स्थापयेत्वा	स्थापयित्वा	३७१	८
कार नया	कारयन्त्या	३७१	९
कोप	कोपं	३७१	२३
जनपद	जनपदं	३७२	१
आ मगतो	आत्मगतो	३७२	९
पाल तो	पालयतो	३७२	४
सुरियकं । देपी	सुरियकंता देवी	३७३	९
निदुरा	निदुरा	३७४	६
दाहकं ते	दाहकंते	३७४	७
विहह	विहह	३७४	७
दुरघ स	दुरध्यास	३७४	१५
पाउन्भू ।	पाउन्भूया	३७४	१८
वित्तज्जर परिगयसरीरे	पित्तज्जर परिगयसरीरे	३७४	२०
डुया	कडुया	३७४	१९
ि हरइ	विहरइ	३७४	२०
करिमश्चित्	कस्मिश्चित्	३७४	२
तस्य	तस्य	३७५	७
नमो थुणं	नमोत्थुणं	३७७	१२
त थ यं	तत्थ गयं	३७७	१४
संपलियंकनिसने	संपलियंक निसन्ने	३७७	२२
अतिए	अंतिए	३७७	३२
त सेव	तस्सेव	३७८	७
प्रा तिपात	प्राणातिपात	३७८	८
उठ	उण्ण	३७८	१७
परिया	परित्याग	३७८	१९
त इ णिं	तं इयाणिं	३७८	२१
प्र थाख्यान	प्रत्याख्यान	३७९	१२
उ हैं	उन्हें	३७९	१२
सतारक	संस्तारक	३७९	२१

सपल्यङ्क	संपल्यक	८०	१
श न	शब्देन	३८०	३
नमस् ।	नमस्कार	३८०	१६
भवान्	भगवान्	३८०	१६
वे	सर्वे	३८१	३
समत	समस्त	३८१	१२
याव जीव	यावज्जीव	३८१	१७
अतिचा ।:	अतिचारा:	३८३	२
सामाधिक:	सामायिक:	३८३	४
सूर्यामे	सूर्याभे	३८३	४
देव वेन	देवत्वेन	३८३	५
माप्तम्	समाप्तम्	३८३	६
अधुनपपेन्नक	अधुनोपपन्नक	३८३	१३
भाषाननः पर्याप्त्या	भाषामनः पर्याप्त्या	३८४	१
सूर्यामदेवेन	सूर्याभदेवेन	३८४	८
उपार्जि :	उपार्जित:	३८४	१०
इंदि पज्जत्तीए	इंदियपज्जत्तीए	३८४	१२
इन्द्रय	इन्द्रिय	३८४	१३
भते	भंते	३८५	१
सेण	से णं	३८५	१८
ण	णं	३८५	२५
सूर्याभ स	सूर्याभस्स	३८५	२२
भवन्त	भवन्ति	३८६	१
आयोगप्रयोगसं युक्तानि	आयोगप्रयोगसंप्रयुक्तानि	३८६	३
िच्छदिंत	विच्छदिंत	३८६	३
अन् मस्मिन्	अन्यतमस्मिन्	३८६	४
कुलणि	कुलाणि	३८६	८
अङ्काइ	अङ्काइ	३८६	८
दिताइ	दिताइ	३८६	८
आ ोग	आयोग	३८६	१४
चा	चार	३८७	१३

गन्धगयसि	गन्धगयंसि	३८९	३
विहकताणं	विहकंताणं	३८९	६
सुकुमाल पाणपाय	सुकुमालपाणिपाय	३८९	६
पियदंसण	पियदंसणं	३८९	८
दारय	दारयं	३८९	८
भविण त	भविण्यति	३८९	१०
व्यतिक्रातेषु	व्यतिक्रान्तेषु	३८९	११
दारगोसि	दारगंसि	३८९	१५
दारगस	दारगस्स	३८९	१८
दिवसे	दिवसे	३९०	६
त	तं	३९१	१
मत्तणाइ	मित्तणाइ	३९१	३
मगल	मंगल	३९२	२७
भोयणमंडवसि	भोयणमंडवंसि	३९३	९
करेगे	करेंगे	३९३	१२
परिभुजेमाणा	परिभुंजेमाणा	३९३	२७
परमसुइभू ।	परमसुइभूया	३९३	३१
बन्धि परिजनस्य	सम्बन्धिपरिजनस्य	३९४	१
मित्र-ज्ञात	मित्र-ज्ञाति	३९४	११
त सेव	तस्सेव	३९४	१०
धम्मे	धम्मे	३९४	२५
करिसति	करिस्संति	३९५	२७
संप्राप्ते	संप्राप्ते	३९६	४
फिरने	फिर वे	३९६	२०
अयश्चित्तौ	प्रायश्चित्तौ	३९७	१
म आस्वादन्तौ	आस्वादयन्तौ	३९७	१०
आद	आदि	३९७	१५
इ रेके	दूसरे के	३९७	२०
कथयतः	कथयिष्यतः	३९८	८
जिनप्ररूपिते	जिनप्ररूपिते	३९८	१०
दृढ प्रतिज्ञ	दृढप्रतिज्ञस्य	३९८	२१



वेल	वे लोग	३९८	२१
वगृहात्	स्वगृहान्	३९९	२
वडभियाह	वडभियाहिं	४००	२
यदिभुजमाणे	परिभुजेमाणे	४००	९
परां गज्जमाणे	परंगिज्जमाणे	४००	१२
खीर धाड ए	खीरधाड ए	४००	२३
वर्वरीभः	वर्वरीभिः	४०१	२
वकुशिका भः	वकुशिकाभिः	४०१	२
हे-वहलीहिं	वहलीहिं	४०१	२७
ध कञ्चुकि	धरकञ्चुकि	४०२	२
अवपाहिज्जमाणे	अवयासिज्जमाणे	४०२	२७
रिक्षिप्तः	परिक्षिप्तः	४०३	२
वहुप्रकारामिः	वहुप्रकारामिः	४०३	८
गिरिकंदरमल्लीण	गिरिकंदरमल्लीणे	४०३	२६
युवति मूहः	युवति समूहः	४०४	८
ह ताद्	हस्तात्	४०४	१२
अन्यया	अन्यस्या	४०४	१४
	गिरिकन्दरालीनः	४०५	२
पाडचारे	पडिचारं	४०६	१
वूह	वूहं	४०६	१
दढप्रतिज्ञं	द्रढप्रतिज्ञं	४०६	८
दढपइणं	दढपइणं	४०६	११
दढप्रतिज्ञ	द्रढप्रतिज्ञ	४०६	१२
तिहिकरणक्खत्त	तिहिकरणक्खत्त	४०६	२३
नेः	नेष्यतः	४०७	१
दूरकं	दारकं	४०७	१
कणतश्च	करणतश्च	४०७	२
तएण	तएणं	४०७	८
गणि ँ हाणाओ	गणियप्पहाणाओ	४०७	९
वथुवीहिं	वत्थुवीहिं	४०७	३०
वथुविज्जं	वत्थुविज्जं	४०८	१४

दृढप्रतिज्ञ	दृढप्रतिज्ञ	४०९	१६
तथाहि	तथाहि	४१२	८
नगरमानम्	नगरमानम्	४१५	२
दृढं जिं	दृढप्रतिज्ञं	४१८	२
संमाणेस्संति	सम्माणिस्संति	४१९	२२
"	"	"	३०
ज्जोव्वणगमणुपत्ते	ज्जोव्वणगमणुपत्ते	४२०	२
परिपक्कं	परिपक्कं	४२२	३
उम्मुक्कवालभाव	उम्मुक्कवालभाव	४२४	१४
खड्गं	खड्गं	४२५	१७
पद्मात्पलमिति	पद्मात्पलमिति	४२६	३
दृढप्रतिज्ञ	दृढप्रतिज्ञ	४२६	९
पउमेइवा	पउमेइवा	४२६	२५
मेत्स्यते	मेत्स्यते	४२७	१
अ गारितां	अतगारितां	४२७	२
ईर्या मिता	ईर्या समितो	४२७	२
तगां ओ	अगाराओ	४२७	९
आजं वसे	आजं वसे	४२७	१७
वद्धित	वद्धित	४२७	१९
भग्गेणं	भग्गेणं	४२७	२९
दृढ कुमार	दृढकुमार	४२८	१०
भणवयण कायजोगे	भणवयण कायजोगे	४२८	३०
वस्त्रभोगेप	वस्त्रभोगेपु	४२९	२
मविण्यति	मविण्यति	४२९	४
ना	नो	४२९	४
श सहस्त्र	शतशहस्त्र	४२९	४
ने पलिप्तं	नोपलिप्तं	४३०	१
सच्चआ	सच्चओ	४३१	४
तृती ।	तृतीया	४३२	८
सवथा	सर्वथा	४३३	२
कायात्सर्ग	कायोत्सर्ग	४३३	२१

कायगुप्तिर्निगद्यते	कायगुप्तिर्निगद्यते	४३३	३३
हांगे	होंगे	४३५	१२
दोनां	दोनां	४३५	१५
समुपपादके	समुपादके	४३७	२
नहीं	नहीं	४३९	१७
कुञ्जर	कुञ्जर	४३९	१०
अर्थात् ईष	अर्थात्—कषाय	४३९	१७
निरवसानम्	निरवसानम्	४४०	८
तजनाः	तर्जनाः	४४३	३
जस्सद्वाए	जस्सद्वाए	४४३	२१
वेयचेरवासे	वंभचेरवासे	४४३	२२
चरिमेहिं	चरिमेहिं	४४३	३३
आमनः	आत्मनः	४४४	३
कदेगे	कादेगे	४४४	१७
इत्यादिकवचनरूपा	इत्यादि वचनरूपा	४४५	७
यस्य कृते	यस्य कृते	४४६	३
सेव भंते !	सेवं भंते !	४४७	१
माग	मार्ग	४४८	१०

॥ समाप्त ॥

॥ श्री शोतरागाय नमः ॥

श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलाल  
व्रतिविरचितया सुबोधिण्याख्यया व्याख्यया  
समलङ्कृतम्

## श्री राजप्रश्रीयसूत्रम्

( द्वितीयो भागः )

गौतमस्वामी पुनः पृच्छति—

मृत्प-सूरियाभेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी सा दिव्वा देव-  
ज्जुई किण्णा लद्धा ? किण्णा पत्ता ? किण्णा अभिसमन्नागया ?, पुव्व-  
भवे के आसी ? किं नामए वा किं गोत्ते वा ? कयरंसि वा गामंसि वा  
नगरंसि वा निगमंसि वा रायहाणीए वा खेडंसि वा कव्वडंसि वा  
मडंवसि वा पट्टणंसि वा दोणमुहंसि वा आगरंसि वा आसमंसि वा  
संवाहंसि वा संनिवेसंसि वा किं वा, दच्चा, किं वा भोच्चा, किं वा  
किच्चा, किं वा समायरित्ताकस्स वा तहारूवस्स समणस्स वा माह-  
णस्स वा अंतिए एगमवि आरियं धम्मियं सुवयणं सुच्चा निसम्म  
सूरियाभेणं देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवज्जुई लद्धा पत्ता  
अभिसमण्णागया ? ॥ सू० ९८ ॥

छाया—मृर्याभेण भदन्त ! देवेन सा दिव्या देवर्द्धिः सा दिव्या देव-  
व्युतिः कथं लब्धा कथं प्राप्ता कथम् अभिसमन्नागता ? पूर्वभवे क आसीत् ?

‘मूरियाभेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी सा दिव्वा इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(मूरियाभेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देविर्द्धि सा दिव्वा  
देवज्जुई किण्णा लद्धा ? किण्णा पत्ता, किण्णा अभिसमन्नागया ?) हे भदन्त !

मूरियाभेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देविड्ढी सा दिव्वा’ इत्यादि

सुत्रार्थ—(मूरियाभेणं भंते ! देवेणं सा दिव्वा देविर्द्धी सा दिव्वा  
देवज्जुई किण्णा लद्धा ? किण्णा पत्ता, किण्णा अभिसमन्नागया ?) हे भदन्त !

કિન્નામકો વા ? કિં ગોત્રો વા ? કનમયિન વા ગ્રામે વા નગરે વા નિગમે  
વા રાજધાન્યાં વા खेटे वा कव्ढे वा मडम्बे वा पत्तने वा द्रोणमुखे वा  
आकरे वा आश्रमे वા સંગ્રાહે વા સન્નિવેશે વા કિં વા દત્ત્વા, કિં વા

સૂર્યામદેવને वह दिव्यदेवर्द्धि वह दिव्य देवद्युति, कैसे लब्ध की, कैसे प्राप्त  
की, अर्थात् किस प्रकार से उपार्जित की ? किस प्रकार से उपार्जित की  
गई वह अपने अपने आधीन को, और कैसे उसने अपने आधीन होने  
के बाद उसे अपने भोग के योग्य बनाया ? (पुत्रसवे के आसी ? किना  
मए वा ? किं गोत्रे वा ? कयरंसि वा ग्रामसि वा ? नगरंसि वा निगमंसि वा  
रायहाणीए वा खेडंसि वा कव्ढंसि वा मडंबंसि वा पट्टणंसि वा दोण-  
मुहंसि वा आगरंसि वा आसमंसि वा संग्राहंसि वा) तथा पूर्वभव में वह  
किस जाति का था ? क्या इसका नाम था ? गोत्र से वह कौन था ?  
तथा किस ग्राम में—वृत्तिवेष्टितस्थान में, किस नगर में—अष्टादशकरवर्जित-  
वस्ती में, किसनिगम में—पञ्चनगर वणिग्जननिवासस्थान में, किस राजधानी  
में—राजाके निवास से युक्त स्थान में किस खेट में धूलिप्राकारप-  
रिवेष्टितस्थान में किस कव्ढ में झुलकप्राकारपरिवेष्टित स्थान में, किस मडम्ब में  
साद्धक्रोशद्वयान्तर्ग्रामान्तररहित स्थान में, किस पत्तन में जलमार्गयुक्तस्थान में, किस  
द्रोणमुख में—जलस्थलमार्गोपेत जननिवास में, किस आकर में—सुवर्णरत्ना-

સૂર્યામદેવે તે દિવ્ય દેવર્દ્ધિ તે દિવ્ય દેવદ્યુતિ કેવી રીતે ઉપાર્જિત કરીને તેને પોતાને  
અધીન બનાવી. અને સ્વાધીન બનેલી દિવ્યદેવર્દ્ધિ વગેરેને તેણે ભોગ થોડ્ય કેવી  
રીતે બનાવી ? (પુત્ર સવે કે આસી ? કિં નામએ વા ? કિં ગોત્રે વા ? કયરંસિ  
ગામંસિ વા નગરંસિ વા નિગમંસિ વા રાયહાણીએ વા खेडंसि वा कव्ढंसि  
वा मडंबंसि वा पट्टणंसि वा दोणमुहंसि वा आगरंसि वा आसमंसि वा  
संग्राहंसि वा) અને પૂર્વભવમાં તે કય બતિનો હતો ? તેણું શું નામ હતું ? તેણું  
ગોત્ર શું હતું ? તે કયા ગામમાં—વૃત્તિ વેષ્ટિત સ્થાનમાં, કયા નગરમાં—અષ્ટાદશ  
કરેમાં લેવામાં આવે નહિ તે વસ્તિમાં, કયા નિગમમાં—વણિગ લોકો જેમાં વધારે  
સંખ્યામાં રહેતા હોય તે નિવાસસ્થાનમાં, કય રાજધાનીમાં—રાજા જે નગરમાં રહેતો  
હોય અને શાસન ચલાવતો હોય તે સ્થાનમાં, કયા ખેટમાં માટીની દીવાલ જેને  
ચોમેર બનેલી છે તેવી વસ્તીમાં, કયા કવ્ઢમાં—ત્રાની દીવાલથી પરિવૃત્ત સ્થાનમાં,  
અઢિ ગાઉ સુધી દૂર દૂર બીજી કોઇ વસ્તી હોય નહીં તેવા સ્થાનમાં  
કયા પટ્ટનમાં—જલમાર્ગ યુક્ત સ્થાનમાં, કયા દ્રોણમુખમાં જલસ્થલ માર્ગોપેતજન-

श्रुत्वा, किं वा कृत्वा, किं वा समाचर्य-कस्य वा तथारूपस्य श्रमणस्य वा माहणस्य वा अन्तिके एकमपि आर्यः धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निशस्य सूर्याभेण देवेन सा दिव्यः देवर्द्धिः दिव्या देवर्द्धिः लब्धा प्राप्ता अभिसमन्वागता ? ॥ मृ० ९८ ॥

‘सूर्याभेण’ इत्यादि।

टीका--हे भदन्त ! सूर्याभेण देवेन सा दिव्या=देवसम्बन्धिनी देवर्द्धिः=देवसम्बन्धिनी सातिशयविमानादि ऋद्धिः कथं=केन प्रकारेण लब्धा=

दिक की उत्पत्तिवाले स्थान में, किस आश्रम में-तापसनिवास स्थान में, किस संवाद में-किसानों द्वारा धान्य की रक्षा के निमित्त निर्मित दुर्गभूमिस्थान में, अथवा किस संनिवेश में-समागतसार्थवाहादि के निवासस्थानमें, किं वा दक्षा, किं वा भोक्षा, किं वा किञ्चा, किं वा समायरिणा कस्य सकणस्स वा तहारूपस्स माहणस्स वा अंति ए एगमवि आयरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म सूरियाभेण देवेण सा दिव्या देवर्द्धि दिव्या देवर्द्धि, लद्धा, पत्ता, अभिसमण्णागया) अलयदान, सुपात्रदान, करुणादानादिकों में से कौन से दान को देकर, आचाम्ल आदि तपो में अथवा अन्य किसी समय में कौन से अरस चिरस आदि आहार को खाकरके, प्रतिक्रमण, प्रमार्जन आदि किस कृत्यको करके अथवा किस प्रकार के शीलदिक का समाचरण करके किस तथारूप श्रमण-निर्ग्रन्थ साधु के, अथवा किस द्वादशव्रतधारी श्रावक के, पास में एक भी तीर्थकर प्रतिपादित प्रापनिवृत्ति-निर्वध वचन सुनकरके एवं उन वचनों को आदेयरूप मानकर हृदय में

निवासमां, क्या आश्रमां-सुवर्णरत्न-वगेरे ज्यांथी नीकणे छे तेवा स्थानमां, क्या आश्रममां-तापस निवास स्थानमां, संवादमां-धान्यनी रक्षा भाटे जेइतोअं जे स्थान विशेष पर दुर्ग रचना करी होय ते वस्तीमां, अथवा क्या संनिवेशमां-सार्थवाडो ज्यां आवीने रहे ते स्थान विशेषमां, (किंवा दक्षा, किंवा भोक्षा, किंवा किञ्चा किंवा समायरित्ता कस्य वा तहारूपस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंति ए एगमवि आयरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म सूरियाभेण देवेण सा दिव्या देवर्द्धि दिव्या देवर्द्धि, लद्धा, पत्ता अभिसमण्णागया) अलयदान, सुपात्रदान, करुणादान वगेरेमांथी क्युं दान आपीने आचाम्ल वगेरे तपोमांथी अथवा गील डेछ वणते क्या अरसविरस वगेरे आहारो अडण करीने, पौषध, प्रतिक्रमण, प्रमार्जन वगेरे कथं विधि करीने अथवा शील वगेरे कथं नतना आयरणोने करीने क्या तथारूप श्रमण-निर्ग्रन्थ साधुनी अथवा क्या द्वादशव्रतधारी श्रावकनी पासथी जेक पणु तीर्थकर प्रतिपादित प्रापनिवृत्ति-निर्वध वचन सांलणीने अने ते वचनोने

उपार्जिता? कथं=केन प्रकारेण प्राप्ता=उपार्जिता सती स्वायत्ती भूता! कथं=केन हेतुना अभिसमन्वागता . अभिमुख्येन सम्=साङ्गत्येन अनु=पश्चात्-स्वायत्ती भवनानन्तरम् आगता=संगतामुपगता ?, तथा-सा दिव्या देव-द्युतिः=देवसम्बन्धिनी शरीराभरणादिकान्तिः कथं लब्धा? कथं प्राप्ता? कथम् अभिसमन्वागता ?, तथा-पूर्व भवे=पूर्व जन्मनि स कः=किञ्जानीय आसीत्? किन्नामको वा स आसीत्? किं गोत्रः=गोत्रेण वा स क आसीत्? तथा--कतमस्मिन् वा ग्रामे-वृत्तिवेष्टिते नगरे-अष्टादशसंरजिते, निगमे-प्रभूततरवणिगृजननिवासस्थाने राजधान्याम्=राज्ञो निवासोपलक्षिते स्थाने वा खेटे-धूलिपाकारपरिवेष्टिते, कवटे-शुलपाकारपरिवेष्टिते, मण्डप्ते-सार्द्धक्रोशद्वयान्त-ग्रामान्तररहिते, पत्तने, जलमार्गयुक्ते स्थाने, द्रोणमुखे-जलस्थलमार्गोपेतं जननिवासे. आकरे=सुवर्णरत्नाद्युत्पत्तिस्थाने, आश्रमे तापसनिवासस्थाने, सन्वाहे-कृषीवलैर्धान्यरक्षार्थं निर्मिते दुर्गभूमिस्थाने, सन्निवेशे-समागतसार्थवाहादिनिवासस्थाने, किं वा-अभयदानसुपात्रदानकरुणादानादिकं : दत्त्वा, किं वा आचामास्लादितपस्तु अन्यममयेऽपि च अरसविरसादिकं भुत्तवा, किं वा-पौषधप्रतिक्रमणप्रमार्जनादिकं कृत्वा, किं वा-शीलादिकं समाचर्य=विधाय, कस्य वा तथारूपस्य श्रमणस्य=निग्रन्थमाधो वा माहनस्य=द्वादशव्रतधारिश्रावकस्य वा अन्तिके=समीपे एकमपि आर्यम्=आर्यसम्बन्धिकं-तीर्थकरप्रतिपादितमित्यर्थः, सुवचनं=पापनिवृत्तिरूपं निरवधवचनं श्रुत्वा=आकर्ष्य, निशम्य=तद्वाक्यमादेयतया ह्यवधार्य सूर्याभेग देवेन सा दिव्या देवर्द्धि दिव्या देवद्युतिर्लब्धा प्राप्ता अभिसमन्वागता? इति ॥ सू. ९८

मूलम्—‘गोयमाइ’ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं असंतेत्ता एवं वयासी

एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्वीवे दीवे भारहे वासे केयइअद्धे नामे जणवए होत्था, रिद्धिथिमियसमिद्धे। तत्थ णं

धारण करके इस सूर्याभदेव ने वह दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देवद्युति उपार्जित कि है? अपने आधीन की है? और अपने भोग के योग्य बनाई है? ॥

टीकार्थ इसका स्पष्ट है ॥ सू० ९८ ॥

आहेयइपथी स्वीकारिने हृदयमां धारण करीने सूर्याभदेवे ते दिव्य देवर्द्धि दिव्य देव-द्युति भेजवी छे? पोताने आधीन बनावी छे? अने पोताना भाटे भोग थोअ बनावी छे.” टीकार्थः—आने स्पष्ट छे. ॥ ९८ ॥

केय इअद्धे जणयए सेयवियाणां नयरा होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव पडिरूवा । तीसे णं सेयावेयाए नयरीए बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए एत्थणं मिगवणे णां उज्जाणे होत्था सब्बोउपपुप्फफलसमिद्धे रम्मं नदणं वण्णप्पगासे सायलाए सुभसुरभितीयलाए छायाए सब्बओचेव समणुवद्दि पासाईए जाव पडिरूवे । तत्थ णं सेयवियाए णगरीए पएसी णां राया होत्था, महया हिमवन्त जाव विहरइ । अधम्मिणं अधम्मिट्ठं अधम्मकखाई अधम्माणुए अधम्मपलोई अधम्मपजणणे अधम्मसीलसमुयायारे अधम्मेण चेव विट्ठि कप्पेमाणे 'हणछिदभिद'—पवत्तए लोहियपाणी पावे चंडे रुद्धे खुद्धे साहसिए उक्कंचण—वंचण—माया—नियडि—कूड—कवड—साइ संपओगवहूले निस्सीले निव्वए निग्गुणे निम्मरे निपच्चक्खाणपोसहोववासे बहूणं दुप्पयचउप्पयमियपसुपपक्खीसिरिसवाणघायाए वहाए उच्छेयणयाए अधम्मकेऊ समट्ठिए, गुरूणं णो अब्भुट्ठेइ, णो विणयं पउंजइ, सयस्स वि यणं जणवयस्स णो सम्मं करभरविट्ठि पवत्तेइ । सू ९९ ।

छाया—गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवत् गौतमम् आमन्त्र्य एवमवादीत्—

‘गोयमाइ’ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी) हे गौतम ! इस प्रकार से श्रमण भगवान् महावीरने भगवान् गौतम को संबोधित करके इस प्रकार कहा—(एवं खलु गोयमा !

‘गोयमाइ’ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं आमंतेत्ता एवं वयासी) हे गौतम ! आ प्रमाणे गौतमने संबोधित करीने लगवाने तेने आ



एवं खलु गोतम ! तस्मिन् काले तस्मिन् समये इदं जम्बूद्वीपे-द्वीपे भारते  
वर्षे केकयाद्रे नाम जनपद आसीत् ऋद्धस्तिमितसमृद्धः । तत्र खलु केकयाद्रे  
जनपदे श्वेतविका नाम नगरी आसीत्, ऋद्धस्तिमितसमृद्धा यावत् प्रतिरूपा ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्वीवे दीवे भारहे दासे केयइअद्रे नामे  
जणवए होत्था) हे गोतम ! मैं इस विषय में तुम से कहता हूँ जो तुम  
उसे सुनो-यान ऐसा है-इस अवसर्पिणीकाल के चतुर्थ आरकरूपकाल में और  
केशि चायी के विहरण के समय में इस जम्बूद्वीप नामके मध्यजम्बूद्वीप  
में भरतक्षेत्र में केकयाद्रे नामका जनपद-देश था. तात्पर्य कहने का यह  
है कि केकयाद्रे का आधाभाग आर्यजनों का निवासस्थानरूप था और  
आधाभाग अनार्यजनों का निवासस्थानरूप था. इस तरह आर्य अनार्य के  
निवासस्थानभूत होने से केकयादेश को यहां आधे आधेरूप में पृथक् पृथक्  
जनपद कहा गया है (रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव पडिस्वा) यह केकयाद्रे ऋद्ध-  
नमस्तलस्पर्शी अनेक भवनादिकों से युक्त था, एवं बहुजनसंकुल था,  
स्तिमित-स्वचक्र परचक्र के भय से रहित था, एवं समृद्ध-धनधान्यादि  
से परिपूर्ण था यावत् प्रतिरूप था (तत्थणं केयइअद्रे जणवए सेयविया णामं  
णयरी होत्था) उस केकयाद्रे जनपद में श्वेतविका नामकी नगरी थी.  
(रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव पडिस्वा) यह नगरी भी ऋद्ध. स्तिमित और  
समृद्ध थी. एवं प्रतिरूप-सर्वोत्तम थी (तीसे णं सेयवियाए नयरीए वहिया

પ્રમાણે કહ્યું-(एवं खलु गोतमा । तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबूद्वीवे दीवे  
भारहे दासे अद्रे नामे जणवए होत्था) हे गोतम ! आ विषे जे કંઈ હું તમને  
કહું તે તમે સંભળો. વિગત આ પ્રમાણે છે કે-આ અવસર્પિણી કાળના ચોથા આરક-  
રૂપ કાળમાં અને કેશિસ્વામીના વિહરણના સમયમાં આ જંબૂદ્વીપ નામના મધ્ય  
જંબૂદ્વીપમાં ભરતક્ષેત્રમાં કેકયાદ્રે નામે જનપદ-દેશ-હતો. તાત્પર્ય એ છે કે કેકય  
દેશના અર્ધા ભાગમાં આર્યજનો નિવાસ કરતાં હતાઅને અર્ધા ભાગમાં અનાર્યજનો  
રહેતા હતાં. એથી જ આર્યો અનાર્યોના નિવાસસ્થાનરૂપ તે કેકયપ્રદેશને અહીં અર્ધા  
રૂપમાં બુદ્ધ બુદ્ધ જનપદોના નામે સંબોધિત કરવામાં આવ્યો છે. (રિદ્ધત્થિમિય-  
સમિદ્ધા જાવ પડિસ્વા) આ કેકયાદ્રે દેશ ઋદ્ધ નલસ્તલસ્પર્શી ધણાં ભવનો વગેરે-  
થી યુક્ત હતો; અને બહુજન સંકુલ હતો, સ્તિમિત-સ્વચક્ર પરચક્રની બીકથી રહિત  
હતો અને સમૃદ્ધ ધનધાન્ય વગેરેથી પરિપૂર્ણ હતો. યાવત્ પ્રતિરૂપ હતો.-(તત્થણં  
કેયइअद्रे जणवए सेयविया णामं णयरी होत्था) તે કેકયાદ્રે જનપદમાં શ્વેતવિકા  
નામે નગરી હતી. (રિદ્ધત્થિમિયસમિદ્ધા જાવ પડિસ્વા) આ નગરી પણ ઋદ્ધ  
સ્તિમિત અને સમૃદ્ધ હતી. અને પ્રતિરૂપ-સર્વોત્તમ હતી. (તીસે ણં સેયવિયાए

तस्याः खलु श्वेतविकाया नगर्या बहिः उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे अत्र खलु  
मृगवनं नाम उद्यानम् आसीत्-सर्वत्र पुष्पफलसमृद्धं रम्यं नन्दनवनप्रकाश-  
शुभसुरभिशीतलया छायाया सर्वत्र एव समनुबद्धं प्रासादीयं यावत् प्रति-  
रूपम् । तत्र खलु श्वेतविकायां नगर्या प्रदेशी नाम राजा आसीत्-महाहि-  
मवान्-यावद् विहरति । अधार्मिकः अधर्मिष्ठः अधर्मरुघातिः अधर्मातुल्यः

उत्तरपुरस्थिते दिग्भागे एतत् नं मृगवने नाम उज्जाणे होत्था) उस श्वेत-  
विका नगरी के ईशान कोने में मृगवन नामका उद्यान था (सर्वत्र उयपुष्प-  
फलसमिद्धे रम्ये, नन्दनवनेपगासे सुभं सुरभिणीयलाए छायाए सन्वओ चैव  
समनुबद्धे प्रासाईए जाव पडिरुवे) यह उद्यान छहों ऋतुओं के पुष्पों एवं  
फलों से युक्त था. अतः मनोरम था. नन्दनवन के जैसा था. शुभ-सुखावह  
होने से अच्छी, एवं सुरभि-मनोज्ञ एवं शीतस्पर्शवाली ऐसी छाया से  
सर्वत्र यह समनुबद्ध-युक्त था, प्रासादीय था यावत् प्रतिरूप था (तत्थ नं  
सेयविद्याए नगरीए पएसी नाम राया होत्था) उस श्वेतविका नगरी  
में प्रदेशी नामका राजा था, (महया हिमवान् जाव विहरइ) इसमें  
महाहिमवान्, महामलय, मन्दर-(मेरुपर्वत) एवं महेन्द्र के जैसा था  
(अधम्मिए, अधम्मिद्धे, अधम्मक्खाई, अधम्मणुए, अधम्मपलोई, अधम्म-  
पजणणे अधम्मसीलसमुयायारे, अधम्मणे चैव चित्ति कप्पेमाणे) परन्तु वह  
धार्मिक नहीं था अधर्माचारी था, अतिशयरूप से अधर्माचरणशील था,  
अनएव अधर्मद्वारा ही वह जगत में प्रसिद्ध हुआ था. अधर्मातुयायी

नयरीए बाहिया उत्तरपुरस्थिते दिग्भागे एतत् नं मृगवने नाम उज्जाणे  
होत्था) ते श्वेतनगरीना ईशान कोणुमां मृगवन नाम उद्यान इत्तुं. (सर्वत्र उय  
पुष्प, फलसमिद्धे रम्ये, नन्दनवनेपगासे सुभंसुरभिणीयलाए छायाए सन्वओ  
चैव समनुबद्धे प्रासाईए जाव पडिरुवे) आ उद्यान पडुत्तुओनां पुष्पे तेभज्ज  
इणोथी समृद्ध इत्तुं. ओथी नन्दनवन जेवुं मनोरम इत्तुं. शुभ-सुखावह होवा पहल  
सारी, अने सुरभि-मनोज्ञ-अने शीतस्पर्शवाणी छायाथी ते सर्वत्र समनुबद्ध-युक्त  
इत्तुं. प्रासादीय इत्तुं. यावत् प्रतिरूप इत्तुं. (तत्थ नं सेयविद्याए नगरीए पएसी  
नाम राया होत्था) ते श्वेतविका नगरीमां प्रदेशी नाम राजा इत्तो. (महया हिमवान्  
जाव विहरइ) ओमां महाहिमवान्, महामलय, मन्दर (मेरुपर्वत) अने महेन्द्र जेटु  
णण इत्तुं. (अधम्मिए, अधम्मिद्धे, अधम्मक्खाई, अधम्मणुए, अधम्मपलोई,  
अधम्मपजणणे, अधम्मसीलसमुयायारे, अधम्मणे चैव चित्ति कप्पेमाणे)  
अणु ते धार्मिक इत्तो नहि अधर्माचारी इत्तो, अणु न अधर्माचरणमां प्रवृत्त रहनार

अधर्मप्रलोकी अधर्मप्रजननः अधर्मशीलसमुदाचारः अधर्मेणैव वृत्तिकल्पयन्  
 'जहि छिन्धि भिन्धि' प्रवर्त्तकः लोहितपाणिः पापः चण्डो रौद्रः क्षुद्रः साहसिकः  
 उत्कञ्चन-वञ्चन-माया-निकृति-कूटकपटसतिसम्प्रयोगबहुओ निस्सीलो  
 निर्द्वतो निर्गुणो निर्मर्यादो निष्प्रत्याख्यानपौषधोपवासो बहूनां द्विपदचतु-

था, अधर्म का ही निरन्तर चिन्तन किया करता था, प्रजाजनों में भी वह  
 केवल प्रकर्षरूप से अपने उपदेशों द्वारा अधर्म को ही भरा करता था,  
 उसे ही प्रोत्साहित किया करता था, कूट कर इसके स्वभाव में अधर्म  
 भाव भरा हुआ था, और कार्य भी यह इसी प्रकार के किये करता था—  
 यहाँतक कि यह अपनी जीविका भी अधर्म से ही चलाया करता था. तथा  
 ('हण-छिंद-भिंद'-पवत्तए लोहियपाणी पावे चंडे, रुंदे, खुंदे, साहसिए. उकं चण,  
 वं चण, माया-नियडि-कूड-कवड-साइ संपओगबहुले, निस्सीले, निव्वए,  
 निर्गुणे, निम्मेरे, निष्पच्चक्खणपोसहोववासे बहूणं) मारो, काटो, दो टुकड़े  
 करदो इत्यादि वाक्यों द्वारा जीवों के हिसादिक कार्यों में अपने आश्रित  
 जनों को प्रवृत्तिशील बनाया करता था, इसके हाथ सदा रक्त से भरे  
 रहते थे, यह साक्षात् पापका अवतार था, क्यों कि पापकर्म में यह सदा  
 परायण बना रहता था, यह बहुत अधिक क्रोधी था, रौद्र-क्रूररूप होने  
 से भयानक था, तुच्छ बुद्धिवाला होने से क्षुद्र था. सहस्राकर्मकरणशील.

हुतो. ओथी ते अधर्मीना इपमां न जगतमां प्रसिद्ध थं गथो हुतो. ते अधर्मा-  
 नुयाथी हुतो ते रातद्विस अधर्मानुं न चिंतन कर्थां करतो हुतो. प्रजनी सामे पणु  
 ते अधर्माथरु तरु प्रवृत्त थवाना उपदेशो आपतो रहेतो हुतो. ते अधर्माने न  
 प्रोत्साहित करतो रहेतो हुतो. तेना आणु आणुमां अधर्म न व्यापक थं रह्यो  
 हुतो. तेना जधां कर्थां पणु अधर्मथी प्रेरणेने थतां हुतां ते पोतानुं लरणु  
 पोषणु " पणु अधर्मा आधारे न करतो हुतो. तेमन ("हणछिंद भिंद  
 पवत्तए लोहियपाणी पावे चंडे, रुंदे, खुंदे साहसिए, उकं चण, वं चण,  
 मायानियडि-कूड-कवडे साइसंपओगबहुले. निस्सीले, निव्वए, निर्गुणे, निम्मेरे,  
 निष्पच्चक्खणपोसहोववासे बहूणं ) मारो, कापो, जे कडा करी नाणो वगेरे वाक्यो  
 वडे ते लोवना हुंसा वगेरे कर्थांना पोताना आश्रितोने प्रवृत्तिशील राखतो  
 हुतो. तेना हाथो सदा रक्तथी भरडाओला रहेतो हुतां ते साक्षात् पापनो अवतार  
 हुतो. केभडे ते सदा पाप परायण न रहेतो हुतो. अपहु जहुन क्रोधी हुतो, रौद्र-  
 करुष होवाथी भयानक हुतो, तुच्छबुद्धिवाणो होवाथी क्षुद्र हुतो, सहस्राकर्मकरणशील

पदमृगपशुपक्षिसरीसृपाणां घाताय वधाय उच्छेदनाय अधर्मकेतुः समुत्थितः,  
गुरुणां नो अभ्युत्तिष्ठति नो विनयं प्रयुङ्क्ते, स्वकस्यापि च जनपदस्य नो  
संयुक्तं करभरवृत्तिं प्रवर्त्तयति ॥ सू० ९९ ॥

होने से अर्थात् बिना विचारे कार्य करनेवाला होने से साहसिक था, उत्कोच-  
लांच, वंचन-परप्रतारण, माया-परवंचनबुद्धि, निकृतिगूढमाया, कूट-गूढमाया  
को ढंकने के लिये अन्धमाया करना, कपट-वेष माया आदिको बदलना-  
विपरीत बना लेना, इन सब का जो सातिसंप्रयोग-प्रकर्षरूप से व्यापार  
उस व्यापार से यह व्याप्त था, तथा, निश्शील-शीलवर्जित था, निर्वृत्त-  
हिसादिककुतूह्यरूप पापों से विरति का अभाववाला होने से व्रतरहित था,  
निर्गुण-क्षान्त्यादिक गुणों के अभाव से युक्त होने के कारण निर्गुण था,  
निर्मर्यादः-मर्यादा रहित था, परस्त्री वर्जनादिरूप मर्यादा से रहित होने के  
कारण निर्मर्याद था, प्रत्याख्यान, पौषध और उपवास इनसे रहित था,  
तथा अनेक (दुष्पयचउष्पयमियपसुपवस्त्री सिरिसवाणघायाए बहाए उच्छेय-  
णयाए, अधम्मकेऊ समुट्टिए) द्विपद-मनुष्य वगैरह, चतुष्पद-मृगादि वगैरह  
पशु-प्राण की गाय वगैरह, सरीसृप-भुजपरिसर्प एवं उरःपरिसर्प-नकुल  
सर्प आदि इन सब की हत्या करने, इन्हें मारने में-चोट पहुंचाने  
में और प्राण रहित करने के लिये अधर्मरूप केतुग्रह के जैसा उत्पन्न  
हुआ था, अर्थात् केतुग्रह के उदित होने पर लोक में जिस प्रकार से

होवाथी ओटवे के वगर विचार्युं कार्य करनार होवाथी-ते साहसिक हुतो. उत्कोच-  
लांच, वंचन-पर प्रतारण, माया-परवंचन बुद्धि निकृति-गूढ माया, कूट-गूढमायाने  
बुझाववा भटे भील माया करवी, कपट वेष भाषा वगैरे बदली नाअवा, आ अभा  
इशुण्णी अकर्षता तेमां विधमान हुती. तथा ते निश्शील-शील वर्जित हुतो, निर्मृत-  
हिसा वगैरे कुतूह्यरूपपापो तरह प्रवृत्ति राखनार होवाथी ते मत वगरनो हुतो,  
निर्गुण-क्षान्ति वगैरे गुणो तेमां नहुतो तेथी ते निर्गुण हुतो, निर्मर्याद-मर्यादा  
रहित हुतो. परस्त्री वर्जनादिरूप मर्यादाथी रहित होवा अहल निर्मर्याद हुतो. ते  
प्रत्याख्यात, पौषध अने उपवास वगर हुतो. धणा (दुष्पय चउष्पय मियपसुपवस्त्री  
सिरिसवाणघायाए बहाए अच्छेयणयाए, अधम्मकेऊ समुट्टिए) द्विपद-  
माणुस वगैरे चतुष्पद-मृग वगैरे, पशु-गाय वगैरे, पक्षी-चकलीओ वगैरे, सरीसृप-  
भुजपरिसर्प अने उरःपरिसर्प-नकुल सर्प वगैरे आ अधाने हणुवाभां, मारवाभां.  
अने ओभने समूल नष्ट करवाभां ते अधर्मनो प्रत्यक्ष अवतार अने केतुग्रह जेवो  
उदित थयो हुतो. ओटवे के केतुग्रह न्यारे उदित थाय त्यारे लोकमां जेम धणा

‘गोयमा !—इति—

टीका—गौतमस्वामिनः प्रश्नं श्रुत्वा श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमस्वामिनं ‘गौतम’ इति आमन्त्र्य=सम्बोध्य एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्=उक्तवान्—हे गौतम ! एवं खलु त्वम् जानीहि—तस्मिन् काले=अस्या अवसर्पिण्याश्चतुर्थारकलक्षणे काले, तस्मिन् समये केशिस्वामि विहरणोपलक्षिते समये इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे=मध्यजम्बूद्वीपे भारते वर्षे=भरतक्षेत्रे केकयाद्धं नाम जनपदो=देश आसीत् । अत्रेदं बोध्यम्—केकयदेशस्य अर्द्धम् आर्यजननिवासस्थानम्, अर्थं च अनार्यजननिवासस्थानम् । आर्यानार्ययोर्निवासभूतत्वात् केकयस्य अर्द्धद्वयं पृथक्पृथगजनपदत्वेन विवक्षितमिति । स केकयाद्धं जनपदऋद्धस्तिमितसमृद्धः—तत्र—ऋद्धः नभःस्पर्शिवहुलप्रासादयुक्तो बहुजनसंकुलश्च, स्तिमितः स्वचक्रपरचक्रभयरहितः, समृद्धः=धनधान्यादिपरिपूर्णः, पदत्रयस्य कर्मधारयः । तत्र खलु केकयाद्धं-जनपदे श्वेतविका नाम नगरी आसीत् । सा नगरी ऋद्धस्तिमितसमृद्धा यावत्—प्रतिरूपा । यावत्पदेन—औपपातिकसूत्रोक्तचम्पानगरीवर्णनपरः पदसमूहोऽत्रापि बोध्यः । प्रतिरूपा=सर्वोत्तमा च आसीत् । तस्याः खलु श्वेतविकायाः नगरी बहिः बालप्रदेशे उत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे=ईशानकोणे अत्र खलु मृगवनं नाम उद्यानम् आसीत् । तत् उद्यानं सर्वर्तुकपुष्पफलसमृद्धम्=पङ्कजतुल्यसम्बन्धिपुष्पफलसमन्वितं रम्यं=

अनेक विप्लव (उपद्रव) होते हैं, उसीप्रकार से इस राजा के शासन होने पर देशभर में त्रास था, (गुरुणां णो अब्भुट्ठेह, णो विणयं पउजइ, सयस्स वि य णं जणवयस्स णो सम्मं करभरवृत्तिं पवत्तेह) आते हुए मातापितादिरूप गुरुजनों को देखकर यह उनका आदर करने के लिये खड़ा नहीं होता था, उनके विषय में वह विनययुक्त नहीं होता था, तथा अपने जनपद केकयाद्धं जनपद के प्रजाजनों की कर लेकर भी पालनरूपवृत्ति यथार्थरूप से नहीं करता था, ।

विप्लवो (उपद्रवो) थाय छे, तेमज्ज आ राजाना शासनकाणमां समस्त देशमां त्रास अने अशांतिनुं वातावरण प्रसरै रह्युं इत्तुं (गुरुणां णो अब्भुट्ठेह, णो विणयं पउजइ, सयस्स वि य णं जणवयस्स णो सम्मं करभरवृत्तिं पवत्तेह) मातापिता वगैरे गुरुजनाने आवता जेधने पण ते तेमनो आदर करवा भाटे उलो थतो न इतो. तेमनी सामे ते विनयशील थधने रहेतो न इतो. तेमज्ज पोताना जनपद केकयाद्धं जनपदनी प्रज पासेथी टेकस लधने पण ते सरस रीते तेमनुं पालन के रक्षण करतो न इतो.

मनोरमं नन्दनवनमकाशं=नन्दनवनसदृशं, शुभसुरमिश्रीतलया शुभा=सुखा-  
वहत्वेन शुभासुरभिः=मनोज्ञा शीतला=शीतस्पर्शयुक्ता, पदत्रयस्य कर्मधारयः  
तथाभूतया छायया सर्वत एव=सर्वप्रदेशावच्छेदेनैव समनुबद्धां=युक्तां प्रासा-  
दीयां यावत् प्रतिरूपां चासीत् । तत्र खलु श्वेतविकायां नगर्यां प्रदेशी  
नाम राजा आसीत् । स प्रदेशी राजा महाहिमवन्महामलयमन्दरमहेन्द्रसारो-  
यावद् विहरति । प्रदेशिराजस्य सकलं वर्णनमौपपातिकसूत्रोक्तकूणिक-  
राजवद् बोध्यम् । स प्रदेशी राजा तु-अधार्मिकः-धर्मेण चरति धार्मिकः, न  
धार्मिकोऽधार्मिकः-अधर्माचारी, अधार्मिकस्तु सामान्यधर्माचरणेनापि भवति,  
अत आह—अधर्मिष्ठ इति । अधर्मिष्ठः=सातिशयाधर्माचरणशीलः,  
अधर्मख्यातिः-अधर्मेण ख्यातिर्यस्य स तथा अधर्मद्वारेण जगति  
प्रसिद्धिं गतः, अधर्मानुगः-अधर्मम् अनुगच्छतीति-अधर्मानुगः-अधर्मानु-  
यायी, अधर्मप्रलोकी-अधर्ममेव प्रलोकते=निरन्तरं विचारयति यः सः-अधर्म-  
विषयकविचारपरायणः, अधर्मप्रजननः-अधर्ममेव प्रकर्षेण जनयति=उत्पा-  
दयति लोकेषु यः सः प्रजास्वपि अधर्मभावोत्पादक इत्यर्थः, तथा अधर्मशील  
समुदाचारः- अधर्म एव शीलं=स्वभावः समुदाचारः=अनुष्ठानं च यस्य  
स तथा अधर्ममयस्वभाययुक्तः अधर्मानुष्ठानपरायणश्चेत्यर्थः, तथा-अधर्मे-  
णैव वृत्तिः=जीविकां कल्पयन्=कुर्वन्, तथा-जीवान् प्रति जहि=मारय, छिन्धि=  
विदारय भिन्धि=द्विधाकुरु' इत्यादि वाक्यैः प्रवर्त्तकः=स्वाश्रितान् जनान् प्रवर्त्त-  
यिता, अतएव-लोहितपाणिः=रक्तखरण्डितहस्तः, पापः=पापस्वरूपः-सर्वदा  
पापपरायणत्वात्, चण्डः=चण्डस्वरूपः-तीव्रतरकोपावेशात् रौद्रः=भयानकः=क्रूररूप-  
त्वात्, क्षुद्रः=तुच्छबुद्धित्वात् साहसिकः=सहसा कर्मकरणशीलः-असमीक्षित-  
कारित्वात्, तथा-उत्कञ्चन-वञ्चन-माया-निकृति-कूट-कपट-सातिसम्प्रयोग-  
बहुलः-तत्र-उत्कञ्चनम्=उत्कोचग्रहणम्, 'उत्कोचः'- 'लाञ्छ' इति भाषा-

टीकार्थ—इसका, मूलार्थ - जैसा ही है-श्वेतविका नगरी का  
वर्णन औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपानगरी जैसा ही जानना चाहिये-  
यही बात यहां यावत्पद से प्रकट की गई है तथा प्रदेशी राजा का भी वर्णन  
औपपातिकसूत्र में वर्णित हुए कूणिक राजा के जैसा ही समझना ॥ सू. ९९ ॥

टीकार्थः—मूलार्थ प्रमाणे न छे. श्वेतविका नगरीनुं वर्णन औपपातिक सूत्रमां  
वर्णित चंपानगरी जेपुं न समजपुं जेधये. यावत् पहली ओं वात अंडी रूप  
करवाभां आवी छे. तेमज प्रदेशी राजानुं वर्णन पण औपपातिक सूत्रमां वर्णित  
कूणिक राजा जेपुं न समजपुं जेधये. ॥सू० ९९॥



प्रसिद्धः । वञ्चनं=परप्रतारणं माया=परवञ्चनबुद्धिः, निकृतिः=गूढमाया,  
 कूटम्=गूढमायाच्छादनार्थमन्यमायाकरणम्, कपटं=वेषभाषाविपर्ययकरणम्, एषां  
 यः सातिसम्प्रयोगः=प्रकर्षेण व्यापारत्वेन बहुलः-व्याप्तः, तथा-निश्शीलः=  
 शीलवर्जितो ब्रह्मचर्यरहितत्वात्, निर्व्रतः=व्रतरहितो हिंसादिविरत्यभावात्,  
 निर्गुणः=गुणरहितः-क्षान्त्यादिगुणाभावात्, निर्मर्यादः=मर्यादारहितः-परस्त्री-  
 परिवर्जनादिरूप मर्यादारहितत्वात्, निष्प्रत्याख्यानपौषधोपवासः=प्रत्याख्यान-  
 पौषधोपवासवर्जितः, तथा-बहूनां द्विपद-चतुष्पदमृगपशुपक्षिसरीसृपाणां, तत्र-  
 द्विपदाः=मनुष्या-दासीदासादयः, चतुष्पदाः ये मृगाः=आरण्याः, पशवो=ग्राम्या  
 गवादयश्च ते-चतुष्पदमृगपशवः, पक्षिणः-प्रसिद्धाः, सरीसृपाः=भुजोरुभ्यां सर्पण-  
 शीलां शोधादयः, एषां पदानामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तेषां घाताय=विनाशनाय  
 धधाय=ताडनाय उच्छेदनाय=निर्मलनाय अधर्मकेतुः=अधर्मरूपकेतुग्रह इव  
 समुत्थितः=समुद्गतः। केतुग्रहे समुदिते सति लोके विप्लवो भवति, तथैवा-  
 स्मिन् नृपतो शासके सति जनपदे त्रासो वर्तते । तथा-स गुरुणां नो  
 अभ्युत्तिष्ठति=आगच्छतो गुरुन्=मातापित्रादीन् दृष्ट्वा तेषामादरं कर्तुं न  
 अभ्युत्थाता भवति, तेषु=पित्रादिगुरुजनेषु विनयं नो प्रयुङ्क्ते=विनययुक्तो न  
 भवति, तथा-स प्रदेशी राजा स्वकस्यापि च जनपदस्य=केकयादर्जनपदस्य  
 खलु करभरवृत्तिं-करात्=करंगृहीत्वा यो भरः प्रजानां पालनं तद्रूपा या  
 वृत्तिस्तां सम्यक्=याथातथ्येन न प्रवर्त्तयति=न विदधाति । स्वजनपदस्यापि  
 रक्षणकर्मणि समुद्युक्तो न भवतीत्यर्थः ॥ सू० ९९ ॥

मूलम्—तस्स णं पएसिस्स रन्नो सूरियकंता नाम देवी  
 होत्था, सुकुमालपाणिपाया धारिणी वण्णओ । पएसिणा रन्ना सद्धि  
 अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्धे खवे जोव विहरइ ॥ सू० १०० ॥

छाया--तस्य खलु प्रदेशिनो राज्ञः सूर्यकान्ता नाम देवी आसीत्,  
 सुकुमालपाणिपादा धारिणीवर्णकः । प्रदेशिना राज्ञा सार्द्धम् अनुरक्ता  
 अविरक्ता इष्टान् शब्दान् रूपाणि याचद् विहरति ॥ सू० १०० ॥

‘तस्स णं पएसिस्स रन्नो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(तस्स णं पएसिस्स रन्नो) उस प्रदेशी राजा की (सूरिय-  
 कंता नाम देवी होत्था) सूर्यकान्ता नामकी रानी थी (सुकुमालपाणिपाया

‘तस्स णं पएसिस्स रन्नो’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(तस्स णं पएसिस्स रन्नो) ते प्रदेशी राजा की (सूरियकंता नाम  
 देवी होत्था) सूर्यकान्ता नामे राणी होती. (सुकुमालपाणिपाया धारिणीवर्णओ)

टीका-‘तस्स ण’ इत्यादि—

तस्य=पूर्वोक्तस्य खलु प्रदेशिनो राज्ञः सूर्यकान्ता नाम देवी=राज्ञी आसीत् । सा सूर्यकान्ता देवी सुकुमालपाणिपादा-सुकुमालं=सातिशयकोमलं पाणिपादं=हस्तौ पादौ च यस्याः सा तथाभूताऽऽसीत् । सूर्यकान्तायाः सर्वं वर्णनं धारिणीवद् बोध्यम् । एतदेव सूचयितुमाह=धारिणीवर्णनो’ इति औपपातिकसूत्रोक्तधारिणीवद् बोध्यम् । सा सूर्यकान्ता देवी प्रदेशिना राज्ञा सार्द्धं=सह अनुरद्धा=सातिशयप्रेमयुक्ता अविरक्ता=प्रतिकूल्यं गतेऽपि प्रत्यौ स्वयं सदा प्रसन्नवदनं सती इष्यन्=अभिलषितान्, शब्दान् रूपाणि घ्रावद्=गन्धान् रसान् स्पर्शाश्चेति पञ्चविधान् मनुष्यान्=मनुष्यसम्बन्धिनः कामभोगान् प्रत्यनुभवन्ती=उपभुञ्जाना विहरति ॥सू० १००॥

मूलम्—तस्स णं पएसिस्स रण्णो जेट्ठे पुत्त सूरियकंताए देवीए अत्तए सूरियकंते नामं कुमारे होत्था, सुकुमालपाणिपाए जाव पडि-  
रूवे । मे णं सूरियकंते कुमारे जुवराया वि होत्था, पएसिस्स रन्नो

धारिणीवर्णनो) इसके हाथ पैर आदि अवयव बड़े ही सुकुमार थे. इसका पूर्णवर्णन धारिणी रानी के जैसा ही है. धारिणी का वर्णन औपपातिक सूत्र में दिया गया है। (पएसिणा रन्नो सद्धि अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्धे रूवे जाव विहरइ) प्रदेशी राजा के साथ यह सातिशय प्रेम युक्त बने होकर अभिलषित मनुष्य संबंधि कामभोगों को भोगती थी, यदि राजा कभी प्रतिकूल भी हो जाता तो उस समय यह उससे प्रतिकूल नहीं बनती, प्रत्युत सदा प्रसन्नवदन ही रहती, वहां ‘शब्दरूप’ से रूपं गंध, रस और स्पर्श ये पांच प्रकार के कामभोग गृहीत हुए हैं।

टीकार्थ स्पष्ट है ॥ सू० १०० ॥

तेना हाथपग वगेरे अवयवो अतीव सुकुमार उता. राणीनुं वर्णन धारिणी राणी जेवुं न छे. औपपातिक सूत्रमां धारिणीनुं वर्णन करवांमां आव्युं छे. (पएसिणा रन्नो सद्धि अणुरत्ता अविरत्ता इट्ठे सद्धे रूवे जाव विहरइ) प्रदेशी राज्ञी साथे ते सातिशय प्रेमयुक्त व्यवहार राणीने अभिलषित मनुष्य संबंधि काम भोगो भोगवती उती. जे उदाय राजा कोछ दिवस प्रतिकूल थई नतो तो ते तेनी साथे अनुकूल थईने न रहेती उती. ते सदा प्रसन्न वदन न रहेती उती. अही “शब्दरूप”थी रूप, गंध, रस अने स्पर्श जे पांच प्रकारना कामभोगोनुं ग्रहण-थियुं छे. टीकार्थ स्पष्ट छे. ॥१००॥



रजं च रटुं च बलं च वाहनं च कोशं च कोट्यागारं च पुरं च अंते  
उरं च सयमेव पच्चुवेकखमाणे पच्चुवेकखमाणे विहरइ ॥सू० १०१॥

छाया—तस्य खलु प्रदेशिनो राज्ञो ज्येष्ठः पुत्रः सूर्यकान्ताया देव्याः  
आत्मजः सूर्यकान्तो नाम कुमार आसीत्, सुकुमालपाणिपादो यावत् प्रति-  
रूपः । स खलु सूर्यकान्तः कुमारो युवराजोऽप्यासीत्, प्रदेशिनो राज्ञो राज्यं  
च राष्ट्रं च वाहनं च बलं च कोशं च कोट्यागारं च पुरं च अन्तःपुरं च  
स्वयमेव प्रत्युत्प्रेक्षमाणः प्रत्युत्प्रेक्षमाणो विहरति ॥ १०१ ॥

‘त एणं पएसिस्स रण्णो’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(त एणं पएसिस्स रण्णो जेट्ठे पुत्ते सूरियकंताए देवीए अत्तए  
सूरियकंते नामं कुमारे होत्था) उस प्रदेशी राजा के पुत्र था, जिसका नाम  
सूर्यकान्त था यह सूर्यकान्तादेवी से उत्पन्न हुआ था (सुकुमालपाणिपाए  
जाव पडिखवे) इसके हाथ-पग बडेही सुकुमार थे. यावत् यह प्रतिरूप-सर्वोत्तम  
था. यहां यावत् शब्द प्रकट करने के लिये प्रयुक्त हुआ है कि औपपातिक  
सूत्रोक्त धारिणी के वर्णन में आगत पदसमूह में पुल्लिङ्ग की विभक्तियां  
लगाकर सूर्यकान्त का वर्णन करना चाहिये. (से णं सूरियकंते कुमारे  
वि होत्था) यह सूर्यकान्त कुमार युवराज भी था. अतः वह पएसिस्स रन्नो  
रजं च रटुं च बलं च वाहनं च कोट्यागारं च पुरं च अंते उरं च सयमेव पच्चु-  
वेकखमाणे २ विहरइ) प्रदेशी राजा के राष्ट्रादिसमुदायरूप राज्यका, जनप-  
दरूप (देश राष्ट्रका, सैन्यरूप बल का, हस्त्यादि एवं शिविकादिरूप वाहन

‘त एणं पएसिस्स रण्णो’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(त एणं पएसिस्स रण्णो जेट्ठे पुत्ते सूरियकंताए देवीए  
अत्तए सूरियकंते नामं कुमारे होत्था) (ते प्रदेशी राजाने पुत्र होतो. सूर्यकान्त  
नाम होतुं. ते सूर्यकान्ता देवीना गर्भात्थी उत्पन्न थये होतो. (सुकुमालपाणिपाए  
जाव पडिखवे) तेनां हाथ पग गहुण सुकामण होतां. यावत् ते प्रतिरूप-सर्वोत्तम  
होतो. अही यावत् शब्दने प्रयोग ओटला भाटे करवामां आव्यो छे छे औपपातिक  
सूत्रना धारिणीना वर्णनमां जे पट्टो आव्यां छे तेमां पुल्लिङ्गनी विलक्षित्यो लगाडीने  
सूर्यकान्तुं वर्णन समज्जुं लेधये. (से णं सूरियकंते कुमारे जुवराया वि होत्था)  
जे सूर्यकान्त कुमार युवराज पणु होतो जेथी (पएसिस्स रन्नो रजं च रटुं च  
बलं च वाहनं च कोशं च कोट्यागारं च पुरं च अंते उरं च सयमेव पच्चु  
वेकखमाणे २ विहरइ) प्रदेशी राजाना राष्ट्रादि समुदायरूप राज्यतुं, जनपदरूप  
राष्ट्रतुं, सैन्यरूप गणतुं, उस्ति वगेरे अने शिगिका वगेरे विहानतुं, लांडागाररूप

टीका—‘तस्स णं इत्यादि—

तस्य खलु पूर्वोक्तस्य प्रदेशिनो राज्ञो ज्येष्ठः पुत्रः सुर्यकान्तायाः देव्या आत्मजः=अङ्गजातः सुर्यकान्तो नामकुमार आसीत्, स कुमारः सुकु-  
मालपाणिपादो यावत्प्रतिरूपश्च आसीत् । यावत्पदेन औपपातिकसूत्रोक्त-  
धारिणीवर्णकग्रन्थः पुल्लिङ्गत्वेन विपरिणमय्यात्र ग्राह्य इति । स खलु सुर्य-  
कान्तकुमारो युवराजोऽपि आसीत् । स सुर्यकान्तो युवराजः प्रदेशिनो  
राज्ञो राज्यं=राष्ट्रादिसमुदायात्मकं च, राष्ट्रं=जनपदं, बलं=सैन्यं, वाहनं=  
हस्त्यादिकं शिविकादिकं च, कोशं=भाण्डागारं कोष्ठागारं=धान्यगृहं पुरं=  
नगरं, अन्तःपुरं च स्वयमेव प्रत्युत्प्रेक्षमाणः प्रत्युत्प्रेक्षमाणः निरीक्षमाणो  
विहरति-राज्यराष्ट्रादि सर्वव्यवस्थां पश्यतीत्यर्थः ॥ सू० १०१ ॥

मूलम्—‘तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेह्वा भाउयवयंसए चित्ते णांमं  
सारही होत्था अह्णे जाव बहुजणस्स अपरिभूए साम-दंड भेय उव-  
प्पयाणअत्थसत्थ ईहामइविसारए उप्पत्तियाए वेणइयाए कम्मयाए  
पारिणामियाए चउव्विहाए बुद्धीए उववेए, पएसिस्स रण्णो बहुसु-  
कज्जेसु य कारणेसु य कुडुंवेसु य मंतेसु य गुज्जेसु य रहस्सेसु य  
निच्छएसु य ववहारेसु य आपुच्छणिज्जे पडिपुच्छणिज्जे मेढीपमाणं  
आहारे आलंवनभूए चक्खुभूए सव्वट्ठाण सव्वभूमियासु लद्धयच्चए  
विइण्णवियारे रज्जधुराचित्थं यावि होत्था ॥ सू० १०२ ॥

छाया—तस्य खलु प्रदेशिनो राज्ञो ज्येष्ठ भ्रातृ वयस्यकश्चित्रो नाम सारथि-  
रासीत् । आढ्यो यावद् बहुजनस्य अपरिभूतः साम-दण्डभेदोपपदानार्थं

का, भाण्डागाररूप कोश का, धान्यगृहरूप कोष्ठागार का, एवं अन्तःपुरं का  
अपने आप ही समयपर पर निरीक्षण अवलोकन करता था.

टीकार्थ स्पष्ट है ॥ सू० १०१ ॥

‘तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेह्वा भाउयवयंसए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेह्वा भाउयवयंसए) इस प्रदेशी

केशव, धान्यगृहइय कोष्ठागारवत्, नगरवत् अने अंतपुरवत् पोताती भेजे न यथा  
समय निरीक्षणुं करतो हुतो. ओटवे के ते राज्य राष्ट्र वगेरेनी सर्व व्यवस्थावत्  
अवलोकन करतो हुतो. टीकार्थ स्पष्ट छे. ॥ १०१ ॥

‘तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेह्वा भाउयवयंसए’ इत्यादि.

सूत्रार्थ—(तस्स णं पएसिस्स रन्नो जेह्वा भाउयवयंसए) ते प्रदेशी राजने

રાજા કા જેઠ ભાઈ કે જૈસાં એવં અધિક ઉમરવાલા (ચિત્તે જામં સારથી  
 હોત્યા) ચિત્ર નામ કા સારથી થા. (અહ્લે જાત્ર વહુજળસ્સ અપરિભૂણ સામ-  
 દંડ-ભેય-ઉવત્પયાણ અત્થસત્થ ઈહા મહવિસારણ) યહ ચિત્ર સારથી આઢય-  
 સમૃદ્ધ થા. યાવત્ વહુજનોં દ્વારા મી અપરિભૂત થા. વહાં યાવત્ શબ્દ સે  
 ‘દિત્તે વિત્થિણ્ણવિત્તલ-સયણાસણ જાણ-ઈણ્ણે, વહુધણ-વહુજાયરૂવ-રયણ,  
 આઓગસંપઓગસંપઉત્તે, વિચ્છદ્ધિયવિત્તલમત્તપાણે, વહુદાસીદાસગોમહિસ-  
 ગવેલયપ્પભૂણ’ ઇસપાઠ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ ઇસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-  
 યહ ચિત્ર સારથિ દીપ્ત-તેજસ્વી થા, ઇસકે વડે ૨ અનેક મકાન થે, વડે ૨  
 અનેક તલ્પ (શય્યા) થે, વડે ૨ અનેક પીઠકાદિક આસન થે શકટપ્રભૃતિ (ગાડી  
 વગેરહ) યાન થે, અશ્વાદિકોં સે યહ સદા આકીર્ણ-યુક્ત વનાં હુઆ થા, વિપુલ ધન  
 કા-ગણિમ આદિ દ્રવ્ય કા, યહ સ્વામી થા. ઇસકે પાસ વિપુલ સ્વર્ણ થા,  
 તથા રજત-ચાંદી થી. આયોગપ્રયોગ સે યહ સંપ્રયુક્ત થા, દ્વિગુણાદિલાભકે  
 લિયે રૂપયા આદિ કો કર્જ લેને વાલોં કે લિયે દેના ઇસકા નામ આયોગ  
 હૈ, ઓર ઇસકા ઉપાય ચિન્તન કરના સો પ્રયોગ હૈ. અથવા અંપને દ્રવ્ય  
 કો દૂમા આદિ કરને કી લિપ્સા સે અધમર્ણ-કર્જલેને વાલોં કોં ઉસે દેના  
 ઇસકા નામ આયોગપ્રયોગ સંપ્રયુક્ત હૈ. યહ ચિત્ર સારથિ ઇસ અધિક દ્રવ્યોં

મોટાભાઇ જેવો ઉમરમાં તેના કરતાં વધારે (ચિત્તે જામં સારથી હોત્યા) ચિત્ર નામે  
 સારથિ હતો. (અહ્લે જાત્ર વહુજળસ્સ અપરિભૂણ સામ-દંડ-ભેય ઉવત્પયાણ  
 અત્થ સત્થ ઈહા મહ વિસારણ) એ ચિત્ર સારથિ આઢય-સમૃદ્ધ-હતો. યાવત્ અનેક  
 લોકોથી અપરિભૂત હતો, અહીં યાવત્ શબ્દથી “દિત્તે વિત્થિણ્ણવિત્તલસયણાસણ  
 જાણ-વાહણા-ઈણ્ણે. વહુધણ-વહુ જાય-રૂવ-રયણ, આઓગસંપઓગસંપ  
 ઉત્તે, વિચ્છદ્ધિયવિત્તલમત્તપાણે, વહુદાસીદાસગોમહિસગવેલયપ્પભૂણ’  
 આ પાઠનું અહણુ થયું છે આનો અર્થ આ પ્રમાણે છે કે તે ચિત્ર સારથિ દીપ્ત-  
 તેજસ્વી હતો, ઘણાં મોટા મોટા તેને મકાનો હતાં. મોટી મોટી અનેક શય્યાઓ (તલ્પ)  
 હતી. પીઠક વગેરે મોટા મોટા ઘણા આસનો હતાં. શકટ-ગાડી વગેરે ઘણાં વાહનો  
 હતાં. હથ-ધોડાઓ-વગેરેથી તે સદા પરિવેષિત રહેતો હતો. વિપુલ ધનનો-ગણિમ  
 વગેરે દ્રવ્યનો એ સ્વામી હતો. તેની પાસે પુષ્કળ સ્વર્ણ હતું, અને ચાંદી પણ હતી.  
 આયોગ પ્રયોગથી એ સંપ્રયુક્ત હતો, જમણા લાભની અપેક્ષાએ જે રૂપિયા વગેરે  
 સિદ્ધાઓ ખીનતને વ્યાજે આપવામાં આવે તેને આયોગ કહે છે અને એના માટે જે  
 યુક્તિ પ્રયુક્તિઓનું ચિંતન કરવામાં આવે છે તેને પ્રયોગ કહે છે. અથવા તે  
 પોતાના ધનને જમણું વગેરે કરવાની ઇચ્છાથી અધમર્ણ-કર્જ લેનારને આપવું તેનું  
 નામ આયોગ પ્રયોગ સંપ્રયુક્ત છે. એ ચિત્ર સારથિ અધિક દ્રવ્યોપાજ્ઞનરૂપ ક્રિયામાં

शास्त्रोत्पत्तिविशारदः औत्पत्तिकया वैनयिकया कर्मजया पारिणामिकया चतुर्विधया बुद्ध्या उपपेतः, प्रदेशिनो राज्ञो बहुषु कार्येषु च कारणेषु च कुटुम्बेषु च मन्त्रेषु च गुह्येषु च रहस्येषु च निश्चयेषु च व्यवहारेषु च आपुच्छनीयः प्रतिपच्छनीयो मेदिः प्रमाणम् आधारआलम्बनभूतश्चक्षुर्भूतः सर्वभूमिकासु लब्धप्रत्ययो वितीर्णविचागे राज्यधुराचिन्तकश्चापि आसीत् ॥१०२॥

पार्जनरूप क्रिया में प्रवृत्त था, तथा-विपुल मात्रा में इसके यहां भोजन पान जालेने पर भी बचा रहता था, दासी, दास, गो, महिष एवं गवेलक-मेष ये सब इसके यहां प्रचुरसंख्या में थे, तथा यह चित्र सारथि साम, दंड, भेद और दान इन चार राजनीतियों में अर्थप्राप्ति के साधनों का प्रतिपादन करने वाले शास्त्र में एवं ईहाप्रधान बुद्धि में, विशारद निपुण था (उत्पत्तियाए, वेणइयाए, पारिणामियाए, चतुर्विहाए बुद्धिए उववेए) औत्पत्तिकी-स्वाभाविक, वैनयिकी, कर्मजा तथा पारिणामिकी अवस्था इन चार प्रकार की बुद्धियों से युक्त था (पएसिस्म रण्णो बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य, कुटुंबेसु य, मन्तेसु य, गुज्जेसु य, रहस्सेसु य, निच्छएसु य, व्यवहारेसु य आपुच्छणिज्जे, पडिपुच्छणिज्जे) प्रदेशी राजा के अनेक कार्यों में, कार्य संपादक हेतुओं में, कुटुम्ब के विषय में, कर्तव्यनिश्चयार्थ गुप्तमंत्रणाओं में, गुह्यों में-लज्जा से गोपनीय कामों में, रहस्यों में प्रच्छन्नव्यवहारों में, एवं निश्चयों में-पूर्णनिर्णयों में, एवं व्यवहारों में-बान्धवादिकों द्वारा समाचरित लोकविपरीत आदिक्रियाओं के प्रायश्चित्तों में अच्छी तरह से यह

प्रवृत्त हुतो. तेमज्ज एने त्यां पुण्ण भाणुमां दोडो लोअन-पान करता हुतां छतांअे लोअन सामग्री भूण पडी रहेती हुती. दासी, दास, गाय महिष अने गवेलक-मेष आ अथा अनेत्यां प्रचुर संख्यामां हुतां. अे चित्र सारथि साम. दंड, भेद अने दानआ चारे चार राजनीति-अेमां, अर्थ प्राप्तिना साधनोत्तुं प्रतिपादन करनां शास्त्रोमां अने छडा प्रधान बुद्धिमां विशारद-निपुणहुतो. (उत्पत्तियाए, वेण-ईयाए. परिणामियाए, चतुर्विहाए बुद्धिए उववेए) औत्पत्तिकी-स्वाभाविक, वैनयिकी, कर्मज अने पारिणामिकी आ चार प्रकारनी बुद्धिअेथी ते युक्त हुतो. (पएसिस्म रण्णो बहुसु कज्जेसु य कारणेसु य, कुटुंबेसु य, मन्तेसु य, गुज्जेसु य, रहस्सेसु य, निच्छएसु य, व्यवहारेसु य, आपुच्छणिज्जे, पडिपुच्छणिज्जे) प्रदेशी राजना अनेक कार्योमां, कार्य संपादक हेतुअेमां, कुटुम्बनी भागतमां, कर्तव्य निश्चयार्थ गुप्त मंत्रणुअेमां, गुह्योमां अशरमने लीधे गोपनीय कामोमां, रहस्योमां—प्रच्छन्न व्यवहारोमां अने निश्चयोम पूणुं निर्णयोमां अने व्यवहारोमां बांधवो वगेरे वडे लोक विपरीत आचरण करवा अहल तेमने प्रायश्चित्त कराववामां, चारे घडीअे

ટીકા—‘તસ્સ ણ’ હત્યાદિ—

તસ્ય સ્વલુ પ્રદેશિનો રાજો જ્યેષ્ઠાત્વવ્યસ્યકઃ=જ્યેષ્ઠાત્વતુલ્યો વ્યસ્યકઃ. સ્વસ્ય પરમાદરણીયત્વાત્ ચિત્રો નામ=ચિત્રનામા સારથિઃ આમીન । સ ચિત્રસારથિઃ આદ્યઃ=સમૃદ્ધઃ ‘જાત-યાવત્-યાવત્પદેન-દિત્તે’ વિન્થિળ-વિઝલ-સયણાસણ-જાણ-વાહણાઈળો વહુધળ-વહુજાયસ્વ-રયણ આશ્રય-સંપ્રશોગનંપત્તો વિચ્છદ્ધિય વિઝલમત્તપાળે વહુદાસોદાસગોમહિસમવેલય-

વાર વાર પૂછા જાતા થા-નિષેપરૂપ સે પૂછા જાતા થા (મેઢીપમાણં આહારે આલંબણભૂણ, ચક્ષુભૂણ, સન્વદ્વાગમન્વભૂમિયાસુ લઢ્ઢપચ્ચણ વિહ્ણવિચારે રજ્જધુરાચિત્તણ યાવિ હોત્થા) જિમ પ્રકાર મેધિ કો આશ્રિત કરકે વૈલ ધૂમતે હૈં ઉસી પ્રકાર ઉસે આશ્રિત કરકે મંત્રિમંડલ મંત્રકરનેરૂપ કાર્યા મેં પ્રવૃત્ત હોતા થા. અતઃવહ મેંધીરૂપ થા, તથા પ્રત્યક્ષાદિક પ્રમાણોં કી તરહ વહ હેયોપાદેય પદાર્થોં મેં પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિશાલી હોને કે કારણ સંશય-રહિત હોકર પદાર્થોંકા પરિચ્છેદક થા. હેસલિયે વહ પ્રમાણરૂપ થા. આધાર-ભૂતપદાર્થોંકી તરહ વહ સવ કા આશ્રયદાતા થા. રજ્જુ સ્તંભાદિકોં કી તરહ વહ વિપત્તિરૂપ કૂપ મેં પત્તિ જનોં કા ઉદ્ધારક હોને કે-કારણ અવલમ્બનરૂપ થા. યહાં યહ શંકા હો સકતી હૈં આધાર ઓર અવલંમ્બન મેં કથા ભેદ હૈં ! હેસ કા ઉત્તરણીય કિ જિમકે સહારે સે મનુષ્ય અપની ઉન્નતિ કરતા હૈં યા સ્વરૂપાવસ્થા હોતા હૈં હેસકા નામ આધાર હૈં તથા જિસકે અવલમ્બન સે વિપત્તિયાં દૂર હોતી હૈં હેસકા નામ અવલ-

એની સાથે મંત્રણા કરવામાં આવતી હતી. અને સવિશેષ રૂપમાં એને પૂછવામાં આવતું હતું. (મેઢીપમાણં આહારે આલંબણભૂણ, સન્વદ્વાગમન્વભૂમિયાસુ લઢ્ઢપચ્ચણ વિહ્ણવિચારે રજ્જધુરાચિત્તણ યાવિ હોત્થા) મેઢિના આધારે જેમ બળદ કરે છે તેમ એને આધાર માનીને મંત્રિમંડળ મંત્રણા વગેરે કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થતું હતું. એથી તે મેઢીરૂપ હતો. પ્રત્યક્ષાદિક પ્રમાણોની જેમ તે હેયોપાદેય પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ નિવૃત્તિશાલી હોવા બદલ પદાર્થોનો તે નિશંકપણે પરિચ્છેદક હતો. એથી તે પ્રમાણરૂપ હતો. આધારભૂત પદાર્થોની જેમ તે સૌ કોઈનો આશ્રયદાતા હતો. રજ્જુ સ્તંભાદિકોની જેમ વિપત્તિરૂપ કૂપમાં પડેલાઓનું રક્ષણ કરનાર હોવાથી તે અવલંબનરૂપ હતો. અહીં આધાર અને અવલંબનના અર્થ વિષે શંકા ઉત્પન્ન થઈ શકે છે કે એઓ બન્નેમાં શો તફાવત છે? તો સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે કે જેના સહારે-આશ્રયે માણસ ઉન્નતિ કરે છે કે સ્વરૂપાવસ્થા હોય છે તેનું નામ આધાર છે, તેમજ જેના અવલંબનથી વિપત્તિ દૂર થાય છે.

‘पूए’ छाया—दीप्तो विस्तीर्णविपुलशयनासनयानवाहनाकीर्णो बहुधन-  
बहुजातरूप-रजतआयोगसंप्रयोगसंप्रयुक्तो विच्छिदितविपुलभक्तपानो बहु  
दासीदास गोमहिष गवेलकप्रभृतः इतिसंग्राह्यम्, तत्र-दीप्तः=तेजस्वी विस्तीर्ण  
विपुलभवनशयनासनयानवाहनाकीर्णः—विस्तीर्णानि=विस्तृतानि विपुलानि  
बहूनि भवनानि=गृहाः, शयनानि=तल्पानि आसनानि=पीठकादीनि, यानानि=  
शकटप्रभृतीनि, वाहनानि=हयादयस्तैराकीर्ण=व्याप्तः ममुपेतो वा, बहुधन बहु-  
जानरूपरजतः—बहु=विपुलं धनं=गणिमप्रभृति यस्य स बहुधनः, बहु=विपुलं  
जानरूपं=सुवर्णं रजतं=रूप्यं च यस्य स बहु जातरूपरजतः—बहुधनश्चासौ  
बहुजातरूप-रजनश्चैन-बहुधनबहुजातरूपरजतः, तथा आयोगसंप्रयोग-  
संप्रयुक्तः आसमन्ताद् योजनं=द्विगुणादिलाभार्थं रूप्यादीनामधमर्णा-

म्वन है । नेत्र जैसे अपने विषयभूत होने योग्य पदार्थों का प्रदर्शक  
होता है उसी प्रकार से यह सब सबके लिये सकलार्थ का प्रदर्शक था यदुक्तम्—

“मेधिः प्रमाणं आधारः, आलम्बनं चक्षुः”

इस बात की स्पष्ट प्रतिपत्ति के लिये उपमावाचक भूतशब्द इनके साथ  
जोड़ कर सूत्रकार ने पुनः इनकी इस प्रकार से आवृत्ति की है—यह मेधि  
भूत, प्रमाणभूत, आधारभूत एवं चक्षुभूत था अतः सर्वस्थानों में—सन्धि,  
विग्रह आदिरूप सब जगहों में एवं मन्त्रि-आमात्यादि स्थानरूप सर्वभूमिकाओं  
में यह यथार्थवादीरूप से माना जाता था और राजा ने भी इसी कारण  
अन्तःपुरादि जैसे स्थानों में आने जाने को इसे छूट देरखी थी. इसतरह  
राजा का अतिविश्वास पात्र बना हुआ यह चित्रसारथि सकल राज्यकार्य  
का प्रेक्षक भी बन गया था.

तेनुं नाम अवलोकनं छे. नेत्र जेभ पोताने विषयभूत थवा योग्य पदार्थोना प्रदर्शक  
होय छे तेमज ते पणु सौ भाटे सकलार्थोना प्रदर्शक हतो.

जेभके:—“मेधिः प्रमाणं आधारः, आलम्बनं चक्षुः”

जे जे बातने वधारे स्पष्ट करवा भाटे सूत्रकारे उपमावाचक ‘भूत’ शब्द जेभने  
दंगाडीने करी आ शण्डोनी आ प्रमाणे आवृत्ति करी छे—जे मेधिभूत, प्रमाणभूत  
आधारभूत, अने चक्षुभूत हतो. जेथी जधे—सन्धि, विग्रह वगेरे इप जधी जज्याजे  
अने मन्त्रि आमात्यादि स्थानरूप सर्वभूमिकाओमां ते साथी सलाह आवनार गणतो  
होतो. जेथी राजाजे पणु अन्तःपुर जेवां स्थानोमां पणु तेने प्रवेशवानी छूट आपी  
दीधी हती. राजानो अतिविश्वासपात्र जनेदो जे चित्र सारथि आभ समस्त :राज्य-  
कार्योना प्रेक्षक पणु जनी गयो हतो.



दिश्यो नियोजनमायोगः, तस्य प्रयोगः-प्र=प्रकर्षेण योजनम्=उपायचिन्तनम्  
 आयागप्रयोगः, यद्वा-आयोगेन=द्विगुणादिलिप्पया प्रयोगः=अधमर्णानां सविधे  
 द्रव्यस्य वितरणम्-आयोगप्रयोगः, स्व संप्रयुक्तः=प्रवर्तितो येन, तस्मिन् वा  
 संप्रयुक्तः=संलग्नो यः स आयोगप्रयोगसंप्रयुक्तः=द्रव्योपाजनप्रवृत्त इत्यर्थः,  
 तथा-विच्छर्दि तत्रिपुलभक्तपानः-विच्छर्दिते वि=विशेषेण छर्दिते=भोजनावशिष्टे  
 भक्तपाने=भक्तं च पानं च यस्य सः, तथा-बहुदासीदामगोमहिषगवेलक-  
 प्रभृतः-दास्यश्च दासाश्च गावश्च महिषाश्च गवेलकाः=उरभ्राश्चेति-दासीदाम-  
 गोमहिषगवेलकाः, बहवः=प्रचुरा दापीदासगोमहिषगवेलका यस्य सः, तथा-  
 बहुजनस्य=जातिविवक्षयैकवचनं संबन्धसामान्ये पण्ठी, तेन बहुजनैरित्यर्थो  
 बोध्यः, अत्र अपीत्यध्याहाराद् बहुजनैरपि अपरिभृतः=पराभव रहितश्चासीत्।  
 तथा-स चित्रसारथिः-सामदण्डभेदोपप्रदानार्थं शास्त्रेहामतिविशारदः-तत्र-साम  
 =मान्त्वं, दण्डो=दमः, भेदो=द्वैधीकरणम्, उपप्रदानं=दानम्-इत्येतास्तु चतसृषु  
 राजनीतिषु तथा-अर्थशास्त्रे=अर्थप्राप्तिसाधनप्राप्तपादके शास्त्रे, ईहा-मतौ ईहा=  
 विमर्शस्तत्प्रधाना मतिः=बुद्धिस्तस्यां च विशारदः=निपुणः, तथा औत्पत्ति  
 वया=स्वाभाविक्या-अदृष्टाश्रुताननुभूतविषयया स्वतः समुत्पन्नया, वैनयिक्या=  
 गुरुसमाराधनसंप्राप्तशास्त्रार्थसंजनितया कर्मजया=कृपिवाणिज्यादिकर्मसंप्रा-  
 प्तया, पारिणामिक्या=वयःपरिणामजनितया चेति चतुर्विधया=चतुष्प्रकारया  
 बुद्ध्या उपपेतो=युक्तश्च आसीत्। तथा-स चित्र सारथिःप्रदेशिनो राज्ञो बहुषु  
 कार्येषु=कर्तव्येषु प्रयोजनेष्विति यावत्, कारणेषु=कार्यजातसम्पादकहेतुषु  
 कुटुम्बेषु=कुटुम्बविषये मन्त्रेषु=कर्तव्यनिश्चयार्थं गुप्तविचारेषु गुह्येषु=लज्जया  
 गोपनीयेषु व्यवहारेषु रहस्येषु=रहसि=एकान्ते भवा रहस्याम्लेषु प्रच्छन्न-  
 व्यवहारेष्विति यावत्, निश्चयेषु=पूर्णनिर्णयेषु, व्यवहारेषु=व्यवहारप्रवृत्त्येषु,  
 यद्वा-बान्धवादि समाचरितलोकविपरीतादिक्रिया प्रायश्चित्तेषु च आपच्छनीयः-  
 आ=ईषत् सकृत् प्रच्छनीयः=प्रवृत्त्यः, परिप्रच्छनीयः=परि-सर्वतोभावेन असकृत्  
 प्रच्छनीयः=प्रवृत्त्यः, तथा स चित्रसारथिः-मेधिः=यथा मेधिमाश्रित्य गोमण्डलं  
 भ्रमति, तथैव तमाश्रित्य सकलं मन्त्रिमण्डलं मन्त्रकार्येषु पवर्तते, अतः स  
 मेधिः, तथा-प्रमाणम्=प्रत्यक्षादिप्रमाणवद्भेदोपादेयप्रवृत्तिनिवृत्तिरूपतया संशः  
 यराहित्येन पदार्थं परिच्छेदकः, आधारः=आधारवत्सर्वेषामाश्रयभूतः,  
 आलम्बनं=रज्जुस्तम्भादिवद् विषत्कूपेपतज्जनोद्धारकतयाऽवलम्बनम्। ननु-  
 आधारोलम्बनयोः को भेदः? इति चेत्, यमधिष्ठाय जन उन्नतिं गच्छति  
 स्वरूपावस्थो वा भवति स आधारः, यदवलम्बनेन च विपदो विनिवर्तते

તદાલમ્બનમ્—इति भेदं गृहाण । चक्षुः=चक्षते पश्यन्त्यनेनेति चक्षुः=नेत्रं, तद्वत्  
सर्वेषां सकलार्थप्रदर्शकः । यदुक्तम्—

“મેધિઃ પ્રમાણમ્ આધારઃ આલમ્બનંચક્ષુઃ” इति, तदेव स्पष्टप्रतिपत्तये  
औपम्यवाचि—भूतशब्दसम्मेलनेन पुनरावर्त्तयति—‘मेधिभूतः प्रमाणभूतः  
आधारभूतः आलम्बनभूतः चक्षुर्भूतश्चास्ति : तथा—स चित्रमारथिः सर्व  
स्थानसर्वभूमिकासु—सर्वस्थानानि=सन्धिधिग्रहादिरूपाणि सकलकार्याणि च  
सर्वभूमिकाः=मन्त्रमात्यादिस्थानरूपाश्च तासु लब्धः उपलब्धः प्रत्ययः=प्रतीति  
यथार्थवादितया येन म तथाभूतः, तथा—विनीर्णविचारः—वितीर्णः=राज्ञा  
प्रदत्तः विचारः=विचरणम् अन्तःपुरादिषु सर्वत्र यमै स तथा राज्ञोऽनि  
विश्वासपात्रमित्यर्थः, तथा—राज्यधुराचिन्तकः=सकलराज्यकार्यप्रेक्षकश्चापि  
आसीत् ॥सू० १०२॥

इसकी टीका का अर्थ इसी मूलार्थ के साथ कर दिया गया है,  
फिर भी जिन पदों का अर्थ मूलार्थ में नहीं किया गया है—उनका अर्थ  
इस प्रकार से है—विमर्श प्रधान मति का नाम ईदामति है. स्वाभाविक बुद्धि  
का नाम कि—जो अदृष्ट अननुभूत, अश्रुत आदि पदार्थों को विषय करती  
है और उनमें स्वयं ही उत्पन्न हो जाती है वह औत्पत्तिकी बुद्धि है । इसका  
नाम “हाजिर जवाबी” भी हैं. गुरुजनों की सेवा शुश्रूषादि करने से  
प्राप्त शास्त्रार्थ के चिन्तन से जो बुद्धि प्राप्त होती है उसका नाम वैनयिकी  
बुद्धि है । कृषिवाणिज्य आदिकर्म करते-र जो बुद्धि प्राप्त होती है उसका  
नाम कर्मजा बुद्धि है । जैसे उमर बढ़ती जाती है वैसे जो बुद्धि प्राप्त  
होती है उसका नाम पारिणामिकी बुद्धि है । अर्थात् वयः परिणाम जनित  
बुद्धि का नाम ही पारिणामिकी बुद्धि है ॥सू० १०२॥

આનો ટીકાર્થ મૂલાર્થમાં જ સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. છતાં એ કેટલાંક પદોનો  
અર્થ મૂલાર્થમાં સ્પષ્ટ થયો નથી તેમનો અર્થ સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે. વિમર્શ  
પ્રધાનમતિનું નામ ઈદામતિ છે. અદૃષ્ટ, અનનુભૂત, અશ્રુત વગેરે પદાર્થોને વિષયભૂત  
બનાવનારી અને તેમાં પોતાની મેળે જ ઉત્પન્ન થનારી સ્વાભાવિક બુદ્ધિનું નામ  
ઔત્પત્તિકી બુદ્ધિ છે. આને ‘હાજિર જવાબી’ પણ કહે છે. ગુરૂજનોની સેવા શુશ્રૂષા  
વગેરેથી પ્રાપ્ત થયેલી અને શાસ્ત્રાર્થ ચિંતનથી પ્રાપ્ત થયેલી બુદ્ધિ વૈનયિકી કહેવાય  
છે. કૃષિ વાણિજ્ય વગેરે કર્મો કરતાં કરતાં જે બુદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ કર્મજા  
બુદ્ધિ છે. આયુષ્યની વૃદ્ધિ સાથે સાથે જે બુદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે તે પારિણામિકી બુદ્ધિ  
છે. એટલે કે વયઃપરિણામ જનિત બુદ્ધિનું નામ જ પારિણામિકી બુદ્ધિ છે. ॥સૂ૦૧૦૨॥



मूलम्—तेण कालेणं तेणं समएणं कुणाला नामं जणवए  
 होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धे । तत्थ णं कुणालाए जणवए सावत्थी नाम  
 नगरी होत्था, रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव पडिख्वा । तिसे णं साव-  
 त्थीए णगरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए कोट्टए नामं चेइए  
 होत्था, पुराणे जाव पासाईए ४ । तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पए-  
 सिस्स रन्नो अंतेवासी जियसत्तू नाम राया होत्था, महया हिम-  
 वंत जाव विहरइ ॥ सू० १०३ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये कुणाला नाम जनपद आसीत्,  
 ऋद्धन्तिमितममृद्धः । तत्र मल्ल कुणालायां जनपदे श्रावस्ती नाम नगरी आसीत्  
 ऋद्धन्तिमितममृद्धा यावत् प्रतिरूपा । नस्याः मल्ल श्रावस्त्या नगर्याः बहिर्-

‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में—अवसर्पिणी के  
 चौथे आरे में और केशिस्वामी के विहार से उपलक्षित उस समय में  
 (कुणालानामं जणवए होत्था) कुणाला इस नामका देश था (रिद्धत्थि-  
 मियसमिद्धे) यह देश ऋद्ध, स्तिमित एवं समृद्ध था यावत् प्रतिरूप  
 —सर्वोत्तम था (तत्थ णं कुणालाए जणवए सावत्थी नाम नयरी होत्था) उस  
 कुणालादेश में श्रावस्ती नामकी नगरी थी (रिद्धत्थिमियसमिद्धा जाव  
 पडिख्वा) यह नगरी भी ऋद्ध स्तिमित एवं समृद्ध थी और यावत् प्रति-  
 रूप थी (तीसे णं सावत्थीए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए  
 कोट्टए नाम चेइए होत्था) उसश्रावस्ती नगरी के बाहिर में ईशानकोने में

“तेणं कालेणं तेणं समएणं” इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काले—अवसर्पिणीना चोथा  
 आरामां अने केशिस्वामीना विहारना समये (कुणाला नामं जणवए होत्था)  
 कुणाला नामे देश होतो. (रिद्धत्थिमियसमिद्धे) आ देश ऋद्ध स्तिमित अने समृद्ध  
 होतो यावत् प्रतिरूप—सर्वोत्तम होतो (तत्थ णं कुणालाए जणवए सावत्थी नाम  
 नयरी होत्था) ते कुणालदेशमां श्रावस्ती नामे नगरी होती. (रिद्धत्थिमियस-  
 मिद्धा जाव पडिख्वा) आ नगरी पणु ऋद्ध स्तिमित अने समृद्ध होती अने  
 यावत् प्रतिरूप होती. (तीसे णं सावत्थीए नयरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसी  
 भाए कोट्टए नाम चेइए होत्था) ते श्रावस्ती नगरीनी बहार धशान केणुमां

त्तरपौरस्ये दिग्भागे कोष्ठको नाम चैत्यमासीत्, पुराणं यावत् प्रासादीयम्  
४। तत्र खलु आवस्त्या नगर्यां प्रदेशिनो राज्ञोऽन्तेवासी जितशत्रुं नाम  
राजा आसीत् महाहिमवद् विहरति ॥ सू० १०३ ॥

टीका—‘तेणं कालेणं’ इत्यादि—

तस्मिन् काले=अस्या अवसर्पिण्याश्चतुर्थारकलक्षणे काले तस्मिन् समये=  
केशिस्वामिविहरणोपलक्षिते समये कुणाला नाम जनपदः=कुणालाभिधो  
आसीत्। स जनपद ऋद्धस्तिमितसमृद्धः आसीत्। तत्र खलु कुणालायां जन-  
पदे आवस्ती नाम नगरी आसीत्। सा नगरी ऋद्धस्तिमितसमृद्धा यावत्  
प्रतिरूपा चासीत्। यावत्पदेनात्र-औपपातिकसूत्रोक्तचम्पानगरीवर्णनं सर्वं  
संग्राह्यम्। तस्याः खलु आवस्त्या नगर्याः बहिः=प्रदेशे उत्तरपौरस्ये उत्तर-  
पूर्वचोरन्तराले दिग्भागे=ईशानकोणे कोष्ठको नाम चैत्यमासीत्, तच्चैत्यं  
पुराणं यावत् प्रासादीयं दर्शनीयम् अभिरूपं प्रतिरूपं चासीत्। यावत्प-  
देनात्र-औपपातिकसूत्रोक्तसर्वमनुसन्धेयम्। तत्र खलु आवस्त्यां नगर्यां  
प्रदेशिनो राज्ञः अन्तेवासी अन्ते=समीपे वसतीत्येवं शीलोऽन्तेवासी=

कोष्ठक नामका चैत्यं था (पुराणे जाव पासाईए४) यह चैत्य प्राचीन था  
यावत् प्रासादीय था, दर्शनीय था, अभिरूप था और प्रतिरूप था (तत्थ णं  
सावत्थीए नगरीए पएसिस्सरन्नो अन्तेवासी जियसत्तु नाम रायां होत्था, महया  
हिमवन्त जाव विहरइ) उस आवस्ती नगरी में प्रदेशी राजा का अन्तेवासी  
जितशत्रु नाम का राजा था, जो महाहिमवान् आदि के जैसा बलवाला था।

टीकार्थ इसका स्पष्ट है—आवस्ती नामकी नगरी का वर्णन औप-  
पातिक सूत्र में कथित चम्पानगरी के वर्णन जैसा है, चैत्य-उद्यान के वर्णन में  
भी औपपातिक सूत्रोक्त वर्णन यहां पर ग्रहण करना चाहिये, अन्तेवासी

कोष्ठक नामे चैत्य इत्तुं. (पुराणे जाव पासाईए४) आ चैत्य प्राचीन इत्तुं यावत्  
प्रासादीय इत्तुं. दर्शनीय इत्तुं, अभिरूप इत्तुं अने प्रतिरूप इत्तुं। (तत्थ णं सावत्थीए  
नगरीए पएसिस्सरन्नो अन्तेवासी जियसत्तु नाम राया होत्था, महया  
हिमवन्त जाव विहरइ) ते आवस्ती नगरीमां प्रदेशी राजानो अन्तेवासी जितशत्रुं  
नामे राजा इत्तो. ते महाहिमवान् वगेरे जेवो गणवान् इत्तो.

टीकार्थ—आ सूत्रने टीकार्थ स्पष्ट न छे. औपपातिक सूत्रमां चम्पानगरीत्तुं जे  
प्रमाणे वर्णन करवांमां आण्युं छे तेमज आवस्ती नगरीत्तुं वर्णन पणु समज्जुं  
जेधज्जे. चैत्यत्तुं वर्णन पणु औपपातिक सूत्रना वर्णननी जेम समज्जुं जेधज्जे.

शिष्य. अन्तेवासाव-अन्तेवासी-सम्यगाज्ञापालक इति भावः, तथा भूतो  
निनशत्रुर्नाम राजा आसीत्। स जितशत्रू राजा महाहिमवद्-यावद्  
विहरति। 'जितशत्रो राज्ञः सर्व' वर्णनमौपपातिकसूत्रोक्तकूणिकराजवद्  
बोध्यमिति ॥सू० १०३॥

मूलम्--तएणं से पएसी राया अन्नया कयाइं महत्थं महग्घं  
महरिहं विउलं रायारिहं पाहुडं सज्जावेइ सज्जावित्ता चित्तं सारहि  
सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-गच्छ णं चित्ता ! तुमं सावन्थि नगरिं  
जियसत्तस्स रणो इमं महत्थं जाव पाहुडं उवणेहि जाइं तत्थ  
रायकज्जाणि य रायकिच्चाणि य रायनिईओ य रायववहारा य तांइं  
जियसत्तु ॥ राद्धि समयमेव पच्चुवेक्खमाणे विहराहिति कट्टु विस  
जए ॥ सू० १०४ ॥

छाया—ततः खलु य प्रदेशी राजा अन्यदा कदाचित् महार्थं महार्धं  
महार्हं विपुलं राजार्हं प्राप्नुतं सज्जयति, सज्जयित्वा चित्रं सारथिं शब्द-  
शब्द क अर्थ शिष्य है. वह अन्तेवासी के समाने अन्तेवासी था अर्थात्  
उसकी आज्ञा का अच्छी तरह से पालक था. जितशत्रु राजा का सर्ववर्णन  
औपपातिक सूत्रोक्त कूणिक राजाकी तरह से है ऐसा जानना चाहिये ॥सू० १०३॥

‘तएणं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं से पएसी राया अन्नया कयाइं महत्थं महग्घं मह-  
रिहं विउलं रायारिहं पाहुडं सज्जावेइ) एक दिन की बात है कि प्रदेशी  
राजा ने महार्थ-विपुल प्रयोजनवाला-मातिशयप्रयोजनयुक्त, महार्ध-बहुमूल्य,  
महार्ह-अतिशोभायुक्त, विपुल-बहुत बड़ा ऐसा राजा के योग्य प्राप्त-भेंट

अन्तेवासी शब्दने अर्थ शिष्य छ. ते अन्तेवासीनी जेम अन्तेवासी हुतो अटवे डे  
ते सरसरीते तेनी आज्ञातुं पालन करतो हुतो. जितशत्रु राजातुं णधुं वर्णन औप-  
पातिक सूत्रोक्त कूणिक राजाणी जेमज समजधुं जेधये. ॥ सू० १०३॥

‘त एणं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(त एणं से पएसी राया अन्नया कयाइं महत्थं महग्घं म-  
हरिहं विउलं रायारिहं पाहुडं सज्जावेइ) ते प्रदेशी राजाये अक द्विसे महार्थ  
विपुल प्रयोजनवाणी-सातिशय प्रयोजन युक्त, महार्ध-बहुमूल्यवाणी, महार्ह अति-  
शोभायुक्त, विपुल-पुष्कण प्रमाणुमां राजायेना भाटे येअ येवी सेट (प्राप्त) तैयार करी.

यति, शब्दयित्वा एवमवादीत-गच्छ खलु चित्र ! त्वं श्रावस्तीं नगरीं जित-  
शत्रोः राज्ञ इदं महार्थं यावत् प्राभृतम् उपनय, यानि तत्र राजकार्याणि च  
राजकृत्यानि च राजनीतयश्च राजव्यवहाराश्च तानि जितशत्रुणा साद्धं स्वय-  
मेव प्रत्युत्प्रेक्षमाणो विहरेति कृत्वा विसर्जितः ॥मू० १०४॥

टीका—‘तएणं इत्यादि—

ततः खलु स प्रदेशो राजा अन्यदा कदाचित्=अन्यस्मिन्=कस्मि-  
श्चित् समये महार्थं—महान्=विपुलः अर्थः=प्रयोजनं यस्य स तथा तत्-  
सातिशयप्रयोजनयुक्तम् महार्थं=बहुमूल्यं महार्हम्=अतिशोभनं विपुलं=  
बृहत् राजर्हं=नृपयोग्यं प्राभृतम्=उपहारम् सज्जयति=कल्पयति, सज्जयित्वा  
चित्रं सारथिं शब्दयति=आह्वयति, शब्दयित्वा एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण  
अवादीत-हे चित्र ! त्वं खलु श्रावस्तीं नगरीं गच्छ, तत्र-जितशत्रोः राज्ञः  
कृते इदं महार्थं यावत् प्राभृतम् उपनय=प्रापय यानि तत्र=श्रावत्यां राज-  
कार्याणि=राज्ञो राज्य सम्बन्धीनि कर्त्तव्यानि राजकृत्यानि=राज्ञःस्वविषयाणि  
प्रतिदिवससम्बन्धिकर्त्तव्यानि, राजनीतयः=साम-दण्ड-भेदोपप्रदानरूपाः राज-

सजाया (सज्जावित्ता चित्तं सारहिं सदावेइ) सजाकर फिर उसने चित्र  
सारथि को बुलाया (सदावित्ता एवं वयासी) बुलाकर उससे ऐसा कहा  
(गच्छणं चित्ता ! तुमं सारथि नयरिं जियसत्तुस्स रण्णो इमं महत्थं जाव  
पाहुडं उवणेहि) हे चित्र ! तुम श्रावस्तीनगरी में जाओ वहां जितशत्रु के  
लिये यह महाप्रयोजन साधक यावत् भेंट दे आओ तथा (जाइं तत्थ राय-  
कज्जाणि य रायकिचाणि य रायनीईओ य रायववहारा य ताइं जियसत्तुणा  
सद्धिं सयमेव पच्चुवेक्खमाणे विहराहि त्ति कट्ठु विसज्जिए) जो वहां पर  
राजा के राजसंबंधी कर्त्तव्य हों राजा के अपने प्रतिदिवस के कर्त्तव्य  
हो, राजनीति साम, दंड, भेद एवं उपप्रदानरूप हों एवं राजव्यवहार हों

(सज्जावित्ता चित्तं सारहिं सदावेइ) तैयार करीने तोछे चित्र सारथीने बोलाव्यो  
(सदावित्ता एवं वयासी) बोलावीने तेने आ प्रभाण्णे क्खुं, (गच्छ णं चित्ता !  
तुमं सारथि नयरिं जियसत्तुस्स रण्णो इमं महत्थं जाव पाहुडं उवणेहि)  
हे चित्र ! तमे श्रावस्तीनगरीमां आवो अने जितशत्रुने आ महाप्रयोजन साधक  
यावत् भेंट आपी आवो, तथा (जाइं तत्थ रायकज्जाणि य रायकिचाणि य  
रायनीईओ य रायववहारा य ताइं जियसत्तुणा सद्धिं सयमेव पच्चुवेक्ख-  
माणे विहराहि त्ति कट्ठु विसज्जिए) त्यां राजना राज संबंधिने कर्त्तव्यो  
होय, राजनीतिने लगती साम, दंड, भेद अने उपप्रदान उप-भाणतो होय, राजकृत

व्यवहाराः=राजकृतन्यायाश्च भवन्ति, तानि सर्वाणि जितशत्रुणा नृपेण साद्वं  
स्वयमेव प्रत्युत्प्रेक्षमाणो=निरीक्षमाणो विहर=तिष्ठ इति कृत्वा=इत्युक्त्वा स  
चित्रसारथिस्तेन विसर्जितः ॥ सू० १०४ ॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही पएसिणा रणणा एवं वुत्ते  
समाणे हट्टु—जाव पडिसुणेत्ता तं महत्थं जाव पाहुडं गेण्हइ, पए-  
सिस्स रणणो अंतियाओ पडिणिक्खमइ, सेयविया नयरीए मज्झं-  
मज्झेण जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तं महत्थं  
जाव पाहुडं ठवेइ, कोडुंबियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासा-  
खिप्पामेय भो देवाणुप्पिया ! सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घटं  
आसरहं जुत्तामेव उवट्टवेह जाव पच्चप्पिणहा तएणं ते कोडुंबिय-  
पुरिसा तहेव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउ-  
ग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्टवेति, तामाणत्तियं पच्चप्पिणंति । तएणं  
से चित्ते सारही कोडुंबिय-पुरिसाण अंतिए एयमट्ठं जाव हियए ण्हाए  
कयवलिकस्मे कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सन्नद्धवद्धवम्मिय-  
कवए उप्पालियसरासणपट्टिए पिण्हगेविज्जविमलवरचिघपट्टे गहिया-  
उहप्पहरणे तं महत्थं जाव पाहुडं गेण्हइ, जेणेव चाउग्घटे आसरहे  
तेणेव उवागच्छइ, चाउग्घटं आसरहं दुरुहेइ, बहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध-  
जाव गहियाउहपहरणेहिं सट्ठिं संपरिवुडे सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं

राजकृत न्याय हों, उन सब का जितशत्रु राजा के साथ निरीक्षण  
करते रहो. इस प्रकार कहकर चित्रसारथि को उसने विसर्जित कर दिया ।  
टीकार्थ स्पष्ट है ॥सू० १०४॥

न्याय होय आ 'अधातु' जितशत्रु राजानी पासो रखीने तसे निरीक्षण करता रहे,  
आ प्रमाणे कहीने तेणे चित्र सारथिने जवानी आज्ञा करी,  
आ सूत्रने टीकार्थ स्पष्ट छे, ॥१०४॥

धरेज्जमाणेणं महया—भडचडगररहपहकरविंदपरिक्खित्ते साओ  
गिहाओ णिग्गच्छइ, सेयवियाए नयरीए मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ,  
सुहेहिं वासेहिं पायरासेहिं नाइविकिट्ठेहिं अंतरावासेहिं वसमाणे  
वसमाणे केइयदस्स जणवयस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव कुणाला जण-  
वए जेणेव सावत्थी नयरी तेणेव उवागच्छइ, सावत्थीए नयरीए  
मज्झं मज्झेणं अणुपविसइ, जेणेव जियसत्तुस्स रण्णो गिहे जेणेव  
बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, तुरए णिगिण्हइ, रहं  
ठवेइ, रहाओ पच्चोरुहइ, तं महत्थं जाव पाहुडं गिण्हइ, जेणेव आभि-  
तरिया उवट्ठाणसाला जेणेव जियसत्तु राया तेणेव उवागच्छइ, जिय-  
सत्तु राय करयलपरिग्गहिय जाव कट्ठु जएणं विजएणं वट्ठावेइ,  
त महत्थं जाव पाहुडं उवणेइ ॥ सू० १०५ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिना राज्ञा एवमुक्तः सन्  
दृष्ट्वा यावत् प्रतिश्रुत्य तत् महार्थं यावत् प्राभृतं गृह्णाति, प्रदेशिनो राज्ञो  
ऽन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति, श्वेतविकाया नगर्या मध्यमधमेन यत्रैव स्वकं

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (से चित्ते सारही) उस चित्र सारथिने  
जब (पएसिणा रण्णा) प्रदेशी राजाने एवं बुत्ते समाणे) उसने ऐसा कहा-  
तब वह (हट्टु जाव) बहुत प्रसन्न हुआ यावत् (पडिसुणेत्ता तं महत्थं जाव  
पाहुडं गेण्हइ) उसकी आज्ञा के वचनों को स्वीकार करके उस महार्थ-  
साधक यावत्—प्राभृतको लिया (पएसिस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमइ)  
और लेकर—वह प्रदेशी राजा के पास से निकला (सेयविया नयरीए मज्झं म-  
ज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) और श्वेतविका नगरी के

सुत्रार्थ—(तएणं) त्थार पछी (से चित्ते सारही) ते चित्र सारथिने न्यारे  
(पएसिणा रण्णा) प्रदेशी राजाने (एवं बुत्ते समाणे) आ प्रभाणे आज्ञा करी त्थारे  
ते (हट्टु जाव) अत्यंत प्रसन्न थये यावत् (पडिसुणेत्ता तं महत्थं जाव पाहुडं  
गेण्हइ) तेनी आज्ञाना वचनाने स्वीकारी ने तेण्हे ते महार्थसाधक यावत् लेटने लध  
दीधी, (पएसिस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमइ) अने लधने ते प्रदेशी राजानी  
पासेथी ठेलो थधने गडार नीट्ठयो, (सेयविया नयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव सए

गृहं तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तत् महार्थं यावत् प्राप्नुतं स्थापयति, कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादिषुः क्षिप्रमेव भो देवानुः प्रियाः ! सच्छत्रं यावत् युद्धसज्जं चातुर्वर्ण्यम् अश्वरथं युक्तमेव उपस्थापयत यावत् प्रत्यर्पयत । ततः खड्गं ते कौटुम्बिकपुरुषाः तथैव प्रतिश्रुत्व क्षिप्रमेव सच्छत्रं यावत् युद्धसज्जं चातुर्वर्ण्यम् अश्वरथयुक्तमेव उपस्थापयन्ति,

बीचों बीच से होता हुआ जहाँ अपना गृह था वहाँ पर आया (उवागच्छित्ता तं महत्थं जाव पाहुडं ठवेह्) वहाँ आकर के उमने उस महार्थ-महाप्रयोजनसाधक यावत् प्राप्नुत को एक तरफ रख दिया (कौटुम्बिकपुरिसे सदावेह्) और अपने कौटुम्बिक पुरुषोंको बुलाया (सदाचित्ता एवं वयासी) उनसे ऐसा कहा (खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह्, जाव पच्चप्पिणह) हे देवानुप्रियो ! तुम लोग शीघ्र ही रथ को घोड़ा जोतकर तैयार करके यहाँ ले आओ, उसे चार घंटाओं से सज्जित करना. यावत् फिर हमारी इस आज्ञा को हमें वापिस करना—उस पर छत्र भी लगाना यावत् उसे युद्ध के योग्य सज्जित करना. (तएणं ते कौटुम्बिकपुरिसा तहेव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ति) चित्र सारथि के इस प्रकार वचन सुनकर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने बहुत ही जल्दी छत्रयुक्त करके यावत् चार घंटोंवाले उस अश्वरथ को तैयार

गिहे तेणेव उवागच्छइ) अने श्वेतविज्जनगरीनी वन्धे थधने जयां पोतानुं धर छतुं त्यां गये। (उवागच्छित्ता तं महत्थं जाव पाहुडं ठवेह्) त्यां जधने तेण्हे ते महार्थ साधक महाप्रयोजन साधक यावत् लेटने एकतरफ मूझीदीधी, (कौटुम्बिकपुरिसे सदावेह्) अने पोताना कौटुम्बिक पुरुषोने जालाव्या, (सदाचित्ता एवं वयासी) जालावीने तेमने कहुं, (खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह् जाव पच्चप्पिणह) हे देवानुप्रियो ! तमे घोडा जेतरीने शीघ्र रथ तैयार करे, अने अडीं लावे, रथने चार घंटाओथी सज्जित करे। यावत् आज्ञा प्रमाणे काम-पुरुं करीने अमने जणर आपो, रथनी उपर छत्र होवुं जेधये यावत् जधी रीते युद्धना माटे योग्य होय तेम सज्जित करने, (तएणं कौटुम्बिकपुरिसा तहेव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सच्छत्तं जाव जुद्धसज्जं चाउग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ति) जिय सारथिना आ प्रमाणे वचन, सांखणीने ते कौटुम्बिक पुरुषोने एकदम त्वराथी छत्रयुक्त यावत् चार घंटोथी सुस-



तामांशसिकां प्रत्यर्पयन्ति । ततः खलु स चित्रः सारथिः कौटुम्बिकपुरुषाणां  
अन्तिके एतमर्थं यावत् हृदयः स्नातः कृतबलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः  
सन्नद्धबद्धवर्मितकवचः उत्पीडितशामनपट्टिकः पिण्डगैवेयविमलवरचिह्नपट्टो  
गृहीतायुधप्रहरणस्तन्महार्थं यावत् प्राभृतं गृह्णाति, यत्रैव चातुर्घटः अश्व  
रथस्तत्रैव उपागच्छति, चातुर्घटम् अश्वरथं दूरोहति, बहुभिः पुरुषैः सन्नद्ध-

कर उपस्थित कर दिया (तमाणत्तियं पञ्चपिण्ति) और चित्र सारथि के  
पास रथ को तैयार हो जाने की खबर भेज दी. (तएणं से चित्ते सारही  
कोडुं वियपुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा जाव हियए ण्हाए कयबलिकम्म  
कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सन्नद्धबद्धवर्मियकवए, उत्पीलियसरासणपट्टिए,  
पिण्डगैवेज्जविमलवरचिंधपट्टे गहियाउहप्पहरणे तं महत्थं जाव पाहुडं गेह्हइ)  
कौटुम्बिक पुरुषों से की गई खबर को सुनकर वह चित्र सारथि बहुत ही  
अधिक आनंदित एवं संतुष्ट चित्त हुआ-उसने उसी समय उठकर स्नान किया.  
बलिकर्म (काकआदि को अन्नभाग देनेरूप) किया, कौतुक मंगल एवं प्रायश्चित्त  
किये अच्छी तरह से बांधकर कवच पहिरा, प्रत्यंचा चढ़ाकर धनुष को नम्रीभूत  
किया, घोड़ा में हार पहिरा, तथा सुन्दर चित्रों से चिह्नित निर्मल वस्त्र धारण  
किये और खड्गादिक आयुधों को साथ में लिए. इस प्रकार से अच्छी  
तरह से सज्जित होकर उसने उस महार्थसाधक यावत् प्राभृत को हाथ  
में लिया और (जेणेव चाउग्घटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ

सज्जित करीने अश्वरथने उपस्थित कर्हो. (तमाणत्तियं पञ्चपिण्ति) अने रथ तैयार  
थइ ज्वानी अणर चित्र सारथिनी पासे पडोयाडी. (तएणं से चित्ते सारही  
कोडुं वियपुरिसाणं अंतिए एयमट्ठं सोच्चा जाव हियए ण्हाए कयबलिकम्म  
कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सन्नद्धबद्धवर्मियकवए उत्पीलियसरासणपट्टिए,  
पिण्डगैवेज्जविमलवरचिंधपट्टे गहियाउहप्पहरणे तं महत्थं जाव  
पाहुडं गेह्हइ) कौटुम्बिक पुरुषानी काम पूर्ण थइ ज्वानी अणर सांलणीने ते चित्र  
सारथि भूण्णं आनंदित अने संतुष्ट चित्त थयो. तेणे तरतज स्नान क्युं, अलि  
कर्म क्युं, कौतुक मंगल अने प्रायश्चित्त कर्हो. सरस रीते कसीने कवच पडैयुं, प्रत्यंचा  
यढावीने धनुषने नम्र अनाय्युं. गणाभां डार पडैयो, सुंदर सुंदर चित्रोथी चिन्डित  
निर्मल वस्त्रो धारण कर्हो. अने अड्ढा वगेरे आयुधो अने प्रहुरणो साथे लीधां. आ प्रमाणे  
सरस रीते सज्जित थइने तेणे ते महार्थसाधक यावत् लेटने हाथभां लीधी अने  
(जेणेव चाउग्घटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, चाउग्घटं आसरहं दुरुहेइ)  
लधने ते जथा चातुर्घट अश्वरथ तैयार हुतो त्यां गयो. त्यां जधने ते रथ उपर



यावद्-गृहीतायुधप्रहरणैः सार्द्धं सम्परिवृतः सकोरिष्टमाल्यदाम्ना छत्रेण  
 त्रियमाणेन महाभटवटकरथपहकरवृन्दपरिक्षिप्तः स्वाद् गृहाद् निर्गच्छति,  
 श्वेतविकाया नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छति, सुखैः वासैः प्रातराशैः नाति-  
 विकृष्टैः अन्तरावासैः वसन् वसन् केकयाद्धस्य जनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव  
 कुणाला जनपदो यत्रैव श्रावस्ती नगरी तत्रैव उपागच्छति, श्रावस्त्यां

चाउग्र'ट' आसरहं दुरुहेइ) लेकर जहां वह चातुर्घट  
 अश्वरथ तैयार खड़ा था वहां पर आया-वहां आकरके फिर  
 वह रथ पर चढ़ा (बहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणेहिं सद्धिं  
 संपरिवुडे सकोरिष्टमल्लदामेणं छत्तेणं धरेज्जमाणेणं महया भडचडगररहपग-  
 करविंदपरिवस्वत्तो साओ गिहाओ गिगच्छइ) तब सन्नद्ध यावत् गृहीत आयुध  
 प्रहरणवाले ऐसे अनेक पुरुषों से घिर गया, छत्रधारी द्वारा त्रियमाण  
 एवं कोण्टपुष्पमाला से विभूषित ऐसा छत्र उसके ऊपर तान दिया गया,  
 महाभटों के विस्तृत समूह के वृन्दने उसे आकर घेर लिया. इस प्रकार  
 की परिस्थिति से युक्त हुआ वह अपने घर से निकला (सेयवियाएणयरीए  
 मज्झमज्जेणं गिगच्छइ) और निकलकर वह श्वेतविका नगरी के बीचो-  
 बीच से होकर चला-(सुहेहिं वासेहिं पयरासेहिं नाइविकिट्ठेहिं अंतरावासेहिं  
 वसमाणे २ केइयद्धस्स जणवयस्स मज्झमज्जेणं जेणेव कुणाला जणवए जेणेव  
 सावत्थी नयरी तेणेव उवागच्छइ) इस प्रकार घर से निकला हुआ वह  
 सुखकर रात्रिनिवासों से, प्रातःकालिकलघु भोजनों से-कलेवाओं से, तथा  
 अतिदूर के नहीं ऐसे अन्तरावासों से पडावों से-मध्याह्नकालिक विश्राम-  
 स्थानों से जगहर ठहरतार केकयाद्धजनपद के मध्य मध्य से होता हुआ

सवार थयो. (बहुहिं पुरिसेहिं सन्नद्ध जाव गहियाउहपहरणेहिं सद्धिं संपरिवुडे  
 सकोरिष्टमल्लदामेणं छत्तेणं धरेज्जमाणेणं महया-भडचडगररहपगकरविंद  
 परिवस्वत्तो साओ गिहाओ गिगच्छइ) तब सन्नद्ध यावत् जेमना डाथोमां  
 आयुधो छे ओवा अनेत पुरुषोथी परिवेष्टित थधने तथा कोरंट पुष्पभाणाथी विलू-  
 पित अने छत्रधारी वडे धारणु करेखुं छत्र तेनी उपर ताणुवामां आण्युं त्यारे तेने  
 मडाभटोना विशाल समूह वृन्दे आवीने प्रविष्ट करी लीधो. आभ ते पोताना धरथी  
 रवाना थयो. (सुहेहिं वासेहिं पयरासेहिं नाइ विकिट्ठेहिं अंतरावासेहिं वसमाणे २  
 केइयद्धस्स जणवयस्स मज्झमज्जेणं जेणेव कुणाला जणवए जेणेव सावत्थी नयरी  
 तेणेव उवागच्छइ) आं प्रमाणे धरथी रवाना थधने ते सुणकर रात्रिनिवासो, प्रातः  
 कालिक लघुभोजनो, अति दूर नहिं ओटले डे नल्लकनल्लकना अन्तरावासो, (मुकामो)  
 मध्याह्नकालिक विश्रामो अने स्थान स्थान पर मुकाम करतो ते केकयाद्ध जनपदनी

नगर्यां मध्यमध्येन अनुप्रविशति, यत्रैव जितशत्रो राज्ञोगृहं यत्रैव दाह्या  
उपस्थानशाला तत्रैव उपागच्छति, तुरगान् निगृह्णाति, रथं स्थापयति, रथात्  
प्रत्यचरोहति, तत् महार्थं यावत् प्राभृतं गृह्णाति यत्रैव आभ्यन्तरिकी उप-  
स्थानशाला यत्रैव जितशत्रु राजा तत्रैव उपागच्छति, जितशत्रुं राजानं  
करतलपरिगृहीतं यावत् कृत्वा जयेन विजयेन वर्द्धयति, तन्महार्थं यावत्  
प्राभृतम् उपनयति ॥ सू० १०५ ॥

जहां कुणाला जनपद-(देश) था, और जहां उसमें श्रावस्ती नगरी थी वहां  
पर आ पहुँचा, (सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं अणुपविसइ, जेणेव जिय  
सत्तुस्स रण्णो गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ) वहां  
आकर वह ठीक बीचोंबीच से होकर उस श्रावस्ती नगरी में प्रविष्ट हुआ  
और जहां जितशत्रु राजा का प्रासाद था, जहां बाह्य उपस्थानशाला थी  
वहां आया (तुरए णिगिण्हइ, रहं ठवेइ, रह ओ पच्चोरुहइ, तं महत्थं जाव  
पाहुडं गिण्हइ) वहां आकर उसने घोड़ों को रोका, रथ को खड़ा किया और  
फिर उस रथ में से वह नीचे उतरा और उसमें से उसने महार्थ साधक  
उस प्राभृत को लिया (जेणेव अब्भितरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव जियसत्तु  
राया, तेणेव उवागच्छइ, जियसत्तुं रायं करयलपरिगहियं जाव कट्टे  
जएणं विजएणं वर्द्धावेइ तं महत्थं जाव पाहुडं उवणेइ) और उठाकर  
जहां आभ्यन्तरिकी उपस्थानशाला थी, जहां जितशत्रु राजा था वहां पर  
आया. वहां आकर के उसने जितशत्रु राजा को दोनों हाथों की अंजलि  
बनाकर एवं उसे मस्तक पर रखकर जयविजय शब्दों का उच्चारण करते

मध्यमां यधने जयां कुणाला देश હતો અને તેમાં પણ જયાં શ્રાવસ્તી નગરી હતી  
ત્યાં પહોંચ્યો. (સાવત્થીએ નયરીએ મજ્ઝંમજ્જેણં અણુપવિસઇ, જેણેવ જિયસત્તુ-  
સ્સ રણ્ણો ગિહે જેણેવ બાહિરિયા ઉવટ્ઠાણસાલા તેણેવ ઉવાગચ્છઇ) ત્યાં પહોંચીને  
તે ઠીક મધ્યમાર્ગથી પસાર થઇને તે શ્રાવસ્તી નગરીમાં પ્રવિષ્ટ થયો. અને જયાં  
જિતશત્રુ રાજાનો પ્રાસાદ (મહેલ) હતો, જયાં બાહ્ય ઉપસ્થાન શાળા હતી ત્યાં ગયો.  
(તુરએ ણિગિણ્હઇ રહં ઠવેઇ, રહાઓ પચ્છોરુહઇ, તં મહત્થં જાવ પાહુડં ગિણ્હઇ)  
ત્યાં પહોંચીને તેણે ઘોડાઓને રોક્યા, રથને ઉભો રાખ્યો અને રથમાંથી નીચે ઉતરીને  
તેણે તે મહાર્થ સાધક ભેટ લીધી. (જેણેવ અભિતરિયા ઉવટ્ઠાણસાલા, જેણેવ  
જિયસત્તુ રાયા, તેણેવ ઉવાગચ્છઇ, જિયસત્તુ રાયં કરયલપરિગહિયં જાવ  
કટ્ટે જણેણં વિજણેણં વર્દ્ધાવેઇ, તં મહત્થં જાવ પાહુડં ઉવણેઇ) અને લઇને તે  
જયાં આભ્યંતરિકી ઉપસ્થાનશાળા હતી જયાં જિતશત્રુ રાજા હતો ત્યાં ગયો.  
ત્યાં જઇને તેણે જિતશત્રુ-રાજાને બન્ને હાથોની અંજલિ બનાવીને અને તેને

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि—

ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिना राज्ञा एवं=पूर्वोक्तप्रकारेण उक्तः सन् हृष्ट यावत्-यावत्पदेन-हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यितो हर्षवशविसर्पद्धृदयः करतलपरिगृहीतं दशनखं शिर आवर्त्तं मस्तके अञ्जलिं कृत्वा एवं देवस्तथेति आज्ञाया विनयेन वचनं प्रतिशृणोति’-इति संग्राहम् । अस्य वाक्यस्यार्थाऽस्यैव सूत्रस्य पञ्चमसूत्र टीकातोऽवगम्य इति प्रतिश्रुत्य तत् महार्थं यावत् प्राभृतं गृह्णाति=उपादत्ते, गृहीत्वा प्रदेशिनो राज्ञः अन्निकात्=समोपात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्क्रम्य श्वेतविकाया नगर्या मध्य-

हुए बधाया, और बधाकर उस महाप्रयोजनसाधक यावत् प्राभृत को उन्हे दिया, अर्थात् राजा को भेट किया ।

टीकार्थ—प्रदेशी राजाने जब अपने चित्र सारथि से ऐसा कहा तब हृष्ट हुआ, तुष्ट हुआ एवं चित्त में आनन्दित हुआ-प्रीतियुक्त मनवाला हुआ, परमसौमनस्यित हुआ हर्ष के वश से उसका हृदयहर्षित होने लग गया। उसी समय उसने करतलपरिगृहीत, दशनखसंयुक्त एवं शिर पर आवर्त्तवाली ऐसी अंजलि करके “हे देव ! आप जैसे कहते हैं सो मुझे प्रमाण है” इस प्रकार कह कर उनकी आज्ञा को बड़े विनय के साथ स्वीकार किया, हृष्ट तुष्ट आदि पदों का अर्थ इस सूत्र के पांचवें सूत्र की टीका से जानना चाहिये । इस प्रकार अपने स्वामी की आज्ञा स्वीकार करके उसने उस महाप्रयोजन साधक यावत् प्राभृत (भेट) को अपने हाथ में ले लिया और लेकर वह प्रदेशी राजा के पास से चला आया और श्वेतविका नगरी के मध्यभाग से होकर अपने घर पर आ गया। वहां आकरके

मस्तके भूझी ते नयविनय शब्दोत्तुं उच्यारणु करतां वधाभणी आपी अने त्थारपणी ते भडाप्रयोजन साधक यावत् लेटने राजनी सामे भूझी-राजने ते लेट अर्पित करी।

टीकार्थ—प्रदेशी राजाने न्यारे पोताना चित्र सारथिने आ प्रमाणे कह्युं त्थारे हृष्ट, तुष्ट, चित्तमां आनन्दित अने प्रीतियुक्त मनवाणो थयेलो तथा परमसौमनस्यित थयेलो ते हर्षातिरेकथी अतीव हर्षित थछ गये। तेणु तरत न करतल परिगृहीत दशनखसंयुक्त अने मस्तक पर अंजलि श्खेरीने कह्युं—“हे देव ! ने आप आज्ञा करे छ ते मारा भाटे प्रमाणइय छे आ प्रमाणे कह्युं तेणु राजनी आज्ञाने स्वीकारी लीधी। हृष्ट तुष्ट वगेरे पढोनो अर्थ आ सूत्रनी पांचवमां सूत्रनी टीकाभां स्पष्ट करवाभां आव्यो छे आ रीते पोताना स्वामीनी आज्ञाने स्वीकारी तेणु भडाप्रयोजन साधक यावत् लेटने हाथमां लीधी अने लछने ते प्रदेशी राजा पासथी आवतो रह्यो अने श्वेतविकानगरीना मध्यभागमां थछने पोताने घेर गये। त्यां पडांयनी तेणु ते

मध्येन व्यतिव्रजन् यत्रैव स्वकं गृहं तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तत् महार्थं यावत् प्राप्तं स्थापयति, स्थापयित्वा कौटुम्बिकपुरुषान्=भृत्यपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण अत्रादीत=उक्तवान्-भो देवानुप्रियाः! यूयं क्षिप्रमेव=शीघ्रमेव सच्छत्रं यावत्-यावत्पदेन-सध्वजं सघण्टं सपताकं सतोरणवरं सनन्दिघोषं सकिङ्किणीहेमजालपरिक्षिप्तं हैमवतचित्रतिनिशकनकनिर्युक्तदारुकं सुसंपिनिद्धचक्रमण्डलधुराकं कालायससुकृतनेमियन्त्रकर्माणम् आकीर्णवरतुरगसुसंप्रयुक्तं कुशलनरच्छेकसारथिसुसंपरिगृहीतं शरशतद्वात्रिंशत्तूणपरिमण्डितं सकङ्कटावतंसकं सचापप्रहरणावरणभृतयोधयुद्धसज्जम् इति संग्राह्यम्, अर्थस्त्वेषां पदानां त्रिपष्टितममुत्रतो द्वितीयाविभक्तिव्यत्ययेना-

उसने उस महाप्रयोजन साधक यावत् प्राप्त को रख दिया, रखकर कं फिर उसने नौकरचाकररूप कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर उसने उस प्रकार कहा-हे देवानुप्रियों ! आपलोग शीघ्र ही छत्रसहित यावत्-ध्वजासहित, घण्टासहित, पताकासहित, उत्तमतोरणमसहित, नन्दिघोषसहित, किङ्किणीसहित, इत्यादि ६२वें सूत्रोक्त विशेषणों से सहित रथको उपस्थित करो-६२वें सूत्र में उक्त पाठ जो यहां यावत् शब्द से गृहीत हुआ है द्वितीयाविभक्ति का व्यत्यय करके लिया गया है सो इस प्रकार से है—

“सध्वजं, सघण्टं, सपताकं, सतोरणवरं, सनन्दिघोषं, सकिङ्किणीहेमजालपरिक्षिप्तं, हैमवतचित्रतिनिशकनकनिर्युक्तदारुकं, सुसंपिनिद्धचक्रमण्डलधुराकं, कालायससुकृतनेमियन्त्रकर्माणम्, आकीर्णवरतुरगसुसंप्रयुक्तं कुशलनरच्छेकसारथिसुसंपरिगृहीतं, शरशतद्वात्रिंशत्तूणपरिमण्डितं, सकङ्कटावतंसकं, सचापप्रहरणावरणभृतयोधयुद्धसज्जम्” इस समस्त पाठका अर्थ

महाप्रयोजन साधक यावत् लेटने भूझी हीधी. भूझीने तेणु नेकर-आकर वगेरे कौटुम्बिक पुरुषोंने बोलाव्या. अने बोलावीने तेमने आ प्रमाणे कह्युं-“हे देवानुप्रियो ! तमे सौ सत्वर छत्रयुक्त यावत् ध्वज सहित, घण्टा सहित वगेरे ६२ भां सूत्रोक्त विशेषणोत्थी युक्त रथने उपस्थित करो. ६२ भां सूत्रने पाठ ने अही यावत् शब्द, वडे गृहीत थयो छे ते भील विलकितने व्यत्यय (व्यतिक्रम) करीने अहुणु कथयो छे ते आ प्रमाणे छे—

“सध्वजं सघण्टं, सपताकं, सतोरणवरं, सनन्दिघोषं, सकिङ्किणीहेमजालपरिक्षिप्तं, हैमवतचित्रतिनिशकनकनिर्युक्तदारुकं, सुसंपिनिद्धचक्रमण्डलधुराकं, कालायससुकृतनेमियन्त्रकर्माणम् आकीर्णवरतुरगसुसंप्रयुक्तं, कुशलनरच्छेकसारथिसुसंपरिगृहीतं. शरशतद्वात्रिंशत्तूणपरिमण्डितं, सकङ्कटावतंसकं, सचापप्रहरणावरणभृतयोधयुद्धसज्जम्” आ पाठनो अर्थ आ प्रमाणे छे—

इसप्रकार से है-सध्वज-ध्वजा से युक्त है. सघण्ट-दोनों और घण्टासहित है, सपताक-पताका सहित है, सतोरणवरयुक्त-प्रधानतोरण सहित है, सनन्दि-घोष-द्वादशप्रकार के बाजों से युक्त है. सकिङ्किणीहेमजालपरिक्षिप्त-क्षुद्र-घंटिकावाले हेमजाल से परिवेष्टित है, हैमवतचित्रतिनिशकनकनिर्युक्त दारुक-हिमालय पर्वत पर उत्पन्न हुई तथा विस्मयकारक ऐसी तिनिशवृक्षाविशेषकी सुवर्ण शोभित लकड़ी से जो बनाने में आया है, सुसंपिन्दवचक्रमण्डलधुराक-अच्छी तरह से जिसमें चक्रमण्डल एवं धुरा बांधे गये हैं, कालायस सुकृतनेमियन्त्रकर्म-उत्तमजाति के कृष्ण लोह से जिसमें नेमियन्त्र कर्मकी रचना की गई है-अर्थात् चक्रान्तभूस्पर्शिभाग की संघर्षण से रक्षा करने के लिये अरकों के ऊपर फल कमण्डलरूप आवरण जिसमें लगाया गया है, आकीर्ण वस्तुरगसुसंप्रयुक्त-आकीर्णजातिके उत्तम धोडे जिसमें जुते हैं, कुशलनरच्छेकसारथिसुसंपरिगृहीतनिपुणपुरुषों में भी चतुरम्मारथीद्वारा अच्छी तरह से जो परिगृहीत हो रहा है, शरशत द्वात्रिंशत्तूणपरिमण्डित-शतसंख्यक शरों के ३२ संख्यक बाणकोषों से जो परिमण्डित हैं, सचापशरप्रहरणाऽऽवरण-भृतयोधयुद्धसज्ज-धनुषसहित बाणों से, कुन्त, तोमर, परशु आदि शास्त्रों से. एवं कवच आदि उपकरणों से जो परिपूर्ण है, युद्धकारी गोदाओं के संग्राम के लिये

सध्वज-ध्वजा सहित छे, सघण्ट-બંને તરફ ઘંટાઓ છે, સપતાક-પતાકાસહિત છે, સ તોરણવર યુક્ત-પ્રધાન તોરણ સહિત છે, સનન્દિઘોષ-બારું પ્રકારના વાજાઓથી યુક્ત છે. સકિંકિણી હેમજાલ પરિક્ષિપ્ત-ક્ષુદ્ર (નાની):ઘંટિકાવાળા હેમજાલથી પરિવેષ્ટિત છે, હૈમવત ચિત્રતિનિશકનકનિર્યુક્ત દારુક-હિમાલય પર્વત પર ઉત્પન્ન થયેલી, વિસ્મય કારક તિનિશવૃક્ષ વિશેષની સુવર્ણ મંડિત લાકડીથી જે તૈયાર કરવામાં આવ્યો છે. સુસંપિન્દવચક્રમંડલ ધુરાક જેમાં ચક્રમંડળ અને ધુરાઓ સુસંબંધ છે, કાલાયસ સુકૃત નેમિયન્ત્રકર્મા-ઉત્તમ જાતિના કૃષ્ણ લોહથી જેના નેમિયન્ત્રની રચના કરવામાં આવી છે. એટલે કે ચક્રનો જે ભાગ ભૂસ્પર્શ કરે છે તેને સંઘર્ષથી રક્ષવા માટે કૃષ્ણ લોહની પાટી જેના પર લગાડવામાં આવી છે. આકીર્ણવર તુરગસુસંપ્રયુક્ત-આકીર્ણ જાતિના ઉત્તમ ઘોડાઓ જેમાં જોતરેલા છે, કુશલનરચ્છેક સારથિ સુસંપરિગૃહીત-નિપુણપુરુષોમાં પણ અતિનિપુણ સારથિ વડે જે સારી રીતે હાંકવામાં આવી રહ્યો છે, -શરશત દ્વાત્રિંશત્તૂણપરિમંડિત-સો શરો અને બત્રીશ જેટલા ત્રિશુરોથી જે પરિમંડિત છે, સચાપશરપ્રહરણાઽઽકરણભૂતયોધ -યુદ્ધ સજ્જ-ધનુષ સહિત શરોથી, કુન્ત, તોમર, પરશુ વગેરે શાસ્ત્રોથી, અને કવચ વગેરે ઉપકરણોથી જે પરિપૂર્ણ છે, યુદ્ધ ખેલનારાઓ

उत्तसेय इति । एवंविधं चातुर्घण्टं=चतसृभिर्घण्टाभिः शोभितम् अश्वरथं युक्तमेव=योजितं कृत्वैव उपस्थापयत, यावत् प्रत्यर्पयत=मदीय निर्देशानुसारेण सर्वं प्रकल्प्य मां सूचयत । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषाः तथैव=यथा चित्र सारथिना समाज्ञप्तं तथैव तदीयवचनं प्रतिश्रुत्य=स्वीकृत्य क्षिप्रमेव सच्छत्रं यावत् युद्धसज्जं चातुर्घण्टम् अश्वरथं युक्तमेव उपस्थापयन्ति, ताम् आज्ञा-  
प्तिकाम् प्रत्यर्पयन्ति='भवन्निर्देशानुसारेण सर्वमस्माभिः सम्पादित'-मिति चित्रसारथये निवेदयन्ति । ततः खलु स चित्रसारथिः कौटुम्बिकपुरुषाणाम् अन्तिके=समीपे एतमर्थं='रथोऽस्माभिः सज्जीकृतः' इत्येतद्रूपम् अर्थं यावद् हृदयः अत्रेदं संगृह्यते, तथाहि-'श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यितो हर्षवशविसर्प-  
हृदयः' इति । अर्पस्त्वेवामुक्त एव, एतादृशः मन् स्नातः=विहितस्नानः कृतबलिकर्मा=स्नाने कृते पशुपक्ष्या-  
द्यर्थं कृतान्नभागः, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव

जो सज्ज-उद्यतोक्त है, चातुर्घण्ट का अर्थ "चार घंटाओं से शोभित" ऐसा है तथा युक्त शब्द का अर्थ "घोड़ों ऐसे जुता हुआ" सा है । जब तुम लोग मेरी आज्ञा के अनुसार सब काम कर लो तो हमे इसकी पीछे शीघ्र ही सूचना दो, इसके बाद उन कौटुम्बिक पुरुषों ने जैसा कि चित्र सारथि ने उन्हें कार्य करने के लिये आज्ञापित किया था वैसा काम यथा शीघ्र करके उसे सूचना दे दो. "आपकी आज्ञा के अनुसार हमने सब काम कर लिया है", इस प्रकार से दी गई सूचना को सुनकर चित्र सारथि "हृष्ट तुष्ट चित्तानन्दितः, प्रीतिमनाः, परमसौमनस्यितः, हर्षवशविसर्प-  
हृदयः" इन यावत् पदगृहीत विशेषणों वाला हो गया, इन पदों का अर्थ कहा जा चुका है । उसने स्नान किया, बलिकर्म किया-पशु पक्षी

भाटे જે સજ્જિત છે, ચાતુર્ઘન્ટ-એટલે કે ચાર ઘંટોથી જે સુશોભિત છે તેમજ યુક્ત એટલે કે જેમાં ઘોડાઓ જોતરેલા છે. તમે ચારે મારી આજ્ઞા મુજબ કામ પુરું કરી લો ત્યારે મને કામ સંપૂર્ણ થઈ જવાની ખબર આપો. ત્યાર પછી કૌટુ-  
મ્બિક પુરુષોએ ચિત્ર સારથિની આજ્ઞા પ્રમાણે જ શીઘ્ર કામ પુરું કરી દીધું. અને તેને ખબર આપી કે-હે. દેવાનુપ્રિય ! તમારી આજ્ઞા મુજબ બધું કામ પુરું થઈ ગયું છે. આ પ્રમાણેની ખબર સાંભળીને ચિત્રસારથિ "હૃષ્ટતુષ્ટચિત્તાનન્દિતઃ પ્રીતિમનાઃ  
પરમસૌમનસ્યિતઃ હર્ષવશવિસર્પહૃદયઃ" યાવત્ પદથી ગૃહીત ઉક્ત વિશેષણોથી તે યુક્ત થઈ ગયો. આ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. તેણે સ્નાન કર્યું. બલિકર્મ કર્યું-પશુપક્ષિ વગેરેને અન્નભાગ અર્પિત કર્યો. દુઃસ્વપ્ન વગેરેને નષ્ટ



પ્રાયશ્ચિત્તાનિ-દુઃસ્વપ્નાદિવિષાતાથમવશ્યકરણીયત્વાદ યેન સ તથા, તત્ કૌતુ-  
કાનિ-મપીતિલકાદીનિ, મદ્ગલ્લાનિ તુ સિદ્ધાર્થદૃઢ્યક્ષતદર્વાકુરાદીનિ । તથા-  
સન્નદ્ધવદ્ધર્મિતકવચઃ-સન્નદ્ધં શરીરે આરોપણાત્. વદ્ધં-ગાઢતરવન્ધનેન  
બન્ધનાત્, વર્મિતમ્ અદ્વરક્ષાર્થં સુદૃઢતયા પરિરિત્તં કદચં યેન સઃ, તથા-  
ઉત્પીડિતશરાસનપટ્ટિકઃ-ઉત્પીડિતા=પ્રત્યશ્ચારોપણેન નમ્રીકૃતા શરાસનપટ્ટિકા  
ધનુર્દંડો યેન સઃ, અથવા-ઉત્પીડિતા=સ્કન્ધે સ્થાપિતા શરાસનપટ્ટિકા=ધનુ

આદિકોં કે લિયે અન્ન કા ભાગ કિયા, દુઃસ્વપ્ન આદિકોં કો નષ્ટ કરને  
કે લિયે અવશ્યકરણીય હોને સે કૌતુક મદ્ગલરૂપ પ્રાયશ્ચિત્ત કિયે મપી તિલક  
આદિકોં કા નામ કૌતુક, સિદ્ધાર્થ સરસો, દહી. અક્ષત દર્વાકુર આદિકોં  
કા નામ મંગલ હૈ । વાદ મેં ઉરુને સન્નદ્ધ, વદ્ધ, વર્મિત કવચ કો પહિરા,  
પહિલે ઉસે શરીર પર આરોપણ કિયા. હસાલિયે વહ કવચ સન્નદ્ધ હુઆ,  
વાદ મેં વહ ગાઢતર બંધન સે જકડકર વસ દિયા ગયા. હસસે વદ્ધ હુઆ,  
તથા અદ્વરક્ષા કે નિમિત્ત હી યહ ધારણ કિયા ગયા થા. અતઃવર્મિત હુઆ  
“ઉત્પીડિતશરાસનપટ્ટિકઃ” સે યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ વહ શરાસન-  
પટ્ટિકા-ધનુર્દંડ જવ પ્રત્યંચા પર આરોપિત કિયા ગયા તવ હુક ગયા.  
અથવા ઉત્પીડિત શબ્દ કા અર્થ ‘કંઘે પર રગ્વના મી હૈ । તથાચ પ્રત્યંચા  
આરોપિત કી જાને સે હુકા દિયા હૈ, ધનુષ દંડ જિસને અથવા સ્કન્ધ પર  
આરોપિત કિયા હૈ ધનુર્દંડ જિસને, એસા વહ ચિત્રસારથી હો ગયા તાત્પર્ય  
કહનેકો યહી હૈ કિ ઉસ ચિત્રસારથીને અપને ધનુષ પર પ્રત્યશ્ચા આરોપિત  
કરલી, અથવા ઉસે હાથ મેં ન લેકર કંઘે પર ટાંગ લિયા. અપને કંઠ

કરવા માટે અવશ્યકરણીય મંગલરૂપ પ્રાયશ્ચિત્તો કર્યા. મપીતિલક વગેરેને કૌતુક,  
સિદ્ધાર્થ-સર્પપ, દહી, અક્ષત દર્વાકુર વગેરેને મંગલ કહે છે. ત્યારપછી તેણે સન્નદ્ધ,  
બદ્ધ, વર્મિત કવચ પહેર્યું. પહેલાં તે કવચનું તેણે શરીર પર આરોપણ કર્યું. એથી  
તે કવચ સન્નદ્ધ થયું ત્યારપછી ગાઢતર બંધનવડે કસવામાં આવ્યું એથી તે બદ્ધ  
થયું. અને અંગરક્ષક માટે તેને ધારણ કરવામાં આવ્યું. હવે એથી તે વર્મિત થયું.  
“ઉત્પીડિતશરાસનપટ્ટિકઃ” એથી આ ક્ષપ્પટ કરવામાં આવ્યું છે કે તે શરાસનપટ્ટિકા  
(ધનુષદંડ) પર જ્યારે પ્રત્યંચા ચઢાવવામાં આવી તે શરાસન પટ્ટિકા નમી ગઈ હતી.  
અથવા ઉત્પીડિત શબ્દનો અર્થ ‘બલાપર મૂકવું’ પણ થાય છે. પ્રત્યંચા ચઢાવવાથી  
જેણે ધનુષદંડને નમાવી દીધો છે અથવા બલાપર જેણે ધનુર્દંડ ધારણ કર્યો છે એવો  
તે ચિત્રસારથી શોભવા લાગ્યો. મતલબ આ છે કે તે ચિત્રસારથીએ પોતાના ધનુષ  
પર પ્રત્યંચા ચઢાવી લીધી હતી. અથવા તે ધનુષને હાથમાંથી બલાપર ભેરવી દીધું

दर्ण्डो येन सः, तथा-पिनद्धग्रैवेयविमलवरचिह्नपटः-पिनद्धं=परिहितं ग्रैवेयं= ग्रीवाभूषणं विमलरचिह्नपटं, येन सः, तथा-गृहीतायुधप्रहरणः-गृहीतानि आयुधानि=धनुषादीनि प्रहरणानि=खड्गादीनि च येन स तथा-धृतशस्त्रास्त्र इत्यर्थः, एवम्भूतः सन् तत् महार्थं यावत् प्राप्नुतं गृह्णाति. गृहीत्वा यत्रैव चातुर्घण्टः अश्वरथस्तत्रैव उपागच्छति. उपागत्य चातुर्घण्टम् अश्वरथं दूरो हति=आरोहति । ततः सः सन्नद्ध यावद् गृहीतायुधप्रहरणैः बहुभिःपुरुषैः साद्धं=सह संपरिवृतः=संवेष्टितः सकोरण्टमाल्यदाम्ना=कोरण्टपुष्पमालाविभूषितेन- छत्रेण ध्रियमाणेन सह महामटचटकरप्रकरवृन्दपरिक्षिप्तः-महामटानां ये चटकर प्रकराः=विस्तृतसमूहास्तेषां यद् वृन्दं तेन परिक्षिप्तः=परिवेष्टितःपन स्वात्=स्वकीयाद् गृहाद् निर्गच्छति=निस्सरति, निगन्त्य श्वेतविकाया नगर्या मध्य-मध्येन निर्गच्छति । इत्थं निर्गतःसमुखैः=मुखकरैःवासैः=रात्रिनिवसैः पात-

में उमने ग्रीवा का आभूषणरूप ग्रैवेय हार पहिरा और सुन्दर २ चित्रों से सुशोभित सुन्दर वस्त्र भी पहिरे. धनुष आदिकों को यहाँ आयुध द से और तलवार आदिकों को प्रहरण पद से गृहीत किया गया है. इस तरह उमने आयुध और प्रहरणों को अपने साथ ले लिया. इस प्रकार मग्न तरह से तैयार होकर वह प्राप्नुत को साथ में लेकर के जहाँ चातुर्घण्ट अश्वरथ था वहाँ पर आया, वहाँ आकर वह उस रथ पर बैठ गया. रथ में बैठने ही वह सन्नद्ध हुए यावत् गृहीतायुधप्रहरणवाले अनेक पुरुषों से संपरिवृत हो गया. छत्रधारी पुरुषने उसके ऊपर कोरण्टपुष्पों की मालाओं से सुशोभित छत्र तान दिया. इस तरह महासुमटों के विस्तृत समूह के वृन्द से परिवेष्टित होकर वह अपने घर से चला. एवं श्वेतविकानगरी के ठीक मध्यभाग से होता हुआ निकला. कितनेक मुखकरवासों से

ढुतुं. गणामां तेणु अ,भूषणस्य ग्रैवेयक-हार पडेर्यो डतो अने सुंदर चित्रोथी सुशो-भित सुंदर वस्त्रो पणु पडेर्यो डतां. धनुषं वगेरेने अर्डीं आयुधपद अने तलवार वगेरेने प्रहरण पदथी अडणु समजवां. आ रीते तेणु पोताना आयुधो अने प्रहरणोने पोताना डथमां दीधा. आ प्रमाणे गंधी रीते तैयार थधने ते लेटने लधने जथां चातुर्घण्ट अश्वरथ डतो त्यां गथो. त्यां जधने ते रथ पर सवार थथो. रथ पर सवार थतांज ते सन्नद्ध थथेला यावतू गृहीतायुध प्रहरणवाणा अनेक पुरुषोथी ते संपरिवृत्त थध गथो. छत्रधारी पुरुषोथी तेना ऊपर कोरण्ट पुष्पोनी माणाथी सुशोभित छत्र ताणी दीधुं. आ प्रमाणे ते महासुमटोना विस्तृत समूहना वृन्दथी परिवेष्टित थधने ते पोताना घेरथी रवाना थथो अने श्वेतविका नगरीना ठीक मध्यभागमां थधने ते डेट-लाडं सुअकरवासो, रात्रे मुकाम करीने सवारै त्यांथी रवाना थती वणते करेला प्रातः



=पातः कालिकलघुभोजनैः, तथा-नातिविकृष्टैः=नातिदूरेः अन्तरावासेः  
 मध्याह्नकालिकविश्रामस्थानैः वसन् वपन् केकयाद्धस्य जनपदस्य मध्यमध्येन  
 यत्रैव कुणाला जनपदो यत्रैव श्रावस्ती नगरी तत्रैव उपागच्छति, श्रावस्त्यां  
 नगर्यां मध्यमध्येन अनुप्रविशति, अनुप्रविश्य यत्रैव जितशत्रो राज्ञो गृहं  
 यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला तत्रैव उपागच्छति, तुरगान्=अश्वान् विनिगृह्णाति=निरुणद्धि, रथं स्थापयति, रथान् प्रत्यवरोहति=अवतरति तत् महार्थं  
 यावत् प्राभृतं गृहीत्वा यत्रैव आभ्यन्तरिको उपस्थानशाला, यत्रैव जितशत्रो  
 राजा तत्रैव उपागच्छति जितशत्रुं राजानं काललपरिगृहीतं यावत् कृत्वा  
 जयं विजयेन वर्द्धयति, तद् महार्थं यावत् प्राभृतम् उपनयति=तस्मै  
 प्रयच्छति ॥ सू० १०५ ॥

रात्रियों में ठहरने से प्रातराशों से-पातःकालिक लघुभोजनरूप कलेवा  
 से तथा बहुत अधिक दूर के नहीं ऐसे मध्याह्नकालिक विश्रामों से युक्त  
 हुआ वह जगह २ ठहरता-केकयाद्ध जनपद के पास आगया, उसके  
 मध्य मध्य से होकर वह निकला और जहाँ कुणाला जनपद-देश था,  
 और उसमें भी जहाँ श्रावस्ती नगरी थी वहाँ आकर वह उसके ठीक  
 बीचों बीच से होकर उसमें प्रविष्ट हुआ. प्रविष्ट होकर फिर वह वहाँ  
 गया जहाँ जितशत्रु राजा का राजमहल था, और उसमें भी जहाँ बाह्य  
 उपस्थानशाला थी. वहाँ पहुँचने ही उसने घोड़ों को खड़ा कर दिया  
 और रथ को चलने से रोक दिया. बादमें वह उस रथ से नीचे उतरा  
 और प्राभृत को साथ लेकर वह आभ्यन्तरिको उपस्थानशाला में जहाँ  
 जितशत्रु राजा थे. वहाँ पर पहुँचा, वहाँ पहुँचते ही उसने जितशत्रु राजा  
 को दोनों हाथ जोड़कर बड़े विनय प्रणाम किया और जय वितय

कालिक अल्पभोजनो, (नास्ताभ्यो) तथा वधारे हर नहि पणु नल्लक नल्लक न मध्या-  
 ह्नकालिक विश्रामो करतो करतो स्थान स्थान पर पडाव नाभतो ते केकयाद्ध जनपदनी नल्लक  
 पडोन्व्यो. अने त्यारपछी ते जनपदनी मध्यमां यधने जयां कुणाला देश हुतो अने  
 जयां श्रावस्तीनगरी हुती त्यां जधने ते ठीक नगरीना मध्यमार्गथी जयां जितशत्रु  
 राजानो राजमहल हुतो अने तेमां पणु जयां बाह्य उपस्थानशाणा हुती त्यां  
 पडोन्व्यो अने पडोन्व्यतां न तेणु घोडाभ्योने उला राभ्या अने रथने आगण जवाथी  
 रोडयो. त्यारपछी ते रथमांथी नीचे उतर्यो अने सेटने लधने आभ्यन्तरिकी उपस्थान  
 शाणांमां जयां जितशत्रु राजा हुतो त्यां गयो. त्यां पडोन्व्यीने तेणु जितशत्रु  
 राजाने जन्ने हाथ जेडीने प्रणाम कयां. अने जयविजय शुभेदानुं उन्चारणु करीने

मूलम्--तएणं मे जियसू राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पाहुडं पडिच्छइ, चित्तं सारहिं सक्कारेइ सम्माणेइ पडिविस-ज्जेइ, रायमग्गमोगाढं च संवासं दलयइ । तए णं से चित्त सारही विसज्जिए समाणे जियसूस्स अंतियाओ पडिनिक्खमइ, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवाग-च्छइ, चाउग्घंटे आसरहं दुक्खंइ, सावत्थाए णयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव रायमग्गमोगाढं आवासे तेणेव उवागच्छइ, तुरए निगिण्हइ, रहं ठवेइ, रहाओ पच्चोरुहइ, ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउयमंगल पायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइ मंगल्लोइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्प-महग्घाभरणालंकियसरीरे जिमियभुत्तुरागए वियणं समाणे पुव्वावरण्हकालसमयंसि गंधव्वेहि य णाडगेहि य उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगाइज्जमाणे २ उवलालिज्जमाणे २ इट्ठे सद-फरिस-रस-रूव-गंधे-पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणे विहरइ ॥ सू० १०६

छाया—ततः खलु स जितशत्रू राजा चित्रस्य सारथेस्तन्महार्थं यावत् प्राभृतं प्रतीच्छति चित्रं सारथिं सत्कारयति सम्मानयति प्रतिविसर्जयति,

शब्दों का उच्चारण करते हुए उन्हें वधाई दी. बाद में लाये हुए उस महार्थ आदि विशेषणों वाले प्राभृत को उनके लिये अर्पण किया । सू. १०५।

‘तए णं से जियसू राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं से जियसू राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पाहुडं पडिच्छइ) तब जितशत्रु राजाने चित्र सारथि से दिये गये महार्थ

तेमणे वधाभणी आपी. त्थारपणी तेणे महार्थ वगेरे विशेषणवाणी लेट राजाने समर्पित करी. ॥१०५॥

‘तए णं से जियसू राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं से जियसू राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पाहुडं पडिच्छइ) जितशत्रु राजाने चित्रसारथि वडे अर्पित करायेली महार्थ वगेरे

राजमार्गावगाहं च तस्य आचार्यं ददाति । ततः खलु स चित्रः सारथिः विसर्जितः सन्न जितशत्रोः अन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति, यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला यत्रैव चातुर्घटः अश्वरथस्तत्रैव उपागच्छति चातुर्घटम् अश्वरथं दुरोहति श्रावस्त्या नगर्या मध्यमध्येन यत्रैव राजमार्गावगाह आवासस्तत्रैव उपागच्छति, तुरगान् निगृह्णाति, रथं स्थापयति, रथात् प्रत्यवरोहति, स्नातः

आदि विशेषणों वाले प्राश्रुत को जो कि प्रदेशी राजाने प्रेषित किया था, ले लिया. (चित्तं सारहिं सकारेइ, सम्माणेइ, पडिविसज्जेइ) फिर कुशलप्रभ्रादि पूछकर उसका सत्कार किया, आसन आदि देकर उसका सम्मान किया और बाद में उसे विसर्जित कर दिया, अर्थात् विश्राम करने के निमित्त भेज दिया. (रायमग्गमोगाहं च संवासं दलयइ) उसे राजमार्ग के पास स्थित गृह में ठहराया गया (तएणं से चित्ते सारही विसर्जिए समणे जियसत्तुस्स अंतियाओ पडिनिकखमइ-जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ) अतः वह चित्र सारथि जितशत्रु राजा द्वारा विसर्जित किया गया होकर उनके पास से चला आया. और जहां बाह्य उपस्थानशाला थी, जहां चातुर्घट अश्वरथ था, वहां आकर वह (चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ) उसे चातुर्घट रथ पर सवार हो गया (सावत्थीए णयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव रायमग्गमोगाहे आवासे तेणेव उवागच्छइ) और श्रावस्ती नगरी के बीचो बीच से होता हुआ जहां राजमार्ग पर स्थित श्रावप-गृह था वहां पर आया. (तुरए

विशेषणोवाणी लेटने-के देने प्रदेशी राजाने भोडली इती-स्वीकारी लीधी. (चित्तं सारहिं सकारेइ, सम्माणेइ, पडिविसज्जेइ) त्थारपणी कुशलता विषे सभायारे पूछीने तेने अकार कथो आसन वगेरे आपीने तेनुं सम्मान कथुं अने त्थारपणी तेने विसर्जित करी दीधो. ओटवे के विश्राम करवा भाटे भोडली दीधो. (रायमग्गमोगाहं च संवासं दलयइ) तेने राजमार्गनी पासैना घरमां उतारे आये. (तएणं से चित्ते सारही विसर्जिए समणे जियसत्तुस्स अंतियाओ पडिनिकखमइ-जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ) त्थारपणी जितशत्रु राजा पासैथी विसर्जित करायेवो ते चित्रसारथी त्यांथी रवाना थये अने जयां बाह्य उपस्थानशाला इती, जयां चातुर्घट अश्वरथ इतो त्यां आव्यो त्यां आवीने ते (चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ) चातुर्घट रथ पर सवार थये. (सावत्थीए णयरीए मज्झं मज्झेणं जेणेव रायमग्गमोगाहे आवासे तेणेव उवागच्छइ) अने श्रावस्तीनगरीना मध्यमां थधने जयां राजमार्ग पर स्थित आवास-गृह-इतुं

कृतबलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः शुद्धप्रवेश्यानि मङ्गल्यानि वस्त्राणि  
पवरपरिहितः अल्पमहर्घाभरणालङ्कितशरीरो जिमितभुक्तात्तरागतोऽपि च  
खलु सन् पूर्वापराह्नकालसमये गन्धर्वश्च नाटकैश्च उपनत्यमानः २ उपगीयमानः  
उपगीयमान उपलाल्यमानः २ इष्टान् शब्द-स्पर्श-रस-रूपगन्धान् पञ्च-  
विधान् मानुष्यकान् कामभोगान् प्रत्यनुभवन् विहरति ॥ सू० १०६ ॥

निगिण्हिइ, रहं ठवेइ, रहाओ पचोरुहइ) वहां आकरके उसने घोड़ोंको  
रोका रथ को खड़ा किया और फिर रथ से नीचे उतरा (पहाए कय-  
बलिकम्मे, कयकोउमंगलपायच्छित्तो मुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं  
पवरपरिहिए) बाद में उसने स्नान किया, बलिकर्म-वायसादिकों के लिये  
अन्न का भाग दिया, दुःस्वप्नों को नाश करने के लिये कौतुक,  
मंगलरूप प्रायश्चित्त किये, बाद में शुद्ध राजसभा में प्रवेश योग्य ऐसे  
माङ्गलिक वस्त्रों की रीति के अनुसार पहिरा (अल्पमहर्घाभरणालङ्कित-  
शरीरे) फिर उसने अल्प भारवाले बहुमूल्य आभरणों से अपने शरीर  
को आलङ्कृत किया और (जिमियभुत्तरागए विषणं समाणे) जीमने  
के बाद अर्थात् भोजन करके-फिर वह उपवेशनस्थान में आ गया  
(पुव्वावरण्हकालसमयंसि) वहां दिवस के तृतीय प्रहर में (गंधर्वेहिं य  
णाडगेहिं य उवणच्चिज्जमाणे, उवणच्चिज्जमाणे उवगाइज्जमाणे २ उवलालि-  
ज्जमाणे २) गीतों द्वारा और नाटकों द्वारा बार २ अपना २ विषय सिखा-  
कर, अपना २ विषय सुनाकर बारंवार सिखाया गया, बारवार विलास-

त्यां गये। (तुरए निगिण्हिइ, रहं ठवेइ, रहाओ पचोरुहइ) त्यां पछोचीने तेज  
घोडाओने उला राख्या रथ थोलाव्यो। अने त्यारपछी ते रथमांथी नीचे उतर्थो—  
(पहाए कयबलिकम्मे, कयकोउमंगलपायच्छित्तो मुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं  
वत्थाइं पवरपरिहिए) त्यारणाह तेणे स्नान क्युं—अलिकर्म क्युं—कागडा वगेरेने  
अन्नलाग आये। दुःस्वप्नेने नष्ट करवा भाटे कौतुक-मंगलरूप प्रायश्चित्तो कर्था।  
त्यारपछी राजसभामां शोले ओवा स्वच्छ मांगलिक वस्त्रो तेणे धारण कर्था। (अल्प-  
महर्घाभरणालङ्कितशरीरे) त्यारणाह तेणे अल्पभारवाणा अहुभूद्य आभरणोथी  
पोताना शरीरने शण्णायुं अने (जिमियभुत्तरागए विषणं समाणे) जभ्या  
पछी ओटले के लोअन करीने ते उपवेशन स्थान तरइ गये। (पुव्वावरण्हकाल-  
समयंसि) त्यां दिवसना त्रीण पछोरमां (गंधर्वेहिं य णाडगेहिं य उवणच्चिज्ज-  
माणे, उवणच्चिज्जमाणे उवगाइज्जमाणे—२ उवलालिज्जमाणे २) त्यां गीतो वडे,  
नाटको वडे बारंवार पोतानो विषय सिखावेले पोतानो विषय संलणावीने प्रसन्न

‘तएणं से’ इत्यादि ।

टीका-ततः खलु स जितशत्रू राजा चित्रस्य सारथेः सकाशात् प्रदेशि-  
 राजप्रेषिनं तद् महार्थं यावत् प्राप्नुतं प्रतीच्छति=गृह्णाति, चित्रं सारथिं स्तुतार  
 यति-कुशलप्रश्नादिना, सम्मानयति आम्ननप्रदानेन, ततस्तं प्रतिविमर्जयति=  
 विश्रामार्थं संप्रेषयति, तथाच=राजमार्गावगाढं=राजमार्गसमीपस्थितम् आवासं=  
 गृहं तस्य=तस्मै ददाति । अत्र सम्बन्धसामान्ये पठ्ठी । ततः खलु स चित्रः  
 सारथिः जितशत्रूणां राज्ञा विसर्जितः सन् तस्य जितशत्रू राज्ञः अन्तिकात्  
 =प्रतिनिष्क्रमति=निर्गच्छति, यत्रैव बाह्या उपस्थानशाला, यत्रैव  
 चातुर्घण्टः अश्वरथः तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य चातुर्घण्टम् अश्वरथं  
 दूरोहति=अरोहति, श्रावस्त्या नगर्या मध्यमध्येन यत्रैव राजमार्गावगाढ-आवासः,  
 तत्रैव उपागच्छति, तुरगान् निगृह्णाति=निरुणद्धि, निगृह्य रथं स्थापयति,  
 स्थापयित्वा रथात् प्रत्यवरोहति=अवतरति । ततः स्नातः=कृतस्नानः कृतच-  
 लिकर्मा=स्नानेकृते पशुपक्ष्याद्यर्थं कृतान्नभागः, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः-  
 कृतानि कौतुकमङ्गलान्येव प्रायश्चित्तानि=दुःस्वप्नादि विघातार्थमवश्यकरणी-  
 यत्वाद् येन स तथा, तत्र-कौतुकानि=मपीतिलकानि, मङ्गलानि तु=सिद्धार्थ  
 मर्षपदध्यक्षतदूर्वाङ्कुरादीनि । तथा=शुद्धप्रावेश्यानि=राजसभाप्रवेशार्हाणि मङ्ग-  
 ल्यानि=माङ्गलिकानि वस्त्राणि प्रवरपरिहितः=यथारीतिपरिघृतः अल्पमहर्घा-  
 भरणालङ्कृतशरीरः-अल्पानि=स्तोकभाराणि ग्रानि महर्घाणि=बहुमूल्यानि आभ-  
 रणानि तैः अलङ्कृतं=सुशोभितं शरीरं यस्य सः, तथा=जिमितभुक्तोत्तरा-  
 गतः जिमितः=कृतभोजनः, सचासौ भुक्तोत्तरागतः=भोजनोत्तरकालम् उपवे-  
 शनस्थाने समागतश्चेति तथाभूतोऽपि च खलु सन् पूर्वापरार्हकालसमये  
 पूर्वश्चासौ अपराह्वश्चेति पूर्वापराह्वः, स एवं कालसमयः-कालोपलक्षितः  
 समयस्तस्मिन्-दिवसस्य तृतीये पदरे गान्धर्वैश्च=गीतैश्च नाटकैश्च उपनत्य-

युक्त वनाया गया वह चित्र सारथि (इष्टे सद-फरिस-रस=रुच-गंधे पंचविहे  
 माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणे विहरइ ) इष्ट-अभिलषित-शब्द, स्पर्श  
 रस, रूप गंध इन पांच प्रकार के मनुष्यभव संबंधी कामभागों को  
 अनुभवित करने लगा । टीकार्थ इत्येका स्पष्टहै ॥ १०६ ॥

उशयेदो, वारंवार विदासयुक्त जनायेदो ते चित्र सारथि (इष्टे सद-फरिस-रस-  
 रुच-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणे विहरइ) इष्ट-अभि-  
 लषित-शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध आ पांच जगता मनुष्यभव संबंधी काम-  
 भोगोने भोगववा लाये। टीकार्थः—आ सूत्रेन स्पष्ट छे ॥१०६॥

मानः उपनर्त्यमानः=वृत्तं दर्शयमानो दर्शयमानः उपगीयमानः उपगीयमानः—  
गानं श्राव्यमाणः श्राव्यमाणः, अतएव—उपलाल्यमानः २ विलास्यमानः २  
इष्टान्=अभिलषितान् शब्द-स्पर्श-रस-रूप-गन्धान् पञ्चविधान् मालुब्धकान्=  
मनुष्यसम्बन्धिनः कामभोगान् प्रत्यनुभवन् विहरति ॥सू० १०६॥

मूलम्—तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिजे केसी नाम  
कुमारसमणे जाइसंपणणे कुलसंपणणे बलसंपणणे रूपसंपणणे विणय-  
संपणणे नाणसंपणणे दंसणसंपणणे चरित्तसंपणणे लज्जासंपणणे ला-  
घवसंपणणे लज्जालाघवसंपणणे ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी  
जियकोहे जियमाणे जियमा जियलोहे जियणिदे जिइंदिए जिय-  
परीसहे जीवियासमरणभयविप्पसुक्के तवप्पहाणे गुणप्पहाणे करण-  
प्पहाणे चरणप्पहाणे निग्गहप्पहाणे निच्छयप्पहाणे अज्जवप्पहाणे  
मदवप्पहाणे लाघवप्पहाणे खंतिप्पहाणे गुत्तिप्पहाणे सुत्तिप्पहाणे  
विज्जप्पहाणे संतप्पहाणे बंभप्पहाणे वेयप्पहाणे नयप्पहाणे नियम-  
प्पहाणे सच्चप्पहाणे सोयप्पहाणे नाणप्पहाणे दंसणप्पहाणे चरित्त-  
प्पहाणे ओराले चउदसपुव्वी चउणाणोवगए पंचहिं अणगारसएहिं  
सद्धिं संपरिवुडे पुव्वणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दूइजमाणे सुद-  
सुहेणं विहरमाणे जेणेव सावत्थी नयरी जेणेव कोटुए चेइए तेणेव  
उवागच्छइ, सावत्थी नयरीए बहिया कोटुए चेइए अहापडिरूव  
उग्गहं उग्गिणिहत्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ सू० १०७।

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये पार्श्वपत्तीयः केशीनाम्बकुमार-  
श्रमणो जातिसम्पन्नः कुलसम्पन्नो बलसम्पन्नो रूपसम्पन्नो विनयसम्पन्नो

‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय

‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते क्षणे अने ते समये (पासा-



જ્ઞાનસંપન્નો દર્શનસંપન્નઃ ચારિત્રસંપન્નો લજ્જાસંપન્નો લાઘવસંપન્નો લઙ્ગા-  
લાઘવસંપન્ન ઓજસ્વી તેજસ્વી વર્ચસ્વી યશસ્વી જિતક્રોધો જિતમાનો જિત-  
માયો જિતલોભો જિતનિદ્રો જિતેન્દ્રિયો જિતપરીપહો જીવિતાશામરણભયવિપ્રમુક્તઃ  
તપઃપ્રધાનો ગુણપ્રધાનઃ કરણપ્રધાનઃ ચરણપ્રધાનો નિગ્રહપ્રધાનો નિશ્ચયપ્રધાનઃ

મેં (પાસાવચ્ચિજ્જે) પાર્શ્વાપત્યીય=ભગવાન્ પાર્શ્વનાથ કી શિષ્ય પરમ્પરા મેં  
સ્થિત (કેસી નામ કુમારસમણે) કેશી નામકે કુમાર શ્રમણ-જો કિ  
કુમાર અવસ્થા મેં હી દીક્ષિત હુણ થે ઓર જો (જાહસંપન્ને) જાતિસંપન્ન  
થે. (કુલસંપણે) કુલસંપન્ન થે, (વલસંપણે) વલ સંપન્ન થે (રૂવસંપન્ને)  
રૂપ સંપન્ન થે, (વિણયસંપન્ને) વિનયસંપન્ન થે (નાણસંપણે) જ્ઞાન  
સંપન્ન થે, (દંસણસંપન્ને) દર્શન સંપન્ન થે (ચરિત્તસંપન્ને) ચારિત્ર  
સંપન્ન થે, (લજ્જાસંપન્ને) લજ્જા સંપન્ન થે (લાઘવસંપન્ને) લાઘવ  
સંપન્ન થે (લજ્જા લાઘવસંપન્ને) લજ્જા ઇવં લાઘવ સે સંપન્ન થે (ઓયંસી,  
તેયંસી, વચ્ચંસી, જસંસી) ઓજસ્વી થે, તેજસ્વી થે, વર્ચસ્વી થે, યશસ્વી થે,  
(જિયમાણે) જિતમાન થે (જિયમાણ) જિતમાય થે (જિયલોહે, જિયણિદે જિહંદિણ)  
જિત લોભ થે, જિતનિદ્ર થે, જિત ઇન્દ્રિય થે, (જિયપરીસહે, જીવિયાસમ-  
રણભયવિપ્પમુક્કે) જીવે કી આશા સે ઓર મરણ કે ભય સે વિપ્રમુક્ત થે  
(તવપ્પહાણે ગુણપ્પહાણે) તપપ્રધાન થે, ગુણપ્રધાન થે (કરણપ્પહાણે ચરણપ્પહાણે  
નિગ્રહપ્પહાણે, નિચ્છયપ્પહાણે, અજ્જવપ્પહાણે, મહવપ્પહાણે, લાઘવપ્પહાણે

વચ્ચિજ્જે) પાર્શ્વાપત્યીય-ભગવાન પાર્શ્વનાથની શિષ્ય પરંપરામાં સ્થિત (કેસી નામ  
કુમારસમણે) કેશી નામક કુમાર શ્રમણ કે જે કુમાર અવસ્થામાં જ દીક્ષિત થયા  
હતા-અને જે (જાહસંપન્ને) જાતિસંપન્ન હતા. (કુલસંપણે) કુલ સંપન્ન હતા.  
(વલસંપણે) વલ સંપન્ન હતા. (રૂવસંપણે) રૂપસંપન્ન હતા. (વિણયસંપન્ને)  
વિનય સંપન્ન હતા. (નાણસંપણે) જ્ઞાન સંપન્ન હતા. (દંસણસંપન્ને) દર્શન  
સંપન્ન હતા. (ચરિત્તસંપણે) ચારિત્ર સંપન્ન હતા. (લજ્જાસંપણે) લજ્જા  
સંપન્ન હતા. (લાઘવસંપણે) લાઘવ સંપન્ન હતા. (લજ્જાલાઘવસંપન્ને)  
લજ્જા અને લાઘવ સંપન્ન હતા. (ઓયંસી, તેયંસી, વચ્ચંસી, જસંસી) ઓજ-  
સ્વી હતા, તેજસ્વી હતા, વર્ચસ્વી હતા, યશસ્વી હતા. (જિયક્રોહે) જિત ક્રોધી હતા.  
(જિયમાણે) જિતમાન હતા. (જિયમાણ) જિતમાય હતા. (જિયલોહે જિયણિદે જિહંદિણ)  
જિત લોભ હતા, જિતનિદ્ર હતા, જિતેન્દ્રિય હતા. (જિયપરીસહે, જીવિયાસમરણ-  
ભયવિપ્પમુક્કે) જીવવાની આશા અને મરણના ભયથી વિપ્રમુક્ત હતા. (તવ-  
પ્પહાણે ગુણપ્પહાણે) તપ પ્રધાન હતા, ગુણ પ્રધાન હતા. (કરણપ્પહાણે, ચરણપ્પ

आर्जवप्रधानो मार्दवप्रधानो लाघवप्रधानः क्षान्तिप्रधानो गुप्तिप्रधानो मुक्ति-  
प्रधानो विद्या प्रधानो मन्त्रप्रधानो ब्रह्मप्रधानो वेदप्रधानो नयप्रधानो नियम-  
प्रधानः सत्यप्रधानः शौचप्रधानो ज्ञानप्रधानो दर्शनप्रधानः चारित्रप्रधानः  
उदारः चतुर्दशपूर्वाचतुर्ज्ञानोपगतः पञ्चभिः अनगारशतैः साद्धं संपरिवृतः  
पूर्वानुपूर्व्या चरन् ग्रामानुग्रामं द्रवन् सुखसुखेन विहरन् तत्रैव श्रावस्ती गरी  
यत्रैव कोष्ठकं चैत्यं तत्रैव उपागच्छति, श्रावस्तीनगर्या वह्निः कोष्ठके

स्वन्तिष्पहाणे, मुक्तिष्पहाणे, गुप्तिष्पहाणे विज्ञप्पहाणे, संनष्पहाणे, वेय-  
ष्पहाणे) करणप्रधानं ये, चरण प्रधानं ये, निग्रह प्रधानं ये, निश्चयप्रधानं  
ये आर्जवप्रधानं ये, मार्दव प्रधानं ये, लाघवप्रधानं ये, क्षान्तिप्रधानं ये  
मुक्तिप्रधानं ये, गुप्तिप्रधानं ये, विद्या प्रधानं ये, मन्त्रप्रधानं ये, ब्रह्मप्रधानं  
ये, वेद प्रधानं ये, (नयष्पहाणे नियमष्पहाणे, सच्चष्पहाणे, सोयष्पहाणे,  
नाणष्पहाणे, दंसणष्पहाणे चरित्तष्पहाणे, ओराले चउद्दसपुञ्ची चउणाणो-  
वगए) नयप्रधानं ये, नियमप्रधानं ये, सत्यप्रधानं ये, शौचप्रधानं ये, ज्ञान  
प्रधानं ये, दर्शन प्रधानं ये, चारित्र प्रधानं ये, उदार ये, चौदह पूर्वके  
धारी ये, और मतिज्ञान आदि चार ज्ञान वाले, ये ( पंचहिं अणगासएहिं  
संपरिवुडे) पांचसौ अनगारों के साथ (पुव्वाणुपुञ्चि चरमाणे ग्रामाणुग्रामं  
दृइज्जमाणे सुहं सुहेणं विहरमाणे जेणेव सावित्थी गयरी, जेणेव कोट्टए  
चेइए, तेणेव उवागच्छइ) तीर्थंकर परम्परा के अनुसार विहार करते हुए,

हाणें, निग्रहष्पहाणें, निश्चयष्पहाणें, अज्जवष्पहाणे, महवष्पहाणे, लाघवष्प-  
हाणे, स्वन्तिष्पहाणे, मुक्तिष्पहाणे, गुप्तिष्पहाणे, विज्ञप्पहाणे, संनष्पहाणे  
वेयष्पहाणे) करण प्रधान होता, चरण प्रधान होता, निग्रह प्रधान होता, निश्चय  
प्रधान होता, आर्जव प्रधान होता, मार्दव प्रधान होता, लाघव प्रधान होता, क्षान्ति-  
प्रधान होता, मुक्ति प्रधान होता, गुप्ति प्रधान होता, विज्य प्रधान होता, मन्त्र प्रधान  
होता, ब्रह्म प्रधान होता, वेद प्रधान होता, (नयष्पहाणे, नियमष्पहाणे, सच्चष्पहाणे  
सोयष्पहाणे, नाणष्पहाणे, दंसणष्पहाणे, चरित्तष्पहाणे, ओराले चउद्दसपुञ्ची  
चउणाणोवगए) नय प्रधान होता, नियम प्रधान होता, सत्य प्रधान होता, शौच  
प्रधान ज्ञान प्रधान होता, दर्शन प्रधान होता, चारित्र प्रधान होता, उदार होता,  
चौदपूर्वना धारी होता अने मतिज्ञान वगेरे आर ज्ञानवाणा होता, (पंचहिं अण-  
गारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे) पांचसौ अनगारों के साथ (पुव्वाणुपुञ्चि चर  
माणे ग्रामाणुग्रामं दृइज्जमाणे सुहं सुहेणं विहरमाणे जेणेव सावित्थी गयरी  
जेणेव कोट्टए चेइए, तेणेव उवागच्छइ) तीर्थंकर परम्परा अनुसार विहार करतां करतां



ચૈત્યે યથાપતિરૂપમ્ અવગ્રહમ્ અવગૃહ્ય સંયમેન તપસા આત્માનં ભાવયન્  
વિહરન્તિ ॥ સુ૦ ૧૦૭ ॥

ટીકા—‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि—

તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે પાર્શ્વોપત્યીયઃ=ભગવતઃ પાર્શ્વનાથસ્ય  
શિષ્યપરમ્પરાયાં સ્થિતઃ કેશીનામકુમારશ્રમણઃ—કુમારશ્વાસૌ શ્રમણશ્ચેતિ,  
કૌમાર્યાવસ્થાયાં પ્રવ્રજિત इत्यर्थः; સ કીદશઃ? इत्याह—જાતિમમ્પન્નઃ—જાતિઃ=માતૃ  
પક્ષઃ—તેન સમ્પન્નો=યુક્તઃ—ઉત્તમમાતૃપક્ષ સમ્પન્ન इत्यर्थः; તથા કુલસમ્પન્નઃ—  
કુલઃ=પૈતૃકો વંશઃ; તેન સમ્પન્નઃ—ઉત્તમપિતૃપક્ષસમ્પન્ન इत्यर्थः; તથા—વલઃ

एक ग्राम से दूसरे ग्राम में होते हुए आनन्द के साथ जहां श्रावस्ती  
नगरी थी और जहां कोष्ठक चैत्य था, वहां पर आये. (सावत्थीनय-  
रीए बहिया कोट्टए चेइए अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा  
अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) जहां आकर वे श्रावस्ती नगरी के बाहर  
प्रदेश में स्थित कोष्ठक चैत्य में यथापतिरूप अवग्रह प्राप्तकर संयम  
और तपसे आत्मा को भावित करते हुए ठहर गये. ।

टीકાર્થ—ઉસ કાલ ઓર ઉમ સમય મેં પાર્શ્વોપત્યીય ભગવાન પાર્શ્વ-  
નાથકી શિષ્ય પરંપરા મેં સ્થિત કેશીકુમાર શ્રમણ જિન્હોને કૌમાર્ય-વાલ્ય  
અવસ્થા મેં પ્રવ્રજ્યા ધારણ કરલી થી. તીર્થંકર પરંપરા કે અનુસાર વિહાર  
કરતે હુણે કોષ્ઠક ચૈત્ય મેં આકર ઠહરે, યે જાતિ સંપન્ન થે માતૃપક્ષકા  
નામ જાતિ હૈ, ઉસસે યે યુક્ત થે અર્થાત્ ઉત્તમ માતૃપક્ષવાલે થે, પૈતૃક  
વંશકા નામ કુલ હૈ, ઉસસે મો યે યુક્ત થે અર્થાત્ ઉત્તમ પિતૃપક્ષવાલે થે વિશિષ્ટ

એક ગામથી બીજે ગામ વિહાર કરતાં કરતાં આનંદની સાથે જ્યાં શ્રાવસ્તી નગરી હતી  
અને જ્યાં કોષ્ઠક ચૈત્ય (ઉદ્યાન) હતું ત્યાં આવ્યાં. (સાવત્થો નયરીએવહિયા  
કોટ્ટએ ચેઇએ અહાપડિરુવં ઉગ્ગહં ઉગ્ગિણ્હિત્તા સંજમેણં તવસા અપ્પાણં  
ભાવેમાણે વિહરइ) ત્યાં જઈને તેઓ શ્રાવસ્તી નગરીની બહાર—કોષ્ઠક ચૈત્યમાં યથા-  
પ્રતિરૂપ અવગ્રહ પ્રાપ્ત કરીને સંયમ અને તપથી આત્માને ભાવિત કરતાં રોકાયા.

ટીકાર્થઃ—તે કાળે અને તે સમયે પાર્શ્વોપત્યીય ભગવાન—પાર્શ્વનાથની શિષ્ય  
પરંપરામાં સ્થિત કેશીકુમાર શ્રમણ—કે જેમણે કૌમાર્ય અવસ્થામાં પ્રવ્રજ્યા ધારણ  
કરી હતી. તીર્થંકર પરંપરા મુજબ વિહાર કરતાં કરતાં કોષ્ઠક ચૈત્યમાં આવીને  
રોકાયા એઓ જાતિ સંપન્ન હતા. માતૃપક્ષત્વ નામ જાતિ છે એનાથી એઓ યુક્ત  
હતા એટલે કે ઉત્તમમાતૃપક્ષવાળા હતા. પૈતૃકવંશત્વ નામ કુળ છે, એનાથી એઓ  
યુક્ત હતા એટલે કે એઓ ઉત્તમપિતૃપક્ષવાળા હતા. વિશિષ્ટ સંહનનથી સમુત્થ-

સમ્પન્ન:-વલ=વિશિષ્ટસંહનનસમુત્થા શક્તિ:, તેન સમ્પન્ન:, રૂપસમ્પન્ન:-  
રૂપમ્=સર્વોત્કૃષ્ટ શારીરં સૌંદર્ય તેન સમ્પન્ન:, વિનયસમ્પન્ન:-વિનય:પ્રસિદ્ધ:  
તેન સમ્પન્ન:, તથા જ્ઞાનસમ્પન્ન:=મત્યાદિજ્ઞાનયુક્ત:, દર્શનસમ્પન્ન:=સમ્યક્ત્વ-  
યુક્ત:, ચારિત્રસમ્પન્ન:=ચારિત્રં=સંયમ: તેન સંપન્નો=યુક્ત:, લજ્જાસમ્પન્ન:-  
લજ્જા=અનુચિતાનુષ્ઠાનસંવરણાત્મિકરૂપા:, તથા સમ્પન્ન:=યુક્ત:, લાઘવ-  
સમ્પન્ન:=લાઘવં=દ્રવ્યતોડલ્પોપધિત્વં, ભાવતો ગૌરવત્યાગ:, તામ્યાં સમ્પન્ન:,  
લજ્જાલાઘવસમ્પન્ન:=લજ્જયા લાઘવેન ચ સ સતતમેવ સમ્પન્ન: । તથા-  
ઓજસ્વી--ઓજ:=આત્મિકતેજ:, તદસ્તિ યસ્ય સ તથા, આત્મિકતેજ-  
સમ્પન્ન इत्यर्थ:, તેજસ્વી-તેજ:શરીરપ્રભા, તદસ્તિ યસ્ય તથા અનુપમશરીર-  
પ્રભાવિશિષ્ટ इत्यर्थ:, તથા વર્વસ્વી=પ્રભાવવાન, 'વચસ્વી'-इतिच्छायापक्षे-  
પ્રશસ્તવચનયુક્ત इत्यर्थ:, તથા-જિતક્રોધ: =ક્રોધજેતા, જિતમાન:માનજેતા-

સંહનન સે સમુત્થ શક્તિ કા નામ વલ હૈ, ઇસ વલ સે યે યુક્ત થે, સર્વો-  
ત્કૃષ્ટ શારીરિક સૌન્દર્ય કા નામ રૂપ હૈ. ઇસ રૂપ સે યે સંપન્ન થે, વિનય  
સંપન્ન થે, મત્યાદિ જ્ઞાનોં સે સંપન્ન થે, સમ્યક્ત્વ સે યુક્ત થે, સંયમરૂપ  
ચારિત્ર સે યુક્ત થે, લજ્જા સે યુક્ત થે અર્થાત્ -અનુવિત કામ કરને સે સદા દૂર રહતે  
થે. લાઘવ સે યુક્ત થે, લાઘવ દ્રવ્ય ઔર ભાવ કી અપેક્ષા સે દો પ્રકાર કા કહાં ગયા  
હૈ અલ્પ ઉપધિ રાખના યહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લાઘવ હૈ તથા ગૌરવ કા ત્યાગ કરના  
યહ ભાવ કી અપેક્ષા લાઘવ હૈ. લજ્જા ઔર લાઘવ ઇન દોનોં સે યે યુક્ત થે. ઇનમેં  
આત્મિક તેજ પૂર્ણરૂપ સે ભરાં હુઆ થા અતઃ ઓજસ્વી થે. શરીર  
પ્રભા કા નામ તેજ હૈ. યહ શારિરિક તેજ ઇનકા અનુપમ થા. ઇસ-  
લિયે યે તેજસ્વી થે. પ્રભાવવાન થે ઇસલિયે વર્વસ્વી થે અથવા પ્રશસ્તવચન  
સે યુક્ત થે. ઇસલિયે વચસ્વી થે. ક્રોધ કે વિજેતા થે અતઃ જિત ક્રોધ થે.

શક્તિનું નામ બળ છે, આ બળથી એઓ યુક્ત હતા. સર્વોત્કૃષ્ટ શારીરિક સૌન્દર્યનું  
નામ રૂપ છે, આ રૂપથી એઓ સંપન્ન હતા, વિનયયુક્ત હતા, મતિ વગેરે જાનોથી  
સંપન્ન હતા. સમ્યક્ત્વથી યુક્ત હતા, સંયમરૂપ ચારિત્રથી યુક્ત હતા. લજ્જાથી યુક્ત  
હતા એટલે કે-સાવધ કામમાં લજ્જા રાખતા હતા. દ્રવ્ય અને લાવની અપેક્ષાએ  
લાઘવના બે પ્રકારો છે. અલ્પ ઉપધિ રાખવી એ બ્યની અપેક્ષાએ લાઘવ છે. તેમજ  
ગૌરવ ત્યાગ એ લાવની અપેક્ષાએ લાઘવ છે. લજ્જા અને લાઘવ આ બંનેથી  
એઓ સંપન્ન હતા, આત્મિક તેજ એમનામાં પ્રચુર પ્રમાણમાં હતું એથી એઓ  
ઓજસ્વી હતા. શરીરપ્રભાનું નામ તેજ છે. એમનું આ શારીરિક તેજ અનુપમ હતું.  
એથી જ એઓ તેજસ્વી હતા, પ્રભાવાન હતા. એથી જ એઓ વર્વસ્વી હતા. શોધને  
જીતનાર હતા એથી એઓ જિત-ક્રોધી હતા, માનના વિજેતા હતા એથી જિતમાન

मानापमानयोस्तुल्य इत्यर्थः, जितमायः=सर्वथा निष्कपटः, जित लोभः=लोभजेता,  
जितनिद्राः=वशोऽकृतनिद्राः, जितेन्द्रियः=निग्रहीतसकलेन्द्रियः, जितपरीषहः=  
परीषहजेता, तथा-जीविताशामरणभयविप्रमुक्तः=जीवितस्य=जीवनस्य या  
आशा तस्याः, तथा-मरणस्य=प्राणवियोगस्य यद् भयं ततश्च विप्रमुक्तः=  
रहितः जीवनमरणयोः समभावयुक्त इत्यर्थः तथा तपःप्रधानः=तपसां प्रधानः=  
सकलमुनीनां मध्ये प्राधानत्वं प्राप्तः, अथवा-तपः=तपस्या प्रधानं यस्य स  
महातपस्वीत्यर्थः, गुणप्रधानः-गुणैः=ज्ञानत्यादिगुणैः प्रधानः=श्रेष्ठः । 'तपः  
प्रधानगुणप्रधाने' ति विषेषणद्वयेन तपः पूर्ववद्धकर्मणो निर्जराहेतुत्वेन  
संयमस्य चाभिनवकर्मणोऽनुपादेहेतुत्वेन मोक्षोपायत्वान्मोक्षार्थिभिस्तावद्वय

मान के विजेता थे अतः जितमान थे, तात्पर्य मान अपमान में सम थे  
सर्वथा निष्कपट थे, अतः जितमान थे, लोभ के जेता थे अतः जितलोभ  
थे, निद्रा को वश में कर लिया था इसलिये जितनिद्र थे, समस्त  
इन्द्रियों के निग्रहकर्ता थे-इसलिये जितेन्द्रिय थे-परीषहों पर विजय  
पा लिया था इसलिये जितपरीषह थे, जीने की आशा से एवं मरण  
के भय से बिल्कुल विप्रमुक्त थे-इसलिये जीवन मरण में समभाव  
शाली थे, तपसे सकल मुनिजनों में प्रधानता प्राप्तकरलेने के कारण ये  
तपःप्रधान थे, अथवा तपस्या प्रधान थे, महातपस्वी थे, इसलिये तपः  
प्रधान थे, ज्ञानत्यादिक गुणों से श्रेष्ठ होने के कारण गुणप्रधान थे "तपः-  
प्रधान एवं गुणप्रधान" इन दो विशेषणों से यह सूचित किया गया है  
कि तप पूर्ववद्धकर्मों की निर्जरा का हेतु होता है एवं संयम नवीन  
कर्मों की अनुपादेयता का हेतु होता है अर्थात् नवीन कर्मों के आगमन

होता, अर्थात् मान अपमान जन्मे लोभना भाटे सरणा होता, लोभो, संपूर्णतः  
निष्कपट होता लोभी जितमान होता, लोभने लुतनार होता, लोभी, जितलोभी, होता,  
लोभले निद्रावश डूरी होती लोभी लोभो जितनिद्रा होता, लोभी, इन्द्रियोने, लोभले  
परीषह डूरी राभी होती, लोभी लोभो जितेन्द्रिय होता, परीषहो, पर-लोभले, विजय  
लेणव्यो होता लोभी लोभो जित परीषह होता, लुवानी आशाथी अने मरणना  
भयथी लोभो अक्षहम विप्रमुक्त होता, लोभी लुवन मरणमां लोभो, समभावशील  
होता, सकल मुनियोंमां तपनी अपेक्षाये प्रधान होवाथी लोभो तपःप्रधान होता,  
अर्थात् महातपस्वी होता ज्ञानत्यादिक श्रेष्ठ, गुणोथी युक्त, होवा गहल लोभो गुण  
प्रधान होता "तपःप्रधान अने गुणप्रधान" आगे विशेषणोथी लोभात सूचित  
करनामां आवी छे हे तप पूर्ववद्धकर्मोनी निर्जराहेतु होय छे अने संयम

મેત્રોપાત્તવ્યાવિતિ સૂચિતય્ । સામાન્યતો ગુણપ્રધાન્યસુત્તવા સમ્પત્તિ વિશેષત-  
સ્તદાહ-તથાહિ-કરણપ્રધાન:-કરણ=પિંડવિશુદ્ધ્યાદિ સ્પન્નતિવિધમ્, તદુક્તમ્  
(પિંડવિસોદી (૭) સમિર્દ (૫) ભાવણ (૧૨) પંડિમા (૧૨) ચ દિવ્યનિરોદી (૫) ।  
પંડિલેહણ (૨૫) ગુત્તોઓ (૩) અભિગ્રહો (૧) ચેવ કરણં તુ ॥૧॥

છાયા—પિંડદ્વિશેષોઽધિઃ સમિતિઃ ભાવના-પ્રતિમા ચ દિવ્યનિરોધઃ ।

પ્રતિલેખના ગુપ્તયઃ અભિગ્રહાશ્ચૈવ કરણં તુ ॥૨॥

તત્પ્રધાનં યસ્ય સ તથા, ચરણપ્રધાન:-ચરણ=મહાવ્રતાદિ સ્પન્નતિવિધમ્,  
તદુક્તમ્—વય (૫) સમણધમ્મ (૧૦) સંજમ (૧૭) વૈયાવચ્ચં (૧૦) ચ વંમ-  
ગુત્તીઓ (૫) ણાણાંહિતિ (૩) તવં (૧૨) કોહ નિગ્ગહાર્દ (૪) ચરણમેયં ।

છાયા—વ્રતં શ્રમણધર્મઃ સંયમો વૈયાવૃત્ત્યં ચ વ્રહ્મગુપ્તયઃ ।

જ્ઞાનાદિત્રિકં તપઃ ક્રોધ નિગ્રહાદિઃ ચરણમેતત્ ॥૩॥

તત્ પ્રધાનં યસ્ય સ તથા, નિગ્રહપ્રધાન:-નિગ્રહઃ=અસદાચારપ્રવૃત્તિર્નિષેધઃ સ પ્રધાનં  
યસ્ય સ તથા, નિશ્ચયપ્રધાનઃ=નિશ્ચયઃ=તત્ત્વાનાં નિર્ણયો વિહિતાનુષ્ઠાનાનામવ-  
શ્યમભ્યુપગમો વા, સ પ્રધાનં યમ્ય સ તથા આર્જવપ્રધાનઃ=આર્જવં=ઋજુતા દાયા-

કો રોકનેવાળો હોતા હૈ— હસલિયે યે દોનોં મોક્ષ કે ઉપાયભૂત હોતે હૈ  
અતઃમોક્ષાર્થિયોં કો ઇન્હેં અવશ્ય પ્રાપ્ત કરના ચાહિયે ।

અવ સામાન્યરૂપ સે ગુણપ્રધાનતા કહકર વિશેષરૂપ સે ઉસકા પ્રતિ-  
પાદન કરને કે લિયે કહા ગયા હૈ—કરણ પ્રધાન ઇત્યાદિ પિંડવિશુ-  
દ્ધ્યાદિ સાત પ્રકારકા હૈ—કહા ઓહૈ ‘પિંડવિસોદી’ ઇત્યાદિ, ઇન ગુણોં સે યે  
યુક્ત થૈ અતઃ યે કરણ પ્રધાન વહે ગયે હૈ । મહાવ્રતાદિ રૂપ ચરણ ૭૦  
પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—જૈસે ‘વય’ ઇત્યાદિ યહ ચરણ ઇનમેં પ્રધાન થા.  
અતઃ યે ચરણ પ્રધાન થે, અસદાચારપ્રવૃત્તિ કે નિષેધ કા નામ નિગ્રહ હૈ  
યહ નિગ્રહ ઇનમેં પ્રધાન થા, અતઃઇન્હેં નિગ્રહ પ્રધાન કહા ગયા હૈ ।  
તત્ત્વોં કા નિર્ણય કરનેરૂપ નિશ્ચય અથવા વિહિત અનુષ્ઠાનોં કા અવશ્ય

કર્મોની અનુપાદેયતાને હેતુ હોય છે. એટલે કે નવીન કર્મોને રોકનાર હોય છે.  
એથી જ એઓ બંને મોક્ષ માટે ઉપાયભૂત કહેવાય છે. એથી મુશ્કેલીઓને માટે  
એ બંને અવશ્ય આદરણીય છે.

હવે સામાન્યરૂપથી ગુણપ્રધાનતાને કરીને વિશેષરૂપથી તેનું પ્રતિપાદન કરવા  
માટે કહે છે કે—કરણપ્રધાન ઇત્યાદિ. પિંડવિશુદ્ધ વગેરે રૂપ જે કરણ છે તેના સાત  
પ્રકારો છે. કહ્યું છે:—‘પિંડ વિસોદી’ વગેરે. આ કારણ એમનામાં પ્રધાનરૂપે હેતુ  
એથી એઓ કરણપ્રધાન કહેવાય છે. મહાવ્રતાદિરૂપ ચરણના ૭૦ પ્રકારો કહેવાય છે.  
જેમકે વય ઇત્યાદિ. આ ચરણ પણ એમનામાં પ્રધાનરૂપે હેતુ એથી એઓ ચરણ  
પ્રધાન હતા. અસદાચારની પ્રવૃત્તિના નિષેધનું નામ નિગ્રહ છે. આ નિગ્રહ એમનામાં  
પ્રધાનરૂપે હેતુ. એથી જ એમને નિગ્રહ પ્રધાન કહેવામાં આવ્યા છે. તત્ત્વોના નિર્ણય  
માટે જે નિશ્ચયાત્મક દૃઢ વૃત્તિ અથવા વિહિત અનુષ્ઠાનોને સ્વીકારવારૂપ જે નિશ્ચયાત્મક

નિગ્રહઃ, તત્પ્રધાનં यस્ય સ તથા, માર્દવપ્રધાનઃ-માર્દવં=મૃદુતા-નમ્રતા તત્પ્રધાનં यस્ય સ તથા, લાઘવપ્રધાનઃ-લાઘવં=લઘુતા-દ્રવ્યભાવલઘુતા તત્પ્રધાનં यस્ય સ તથા, ક્ષાન્તિપ્રધાનઃ-ક્ષાન્તિઃ=ક્રોધનિગ્રહઃ, સા પ્રધાનં यस્ય સ તથા, ગુપ્તિપ્રધાનઃ-ગુપ્તિઃ=મનોગુપ્ત્યાદિકા, સા પ્રધાનં यस્ય સ તથા, મુક્તિપ્રધાનઃ-મુક્તિઃ=નિર્લોભતા, સા પ્રધાનં यस્ય સ તથા, સર્વથા નિર્લોભ હત્યર્થઃ, વિદ્યાપ્રધાનઃ-વિદ્યાઃ=રોહિણીપ્રજ્ઞપ્ત્યાદિદેવતાધિષ્ઠિતાઃ વર્ણાનુપૂર્વીરૂપાઃ તાઃ પ્રધાનાનિ यस્ય સ તથા મન્ત્રપ્રધાનઃ-મન્ત્રાઃ-હરિણૈર્ગમેષ્યાદિદેવતાધિષ્ઠિતાઃ તે પ્રધાનાનિ यस્ય સ તથા, બ્રહ્મપ્રધાનઃ-બ્રહ્મ=બ્રહ્મચર્યં મૈથુનવિરમણલક્ષણ

સ્વીકાર કરનેરૂપ નિશ્ચય इनमें था, इसलिये ये निश्चयप्रधान थे। आर्जव नाम ऋजुता (सरलता) का है और यह माया निग्रहरूप होती है। यह इनकी प्रधान थी। अतः ये आर्जवप्रधान थे मार्दवप्रधान इसलिये थे कि इनमें मृदुता-नम्रता प्रधानरूप से थी। लाघवप्रधान थे इसलिये थे कि इनमें द्रव्यभावरूप लघुता (हलकापन) प्रधानरूप से थी क्षान्तिप्रधान थे इसलिये थे कि इनमें क्रोध को निग्रह करनेरूप परिणति प्रधान थी, गुप्तिप्रधान थे इसलिये थे कि इनमें मनोगुप्ति वचनगुप्ति, एवं कायगुप्ति ये तीन गुप्तियां प्रधान थीं मुक्तिप्रधान थे इसलिये थे कि इनमें निर्लोभता प्रधानरूप में थी, विद्याप्रधान थे इसलिये थे कि रोहिणी प्रज्ञपत्यादिक देवताधिष्ठित वर्णानुपूर्वीरूप विद्याएं इनमें प्रधान थीं मन्त्रप्रधान थे इसलिये थे कि इनमें हरिणैर्गमेषी आदि देवाधिष्ठित मन्त्रप्रधान थे, मૈથુનવિરમણરૂપ બ્રહ્મચર્યં का नाम ब्रह्म है, अथवा सर्व ही

ભાવ હોય છે એ પણ એમનામાં હતો. એથીએઓ નિશ્ચય પ્રધાન હતા. આર્જવ ઋજુતા (સરલતા)નું નામ છે. અને માયાનિગ્રહરૂપ પ્રવૃત્તિ હોય છે. એ પણ એમનામાં પ્રધાનરૂપે હતી એથી એઓ આર્જવ પ્રધાન હતા. માર્દવ પ્રધાન એઓ એટલા માટે હતા કે એમનામાં મૃદુતા-વિનમ્રતા-પ્રધાનરૂપે હતી. એમનામાં દ્રવ્યભાવ લઘુતા પ્રધાનરૂપે હતી એથી જ એઓ લાઘવપ્રધાન હતા. ક્રોધને નિગ્રહ કરવારૂપ પરિણતિ એમનામાં પ્રધાન હતી એથી એઓ ક્ષાન્તિ પ્રધાન હતા. એમનામાં મનોગુપ્તિ, વચનગુપ્તિ અને કાયગુપ્તિ એ ત્રણે ગુપ્તિઓ પ્રધાન હતી એથી એઓ ગુપ્તિપ્રધાન હતા. એમનામાં નિર્લોભતા પ્રધાનરૂપે હતી એથી એઓ મુક્તિપ્રધાન હતા. એમનામાં રોહિણી પ્રજ્ઞપ્ત્યાદિક દેવતાધિષ્ઠિત વર્ણાનુપૂર્વીરૂપ વિદ્યાઓ પ્રધાન હતી એથી જ એઓ વિદ્યાપ્રધાન હતા. એમનામાં હરિણૈર્ગમેષી વગેરે દેવાધિષ્ઠિત મન્ત્રપ્રધાન હતા એથી એઓ મન્ત્રપ્રધાન હતા. મૈથુન વિરમણરૂપ બ્રહ્મચર્યં નામ બ્રહ્મ છે અથવા સર્વકૃત્ય અનુ-

मिति सर्वमेव वा कुशलानुष्ठानं, तत्प्रधानं यस्य स तथा, वेदप्रधानः—वेदः= आगमः—लौकिक—लोकोत्तरकुप्रावचनिकभेदेन त्रिविधः, स प्रधानं यस्य स तथा, स्वसमयपरसमयज्ञानसम्पन्न इत्यर्थः, नयप्रधानः—नयाः=नैगमादयःसप्त त एव भेदप्रभेदतः सप्तशतविधाः, ते प्रधानानि यस्य स तथा विचित्राभिग्रहधारीत्यर्थः, सत्यप्रधानः—सत्यं=सकलप्राणिनामत्यन्तहितकरवचनम्, तत् प्रधानं यस्य स तथा—हितमितप्रियवचनयुक्त इत्यर्थः, शौचप्रधानः—शौचं=द्रव्यतो लेपरहित्यं भावतो निरवधाचरणं, तत् प्रधानं यस्य स तथा, ज्ञानप्रधानः—ज्ञानं=मत्यादिकं तत् प्रधानं यस्य स तथा, दर्शनप्रधानः

कुशल अनुष्ठानों का नाम ब्रह्म है इस ब्रह्मप्रधानता वाले वे थे. इसलिये इन्हें ब्रह्मप्रधान कहा गया है। आगम का नाम वेद है. यह लौकिक, लोकोत्तर, और कुप्रावचनिक के भेद से तीन प्रकार का है. यह वेद इनमें प्रधान था. अतः इन्हें वेदप्रधान कहा गया है। तात्पर्य यह कि ये स्वसमय के और परसमय के ज्ञान से संपन्न थे नैगम, संग्रह आदि जो सात नय हैं ये नय ही भेदप्रभेद की अपेक्षा ७०० हो जाते हैं ये नय इनमें प्रधान थे अर्थात् ये बहुत ही सूक्ष्मरूप से नयों के विशेषज्ञाता थे इसलिये इन्हें नयप्रधान कहा गया है। अभिग्रहविशेषों का नाम नियम है अर्थात् ये विचित्र अभिग्रहों के धारी थे सकलप्राणियों के एकान्तरूप से हितकर्ता जो वचन होते हैं उनका नाम सत्य है इस सत्यप्रधान ये थे अर्थात् ये हित, मित, प्रिय वचन बोलते थे। द्रव्य और भाव की अपेक्षा से शौच दो प्रकार का है—लेपरहित होना यह द्रव्य की अपेक्षा शौच है

‘ष्ठानोतु’ नाम ब्रह्म छ. ओम्ना आ ब्रह्म प्रधानताथी युक्त उता ओथी न ओम्ना ब्रह्म प्रधान कडेवाता उता, आगमनु’ नाम वेद लौकिक, लोकोत्तर अने कुप्रावचनिक आभ त्रय प्रकारने छ, आ वेद ओमनामा प्रधान उतो ओथी ओम्ना वेदप्रधान कडेवाता मतलब आ छ के ओम्ना स्वसमयना अने परसमयना ज्ञानथी संपन्न उता, नैगम, संग्रह वगैरे ने सात नये छ ते नये लेद प्रलेदनी अपेक्षाओ ७०० थध नय छ, ओ नय पण ओमनामा प्रधान उता ओटवे के ओम्ना भूषण न नयना सूक्ष्मज्ञाता उता, ओथी न ओम्ना नयप्रधान कडेवाय छ, अलिग्रह विशेषतु’ नाम नियम छ, ओटवे के ओम्ना विचित्र अलिग्रहोने धारण करनारा उता, ओकनिष्ठ थधने ने सकल प्राणीओना हित माटे वचने कडेवाय छ ते सत्य छ, ओम्ना सत्यप्रधान उता, ओटवे के ओम्ना हित, मित अने प्रिय वचन बोलनारा उता व्य अने भावनी अपेक्षाओ शौचना ने प्रकारे छ, लेपरहित थयु’ ओ द्रव्यनी अपेक्षाओ शौच छ, अने निरवध आचरण करवु’ ओ भावनी अपे-



दर्शनं=सम्यक्तत्वं, तत्प्रधानं यस्य स तथा, चारित्रप्रधानः—चारित्रं=क्रिया,  
तत् प्रधानं यस्य स तथा, उदारः=कृज्वाशयः, तथात्र—‘घोरे घोरगुणे घोर  
तत्त्वस्वी घोरं च भवेत्वासी, उच्छृङ्खलशरीरं’ ज्ञाया—घोरो घोरगुणां घोरतत्त्व-  
स्वी घोरब्रह्मचर्यवासी उच्छृङ्खलशरीरः’ इति संग्राह्यम्

तत्र—घोरः=सातिशयदीप्तियुक्तः, घोरगुणः=सर्वोत्कृष्टगुणयुक्तः. घोरतत्त्वस्वी=  
कातरजनदुष्करतपःकारकः, घोरब्रह्मचारी=अल्पमत्वात्तनुं त्वय ब्रह्मचर्य-  
युक्तः, उच्छृङ्खलशरीरः—उच्छृङ्खलम्=उज्ज्वलतमिव संस्कारपरित्यागात् शरीरं  
येन संः, सर्वथा शरीरसंस्कारपरिवर्जित इत्यर्थः । तथा—चतुर्दशपूर्व—चतु-  
र्दशपूर्वधारकः—तथा—चतुर्ज्ञानोपगतः=मति—श्रुतावधिमनःपर्यवेति ज्ञान-

और निरवध आचरण करना यह भाव की अपेक्षा शीघ्र है. इस प्रकारके शीघ्र प्रधान  
थे थे,। मत्यादिक ज्ञानों से प्रधान होने के कारण ये ज्ञानप्रधान थे, सम्य-  
क्त्वरूप दर्शन से प्रधान होने के कारण दर्शनप्रधान थे, क्रियारूप चारित्र से  
प्रधान होने के कारण चारित्रप्रधान थे, कृज्वाशयरूप उदारभाव से प्रधान  
होने के कारण ये उदार थे, यहाँ ‘घोरे’ इत्यादि । सातिशयदीप्ति से युक्त  
होने के कारण ये घोरगुण वाले थे, कातर—कायर जन जिन तपों को नहीं कर  
सकते थे—ऐसे कठिन तपों को करने के कारण ये घोरतत्त्वस्वी थे, हीन-  
शक्तिवाले जीव जिस ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर सकते थे, उस ब्रह्म  
चर्यव्रत को ये धारण करते थे, इसलिये घोर ब्रह्मचारी थे, अपने शरीर  
का संस्कार करना इन्होंने छोड़ रखा था इसलिये ये उच्छृङ्खलशरीर थे,  
चौदह पूर्व के पूर्णरूप से पाठी थे, इसलिये ये चतुर्दशपूर्व धारक थे, मतिज्ञान,  
श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान इन चार ज्ञानों से सहित थे इस-

‘क्षेत्रे शीघ्र छे. क्षेत्रे शीघ्रप्रधान होता, मति वगेरे ज्ञानप्रधान होवाथी क्षेत्रे  
ज्ञानप्रधान होता. सम्यक्त्वश्च प्रधान होवाथी क्षेत्रे दर्शनप्रधान होता. क्रिया इव  
चारित्र प्रधान होवाथी क्षेत्रे चारित्र्य प्रधान होता. कृज्वाशयश्च उदारभावप्रधान होवाथी  
क्षेत्रे उदार होता. अही घोरे वगेरे. सातिशय दीप्तिथी युक्त होवा जेहल क्षेत्रे  
घोरगुणवाणा होता. कातर बोधे जे तपो आचरि शके नहि ते कठिन तपोनु क्षेत्रे  
आचरण करता होता. क्षेत्रे क्षेत्रे घोर तपस्वी होता. दुर्गण छे जे जतना  
ब्रह्मचर्यनु पालन करि शके नहि ते ब्रह्मचर्यव्रतने क्षेत्रे धारण करता होता. क्षेत्रे  
क्षेत्रे घोर ब्रह्मचारी होता. पोताना शरीरना संस्कारनी गधी क्रियाओंने अभि  
सहतर त्याग कर्ये होता क्षेत्रे क्षेत्रे उच्छृङ्खल शरीर होता. चौदह पूर्वना पूर्ण पाठी  
होता. क्षेत्रे क्षेत्रे चतुर्दशपूर्वधारक होता. मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान अने मनः

चतुष्टययुक्तः । एवंविधः सन पञ्चभिरनगारशतैः=पञ्चशतसंख्यकैरनगारैः  
साद्धं=सह सपरिवृतः=संवेष्टितः पूर्वानुपूर्वीं चरन्=तीर्थकरपरम्परया विहर-  
माणः, ग्रामानुग्रामम्=एकस्माद् ग्रामाद् ग्रामान्तरं द्रवन्=गच्छन् सुखसुखेन  
विहरन्, यत्रैव-श्रावस्ती नगरी, यत्रैव कोष्ठकं चैत्यं, तत्रैव उपागच्छति,  
श्रावस्ती-नगर्या बहिः=श्रावस्ती नगरी बहिःप्रदेशे स्थिते कोष्ठके चैत्ये  
यथाप्रतिरूपं=साधुकल्पानुसारम् अवग्रहम्=वनपालाज्ञाम् अवगृह्य=गृहीत्वा  
संयमेन=सप्तदशविधेन तपसा=द्वादशविधेन च आत्मानं भावयन्=वासयन्  
विहरतीति । इदमत्रबोध्यम्-आर्जवादीनां चरणकरणान्तर्गतत्वेऽपि यत्पुन-  
रुपादानं तत् आर्जवादीनां प्राधान्यख्यापनार्थमिति । जितक्रोधत्वादीनाम्  
आर्जवादीनां चायं विशेषो बोध्यः-जितक्रोधादिपदैः उदयावस्थाप्राप्तानां

लिये चतुर्ज्ञानोपगत थे, इनके साथ पाँच सौ अनगार थे, अकेले नहीं थे,  
तीर्थकरपरंपरा के अनुसार ये विहार करने में रत थे-अनः उसी परंपरा  
के अनुसार ये विहार करते, एक ग्राम से दूसरे ग्राम में बड़े यत्न से  
धर्मोपदेश की वरसा करते जहाँ श्रावस्ती नगरी थी, और उममें भी  
जहाँ वह कोष्ठक चैत्य था वहाँ पर आये, वहाँ आकर वे उस नगरी  
के बाहर बने हुए उस कोष्ठक चैत्य में साधुकल्प के अनुसार वनपाल की  
आज्ञा लेकर १७ प्रकार के संयम से और १२ प्रकार के तप से आत्मा  
को वासित करते हुए ठहर गये. यहाँ ऐसा समझना चाहिये-आर्जव  
आदि यद्यपि चरण और करण के अन्तर्गत हैं-फिर भी यहाँ जो स्वतन्त्र  
रूप से उनका उपादान किया गया है-वह उनमें प्रधानता प्रदर्शित करने  
के लिये किया गया है। जितक्रोधत्व आदि में और आर्जव आदि में

पर्ययज्ञान ओ आरेखार ज्ञानोथी ओओ युक्त हुता ओथी चतुर्ज्ञानोपगत हुता. ओमिनी  
साधु पाँचसौ अनगार हुता. ओओ ओकला हुता नहि. तीर्थकर परंपरा सुज्ज  
विहार करवाभां, ओओ रत हुता. आम ओओ तीर्थकर परंपरा सुज्ज विहार करते  
करतां ओक ग्रामथी बीज ग्राम भूज न निष्ठाथी धर्मोपदेशनी वर्षा करतां करतां न्यां  
श्रावस्ती नगरी हुती अने तेभां पणु न्यां ते कोष्ठक चैत्य हुतुं त्यां आवां त्यां  
आवीने ते नगरीनी गहारना ते कोष्ठक चैत्यभां साधु कल्प सुज्ज वनपालनी आज्ञा  
मेणवीने १७ प्रकारना संयमथी अने १२ प्रकारना तपथी पोताना आत्माने वासित  
करता तेओ त्यां रेकायेला आर्जव वगेरेना ओ के चरण अने करणभां समावेश  
थाय छे छतां ओ अही न स्वतन्त्रपथी ओमनुं ग्रहण करायुं छे ते तेमनाभां  
प्रधानता प्रदर्शित करवा भाटे न छे तेम समज्जु. जितक्रोधत्व वगेरेभां अने



ક્રોધાદીનાં વિફલીકરણં સૂચિતં, માર્દવપ્રધાનાદિપદૈસ્તેપામુદયનિરોધઃ  
સૂચિતઃ । અથવા-યત-એવ જિતક્રોધાદિઃ, અત એવ-ક્ષમાદિપ્રધાન इति हेतु  
हेतुमद्भावाद् विशेषो बोध्य इति । तथा-‘ज्ञानसम्पन्नः’ इत्यादिपदैः ज्ञाना-  
दिमन्त्वमात्रं सूचितम् । ‘ज्ञानप्रधानः’ इत्यादिपदैस्तु ज्ञानादिप्राधान्यं सूचित-  
मिति ॥ सू० १०७ ॥

મૂલમ્—તણં સાવત્થીએ નયરીએ સિંઘાડગ—તિય—ચઝક—  
ચચર—ચઝમુહ—મહાપહપહેસુ મહયા જળસદેહ વા જળબૂહેહ વા  
જળબોલેહ વા જળુમ્મીહ વા જળુક્કલિયાહ વા જળસંનિવાણહ વા  
જાવ પરિસા પઞ્ચવોસહ ।

તણં તસ્સ ચિત્તસ્સ સારહિસ્સ તં મહયા જળસદેહ ચ જાવ  
જળસંનિવાયં ચ સુણેત્તા ય પાસિત્તા ય ઇમેયારૂવે અઙ્ગત્થિએ  
જાવ સમુપ્પજિત્થા કિંણં અઙ્ગ સાવત્થીએ નયરીએ ઇંદમહેહ વા

यह अन्तर हैं कि जो जितक्रीधादि होता है वह उदयावस्थाप्राप्त क्रोधा-  
दिकों को विफल बना देता है, और जो मार्दवप्रधानादि पदों वाला होता  
है वह क्रोधादिकों के उदय का निरोध कर देता है। यहो बात सूचित  
करने के लिये इन पदों को भिन्नरूप में रखा गया है। जिस कारण  
वह जितक्रीधादि होता है, उमी से वह क्षमादिप्रधान होता है—इस तरह  
हेतुहेतुमद्भाव को लेकर इनमें विशेषता जाननी चाहिये, तथा ‘ज्ञानसंपन्न’  
इत्यादि पदों द्वारा सिर्फ ज्ञानादियुक्तता सूचित की गई है और ‘ज्ञान-  
प्रधान’ इत्यादि पदों द्वारा उनमें प्रधानता प्रकट की गई है ॥सू० १०७॥

આર્દવ વગેરેમા આ તકાવત છે કે જે જિતક્રોધી વગેરે હોય છે તે ઉદયપ્રયાવસ્થા  
પ્રાપ્ત ક્રોધાદિકેને અંશળ બનાવી મૂકે છે. અને જે માર્દવ પ્રધાનાદિપદોવાળા હોય  
છે તે ક્રોધાદિકેના ઉદયને નિરોધ કરે છે. એ વાતને સૂચિત કરવા માટે જ આ  
‘પદોત્તુ’ ભિન્ન ભિન્ન રૂપમાં ગ્રહણ કરાયું છે. જેને લઈને તે જિતક્રોધાદિ હોય છે,  
તેને લઈને જ તે ક્ષમાદિપ્રધાન હોય છે. આ પ્રમાણે હેતુ હેતુમદ્ભાવને લઈને એમ-  
નામાં વિશેષતા બાળુવી બોધએ તેમજ “જ્ઞાનસંપન્ન” વગેરે પદો વડે ફક્ત જ્ઞાનાદિ  
યુક્તતા સૂચિત કદવામાં આવી છે અને “જ્ઞાનપ્રધાન” વગેરે પદો વડે તેમનામાં  
પ્રધાનતા પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ॥૧૦૭॥

खंदमहेइ वा एवं रुदमहेइ मउंदमहेइ वा वेसमणमहेइ वा नाग-  
महेइ वा भूयमहेइ वा जक्खमहेइ वा थूभमहेइ वा चेइयमहेइ वा  
रुक्खमहेइ वा गिरिमहेइ वा दरिमहेइ वा अगडमहेइ वा नईमहेइ  
वा सरमहेइ वा सागरमहेइ वा, जं णं इमे बहवे उग्गा उग्गपुत्ता  
भोगा भोगपुत्ता राइन्ना इक्खगा णाया कोरवा जहा उववाइए  
तहेव अप्पेगइया हयगया जाव अप्पेगइया पायचारविहारेणं महया  
महया वंदावंदएहिं निग्गच्छंति ? । एवं संपेहेइ संपेहिता कंचुइज्ज-  
पुरिसं सदावेइ सदावित्ता एवं त्रयासी किं णं देवाणुप्पिया ! अज्ज  
सावत्थीए नयरीए इंदमहेइ वा जाव सागरमहेइ वा जेणं इमे बहवे  
उग्गा जाव णिग्गच्छंति ॥ सू० १०८ ॥

छाया—ततः खलु श्रावस्त्या नगर्याः शृङ्गाटक-त्रिक-चतुष्क-चत्वर-  
चतुर्मुख-महापथपथेषु महान् जनशब्द इति वा जनव्यूह इति वा जनवाक  
इति वा जनकलकल इति वा जनोर्मिरित वा जनात्कलिकेति वा जनसन्निपात  
इति वा यावत् परिषत् पर्युपास्ते ।

‘तए णं सावत्थीए नयरीए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के  
(सिंघाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापहपहेसु महया जणसहेइ वा  
जणवूहेइ वा, जणबोलेइ वा जणकलकलेइ वा जणुम्मीइ वा जणुकलि-  
याइ वा, जणसंनिवाएइ वा, जाव परिसा पज्जुवासइ) शृङ्गाटक में, त्रिक में,  
चतुष्क में, चत्वर में, चतुर्मुख में, महापथ में एवं पथ में मिलित मनुष्यों का पर-

‘तए णं सावत्थीए नयरीए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) त्यारपणी (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरीना (सिं-  
घाडग-तिय-चउक्क-चच्चर-चउम्मुह-महापहपहेसु महया जणसहेइ वा जण  
वूहेइ वा, जणबोलेइ वा जणकलकलेइ वा जणुम्मीइ वा जणुकलियाइ वा)  
जणसंनिवाएइ वा जाव परिसा पज्जुवासइ) शृङ्गाटकेमां, त्रिकेणुमां, चतुष्के  
मां, चत्वरेशां, चतुर्मुखेमां, महापथेमां अने पथेमां अयेका अने आवा

તતઃ સ્વલુ તસ્ય ચિત્રસ્ય સારથિન્તં મહાન્તં જનશબ્દં ચ યાવત્ જન-  
સંનિપાતં ચ શ્રુત્વા ચ દૃષ્ટ્વા ચ અયમેતદ્દૃષ્ય આધ્યાત્મિકો યાવત્ સમુદપચત્,  
કિં સ્વલુ અથ આવસ્ત્યાં નગર્યામ્ હન્દ્રમહેદ્દ્વિતિ વા સ્કન્દમહેદ્દ્વિતિ વા એવં  
સ્વદ્રમહેદ્દ્વિતિ વા મુકુન્દમહેદ્દ્વિતિ વા વૈશ્રવણમહેદ્દ્વિતિ વા નાગમહેદ્દ્વિતિ વા  
શ્રૂતમહેદ્દ્વિતિ વા યક્ષમહેદ્દ્વિતિ વા સ્તૂપમહેદ્દ્વિતિ વા ચૈત્યમહેદ્દ્વિતિ વા વૃક્ષમહેદ્દ્વિતિ

સ્પર્શને આલાપ પ્રચુરરૂપ સે હોને લગા ઓર લોક મી ડકટ્ટે હુવે થે પરસ્પર  
મેં અવ્યક્તવર્ણ વાલી ધ્વનિ મી લોગોં કે મુઘ્વ સે નિકલને લગી, કોલાહલ  
જેમા મચ ગયા. લોગોં મેં અગર મીડ હોને સે એક દૂસરે કા સંઘર્ષ મી  
હોને લગ ગયા, કહીંસ મનુષ્યોં કો થોડી મીડ છટકર સ્વડી હો ગઈ,  
અન્ય અન્ય સ્થાનોં સે આ ર કર ઉમમેં મિલને લગે. યાવત્ પરિપદા  
उनकी पर्युपासना करने लगी. ।

(તણં તસ્મ ચિત્તસ્મ સારહિસ્મ તં મહયા જણસદં ચ જાવ જણ-  
સંનિવાયં ચ સુણેત્તા ય પાસિત્તા ય ઇમેયાસ્સવે અજ્ઞત્થિય જાવ સમુપ્પ-  
જિત્થા) ઇસકે વાદ ઉમ મહાન્ જનશબ્દ કો યાવત્ જનસંનિવાત કો  
સુનકર એવં દેખકર ઉસ ચિત્ર સારથિ કો ઇસ પ્રકાર કા યહ આધ્યાત્મિક  
યાવત્ મનોગત વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ, (કિં ણં અજ્ઞ સાવત્થીય ણરીય ઇંદમહેદ્દ્વિતિ  
વા સ્વંદમહેદ્દ્વિતિ વા એવં સ્વદ્રમહેદ્દ્વિતિ વા-મહંદમહેદ્દ્વિતિ વા વૈસમણમહેદ્દ્વિતિ વા, નાગ-  
મહેદ્દ્વિતિ વા, મૂયમહેદ્દ્વિતિ વા, જક્ષમહેદ્દ્વિતિ વા) કયા આજ આવસ્તી નગરી મેં

કરનારા લોકોમાં પરસ્પર પ્રચુરરૂપમાં આલાપ થવા માંડ્યો—વાર્તાલાપ પ્રારંભ થયો—  
લોકો વેધારે સંખ્યામાં એકત્ર થવા લાગ્યા. પરસ્પર અસ્કુટ ધ્વનિમાં પણ લોકોમાં  
વાતચીતં થવા લાગી. પરિણામે ઘોંઘાટ જેવું વાતાવરણ થઈ ગયું. ત્યાં અપાર ભીડ  
થવાં મીંડી અને તેથી એક બીજાથી સંઘર્ષિત થઈને જ લોકો અવરજવર કરીશકતા  
હતા. એવી પરિસ્થિતિ ઉત્પન્ન થઈ ગઈ. કેટલાક સ્થાનો પર થોડા માણસો ટોળાના  
આકારમાં એકત્ર થઈ ગયા. અને બીજા લોકો પણ તેમની પાસે રૂકાવવા લાગ્યા, યાવત્  
પરિપદા તેમની પર્યુપાસના કરવા લાગી.

(તણં તસ્મ ચિત્તસ્મ સારહિસ્મ તં મહયા જણસદં ચ જાવ જણ  
સંનિવાયં ચ સુણેત્તા ય પાસિત્તા ય ઇમેયાસ્સવે અજ્ઞત્થિય જાવ સમુપ્પજિત્થા)  
ત્યારબાદ તે મહાન્ જનશબ્દને યાવત્ જનસંનિવાતને સાંભળીને અને જોઈને તે  
ચિત્રસારથીને આ જાતનો આધ્યાત્મિક યાવત્ મનોગત વિચાર ઉત્પન્ન થયો કે  
(કિં ણં અજ્ઞ સાવત્થીય ણરીય ઇંદમહેદ્દ્વિતિ વા સ્વંદમહેદ્દ્વિતિ વા એવં સ્વદ્રમહેદ્દ્વિતિ વા  
મહંદમહેદ્દ્વિતિ વા વૈસમણમહેદ્દ્વિતિ વા નાગમહેદ્દ્વિતિ વા, મૂયમહેદ્દ્વિતિ વા જક્ષમહેદ્દ્વિતિ વા)

इति वा गिरिमह इति वा दरीमह इति वा अवन्तमह इति वा नदीमह इति  
वा सरोमह इति वा सागरमह इति वा, यत्खलु इमे महन उग्रा उग्रपुत्रा  
भोगा भोगपुत्रा राजन्याः इक्ष्वाकनो ज्ञाताः क्षौरुणाः यथा औषपातिके तथैव

हन्द्र को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या स्कन्द को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या रुद्र को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या मुकुन्द को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या वैश्रवण को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या योग को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या भूतको निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या यक्षा को निमित्त करके उत्सव हो रहा है (शुभमहेइ वा, वैद्वमहेइ वा, कम्प्यमहेइ वा, गिरिमहेइ वा, दरिमहेइ वा, अगडमहेइ वा, कर्ईमहेइ वा, पदंगहेइ वा, सागरमहेइ वा,) या किसी स्तूप को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी चैत्य-उद्यान को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी दृष्ट को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी पर्वत को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी गुफा को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी--अवट-कूप को लेकर के उत्सव हो रहा है, या किसी नदी को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी तालाब को निमित्त करके उत्सव हो रहा है, या किसी समुद्र को निमित्त करके उत्सव हो रहा है? (जे णं इमे बहवे उग्गा उग्गपुत्ता, ओग्गा ओग्गपुत्ता, राइज्जा, रक्खग्गा, णाग्गा, कोरव्वा.

શુ આજે શ્રાવસ્તી નગરીમાં મુદ્રના નિમિત્તે કોઈ ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, સ્કંદના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે રુદ્રના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે મુદ્રના નિમિત્તે કોઈ ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે વૈશ્રવણના નિમિત્તે કોઈ ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે નાગ નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે ભૂતના નિમિત્તે કોઈ ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે યક્ષના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે. (ધૂમમ-  
હેઈ વા, વેઈયમ્હેઈ વા, રવ્વમ્હેઈ વા, ગિરિમહેઈ વા, દરિયમહેઈ વા, અગઢ-  
મહેઈ વા, નર્મમહેઈ વા, સ્વર્મહેઈ વા, સાગરમહેઈ વા) કે કોઈ સ્તૂપના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે નૌત્યના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, વૃક્ષના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે પર્વતના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે શુદ્ધના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે કોઈ ન્યાયટકપના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે કોઈ નદીના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે તળાવના નિમિત્તે ઉત્સવ ઉજવાઈ રહ્યો છે, કે કોઈ ચમુદ્રના નિમિત્તે ઉજવાઈ રહ્યો છે ? (જે જાં રમે, બહવે  
હમ્મા હમ્માપુત્તા, મોગા મોગપુત્તા, રાહન્ના, રવ્વલ્લા, પાયા, કોરવ્વા, જહા

અપ્પેકકે હયગતા યાવત્ અપ્પેકકે પાદચાર વિહારેણ મહર્હિમહર્હિવન્દ  
 હન્દૈર્નિર્ગચ્છન્તિ?, એવં સંપેક્ષતે સંપેક્ષ્ય કઠ્ચુકીયપુરુષં શબ્દયતિ, શબ્દયિત્વા  
 એવમવાદીત્-કિં સ્વલુ દેવાનુપ્રિયા: ! અથ શ્રાવસ્ત્યાં નગર્યામ્ ઇન્દ્રમહા ઇતિ વા  
 યાવત્ સાગરમહા ઇતિ વા, યત્સ્વલુ ઇમે બહવ ઉગ્રા યાવત્ નિર્ગચ્છન્તિ? ૧૦૮।

‘તણ’ ઇત્યાદિ—

ટીકા--તતઃ સ્વલુ શ્રવસ્ત્યા નગર્યા શૃંગાટક-ત્રિક-ચતુષ્ક-ચત્વર ચતુર્મુખ  
 -મહાપથપથેષુ-તત્ર-શૃંગાટક=શૃંગાટકાકૃતિકસ્ત્રિકોણો માર્ગઃ, ત્રિક=ત્રિપથ  
 જહા ઉવવાહૈ તહેવ અપ્પેગહ્યા હયગયા) જો યે વહુત સે ઉગ્રવંશ કે મનુષ્ય,  
 ઉગ્રવંશ કે પુત્ર, ભોગવંશ કે મનુષ્ય, ભોગવંશ કે પુત્ર, રાજન્યવંશ કે  
 મનુષ્ય, ઇશ્વાકુવંશ કે મનુષ્ય, જ્ઞાતવંશ કે મનુષ્ય, કુરુવંશ કે મનુષ્ય,  
 જેસા કિં ઇસકે આગે ઔપપાતિક સૂત્ર મેં કહા ગયા હૈ ઉસકે અનુસાર  
 કિતનેક ઘોડોં પર ચઢ કર (જાવ અપ્પેગહ્યા પાયચારવિહારેણ મહયાર  
 વંદાવંદૈર્હિ નિર્ગચ્છન્તિ) યાવત્ કિતનેક પૈદલ હી ભિન્નર સમૂહ મેં  
 હોકર નિકલ રહે હૈં. (એવં સંપેહેઇ) એસા ઉસને વિચાર કિયા-(સપે  
 હિત્તા કંચુડેજ્જપુરિસં સદાવેઇ) એસા વિચાર કરકે ઉસને કંચુકીયપુરુષ કો  
 બુલાયા (સદાવિત્તા એવં વયાસી) બુલાકર ઉસસે કહા-(કિં ણં દેવાણુપ્પિયા !  
 અજ્જ સાવત્થીએ નયરીએ ઇંદમહેઇ વા, જાવ સાગરમહેઇ વા જે ણં ઇમે બહવે  
 ઉગ્રા, જાવ નિર્ગચ્છન્તિ) હે દેવાનુપ્રિય ! કયા આજ શ્રાવસ્તી નગરી મેં ઇન્દ્ર મહો-  
 ત્સવ હૈ યા યાવત્ સાગર મહોત્સવ હૈ કિં જિસસે યે ઉગ્રવંશ કે મનુષ્ય યાવત્ જા રહે હૈં!

ઉવવાહૈ તહેવ અપ્પેગહ્યા હયગયા) કે જેથી ઘણા ઉગ્રવંશના પુત્રો, ભોગ-  
 વંશના માણસો, ભોગવંશના પુત્રો, રાજન્યવંશના માણસો, ઇશ્વાકુવંશના માણસો,  
 જ્ઞાતવંશના માણસો, કુરુવંશના માણસો-પહેલાં ઔપપાતિક સૂત્રમાં જે પ્રમાણે વર્ણન  
 કરવામાં આવ્યું છે તે મુજબ કેટલાક ઘોડાઓ પર સવાર થઈને (જાવ અપ્પેગહ્યા  
 પાયચારવિહારેણ મહયાર વંદાવંદૈર્હિ નિર્ગચ્છન્તિ) યાવત્ કેટલાક પગપાળાં  
 જે જુદા જુદા સમૂહોમાં એકત્ર થઈને જઈ રહ્યા છે. (એવં સંપેહેઇ) આ બંધને  
 તેણે વિચાર કર્યો. (સપેહિત્તા કંચુડેજ્જપુરિસં સદાવેઇ) આ પ્રમાણે વિચાર કરીને  
 તેણે કંચુકીય પુરુષને બોલાવ્યો. (સદાવિત્તા) એવં વયાસી) બોલાવીને તેને કહ્યું.  
 કિં ણં દેવાણુપ્પિયા ! અજ્જ સાવત્થીએ નયરીએ ઇંદમહેઇ વા, જાવ સાગર-  
 મહે વા જે ણં ઇમે બહવે ઉગ્રા, જાવ નિર્ગચ્છન્તિ) હે દેવાનુપ્રિય ! શું આજે  
 શ્રાવસ્તી નગરીમાં ઇન્દ્રમહોત્સવ છે કે યાવત્ સાગર મહોત્સવ છે કે જેથી ઉગ્રવંશના  
 માણસો યાવત્ જઈ રહ્યા છે ?

અત્ર ત્રયો માર્ગાઃ સમ્મિલન્તિ તત્ ચતુષ્કમ્=ચતુષ્પથં યત્ર ચત્વારો માર્ગા  
મિલિતાસ્તત્, ચત્વરમ્=અનેકમાર્ગસંગમસ્થાનમ્. ચતુર્મુખં=યતશ્ચતસૃષ્વપિ  
દિશુ પન્થાનો નિસ્સરન્તિ તત્, મહાપથઃ=રાજમાર્ગઃ, પન્થાઃ=સામાન્યમાર્ગઃ,  
એતેષામિતરેતરયોગદ્વન્દ્વઃ, તેષુ તથોક્તેષુ, મહાન્=પ્રચુરઃ જનશબ્દ इति चा=  
जनानां परस्परालापारिरूपः, जनव्यूहः=जनबोलः=जनानामव्यक्तवर्णा ध्वनिः,  
जनकलकलः=जनानां, कोलाहलध्वनिः, तत्र-बोलकलकलयोरयं विशेषः =बोल=  
अविभाव्यमानवचनविभागः कलकलस्तु विभाव्यमानवचनविभाग इति,  
जनोर्मिः=जनसम्बाधः, जनोत्कलिका=जनानां लघुतरः संघातः, जनसन्निपातः=  
जनानाम् अन्योन्यस्थानेष्व एकत्र मीलनम्. यावत्-पर्यन्तं=उग्रोपुत्रादिरूपा

ટીકાર્થ—તથ શ્રાવસ્તી નગરી કે શૃંગાટક-સિંઘાડે કી આકૃતિ જૈસે  
ત્રિકોણવાલે માર્ગ મેં, ત્રિક-ત્રીનમાર્ગ સે મિલે હુએ માર્ગ મેં, ચતુષ્પથમેં  
ચાર માર્ગોં સે મિલે હુએ માર્ગ મેં, ચત્વર મેં-અનેક માર્ગોં કે સંગમવાલે  
સ્થાન મેં, ચતુર્મુખ-જહાંસે ચારોં દિશાઓં મેં માર્ગ નિકલતે હૈં, એસે રાસ્તે મેં, મહા  
પથ રાજમાર્ગ મેં, ઓર પથ-સામાન્ય માર્ગ મેં પ્રચુર માત્રા મેં જનશબ્દ હુઆ,  
આપસ મેં ઘોતચીત કરને કી અવાજ નિકલી, જનવ્યૂહ-જનસમુદાય-આકર  
ઇકઢા હોને લગા, જનબોલ-મનુષ્યોં કી અવ્યક્ત વર્ણવાલી ધ્વનિ હોને લગી  
જનકલકલ-જનોં કી કોલાહલ રૂપ ધ્વનિ હોને લગી। બોલ મેં ઓર કલ-  
કલ મેં અન્તર ઇતના ઘી હૈ. કિ બોલ મેં વચનવિભાગ અવિભાવ્યમાન (અલગર) હોતા  
હૈ ઓર કલકલ મેં વચનવિભાગ વિભાવ્યમાન (અવ્યક્ત ધ્વનિ) હોતા હૈ, જનસમ્બા-  
ધજનોં કે જમઘટ્ટ મેં હોને વાલે પારસ્પરિકવિમર્દ કા નામ જનોર્મિ હૈ તથા મનુષ્યોં  
કા જો લઘુતર સંઘાત હૈ વહ જનોત્કલિકા હૈ. અન્યોન્યસ્થાનોં સે આગત

ટીકાર્થ—ત્યારે શ્રાવસ્તી નગરીના શૃંગાટક-શિંગોડાની આકૃતિ જેવા ત્રિકોણ-  
વાળા માર્ગમાં, ત્રિક-ત્રણ માર્ગોં જ્યાં એકત્ર થાય તે માર્ગમાં, ચતુષ્પથમાં-ચાર  
સ્તાઓં જ્યાં ભેળા મળે તે માર્ગમાં, ચત્વરમાં-ઘણા માર્ગોં જ્યાં એકત્ર થાય તે  
સ્થાનમાં, ચતુર્મુખ-જ્યાંથી ચોમેર સ્તાઓં જતા હોય એવા માર્ગમાં, મહાપથ-  
રાજમાર્ગમાં અને પથ-સામાન્ય માર્ગમાં-ભારે જનશબ્દ થયો. માણસોનો ઘોંઘાટ થયો.  
પરસ્પર વાર્તાલાપ કરવાથી શોકળકોર થયો. જનવ્યૂહ-જનસમુદાય-એકત્ર થવા લાગ્યો,  
જનબોલ-માણસોની અવ્યક્ત ધ્વનિ થવા લાગ્યો, જનકલકલ-માણસોનો કોલાહલરૂપ  
ધ્વનિ થવા માંડ્યો. બોલમાં અને કલકલમાં તફાવત આટલો જ છે કે બોલમાં વચન  
વિભાગ અવિભાવ્યમાન હોય છે અને કલકલમાં વચનવિભાગ વિભાવ્યમાન હોય છે.  
જનસમ્બાધજનોના જમઘટ્ટમાં થનાર પારસ્પરિક વિમર્દનું નામ છે. તેમજ માણસોનો  
જો લઘુતર સંઘાત છે તે જનોત્કલિકા છે. બીજા ઘણાં સ્થાનોથી આવેલા માણસો



પર્યુપાસ્તે । અન્ન યાવત્છબ્દેન-‘વહુજનો અણ્ણમણસ્સ’ इत्यारभ्य ‘अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा’ इत्यन्तःसर्वोऽपि पाठ औपपातिकसूत्रोक्तचम्पानगरीगत श्री महावीरस्वामिस्वामिनपठितः- सर्वोऽप्यत्र वाच्यः, नवरस-अत्र छत्रादयस्तीर्थकरातिशेषाः न वाच्याः । तथा-‘समणे भगवं महावीरे’ इत्यादि भगवन्नाम स्थाने ‘पासावच्चिज्जे केसी नाम’ कुमारसमणे जाइस पण्णे इत्यादि वाच्यम् । अत्र ‘जन शब्द इति वा’ इत्यादौ इति शब्दो वाक्यालङ्कारे ‘वा’ शब्दः समुच्चये इति ।

‘तए णं तस्स चित्तस्स’ इत्यादि-ततः खलु तस्य चित्रस्य सारथेः तं महान्तं जनशब्दं च यावत् जनसंनिपातं च श्रुत्वा=आकर्ण्य तं महान्तं

મનુષ્યોં કા જો એક જગહ મિલ્યાન હોતા હૈ ઉસ્કા નામ જનસન્નિપાત હૈ યાવત્ ઉગ્ર, ઉગ્રપુત્ર આદિ કોં કોં પરિપદાને પર્યુપાસના કી યહાં યાવત્ શબ્દ સે ‘વહુજનો અણ્ણમણસ્સ’ યહાં સે હેકર ‘અભિમુહા વિણેણં પંજલિ ઉડા’ યહાં તક કા સબ પાઠ જો કિ ઔપપાતિક સૂત્ર મેં ૩૮ વે સૂત્ર મેં ચમ્પાનગરીગત શ્રીમહાવીર સ્વામી કે આગમન કે પાઠ મેં લિખા જા ચુકા હૈ, ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ઉસ પાઠ ગત છત્રાદિક જો કિ તીર્થકર પ્રકૃતિ કે અતિશયરૂપ હૈ યહાં ગ્રહણ નહીં કરનાં ચાહિયે-તથા ‘સમણે ભગવં-મહાવીરે’ इत्यादि भगवन्नाम के स्थान में ‘पासावच्चिज्जे केसी नाम’ कुमारसमणे जाइस पण्णे’ ऐसा पाठ कहना चाहिये, ‘जनशब्द इति वा’ इत्यादिपाठ में आगत इति शब्द वाक्यालङ्कार में और ‘वा’ शब्द समुच्चय में आया है ।

‘તણં તસ્સ ચિત્તસ્સ’ इत्यादि इसके बाद उस चित्र सारथि को उस ओक स्थाने जहां ओकर थाय छे तेनुं नाम जनसंनिपात छे. यावत् उग्र, उग्रपुत्र वगेरेनी परिपदाये पर्युपासना करी. अही यावत् शब्दधी ‘वहुजणो अण्णमणस्स’ अहीथी मांडीने “अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा” सुधीना औपपातिक सूत्रना ३८ मा सूत्र मुअण चंपानगरी गत श्री महावीर स्वामीना आगमनपाठमा ले वर्युन करवामा आव्युं छे-ते जधुं अही अहणु समजवुं. ते पाठमा ले छत्रादिक-के ले तीर्थकर प्रकृतिना अतिशयइय छे-तेमनुं अहणु अहीं करवुं नहि. तेमज ‘समणे भगवं महावीरे’ वगेरे लगवानना नामेनी जग्याओ “पासावच्चिज्जे केसी नाम” कुमारसमणे जाइस पण्णे” आ जालना पाठनुं अहणु समजवुं. “जन-शब्द इति वा” वगेरे पाठमा आवेल. “इति” शब्द वाक्यालङ्कारमा अने ‘वा’ शब्द समुच्चयना रूपमा छे.

‘तए णं तस्स चित्तस्स’ इत्यादि, त्यारथी ते । अत्र सारथीने ते महान

जनसमुदायं दृष्ट्वा च अयमेतद्रूपः आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत=समु-  
त्पन्नः। यावच्छब्देन 'चिन्तितः, कल्पितः, प्रार्थितः, मनोगतः संकल्पः'  
इति पदसमूहः व्यञ्जीतितमसूत्रवद् बोध्यः। अर्थोऽप्येषां तत एव गम्य  
इति। सम्प्रति मनोगतसंकल्पस्वरूपमाह—'किं णं' इत्यादि। किं खलु 'किम्'  
इति वितर्कः, 'खलु' इति वाक्यालङ्कारे, अथ श्रावस्त्यां नगर्याम् ईन्द्रमहः—  
इन्द्रः=शक्रः तन्निमित्तो महः=उत्सवः= इति वा, एवम् 'स्कन्दमहः' इत्यारभ्य  
'सागरमहः' इत्यन्तानां पदानामपि अर्थोऽनुसन्धेयः। नवरम्-स्कन्दः=कार्ति-

મહાન્ જનશબ્દ કો યાવત્ જનસંપાતકો સુન કરકે ઓર દેશ્વ કરકે ઇસ પ્રકાર કા યહ આધ્યાત્મિક યાવત્ સંકલ્પ ઉત્પન્ન હુઆ, યહાં યાવત્ શબ્દ સે 'ચિન્તિત, કલ્પિત, પ્રાર્થિત, મનોગત' યે વિશેષણ સંકલ્પ કે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈ। ઇનકા અર્થ ૮૩વેં સૂત્ર મેં સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ। અતઃ વહીં સે વહ જાનનાં યાહિયે। 'કિં ણં' ઇત્યાદિ 'કિં' શબ્દ વિતર્ક મેં ઓર 'ખલુ' શબ્દ વાક્યાલંકાર સે આયા હૈ। ચિત્ર સારથી કો જો સંકલ્પ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ વહીં ઇન શબ્દોં દ્વારા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ—કયાં આજ શ્રાવસ્તી નગરી મેં ઇન્દ્રમહ હૈ? ઇન્દ્ર નામ શક્ર કા હૈ. ઇસ શક્ર કો નિમિત્ત કરકે કિયા ગયા મહ-ઉત્સવ વહ ઇન્દ્રમહ હૈ. 'સ્કન્દમહ' સે લેકર 'સાગરમહ' તક કે પદોં કા અર્થ સી ઇસી પ્રકાર સે જાનનાં યાહિયે. સ્કન્દ નામ કાર્તિકેય

જનશબ્દને યાવત્ જનસંપાતને સાંભળીને અને જોઈને આ જાતનો આધ્યાત્મિક યાવત્ સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો. અહીં યાવત્ શબ્દથી "ચિન્તિત, કલ્પિત, પ્રાર્થિત, મનોગત" સંકલ્પ માટે આ વિશેષણોનું ગ્રહણ સમજવું. આ બધાનો અર્થ ૮૩ માં સૂત્રમાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. તેથી જિજ્ઞાસુજનોએ ત્યાંથી જાણી લેવું જોઈએ. "કિં ણં" ઇત્યાદિ. "કિં" શબ્દ વિતર્ક માટે અને "ખલુ" શબ્દ વાક્યાલંકાર માટે પ્રયુક્ત થયેલ છે. ચિત્રસારથિને જે સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો તેજ આ નિમ્ન શબ્દો વડે પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે કે શું આજે શ્રાવસ્તી નગરીમાં ઇન્દ્રમહ છે? ઇન્દ્ર શક્રનું નામ છે. આ શક્રના નિમિત્તે ઉજવાયેલ ઉત્સવ ઇન્દ્રમહ છે. "સ્કન્દમહ" થી માંડીને "સાગરમહ" સુધીના બધાં પદોનો અર્થ આ પ્રમાણે જ જાણવો જોઈએ. સ્કન્દ



केयः, रुद्रः=शिवः मुकुन्दः=नारायणः, वैश्रवणः=कुबेरः, नागो=भवनपतिविशेषः, भूतयक्षौ व्यन्तरविशेषौ, स्तूपः चैत्यस्तूपःशिखरवा, चैत्यं=चितास्थितं स्मारकचिह्नम्, वृक्षः=अश्वत्थादिः, दरी=गुहा, गिरिः=पर्वतः, अवटः=गर्तः, नदी, सरः=सागराः=समुद्राः। 'इति' शब्दः सर्वत्र स्वरूपनिर्देशपरः, 'वा' शब्दः समुच्चये। ततश्च इन्द्रमहादिषु कश्चिन्महोऽस्ति, यत्खलु इमे बहवः उग्राः=भगवता आदिनाथेन आरक्षकपदस्थापितानां वंशजाताः, उग्रपुत्राः=कुमारावस्थोपेता उग्राएव उग्रपुत्राः, भोगाः=आदिनाथेन गुरूपदे स्थापितानां वंशजाताः, भोगपुत्राः=तेषां पुत्रा एव, राजन्याः=भगवताऽऽदिनाथेन वयस्यपदे स्थापि-

का है, रुद्र नाम महादेव का है मुकुन्द नाम नारायण का है, वैश्रवण नाम कुबेर का है, भवनपतिविशेष का नाम नाग है, भूत और यक्ष ये व्यन्तर विशेष हैं। स्तूप का नाम चैत्य स्तूप अथवा शिखर है, चितास्थित स्मारक चिह्न का नाम चैत्य है, पीपल वगैरह के झाड़ का नाम वृक्ष है, गिरि नाम पर्वत का है, गुफा का नाम दरी है, अवट का नाम गर्त, नदी, सर-तालाब और सागर ये सब अर्थतः प्रतीत ही हैं। इति शब्द यहां सब जगह स्वरूप-निर्देशपरक है 'वा' शब्द समुच्चय में है। इस तरह से उसने विचार किया कि क्या इन्द्रमहादिकों में से आज कोई मह-उत्सव है कि जिसमें ये अनेक उग्र-भगवान् आदिनाथ द्वारा जिन्हें आरक्षक के पद पर स्थापित किया गया है, उनके वंश के लोग-जा रहे हैं ये अनेक उग्रपुत्र-कुमारावस्थोपेत उग्ररूप उग्रपुत्र जा रहे हैं, ये भोग आदिनाथ भगवान् जिन्हें गुरु के पद पर स्थापित किया उनके वंशके लोग जा रहे हैं, भोगपुत्र-उनके कुमारावस्थापन्न लड़के जा रहे हैं, ये राजन्य-आदिनाथ

...कार्तिकेयन्तुं नाम छि. रुद्र महादेवन्तुं नाम छि. मुकुन्द तुं नाम छि. नारायण वैश्रवण कुबेरन्तुं नाम छि, भवनपति विशेषन्तुं नाम नाग छि. भूत अने यक्ष ओओ व्यन्तरविशेष छि. स्तूप नाम चैत्यस्तूप अथवा शिखरन्तुं छि, चितास्थित स्मारकचिह्नन्तुं नाम चैत्य छि, पीपल वगैरे आडन्तुं नाम वृक्ष छि. शृङ्गन्तुं नाम दरी छि. गिरि पर्वतन्तुं नाम अवट गर्त छि, नदी सर-तालाब अने सागर आ गंधाना अर्थो स्पष्ट न छि, इति शब्द आड़ी स्वरूप निर्देशपरक छि. 'वा' शब्द समुच्चय भाटे बपरयो छि. आ प्रमाणे विचार कर्यो के शुं आओ इन्द्र महादेवमांथी केओ महोत्सव छि? के ओथी ओओ घण्टा उग्र-भगवान् आदिनाथ वडे जेभने आरक्षकपदे प्रतिष्ठित करवामां आव्या छि तेमना वंशना बोकेो नछ रह्या छि, ओओ घण्टा उग्रपुत्रो-कुमारावस्थोपेत उग्ररूप उग्रपुत्रो नछ रह्या छि, ओ लोग-आदिनाथ लगवामे जेभने गुरूपदे प्रतिष्ठित कर्या छि तेमना वंशना बोकेो नछ रह्या छि, ओ लोगपुत्रो-तेमना कुमारावस्थापन्न पुत्रो नछ रह्या छि, ओ

तानां वंशजाताः, इक्ष्वाकवः=इक्ष्वाकुवंशोद्भवाः, ज्ञाताः=ज्ञातवंशीयाः, कौर-  
व्याः=कुरुवंशोद्भवाः, ‘जहा उववाइए तहेव’ इतोऽग्रे ‘खत्तिया माहणा’ इत्या-  
रभ्य ‘चंदणोलित्तगायसरीरा’ इतिपर्यन्तः सर्वोऽपि पाठ औपपातिकसूत्रोक्त-  
श्री महावीरस्वामि वन्दनार्थगतोग्रोग्रपु । दिवद् विज्ञेयः । अप्येकके हयगताः=  
अश्वारूढाः, यावत् अप्येकके गजगताः=गजारूढाः, अप्येकके पादचारविहारेण  
महद्भिः=अतिविशालैः वृन्दवृन्दैः=पृथक् पृथक् समूहभूतैर्निर्गच्छन्ति=निस्स-  
रन्ति-इति । एवम्=अनेन प्रकारेण संप्रेक्ष्यते, संप्रेक्ष्य कञ्चुकीयपुरुषं शब्द-  
यति, शब्दयित्वा एवम् अवादीत=उक्तवान्-किं खलु देवानुप्रियाः । अथ  
श्रावस्त्यां नगर्याम् इन्द्रमह इति वा यावत् सागरमह इति वा वर्तते यत्  
खलु इमे बहव उग्रा यावद् निर्गच्छन्ति ? इति ॥ सू० १०८ ॥

ने जिन्हे मित्रपद पर स्थापित किया उनके वंशके लोग जा रहे हैं, ये  
इक्ष्वाकुवंश के लोग जा रहे हैं, ज्ञातवंशीयजन जा रहे हैं, ये कुरुवं-  
शीय जन जा रहे हैं, ‘जहा उववाइए तहेव’ यहां से आगे ‘खत्तिया  
माहणा’ से लेकर ‘चंदणोलित्तगायसरीरा’ यहां तकका समस्त पाठ जो  
कि औपपातिक सूत्र में कहा गया है उस समय, जब कि श्रीमहावीर-  
स्वामी की वन्दना के लिये उग्र-उग्रपुत्रादि कहे गये हैं यहां ग्रहण करना  
चाहिये, इनमें से कितनेक अश्वपर चढ़ कर, कितनेक हाथीपर चढ़ कर और  
कितनेक पैदल ही चलकर तथा कितनेक अपना २ विशाल समुदाय बना  
कर पृथक् २ रूप से निकल रहे हैं ।

इस प्रकार विचार कर फिर उसने कञ्चुकीयपुरुष द्वारपाल को बुलाया और  
बुलाकर उससे ऐसा कहा-हे देवानुप्रिय ! आज क्या श्रावस्ती नगरी में

राजन्थो-आदिनाथे जेमने मित्रपदे प्रतिष्ठित कर्था छ तेमना वंशना लोको जध रह्या  
छे, इक्ष्वाकुवंशना लोको जध रह्या छे; जे ज्ञातवंशीय लोको जध रह्या छे, जे-कुरु-  
वंशीय लोको जध रह्या छे, ‘जहा उववाइए तहेव’ अडीथी आगण ‘खत्तिया  
माहणा’ थी माडीने “चंदणोलित्तगायसरीरा” अडी सुधीना समस्त पाठनु-  
के जे औपपातिकसूत्रमां श्री महावीर स्वामीनी वंदना माटे उग्र-उग्र पुत्रादि गया  
हुता-अडी ग्रहण समज्जुं. तेनाथी केटलाक अश्व पर सवार थधने, केटलाक हाथी  
पर सवार थधने अने केटलाक पणपाणां ज आलीने तेमज केटलाक पोतानो विंशोण  
समुदाय जनावीने जुहा जुहा आकारमां त्यां जया नीकणी रह्या छे.

आ प्रमाणे विचार करीने यंछी तेले कञ्चुकीय पुरुषने बोलाव्यो अने बोलावीने  
तेने आभ कह्युं के-हे देवानुप्रिय ! शुं आजे श्रावस्ती नगरीमां इन्द्रमह यावत्

मूलम्—तएणं से कंचुईपुरिसे केसिस्स कुमारसमणस्स आ-  
गमणगहियविणिच्छए चित्तं सारहिं करयलपरिगहियं जाव वद्धावेत्ता  
एवं वयासी—णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज सावत्थिए नयरीए इंदम  
हेइ वा जाव सागरमहेइ वा जे णं इमे वहवे जाव वदावदएहिं  
निग्गच्छंति, एवं खलु भो देवाणुप्पिया ! पासावस्सिज्ज केसी नामं  
कुमारसमणे जाइसंपन्ने जाव दुइज्जमाणे इहमानए जाव विहरइ ।  
ते णं अज्ज सावत्थीए नयरीए वहवे उग्गा जाव अप्पेगइया वंदण-  
वत्तियाए जाव महया महया वंदावदएहिं निग्गच्छंति ॥सू० १०९॥

उाया—ततःखलु स कञ्चुकिपुरुषः केशिनः कुमारश्रमणस्य आग-  
मनगृहीतविनिश्चयः चित्रं सारथिं करतलपरिगृहीतं यावत् वद्धं यित्वा एवमयादीत्-  
नो खलु देवानुप्रिया! अथ श्राव त्यां नगर्षामि इन्द्रमह इति वा यावत्सा-

इन्द्रमह यावत् सागरमह है ? जो ये बहुत से उग्र, उग्रपुत्र आदि सबके  
सब अपने २ घर से निकल कर जा रहे हैं ? ॥ १०८ ॥

‘तएणं से कंचुईपुरिसे केसिस्स कुमारसमणस्स’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद उस कंचुकी पुरुषने (केसिस्स कुमार-  
समण०) केशी कुमारश्रमण के आगमन का गृहीत निश्चयवाला होकर चित्तं  
सारहिं करयलपरिगहियं जाव वद्धावेत्ता एवं वयासी) चित्रसारथी से बड़े  
विनय से दोनों हाथों की अंजलि बनाकर और उसे मस्तक पर छुमाकर एवं  
जयत्रिजय शब्दों द्वारा उसे बधाई देकर इस प्रकार कहा—(णो खलु देवा-

सागरमह छे ? उे नेथी ओ गधा उग्र, उग्रपुत्र वगेरे सौ पोतपोताना बेरथी  
नीइणीने न्हं रह्या छे ? ॥ १०८ ॥

“त एणं से कंचुईपुरिसे केसिस्स कुमारसमणस्स” इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(त एणं) त्थार पछी ते कंचुकी पुरुषे (केसिस्स कुमारसमण०)  
केशीकुमार श्रमणनी आगमननी बात मनमां विचारिने (चित्तं सारहिं करयल  
परिगहियं जाव वद्धावेत्ता एवं वयासी) चित्र सारथिनी सामे विनयतापूर्वक  
अन्ने हाथीनी अंजलि अनावीने अने तेने मस्तक पर छेरीवीने अने जयविजय  
शब्दोवडे तेमने बधाभाणी आभीने आ प्रभाणे कइं—(णो खलु देवाणुप्पिया !

ગરમહ્નિતિ વા યત્ સ્વલુ ઇમે બ્રહ્મો યાવત્ વૃન્દવૃન્દૈર્નિર્ગચ્છન્તિ, એવં  
સ્વલુ મો દેવાનુપ્રિય ! પાર્શ્વાપ્ત્યીયઃ કેશી નામ કુમારશ્રમણો જાતિસંપન્નો  
યાવત્ દ્રવન્દ્વિગતો યાવત્ વિહરતિ । તત્સ્વલુ અથ શ્રાવસ્ત્યાં નગર્યાં બહવ ઉગ્રા  
યાવત્ અપ્યેકકે વૃન્દનવૃત્તિતાયૈ યાવત્ મહદ્ભિર્મહદ્ભિર્વૃન્દવૃન્દૈર્નિર્ગચ્છન્તિ ॥૧૦૯॥

ટીકા-‘તણ’ સે इत्यादि ततःस्वलु स कञ्चुकिपुरुषः केशिनः कुमारश्रमणस्य  
आगमनगृहीतविनिश्चयः--आगमनस्य गृहीतः निश्चयो येन स तथा-ज्ञात  
केशिकुमारागमनवृत्तान्तः सन् चित्रं सार्थं करतलपरिगृहीतं यावद् वर्द्धयित्वा  
एवम्-भवादीत् हे देवानुप्रिय ! अथ स्वलु श्रावस्त्यां नगर्याम् इन्द्रमहादि  
सागरमहान्तेषु कश्चिद् महो=उत्सवो नास्ति, यत् स्वलु इमे उग्रादयो यावद्  
वृन्दवृन्दैर्निर्गच्छन्ति । एवं स्वलु મો દેવાનુપ્રિય ! મવાન્ જાનાતુ યદય્ સ્વલુ  
પાર્શ્વાપ્ત્યીયઃ કેશીનામ કુમારશ્રમણો જાતિસમ્પન્નો યાવત્ દ્રવન્દ્વિગ-  
તો

પુપ્પિયા ! અજ્ઞ સાવત્થીય નયરીય ઇંદમહેઈ વા, જાવ સાગરમહેઈ વા “હે દેવા-  
નુપ્રિય ! આજ શ્રાવસ્તી નગરી મેં ન ઇન્દ્ર ઉત્સવ હૈ અથવા યાવત્ ન સાગર  
ઉત્સવ હૈ (જેણં ઇમે બહવે જાવ વિંદાવિંદણિં નિર્ગચ્છન્તિ, એવં સ્વલુ મો  
દેવાનુપ્રિયા ! પાસાવચ્ચિજ્જકેસી નામં કુમારસમ્મણે જાઈસંપન્ને જાવ દુહજ્જમાણે  
હહમાગણે જાવ વિહરઈ) પરન્તુ જો યે વહુત સે ઉગ્ર ઉગ્રપુત્રાદિક અનેક  
વિશાલ સમુદાયરૂપ મેં હોકર નિકલ રહે હૈ-સો ઉસકા કારણ યહ્ હૈ કિ  
પાર્શ્વાપ્ત્યીય : કેશી નામ કે કુમારશ્રમણ જો કિ જાતિસંપન્ન આદિ  
પૂર્યોક્ત વિશેષણો વાલે હૈં તીર્થંકર પરમ્પરા કે અનુસાર ચિહાર કરતે હુણ,  
એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં ધર્મોપદેશ કરતે હુણ યહાં પધારે હૈં યાવત્-  
કોષ્ઠક ચૈત્ય મેં વિરાતલે હૈં (તેણં અજ્ઞ સાવત્થીય નયરીય બહવે ઉગ્ગા,  
જાવ અપ્પેગહયા વંદણવત્તિયાણે જાવ મહયા મહયા વંદાવંદણિં નિર્ગચ્છન્તિ)

અજ્ઞ સાવત્થીય નયરીય ઇંદમહેઈ વા, જાવ સાગરમહેઈવા) હે દેવાનુપ્રિય !  
આજે શ્રાવસ્તી નગરીમાં ન ઇન્દ્ર ઉત્સવ છે કે યાવત્ ન સાગર ઉત્સવ છે. (જે નં  
ઈમે બહવે જાવ વિંદાવિંદણિં નિર્ગચ્છન્તિ, એવં સ્વલુ મો દેવાનુપ્રિયા ।  
પાસાવચ્ચિજ્જકેસીનામં કુમારસમ્મણે જાઈસંપન્ને જાવ દુહજ્જમાણે હહ-  
માગણે જાવ વિહરઈ) પણ જે આ બધા ઉગ્ર ઉગ્રપુત્રાદિક ઘણા વિશાળ સમુદાયના  
આકારમાં એકત્ર થઈને બેઠા રહ્યા છે. તેનું કારણ એ છે કે પાર્શ્વાપ્ત્યીય કેશી નામે  
કુમાર શ્રમણ કે જે જાતિસંપન્ન વગેરે પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા છે, તીર્થંકર પરંપરા  
મુજબ વિહાર કરતાં કરતાં એક ગામથી બીજે ગામ ધર્મોપદેશ કરતા બહીં પધાર્યા છે.  
અને યાવત કોષ્ઠક ચૈત્યમાં તેઓશ્રી વિરાજે છે. (તે નં અજ્ઞ સાવત્થીય નયરીય  
બહવે ઉગ્ગા, જાવ અપ્પેગહયા વંદણવત્તિયાણે જાવ મહયા મહયા વંદા-

स्तथा नगर्याः कोष्ठके चैत्ये आगतो यावद् नत् खलु अथ श्रावस्त्यां नगर्यां  
बहव उग्रा यावत् इभ्यपुत्रा अप्येकके वन्दनवृत्तितायै वन्दननिमित्तं यावद् मह-  
द्भिर्महद्भिर्वन्दवृन्दैर्निर्गच्छन्तीति । सू० १०९ ॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही कंचुइपुरिसस्स अंतिए एय-  
मट्ठं सोच्चा निसस्स हट्ठुट्ठु—जाव—हियए कोडुंवियपुरिसे सदावेइ-  
सदावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आस-  
रहं जुत्तामेव उवट्ठवेह जाव सच्छत्तं उवट्ठवेति । तएणं से चित्ते सा-  
रही णहाए कयबलिकस्से कयकोउयमंगलपायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाइं  
मंगलाइं वंत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्घामरणालंकियसरीरे जेणेव  
चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आस-  
रहं दुरुहइ, सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचड-  
गरविंदपरिक्खित्ते सावत्थी नयरीए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ निग्ग-  
च्छित्ता जेणेव कोटुए चेइए जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवा-  
गच्छइ, उवागच्छित्तो केसिकुमारसमणस्स अदूरसामंते तुरए णिगि  
णहइ रहं ठवेइ य, ठवित्ता पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता जेणेव केसिकुमार-  
समणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणं तिक्खुत्तो  
आयाहिण—पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता  
णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे पंजलिउडे  
विणएणं पज्जुवासइ ॥ सू० ११० ॥

इस कारण आज श्रावस्ती नगरी में अनेक उग्र यावत् इभ्यपुत्रवन्दना  
करने के निमित्त यावत् विशालसमुदाय के रूप में होकर निकल रहे हैं । १०९।

वंदएहिं णिगच्छंति) अथी आगे श्रावस्ती नगरीमांथी धणु। उग्र यावत् इभ्य-  
पुत्रो वंदना करवा भाटे यावत् विशाल समुदायना रूपमां अेकत्र थधने जध रह्या छे । ॥१०९॥

छाया—तत खलु स चित्रः सारथिः कञ्चुकिपुरुषस्य अन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्ट-यावद् हृदयः कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति शब्दयित्वा, एवमयादीत-क्षिप्रमेव भो देवानुप्रिया ! चातुर्घण्टम् अश्वरथं युक्तमेव उपस्थापयत यावत्स-च्छत्रम् उपस्थापयन्ति । ततः खलु स चित्रः सारथिः स्नातः कृतबलि-कर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः शुद्धप्रवेश्यानि मङ्गल्यानि वस्त्राणि प्रवरप-

‘त एणं से चित्ते सारही कंचुईपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(न एणं से चित्ते सारही कंचुईपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए कोट्टुं वियपुरिसे सदावेइ) इसके बाद जब कि कंचुकी के मुख से इस अर्थ को सुना और उसका हृदय में विचार किया तब हृष्ट यावत् हृदय वाले होकर उस चित्रसारथिने कौटुम्बिकपुरुषों-आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया, (सदावित्ता एवं वयासी) बुलाकर उसने ऐसा कहा (खिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह) हे देवानुप्रियो ! आप लोग चातुर्घट-(चारघंटोवाले) अश्वरथ को घोड़ों से युक्त करके शीघ्र ही उपस्थित करो (जाव सच्छत्तं उवट्ठवेत्ति) अपने स्वामी की इस प्रकार आज्ञा के वचन सुनकर यावत् उत्तम छत्र सहित अश्वरथ को उन्होंने लाकर उपस्थित कर दिया, (न एणं से चित्ते सारही ण्हाए कयबलिकम्मे, कयकोउयमंगलप्रायश्चित्ते) रथ को उपस्थित हुआ जानकर चित्र सारथिने स्नान किया, बलिकर्म किया अर्थात् काक

‘त एणं से चित्ते सारही कंचुईपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं’ इत्यादि.

सूत्रार्थः—(त एणं से चित्ते सारही कंचुईपुरिसस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए कोट्टुं विय पुरिसे सदावेइ) न्याये कंचुकीना भुअथी आ भधी विगत सांलणी त्यारे तेण्णे मनभां विचार कर्ये अने हृष्ट यावत् हृदयवाणे, थधने ते चित्रसारथीये कौटुंणिक पुइषोने-आज्ञाकारी पुइषोने णोलाव्या, (सदावित्ता एवं वयासी) णोलावीने तेभने आ प्रमाणे क्खुं. (खिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह) हे देवानुप्रिय ! आप सौ सत्वरें आतुर्घंट (चार घंटोवाणा) अश्वरथने सज्जित करीने लावो. (जाव सच्छत्तं उवट्ठवेत्ति) पोताना स्वामीनी आ प्रमाणे आज्ञा सांलणीने यावत् तेभण्णे उत्तम छत्रसहित अश्वरथ लावीने उपस्थित कर्ये.

(त एणं से चित्ते सारही ण्हाए कयबलिकम्मे, कयकोउयमंगल-प्रायश्चित्ते) रथने आवेलो लेधने चित्रसारथीये स्नान कर्युं, बलिकर्म कर्युं अने दुस्वप्नना निवारणार्थं कौतुक, मंगलइय प्रायश्चित्तनी विधिओ संपन्न करी. मुद्ध-



रिहितः, अल्पसहार्धाभरणालङ्कृतशरीरो यत्रैव चातुर्घण्टो अश्वरथस्तत्रैव उपा-  
गच्छति, उपागत्य चातुर्घण्टम् अश्वरथं दूरोहति, सकोरष्टमाल्यदाम्ना छत्रेण  
ध्विजमाणेन महाभट-चटकरवृन्दपरिक्षितः आवस्तीनगर्याः मध्यमध्यनं  
निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव कोष्ठकं चैत्यं यत्रैव केशिकुमारश्रमणस्तत्रैव  
उपागच्छति, उपागत्य केशिकुमारश्रमणं त्रिकृत्वः आदक्षिणपदक्षिणं दूरोति,

आदि को अन्न का भाग दिया एवं दुःस्वप्न को विनाश  
करने के लिये कौतुक, मंगलरूप प्रायश्चित्त किया, (सुदृग्पावे-  
साइं मंगलाइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्धाभरणालंक्रियसरीरे जेणेव  
चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ) चाद में उसने शुद्ध, परिपदा में  
प्रवेशयोग्य, मांगलिक, वस्त्रों को अच्छी तरह से पहिरा एवं विशिष्ट कीम-  
तवाले तथा अल्प वजनवाले ऐसे आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत  
किया. (जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता चाउग्घंटे  
आसरहे दुरुहइ) चाद में वह जहां चारघंटों वाला अश्वरथ खड़ा था वहां  
पर आया—वहां आकर वह उस चातुर्घट अश्वरथ पर बैठ गया (सको-  
रिटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सहया भउचडगरविंदपरिक्खित्तो साव-  
त्थीए मज्झमज्जेणं निर्गच्छइ) छत्रधारण करने वाले ने उसके ऊपर कोरंट-  
पुष्पों की मालाओं से सुशोभित छत्र तान दिया, विशाल भटों का समूह  
उसके आसपास आकर खड़ा हो गया. इस प्रकार होकर फिर वह आवस्ती  
नगरी के बीचों बीच से होता हुआ निकला (निगच्छिता जेणेव कोट्टए

प्पावेसाइं मंगलाइं वत्थाइं पवरपरिहिए अप्पमहग्धाभरणालंक्रियसरीरे चा-  
उग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ) त्थारणाह तेण्णुं सारी रीते शुद्ध, मुनिपरि-  
पदाभां प्रवेश योग्य, मांगलिक वस्त्रो धारण कर्थां. तथा णहुं डिंभती अने अल्प-  
सारवाणा आलूषण्णां पहरेरीने पोताना शरीरने अलंकृत कर्थुं. (जेणेव चाउग्घंटे  
आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता चाउग्घंटे आसरहे दुरुहइ)  
त्थार णाह न्यां थार घंटेवाणा अधिरथ उतो त्यां गथे. त्यां न्धने ते चातुर्घंटे  
रथ पर सवार थये. (सकोरिटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सहया भउ  
चडगरविंदपरिक्खित्तो सावत्थीए नयरीए मज्झमज्जेणं निर्गच्छइ) छत्र  
धारण करनाराथे तेमना उपर डेरंट पुष्पोनी भाणाओथी सुशोभित छत्र ताण्णुं  
विशाण लोटाना समूहो आवीने तेनी आसपासं थोमेर विंटाणं गथा. आ प्रभाण्णे  
ते आवस्तीना नगरीनी वन्धे थधने नीक्कंथे. (निगच्छिता जेणेव कोट्टए चेइए

कृत्वा वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा नात्यासन्ने नातिदूरे शुश्रूषमाणो नमस्यन् अभिमुखे प्राञ्जलिपुटो विनयेन पर्युपास्ते ॥११०॥

चेइए केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) निकलकर वह जहां कोष्ठक चैत्य था और उसमें भी जहां केशीकुमारश्रमण थे वहां पहुँचा (उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणस्व अदूरसामं ते तुरए णिगिण्हइ) वहां पहुँच कर उसने केशिकुमारश्रमण के स्थान से कुछ थोड़ी दूर पर घोड़ा को खड़ा कर दिया (रहं ठवेइ) रथको खड़ा कर दिया (ठवित्ता पच्चोरुहई) खड़ा करके फिर वह उससे नीचे उतरा (पच्चोरुहित्ता जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) नीचे उतर कर वह जहां केशीकुमार श्रमण थे वहां पर गया (उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणं तिवखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ) वहां जाकर उसने केशीकुमार श्रमण को तीनबार प्रदक्षिणा की (करित्ता वंदइ, नमंसइ) प्रदक्षिणा करके फिर उसने उनको वन्दना की, नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सुसमाणे णमंसमाणे अभिसुहे पंजलिउडे विणएणं पज्जुवासइ) वन्दना नमस्कार करके फिर वह न अधिक दूर और न अधिक पास ऐसे उचित स्थान पर धर्मोपदेश सुनने की इच्छा से बैठ गया, वहां बैठे ही उसने उनके समक्ष विनय से दोनों हाथ जोड़ कर उनकी पर्युपासना की।

टीकार्थ इसका स्पष्ट है ॥११०॥

जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) नीकणीने ते जयां कोष्ठक चैत्य उतुं. अने तेमां पणु जयां केशीकुमार श्रमण उता त्यां गये, (उवागच्छित्ता केसिकुमार समणस्व अदूरसामं ते तुरए णिगिण्हइ) त्यां पडांथीने तेणे केशिकुमार श्रमणना स्थानथी थारा अंतरे घोडाओने उला राण्था. (रहं ठवेइ) रथने थोलाव्यो. ( ठवित्ता पच्चोरुहई) उलो राणीने पछी ते रथ परथी नीचे उतर्यो. (पच्चोरुहित्ता जेणेव केसिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) नीचे उतरीने ते जयां केशीकुमार श्रमण उता त्यां गये. (उवागच्छित्ता केसिकुमारसमणं तिवखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ) त्यां जधने तेणे केशीकुमार श्रमणनी त्रणुवार प्रदक्षिणा करी. (करित्ता वंदइ, नमंसइ) प्रदक्षिणा करीने तेणे तेमने वदन कर्था, नमस्कार कर्था. (वंदित्ता नमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सुसमाणे णमंसमाणे अभिसुहे पंजलिउडे विणएणं पज्जुवासइ) वंदना तेमज नमस्कार करीने ते हर पण नडि अने वधारे नलक पणु नडि ओवा योग्य स्थान पर ते धर्मश्रवणनी धन्याथी ओगीने ज तेणे तेमनी सामे विनयपूर्वक हाथ जोडीने तेओश्रीनी पर्युपासना करी.

टीकार्थ—आ सूत्रनो स्पष्ट ज छ. ॥११०॥



‘तएणं से’ इत्यादि—

टीका—एतत्सूत्रस्थपदानां व्याख्या पूर्वंगता, अतइदं व्याख्यातपायमितिम्. ११०।

मूत्रम्—तएणं से केसिकुमारसमणे चित्तस्स सारहिस्स तीसे महइमहालयाए परिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहेइ, तं जहा—  
सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं,  
सव्वाओ आदिन्नादाणाओ वेरमणं, सव्वाओ वहिद्धादाणाओ वेरमणं  
तएणं सा महइमहालिया परिसा केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए धम्मं  
सोच्चा निसम्म जामेव दिास पाउब्भया तामेव दिासिं पडिगया। सू. १११।

छाया—ततः खलु स केसिकुमारश्रमणः चित्राय सारथ्ये तस्यां महा-  
तिमहालयायां परिषदि चातुर्यामं धर्मं पणिकथयति, तद्यथा—सर्वस्मात् प्राणातिपा-  
ताद् विरमणम्?, सर्वस्मात् मृषावादाद् विरमणम्?, सर्वस्मात् अदत्तादानाद्  
विरमणम्?, सर्वस्माद्बहिर्दादानाद् विरमणम्?। ततः खलु सा महातिम-

‘तएणं से केसिकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तएणं से केसिकुमारसमणे) इसके बाद (केसिकुमारसमणे)  
केसिकुमार श्रमणने (चित्तस्स सारहिस्स) चित्र सारथि के भिये  
(तीसे महइमहालयाए) उस अति विशाल (परिसाए) परिषदा में (चाउ  
ज्जामं धम्मं परिकहेइ) चातुर्याम धर्म का (परिकहेइ) प्ररूपण किया—उपदेश  
दिया (तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओमुसावायाओ वेरमणं,  
सव्वाओ आदिन्नादाणाओ वेरमणं, सव्वाओ वहिद्धादाणाओ वेरमणं)  
वे चातुर्याम ये हैं—१ समस्त प्राणातिपात से विरक्त (निवृत्त) होना, २

‘तएणं से केसिकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थः—(तएणं से केसिकुमारसमणे) त्थार पछी केसिकुमार श्रमणे  
(चित्तस्स सारहिस्स) चित्र सारथि भाटे (तीसे महइमहालयाए) ते अति विशाल  
(परिसाए) परिषदां (चाउज्जामं धम्मं परिकहेइ) चातुर्याम धर्मनी (परिकहेइ)  
प्रप्रणु करी. ओटवे के उपदेश करी. (तं जहा सव्वाओ पाणाइवायाओ  
वेरमणं, सव्वाओ, मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ आदिन्नादाणाओ वेरमणं,  
सव्वाओ वहिद्धादाणाओ वेरमणं) ते चातुर्याम धर्मनी विशेष विगत आ प्रभाणे  
छ—(१) समस्त प्राणातिपातथी विरक्त (निवृत्त) थवुं. (२) समस्त मृषावादथी विर-

હાલયા પરિષત્ કેશિનઃ કુમારશ્રમણસ્યાન્તિકે ધર્મં શ્રુત્વા નિશમ્ય યસ્યા એવ દિશઃ પ્રાદુર્ભૂતા તામેવ દિશં પ્રતિગતા ॥ મૂ. ૧૧૧ ॥

ટીકા—‘તણં’ સે હત્યાદિ—તતઃ સ્વલ્લ સ્ કેશીકુમારશ્રમણઃ ચિત્રાય સારથયે=ચિત્રં સારથિમુદ્દિશ્ય તસ્યાં મહાતિમહાલયાયામ્=અતિવિશાલાયાં પરિષદિ ચાતુર્યામં ચતુર્ણામ્=ચતુઃસંખ્યકોનાં યામાનાં=યમા એવ યામાસ્તેપાં સમાહારશ્ચતુર્યામં, તદેવ ચાતુર્યામં, તદસ્તિ યસ્મિન્ સ ચાતુર્યામસ્તં ધર્મં પરિકથયતિ=વ્યાખ્યાતિ, તથા—સર્વસ્માત્ પ્રાણાતિપાતાદ્ વિરમણં=સકલપ્રાણિપ્રાણવિયોજનાતુકૂલવ્યાપારતો વિનિવૃત્તિઃ, સર્વસ્માદ્ મૃષાવાદાદ્ વિરમણમ્=સર્વવિધાસત્યભાષણાદ્ વિનિવૃત્તિઃ, તથા—સર્વસ્માત્

સમસ્ત મૃષાવાદ સે વિરક્ત હોના, ૩ સમસ્ત અદત્તાદાન સે વિરક્ત હોના ઓર સમસ્ત બહિરાદાન સે વિરક્ત હોના (તણં સા મહદ્મહાલિયા પરિષા કેસિસ્સ કુમારશ્રમણસ્સ અંતિણ ધમ્મં સોચ્છા નિસમ્મ હદ્ધતુદ્ધં જામેવ દિસિં પાઝબ્ભૂયા તામેવ દિસિં પડિગયા) આ પ્રમાણે કેશિકુમાર શ્રમણ સે ચાતુર્યામ ધર્મકા ઉપદેશ સુનકર ઓર હૃદયમેં ઉસે ધારણ કર વહ અતિવિશાલ પરિષદા હૃષ્ટ તુષ્ટ યાવત્ હૃદયવાલી હોતી હુઈ જહાં સે આઈ થી વહાં પર પીછી ચલી ગઈ.

ટીકાર્થ મૂલાર્થ કે હી અનુરૂપ હૈ. ચાતુર્યામ ધર્મકા ઉપદેશ ક્રિયા—જો આ પ્રમાણે કેશિકુમાર શ્રમણથી ચાતુર્યામ ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળીને અને હૃદયમાં તેને ધારણ કરીને તે અતિ વિશાળ પરિષદા હૃષ્ટતુષ્ટ યાવત્ હૃદયવાળી થઈને જ્યાંથી આવી હતી ત્યાં ફરી જતી રહી.

કત્ત થવું. (૩) સમસ્ત અદત્તાદાનથી વિરક્ત થવું અને સમસ્ત બહિરાદાનથી વિરક્ત થવું. (તણં સા મહદ્મહાલિયા પરિષા કેસિસ્સ કુમારશ્રમણસ્સ અંતિણ ધમ્મં સોચ્છા નિસમ્મ હદ્ધતુદ્ધં જામેવ દિસિં પાઝબ્ભૂયા તામેવ દિસિં પડિગયા) આ પ્રમાણે કેશિકુમાર શ્રમણથી ચાતુર્યામ ધર્મનો ઉપદેશ સાંભળીને અને હૃદયમાં તેને ધારણ કરીને તે અતિ વિશાળ પરિષદા હૃષ્ટતુષ્ટ યાવત્ હૃદયવાળી થઈને જ્યાંથી આવી હતી ત્યાં ફરી જતી રહી.

ટીકાર્થઃ—મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. ચાતુર્યામ ધર્મનો ઉપદેશ કર્યો એટલે કે ચાતુર્યામવાળા ધર્મનો ઉપદેશ કર્યો. સકળ પ્રાણીઓના પ્રાણોને વિચુકત કરનાર જે વ્યાપાર (કાર્ય) હોય છે તેનાથી રહિત થવું એટલે કે કોઈ પણ પ્રાણીને કોઈ પણ રીતે પ્રાણ વિચુકત ન કરવું તે પ્રાણાતિપાત વિરમણ છે. આ પ્રમાણે જ સમસ્ત પ્રકારના અસત્યાચરણથી દૂર રહેવું—અસત્યનો સર્વથા ત્યાગ કરવો. તે મૃષાવાદ વિરમણ છે.

अदत्तादानात्=सकलविधाश्रौर्थाद् विरमणं=विनिवृत्तिः, तथा-सर्वस्माद् वहि-  
रादानाद्=धर्मोपकरणातिरिक्तपरिग्रहोपादानाद् विरमणम् । मैथुनविरमणस्य  
परिग्रहे एवान्तर्भावः, नहि अपरिगृहीता स्त्री परिभुज्यतेऽनो मैथुन-विर-  
मणरूपं सहाव्रतं न पृथगुपात्तमिति । उपलक्षणाद् अगारधर्ममपि परिक-  
थयति । ततः खलु सा सहातिमहालया परिपत कोशिनः कुमारश्रमणस्य  
अन्तिके=समीपे धर्मं श्रुत्वा सामान्यतः, निशम्य=विशेषतो हृदयध्यायं यस्या  
एव दिशः प्रादुर्भूता, तामेव दिशं प्रतिगता ॥सू० १११॥

मूलम्--तएणं से चित्ते सारही केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए  
धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ट जाव-हियए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठित्ता केसिं-  
कुमारसमणं तिकरुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ वंदइ, नमंसइ,  
वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-सहामि णं भंते ! णिग्गथ पावयणां,

विरमण है. समस्तप्रकार के अदत्तादान से-वैयकर्म से दूर रहना उसका  
त्याग करना इसका नाम अदत्तादानविरमण है, तथा धर्मोपकरण से अतिरिक्त  
परिग्रह का त्याग करना इसका नाम वहिरादान विरमण है। मैथुन विर-  
मण को यहां स्वतंत्ररूप से व्रत नहीं माना गया है. क्यों कि उसका  
अन्तर्भाव परिग्रह में ही हो जाता है। क्यों कि जो स्त्री भोग के काम  
आती है वह अपरिगृहीत हुई नहीं आती है किन्तु परिगृहीत हुई ही आती  
है। उपलक्षण से उन्होंने आगारधर्म का भी कथन किया। इस तरह केशि-  
कुमार श्रमण के पास धर्म का उपदेश सामान्यरूप से सुनकर और उसे  
विशेषरूप से हृदयमें धारण करके वह अतिविशाल परिपदा जहां से आई थी  
वहीं पर पीछी चली गई ॥ १११ ॥

समस्त प्रकारना अदत्तादानथी-वैयकर्मथी हर रडेवुं-ते कर्मना त्याग करवो-ते अद-  
त्तादान विरमणु छे. तेसअ धर्मोपकरणतिरिक्त परिग्रहना त्याग ते वहिरादान विरमणु  
छे. मैथुन विरमणुना अही स्वतंत्रपणु व्रतइपे निर्देश करी नथी केमडे तेना परि-  
ग्रहमां न अन्तर्भाव करवामां आव्यो छे. केमडे न स्त्री लोग भाटे आवे छे ते  
अपरिगृहीत थअने नहि पणु परिगृहीतना रुपमां न आवे छे. उपलक्षणथी तेयो-  
श्रीओ अगार धर्मतु पणु कथन करुं छे. आ प्रमाणु सामान्यरूपथी केशिकुमार श्रमण  
पात्तथी धर्मोपदेश सांख्यीने अने तेने विशेषरूपमा हृदयमा धारण करीने ते अति  
विशाल परिपदा नयांथी आवी डती त्यां पाछी नती रही. ॥१११॥

रोयासि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं, अब्भुट्टेमि णं भंते । निग्गंथं  
पावयणं, एवमेयं भंते ! निग्गंथे पावयणे, तहमेयं भंते ! निग्गंथे  
पावयणे अविहमेयं निग्गंथे पावयणे, असंदिद्धमेयं भंते ! निग्गंथे  
पावयणं, इच्छियमेयं भंते ! निग्गंथे पावयणे, पडिच्छियमेयं भंते !  
निग्गंथे, पावयणे, इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! निग्गंथे पावयणे, जं  
णं तुब्भे वदहत्तिकड्डु वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी  
—जहा णं देवाणुप्पियाणं अंतिए बहवे उग्गा भोगा जाव इब्भा  
इब्भपुत्ता चिच्चा हिरण्णं चिच्चा सुवण्णं, एवं धणं धन्नं बलवाहणं  
कोसं कोट्टागारं पुरं अंतेउरं, चिच्चा विउलं धणकणगरयणमणि-  
मोत्तियसंखसिलप्पवालसंतसारसावएज्जं, विच्छड्डित्ता विगोवइत्ता  
दाणं दाइत्ता परिभाइत्ता मुंडा भवित्ता अगारोओ अणगारियं पव्व-  
यंति, णो खलु अहं ता संचाएमि चिच्चा हिरण्णं तं चेव जाव पव्व-  
इत्तए । अहं णं देवाणुप्पियाणं अंतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खा-  
वइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जित्तए । अहासुहं देवाणुप्पिया!  
मा पडिवंधं करेहि । तएणं मे चित्तं सारहा केसिकुमारसमणस्स  
अंतिए पंचाणुव्वइयं जाव गिहिधम्म उवसंपज्जित्ता णं विहरइ । तएणं  
मे चत्ते सारही केसिकुमारसमणं वदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता  
जेणेव चाउग्घंटं आसरहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए, चाउग्घंटं आसरहं  
दुहरइ, जामेव दिस्सि पाउब्भूए तामेव दिस्सि पडिगए ॥ सू० ११२ ॥

छाया—ततः खलु म चित्रः सारथिः केशिनः कुमारश्रमणस्य अन्तिके  
धर्मं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट यावद्—हृदयः उत्थया उत्तिष्ठति, उत्थाय केशिन

कुमारश्रमणं त्रिकृत्वा आदक्षिण-प्रदक्षिणं करोति, वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्—श्रद्धामि अलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, प्रत्येमि! खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, रोचयामि खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, अभ्युत्तिष्ठे खलु भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, एवमेतद् भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, तथैवैतद् भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, अत्रितथमेतद् भदन्त ? नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, असन्दिग्धमेतद् भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, इष्टमेतद्

‘तएणं से चित्ते सारही इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (से चित्ते सारही) वह चित्र सारथि (केसिस्स कुमारस्समणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म) केशीकुमारश्रमण के पास धर्म को सुनकर और उसे हृदय में अवधृतकर (हृद्वा जाव हियए) हर्षित हुआ संतुष्ट हुआ यावत् (उट्ठाए उट्ठेइ) अपने आप उठा—(उट्ठित्ता केसिं कुमारस्समणं तिकखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ) और उठकर उसने केशीकुमारश्रमण की तीन आदक्षिणप्रदक्षिणा की (वंदइ नमंसइ) वन्दना की नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वन्दना नमस्कार कर फिर वह इस प्रकार बोला—(सद्धामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं रोयामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते ! निग्गंथं पावयणं असंदिद्धमेयं भंते ! निग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! मैं निर्ग्रन्थप्रवचन की श्रद्धा करता हूँ। हे भदन्त ! मैं निर्ग्रन्थप्रवचन की प्रतीति करता हूँ, हे भदन्त ! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन को अपनी रुचि का

‘त एणं से चित्ते सारही’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—(त एणं) त्थार पछी (से चित्ते सारही) ते चित्र सारथि (केसिस्स कुमारस्समणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म) केशीकुमार श्रमणुनी पासैथी धर्मं सांलेणीने अने तेने हृदयमां धारणु करीने (हृद्वा जाव हियए) हर्षित थये। संतुष्ट थये यावत् (उट्ठाए उट्ठेइ) पोतानी भेजे उलो थये। (उट्ठित्ता केसिं कुमार-समणं तिकखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ) अने उलो थछेने तेणु केशीकुमार श्रमणुनी त्रणु वार आदक्षिण प्रदक्षिणा करी। (वंदइ नमंसइ) वंदना करी नमस्कार थ्यां। (वंदित्ता, नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना करीने ते आ प्रभाणु कडेवा लाग्ये—(सद्धामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं रोयामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं अब्भुट्ठेमि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं एवमेयं भंते ! निग्गंथं पावयणं असंदिद्धमेयं भंते ! निग्गंथं पावयणं) हे भदन्त ! हुं निग्रन्थ प्रवचनमां श्रद्धा राखुं छुं। हे भदन्त ! हुं निग्रन्थ प्रवचनमां प्रतीति राखुं छुं, हे भदन्त ! हुं निग्रन्थ प्रवचनने

મદન્ત ! નૈર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્, પ્રતીષ્ઠમેતદ્ મદન્ત ! નૈર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્ ઇષ્ટ-  
પ્રતીષ્ઠમેતદ્ મદન્ત ! નૈર્ગ્રન્થં પ્રવચનમ્ યત્ સ્વલુ યૂયં વદથેતિ કૃત્વા વન્દતે  
નમસ્યતિ, વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા એવમવાદીત-યથા સ્વલુ દેવાણુપ્રિયાણામ્  
અન્તિકો વહવ ઉગ્રા ભોગા યાવત્ ઇશ્યા ઇશ્યપુત્રાસ્ત્યક્ત્વા હિરણ્યં ત્યક્ત્વા સુવર્ણમ્  
એવં ધનં ધાન્યં બલં વાહનં કોશં કોઠાગારં પુરમ્ અન્તઃપુરં, ત્યક્ત્વા

વિષય વનાતા હું. હે મદન્ત ! મੈં હસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કો સ્વીકાર કરતા  
હું. હે મદન્ત ! આપ જૈસા હસ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં,  
વહ વૈસાહી હૈ. હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સત્ય હૈ. હે મદન્ત !  
યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સન્દેહ રહિત હૈ. (ઇચ્છિયમેયં મંતે ! નિર્ગંથે પાવયણે,  
પઢિચ્છિયમેયં મંતે નિર્ગંથે પાવયણે) હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇષ્ટ હૈ,—  
હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન પ્રતીષ્ટ હૈ. (ઇચ્છિયપઢિચ્છિયમેયં મંતે !  
નિર્ગંથે પાવયણે) હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇષ્ટપ્રતીષ્ટ દોનોરૂપ હૈ.  
(જં ણં તુભે વદહ, ત્તિ કદ્દુ વંદહ, નમંસહ) જૈસા કિ આપ કહતે હૈં' હસ  
પ્રકાર કહકર ડસને ડસકો વન્દના કી નમસ્કાર કિયા. (વંદિત્તા નમંસિત્તા  
એવં વયાસી) વન્દના નમસ્કાર કર ફિર ડસને ઈસા કહા (જહાણં દેવાણુ-  
પ્રિયાણં અંતિએ વહવે ઉગ્ગા, ભોગા જાવ ઇશ્યા ઇશ્યપુત્રા ચિચ્ચા હિરણ્યં,  
ચિચ્ચા સુવર્ણં, એવં ધણં ધન્નં બલં વાહણં કોસં કોઠાગારં પુરં અંતે  
ડરં) આપ દેવાણુપ્રિય કે પાસ જિસ પ્રકાર અનેક ડગ્ર ભોગ યાવત્ ઇશ્ય

પોતાની રુચિને વિષય બના છું. હે ભદ્રંત ! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચનને સ્વીકાર છું.  
હે ભદ્રંત ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનું આપ શ્રી જે પ્રમાણે પ્રતિપાદન કરી રહ્યા છો.  
અક્ષરશઃ યથાવત્ છે. હે ભદ્રંત ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સત્ય છે, હે ભદ્રંત ! આ  
નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સંદેહ રહિત છે. (ઇચ્છિયમેયં મંતે ! નિર્ગંથે પાવયણે, પઢિ-  
ચ્છિયમેયં મંતે નિર્ગંથે પાવયણે) હે ભદ્રંત ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇષ્ટ છે, હે  
ભદ્રંત ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પ્રતીષ્ટ છે. (ઇચ્છિયપઢિચ્છિયમેયં મંતે ! નિર્ગંથે  
પાવયણે) હે ભદ્રંત ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન ઇષ્ટ અને પ્રતીષ્ટ બન્ને છે. (જં ણં  
તુભે વદહ, ત્તિકદ્દુ વંદહ નમંસહ) જે પ્રમાણે આપશ્રી કહી રહ્યા છો તે પ્રમાણે  
જ છે. આમ કહીને તેણે વંદના તેમજ નમસ્કાર કર્યાં. (વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં-  
વયાસી) વંદના તેમજ નમસ્કાર કરીને તેણે તેઓશ્રીને આ પ્રમાણે કહ્યું—(જહાણં  
દેવાણુપ્રિયાણં અંતિએ વહવે ઉગ્ગા, ભોગા જાવ ઇશ્યા ઇશ્યપુત્રા ચિચ્ચા  
હિરણ્યં. ચિચ્ચા સુવર્ણં. એવં ધણં ધન્નં બલં વાહણં કોસં કોઠાગારં પુરં  
અંતેડરં) આપ દેવાણુપ્રિયની પાસે જેમ જેમ, ભોગ યાવત્ ઇશ્ય અને ઇશ્યપુત્રો



विपुलं धनकनकरत्नमणिमौक्तिकशङ्खशिलाप्रवालसत्सारस्वापतेयं विच्छर्धं  
विगोप्य दानं दत्त्वा, परिभाज्य मुण्डा भूत्वा अगारात् अनगारितां प्र-  
जन्ति; नो खलु अहं तावत् शक्नोमि त्यक्त्वा हिरण्यं तदेव यावत् प्रव्रजितुम्। अहं  
खलु देवानुप्रियाणां अन्तिके पञ्चाणुव्रतिकं सप्तशिक्षाव्रतिकं द्वादशविधं  
गृहिधर्मं प्रतिपत्तुम्। यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु। ततः

और इश्य पुत्र हिरण्य को छोड़कर, सुवर्ण को छोड़कर एवं धन धान्य,  
वज्र, वाहन, कोश, कोष्ठागार, पुर और अन्तःपुर को (चिच्चा) छोड़कर  
(विज्जलं धनकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलप्पवालसत्सारसावएज्जं, विच्छ-  
डिज्जा, विगोवइत्ता, दाणं दाइत्ता) तथा विपुल, धन, कनक, रत्न मौक्तिक,  
शङ्ख शिलाप्रवाल एवं सत्सारस्वापतेय को छोड़कर तथा उन सबको  
विशाल प्रमाण में दीन दरिद्र आदिकों के लिये विनरित कर (परिभाइत्ता)  
पुत्रादिकों में विभक्त (विभाग) कर (मुण्डा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयंति)  
वाद में मुंडित होकर के अगार अवस्था को धारण करते हैं। (णो खलु  
अहं ता संचाएमि, चिच्चा हिरण्यं तं चेव जाव पव्वइत्तए) वैसा मैं  
हिरण्य आदि को छोड़कर दीक्षा धारण करने के लिये समर्थ नहीं हूँ,  
(अहं णं देवानुप्पियाणं अतिए पंचाणुव्वइयं, सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं  
गिहिधम्मं पडिवज्जितए) मैं तो आप देवानुप्रिय के पास पांच अणुव्रत-  
वाले एवं सात शिक्षा व्रतवाले इस तरह १२ प्रकार के गृहस्थ धर्म को  
धारण कर सकता हूँ। (अहासुहं देवानुप्पिया ! मा पडिवंधं करेहि) आप

हिरण्येनो त्याग करीने अने धन, धान्य, अण, वाहन, कोश, कोष्ठागार, पुर अने  
अंतःपुर-खवास (चिच्चा) ने त्याग करीने (विज्जलधनकणगरयणमणिमोत्तिय-  
संखसिलप्पवालसत्सारसावएज्जं, विच्छडिज्जा, विगोवइत्ता, दाणं दाइत्ता  
तेमं विपुल धन, कनक, रत्न, मौक्तिक शङ्ख शिला प्रवाल अने सत्सार स्वापतेय  
ने त्याग करीने तेमं णं मुण्डण प्रमाणं दीनदरिद्र वगेरे दोडोने ओपीने  
(परिभाइत्ता) पुत्रादिकों में बँटोयीने (मुण्डा भवित्ता अगाराओ अणगारियं  
पव्वयंति) त्थार आह मुंडित थोने अगार अवस्थाओं की अनगार अवस्थाने धारण  
करे छे। (णो खलु अहं ता संचाएमि, चिच्चा हिरण्यं तं चेव जाव पव्वइत्तए)  
तेमं हुं हिरण्य वगेरेने त्याग करीने दीक्षा धारण करवाओं असमर्थ छुं। (अहं णं  
देवानुप्पियाणं अतिए पंचाणुव्वइयं सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहि-  
धम्मं पडिवज्जितए) आप श्री पोसेथी हुं तो श्रुत पांच अनुव्रतवाणा अने  
अने सात शिक्षाव्रतवाणा आभ १२ प्रकारं गृहस्थ धर्मने स्वीकारी शक्नुं छुं।  
(अहासुहं देवानुप्पिया ! मा पडिवंधं करेहि) आप देवानुप्रियने ७-कार्यं भां

खलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणस्य अन्तिके पञ्चाणुव्रतिकं यावद्  
गृहिधर्मम् उपसम्पद्य खलु विहरति । ततः खलु स चित्रः सारथिः केशि-  
कुमारश्रमणं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा यत्रैव चातुर्घण्टः अश्व-  
रथस्तत्रैव प्राधारयद् गमनाय, चातुर्घण्टम् अश्वरथं दूरोहति, यस्या एव  
दिशः प्रादुर्भूतस्तामेव दिशं प्रतिगतः ॥ सू० ११२ ॥

टीका—‘त एणं से’ इत्यादि—

ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिनः कुमारश्रमणस्य अन्तिके=

देवानुप्रिय को जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो—परन्तु विलम्ब मत  
करो. (तएणं से चित्ते सारही केशिकुमारसमणस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं  
जाव गिहिधम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ) इसके बाद उस चित्र सारथि  
ने केशिकुमार श्रमण के पास पांच अणुव्रतों वाले एवं सात शिक्षाव्रतों  
वाले गृहस्थ धर्मको अंगीकार कर लिया (तएणं से चित्ते सारही केशि-  
कुमार समणं वंदइ, नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटे आसरहे  
तेणेव पहारेत्थं गमणाए, चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ) इसके बाद उस  
चित्र सारथिने केशिकुमार श्रमण को वन्दना की नमस्कार किया, वंदना  
नमस्कार कर उसने जहां चातुर्घट अश्वरथ रखा था उस ओर जाने का  
निश्चय किया, वहां जाकर वह उस पर चढ़ गया. (जामेव दिस्सि पाउ-  
व्वभूए, तामेव दिस्सि पडिगए) और जिस दिशा से होकर आया था  
उसी दिशा तरफ चला गया।

टीकार्थ—इसके बाद चित्र सारथी केशीकुमार श्रमण के पास

सुगुण थाय ते करो. पणु विदंण न करो. (त एणं से चित्ते सारही केशिकुमार-  
समणस्स अंतिए पंचाणुव्वइयं जाव गिहिधम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ)  
त्यार पछी ते चित्र सारथिणे केशिकुमार श्रमण पांसैथी पांच आणुव्रतोवाणा अने  
सात शिक्षाव्रतोवाणा गृहस्थधर्मे स्वीकारी लीधी. (त एणं से चित्ते सारही  
केशिकुमारसमणं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटे आस-  
रहे तेणेव पहारेत्थं गमणाए, चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ) त्यार भाद ते चित्र  
सारथीणे केशिकुमार श्रमणने वंदना करी, नमस्कार कर्था, वंदना तेमज्ज नमस्कार करीने  
तेणे न्यां आतुर्घंटे अश्वरथ हुतो ते तरक्क जवानो निश्चय कर्थो. त्यां जधने ते रथ  
पर सवार थध गथो. (जामेव दिस्सि पाउव्वभूए, तामेव दिस्सि पडिगए) अने  
जे दिशा तरक्क थधने ते आव्यो हुतो ते ज दिशा तरक्क पाछो जतो रह्यो.

टीकार्थ—त्यार भाद चित्रसारथि केशिकुमार श्रमणनी पासे धर्म सांलणीने



ममीपे धर्मं श्रुत्वा सामान्यतः, निगम्य=विशेषतो हृदयवधार्य हृदयावदहृदयः= हृष्टतृप्तिचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यितः हर्षवशाविमर्षदभृदयः उत्थया=उत्थानशक्त्या उन्निष्ठति. उत्थाय केशिनं कुमारश्रमणं त्रिकृत्वा= चारत्रयम् आदक्षिणप्रदक्षिणं करोति, वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यन्वा एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्=उक्तवान्-हे भदन्त ! खलु=निश्चयेन श्रद्धासि=इदमेवमेवास्तीति श्रद्धानविषयीकरोमि नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, हे भदन्त ! प्रत्येमि=प्रतीतिविषयीकरोमि खलु नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, हे भदन्त ! रोचयामि=रुचिविषयीकरोमि खलु नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, हे भदन्त ! अभ्युत्तिष्ठे=अभ्युपगच्छामि खलु नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, हे भदन्त ! यथा खलु भवद्भिः प्रतिपादितम्, एतद् नैर्ग्रन्थं प्रवचनम्, एवमेव, हे भदन्त ! यथा भवन्तः प्रतिपादयन्ति, एतद् नैर्ग्रन्थं प्रवचनं तथैव=तद्रूपमेवास्ति, हे भदन्त ! एतद् नैर्ग्रन्थं प्रवचनम् अवितथं=सत्यम् अत एव हे भदन्त ! एतद् नैर्ग्रन्थं प्रव-

धर्म सुनकर और उसे विशेषरूप से अपने हृदय में धारण कर हृष्ट तृप्त और चित्त में आनन्द संपन्न हुआ उसके मनमें गाढ़ प्रीति जग गई, वह परम सौमनस्यित हो गया, हृदय अपार हर्ष के कारण उसका हर्षित होने लगा. वह उसी समय खड़ा हुआ, और केशिकुमार श्रमण को उसने तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिण पूर्वक वन्दना की नमस्कार किया. वन्दना नमस्कार कर फिर उसने ऐसा कहा-हे भदन्त मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचनको यह ऐसा ही है, इस रूपसे अपनी श्रद्धा का विषय बनाता हूं, हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थप्रवचन को अपनी प्रतीति में लाता हूं. हे भदन्त ! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचनको अपनी रुचि में आकृष्ट करता हूं और मैं हे भदन्त ! इसे स्वीकार भी करता हूं । हे भदन्त । जैसा आपने कहा है यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ऐसा ही है । यह निर्ग्रन्थ प्रवचन अविनय-सर्वथा सत्यरूप है,

अने तेने विशेषइथी હૃદયમાં અવધારિત કરીને હૃષ્ટતૃપ્ત થયો અને તેનું ચિત્ત અતીવ આનંદિત થયું. તેના મનમાં તીવ્ર પ્રીતિ ઉત્પન્ન થઈ. તે પરમસૌમનસ્યિત થઈ ગયો. તેનું હૃદય અપાર હર્ષથી તરબોળ થઈ ગયું. તે તરતજ ઉભો થયો અને કેશિકુમાર શ્રમણની તેણે આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વન્દના કરી નમસ્કાર કર્યા વન્દના તેમજ નમસ્કાર કરીને પછી તેણે આ પ્રમાણે કહ્યું-“હે ભદંત ! હું આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન પર એ એવું જ છું” આ રૂપમાં શ્રદ્ધાશીલ થાઉં છું. હે ભદંત ! આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન પર હું સંપૂર્ણપણે પ્રતીતિ ધરાઉં છું. હે ભદંત ! આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનને હું પોતાની રુચિ તરફ સહજ લાવે આકૃષ્ટ કરું છું અને હે ભદંત ! આને હું સ્વીકારું પણ છું. હે ભદંત ! આપશ્રીએ જે પ્રમાણે કહ્યું છે તે પ્રમાણે જ આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન છે. આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન અવિનય-સર્વથા-સત્યરૂપ છે, એથી જ એ

चनम्, असन्दिग्धम् = न्देहरहितं खलु भदन्त ! एतद् नैर्ग्रन्थं प्रदचनम्, तथा-हे भदन्त ! एतत् खलु इष्टं प्रतीष्टम् अभिलषितम् प्रतीष्टम् = आभिमुख्येन सम्यक् प्रतिपन्नमेतत्, इष्टप्रतीष्टम् = सर्वथाऽतिशयेनाभिलषितं हे भदन्त ! नैर्ग्रन्थं प्रदचनम्, यत् खलु यूयंवदथ-इति कृत्वा = इत्युत्तवां वन्दते नमस्येति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवम् = वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत = उक्तवान्, हे भदन्त ! देवानुप्रियाणाम् = भवताम् अन्तिके = समीपे यथा = येन, प्रकारेण खलु बहव उग्रा भोगा यावत् इभ्या इभ्यपुत्रा हिरण्यं = रजतम् त्यक्त्वा, एवम् = असुनैवप्रकारेण धनं = रूप्यादि, धान्यं = शाल्यादि, चलं = सैन्यं, वाहनम् = अश्वदिरूपम्, कोशं = प्रसिद्धम्, कोष्ठागारं = धान्यगृहं, पुरं = नगरम्, अन्तःपुरं = स्त्रीनिवासभूतस्थानं च त्यक्त्वा, तथा-विपुलं = प्रचुरं धनकनकरत्नमणि मौक्तिकशङ्खशिलाप्रवालसत्सारस्वापतेयं, -तत्र धनं = रूप्यादि कनकं = घटितमघ-

इसीलिये, यह सन्देह रहित है। इष्ट है और प्रतीष्ट है, अर्थात् इसे भव्यजीवों ने अपने जीवनमें उतारा है। अतः यह सर्वथा अतिशयरूप से अभिलषित सिद्ध हुआ है ऐसा कह कर उस चित्र सारथिने केशिकुमार श्रमण की भक्ति के चशवर्ती होकर पुनः वन्दना की नमस्कार किया, और फिर उसने उनसे ऐसा कहा-हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के पास जिस प्रकार से अनेक उग्रोंने उग्रपुत्रोंने भोगोंने यावत् इभ्योंने एव इभ्यपुत्रोंने हिरण्य-रजत को-छोडकर, सुवर्ण को छोडकर, इसी प्रकार, से धन-रूप्यादिकों को, धान्य-शाल्यादिकों को, चल-सैन्य को वाहन-अश्वदिकों को, कोश को, कोष्ठागार-धान्यगृह को, पुर नगर को, अन्तःपुर स्त्रीनिवास भूतस्थानको, छोडकर, तथा विपुल प्रचुर धन-रूप्यादिकों को कनक घटित अघटित (घडा हुआ और चिना घडा)

संदेह रहित है। इष्ट है और प्रतीष्ट है, अर्थात् इसे भव्य जीवों ने अपने जीवनमें उतारा है। अतः यह सर्वथा अतिशयरूप से अभिलषित सिद्ध हुआ है। ऐसा कह कर उस चित्र सारथि ने केशिकुमार श्रमण की भक्ति के चशवर्ती होकर पुनः वन्दना की नमस्कार किया, और फिर उसने उनसे ऐसा कहा-हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के पास जिस प्रकार से अनेक उग्रोंने उग्रपुत्रोंने भोगोंने यावत् इभ्योंने एव इभ्यपुत्रोंने हिरण्य-रजत को-छोडकर, सुवर्ण को छोडकर, इसी प्रकार, से धन-रूप्यादिकों को, धान्य-शाल्यादिकों को, चल-सैन्य को वाहन-अश्वदिकों को, कोश को, कोष्ठागार-धान्यगृह को, पुर नगर को, अन्तःपुर स्त्रीनिवास भूतस्थानको, छोडकर, तथा विपुल प्रचुर धन-रूप्यादिकों को कनक-घटित अघटित (घड़ा हुआ और चिना घड़ा)

टितं चेति द्विविधं सुवर्णम्, रत्नं कर्केतनादिकम्, मणिः=पद्मरागादिरूपः, मौक्तिकं=मुक्ताफलं, शङ्खः=रत्नविशेषः, शिलाप्रवालः=विद्रुमः, सत्सार-  
स्वापतेयं सद्=पितृपितामहादिपरम्परारूपेण विद्यमानं सारं=प्रधानं यत्, स्वा-  
पतेयं=मणिरत्नादिकं द्रव्यं तत् एतेषां समाहारस्तत्, धनधान्यादि सत्सार-  
स्वापतेयान्तं सर्वं विच्छर्द्य=भावतः परित्यज्य, विगोप्य=तानि सर्वाणि प्रकटी-  
कृत्य दानं दत्त्वा=दीनदरिद्रादिभ्यो वितीर्य, परिभाज्य=पुत्रादिषु विभज्य,  
मुण्डां श्रुत्वा अगारात् अङ्गारितां प्रव्रजन्ति=दीक्षां गृह्णन्ति, नो खलु भदन्तः।  
अहं यावत् शक्नोमि=समर्थोऽस्मि त्यक्त्वा हिरण्यं, तदेव यावत्=सुवर्णा-  
दिकं सर्वं त्यक्त्वा-इत्यर्थः, प्रव्रजितुम्=दीक्षां ग्रहीतुम्। अहं खलु देवा-  
नुपियाणाम् अन्तिके=समीपे पञ्चाणुव्रतिकं पञ्च=पञ्चसंख्यकानि अनुव्रतानि=  
स्थूलात् प्राणातिपाताद् विरमणम् १, स्थूलाद् मृषावादाद् विरमणम् २, स्थूलात्

दोनों प्रकार के सुवर्ण को, कर्केतनादिक रत्नको, पद्मरागादिकरूप मणियों को,  
मुक्ताफलों को, रत्नविशेषरूप शंखको, शिलाप्रवालविद्रुम को, सत्-पिता पिता-  
मह आदिकों की परम्परारूप से विद्यमान सारप्रधान मणिरत्नादिकरूप स्वाप-  
तेय को, भावतः छोड़ करके, तथा प्रत्यक्षरूप में इन सबको दीन दरि-  
द्रादिकों को दान देकर, एवं पुत्रादिकों में इन्हें विभक्त करके अर्थात् पुत्रा-  
दिकों को धन आदिका भाग देकर मुंडित होकर अगारावस्था से परे हो  
दीक्षा धारण करते हैं, मैं इस प्रकार की परिस्थिति से युक्त  
हो कर-अर्थात् सुवर्णादिक सब का परित्याग कर भागवती दीक्षा धारण  
करने में अपने आपको शक्ति संपन्न नहीं मान रहा हूँ-असमर्थमान रहा  
हूँ, अतः आप देवानुपिय के पास मैं श्रावक व्रतों को धारण करना चाहता  
हूँ-क्यों ऐसी ही इस समय मुझ में शक्ति है, अर्थात्-१स्थूल प्राणातिपात

रत्नने, पद्मराग वगेरे रूप मणियोने, मुक्ताश्लोने रत्न विशेष शङ्खने, शिलाप्रवाल-  
विद्रुमने सत्-पिता पितामह वगेरेनी परम्पराशी विद्यमान सार प्रधान-मणिरत्न  
वगेरे रूप स्वापतेयने, लावातः (अन्तरनी छन्दशी न) त्यज्जने तेभन प्रत्यक्षरूपमां  
दीन दरिद्र वगेरेने दानमां आपीने अने पुत्रादिकेमां विलाजित करीने ओटवे के  
पुत्रादिकेने धन वगेरेना लाग आपीने मुंडित थधने-अगारावस्थाथी पर ओवी लाग-  
वती दीक्षा धारण करे छे. हुं पोतानी जतने आवी परिस्थितिथी युक्त थधने ओटवे  
के स्वार्थ वगेरे जधी वस्तुओनो त्याग करीने लागवती दीक्षा धारण करवामां हुं  
असमर्थता अनुलयी रह्यो छुं ओथी आप देवानुपिय पांसेथी हुं श्रावक व्रतोने धारण  
करवा छुं छुं छुं. उभया भाशमां आटली न शक्ति छे, ओटवे के जेमां (१) स्थूल

अदत्तादानाद् विरमणम् ३, स्वदारसन्तोषः ४, ईच्छापरिमाणः ५, इति पञ्चा-  
णुवनानि तानि सन्ति यस्मिंस्तम्, तथा-सप्तशिक्षाव्रतिकं-स-  
प्तशिक्षाव्रतानि यस्मिन् दिग्व्रतम्, १ उपभोगपरिभोगपरिमाणम् २, अनर्थदण्डविर-  
मणम् ३, सामायिकम् ४, देशवकाशिकम् ५, पौषधोपवासः ६,  
अतिथिसंविभागः, ७ इति सप्तशिक्षाव्रतानि तानि सन्ति यस्मिंस्तम्,  
इत्येवं द्वादशविधं गृहिधर्मं प्रतिपत्तुं=स्वीकर्तुं शक्नोमि । इत्थं  
चित्रसारथेर्वचनं श्रुत्वा केशिकुमारश्रमणः प्राह-हे देवानुप्रिय !  
यथा ते सुखं भवेत्तथा कुरु, अत्र अवश्यकर्तव्ये कार्ये प्रतिबन्धं=विलम्बं  
मा कुरु-इति ! ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणस्य अन्तिके  
पञ्चाणुव्रतिकं यावद् गृहिधर्मम् उपसम्पद्य=स्वीकृत्य विहरति । ततः खलु

से विरमण, २ स्थूलभुषावादाद से विरमण, ३ स्थूलअदत्तादान से विरमण,  
४ स्वदारसन्तोष, और ५ ईच्छापरिमाण ये पांच अणुव्रत हैं जिसमें ऐसे तथा  
१ दिग्व्रत, २ उपभोगपरिभोगपरिमाण, ३ अनर्थदण्डविरमण, ४ सामायिक, ५ देश-  
शिक, ६ पौषधोपवास, ७ अतिथि संविभाग, एवं ये सात शिक्षाव्रत हैं जिसमें  
ऐसे गृहिधर्म को स्वीकार करने की मुझ में शक्ति है इसलिये इसे ही मैं  
धारण करना चाहता हूँ-इसका विशेष वर्णन औपपातिक-सूत्र में आनन्द  
श्रावक के प्रकरण में देखना चाहिये । इस प्रकार चित्र सारथि के वचन-  
कथन को सुनकर के केशिश्रमणने उससे कहा-हे देवानुप्रिय ! जैसे तुम्हें  
सुख हो-वैसा करो परन्तु इस अवश्यकर्तव्य कार्य में ढील मत करो इस  
प्रकार केशिकुमारश्रमण का हितविधायक वचन सुनकर चित्र सारथिने  
उनके पास पांच अणुव्रतोंवाले एवं सात शिक्षा व्रतों वाले गृहिधर्म को स्वीकार

प्राज्ञातपातथी विरमण, (२) स्थूल भुषावादथी विरमण (३) स्थूल अदत्तादानथी विरमण  
(४) ईच्छा परारमाण आ पांचे अणुव्रतो तेमन् (५) दिग्व्रत, (६) उपभोग परि-  
भोगपरिमाण, (७) सामायिक (८) देशवकाशिक (९) पौषधोपवास, (१०) अतिथि-  
संविभाग अने (११) अनर्थ दण्ड विरमण आ सात शिक्षाव्रतो छि ओवा गृहिधर्मने  
स्वीकारवा भाटे हुं तैयार छुं. आहुं विशेष वर्णन औपपातिक सूत्रना आनन्द  
श्रावक प्रकरणमां करवामां आण्युं छि. आ प्रमाणे चित्रसारथीहुं कथन सांख्यीने  
केशिकुमार श्रमणे तेने कह्युं-‘हे देवानुप्रिय ! तमने जेमां सुख थाय तेम-करो. पणु  
आ आवश्यक-कर्तव्यमां हवे वार करो नहि.’ आ प्रमाणे केशिकुमार श्रमणहुं हित  
विधायक वचन सांख्यीने चित्र सारथिणे तेओश्री पासैथी पांच अणुव्रतोवाणा तेमन्  
सात शिक्षा व्रतवाणा गृहिधर्मने स्वीकारी लीधे. त्यागनाद चित्रसारथिणे ते केशिकुमार

स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा  
यत्रैव चातुर्घण्टः अश्वरथं स्तैव प्राधारयद्=निश्चयमकरोद् गमनाय=गन्तुमिति ।  
च गत्वा चातुर्घण्टम् अश्वरथं दूरोहति, दूरुह्य यस्यादिशः प्रादुर्भूतः, तामेव  
दिशं प्रतिगत इति ॥ सू० ११२ ॥

मूलम्--तएणं से चित्ते सारही समणोवासए जाए अहिगय-  
जीवाजीवे उवलद्धपुण्णपावे आसवसंवरनिज्जरकिरियाहिं गणबंध  
मोक्खकुसले असहिजे देवासुरणागजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुल  
गधव्वमहोरगाईहिं देवगहेहिं निग्गंथाओ पावयणाओ जणइक्रमणि  
जे, निग्गंथे पावयणे णिस्संकिण्णि क्खिण्णि विवित्तिगिच्छे लद्धं  
गहियं पुच्छियं अहिगयं विणिच्छियं अट्ठिमजपेमाणुरागरत्ते  
'अयमाउसो ! णिग्गंथे पावयणे अट्ठे, अयं परमट्ठे, सेसे अणट्ठे'  
ऊंसियफलिहे अवंगुयदुवारे चियतंतेउरप्पवेसे चाउदसट्ठमुद्धट्ठपुण्ण-  
मासिणासु पडिपुण्णं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समणे णिग्गंथे फासु-  
एसणिजेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पीठफलगसेज्जासंथारेणं वत्थ-  
पडिग्गहकवलपायपुच्छेणं ओसहभेसजेणं पडिलाभेमाणे, बहुहिं-  
सीलव्वयगुणवेरमणपोसहोववासेहिय अप्पाणं भावेमाणे जाइं  
तत्थं रायकज्जाणि य जाव राजववहाराणि य ताइं जियस्सत्तेणा  
रण्णा सद्धिस्सयमेव पच्चवेक्खमाणे पच्चवेक्खमाणे त्रिहरइ ॥ सू० ११३ ॥

कर लिया, इसके बाद चित्रसारथिने उन केशिकुमारश्रमण को वन्दना की-  
नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर वह जहाँ चातुर्घट अश्वरथ  
रखा हुआ था वहाँ पर आया वहाँ आकर वह उसपर बैठ गया और इस  
प्रकार यह जहाँ से आया था वहीं से होकर वापिस चला गया ॥ सू. ११२ ॥

श्रमणनी वंदना करी. नमस्कार कर्था. वन्दना नमस्कार करीने पछी ते जयां चातुर्घट  
अश्वरथ हुतो त्यां गये. त्यां पछींजीने ते तेमां ठेसी गये अने आ प्रमाणे ते  
जयांथी आव्यो हुतो त्यां ज पाये जतो रह्यो. ॥ सू० ११२ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः श्रमणोपासको जातः अभिगतः जीवाजीव उल्लङ्घपुण्यपाप आस्रवसंवरनिर्जराक्रियाऽधिकरणबन्धमोक्षकुशलः असाहाय्यो देवासुरनागयक्षराक्षसकिन्नरकिंपुरसगरुडगन्धर्वमहोरगादिभिः देवगणैः निर्ग्रन्थात् प्रवचनात् अनतिक्रमणीयः, निर्ग्रन्थे प्रवचने निशङ्कितो निष्काङ्क्षितो निर्विचिकित्सो लब्धार्थो गृहीतार्थः पृष्टार्थः अधि-

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तएणं से चित्ते सारही समणोवासए जाए) अथ वह चित्र-सारथि श्रमणोपासक हो गया। (अहिगय जीवाजीवे, उल्लङ्घपुण्यपावे, आस्रवसंवरनिज्जरकिरियाहिगरणबंधमोक्षकुसले) जीव और अजीव तत्त्व के वह ज्ञाता बन गये, पुण्य एवं पाप के स्वरूप को जानने लगे, आस्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बंध और मोक्ष इनमें कुशल हो गये। अर्थात् इनके स्वरूप का उसे बोध हो गया। (असहिज्जे) कुतीर्थियों के कुतर्क के खण्डन में पर की सहायता की अपेक्षा वाला नहीं रहा। (देवासुरनागजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुडगन्धर्वमहोरगादिहिं देवगहेहिं निग्गथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे, निग्गथे पावयणे निस्संकिए) देवों से असुरों से नागों से, यक्षों से राक्षसों से, किंपुरुषों से, गरुडों से, गन्धर्वों से, महोरगों से—इन सब देवगणों से—वह निर्ग्रन्थ प्रवचन की श्रद्धा आदि से, अनतिक्रमणीय हो गया अर्थात् ये सब देवगण भी उसे निर्ग्रन्थप्रवचन से थोड़ा सा भी विचलित करने के लिये समर्थ नहीं हो सके। वह (निग्गथे पाव-

‘तए णं से चित्ते सारही’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तए णं से चित्ते सारही समणोवासए जाए) इसे चित्र-सारथि श्रमणोपासक थप गयो हुतो। (अहिगयजीवाजीवे, उल्लङ्घपुण्यपावे, आस्रवसंवरनिज्जरकिरियाहिगरणबंधमोक्षकुसले) एव अने अए। तत्त्वना ते ज्ञाता थप गयो। पुण्य अने पापना स्वरूपने ते ज्ञाणुवा ला यो, राक्षव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकारण, बंध अने मोक्षमां ते कुशल थप गयो। ओट्ठे के आ अधाना स्वरूपतुं ज्ञान तेने थप गथुं (असहिज्जे) कुतीर्थिडेना कुतर्कना षंडनमां तेने जीननी मदनी अपेक्षा न रही। (देवासुरनागजक्खरक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुडगन्धर्वमहोरगादिहिं देवगहेहिं निग्गथाओ पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे, निग्गथे पावयणे निस्संकिए) देवाथी, असुरेथी, नागेथी, यक्षेथी राक्षसेथी किन्नरेथी किंपुरेथी गरुडेथी गन्धर्वेथी महोरगेथी—आ अधा देवगणेथी ते निर्ग्रन्थ प्रवचन पर अतीव श्रद्धाने लीये अनतिमणीय थप गयो। ओट्ठे के आ अधा देवगणे पण तेने निर्ग्रन्थ प्रवचन परथी जराओ विचलित करी



गनार्थो विनिश्चितार्थः अस्थिमज्जाप्रेमानुरागरक्तः—‘इदम् आयुष्मन् ! निर्ग्रन्थं प्रवचनम् अर्थः, अयं परमार्थः, शेषम् अनर्थः’ उच्छ्रित-स्फाटिकः अपावृत्तद्वारः प्रीतिकरान्तःपुरगृहप्रवेशः चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु मतिपूर्णं

यणे निस्संक्रिए) ऐसा निर्ग्रन्थप्रवचन में निःशंकितगुण से युक्त हो गया (निकं खिए) अन्यमत की कांक्षा उसके चित्त में थोड़ी सी भी नहीं रही-ऐसा निष्कांक्षितगुण वाला वह हो गया. (निर्विविचिच्छे, लद्धद्वे, गहियद्वे, पुच्छियद्वे, अहियद्वे, विणिच्छियद्वे, अट्टिमिजपेमाणुरागरत्ते) फलके प्रति संदेह उसका जाता रहा ऐसा वह निर्विचिकित्स गुण-संपन्न हो गया. इसी कारण उसने गुर्वादिकों से यथार्थ निर्ग्रन्थप्रवचन का अर्थ प्राप्त कर लिया, और इसी कारण वह पराभिप्राय के ग्रहण से अवधारित (निश्चित) अर्थतत्त्ववाला बन गया. पृष्ठार्थ हो गया. निर्णीतार्थ हो गया, अधिगतार्थ हो गया, विनिश्चितार्थ हो गया, तथा उसकी अस्थि और मज्जा ये दोनों निर्ग्रन्थ प्रवचनविषयक प्रेमरूपी रंजन द्रव्य से खूब रंग गये. अर्थात् रंग रंग में उसके निर्ग्रन्थप्रवचन का अनुराग भर गया. (अयमाउसो ! निगंथे पावयणे अट्टे अयं परमद्वे, सेसं अणद्वे, ऊसियफलिहे, अवंगुयदुवारे, विपत्तंतेउरधरप्पवेसे) हे आयुष्मन् ! यह निर्ग्रन्थप्रवचन ही वास्तविक अर्थ से युक्त है क्योंकि यह मोक्ष का हेतु है. यही परमार्थ है क्योंकि जीवों का

शक्या नहि. ते (निगंथे पावयणे निस्संक्रिए) आ प्रभाणु निग्रंथ प्रवचनमां निःशंकितं शुणुयुक्तं थं गये. (निकं खिए) तेना मनमां णीण भत माटे लगीरे छच्छा शेष न रही. आ प्रभाणु ते निष्कांक्षितं शुणुयुक्तं थं गये. ( निर्विविचिच्छे लद्धद्वे, गहियद्वे, पुच्छियद्वे, अहियद्वे, विणिच्छियद्वे, अट्टिमिजपेमाणुरागरत्ते) क्षण प्रत्ये तेना मनमां संदेह रह्यो नहि, आ प्रभाणु ते निर्विचिकित्सं शुणु संपन्नं थं गये. ओथी न तेणु शुद्ध वणेरे पासिथी यथार्थं निग्रंथ प्रवचननो अर्थं भाणी लीधो हतो. ओथी न ते पराभिप्रायना ग्रहणुथी अवधारित अर्थं तत्त्ववाणो थं गये, पृष्ठार्थं थं गये निर्णीतार्थं थं गये. अधिगतार्थं थं गये, विनिश्चितार्थं थं गये अने तेना अस्थि अने मज्जा गन्ने निग्रंथ प्रवचन विषयक प्रेमरूपी रंजन द्रव्यथी भूणन रंजित थं गयां. ओटवे हे तेना शरीरना आणुओ आणुमां निग्रंथ प्रवचन प्रत्येनी प्रीति व्याप्त थं गध. (अयमाउसो ! निगंथे पावयणे अट्टे अयं परमद्वे, सेसं अणद्वे, ऊसियफलिहे, अवंगुयदुवारे, विपत्तंतेउरधरप्पवेसे ) हे आयुष्मन् ! आ निग्रंथ प्रवचन न वास्तविक अर्थ युक्त छे केमके ओ मोक्ष माटे हेतुइय छेवाय छे. ओन परमार्थ छे केमके एवेत्तुं

पौषधं सम्भूतं अनुपालयन् श्रमणान् निर्ग्रन्थान् प्रासुकैषणां येन अशनपान-  
खादिम-स्वादियेन पीठ--फलक शय्या-संस्तारेण दस्त--प्रतिग्रह-कम्बलपाद-  
प्रोच्छनेन औषधभैषज्येन प्रतिलाभयन् बहुभिः शीलव्रतगुणविरमणपौष-

प्रयोजन इसीसे सिद्ध होता है. इसके अतिरिक्त अन्यतीर्थिक कुप्रवचनादिक  
• कुगतिप्रापक होने से अनर्थरूप हैं, इस तरह से वह अपने पुत्रादिकों को  
शिक्षा देने लगा. निर्ग्रन्थप्रवचन को प्रतिपत्ति से उसका अन्तःकरण  
असद्विचारों से रहित हो जाने के कारण स्फटिक की तरह निर्मल हो  
गया, भिक्षुक आदिकों का भिक्षाके निमित्त गृह में प्रवेश सरलता से हो  
जावे इस ख्याल से वह अपने गृहप्रवेश द्वार को सदा अर्गला से रहित  
रखने लगा. अर्थात् दानादि के लिये खुले दरवाजे रखे। राजा के अन्तः  
पुर में भी उसका प्रवेश शंका रहित होने से प्रीति का जनक बन गया.  
अर्थात् अतिधार्मिक होने से वह परस्त्री सहोदर (भाई) बन कर रहने लग गया.  
(चाउदसद्वमुद्दिष्टपुण्यमासिणीसु पडिपुण्यं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समणे  
निगंथे फामुएसणिज्जेणं असणपाणखाइम-साइमेणं पीठफलगसेज्जासंथा-  
रेणं वत्थपडिगहकंबलपायपुच्छणेणं ओसहभेसज्जेणं पडिलाभेमाणे) चतुर्दशी,  
अष्टमी, उद्दिष्ट-अभावस्या. एवं पूर्णिमा इन चार तिथियों में अहोरात्र  
पौषध का पालन करता हुआ, तथा प्रासुक एषणीय-अचित्त और साधुजन  
को कल्पनीय ऐसे अशन, पान, खादिम, स्वादिमरूप चतुर्विध आहार से;

प्रयोजन येना वडे न सिद्ध थाय छे. गाडीना अधां-अन्यतीर्थिक कुप्रवचन वगेरे  
कुगति प्रापक होवा गदल अनर्थ रूप छे. आ प्रमाणे ते पोताना पुत्रो वगेरेने  
उपदेश आपवा लाग्यो, निर्ग्रन्थ प्रवचननी प्रतिपत्तिथी तेनुं हृदय असद्विचारोथी  
रहित थध गयुं हुतुं ओटला भाटे स्फटिकनी जेम निर्माण थध गयुं हुतुं. भिक्षुक  
वगेरे भिक्षा भाटे आवे त्यारे सरणतापूर्वक धरमां तेओ प्रवेश भेगवी शके ते भाटे  
ते पोताना धरनुं गारणुं भुद्धुं न राणवा लाग्यो. राजना राजमहोदयमां पणु तेना  
प्रवेश निःशंकपणु थवा लाग्यो ओटले डे ते अतिधार्मिक थध गयो हुतो ओधी ते  
परस्त्री सहोदर गनीने रहेवा लाग्यो. ( चाउदसद्वमुद्दिष्टपुण्यमासिणीसु पडि-  
पुण्यं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समणे निगंथे फामुएसणिज्जेणं  
असणपाणखाइमसाइमेणं पीठफलगसेज्जासंथारेणं वत्थपरिगह  
कंबलपायपुच्छणेणं ओसहभेसज्जेणं पडिलाभेमाणे)

चतुर्दशी अष्टमी, उद्दिष्ट अभावस्या अने पूर्णिमा ओ आरेचार सिधियोना दिवसे  
अहोरात्र सुधी पौषधनुं पालन करतो हुतो तेमन प्रासुक एषणीय अचित्त अने  
साधुजन भाटे कल्पनीय ओवा अशन, पान, खादिम, स्वादिमइय चतुर्विध आहारथी



ધોપયાસંઃ આન્માનં માનયન્ યાન તત્ર રાજકાર્યાણિ ચ યાવન્ રાજન્યવહારાથ  
તાનિ જિતશુભઃ રાજા સાર્દ્ધં સ્વયમેવ પ્રત્યુત્પેક્ષમાણઃ પ્રત્યુત્પેક્ષમાણો  
ધિરહતિ ॥ સૂ. ૧૧૩ ॥

ટીકા—‘ત્વણં સે’ इत्यादि—

તતઃ સ્વલુ સ ચિત્રઃ સારથિઃ શ્રમણો પાસકો પાતઃ સન્ અધિગત-જીવા-  
જીવઃ-અધિગતો=સમ્યક્ અવગતો=જ્ઞાતો જીવાં જીવીં=જીવનસ્વપ્ન અજીવતત્ત્વં  
ચ ચેન સ તથા-જીવતત્ત્વજીવનત્ત્વત્રિપયકસકલજ્ઞાનસમ્પન્નઃ, ઉપલબ્ધપુણ્ય-

પીઠ, ફલક, શય્યા, સંસ્તારક સે, વસ્ત્ર પાત્ર કમ્બલ, પાદપાંચ્છન, સે,  
(ધરણ કો સાફ કરને કા વહ્નિચોપ) એનં ઔપધ્ય મૈપડ્ય સે શ્રમણ  
નિર્ગન્ધો કો પ્રતિલાભિત કરતા હુઆ (વહ્નિં સ્તીલવ્યયગુણવેરમણ  
પોસહોવવાસેહિં ય અપ્પાણં માવેમાણે જાહં તત્થ રાજકજ્ઞાણિ ય  
જાવ રાજવવહારાણિ ય તાહં જિયસસુણા રણા સદ્ધિં સયમેવ પચ્ચુવે  
કલ્લમાણેર વિહરહ) એવં અનેક શીલવ્રતો, શુણવ્રતો, મિથ્યાત્વ સે નિર્વર્તન,  
પ્રત્યાશ્ચયાન ઔર પોષધો સે આત્મા કો ભાવિત કરતા હુઆ વહ જિતને  
મી ઉસ શ્રાવસ્તી નગરી મેં રાજકાર્ય યે યાવત્ જિતને વહાં રાજન્યવહાર પે  
ઉન સંઘ કા જિતશત્રુ રાજા કે સાધર વારંવાર અવલોકન કરતા હુઆ રહને લગા.

ટીકાર્થ—ગૃહિધર્મ કે પાલન કરને સે વહ ચિત્ર સારથિ શ્રમણો પાસક  
યન ગયા જીવ-અજીવ તથા ત્રિપક સકલજ્ઞાન સે વહ સમ્પન્ન હો ગયા.

પીઠ ફલક, શય્યા સંસ્તારકથી વસ્ત્ર પાત્ર, કંબલ, પાદ પાંચ્છનથી અને ઔપધ્ય લૌપજ્યથી  
શ્રમણ નિર્ગન્ધોને પ્રતિલાભિત કરતો (વહ્નિં સ્તીલવ્યયગુણવેરમણ પોસહોવ-  
વાસેહિં ય અપ્પાણં માવેમાણે જાહં તત્થ રાજકજ્ઞાણિ ય જાવ રાજવવ-  
હારાણિ ય તાહં જિયસસુણા રણા સદ્ધિં સયમેવ પચ્ચુવેકલ્લમાણેર વિહરહ)  
અને અનેક શીલવ્રતો, શુણવ્રતો, મિથ્યાત્વથી નિર્વર્તન, પ્રત્યાશ્ચયાત અને પોષધોવડે  
પોતાના આત્માને ભાવિત કરતો તે શ્રાવસ્તી નગરીના સર્વ રાજકાર્યોનું સંચાલન  
કરતો જિતશત્રુ રાજાની સાથે રહીને વારંવાર રાજ્યકાર્યનું અવલોકન કરતો પોતાના  
દિવસો પસાર કરવા લાગ્યો.

ટીકાર્થ—ગૃહિધર્મના પાલનથી તે ચિત્રસારથિ શ્રમણો પાસક થઇ ગયો. છતાં,  
અશુભ તત્ત્વ વિષયક સકળ જ્ઞાનથી તે સંપન્ન થઇ ગયો. પુણ્ય અને પાપના યથા-

पापः-उपलब्धे=यथातथ्येन विज्ञाते पुण्यपापे=पुण्यलक्षणं पापलक्षणं च येन स तथा-पुण्यपापयोः यथावस्थितस्वरूपज्ञायकः, तथा-आस्रवसंवर-निर्जरा क्रियाधिकरणबन्धमोक्षकुशलः-तत्र-आस्रवः=प्राणातिपातादिः, संवरः=प्राणातिपातविरमणादिः, निर्जरा=कर्मणां देशतो निर्जरणं, क्रिया=कायि-बयादिरूपा, अधिकरणम्, खज्ञादिकम्, बन्धः=कर्मपुद्गलजीवप्रदेशयोः दुग्ध-जलवत् एकीभावाः, मोक्षः=जीवप्रदेशेभ्यः सर्वात्मना कर्मणामपगमनम्, एतेषामितरेतरयोगद्वन्द्वः, तेषु कुशलः=चतुरः-आस्रवादिस्वरूपाभिज्ञ-इत्यर्थः, तथा-असाहाय्यः=नास्ति साहाय्यं=सहायता यस्य स तथा-कुतीर्थिककुतर्क-खण्डने परसाहायानपेक्ष इति भावः, तथा-देवासुरनागयक्षराक्षसकिन्नर-किम्पुरुषगण्डगन्धर्वमहोरगादिभिः=तत्र-देवाः=वैमानिकाः, असुराः=असुर-कुमाराः, नागाः=नागकुमाराः, असुरा नागाः, इमे उभये भवनपतयः, यक्षाः,

पुण्य और पाप के यथावस्थितस्वरूप का वह ज्ञाता हो गया, तथा प्राणाति-पातादिरूप आस्रव, प्राणातिपातादिविरमणरूप संवर, कर्मों का एकदेश से क्षय होनेरूप निर्जरा, कायिकी आदिरूप क्रिया खज्ञादिरूप अधिकरण, दुग्धजल की तरह कर्मपुद्गलों का और जीवप्रदेशों का एक क्षेत्रावगाररूप बन्ध, जीवप्रदेशों से सर्वात्मना कर्मों का अपगमरूप मोक्ष इन सब में वह चतुर बन गया, अर्थात् जीव आदि के स्वरूप का वह अभिज्ञ हो गया; कुतीर्थिकजनों के कुतर्क खण्डन में वह किसी की भी सहायता नहीं लेता ऐसा समझदार हो गया, तथा जिनप्रवचन के प्रति उसकी ऐसी अगाध श्रद्धा बढ़ गई कि जिससे वह देव, असुर, नाग, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किम्पुरुष आदिकों द्वारा भी उससे कठिन्त भी चलायमान नहीं किया जा सका। वैश्वानिक देव यहां देवपद से, असुरकुमार जाति के भवनपति असुरकुमारपद

वास्थित स्वरूपने ते नानुवा लाग्ये तेभ्यः प्राणातिपात वगेरे आस्रव, प्राणाति-पातादि विरमणरूप संवर, कर्मोना ओकदेशेथी क्षय थवा इय निर्जरा, कायिकी वगेरे इय क्रिया, णदूण वगेरे इय अधिकरण, दुग्धजलनी जेम कर्मपुद्गलोनुं अने एव प्रदेशोनुं ओकक्षेत्रावगाहनरूप बन्ध, एव प्रदेशोनी सर्वात्मना कर्मोनुं अपगमनरूप मोक्ष आ णधामां ते अतुर हतो ओटले के आस्रव वगेरेना स्वरूपने ते नानुकार थछ गयेो हतो ते ओवो अतुर थछ गयेो हतो के कुतीर्थिकोना कुतर्कखण्डनमां ते ठाछनी यणु महह लेतो नहोतो. तेभ्यः जिनप्रवचन अत्ये तेना मनमां ओनी अगाध श्रद्धा नामी गछ हती के जेथी ते देव, असुर, नाग यक्ष, राक्षस, किन्नर, किं पुरुष वगेरे वडे ते जराओ विथलित करी शकथ तेम नहोतो. वैश्वानिक देव अही देवपदथी, असुरकुमार जातिना लवनपति असुरकुमार पदथी, नागकुमार जातिना लवन-

રાક્ષસાઃ, કિન્નરાઃ કિમ્પુરુષાઃ, एते चत्वारोऽव्यन्तरविशेषाः, गरुडाः=गरुड-  
 ध्वजाः सुपर्णकुमाराः भवनपतिविशेषाः, गन्धर्वा महोरगाश्च व्यन्तरविशेषाः,  
 तत्पभृतिभिरपि देवगणैः निर्ग्रन्थात् प्रवचनात् अनतिक्रमणीयः=अचालनीयः  
 निर्ग्रन्थप्रवचनात् चालयितुं देवादयोऽसमर्था इति भावः । तथा-निर्ग्रन्थे  
 प्रवचने निःशङ्कितः=अन्यदर्शनापेक्षया श्रेष्ठमिदं न वेति शङ्कारहितः, अत  
 एव-निष्काङ्क्षितः=काङ्क्षारहितः-परमतकाङ्क्षारहितः निर्विचिकित्सः-फल  
 प्रति सन्देह रहितः, अत एव-लब्धार्थः-लब्धः=प्राप्तः अर्थो गुर्वादीनां सका-  
 शाद् येन स तथा-उपलब्धपदार्थ इत्यर्थः, गृहीतार्थः-गृहीतः=स्वीकृतोऽर्थो  
 येन स तथा-पराभिप्रायग्रहणतोऽवधारितार्थतत्त्व इत्यर्थः, पृष्ठार्थः-पृष्ठोऽर्थो

સે, નાગકુમાર જાતિ કે ભવનપતિ દેવ નાગ શબ્દ સે, તથા યક્ષ, રાક્ષસ,  
 કિન્નર, એવં કિંપુરુષ્ હન પદો સે વ્યન્તર જાતિ કે હસ ૨ નામકે દેવ  
 ગૃહીત હુણ હૈં। ગરુડ શબ્દ સે ગરુડધ્વજવાલે સુપર્ણકુમાર જો કિ ભવન-  
 પતિ જાતિ કે દેવ વિશેષ હૈં। ગૃહીત હુણ હૈં। ગન્ધર્વ ઓર મહોરગ યે  
 વ્યન્તરવિશેષ હૈં। ઉસકે મનમેં એસી શંકા કિ યહ નિર્ગ્રન્થપ્રવચન અન્ય  
 દર્શનોં કી અપેક્ષા શ્રેષ્ઠ હૈં કી નહીં હૈ ક્રી નહીં ઉત્પન્ન હુઈ હસલિયે  
 યહ ઉસકે પ્રતિ નિઃશંકિત થા. પરમત કી કાંક્ષા કા અભાવ હસકે ચિત્ત  
 મેં સર્વથા હો ગયા થા-હસલિયે યહ નિષ્કાંક્ષિત થા, ફલ કે પ્રતિ સન્દેહ  
 સે યહ રહિત થા. હસલિયે નિર્વિચિકિત્સ થા. હસી કારણ હસને ગુર્વાદિકોં  
 કે પાસ સે પ્રવચનગદિત અર્થ કો અચ્છી તરહ સે જાન લિયા થા. હસલિયે  
 યહ લબ્ધાર્થ થા, ઉસે અચ્છી તરહ સે સ્વીકાર કર લિયા થા. હસલિયે  
 યે ગૃહીતાર્થ થા. સંદેહયુક્ત સ્થલ મેં પરસ્પર પ્રશ્ન કરને સે વહ અર્થ

પતિદેવ નાગ શબ્દથી તેમજ યક્ષ, રાક્ષસ, કિન્નર અને કિંપુરુષ આ પદોથી વ્યન્તર  
 જાતિના દેવોનું અહણુ થયું છે. ગરુડ શબ્દથી ગરુડધ્વજવાળા સુપર્ણકુમાર-કે જેઓ  
 ભવનપતિ જાતિના દેવ વિશેષ છે તેનું અહણુ થયું છે. ગન્ધર્વ અને મહોરગ એ બંને  
 વ્યન્તરણુ વિશેષ છે. તે ચિત્રસારથિના મનમાં નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનને લઈને એવી કોઈપણ  
 દિવસે શંકા ઉત્પન્ન થઈ નહોતી કે આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન બીજા દર્શનો કરતાં શ્રેષ્ઠ  
 છે કે કેમ? એથી તે તે પ્રતિ નિઃશંકિત હતો. પરમત પ્રત્યે તેના મનમાં લાંબી  
 કાંક્ષા ઉત્પન્ન થઈ નહોતી એથી તે નિષ્કાંક્ષિત હતો કણ પ્રત્યે તે સંદેહ રહિત હતો.  
 એથી તે નિર્વિચિકિત્સ હતો. તેણે શુરુ વગેરે પાસેથી પ્રવચન વગેરે અર્થને સારી  
 પેઠે બાણી લીધાં હતાં. એથી તે લબ્ધાર્થ હતો. તે અર્થનો તેણે સારી પેઠે સ્વીકાર  
 કરી લીધો હતો. સાંશયિક સ્થળ વિષે પરસ્પર પ્રશ્નો કર-

येन स तथा-सांशयिकस्थल परस्परं प्रश्नकरणेन निर्णीतार्थः, अधिगतार्थः-  
 अधिगतः=सर्वथा उपलब्धः अर्थो येन स तथा-सर्वप्रकारेणोपलब्धार्थः, अत  
 एव-विनिश्चितार्थः-वि=विशेषेण निश्चितः=निर्णीतोऽर्थो येन स तथा-ज्ञात-  
 वास्तविकार्थ इत्यर्थः, तथा-अस्थिमज्जाप्रेमानुरागरक्तः-अस्थिमज्जे मसिद्धे  
 ते प्रेमानुरागेण-निर्ग्रन्थप्रवचनविषयकं यत् प्रेम तद्रूपो योऽनुरागी=रञ्जन-  
 द्रव्यं तेन रक्ते इव रक्ते यस्य स तथाभूतः सन् “हे आयुष्मन् ! इदं  
 नैर्ग्रन्थं प्रवचनमेव अर्थः=वास्तविकार्थमुक्तः-मोक्षहेतुत्वात्, शेषम्=हतो  
 भिन्नम् अन्यतीर्थि ककुपावनादिकम् अनर्थः-कुगतिप्रापकत्वात्”-इत्येव  
 पुत्रादिकमनुशासत, तथा इच्छिन्नस्फाटिकः-स्फटिकमिव स्फाटिकम् अन्तः  
 करणम्, उच्छिन्नम्=उद्गतः स्फाटिकं यस्य स तथा-निर्ग्रन्थप्रवचन  
 प्रतिपत्त्या, असद्विचारशून्यत्वात् स्फटिकवन्निर्मलान्तःकरण इत्यर्थः, अथवा-  
 ‘उच्छिन्नपरिघः’ इति छाया, एतत्पक्षेः उच्छिन्नः=तत्स्थानादपनीय ऊर्ध्वी

का निर्णीता बन गया था. इसलिये पृष्ठार्थ था, सर्वप्रकार से अर्थ का  
 ग्रहण करने वाला बन गया था, इसलिये ये लब्धार्थ था वास्तविक अर्थ का  
 ज्ञाता बन गया था. इसलिये ये विनिश्चितार्थ था, निर्ग्रन्थप्रवचनविषयक प्रेम-  
 उसकी रोमर में समागया था, इसलिये ये अस्थिमज्जाप्रेमानुराग रक्त था. वह  
 अपने पुत्र पौत्रादिकों से यही कहता था कि हे आयुष्मन् ! यह निर्ग्रन्थ  
 प्रवचन ही मोक्ष हेतु होने से वास्तविक अर्थ से युक्त है अन्य कुवादियों के  
 प्रवचन ऐसे नहीं हैं क्योंकि वे दुर्भेति के प्राप्त कराने वाले हैं. निर्ग्रन्थप्रवचन  
 की प्रतिपत्ति से उसका हृदय स्फटिकमणि के जैसा निर्मल हो गया था  
 ‘उसियफलिहे’ की छाया जब ‘उच्छिन्नपरिघः’ ऐसी की जाती है तब  
 इसका अर्थ ऐसा होता है कि इसने घरके द्वार के किचड़ों में,

अर्थों से अर्थों में निर्णीता नहीं गये होते. अर्थों से पृष्ठार्थ होते. ते अर्थ नीते  
 अर्थों में अर्थों में निर्णीता नहीं गये होते. अर्थों से लब्धार्थ होते. ते वास्तविक अर्थों में  
 ज्ञाता अर्थों में निर्णीता नहीं गये होते. अर्थों से विनिश्चितार्थ होते. निर्ग्रन्थ प्रवचन विषयक प्रेम  
 तेना आयुष्मे आयुषां रभी गये होते, अर्थों से अस्थिमज्जाप्रेमानुरागी होते. ते  
 ज्ञाताना पुत्र पौत्र वगेरेने आ प्रमाणे न कहेतो होते के हे आयुष्मन् ! आ  
 निर्ग्रन्थ प्रवचन न मोक्षना हेतु होवा नहल वास्तविक अर्थों से युक्त छे. जीला कुवादि-  
 ज्ञाना प्रवचनो आवां नथी. कारणके ते कुगति तरङ्ग होरनारा छे. निर्ग्रन्थ प्रवचननी  
 प्रतिपत्तिथी तेनुं हृदय स्फटिकमणि जेम् निर्माण थछ गयुं हुतुं. ‘उसीयफलिहे’  
 नी छाया ज्यारे ‘उच्छिन्नपरिघः’ आ प्रमाणे करवाभां आवे छे त्यारे तेना अर्थ  
 आ प्रमाणे होय छे के ते अर्थवेष्टारना कमाओभां अर्गला भूकवाना स्थाननी

કૃતો ન તુ તિરશ્ચીનઃ કૃતઃ પરિધઃ=અર્ગલા યેન :મ તથા  
 'ભિક્ષુકાદીનાં સૌકર્યેણ ભિક્ષાર્થ'ગૃહે પ્રવેશો ભવતુ इति हेतोः कपाट-  
 पश्चाद्वागादपनीतागल इत्यर्थः । अथवा-उच्छ्रितः=अपगतः परिधः=अर्गला  
 गृहद्वारे यस्यसौ तथा-औदार्याधिक्यादतिशयदानदातृत्वाद् भिक्षुकप्रवेशार्थ-  
 मनर्गलितगृहद्वार इत्यर्थः । एतावदेव न किन्तु अप्रावृतद्वारः=भिक्षुकादि-  
 प्रवेशार्थ' कपाटानामपि पश्चात्करणात् सर्वथा समुद्घाटितद्वारइत्यर्थः । यद्वा-  
 सम्यग्दर्शनलाभे सति कुतश्चिदपि पाखण्डिकाद् भयाभावेन शोभनमार्गपरि-  
 ग्रहेण च सर्वदा समुद्घाटितशिरास्निष्ठनोति भावः, ता-प्रोक्तिकरानाःपुः

અર્ગલા કો उसके रखने के स्थान से ऊपर कर दिया था, तिरछा नहीं किया था. अर्थात् प्रवेशद्वार के किचाड़ों में इसने अर्गला नहीं लगाई किन्तु वह ऊँची ही रही सो उसका कारण यह था भिक्षुक आदि जनों को प्रवेश घर में भिक्षा के निमित्त सरलता पूर्वक होता रहे। अथवा उच्छ्रित शब्द का अर्थ 'इसने अर्गला बिलकुल नहीं लगाई' ऐसा भी होता है क्यों कि यह उदारता वाला था, तथा अतिशय दान देने वाला था. इसलिये भिक्षुकादिकों के प्रवेश के लिये इसने अपने घर-के द्वार को अर्गला से रहित ही कर दिया था उतना ही नहीं किन्तु उसने गृह द्वारके कपाटों को खुलाकर दिया इसीलिये वह 'अप्रावृतद्वारः' ऐसा कहा है अर्थात् वह सर्वथा समुद्घाटित द्वार वाला प्रकट किया है। अर्थात् दान पुण्य-के लिये उनके घरके द्वार सदा खुले थे यद्वा--सम्यग्दर्शन के लाभ होने पर किसी भी पाखण्डिक से उसे भय नहीं था सो इससे

ઉપરજ, રાખી. ત્રાંસી મૂકી ન હતી એટલે કે પ્રવેશદ્વારના કમાડોમાં તેણે સાંકળ લગાડી ન હતી પણ તેને ઉંચી જ રાખી હતી એની પાછળ આ હેતુ છે કે ભિક્ષુક વગેરે ભિક્ષા માટે આવે ત્યારે સહેલાઈથી ઘરમાં પ્રવેશી શકે. અથવા ઉચ્છ્રિત શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે પણ થાય છે કે તેણે અર્ગલા લગાડી જ નહોતી. તે ઉદાર તેમજ અતિશય દાનદાતા હતો એથી ભિક્ષુક વગેરેના પ્રવેશ માટે પોતાના ઘરને તેણે અર્ગલા વગર જ રાખ્યું હતું. આ પ્રમાણે અર્થ કરતાં આપણે એમ કહી શકીએ કે તેણે અર્ગલાને તેના સ્થાન પરથી ઉંચી પણ નહોતી કરી. એટલા માટે 'અપ્રાવૃત્તદ્વારઃ' પદથી સૂત્રકારે તેને સર્વથા સમુદ્ઘાટિતદ્વારવાળો પ્રકટ કર્યો છે. અને સમ્યગ્દર્શનના લાભ થી હવે કોઈ પણ પાંખડિકથી તે ભયભીત નહોતો થતો એથી અને શોભનમાર્ગના

गृहप्रवेशः=प्रीतिकरः प्रीत्युत्पादकः अन्तःपुरगृहे=राज्ञोऽन्तःपुरे प्रवेशो=यस्य स तथा, प्रीतिकरोऽतिधार्मिकतया सर्वत्रानाशङ्कनीय इति भावः, तथा-चतुर्दश्यष्टम्युद्दिष्टपौर्णमासीषु तत्र-चतुर्दश्यष्टमीपौर्णमास्यः प्रसिद्धाः, 'उद्दिष्टम्' इत्यमावास्या, एतासु चतसृष्वपि तिथिषु प्रतिपूर्णं=सकलम्-अहोरात्रं पौषधं सम्यक् अनुपालयन्, तथा-प्रासुकैपणीयेन=अचित्तेन साधुजनकल्पनीयेन च अशनपानखादिमस्वादिमेन=अशनाद्विचतुर्विधेनादारेण पीठफलकशय्यासंस्तारकेण, वस्त्रप्रतिग्रहकम्बलपादप्रोच्छनेन-तत्र-वस्त्रं=वसनं, प्रतिग्रहः=भक्तपानादिपात्रं, कम्बलः-प्रसिद्धः, पादप्रोच्छनं=पादप्रोच्छनार्थं वस्त्रम्, एतेषां समाहारः, तेन तथा-औषधभैषज्येन=औषधम्=एकद्रव्यनिष्पादितं, भैषज्यम्=अनेकद्रव्यनिष्पादितम्, उभयोः समाहारस्तेन च श्रमणान् निर्ग्रन्थान् प्रतिलम्भयन् प्रतिलम्भयन्, तथा-बहुभिः=अनेकसंख्यकैः शीलव्रतगुण-विरमणप्रत्याख्यानपौषधोपवासैः तत्र-शीलव्रतानि=स्थूलप्राणातिपातविरमणा-

और शौभनमार्ग के परिग्रह से वह सर्वदा समुद्घाटित शिरवाला बना रहता था अर्थात् स्वधर्माभिमान वाला है-तथा वह प्रीतिकरान्तःपुरगृहप्रवेश वाला था, अर्थात् राजा के अन्तःपुररूप घर में इसका प्रवेश प्रीत्युत्पादक था अर्थात् यह अतिधार्मिक था इसलिये प्रीतिकर सर्वत्र अनाशङ्कनीय था तथा चतुर्दशी अष्टमी अमावास्या और पूर्णिमा इन चारों पर्वतिथियों में यह अहोरात्र का पौषध करता था प्रासुकैपणीय-अचित्त एवं साधुजन कल्पनीय ऐसे अशनपान आदिरूप चार प्रकार के आहार से, पीठ, फलक, शय्या एवं संस्तारक से, वस्त्र, प्रतिग्रह-भक्तपानादिपात्र, कम्बल, एवं पादप्रोच्छनार्थ वस्त्र से, एकद्रव्यनिष्पादित औषध से तथा अनेक द्रव्य निष्पादित भैषज्य से यह श्रमणनिर्ग्रन्थों को प्रतिलाभित करता था, इस तरह अनेकसंख्यक शीलव्रतों से-स्थूलप्राणातिपातविरमण आदिकों से, दिग्व्रत आदिरूप गुणव्रतों से, मिथ्यात्व-

परिग्रहणी ने सर्वदा समुद्घाटित शिरवाला बने रहने लगे। तो प्रीतिकरान्तःपुरगृहप्रवेशवाला होता। ओटवे के राजना राजवासमां तेना प्रवेश प्रीत्युत्पादक होता ओटवे के ते अतिधार्मिक होता ओथी प्रीतिकर अने सर्वत्र अनाशङ्कनीय होता। चतुर्दशी वगेरे आरे आर पर्वतिथियोंमां ते अहोरात्र पौषध करतो होता प्रासुकैपणीय अचित्त अने साधुजन कल्पनीय ओवा अशनपान वगेरे रूप आर प्रकारना आहारथी पीठ, फलक, शय्या, अने संस्तारकथी वस्त्र, प्रतिग्रह-भक्तपान वगेरे पात्र, कम्बल अने पादप्रोच्छनार्थ वस्त्रथी ओक द्रव्य निष्पादित औषधथी ते श्रमण निर्ग्रन्थाने प्रतिलाभित करतो होता। आ प्रमाणे धर्मां शीलव्रतोंथी-स्थूल प्राणातिपात विरमण वगेरेथी, दिग्विरति वगेरे गुणव्रतोंथी, मिथ्यात्व निवर्तनरूप विरमणथी,



दीनि पञ्च, गुणाः=गुणव्रतानि-दिग्ब्रतादीनि, विरमणं=मिथ्यात्वा निवर्तनम्,  
प्रत्याख्यानं=पर्वदिनेषु हरितिकायादीनां परित्यागः, पौषधोपवामः=चतुर्द-  
श्यादिपर्वतिथिषु आहारत्यागः, एवमितरेतरयोगद्वन्द्वः, तैश्च आत्मानं  
भावयन्=वासयन्, यानि तत्र=श्रावस्त्यां नगर्यां राजकार्याणि च यावद्  
राजव्यवहाराश्च तानि सर्वाणि जितशत्रुणा राज्ञा मार्द्धं स्वयमेव प्रत्युपेक्ष-  
माणः प्रत्युपेक्षमाणः=मुहुर्मुहुर्वलाकयन् विहरति ॥सू० ११३॥

मूलम्—तएणं से जियसत्तू राया अपणया कयाइ महत्थं जाव

पाहुडं सज्जेइ, सज्जित्ता चित्तं सारहि सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-  
गच्छहि णं तुमं चित्ता ! मेयं वियानयरिं, पणसस्स रन्नो इमं महत्थं  
जाव पाहुडं उवणेहि, मम पाउग्गहणं जहा भणियं अवितहमसं-  
दिद्धं वयणं विन्नवेहित्तिकहु विसज्जिए । तएणं से चित्ते सारहा  
जियसत्तुणा रन्ना विसज्जिए समाणे त महत्थं जाव गिणहइ, जिय-  
सत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिणिक्वमइ, सावत्थीए नयरीए मज्झं-  
मज्झेणं निग्गच्छइ, जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे, तेणेव उवाग-  
च्छइ, तं महत्थं जाव ठवेइ, णहाए जाव सरीरे सकोरिटमल्लदामेणं  
छत्तणं धरिजमाणेणं महया भडचडगरविदपरिक्खित्ते पायचारविहारेण  
महया पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते रायमग्गमोगाढाओ आवासाओ निग्ग-  
च्छइ, सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झे णं निग्गच्छइ, जेणेव कोट्टए

निवर्तनरूपं विरमणं से, पर्वदिनीं मे हरितिकायादिकों के परित्याग से, चतु-  
र्दश्यादिपर्वतिथियों में आहारत्याग से आत्मा को वासित करता हुआ वह  
श्रावस्ती नगरी में जितने भी राजकार्य थे यावत्-राजव्यवहार थे उन सब का  
जितशत्रु राजा के साथ स्वतः बार बार निरीक्षण करता हुआ रहने लगा ॥सू० ११३॥

पर्वना द्विषोभां हरितिकाया वगेरेनां परित्यागथी, चतुर्दशी वगेरे तिथिषोभां आहार-  
त्यागथी आत्माने वासित करोते ते श्रावस्ती नगरीमां जेट्ठा शब्दार्थो हुतां यावत्  
राजव्यवहार हुता ते सर्वान् जितशत्रु राजानी साथे पोते बारं बार निरीक्षण  
करोते रहेवा लाग्यो ॥सू० ११३॥



चेइए जेणेव केसीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ, केसिकुमारसमणस्स  
 ओंतए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ जाव उट्ठाए जाव एवं वयासी—  
 एवं खलु अ भंते ! जियसत्तुणा पएसिस्स रन्नो इमं महत्थं जाव  
 उवणेहि त्ति कट्ठु विसज्जिए, तं गच्छामि णं अहं भंते ! सेयंवियं  
 नयरि ! पासादीया णं भंते ! सेयंविया णयरी, एवं दरिसणिज्जा  
 णं भंते ! सेयंविया णयरी, अभिरूवा णं भंते ! सेयंविया णयरी  
 पडिरूवा णं भंते ! सेयंविया णयरी, समोसरह णं भंते ! तुब्भे  
 सेयंवियं णयरिं ॥सू० ११४॥

छाया—ततः खलु स जिनशत्रू राजा अन्यदा कदाचित् महार्थं यावत्  
 प्राभृतं सज्जयति, चित्रं सारथिं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत् गच्छ  
 खलु त्वं चित्र ! श्वेतबिकां नगरीम्, प्रदेशिनो राज्ञ इदं महार्थं यावत्  
 प्राभृतम् उपनय, मम पादग्रहणं यथा भणितम् अवितथम् असन्दिग्धम् वचनं

‘तएणं से जियसत्तू राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं से) इसके बाद उस (जियसत्तू राया) जिनशत्रु राजाने  
 (अन्नया कयाइ) किसी एक समय (महत्थं जाव पाहुडं सज्जेइ) महाप्र-  
 योजनसाधक यावत् प्राभृत को सजाया, (सज्जित्ता चित्तं सारहिं सदावेइ)  
 सजाकर फिर उसने चित्र सारथि को बुलाया. (सदावित्ता एवं वयासी)  
 (बुलाकर उससे) ऐसा कहा—(गच्छहि णं तुमंचित्ता । सेयंवियानयरिं पए  
 पसिस्स रन्नो इमं महत्थं जाव पाहुडं उवणेहि) हे चित्र ! तुम जाओ और  
 श्वेतांबिका नगरी में प्रदेशी राजा के पास इस महाप्रयोजन साधक यावत्

‘त एणं से जियसत्तू राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(त एणं से) तैयार पछी ते (जियसत्तू राया) जितशत्रु राजाने (अन्नया  
 कयाइ) कुछ कुछ वणते (महत्थं जाव पाहुडं सज्जेइ) महाप्रयोजन साधक  
 यावत् लेट (प्राभृत) तैयार करी. (सज्जित्ता चित्तं सारहिं सदावेइ) तैयार करीने  
 तेणु चित्र सारथीने ओलाव्यो. (सदावित्ता एवं वयासी) ओलावीने तेणु आ प्रमाणु कहुं.  
 (गच्छहि णं तुमं चित्ता ! सेयंविया नयरिं पएसिस्स रन्नो इमं महत्थं जाव  
 पाहुडं उवणेहि) हे चित्र ! तमे श्वेतबिका नगरीमां प्रदेशी राजाने पासे आ

विज्ञापयेति कृत्वा विसर्जितः । ततः खलु स चित्रः सारथिर्जितशत्रुणा राज्ञा विसर्जितः सन् तत् महार्थं यावद् गृह्णाति, जितशत्रो राज्ञोऽन्तिकान् प्रतिनिष्क्रामति, श्रावस्त्या नगर्या मध्यमध्येन निगच्छति, यत्रैव राजमार्गः सवगाढ आवासः, तत्रैव उवागच्छति, तन्महार्थं यावत् स्थाययति, स्नातो यावच्छरीरः सकोरिष्टमाल्यदाम्ना छत्रेण ध्रियमाणेन महाभटचटकरवृन्दपरि- क्षिप्तः पादचारविहारेण महापुरुषवागुरापरिक्षिप्तो राजमार्गमवगाढान् आवा-

प्राभृत को ले जाओ (सम पाउगदणं जहा भणियं अवितहमसंदिद्धं वयणं विन्नवेहि त्तिकट्टु विसज्जिए) और उनसे मेरा प्रणाम कहो, तथा मेरी और से यथोक्त अविनय असंदिग्ध वचन कहो, इस प्रकार कह कर उसे विसर्जित कर दिया. (तएणं से चित्ते सारही जियसहुणा रणा विसज्जिए समाणे तं महत्थं जाव गिण्हइ-जियसत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमइ) इसके बाद जितशत्रु राजा द्वारा विसर्जित किये गये चित्र सारथि ने उस महाप्रयोजन साधक यावत् प्राभृत को उठा लिया और जितशत्रु राजा के पास से चला आया. (सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निगच्छइ) एवं श्रावस्ती नगरी के ठीक बीचों बीच के मार्ग से होकर निकला (जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ) निकलकर वह जहां राजमार्ग पर स्थित आवासस्थान था, वहां पर आया (तं महत्थं जाव ठवेइ) वहां आकरके उसने उस प्राभृत को एक ओर रख दिया. (प्हाए जाव सरीरे सकोरिंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं महया भडचडगरविंद-

महाप्रयोजन साधक यावत् लेट लई जाये। (सम पाउगदणं जहा भणियं अवि- तहमसंदिद्धं वयणं विन्नवेहित्तिकट्टु विसज्जिए) अने तेभने भारा प्रणाम कइशे। अने भारवती यथोक्त अवितथ असंदिग्ध वचन कइशे। (त्तिकट्टु विसज्जिए) आ प्रभाणे कड़ीने तेने त्यांथी ज्वानी आज्ञा करी. (तएणं से चित्ते सारही जिय सहुणा रणा विसज्जिए समाणे तं महत्थं जाव गिण्हइ जियसत्तुस्स रण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमइ) त्थारपणी जितशत्रु राजा पासेथी आज्ञापित थइने ते चित्र सारथीअे ते महाप्रयोजन साधक यावत् लेटने लई लीधी अने जितशत्रु राजा पासेथी आवतो रह्यो (सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निगच्छइ) अने श्रावस्ती नगरीना भरोभर मध्यमार्गथी थइने (जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ) ते जथां राजमार्ग पर पोतानुं निवासस्थान हुतुं त्यां आंये। (तं महत्थं जाव ठवेइ) त्यां आवीने तेले ते लेटने अेक तरफ भूझी दीधी. (प्हाए जाव सरीरे सकोरिंटमल्लदामे णं छत्तेणं धरिज्जमाणे णं महया महया

सात् निर्गच्छति, श्रावस्त्या नगर्या मध्य मध्येन निर्गच्छति  
यत्रैव कोष्ठक चैत्यं यत्रैव केशी कुमारश्रमणः तत्रैव  
उपागच्छति, केशिकुमारश्रमणस्य अन्तिके धम्मं श्रुत्वा हृष्ट यावत् उत्थया  
यावदेवमवादीत-एवं खलु अहं भदन्त ! जितशत्रुणा राज्ञा प्रदेशिने राज्ञे

परिक्लिप्ते पायचारविहारेण महया पुरिसवगुरापरिक्लिप्ते रायमगमोगाढाओ  
आवासाओ निगच्छइ) स्नान किया यावत् बहुमूर्खवेश एवं अल्पभावाले  
आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत किया, पश्चात् छत्रधारी द्वारा ताने  
गये एवं कोरंटपुष्पों की माला से विभूषित ऐसे छत्र से युक्त हुआ वह  
चित्र सारथि विशाल भटों के विस्तृत समूह से युक्त होकर उस राजमार्ग  
स्थित आवास से पैदल ही निकला साथ में विशाल जनमेदिनी भी थी.  
(सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निगच्छइ) इन सब से घिरा वह चित्र  
सारथि श्रावस्ती नगरीके बीचों बीच मार्ग से होकर चला (जेणेव कोट्टए  
चेइए जेणेव केशिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) चलते-चलते वह वहां पहुंचा जहां  
कोष्ठक चैत्य और उसमें भी जहां केशिकुमारश्रमण थे (केशिकुमार-  
समणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठुट्ठ जाव उट्ठाए एवं वयासी  
वहां पहुंचकर उसने केशिकुमार श्रमण से धर्मका उपदेश सुना और उसे  
हृदय में धारण किया सुनकर और हृदय में धारण कर वह आनंद से  
प्रफुल्लित बन गया, और संतुष्ट चित्त हो गया यावत् उसका हृदय प्रमोद से

भडचडगरविदपरिक्लिप्ते पायचारविहारेण महया पुरिस वगुरायपरिक्लिप्ते  
रायमगमोगाढाओ आवासाओ निगच्छइ) स्नान कर्तुं यावत् अहु किंमतवाणां अने  
अल्पभारवाणां आभूषणो वडे तेणु पोताना शरीरने अलंकृत कर्तुं. त्थारपछी कोरंट  
पुष्प वडे शोभतुं छत्र छत्रधारीओ वडे तेना उपर ताणुवामां आवुं. आ प्रमाणे ते  
चित्र सारथि विशाल लटोना समुदायथी परिवेष्टित थयने ते राजमार्गपर स्थित  
आवास स्थानथी पगपाणां ज रवाना थयो. तेनी साथे विशाल मानवसमूह धणु डतो.  
(सावत्थीए नयरीए मज्झं मज्झेणं निगच्छइ) आ सवत्थी वीटणाथेवो ते  
सारथि श्रावस्ती नगरीना मध्यमार्ग पर थयने नीकय्यो. (जेणेव कोट्टए चेइए  
जेणेव केशिकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ) नीकर्णाने ते जयां कोष्ठक चैत्य  
डतुं अने. तेमां पणु जयां केशिकुमार श्रमणु डता त्यां पडोय्यो (केशिकुमार-  
समणस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठुट्ठ जाव उट्ठाए जाव एवं वयासी)  
त्यां पडोय्योने तेणु केशिकुमार श्रमणु पासेथी धर्मोपदेश सांलय्यो अने तेने हृदयमां  
धारणु कर्यो. धर्मोपदेश सांलय्योने अने हृदयमां धारणु करीने ते आनंदवित्तार थय  
गयो अने संतुष्ट चित्तवाणो थय गयो. यावत् तेनु हृदय प्रसन्नताथी उल्लास गयं

इदं महार्थं यावत् उपनय इति कृत्वा विसर्जितः तद् गच्छामि खलु अहं भदन्त ! श्वेतविकां नगरीम् । प्रासादीया खलु भदन्त ! श्वेतविका नगरी एवं दर्शनीया खलु भदन्त ! श्वेतविका नगरी, अभिरूपा खलु भदन्त ! श्वेतविका नगरी, प्रतिरूपा खलु भदन्त ! श्वेतविका नगरी, समवसरत खलु भदन्त ! यूयं श्वेतविकां नगरीम् ॥मू० ११४॥

टीका—‘तएण’ से’ इत्यादि—

ततः खलु जितशत्रू राजा अग्न्यदा कदाचित् महार्थं यावत्—बाव-  
त्पदेन ‘महार्थं’ ‘महाहं’ विपुलं राजार्हम्’ इति सम्प्रहृते अर्थस्त्वेतां पूर्ववद्

મત્ત હોકર ઉછલને લગા યાવત્ ત્વહ સ્વતઃ ઊઠા ઔર ઊઠકર યાવત્ ડસને  
હસ પ્રકાર કહા—(અવં સ્વલુ અહં મંતે ! જિયસત્તુણા પપસિસ્સ રન્નો ઇમં  
મહર્થં જાવ ડવણેહિ તિ કદ્દુ વિસજ્જિણ તં ગચ્છામિ ણં અહં મંતે ! સેયં-  
વિયં નયરિં) હે મદન્ત ! મુદ્ધો જિતશત્રુ રાજાને ‘પ્રદેશી રાજા કે પાસ હે  
ચિત્ર ! તુમ હસ મહાપ્રયોજન સાધક યાવત્ પ્રાભૂત કો લે જાઓ’ એસા  
કહ કર વિર્જિત કિયા હૈ સો હે મદન્ત ! મૈં શ્વેતાંવિકા નગરી કો જા  
રહા હૂં ! (પાસાઈયા ણં મંતે ! સેયંવિયા નયરી, એવં દરિસણિજ્જાણં મંતે !  
સેયંવિયા નયરી, અભિરૂવાણં મંતે ! સેયંવિયા નયરી, પહિરૂવાણં મંતે !  
સેયંવિયા નયરી, સમોસરહ ણં મંતે ! તુબ્બે સેયં વિયં નયરિં) હે મદન્ત ! શ્વેતાંવિકા  
નગરી પ્રાસાદીયા હૈ—હે મદન્ત ! શ્વેતાંવિકા નગરી દર્શનીયા હૈ, હે મદન્ત !  
શ્વેતાંવિકા નગરી અભિરૂપ હૈ, હે મદન્ત ! શ્વેતાંવિકા નગરી પ્રતિરૂપા હૈ  
અતઃ હે મદન્ત ! આપ ડસ શ્વેતાંવિકા નગરી મૈં પધારેં !

યાવત્ તે જાતે ઉભો થયો અને ઉભો થઈને યાવત્ તેણે આ પ્રમાણે કહ્યું—(અવં સ્વલુ  
અહં મંતે ! જિયસત્તુણા પપસિસ્સ રન્નો ઇમં મહર્થં જાવ ડવણેહિ તિ કદ્દુ  
વિસજ્જિણ તં ગચ્છામિ ણં અહં મંતે ! સેયંવિયં નયરિં) હે ભદંત ! મને જિતશત્રુ  
રાજાએ પ્રદેશી રાજાની પાઘે આમ કહીને જવા આજ્ઞા કરી છે કે હે ચિત્ર તમે આ  
મહાપ્રયોજન સાધક યાવત્ પ્રાભૂતને પ્રદેશીરાજા પાસે લઈ જાવો તો હે ભદંત !  
હું શ્વેતાંવિકા નગરી તરફ જઈ રહ્યો છું. (પાસાઈયા ણં મંતે ! સેયંવિયા નયરી  
એવં દરિસણિજ્જા ણં મંતે ! સેયંવિયા નયરી, અભિરૂવાણં મંતે ! સેયંવિયા  
નગરી, પહિરૂવાણં મંતે ! સેયંવિયા નયરી, સમોસરહ ણં મંતે ! તુબ્બે  
સેયંવિયં નયરિં) હે ભદંત ! શ્વેતાંવિકા નગરી અભિરૂપા છે, હે ભદંત ! શ્વેતા-  
વિકા નગરી પ્રતિરૂપા છે. માટે હે ભદંત ! તમે શ્વેતાંવિકા નગરીમાં પધારો.

बोध्य इति, एतादृशं सज्जयति=कल्पयति, सज्जयित्वा चित्रं सारथिं शब्द-  
यति, शब्दयित्वा एव=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत=उक्तवान्-त्वं खलु हे  
चित्र ! श्वेतविकां नगरीं गच्छ, प्रदेशिनो राज्ञः समीपे इदं महार्थं यावत्  
प्राभृतम् उपनय=प्रापय, मम=मत्कर्तृकं पादग्रहणं=प्रणामं यथा भणितं=यथो-  
क्तम्-अवितथम्=यथार्थम् असंदिग्धम्=सुस्पष्टं वचनं च विज्ञापय=निवेदय,  
इति कृत्वा=इत्युक्त्वा विसर्जितः । ततः खलु स चित्रः सारथिः जितशत्रुणा  
राज्ञा विसर्जितः=प्रदेशिराजसमीपे गन्तुम् आज्ञप्तः सन् महार्थं यावत्=महा-  
र्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राभृतं गृह्णाति जितशत्रो राज्ञः अन्तिकात्=समीपात्  
प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य श्रावस्त्या नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छति,  
निर्गत्य यत्रैव राजमार्गमवगाढः=राजमार्गस्थिता वासः=प्रासादः तत्रैव उपा-  
गच्छति, तत् महार्थं यावत्=महार्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राभृतं स्थापयति,  
स्थापयित्वा स्नातो यावच्छरीरः-‘यावच्छरीर’-पदेन ‘कृतबलिकर्मा कृतकौतुक-  
मङ्गलप्रायश्चित्तः अल्पमहार्घाभरणालङ्कृतशरीरः’ इति संगृह्यते, अर्थस्त्वेषां  
पूर्ववद् बोध्यः, तथा-सकोरुष्टमाल्यदाम्ना छत्रेण ध्रियमाणेन युक्तः महा-  
भटचटकरवृन्दपरिक्षिप्तो महापुरुषवागुरापरिक्षिप्तश्च सन् राजमार्गमवगाढात्  
आवासात् निर्गच्छति । ‘सकोरुष्ट’-इत्यादि-पदानामर्थः पूर्ववद् बोध्यः ।  
ततः श्रावस्त्या नगर्या मध्यमध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य यत्रैव कोष्ठकं चैत्यं

टीकार्थः--इस सूत्र का मूलार्थ के हो अनुरूप है, -नवरं-‘महत्थं जाव पाहुड’ में जो यावत् पद आया है उससे ‘महग्घं, महार्हं, विपुलं, राजोर्हं’ इन पदों का संग्रह हुआ है। इन पदों का अर्थ यथास्थान लिखा जा चुका है--अतः वैसा ही समझना चाहिये. ‘ह्राए जाव सरीरे’ में जो यावत् पद आया है--उससे ‘कृतबलिकर्मा, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः अल्पमहार्घाभरणालङ्कृत’ इन पूर्वोक्त पदों का संग्रह हुआ है. इनका अर्थ पहिले के जैसा ही जानना चाहिये, हट्ट जाव’ में जो यावत् पद आया है उससे ‘तुष्टचित्तानन्दितः, प्रीतिमनाः, परमसौ-

टीकार्थः--आ सूत्रेण टीकार्थं प्रमाणे ७ छ. “नवरं महत्थं जाव पाहुड” मां ७ यावत् पद छ. तेथी ‘महग्घं ‘महार्हं, विपुलं राजोर्हं” आ पदोने संग्रह थये छ. आ पदोने अर्थ यथास्थाने स्पष्ट करवा मां आव्यो छ. ‘ह्राए जाव सरीरे’ मां ७ यावत् पद तेथी ‘कृतबलिकर्मा, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः अल्पमहार्घाभरणालङ्कृत’ आ पदोने संग्रह थये छ. आ पदोने अर्थ पडेलानी जेम ७ समज्यो जेधये. “हट्ट जाव’ मां ७ यावत् पद छ तेथी “तुष्टचित्तानन्दितः,

યત્રૈવ કેશીકુમારશ્રમણસ્તત્રૈવ ઉપાગચ્છતિ, કેશિકુમારશ્રમણસ્ય અન્તિકે  
 =સમીપે ધર્મં શ્રુત્વા=સામાન્યત આકર્ષ્યં. નિશમ્ય=વિશેષતો હ્યવધાય હૃષ્ટઃ  
 યાવત્-હૃષ્ટપૃષ્ટિચિત્તાનન્દિતઃ પ્રીતિમનાઃ પરમસૌમનસ્યિતો-હર્ષવશવિસર્પદ્હૃદયઃ અર્થઃ  
 સ્ત્વેષાં પૂર્વવદ્ ચોધ્યઃ, ઉત્થયા=ઉત્થાનશક્તયા યાવત્-યાવત્પદેન-‘ઉત્તિષ્ઠતિ, ઉત્થાય  
 કેશિનં કુમારશ્રમણં ત્રિકૃત્વ આદક્ષિણપ્રદક્ષિણં કરોતિ, ચન્દતે નમસ્યતિ, વન્દિત્વા  
 નમસ્યિત્વા’-इति संग्रहाख्यम्, एषं=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्=उक्तवान्-  
 ‘एवं खलु अहं भदन्त ! जितशत्रुणा राज्ञा’ ‘प्रदेशिनो राज्ञः समीपे इदं  
 महार्थं यावत्=महार्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राभृतम् उपनय’ इति कृत्वा=  
 इत्युत्तवा विसर्जितः । तत्=तस्मात् कारणात् खलु भदन्त ! गच्छाम्यहं  
 श्वेतविकां नगरीम् । हे भदन्त ! श्वेतविका नगरी खलु प्रासादीया=दर्शक-  
 जनानां मनःप्रमोदजनिकाऽस्ति ! एवम्=तथा हे भदन्त ! श्वेतविका नगरी  
 खलु दर्शनीया=प्रेक्षणीयाऽस्ति । हे भदन्त ! श्वेतविका नगरी खलु अभि-  
 रूपा=सर्वकालरमणीयाऽस्ति । हे भदन्त ! श्वेतविका नगरी खलु प्रति-  
 रूपा=सर्वोत्तमाऽस्ति । अतो हे भदन्त ! यूयं श्वेतविकां नगरीं समवसरत=  
 आगच्छत-इति ॥ सू० ११४ ॥

મનસ્યિતો, હર્ષવશવિસર્પદ્હૃદયઃ’ इन पदों का संग्रह हुआ है. इनका अर्थ  
 पहिले जैसा ही जानना चाहिये, ‘उट्टाए जाव’ में आगत यावत्पद से उत्ति-  
 ष्ठति, उत्थाय केशिनं कुमारश्रमणं त्रिकृत्व आदक्षिणप्रदक्षिणं-करोति,  
 चन्दते, नमस्यति, वन्दित्वा, नमस्यित्वा’ इस पाठ का संग्रह हुआ है।  
 दर्शकजनों के मन में प्रमोदजनक है यह प्रासादीय शब्द का अर्थ है।  
 देखने योग्य है, यह दर्शनीय शब्द का अर्थ है-सर्वकाल रमणीय है वह  
 अभिरूप शब्द का अर्थ है-सर्वोत्तम है यह प्रतिरूप शब्द का अर्थ है। सू, ११४।

પ્રીતિમનાઃ, પરમસૌમનસ્યિતો, હર્ષવશ વિસર્પદ્હૃદયઃ’ આ પદોનો સંગ્રહ  
 થયો છે. આ પદોનો અર્થ પહેલાંની જેમજ સમજવો જોઈએ. ‘ઉટ્ટાએ જાવ’ માં  
 જે યાવત્ પદ આવેલું છે તેથી “ઉત્તિષ્ઠતિ, ઉત્થાય કેશિનં કુમારશ્રમણં ત્રિકૃત્વ  
 આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણં કરોતિ ચન્દતે નમસ્યતિ, વન્દિત્વા, નમસ્યિત્વા’ આ પાઠનો  
 સંગ્રહ થયો છે. દર્શકો માટે જે પ્રમોદજનક છે-એવો પ્રાસાદીય શબ્દનો અર્થ થાય છે.  
 દર્શનીય શબ્દનો અર્થ છે. જેવા યોગ્ય. અભિરૂપ શબ્દનો અર્થ થાય છે જે સર્વ-  
 કાળ રમણીય છે તે પ્રતિરૂપ શબ્દનો અર્થ સર્વોત્તમ થાય છે. ॥સૂ૦ ૧૧૪॥



मूलम्—तएणं से केसी कुमारसमणे चित्तेणं सारहिणा एवं  
 वुत्ते समाणे चित्तस्स सारहिस्स एयमट्ठं णो आढाइ णो परिजाणाइ  
 तुसिणीए संचिट्ठइ । तएण से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं दो-  
 च्चंपि तच्चंपि एवं वयासी—एवं खलु अहं भंते ! जियसत्तुणा रण्णा  
 पएसिस्स रण्णो इमं महत्थ जाव विसज्जिए, तं चेव जाव समो-  
 सरह णं भंते ! तुब्भे सेयंवियं णयरि । तएणं से केसीकुमारसमणे  
 चित्तेण सारहिणा दोच्चंपि तच्चंपि एवं वुत्ते समाणे चित्तं सारहि  
 एव वयासी—चित्ता । से जहानामए वणसंडए सिया किण्हे किण्हो  
 भासे जाव पडिख्वे । से णूणं चित्ता ! से वणसंडे बहूणं दुपयच-  
 उप्पयमियपसुपक्खीसरीसिवाणं अभिगमणिज्जे ? हता ! अभिग-  
 मणिज्ज । तंसि च णं चित्ता ! वणसंडंसि बह्वे भिल्लूगा नाम  
 पावसउणा परिवसत्ति, जेणं तेसिं बहूणं दुपयचउप्पयमियपसु-  
 पक्खीसरीसिवाणं ठियाणं चेव मंससोणियं आहारैति ! से णूणं  
 चित्ता ! से वणसंडे तेसि णं बहूणं दुपय जाव सरीसिवाणं अभि-  
 गमणिज्जे ? णो इणट्ठे समट्ठे ! कम्हा ? भंते ! सोवसग्गे । एवामेव  
 चित्ता ! तुज्झंपि सेयंवियाए णयरीए पएसी नामं राया परिवसइ,  
 अहम्मिए जाव णो सम्म करभरवित्ति पवत्तइ । तं कहंणं अहं  
 चित्ता ! सेयंवियाए नयरीए समोसरिस्सामि ? ॥सू० ११५॥

छाया—ततःखलु स केशीकुमारश्रमणः चित्रेण सारथिना एवमुक्तः  
 सन् चित्रस्य सारथेरेतमर्थं नो आद्रियते नो परिजानाति, तूष्णीकः सन्तिष्ठते ।  
 ततःखलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणं द्वितीयमपि तृतीयमपि



एवमवादीत्-एवं खलु अहं भदन्त ! जितशत्रुणा राजा प्रदेशिनो रात्र-  
इदं महार्थं यावद् विसर्जितः, तदेव यावत् समवसरत खलु भदन्त ! यूयं श्वेत-  
विकां नगरीम् । ततः खलु केशीकुमारश्रमणः चित्रेण सारथिना द्वितीय-

‘तएणं से केशी कुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(तएणं) इसके बाद (से केशीकुमारसमणे) उन केशिकुमार  
श्रमणसे जब चित्र सारथी ने ऐसा कहा—तव (चित्तस्स सारहिस्स) चित्र  
सारथी का (एयमट्ठं णो आढाह, णो परिजाणाह, तुसिणीए संचिट्ठह) इस  
अर्थको आदर नहीं दिया, उसे विचार का विषय नहीं बनाया. किन्तु  
चुपचाप ही रहे (तएणं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं दोच्चं पि तच्चं पि  
एवं वयासी) इसके बाद चित्र सारथीने पुनःदुबारा भी और तिबारा भी  
उन केशिकुमारश्रमण से ऐसा ही कहा कि (एवं खलु अहं भन्ते ! जिय-  
सत्तुणा रण्णा पयेसिस्स रणो इमं महत्थं जाव विसज्जिए तं चेवं जाव  
समोसरह णं भन्ते ! तुब्भे सेयंविं नयरिं) हे भदन्त ! जितशत्रु राजा  
के द्वारा मैं ऐसा कहा हूँ कि हे चित्र ! तुम इस महार्थादि विशेष-  
णों वाले प्राभृत (भेट) को लेकर प्रदेशीराजा के पास जाओ सो मैं वहाँ जा  
रहा हूँ—वह श्वेतांगिका नगरी दर्शनीय आदि विशेषणों वाली है अतः वहाँ  
पधारे (तएणं से केशीकुमारसमणे चित्तेण सारहिणा दोच्चं पि तच्चं पि एवं

‘त एणं से केशीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थः—(त एणं) तब पक्षी (से केशीकुमारसमणे) ते केशिकुमार  
श्रमणने न्यारे चित्रसारथीओ आ प्रमाणे कहुं त्यारे (चित्तस्स सारहिस्स) चित्र-  
सारथिना (एयमट्ठं णो आढाह, णो परिजाणाह, तुसिणीए संचिट्ठह) आ अर्थने  
आदर आयेओ नहि. तेना कथन पर डोह पणु जतनेओ विचार कर्थो नहि, तेओ आ  
पधुं सांखणीने भौन न रह्या. (तएणं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं  
दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी) त्यार आह चित्र सारथीओ भील वणत अने  
भील वणत पणु केशिकुमार श्रमणने आ प्रमाणे न कहुं के (एवं खलु अहं भन्ते !  
जियसत्तुणा रण्णा पयेसिस्स रणो इमं महत्थं जाव विसज्जिए तं चेवं जाव  
समोसरह णं भन्ते ! तुब्भे सेयंविं नयरिं) हे भदन्त ! जितशत्रु  
राजने भने आ प्रमाणे कहुं छे के हे चित्र ! तमे आ महार्थादि विशेषणोवाणी  
लेटने लधने प्रदेशी राजनी पासो जवो. जेथी हुं त्यां नछ रह्योछुं. ते श्वेतांगिको  
नगरी दर्शनीय वगेरे विशेषणोवाणी छे तेथी तमे पणु त्यां पधारे. (त एणं से  
केसिकुमारसमणे चित्तेण सारहिणा दोच्चं पि तच्चं पि एवं वुत्ते समाणे

मपि तृतीयमपि एवमुक्तः सन् चित्रं सारथिम् एवमवादीत्—चित्र ! स यथा—  
नामको वनषण्डः स्यात् कृष्णः कृष्णावभासो यावत्प्रतिरूपः । अथ नूनं चित्र !  
स वनषण्डो बहूनां द्विपदचतुष्पदमृगपशुपक्षिसरीसृपाणाम् अभिगमनीयः ?  
हन्त ! अभिगमनीयः । तस्मिंश्च खलु चित्र ! वनषण्डे बहवो भिल्लका नाम  
पापशाकुनिकाः परिवसन्ति । ये खलु बहूनां द्विपदचतुष्पदमृगपशुपक्षिसरी  
सृपाणां स्थितानामेव मांसशोणितम् आहारयन्ति । अथ नूनं चित्र ! स

बुद्धो समाणे चित्तं सारहिं एव वयासी) तब इस प्रकार दुबारा तिवारा भी चित्र  
सारथी के द्वारा विनन्ति किये जानेपर केशिकुमार श्रमणने उन चित्र सारथी से  
ऐसा कहा (चित्ता ! से जहानामए वणसंडए सिया किण्हे किण्होभासे जाव  
पडिरूवे) हे चित्र ! जैसे कोई एक वनषंड हो और वह कृष्ण-कृष्ण वर्णवाला  
हो, तथा कृष्ण जैसा दिखता हो (से णूणं चित्ता से वणसंडे बहूणं दुप-  
यचउप्पयमियपसुपवस्वीसरीसिवाणं अभिगमणिज्जे) तो हे चित्तो ! कहो वह  
अनेक द्विपद, चतुष्पद, मृग, पशु पक्षी और सरीसृप सर्प इन सबके गमन के योग  
होता है न ? (हन्ता अभिगमणिज्जे) हां भदन्त ! वह इनके गमन के  
योग्य होता है. (तस्मिं च णं चित्ता वणसंडसि बहवे भिल्लगा पावसउणा  
परिवसन्ति) यदि उस वनखंड में हे चित्र ! अनेक पापिष्ठ भील लोग जो  
कि पारधी होते हैं रहते हैं (जे णं तेसिं बहूणं दुपयचउप्पयमियप-  
सुपक्खिसरीसिवाणं ठियाणं चेव मंससोणियं आहारन्ति) जो कि बहां रहे हुए  
उन बहुत से द्विपद, चतुष्पद, मृग, पशु, पक्षी और सरीसृपों के मांस शोणित

चित्तं सारहिं एव वयासी) त्वारे ते प्रभाणु भील वणत अने त्रील वणत  
छेदी चित्रसारथिनी वाता सांलणीने तेने आ प्रभाणु छहुं (चित्ता ! से जहानामए  
वणसंडए सिया कण्हे किण्होभासे जाव पडिरूवे) हे चित्र ! नेम डोछ वन-  
षंड होय अने ते कृष्णवर्णवाणो होय, तेमज कृष्ण जेवो लागतो होय (से णूणं  
चित्ता से वणसंडे बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपवस्वीसरीसिवाणं अभि-  
गमणिज्जे) तो हे चित्र ! छेछे ते वन घण्टां द्विपदो, अतुष्पदो, मृगो, पशुओ  
पक्षीओ अने सरीसृपो आ गंधाना भाटे गमन करवा योग्य होय छे नहि ?

अभिगमणिज्जे) हां लहन्त ! ते तेमना भाटे गमन योग्य गण्ठाय छि. (तस्मिं च  
णं चित्ता वणसंडसि बहवे भिल्लगा पावसउणा परिवसन्ति) अने ते वनषंडमां  
हे चित्र ! ने घण्टा पापिष्ठ शिकारी लीदो रहेता होय (जे णं तेसिं बहूणं दुपय  
चउप्पयमियपसुपक्खिसरीसिवाणं ठियाणं चेव मंससोणियं आहारन्ति)  
अने तेओ त्यां रहेनारा ते घण्टा द्विपदो, अतुष्पदो, मृगो पशुओ अने सरीसृपोना

वनपण्डस्तेषां खलु बहूनां द्विपद यावत्-सरोमृषाणां अभिगमनीयः ? नो  
अयमर्थः समर्थः । कस्मात् ? भदन्त ! सोपमर्गः ? एवमेव चित्र ! युष्मा-  
कस्यपि श्वेतविकायां नगर्यां प्रदेशी नाम राजा परिव्रजति, अधार्मिको  
यावत्, नो सम्यक्करभरवृत्तिं प्रवर्त्तयति । तत् कथं खलु अहं चित्र !  
श्वेतविकायां नगर्यां समवसरिष्यामि ॥ सू० ११५ ॥

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि—

ततः खलु म केशीकुमारश्रमणः चित्रेण सारथिना एवम्=उक्त-  
प्रकारेण उक्तः सन् चित्रस्य सारथेः एतमर्थं=‘यद्यं श्वेतविकायां नगर्यां

का आहार करते हों, क्या ऐसी स्थिति में (से णूणं चित्ता ! से वण-  
संढे तेसिं बहूणं दुपय जाव सरिसिवाणं अभिगमणिज्जे ? हे चित्तो ! वह  
वनपण्ड उन अनेक द्विपद यावत्-सरोमृषों के लिये अभिगमनीय हो सकता  
है ? (णो इणद्धे समद्धे) हे भदन्त ! ऐसी स्थिति में वह उनके लिये अभि-  
गमनीय नहीं हो सकता है। (कम्हा) हे चित्र ! वह उनके लिये अभिग-  
मनीय-प्रवेश के योग्य-क्यों नहीं हो सकता है ? (पोसग्गे) क्यों कि हे  
भदन्त ! वह वनपण्ड विघ्नसहित है। (एवामेव चित्ता ! तुज्झपि सेयं वियाए  
णयरीये पएसी नामं राया परिवसइ, अहम्मि ए जाव णो सम्मं करभरवृत्तिं  
प्रवत्तइ--तं कहं चित्ता सेयं वियाए नयरीए समोसरिस्सामि) इसी तरह से  
हे चित्र ! तुम्हारे लिये श्वेतांगिका नगरी में प्रदेशी राजा रहता है वह  
अधार्मिक है यावत् प्रजाजनों से कर-टेकसलेकर भी उनका अच्छी तरह से पालन  
पोषण नहीं करता है। तो हे चित्र ! उस श्वेतांगिका नगरी में हम लोग कैसे आवें

मांस अने शोणितनो आहार करता होय तो शुं ओवी परिस्थितिमां (सें णूणं  
चित्ता ! से वणसंढे तेसिं बहूणं दुपय जाव सरिसिवाणं अभिगमणिज्जे ?)  
हे चित्र ! ते वनपण्ड ते धणुं द्विपदो यावत् सरिस्सुपो भाटे अलिगमनीय अर्थात्  
विचरण करवा योग्य-कड़ी शक्य ? (णो इणद्धे समद्धे) हे भदन्त ! ओवी स्थिति-  
मां ते तेमना भाटे अलिगमनीय थछं थके तेम नथी. (कम्हा) हे चित्र ! ते तेमना  
भाटे अलिगमनीय-विचरण करवा योग्य-केम नथी ? (सोवसग्गे) केमके हे भदन्त !  
ते वनपण्ड विघ्न सहित छे. (एवामेव चित्ता ! तुज्झपि सेयं वियाए  
णयरीए पएसी नामं राया परिवसइ, अहम्मि ए जाव णो सम्मं करभरवृत्तिं प्रवत्तइ  
तं कहं णं अहं चित्ता सेयं वियाए नयरीए समोसरिस्सामि) आ प्रमाणे  
न हे चित्र ! तमारे भाटे श्वेतांगिका नगरीमां प्रदेशीराज रह छे. ते अधार्मिक  
छे यावत् प्रजा जायेथी कर-टेकस लेहने पल्लु तेमनुं पालन-रक्षण सारी रीते करतो  
नथी. तो ओवी स्थितिमां हुं श्वेतांगिका नगरीमां केवी रीते नछं थकुं छुं ?

समवसरत'-इत्थं रूपम् अर्थम् नो आद्रियते=नो आदरविषयत्वेन हृदिकरोति.  
अतएव--नो परिजानाति=विचारविषयत्वेन एतमर्थं न स्वीकरोति, तत  
एव तूष्णीकः=अवलम्बितमौनभावः सन् सन्तिष्ठते। ततः 'खलु स चित्रः  
सारथिः केशिकुमारश्रमणं द्वितीयमपि तृतीयमपि द्वित्रिवारम् एवम् अवादीत्  
-एवं खलु अहं भदन्त ! जितशृणा राज्ञा-इत्यादि-समवसरत खलु भदन्त !  
युयं श्वेतचिकी नगरीम् इत्यन्तम् । वाक्यं पूर्वसूत्रे गतम्-अभ्यर्थस्तत एव  
बोध्यः-इति । ततः खलु केशीकुमारश्रमणः चित्रेण सारथिना द्वितीय-  
मपि तृतीयमपि=द्विकृत्वोऽपि त्रिकृत्वोऽपि एवमुक्तः सन् चित्रं सारथिम्-  
एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्=उक्तवान्-स यथानामको वनपण्डः स्यात्,  
कृष्णः=कृष्णवर्णः कृष्णावभासः-कृष्ण इव अवभासते न तु वस्तुतः कृष्णः  
एवं । यावत्-यावत्पदेन-नीलो नीलावभासो हरितो हरितावभासः शीतः  
शीतावभासः स्निग्धः स्निग्धावभासः तीव्रः तीव्रावभासः कृष्णः कृष्णच्छायो  
नीलो नीलच्छायो हरितो हरितच्छायः शीतः शीतच्छायः स्निग्धः स्निग्धच्छायः  
तीव्रः तीव्रच्छायः घनकटितकटच्छायो रम्यो महामेघनिकुरम्बभूतः प्रासादीयो  
दर्शनीयः अभिरूपः' इति संग्राह्यम् । तथा-प्रतिरूपः । अर्थस्त्वेवामौपपातिक-  
सूत्रस्यास्मत्कृतायां पोयूपवर्षिणीटीकायामवलोकनीयः । अथ नूनं चित्रं वनपण्डो

टीकार्थं इसका इस मूलार्थ के जैसा ही है-नवरं-किण्होभासे जाव पडिरुवे'में आया हुआ यावत् पद से यहां 'नीलो, नीलावभासो, हरितो, हरितावभासः, शीतः, शीतावभासः स्निग्ध स्निग्धावभासः, तीव्रः, तीव्रावभासः, कृष्णः, कृष्णच्छायो, नीलो, नीलच्छायो, हरितो, हरितच्छायः, शीतः, शीतच्छायः, स्निग्धः स्निग्धच्छायः, तीव्रः, तीव्रच्छायः, घनकटितकटच्छायो, रम्यो, महामेघनिकुरम्बभूतः प्रासादीयो, दर्शनीयः अभिरूपः' यह पाठ संगृहीत हुआ है। इन पदों का अर्थ औपपातिकसूत्र की पोयूपवर्षिणी टीका में हमने स्पष्ट किया है अतः वहीं से जान लेना

टीकार्थः—आनो मूलार्थं प्रमाणे ७ छे. 'नवरं' 'किण्होभासे जाव पडिरुवे' मां ७ यावत् पद आवेखुं छे. तेथी अही "नीलो, नीलावभासो, हरितो, हरितावभासः, शीतः शीतावभासः, स्निग्धः, स्निग्धावभासः, तीव्रः, तीव्रावभासः, कृष्णः, कृष्णच्छायो, नीलो, नीलच्छायो, हरितो, हरितच्छायः, शीतः, शीतच्छायः स्निग्धः स्निग्धच्छायः, तीव्रः तीव्रच्छायः, घनकटितकटच्छायो, रम्यो, महामेघनिकुरम्बभूतः प्रासादीयो, दर्शनीयः, अभिरूपः" आ पाठनो संग्रह थयो छे. आ पाठनो अर्थ अमे 'औपपातिक सूत्र'नी पोयूपवर्षिणी टीकाभां ७ थयो छे.

વહનાં દ્વિપદચતુષ્પદસૂત્રાણામ્ પશ્ચિવતીઠાણામ્ દ્વિપદાયઃ પાઞ્ચ્યાત્પાનાઃ, તેવામ્ અભિગમનીયઃ=ગન્તું યોગ્યો ભવેત્?, इत्थं કેશિકુમારશ્રમણસ્ય વચનં શ્રુત્વા ચિત્રઃ પ્રાહ-હન્ત ! અભિગમનીયઃ=ગન્તું યોગ્યો ભવેત્ત્વ વનપણ્ડે इति પુનઃ કેશિકુમારશ્રમણઃ પૂછતિ-હે ચિત્ર ! તસ્મિન્=પૂર્વોક્તે ચ ચ્વલુ વનપણ્ડે વહનો ભિલ્લકાઃ=ભિલ્લજાતીયાઃ 'નામ' इति સંભાવનાર્થા પાપનાક્રુનિકાઃ=પાપિષ્ઠાઃ વ્યાધાઃ પરિવસન્તિ, ચે ચ્વલુ તેવાં વહનાં દ્વિપદચતુષ્પદમુગપથુ-પક્ષવતીસૂત્રાણાં સ્થિતતાનામેવ માંમજોગિનં=માંગાનિ જોગિનાનિ ચ આદ્ય-રયન્તિ=સુઝજતે। અથ નૂનં ચિત્ર ! સ્વ વનપણ્ડઃ તેવાં ચ્વલુ વહનાં દ્વિપદ-યાવત્ સરીસૂત્રાણામ્ સર્પાણામ્ અભિગમનીયો ભવેન્? ચિત્રઃપ્રાહ-અયમર્થઃ=દ્વિપદાદીનાં તદ્વનપ્રવેશસ્વરૂપોઽર્થઃ નો સમર્થઃ=ન યોગ્યઃ, સ્વ વનપણ્ડસ્તેવાં પ્રવેષ્ટું ન યોગ્ય इति ભાવઃ। કેશી પૂછતિ-કસ્માત્=કસ્માત્ કારણાત્ સ વનપણ્ડઃ પ્રવેષ્ટું ન યોગ્યઃ? ચિત્રઃ પ્રાહ-હે ભદન્ત ! સ વનપણ્ડઃ=ચિદ્વનસહિતઃ। તતઃ કેશીપ્રાહ-હે ચિત્ર ! યથા સ્વ વનપણ્ડસ્તેવાં દ્વિપદાદીનાં પ્રવેષ્ટું ન યોગ્યઃ, તદ્વમેવ=અનેન પ્રકારેણેવ શ્વેતવિકા નગર્યાપિ પ્રવેષ્ટું ન યોગ્યા। તદ્વ શ્વેતવિકાયાં નગર્યાં યુત્પાદકં પ્રદેશો નામ રાતા પરિવસતિ, અધાર્મિકો યાવત્ નો સમ્યક્ કરમરવૃત્તિ પ્રવર્તયતિ। યાવત્પદેન-અધર્મિષ્ઠઃ અધર્માનુગઃ' इत्यादि पदानि संग्राह्याणि, तानि च-एकशततमसूत्रे विलोकनीयानि। अर्थोऽपि तत्रैव विलोकनीयः। तत् कथं च्चलु अहं चिन्त ! श्वेतविकायां नगर्यां सम्यक्सरित्यामि=आगमिष्यामि ? ॥ सू० ११५ ॥

મૂલમ્--તણાં સે ચિત્તે સારહી કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી કિં ણં ભંતે ! તુઘ્મં પણસિણા રન્ના કાયઘ્વં ? અરિથિ ણં ભંતે ! સેય-વિયાણ નગરીણ અન્ને વહવે ઈસરતલવર જાવ સત્થવાહપ્પભિદ્ધયો જે ણં દેવાણુપ્પિયં વંદિસ્સંતિ જાવ પઙ્ગુવાસિસ્સતિ વિઝલં અસણં પાણં

ચાદિયે, 'અહમ્મિણ જાવ' મેં આયા હુઆ યાવત્ પદસે 'અધર્મિષ્ઠઃ, અધર્માનુગઃ' इत्यादि पदों का संग्रह किया गया है। इन पदोंका अर्थ १०१ सूत्र में लिखा गया है ॥ सू० ११५ ॥

એથી જિજ્ઞાસુઓએ ત્યાંથી અર્થ જાણી લેવો, જોઈએ. "અહમ્મિણ જાવ" માં જે યાવત્ પદ છે તેથી "અધર્મિષ્ઠઃ, અધર્માનુગઃ" વગેરે પદોનો સંગ્રહ થયો છે. આ પદોનો અર્થ ૧૦૧માં સૂત્રમાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. ॥૧૧૫॥

खाइमं साइमं पडिलाभिस्सन्ति, पाडिहारिणं पीठलगसेज्जासंफ-  
थारणं उवनिमंतिस्सन्ति । तएणं से केसिकुमारसमणे चित्तं सारहिं  
एवं वयासी अविआइं चित्ता ! जाणिस्सामो ॥ सू० ११६ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिनं कुमारश्रमणमेवमवा-  
दीत्—किं खलु भदन्त ! युष्माकं प्रदेशिना राज्ञा कर्तव्यम् ? सन्ति खलु  
भदन्त ! श्वेतविकाशां नगर्याम् अन्ये बहव ईश्वरतलवर-यावत्सार्थवाहप्रभृ-  
तयः, ये खलु देवानुप्रियं वन्दिष्यन्ति नमस्सिष्यन्ति यावत् पर्युपासिष्य-  
न्ते, विपुलम् अशनं पानं खाद्यं स्वाद्यं प्रतिलम्भयिष्यन्ति, प्रतिहारिकेण पीठ-

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं एवं  
वयासी) उस चित्र सारथिने केशिकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(किं णं  
भन्ते ! तुभं पएसिणां रन्ना कायव्व) हे भदन्त ! आपको प्रदेशी राजा  
से क्या तात्पर्य है (सेयं विद्याए नयरीए अन्ने बहवे ईसरतलवर जाव सत्थवाहप-  
भिईओ जे णं देवाणुप्पियं वंदिस्सन्ति नमस्सिस्सन्ति जाव पज्जुवासिस्सन्ति,  
विउलं असणं पणं खाइमं साइमं पडिलाभिस्सन्ति) श्वेतांगिका नगरी में  
और भी बहुत से ईश्वर तलवर यावत् सार्थवाह आदि हैं जो आप देवानुप्रिय को  
बन्दना करेंगे, नमस्कार करेंगे यावत् पर्युपासना करेंगे एवं विपुल, अशन  
से पान से खादिम से और स्वादिम से आप को प्रतिलाभित करेंगे ।  
(पडिहारेणं पीठलगसेज्जासंथारणं उवनिमंतिस्सन्ति) एवं समर्पणीय

‘तए णं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) त्थार पथी (से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं एवं  
वयासी) ते चित्र सारथिणे केशिकुमार श्रमणने आ प्रमाणे कहुं के (किं णं भन्ते !  
तुभं पएसिणां रन्ना कायव्व) हे भदन्त ! आपश्रीने प्रदेशी राजा साथे शी  
निष्णत छे ? (सेयं विद्याए नयरीए अन्ने बहवे ईसरतलवरजाव सत्थवा  
हपभिईओ जे णं देवाणुप्पियं वंदिस्सन्ति नमस्सिस्सन्ति जाव पज्जुवासि-  
स्सन्ति विउलं असणं पणं खाइमं साइमं पडिलाभिस्सन्ति) श्वेतांगिका  
नगरीमां पीठ घण्टा ईश्वर, तलवर यावत् सार्थवाहो वगेरे छे के ने आप देवानु-  
प्रियने वंदन करशे नमस्कार करशे यावत् पर्युपासना करशे, अने विपुल अशनथी,  
पानथी, खादीमथी अने स्वादिमथी आपश्रीने प्रतिदाभित करशे, (पडिहारेणं पीठ-  
लगसेज्जासंथारणं उवनिमंतिस्सन्ति) अने समर्पणीय पीठ इदं शक्य



ફલકશાયાસંસ્તારકેણ ઉપનિમન્ત્રયિષ્યન્તિ । તતઃ સ્વલુ સ કેશીકુમારશ્રમણ-  
ચિત્રં સારથિઐવમવાદીત્-અપિ ચ ચિત્ર । જ્ઞાસ્યામઃ ॥ સુ. ૧૧૬ ॥

ટીકા—‘તપ્પણં સે’ इत्यादि--

ટીકા-- તતઃ સ્વલુ સ ચિત્રઃ સારથિઃ કેશિનં કુમારશ્રમણમ્ એવમ્=  
વક્ષ્યમાણમકારેણ અવાદીત્=ઉક્તવાન્-કિં સ્વલુ ભદન્ત । યુષ્માકં પ્રદેશિના રાજા  
કર્ત્તવ્યમ્=પ્રદેશિનો રાજાઃ સકાશાદ્ ભવતાં નાસ્તિ કિઞ્ચિત્ પ્રયોજનમિત્યર્થઃ॥  
હે ભદન્ત । શ્વેતવિકાર્યા નગર્યાં સ્વલુ અન્યે યદ્યવઃ ईश्वरतलवर यावत्सार्थ-  
વાદપ્રશ્રુતયઃ સન્તિ । અથ ‘યાવત્’-પદેન- ‘માઢમ્બિકકૌટુમ્બિકેભ્યશ્રેષ્ઠિ-  
સેનાપતિ-’ इति संग्राह्यम् । ये ईश्वरादयः स्वलु देवानुमियं तन्दिष्यन्ते=  
સ્તોષ્યન્તિ નમહ્યન્તિ=પ્રણતા ભવિષ્યન્તિ, યાવત્ યાવત્પદેન--‘સત્કારયિ-  
ષ્યન્તિ સન્માનયિષ્યન્તિ, કલ્યાણં મંગલં દૈવતં ચૈત્યમ્-इति संग्राह्यम् ।  
ત --સત્કારયિષ્યન્તિ અભિમુખગમનાદિના, સન્માનયિષ્યન્તિ--વસતિપ્ર-  
દાનાદિના, તથા--‘કલ્યાણં=કલ્યાણસ્વરૂપમ્, મંગલં=મંગલસ્વરૂપમ્ દૈવતમ્-

પીઠફલકશાયાસંસ્તારક ગ્રહણ કરને કે લિયે આપસે પ્રાર્થના કરેંગે । (તપ્પણં  
સે કેસીકુમારસમણે ચિત્રં સારથિં એવં વચાસી) તથા કેસીકુમારશ્રમણને ચિત્ર-  
સારથીસે ઇસ્ત પ્રકાર કહા (અવિઆઈં ચિત્તા જાણિસ્સામો) હે ચિત્ર । વિચાર કરેંગે

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. નગરં ‘તલવર જાવ સત્થવાહ’ મેં આગત યાવત્ પદસે  
યહાં ‘માઢમ્બિક-કૌટુમ્બિકેભ્યશ્રેષ્ઠિસેનાપતિ’ પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ છે ।  
‘ળમંસિસ્સંતિ જાવ પજ્જુવાસંતિ’ મેં આગત યાવત્ પદ સે ‘સત્કારયિષ્યન્તિ.  
સન્માનયિષ્યન્તિ, કલ્યાણં મંગલં દૈવતં ચૈત્યમ્’ ઇસ્ત પાઠ કા સંગ્રહ હુઆ છે ।  
અભિમુખગમનાદિ દ્વારા જો સન્માન પ્રદર્શિત કિયા જાતા છે ઉસકા નામ  
સત્કાર છે, વસતિ આદિ કે દેને સે જો ભક્તિ પ્રદર્શિત કી જાતી છે ઉસકા

સંસ્તારક ગ્રહણ કરવા આપને વિનંતી કરશે. (ત પ્પણં સે કેસીકુમારસમણે ચિત્રં  
સારથિં એવં વચાસી) ત્યારે કેશિકુમાર શ્રમણે ચિત્ર સારથિને આ પ્રમણે કહ્યું કે  
(અવિઆઈં ચિત્તા જાણિસ્સામો) હે ચિત્ર ! વિચાર કરીશ ।

ટીકાર્થ--સ્પષ્ટ જ છે. નગરં “તલવર જાવ સત્થવાહ” માં જે યાવત્ પદ  
આવેલું છે, તેથી અહીં ‘માઢમ્બિકકૌટુમ્બિકેભ્યશ્રેષ્ઠિસેનાપતિ’ પાઠનો સંગ્રહ  
થયો છે. ‘ળમંસિસ્સંતિ જાવ પજ્જુવાસિસ્સંતિ’ માં આવેલા યાવત્ પદથી ‘સત્કાર  
યિષ્યન્તિ, સન્માનયિષ્યન્તિ, કલ્યાણં મંગલં દૈવતં ચૈત્યમ્” આ પાઠનો  
સંગ્રહ થયો છે. અભિમુખ ગમન-વગેરે વડે જે સન્માન આપવામાં આવે છે તેનું  
નામ સત્કાર છે. નિવાસ માટે સ્થાન વગેરે આપીને જે ભક્તિ પ્રદર્શિત કરવામાં આવે



धर्मदेवस्वरूपम्, चैत्यं=चित्तिः=विशिष्टज्ञानं, तथा युक्तं सर्वथा विशिष्टज्ञानवन्त-  
मित्यर्थः, इति बुद्ध्या पर्युपासित्यन्ते=सेवित्यन्ते । तथा-त्रिपुलं=पञ्चुरम् अशनं-  
पानं खाद्यं खाद्यं प्रतिलम्भयित्यन्ति=प्रदास्यन्ति । तथा-प्रातिहारिकेण=पुनः  
समर्पणीयेन पीठफलकशय्यासंस्तारकेण-पीठफलकादयः प्राग्व्याख्याताः, तेषां  
समाहारस्तेन उपनिम्नत्रयित्यन्ति-प्रातिहारिकं पीठफलकशय्यासंस्तारकं च  
प्रहीतुं भवन्तं प्रार्थयित्यन्ति-इति । ततः खलु स केशीकुमारश्रमणः चित्रं सार-  
थिम् एवम्=भनेन प्रकारेण अवादीत=उक्तवान्-'अविआइ'-अपि च चित्र ।  
हास्यामः=विचारयित्वाऽन्तः इति ॥ सु० ११६ ॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही केसिकुमारसमणं वंदइ  
नमंसइ, केसिस्स कुमारसमणस्स अंतियाओ कोट्टयाओ चेइयाओ  
पडिणिक्खमइ, जेणेव सावत्थी णयरी जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे  
तेणेव उवागच्छइ, कोट्टुबियपुरिसे सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी-  
खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घटं आसरहं जुत्तामेव उवट्टवेह,  
जहा सेयंवियाए णयरीए णिग्गच्छइ तहेव जाव वसमाणे  
कुणालाजणवयस्स मज्झं मज्झेणं जेणेव केइयअच्चे जेणेव  
सेयविया णयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ,  
उज्जाणपालए सदावेइ, सदावित्ता एवं वयासी— जया णं  
देवाणुप्पिया ! पासावच्चिज्जे केसी नाम कुमारसमणे पुव्वा-  
णुपुविं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागच्छिज्जा तथा णं  
तुव्वे देवाणुप्पिया ! केसिकुमारसमणं वंदिज्जाह नमंसिज्जाह वदित्ता  
नमंसित्ता अहापडि रूवं उग्गहं अणुजाणेज्जाह, पडिहारिणं पीठ-  
फलं जाव उवनिमंतिज्जाह, एयमाणत्तियं खिप्पामेव पच्चप्पिणेज्जाह ।

नामसन्मान है. श्वेतांबिका नगरी के लोग आप कल्याणस्वरूप हैं, मंगस्वरूप हैं धर्म-  
देवस्वरूप हैं तथा चैत्य विशिष्ट ज्ञानवान् ऐसा मानकर आपकी सेवा करेंगे । सू. ११६ ।

छे तेहुं नाम सन्मान छे. श्वेतांबिका नगरीना दोडो आपश्री ते उव्याणु स्वरूप,  
मंगणस्वरूप तेमण चैत्यविशिष्ट ज्ञानवान् भानीने आपनी सेवा करेथे. ॥सू. ११६॥

तएणं ते उज्जाणपालगां चित्तेणं सारहिणा एव बुत्ता समाणा हट्ठ-  
तुट्ठ जाव हियया करयलपरिगहियं जाव एवं वयासी-तहत्ति  
अणाए विणएणं वयणं पडिसुणंति ॥ सू० ११७ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणं वन्दते नम-  
स्यति केशिनः कुमारश्रमणस्य अन्तिकात् कोष्ठकात् चैत्यात् प्रतिनिष्कामति,  
यत्रैव श्रावस्ती नगरी यत्रैव राजमार्गमवगाढः आवासस्तत्रैव उपागच्छति,  
कौटुम्बिकपुरुषान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत-क्षिपमेव भो देवानु-  
प्रियाः ! चातुर्घण्टम् अश्वरथं युक्तमेव उपस्थापयन्, यथा श्वेनविकाया-

(‘तएणं’) इसके बाद (से चित्ते सारही) उस चित्र सारथीने (केशि-  
कुमारसमणं वंदइ नमंसइ) केशीकुमार श्रमण को वन्दना की और नमस्कार  
किया (केशिस्स कुमारसमणस्स अंतियाओ कोट्टयाओ चेहयाओ पडिनिक्खमइ)  
पश्चात् मैं वह केशीकुमार श्रमण के पास से और उस कोष्ठक चैत्य से चला  
आया. (जेणेव सावत्थी जयरी जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवा-  
गच्छइ) आकर वह जहाँ श्रावस्ती नगरी थी एवं उसमें जिस तरफ राज-  
मार्ग पर स्थित आवास था वहाँ पर आया. (कोट्टुं विणपुरिसे सदावेइ) वहाँ  
आकर के उसने कौटुम्बिक-आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया (सदावित्ता एवं  
वयासी) बुलाकर उनसे ऐसा कहा- (क्षिप्पामेव भो देवानुप्पिया ! चाउघटं  
आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह) हे देवानुप्रियो ! तुम लोग शीघ्र चार घंटों  
वाले अश्वरथ को तैयार करके ले आओ, (जहा सेयंविणाए जयरीए निग्गच्छइ,

त एणं से चित्ते ! सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(त एणं) त्थार, पछी. (से चित्ते सारही) ते चित्रसारथीओ  
(केशिकुमारसमणं वंदइ नमंसइ) केशीकुमार श्रमणने वंदन तेमज्ज नमस्कार कया.  
(केशिस्स कुमारसमणस्स अंतियाओ-कोट्टयाओ चेहयाओ पडिनिक्खमइ) त्थार  
पछी. ते केशीकुमार श्रमण पासैथी अने ते कोठ्ठक चैत्यमांथी जाहार आवी गये.  
(जेणेव सावत्थी जयरी जेणेव रायमग्गमोगाढे आवासे तेणेव उवागच्छइ)  
आवीने ते ज्यां श्रावस्ती नगरी હતી अने तेमां पणु ज्यां राजमार्ग पर स्थित  
निवासस्थान હતું ત્યાં આવ્યો. (कोટ્ટુं વિણપુરિસે સદાવેઈ) ત્યાં પહોંચીને તેણે  
કોટુમ્બિક પુરુષોને-આજ્ઞાકારી પુરુષોને બોલોવ્યા (સદાવિત્તા એવં વયાસી) બોલા-  
વીને તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું (ક્ષિપ્પામેવ ભો દેવાનુપ્પિયા ! ચાઉઘટં આસરહં  
જુત્તામેવ ઉવટ્ઠવેહ) હે દેવાનુપ્રિયો ! તમે લોકો સત્થરે ચાર ઘંટાઓથી યુક્ત

नगर्या निर्गच्छति तत्रैव यावद् वसन् कुणालाजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव  
केकयाद्धं यत्रैव श्वेतांबिका नगरी यत्रैव मृगवनम् उद्यानं तत्रैव उपाग-  
गच्छति, उद्यानपालकान् शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्-यदा खलु देवा-  
नुप्रियाः । पार्श्वापत्नीयः केशीनामकुमारश्रमणः पूर्वानुपूर्व्यां चरन् ग्रामा-  
नुग्रामं द्रवन् इहो गच्छेत्, तदा खलु यूयं देवानुप्रियाः । केशिकुमारश्रमणं

तदेव जात्र वसमाने कुणाला जणवयस्स मज्झमज्झेण जेणेव केइयअद्धे  
जेणेव सेयंविद्या णयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) यहां  
से आगे चित्र सारथी जिस प्रकार श्वेतांबिका नगरी से निकल कर कुणाला  
जनपद (देश) में स्थित श्रावस्ती नगरी आया, उसी प्रकार वह श्रावस्ती नगरी  
से भी निकलकर केकयाद्धं जनपद में स्थित श्वेतांबिका नगरी में पहुंचा.  
इसलिये यहां पर पूर्वकी तरह से ही समग्र पाठ संगृहीत करना चाहिये.  
इसी बात को सूचित करने के लिये 'जहा सेयंविद्याए णयरीए णिगच्छइ'  
इत्यादि यह पाठ कहा गया है. अर्थात् वह चित्रसारथि जिस प्रकार से  
श्वेतांबिका नगरी से निकलता है, उसी प्रकार से यात्रा मार्ग में पड़ाव डालता  
हुआ वह कुणाला जनपद के मध्यमध्य से होता हुआ जहां केकयाद्धं था  
और जहां श्वेतांबिका नगरी थी और उस में भी जहां मृगवन नाम का  
उद्यान था वहां आया (उज्जाणपालए सहावेइ) वहां आकर के उसने उद्या-  
नपालों को बुलाया. (सहाविच्चा एवं वयासी) वहां आकर के उसने ऐसा  
कहा-(जया ण देवाणुप्पिया ! पासावच्चिज्जे केसी नाम कुमारसमणे पुब्बा

अर्थ तैयार करीने लावे। (जहा सेयंविद्याए णरीए णिगच्छइ, तदेव जात्र  
वसमाने कुणाला जणवयस्स मज्झमज्झेण जेणेव केइय अद्धे जेणेव  
सेयंविद्या णयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) अहीं थी ते  
चित्रसारथी पड़ेलां जेभ ते श्वेतांबिकानगरीथी नीकणीने कुणाला जनपदमां स्थित  
श्रावस्ती नगरीमां आव्यो इतो, तेमज ते श्रावस्ती नगरीथी गहार नीकणीने केकयाद्धं  
जनपदमां स्थित श्वेतांबिका नगरीमां पड़ेर्यो, अहीं ते प्रमाणे ज वणुंन समण  
लेवुं जेधये. ये वातने अनाववा भाटे ज 'जहा सेयंविद्याए णयरीए णिगच्छइ'  
वगेरे पाठने उल्लेख करवामां आव्यो छि. ओटले के ते चित्र सारथि जेभ श्वेतां-  
ंबिका नगरीथी नीकणे छि, ते प्रमाणे ज यावत मुकाम करतो ते कुणाला जनपदना  
ओकदम मध्यमां पसार थधने जयां केकयाद्धंमां श्वेतांबिका नगरी इती अने तेमां  
पणु जयां मृगवन नामे उद्यान इतुं त्यां आव्यो. (उज्जाणपालए सहावेइ) त्यां  
आवीने तेले उद्यान पालने पोलाव्यो. (सहाविच्चा एवं वयासी) पोलावीने आ-  
प्रमाणे कहुं. (जया ण देवाणुप्पिया ! पासावच्चिज्जे केसी नाम कुमारसमणे

वन्द्यं नमस्यत, वन्दित्वा नमस्यत्वा यथाप्रतिरूपम् अवग्रहम् अनुज्ञापयत, मातिहारिकेण पीठ-फलक-यावत् उपनिमन्त्रयत, एतामोक्तिकां क्षिप्रमेव प्रत्यर्पयत-! ततः खलु ते उद्यानपालकाः चित्रेण सारथिना एवमुक्ताः सन्तो हृष्टतुष्ट यावद्देयाः करतलपरिगृहीतं यावत् एवमवादीत-तथेति, आज्ञाया विनयेन वचनं प्रतिशृण्वन्ति ॥ सू० ११७ ॥

पुण्ड्रि चरमाणे, गामाणुगामं दुइज्जमाणे इहमागच्छिज्जा. तयाणं तुब्भे देवाणुप्पिया! केसिकुमारसमणं वंदिज्जह) हे देवानुप्रियो! जब पार्श्वनाथ भगवान परंपरा में विचरने वाले केशी नामके कुमारश्रमण पूर्वसाधु परम्परा के अनुसार विचरते हुए तथा एक ग्राम से दूसरे ग्राम में विहार करते हुए यहां पर पधारे, तब तुम हे देवानुप्रियो! केशिकुमार श्रमण को वन्दना करना (नमंसिज्जाह) नमस्कार करना. (वंदिता नमंसित्ता अहापडिरुव उगगहं अणुज्जाणेज्जाह) वंदना नमस्कार कर फिर तुम उन्हें साधुकल्याणुसार वसति में निवास करने के लिये आज्ञा दे देना (पाडिहारिएणं पीठफलक जाव उवनिमंतिज्जाह) और समर्पणीय पीठफलक आदि जैसा, वे चाहे वैसा तुम उन्हें देने की प्रार्थना करना. (एयमाणत्तियं खिण्णामेव पच्चप्पिणेज्जाह) बाद में मेरी इस आज्ञा को जब पीछे शीघ्र लौटाना-अर्थात् जब केशिकुमार श्रमण आ जावे-तब तुम उनके आगमनादि के वृत्तान्त की हमें शीघ्र ही खबर देना. (तएणं ते उज्जाणपालगा चित्रेण सारहिणा एव बुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयलपरिगहियं जाव एव वयासी-तहत्ति

पुव्वाणुपुण्ड्रि चरमाणे, गामाणुगामं दुइज्जमाणे इहमागच्छिज्जा, तयाणं तुब्भे देवाणुप्पिया! केसिकुमारसमणं वंदिज्जह) हे देवानुप्रियो! पार्श्वनाथ भगवाननी परंपराओं विचरणु करनारा केशी नामे श्रमणु पूर्वसाधु परंपरा सुज्जण विचरणु करतां करतां तेभञ्ज ओक जाभथी गीजे जाभगां विहार करतां करतां आडी पधारे त्यारे हे देवानुप्रियो! तमे सौ केशिकुमार श्रमणुने वंदन करणे. (नमंसिज्जाह) नमस्कार करणे. (वंदिता नमंसित्ता अहापडिरुव उगगहं अणुज्जाणेज्जाह) वंदना तेभञ्ज नमस्कार करीने तमे तेभने साधु कल्याणुसार वसतीमां निवास करवानी आशा आपशे. (पाडिहारिएणं पीठफलक जाव उवनिमंतिज्जाह) अने समर्पणीय पीठफलक वगेरे जे वस्तुनी तेओ श्री भागणी करे ते वस्तु तमे तेभने नम्रणु समर्पित करणे. (एयमाणत्तियं खिण्णामेव पच्चप्पिणेज्जाह) अने ज्यारे आ गधुं थध जय त्यारे तमे भने केशिकुमार श्रमणुनी आडी पधारवानी भणर आपणे. (तएणं ते उज्जाणपालगा चित्रेण सारहिणा एव बुत्ता समाणा हट्ठतुट्ठ जाव हियया करयलपरिगहियं जाव

टीका—‘तएणं से’ इत्यादि—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्रमणं  
 वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा केशिनः कुमारश्रमणस्य अन्तिकात्  
 समीपात्, तदनुकोष्ठकाच्चैत्याच्च प्रतिनिष्कामति=निस्सरति, प्रतिनिष्काम्य  
 यत्रैव आवस्ती नगरी यत्रैव च राजमार्गमवगाढः आवासः, तत्रैव उपा-  
 गच्छति, उपागत्य कौटुम्बिकपुरुषान्=भृत्यान् शब्दयति, शब्दयित्वा एव-  
 मवादीत्—भो देवानुप्रियाः ! चातुर्वर्ण्यं=चतुर्वर्ण्यविभूषितम् अश्वरथं युक्त-  
 मेव=योजिताश्वमेव उपस्थापयत=उपस्थितं कुरुत । इतोऽग्रे यथाश्वं तविकाया  
 नगर्यां निरसृत्य चित्रः सारथिः कुणाला जनपदे आवस्त्यां नगर्यां गतः,  
 तथैव स आवस्त्या नगर्या अपि निरसृत्य केकयाद्धं जनपदे श्वेतविकायां  
 नगर्यां च गतः । अतोऽत्र पूर्ववदेव समग्रः पाठः संग्राह्यः । अमुमेवार्थमुच-  
 यितुमाह—‘यथा श्वेतविकाया नगर्यां निगच्छति, तथैव यावत् वसनकुणा-  
 लाजनपदस्य मध्यमध्येन यत्रैव केकयाद्धं यत्रैव श्वेतविका नगरी यत्रैव  
 मृगवगम् उद्यानं तत्रैव उपागच्छतीति । तत्र मृगवने उद्याने उपागत्य स  
 उद्यानपालकात् शब्दयति=आह्वयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—भो देवानु-  
 प्रियाः ! यदा खलु पार्श्वपत्नीयः=पार्श्वनाथतीर्थंकरपरम्परायां संजातः  
 केशी नाम कुमारश्रमणः पूर्वानुपूर्व्यां=पूर्वसाधुपरम्परया चरन्=विचरन्  
 ग्रामानुग्रामम्=एकस्माद् ग्रामादनन्तरस्थितं ग्रामं द्रवन्=क्रमेण गच्छन्  
 इह=श्वेतविकायां नगर्याम् आगच्छेत्=आयात्, तदा खलु यूयं देवानुप्रियाः  
 केशिकुमारश्रमणं वन्दध्वं नमस्यत वन्दित्वा नमयित्वा, यथामतिरूपं=  
 साधुकल्पानुसारम् अवग्रहं=वसतौ निवासाथमाज्ञां अनुज्ञापयत=अर्पयत,

आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेति) चित्र सारथी के द्वारा इस प्रकार कहे गये वे  
 उद्यानपाल हृष्टतुष्ट यावत् हृदय हुए और दोनों हाथ जोडकर वडे विनय  
 के साथ यावत् इस प्रकार से बोले—हे स्वामिन् ! आपकी आज्ञा हमें प्रमाण  
 है—अर्थात् आपने कहा है हम वैसा ही करेंगे इस प्रकार अपनी ओर से स्वीकृति  
 के वचन कहकर उन्होंने चित्र सारथी की आज्ञा के वचनों को स्वीकार कर लिया।

पुत्रं वयासी—तर्हात्त आणाए विणएणं वयणं पडिसुणेति) (चित्रसारथीवडे आ-  
 प्रभाणु आज्ञापित थयेला ते उद्यानपालके हृष्ट-तुष्ट यावत् हृदयवाणा थया अने  
 अन्ने हाथ जोडीने विनम्रतापूर्वक आ प्रभाणु कडेवा लाग्या के हे स्वामिन् ! आप-  
 श्रीनी आज्ञा भारा भाटे प्रभाणुइप छे. ओटवे के आपश्रीओ ने प्रभाणु आज्ञा करी  
 छे अने यथा समय तेभज आचरीशुं. आ प्रभाणु पोताना तरक्षी स्वीकृतिनां  
 वचने. कडीने तेभणु चित्रसारथिनी आज्ञाने स्वीकारी दीधी.

તથા-પ્રતિહારિકેણ=પુનઃ સમર્પણીયેન પીઠફલક યાવત્=પીઠફલકદ્વારયા-  
સંસ્તારકેણ ઉપનિવન્નયત. પ્રતિહારિકં પીઠફલકાદિકં યથા મ ગૃહ્ણીયાત્  
તથા તં કેશિકુમારશ્રમણં પ્રાર્થયતેત્યર્થઃ । એવં કૃત્વા એતામ્ આજ્ઞસિકાં  
શ્રિપમેવ પ્રત્યર્પયત=કેશિકુમારશ્રમણસ્ય આગમનાદિવૃત્તાન્તં મદ્યં શ્રિપમેવ  
સૂચયતેતિ । તતઃ સ્વલુ તે ઉદ્યાનપાલકાઃ ચિત્રેણ સારથિના એવમુક્તાઃ  
સન્તઃ હૃદ્યતુષ્ટયાવદ્દયાઃ=હૃદ્યતુષ્ટચિત્તાનન્દિતાઃ પ્રીતિમનસઃ પરમસૌમનસ્યિતાઃ  
ઠર્પવશવિસર્પદ્દયાઃ, કરતલપરિગૃહીતં યાવત્-યાવત્પદેન-‘દશનખં શિર  
આવર્ત્તં મસ્તકે અંજલિં કૃત્વા’ इति संग्राह्यम्, હૃદ્યતુષ્ટેત્યાદિપદાનાં કર-  
તલેત્યાદિપદાનાં ચાર્થઃ પૂર્વવદ્ બોધ્યઃ, એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદીત્=  
ઉક્તવાન્-તથેતિ=હે દેવાનુપ્રિયે ! યથા ગૃયમાજ્ઞાપયન્તિ તથૈવ સમાચરિષ્યામઃ  
इति । एषं स्वीकारवचनमुक्त्वा ते उद्यानपालकास्तस्य चित्रसारथेः आज्ञाया  
वचनं विनयेन प्रतिशृण्वन्ति=સ્વીકુર્વન્તિ-इति ॥ સૂ. ૧૧૭ ॥

મૂલમ્—તણં સે ચિત્તે સારહી જેણેવ સેયંવિયાં ણયરી તેણેવ  
ઉવાગચ્છઈ, સેયવિયં નયારિ મજ્ઞમજ્ઞેણં અણુપવિસઈ, જેણેવ પણ-  
સિસ્સ રણો ગિહે જેણેવ બાહિરિયા ઉવટ્ટાણસાલા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ,  
તુરગે ણિગિણહઈ, રહં ટવેઈ, રહાઓ પચ્છોરુહઈ, તં મહત્થં જાવ  
ગેણહઈ, જેણેવ પણસી રાયા તેણેવ ઉવાગચ્છઈ, પણસિ રાયં કરયલ-

ટીકાર્થ મૂલાર્થ કે અનુરૂપ હી હૈ, નવર ‘હૃદ્યતુષ્ટ જાવ હિયયા’ મેં  
જો યાવત્ પદ આયા હૈ ઉમ્મસે યહાં ‘હૃદ્યતુષ્ટચિત્તાનન્દિતાઃ, પ્રીતિ મનસઃ,  
પરમસૌમનસ્યિતાઃ, ઠર્પવશવિસર્પદ્દયાઃ’ યહ પાઠ ગૃહીત હુઆ હૈ, તથા  
‘કરતલપરિગૃહીત’ કે યાવત્પદ સે ‘દશનખં શિર આવર્ત્ત મસ્તકે અંજલિ  
કૃત્વા’ હસ પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ હૈ, હન પાઠોં કે પદોં કા પહિલે અર્થ  
કહે હુવે અર્થ કે અનુસાર હી હૈ ॥ ૧૧૭ ॥

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. ‘નવર’ ‘હૃદ્યતુષ્ટ જાવ હિયયા’  
માં જે યાવત્ પદ આવેલું છે તેથી ‘હૃદ્યતુષ્ટચિત્તાનન્દિતાઃ, પ્રીતિમનસઃ  
પરમસૌમનસ્યિતાઃ, ઠર્પવશવિસર્પદ્દયાઃ’ આ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. તેમજ  
‘કરતલપરિગૃહીત’ ના યાવત્ પદથી ‘દશનખં શિર આવર્ત્ત મસ્તકે અંજલિ  
કૃત્વા’ આ પાઠનું ગ્રહણ થયું છે. આ પાઠનો પહેલો અર્થ પહેલા જે પ્રમાણે  
સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે તે પ્રમાણે જ અહીં સમજવો જોઈએ. ॥ સૂ. ૧૧૭ ॥



जाव बच्चावेत्ता तं महत्तं जाव उद्यणैइ । तएणं से पएसी राया  
चित्तस्स सारहिस्स तं महत्तं जाव पडिच्छइ, चित्तं सारहिं सक्कारेइ  
सम्माणेइ पडविस्सजेइ । तएणं से चित्ते सारही पएसिणा रण्णा  
विसजिए समाणे हट्टुजाव हियए पएसिस्स रन्नो अंतियाओ पडि  
णिकखमइ, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, चाउग्घंटं  
आसरहं दूरुहइ, सेयंवियाए नयरीए मज्झमज्जेणं जेणेव सए गिहे  
तेणेव उवागच्छइ, तुरगे णिगिण्हइ, रहं ठवेइ, रहाओ पच्चोरुहइ,  
पहाए जाव उप्पि पासायवरणए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं वत्ती-  
सइबच्चएहिं नाडएहिं वरतरुणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिजमाणे उवगा-  
इजमाणे उषलालिजमाणे इहे सहफरिस जाव विहरइ ॥सू० ११८॥

छाया-ततः खलु सचित्रः सारथिः यत्रैव श्वेतांविका नगरी तत्रैव उपागच्छति;  
श्वेतांविकां नगरीं मध्यमध्येन अनुप्रविशति, यत्रैव प्रदेशिनः राज्ञः गृहं यत्रैव बाह्या  
उपस्थानशाला तत्रैव उपागच्छति, तुरगान् निगृह्णाति, रथं स्थापयति, रथात् प्रत्य-

‘तएणं ते चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (से चित्ते सारही जेणेव सेयंविया नयरी  
तेणेव उवागच्छइ) वह चित्र सारथि जहां श्वेतांविका नगरी थी—वहां गया  
(सेयंवियं नयरिं मज्झं मज्जेणं अणुपविसइ) वह उस नगरी में बीचों  
बीच के मार्ग से होकर प्रविष्ट हुआ (जेणेव पएसिस्स रण्णे गिहे जेणेव  
बाहिरिया उवट्ठाणशाला तेणेव उवागच्छइ) प्रविष्ट होकर वह  
वहां गया जहां कि प्रदेशी राजा का घर था और जहां  
प्रदेशी राजा की बाह्य उपस्थानशाला थी (तुरगे णिगिण्हइ) वहां पहुंच

‘त एणं ते चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(त एणं) त्थार पछी (से चित्ते सारही जेणेव सेयंविया नयरी तेणेव  
उवागच्छइ) ते चित्र सारथि न्यां श्वेतांजिअनगरी डती त्यां गये। (सेयंवियं नयरिं  
मज्झं मज्जेणं अणुपविसइ) ते ते नगरीनां मध्यमार्गथी थधने प्रविष्ट थये।  
(जेणेव पएसिस्स रण्णे गिहे जेणेव बाहिरिया उवट्ठाण शाला तेणेव उवागच्छइ)  
प्रविष्ट थधने ते त्यां गये। न्यां प्रदेशी राजघरं घर डतुं थधने न्यां प्रदेशी राजनी बाह्य



वरोहति, तद् महार्थं यावद् वृत्ताति, यत्रैव प्रदेशी राजा तत्रैव उपागच्छति, प्रदेशिनं राजानं करतल यावद् बद्ध्वापित्वा तन्महार्थं यावत् उपनयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रस्य सारथेस्तन्महार्थं यावत् प्रतीच्छति चित्रं सारथिं सत्कारयति सम्मानयति प्रतिविसर्जयति ! ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिना राज्ञा विसर्जितः सन् हृष्ट यावद् हृदयः प्रदेशिनो राज्ञः

करं उसने घोंड़ों को रोका (रहं ठवेह) और रथ को खड़ा किया । (रहाओ पचोरुहइ) फिर वह उस रथ से नीचे उतरा (तं महत्थं जाव गेण्हइ) नीचे उतर कर उसने उस महार्थ आदि विशेषणों वाले प्राभृत को हाथ में लिया (जेणेव पएसी राया तेणेव उवागच्छइ) और जहां प्रदेशी राजा था वहां गया (पएसीरायं करयल जाव बद्धावेत्ता तं महत्थं जाव उवणेइ) वहां जाकर के उसने प्रदेशी राजा को दोनों हाथों की अंजलि बनाकर एवं उसे भस्तकपर से छुमाकर नमस्कार किया और जयविजय शब्दों का उच्चारण करते हुए उसे बधाई देकर फिर उसने उसके समक्ष लाये हुए पारितोषिक-पेट अर्पण किया (तएणं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पडिच्छइ) प्रदेशी राजाने चित्र सारथी के उस महार्थ आदि विशेषणों वाले प्राभृत को अंगीकार कर लिया (चित्तं सारहिं सकारेइ, सम्माणेइ पडिविसज्जेइ) और चित्र सारथी का सत्कार किया एवं सम्मान किया, बाद में उसे विसर्जित कर दिया, (तएणं से चित्रे सारही

उपस्थान थाणा इती. (तुरगे निगिण्हइ) त्यां पडोंथीने तेणु बोडाअने उवा राभ्या. (रहं ठवेह) अने रथने थोलाअये. (रहाओ पचोरुहइ) त्थार पछी ते रथमां नीचे उतर्यो. (तं महत्थं जाव गेण्हइ) नीचे उतरने तेणु ते महार्थं वगेरे विशेषणोवाणी बेट पोताना हाथमां लीधी. (जेणेव राया तेणेव उवागच्छइ) अने ज्थां प्रदेशी राजा इतो त्यां गयो. (पएसी रायं करयल जाव बद्धावेत्ता तं महत्थं जाव उवणेइ) त्यां जधने तेणु प्रदेशी राजाने भन्ने हाथानी अंजलि बनावीने तेने भस्तक पर हेरवने नमस्कार कर्था अने जयविजय शब्दोत्तं उच्चारण करीने तेने वधाभणी आपी. त्थार पछी तेणु पोतानी साथे लावेकी बेटने राजाने अर्पित करी. (तएणं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स तं महत्थं जाव पडिच्छइ) प्रदेशी राजाने चित्रसारथिनी ते महार्थं वगेरे विशेषणोवाणी बेटने स्वीकारी लीधी. (चित्तं सारहिं सकारेइ, सम्माणेइ पडिविसज्जेइ) अने चित्रसारथिनी सत्कार तेमज सम्मान करीने पछी तेने त्यांथी विसर्जित कर्थो. (तएणं से चित्रे सारही पएसिणा रण्णा विसज्जिए समाने हइ जाव

अन्तिकात् प्रतिनिष्क्रामति, गन्तव्यं चातुर्वर्ण्यं अश्वरथस्तत्रैव उपागच्छति,  
चातुर्वर्ण्यम् अश्वरथं दूरोहति, श्वेतविकाया नगर्या मध्यमध्येन यत्रैव स्वकं  
गृहं तत्रैव उपागच्छति. तुरगान निगृह्णाति, रथं स्थापयति, रथात् प्रत्य-  
वरोहति, स्नातो यावत् उपरि प्रासादवरगतः स्फुटस्फुटमस्तकैर्द्वीत्रिंशद्व-  
द्वैकैर्नाटकैर्वरतरणीसंपयुक्तैः उपनत्यमानः उपगायमानः उपलाल्यमान इष्टान्  
शब्दस्पर्श-यावद् विहरति ॥ सू० ११८ ॥

पएलिणा रण्णा विसज्जिए समाणे हट्ट जाव हियए पएसिस्स रन्नो अंति-  
याओ पडिनिक्खमइ जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ) इस प्रकार  
प्रदेशी राजा द्वारा विसर्जित किया गया वह चित्र सारथि हट्ट यावत्  
हृदय वाला होकर प्रदेशी राजा के पास से चला आया और जहाँ चातुर्वर्ण्य  
अश्वरथ था वहाँ पर आ गया (चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ, सेयं वियाए नय-  
रीए मज्झमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) वहाँ आकर वह  
उस चार घंटेवाले अश्वरथ पर सवार हो गया और श्वेतांबिका नगरी  
के ठीक मध्यमार्ग से होता हुआ अपने भवन की ओर चल दिया, (तुरगे  
णिगिण्हइ, रहं ठवेइ रह्हाओ पच्चोरुहइ, ण्हाए जाव उप्पि पासायवरगए)  
वहाँ आकर के उसने घोड़ों को रोका, रथ को खड़ा किया, फिर रथ  
से नीचे उतरा, स्नान किया यावत् उत्तम प्रासाद के उपरिभाग में जाकर बैठ  
गया, (फुट्टमाणेहिं मुइंमत्थएहिं वत्तीसइवद्धएहिं वरतरणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्ज-  
माणेउ उवगाइज्जमाणेउ उवलालिज्जमाणेउ इट्ठेसद्धपरिस्स जाव विहरइ) वहाँ पर

हियए पएसिस्स रन्नो अंतियाओ पडिनिक्खमइ, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे  
तेणेव उवागच्छइ) आ प्रमाणे प्रदेशी राजा वडे विसर्जित करयेवो। ते चित्र-  
सारथि हट्ट यावत् हृदयवाणे थधने प्रदेशी राजानी पासोधी आवतो रह्यो अने ज्यो  
चातुर्वर्ण्य अश्वरथ उतो त्यां आव्यो। (चाउग्घंटे आसरहं दुरुहइ, सेयं वियाए नय-  
रीए मज्झमज्झेणं जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ) त्या आवीने ते चातुर्वर्ण्यवाणे  
अश्वरथ पर सवार थयो अने श्वेतांबिका नगरीना ठीक मध्य मार्गमांथी पसार  
थधने पोताना लवन तरइ रवाना थयो। (तुरगे णिगिण्हइ, रहं ठवेइ, रह्हाओ पच्चोरुहइ  
ण्हाए जाव उप्पि पासायवरगए) त्या आवीने तेणे घोडाओने उला राख्या, रथ  
घोसाओ अने त्थारपछी रथमांथी नीचे उतर्यो। स्नान क्युं यावत् उत्तम प्रासादना  
उपरिभागमां जधने गेलो गयो। (फुट्टमाणेहिं मुइंमत्थएहिं वत्तीसइवद्धएहिं नाडएहिं  
वरतरणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणेउ उवगाइज्जमाणेउ उवलालिज्जमाणेउ इट्ठेसद्ध

ટીકા—‘તણ’ इत्यादि—

ततः खलु स चित्रः सारथिः यत्रैव श्वेतविकानगरी तत्रव उपागच्छति, श्वेतविकां नगरीं मध्यमध्वेन=अनिशमध्यदेशस्थितभागेण आवर्त्ती नगरीम् अनुप्रविशति, यत्रव बाह्या उपस्थानशाला तत्रैव उपागच्छति, तुरगान्=अश्वान् निगृह्णाति=निरुणद्धि, रथं स्थापयति, रथात् प्रत्यवरोहति=अवतरति, तद् महार्थं यावत्=महार्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राप्नुतं गृह्णाति, गृहीत्वा यत्रैव प्रदेशी राजा तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य प्रदेशिनं राजानं करतल यावत्=करतलपरिगृहीतं दशनम् शिर आनर्त्त मस्तके अठजलि कृत्वा वद्धंयति, वद्धंयित्वा तद् महार्थं यावत्=महार्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राप्नुतम् उपनयति=प्रदेशिने राज्ञे समर्पयति। ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रस्य सारथेः सकाशात् तद् महार्थं यावत्=महार्थत्वादिविशेषणविशिष्टं प्राप्नुतम् प्रतीच्छति=गृह्णाति, चित्रं सारथिं सत्कारयति=आसनप्रदानादिना, सम्मानयति=वस्त्राभूषणादिप्रदानेन, ततः प्रतिप्रिसर्जयति=गन्तुयादिशति। ततः खलु स चित्रःसारथिः प्रदेशिना राज्ञा विजितः भवन् हृष्ट-यावद् हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः

રહતે હુણે યહ વજતે હુણે મુદજોં કો ધ્વનિપૂર્વક રૂર પાત્રોં દ્વારા અભિનીત કિયે નાટક કો વારંવાર દેવકર ઔર ગાનોં કો સુનકર એવં લલિતકલાઓં દ્વારા હર્ષિત હોકર અભિલષિત શબ્દ, સ્પર્શ, રૂપ રસ, ગંધ इन पांच प्रकार के कामगोर्गों को भोगते हुए अपने समय को निकालने लगा।

ટીકાર્થ સૂત્રાર્થ કે હી અનુરૂપ હૈ. પરન્તુ જહાં પર વિશેષતા હૈ વહ इस प्रकार से है—आसनप्रदान आदि द्वारा प्रदेशी राजाने उस चित्र सारथि का सत्कार किया, एवं वस्त्राभूषण आदि प्रदान द्वारा उसका सम्मान किया, विसर्जित किया का तात्पर्य है, जाने के लिये आज्ञा दिया. ‘हृष्ट जाव हियए’ में आगत इस यावत्पद से हृष्ट तुष्टचित्तानन्दितः, प्रीतिमनाः, परमसौमनस्यतः, हर्षवश-

फरिस् जाव विहरइ) त्यां रहीन तेणे भृङ्गोनी ध्वनि साथे उर पात्रो द्वारा अभिनीत करायेला नाटकने वारंवार नेधने अने गीतो सांलणीने अने ललितोवडे हर्षित थधने अलिलषित शब्द, स्पर्श, रूप, रसगंध आ पांच प्रकारना कामगोर्गोने भोगतो पोताना समयने पसार करवा लाग्यो.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. પણ જ્યાં વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે આસન વગેરે આપીને પ્રદેશી રાજાએ તે ચિત્રસારથિનો સત્કાર કર્યો અને વસ્ત્રાભૂષણ આપીને તેનું સન્માન કર્યું. વિસર્જિત શબ્દનો અર્થ છે, જવા માટે આજ્ઞા આપી. ‘હૃષ્ટ જાવ હિયણ’ માં આવેલા યાવત્ પદથી “હૃષ્ટતુષ્ટચિત્તાનન્દિતઃ

परमसौमनस्यितो हर्षवशावसर्पद्धयः प्रदेशिनो राज्ञः अन्तकात=मष्मोपात्  
प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति, यत्रैव चातुर्घटः अश्वरथः तत्रैव उपागच्छति,  
उपागत्य चातुर्घटम् अश्वरथं दूरोहति=आरोहति, दूरुह्य श्वेतविकाया नगर्या  
मध्यमध्येन यत्रैव स्वकं=स्वकीयं गृहं तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तुरगान्  
निगृह्णाति, निगृह्य रथं स्थापयति, रथात् प्रत्यवतरति । ततः  
स्नातः=कृतस्नानविधिः यावत् 'यावत्'-पदेन-'कृतवलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गल  
प्रायश्चित्तः सर्वालङ्कारविभूषितः' इति सम्राष्टम् । तत्र-कृतवलिकर्मा=काका-  
दिभ्यो त्रितीर्णान्तभागः, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः-कृतानि=विहितानि कौतु-  
कानि=मपीतिलकादीनि मङ्गलानि==मङ्गलकराणि दुःस्वप्नादिकलनिवारणार्थं  
दध्यक्षतादीनि तान्येव प्रायश्चित्तानि-अवश्यकरणीयत्वाद् येन सः, तथा-सर्वा-  
लङ्कारविभूषितः समस्ताभरणभूषितशरीरः सन् उपरिमासादवरगतः=उत्तममा-  
सादोपरिभागे ससुपविष्टः स्फुटद्भिः=अतिरमसास्फालनात् स्फुटद्भिरिव मृदङ्गम-  
स्तकैः=मृदङ्गमुखपुटैः, तथा-वरतरुणीसम्प्रयुक्तैः=अतिसुन्दरयुवतीभिरभिनीतैः  
द्वात्रिंशद्भक्तैः=द्वात्रिंशत्संख्यकपात्रनिचक्षैः नाटकैः उपनर्त्यमानः=स्वचरित्राभिनयपूर्व  
मभिनीयमानः, उपगीयमानः=स्वगुणगानपूर्वकं गीयमानः, उपलाल्यमानः=  
ललितकलाभिः प्रमोद्यमानः इष्टान्=अभिलषितान् शब्दस्पर्शयावत्=शब्दस्पर्शरूप-  
रसगन्धान् उच्चविधान् काव्यभोगात् प्रत्यनुभवन् विहरतीति ॥ सू० ११८ ॥

विसर्पद्धयः' इन पदों का ग्रहण किया गया है 'ण्हाए जाव उर्णि' में आगत  
यावत् पद से 'कृतवलिकर्मा, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः, सर्वालङ्कारविभू-  
षितः' इन पदों का संग्रह हुआ है. 'कृतवलिकर्मादि पदों का तात्पर्य' है  
काकादिकों के लिये उसने अन्नभाग त्रितीर्ण किया तथा दुःस्वप्नादिकलों  
के निवारण के लिये मपीतिलक आदिरूप कौतुक तथा मङ्गलकर दध्यक्ष-  
तादिकरूप प्रायश्चित्त-अवश्य करणीय होने से किये। इनसे नीचे के पदों  
का अर्थ मूलार्थ में लिख दिया गया है ॥ सू० ११८ ॥

भीतिमनाः परमसौमनस्यितः, हर्षवशविसर्पद्धयः' आ पदोत्तुं अङ्गु करवाभां  
आ०युं छे. "ण्हाए जाव उर्णि" भां आवेला यावत् पदथी "कृतवलिकर्मा, कृत  
कौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः सर्वालङ्कारविभूषितः' आ पदोत्तुं स०अङ्गु थये छे. कृत-  
वलिकर्मादि पदोत्तुं अर्थ छे अङ्गु वगेरेने अन्न लाग अर्पये तेमज दुःस्वप्न वगेरे  
ने निवारणु करवा भाटे मपी तिलक वगेरे इप कौतुक तेमज मङ्गलकर दही अक्षत  
वगेरे इप प्रायश्चित्त-अवश्यकरणीय होवाथी कयां. ओना पछीनां पदोत्तुं अर्थो मूलार्थ  
भां ज० लभवाभां आ०या छे. ॥सू० ११८॥

मूलम्—तएणं से केसीकुमारसमणे अणया कयाइं पाडिहारियं पीठफलकसेजासंथारणं पच्चप्पिणइ । सावत्थाओ णयरीओ कोट्टगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ, पंचहिं अणगारसएहिं जाव विहरमाणे जेणेव केयइअद्धे जणवए, जेणेव सेयंविया नयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, अहा पडिरुवं उग्गहं उग्गिण्हत्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ॥सू० ११९॥

छाया—ततः खलु स वै शीकुमार 'मणः अन्यदा कदाचित् प्राविहारिकं पीठफलकं शय्यासंस्तारकं प्रत्यर्पयन्ति । अस्त्या नगर्या कोष्ठकात् चैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति पठचभिरनगारसत्तैर्यावत् विहरन् यत्रैव केकयाद्धं जनपदः यत्रैव श्वेतांविका

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे अणया कयाइं पाडिहारियं पीठ-फलकसेजासंथारणं पच्चप्पिणइ) इसके बाद केसीकुमारश्रमणने किसी एक समय अर्पणीय पीठफलकशय्यासंस्तारक को वापिस कर दिया अर्थात् जहां वे कोष्ठक चैत्य-उद्यान में टहरे हुए थे—वहां के पुरुषों को उन्होंने संभला दिया. (साव-त्थीओ णयरीओ कोट्टगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ) इसके बाद वे श्रावस्ती नगरी से एवं कोष्ठकचैत्य से निकले (पंचहिं अणगारसएहिं जाव विहर-माणे जेणेव केयइअद्धे जणवए जेणेव सेयंविया नयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) पांच सौ अनगार इनके साथ थे. अतः उनके साथ तीर्थंकर परम्परा के अनुसार विचरण करते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम में

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे अणया कयाइं पाडिहारियं पीठ-फलकसेजासंथारणं पच्चप्पिणइ ) त्थारपथी डेशीकुमार श्रमणे डोळ वणते अर्पणीय पाठकलक शय्या संस्कारकने पाछा आपी दीधां ओटवे डे तेओश्री ने डोळक चैत्यमां सुकाम धर्यो हुतो. त्यांना रणेवाणने ते वस्तुओ आपी दीधी. (सावत्थीओ णयरीओ कोट्टगाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ) त्थारपथी ते डेशीकुमार श्रमणे ते श्रावस्ती नगरीथी अने डोळक चैत्यमांथी नीडण्या. ओटवे डे विहार धर्यो. (पंचहिं अणगारसएहिं जाव विहरमाणे जेणेव केयइअद्धे जणवए जेणेव सेयंविया नयरी जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) पांचसो अन-गार तेओश्रीनी साथे हुता. आभ तेओश्री आ गंधानी साथे तीर्थंकर परंपरा

नगरी यत्रैव मृगवनमुद्यानं तत्रैव उपागच्छांते, यथाप्रतिरूपमवग्रहसमृद्धय  
संयमेन तपसा आत्मानं भावयन् विहरन्ति ॥ सू० ११९ ॥

टीका--'तएगं केसी' इत्यादि--व्याख्या निगदन्निद्धा नवरम्-केसी  
कुमारं मणो मृगवनोद्यानस्थितस्य कस्यचित् पुरुषस्य स्तोत्रकालिकमवग्रहमव-  
गृह्य तिष्ठति। वनपालावग्रहादीनामग्रे वक्ष्यमाणत्वात् ॥ सू० ११९ ॥

मूलम्--तएणं सेयं वियाए नयरीए सिंघाडण० सहया  
जणसदेइ वा० परिस्ता निगच्छइ। तएणं ते उज्जाणपालगां  
इमीसे कहाए लद्धटा समाणा हट्टुत्तु जाव हियया जेणेव  
केसीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छंति केसिं कुमारसमणं-  
वंदंति नमंसांति अहापडिरुव उगगहं अणुजापांति, पाडिहां-  
रिएणं जाव संधारएणं उवनिमंतंति णामं गोघं पुच्छंति ओधा-  
रंति एगं तं अवकसंति अन्नमन्नं एवं वयासी-जस्स णं देवाणु-

विहार करते हुए क्रमशः वहां आये जहाँ के कयाद्ध जनपद-देश था, उसमें भी  
जहां वह श्वेतांविका नगरी थी और उसमें भी जहां वह मृगवन नाम का  
उद्यान था (अहापडिरुव उगगहं उगिणिगिता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे  
विहरइ) वहां आकर वे यथाप्रतिरूप अवग्रह प्राप्त--करके संयम एवं  
तप से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

व्याख्या स्पष्ट है-नवरम्-केसीकुमारश्रमण मृगवनोद्यानस्थित किसी  
पुरुष की कुछ समयतक ठहरने के लिये आज्ञा प्राप्त कर ठहर गये. वन-  
पाल एवं अवग्रहादिकों के विषय में सूत्रकार आगे कथन करेंगे ॥ सू० ११९ ॥

मुनेण विचरणु करतां ओके गामथी भीले गाम विहार करतां अमुकमे जयां  
केकयाद्ध जनपद-देश विशेष इतो अने तेमां पणु जयां धोतां-  
णिका नगरी इती अने तेमां पणु जयां मृगवन नामे उद्यान इतुं. त्यां पडोन्ध्या.  
(अहापडिरुव उगगहं उगिणिगिता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे  
विहरइ) त्यां पडोन्धीने तेणोश्रीणे तथा प्रतिइय अवग्रह प्राप्त करीने संयम अने  
तपथी पोताना आत्माने भावित करता विचरणु करवा लाग्या.

. आ सूत्रने टीकार्थ स्पष्ट छे. 'नवरम्' केसीकुमार श्रमण मृगवन उद्यान  
पालकनी पासेधी रहैवानी आज्ञा मेणवीने त्यां रोडाछ गया. वनपाल अने अवग्रह  
पगेरेनी आगतमां सूत्रकार उवे पछी कहेछे ॥ सू० ११९ ॥



पिया । चित्ते सारही दंसणं कंखेइ, दंसणं पत्थेइ, दंसणं पीहेइ,  
 दंसणं अभिलसैइ, जस्स णं णामगोयस्सवि सवणयाए हट्ठुट्ठु  
 जाव हियए भवइ से णं एस केसीकुमारसमणे पुव्वाणुपुठ्वि चरमाणे  
 गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहमागए इहसंपत्ते इह समोसठे इहेव सेयंवियाए  
 णय रीए वहिया उज्जाणे अहापडिरुव्वं जाव विहरइ, तं गच्छामो णं  
 देवाणुपिया ! चित्तस्स सारहिस्स एयगट्ठं निवेदेमो पियं से भवउ ।  
 अपणमणस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणोति, जेणेव सेयविया णयरी,  
 जेणेव चित्तस्स सारहिस्स गिहे जेणेव चित्ते सारही तेणेव उवाग-  
 च्छंति, चित्तं सारहिं करयल जाव वट्ठावेति, एवं वयासी—जस्स णं  
 देवाणुपिया । दंसणं कंखंति जाव अभिलसंति, जस्स णं णामगो-  
 यस्सवि सवणयाए हट्ठु जाव भवंति, से णं अयं केसीकुमारसमणे पुव्वा-  
 णुपुठ्वि चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे इहेव मियवणे उज्जाणे  
 समोसठे जाव विहरइ ॥ सू० १२० ॥

छाया—ततः खलु श्वेताविकायां नगर्यां शृङ्गाटक० महान् जनशब्द  
 इति घा० परिषद् निर्गच्छति । ततः खलु ते उज्जानपालका अस्याः कथाया

‘तएणं सेयंवियाए नयरीए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं सेयंवियाए नयरीए सिंघाडश० महया जणसद्देइ घा०  
 परिस्ता निगच्छइ) इसके बाद श्वेताविका नगरी में शृङ्गाटक आदि मार्गों  
 के ऊपर उपस्थित हुई अपार जनसेदिनी में परस्पर वातचीत आदि हुई.  
 परिषदा निकली (तएणं ते उज्जानपालगा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा

‘त एणं’ सेयंवियाए नयरीए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं सेयंवियाए नयरीए सिंघाडग० महया जणसद्देइवा०  
 परिस्ता निगच्छइ) त्थार पछी श्वेताविका नगरीमां शृङ्गाटक वगेरे मार्गो पर  
 ओकत्र थयेला मानवसमाजमां परस्पर वातचीत वगेरे प्रारंभ थछ परिषदा नीकणी.  
 (त एणं ते उज्जानपालगा इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा हट्ठुट्ठु जाव हियया



सुवाधिनी टीका सू. १२० सूर्याभदेवस्य पूर्वभवजीवप्रदेशीराजवर्णनम्

लब्धार्थाः सन्तः हृष्टतुष्ट यावद् हृदया यत्रैव केशीकुमारश्रमणः तत्रैव  
उपागच्छन्ति केशिनं कुमारश्रमणं वन्दन्ति नमसन्ति यथाप्रतिरूपमवग्रह-  
मनुजानन्ति, प्रातिहारिकेण यावत् संस्तारकेण उपनिमन्त्रयन्ति, नामगोत्रं  
पृच्छन्ति, अवधारयन्ति, एकान्तसपक्रामन्ति, अन्योन्यमेवमवादिषुः—यस्य  
खलु देवानुप्रियाः? चित्रः सारथिः दर्शनं काङ्क्षति, दर्शनं प्रार्थयति, दर्शनं  
स्पृहयति, दर्शनमभिलषति, यस्य खलु नामगोत्रस्यापि श्रवणतया हृष्टतुष्ट-

हृष्टतुष्ट जाव हियया जेणेव केशीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छंति) इसके बाद वे  
उद्यानपाल जब इस बात से निश्चितमतिवाले हो गये. तब हृष्ट तुष्ट यावत्  
हृदयवाले होते हुए वे जहां केशीकुमारश्रमण थे—वहां पर आये. (केशि-  
कुमारसमणं वंदन्ति, नमसन्ति, अहापडिरुवं उगहं अणुजाणति) वहां आकर  
उन्होंने केशीकुमारश्रमण को वन्दना की, नमस्कार—किया एवं यथारूप अवग्रह  
आज्ञा उन्होंने दिया. (पाडिहारिणं जाव संधारणं उपनिमन्तंति) तथा  
समर्पणोप (प्रातिहारिक) यावत् संस्तारक आदि से उन्हें उपनिमन्त्रित  
किया. (णामं गोयं पुच्छंति ओधारंति, एगंतं अवक्कमंति, अन्नमन्नं एवं वयासी)  
नामगोत्र पूछा। उसे हृदय में धारण किया। फिर वे एकान्त में गये और वहां जाकर  
उन्होंने आपस में इस प्रकार से बातचीत की (जस्सणं देवाणुप्पिया। चित्ते  
सारही दंसणं कंखेइ दंसणं पीहेइ, दंसणं अभिलसेइ) हे देवानुप्रियो! जिनके  
दर्शन चित्र सारथि चाहता है, जिनके दर्शन की वह प्रार्थना करता है,  
जिनके दर्शन की वह स्पृहा रखना है, जिनके दर्शन की वह अभिलाषावांछा

जेणेव केशीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छंति) त्थार पछी ते उद्यानवाले ज्यारे  
आ णाणतमां निश्चित मतिवाणा थया त्थारे तेज्जो हृष्ट-तुष्ट यावत् हृदयवाणा थधने  
ज्यां केशीकुमार श्रमणु डता त्यां आव्या (केशिं कुमारसमणं वंदन्ति, नमसन्ति,  
अहापडिरुवं उगहं अणुजाणति) त्यां आवीने तेमण्णे केशीकुमार श्रमणुने  
वंदना करी नमस्कार कर्या अने यथा कट्ठनीय वस्तुज्जो तेज्जोश्रीने आपी. (पाडिहा-  
रिणं जाव संधारणं उपनिमन्तंति) तेमज्ज समर्पणीय यावत् संस्तारकं  
वगेरे आपीने तेज्जोश्रीने उपनिमन्त्रित कर्या. (णामं गोयं पुच्छंति ओधारंति,  
एगंतं अवक्कमंति, अन्नमन्नं एवं वयासी) नाम-गोत्र पूछ्यां अने तेने  
हृदयमां धारणु कर्या. त्थारपछी ते सर्वे ज्जेकांतमां गया त्यां जधने तेमण्णे परस्पर  
आ प्रमाणे वातचीत करी जे (जस्सणं देवाणुप्पिया! चित्ते सारही दंसणं  
कंखेइ, दंसणं पत्थेइ, दंसणं पीहेइ, दंसणं अभिलसेइ) हे देवानुप्रियो!  
चित्रसारथी जेज्जोश्रीना दर्शनोनी छच्छा धरावे छ, जेज्जोश्रीना दर्शनो माटे तेज्जो  
प्रार्थना करे छ, जेज्जोश्रीना दर्शनोनी ते स्पृहा धरावे छ, जेज्जोश्रीना दर्शनोनी

યાવદ્દહદયો ભવતિ સ સ્વલુ એપ કેસીકુમારશ્રમણઃ પૂર્વાનુપૂર્વી ચરન્ ગ્રામાનુ-  
ગ્રામં દ્રવન્ હ્રાગતઃ, હ્રસંપ્રાપ્તઃ, હ્ર સમવસૃતઃ, હ્રૈવ શ્વેતવિકાયા નગર્યા  
વહ્નિર્મૃગવને ઉદ્યાને યથાપતિરૂપં યાવદ્ વિહરતિ, તદ્ ગચ્છામઃ સ્વલુ દેવા-  
નુપ્રિયાઃ ! ચિત્રસ્ય સારથેઃ એતમર્થં પ્રિયં નિવેદયામઃ, પ્રિયં તસ્ય ભવતુ ।  
અન્યોન્યસ્યાન્તિકે એતમર્થં પ્રતિશૃણ્વન્તિ, યૈવ શ્વેતવિકા નગરી યત્રૈવ ચિત્રસ્ય

હૈ, (જસ્સ ણં ણામગોચસ્સ વિ. સવળયાએ હટ્ટતુટ્ટ જાવ હિયએ ભવહ) તથા  
જિનકે નામગોત્ર કે મી શ્રવણ સે જો હટ્ટતુટ્ટ યાવન્ હૃદયવાલા હોતા હૈ  
(સે ણં એસ કેસીકુમારસમણે પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે ગામાણુગામં દ્વૈજ્જમાણે  
હ્રમાગએ) વે વે કેસીકુમારશ્રમણ તીર્થંકર પરમ્પરા કે અનુસાર વિચરતે  
હુએ એવં એક ગ્રામ સે દૂસરે ગ્રામ મેં વિહાર કરતે હુએ યહાં આયે હૈં ।  
(હ્ર સંપત્તે) યહાં પ્રાપ્ત હુએ હૈં । (હ્રસમોસદ્દે) યહાં સમવસૃત હુએ હૈં ।  
(હ્રૈવ સેયંવિયાએ ણયરીએ વહ્નિયા ઉજ્જાણે અહાપડિસ્સવં જાવ વિહરહ)  
હસી શ્વેતાંવિકા નગરી કે વાહર ઉદ્યાન મેં યથાપતિરૂપ અવગ્રહ પ્રાપ્તકર  
યાવત્ વિરાજતે હૈં । (તં ગચ્છામો ણં દેવાણુપ્પિયા । ચિત્તસ્સ સારહિસ્સ  
એયમટ્ટં પ્રિયં નિવેદેમો પ્રિયં સે ભવઉ) તો હે દેવાનુપ્રિયો ! ચલે ઔર  
ચિત્ર સારથિ કે હસ પ્રિય અર્થ કા ઉનસે નિવેદન કરે, હમારા યહ નિવે-  
દન ઉન્હેં વડા હી પ્રિય લગેગા (અણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ટં પડિસુણેંતિ)

તે અભિલાષા રાખે છે. (જસ્મણં ણામગોચસ્સ વિ સવળયાએ હટ્ટતુટ્ટ જાવ હિયએ  
ભવહ) તેમજ જોઓશ્રીના નામ ગોત્રના શ્રવણથી જ જે હટ્ટ-તુટ્ટ યાવત્ હૃદયવાળો  
થઈ જાય છે. (સે ણં એસ કેસીકુમારસમણે પુવ્વાણુપુલ્લિં ચરમાણે ગામાણુ-  
ગામં દ્વૈજ્જમાણે હ્રમાગએ) તેઓશ્રી કેસીકુમાર શ્રમણ તીર્થંકર પરંપરા  
મુજબ વિચરણ કરતા અને એક ગામથી બીજે ગામ વિહાર કરતાં અહીં પધાર્યા છે.  
(હ્ર સંપત્તે) અહીં પ્રાપ્ત થયા છે. (હ્ર સમોસદ્દે) અહીં સમવસૃત થયા છે.  
(હ્રૈવ સેયંવિયાએ ણયરીએ વહ્નિયા ઉજ્જાણે અહાપડિસ્સવં જાવ વિહરહ)  
આ શ્વેતાંવિકા નગરીની બહારના ઉદ્યાનમાં યથાપતિરૂપ અવગ્રહ પ્રાપ્ત કરીને યાવત્  
વિરાજે છે. (તં ગચ્છામો ણં દેવાણુપ્પિયા ! ચિત્તસ્સ સારહિસ્સ એયમટ્ટં પ્રિયં  
નિવેદેમો પ્રિયં સે ભવઉ) ત્યારે હે દેવાનુપ્રિયો ! આપણે ચિત્ર સારથિની પાસે  
જઈને આ પ્રિય સમાચાર વિષે તેમને બળર આપીએ. અમારી આ બળર તેમને  
ખૂબજ ગમશે. (અણમણ્ણસ્સ અંતિએ એયમટ્ટં પડિસુણેંતિ) આ પ્રમાણે તેઓ  
બધા પરસ્પર એક બીજાની વાતને એકમેક થઈને સ્વીકારી લે છે. ત્યાર પછી (જેજેવ

सारथेर्गृहं यत्रैव चित्रः सारथिस्तत्रैवोपागच्छन्ति चित्रं सारथिं करतल-  
यावद् वर्द्धयन्ति, एवमवादिषुः—यस्य खलु देवानुप्रियाः दर्शनं काङ्क्षन्ति,  
यावत्—अभिलषन्ति, यस्य खलु नामगोत्रस्यापि श्रवणतया हृष्ट यावद् भवन्ति  
स खल्वयं केशीकुमारश्रमणः पूर्वानुपूर्वीं चरन् ग्रामानुग्रामं द्रवन् इहैव  
उद्याने मृगवने समवसतः यावद् विहरति ॥ सू० १२० ॥

टीका—‘तएणं सेयवियाए’ इत्यादि। व्याख्या निगदसिद्धा ॥ सू. १२० ॥

इस प्रकार की बातचीत को वे स्वीकार कर लेते हैं। बाद में (जेणेव सेयंविया  
णयरी, जेणेव चित्तस्स सारहिस्स गिहे जेणेव चित्ते सारही तेणेव उवागच्छंति)  
वे जहां श्वेतांगिका नगरी थी और उसमें भी जहां चित्र सारथि का गृह  
था एवं वहां पर भी जहां चित्र सारथी था वहां पर आये (चित्तं सारहिं कर-  
यल जाव वर्द्धावेति, एवं वयासी) वहां आकर के उन्होंने चित्र सारथि के  
प्रति बड़े चिनय के साथ अपने दोनों हाथों की अंजलि बनाकर उसे  
मस्तक पर से घुमाते हुए नमस्कार किया। तथा जयविजय शब्दों का  
उच्चारण कर उसे बधाई दी और फिर ऐसा कहा—‘जस्स णं देवाणुप्पिया !  
दंसणं कंखंति, जाव अभिलसंति, जस्स णं नामगोयस्स वि सवणयाए  
हट्ट जाव भवंति, से णं अयं केशीकुमारममणे पुव्वाणुपुविं चरमाणे गामा-  
नुग्रामं दूइज्जमाणे इहेव मियवणे उज्जाणे समोसठे जाव विहरइ’ हे देवानुप्रिय!  
आप जिसके दर्शन की चाहना रखते हैं, यावत् अभिलाषा रखते हैं तथा  
जिसके नामगोत्र के भी श्रवण से भी आप हृष्टतुष्ट यावत् हृदय वाले  
हो जाते हैं वे ये केशीकुमारश्रमण पूर्वानुपूर्वीं से विचरते हुए, एक ग्राम-से

सेयंविया णयरी, जेणेव चित्तस्स सारहिस्स गिहे जेणेव चित्ते सारही तेणेव  
उवागच्छंति) तेज्जो जथां श्वेतांगिका नगरी उती अने तेमां पणु जथां चित्रसारथी  
उती त्यां गथा. (चित्तं सारहिं करयल जाव वर्द्धावेति, एवं वयासी) त्यां पछोंथीने  
तेमण्णे चित्रसारथिने णहुण नम्रपण्णे णन्ने उथोनी अंजलि णनावीने अने तेने  
मस्तक पर इस्वीने नमस्कार कर्या तेमजं जयविजय शब्दोत्तुं उच्चारणु करीने तेने  
वधामणी आपी. अने पछी तेने आ प्रमाणे कहुं. (जस्सणं देवाणुप्पिया ! दंसणं  
कंखंति. जाव अभिलसंति, जस्स णं नामगोयस्स वि सवणयाए हट्ट जाव  
भवंति, से णं अयं केशीकुमारममणे पुव्वाणुपुविं चरमाणे गामानुग्रामं  
दूइज्जमाणे इहेव मियवणे उज्जाणे समोसठे जाव विहरइ’) हे देवानुप्रिय !  
तमे जेज्जोश्रीना दर्शनोनी छच्छा धरावता उता, यावत् अभिलाषा रागता उता.  
तेमज जेज्जोश्रीना नामगोत्रना श्रवणु मात्रथी ज तमे इष्ट-तुष्ट यावत् इष्टयवाणा

મૂલમ--તણં સે ચિત્તે સારહી તેસિં ઉજ્જાળપાલખાણં અંતિએ એયમટું  
 સોચ્છા નિસમ્મ હટ્ટુતુટ્ટુ જાવ આસણાઓ અઘ્મુટ્ટેઈ પાયપીઠાઓ પચ્છો-  
 રહઈ, પાડયાઓ ઓમુચઈ, એગલાડિયં ઉત્તરાસંગં કરેઈ, અંજલિમ-  
 ડૅલિયગ્ગહથે--કેચિકુમારસમગાભિમુહે સત્તઘ્મપયાઈં અગુમચ્છઈ, કા-  
 યલપરિગ્ગહિયં સિરસાવત્તં મત્થએ અંજલિકટ્ટુ એવં વયાસી-નમોસ્થુગં  
 અરહંતાણં જાવ સંપત્તાણં, નમોસ્થુગં કેસિસ્સ કુમારસમણસ્સ મમ  
 ધમ્માયરિયસ્સ ધમ્મોવદેસગસ્સ, વંદામિ ણં ભગવંતં તત્થગયં ઇહગણ,  
 પાસડ મે તત્થગણ ઇહગયં તિકટ્ટુ વંદઈ નમંસઈ, તે ઉજ્જાળપાલએ વિડ-  
 લેણં વત્થગંધમલ્લાલંકારેણં સક્કારેઈ સમ્માણેઈ વિડલે જીવિયારિહં  
 પીડદાણં દલયઈ પડિવિસજ્જેઈ । કોહુંવિયપુરિસે સદાવેઈ, એવં વયાસી  
 --ચિપ્પામેવ ઓ દેવાણુપ્પિયા ! ચાડઘંટ આસરહં જુત્ત મેવ ઉવટ્ટુવેહ  
 જાવ પચ્ચપ્પિણહ । તણં તે કોહુંવિયપુરિસા જાવ ચિપ્પામેવ સચ્છત્તં  
 સજ્જય જાવ ઉવટ્ટુવિત્તા તમાણત્તિયં પચ્ચપ્પિણંતિ તણંસે ચિત્તે સારહી  
 કોહુંવિયપુરિસાણં અંતિએ એયમટું સોચ્છા નિસમ્મ હટ્ટુતુટ્ટુ જાવ હિયએ  
 પહાએ કયવલિકમ્મે જાવ સરીરે જેણેવ ચાડઘંટે જાવ દુરુહિત્તા  
 સકોરંટં મહયા મહચ્છડગરં તં ચેવ જાવ પજ્જીવાસઈધમ્મકહા । સૂ, ૧૨૧ ।

દ્વિતીયે ગ્રામ સે વિહાર કરતે હુએ યદાં મૃગવનં નામકે ઉદ્યાન મેં આયે હુએ  
 હેં યાવત્ તપ્પં ઓર સંયમ સે આત્માકો ભાવિત કરતે હુએ ટહરે હેં ।

इसकी व्याख्या मूलार्थ के जैसी ही है ॥ १२० ॥

થઈ નળો છે તેઓશ્રી કેશીકુમારશ્રમણ પૂર્વાનુપૂર્વાથી વિચરણ કરતાં એક ગામથી  
 ણીને ગામ વિહાર કરતાં અહીં મૃગવન નામના ઉદ્યાનમાં પધારેલા છે. યાવત્ તપ્પ  
 અને સંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા વિરાળે છે.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. ॥૧૨૦॥

छाया--ततः खलु स चित्रः सारथिः तेषामुद्यानपालकानामन्तिके एत  
मर्थं श्रुत्वा निश्म्य हृष्टं तुष्टं यावद् आसनाद् अभ्युत्तिष्ठति प्रापादपीठा  
त्प्रत्यवरोहति पादुके अवसृज्यति एकशाटिकमुत्तरासङ्गं करोति, अञ्जलिमु-  
कुलिताग्रहस्तः केशिकुमारश्रमणाभिमुखः सप्ताष्टपदानि अनुगच्छति करतल  
परिगृहीतं शिरसावर्त्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा एवमवादीत्-तमोऽस्तु खलु

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं से चित्ते सारही तेमि उज्जाणपालगाणं अंनिए  
एयमट्ठं) इसके बाद वह चित्र सारथि उन उद्यानपालकों के पास से इस  
अर्थ से—वृत्तान्त को (सोचा निश्म्य हृष्टतुष्टं जाव आसणाओ अवसृज्येइ)  
गुनकर एवं उसे हृदय में धारण कर बहुत अधिक हृष्ट एवं संतुष्ट  
चित्त हुआ यावत् वह अपने आसन से उठा. (पायपीठाओ पच्चोरुहइ)  
और पादपीठ—(वरण रखने का आसन) के उपर पग रखकर वह नीचे उतरा  
(पाउयाओ ओमुयइ) पादुकाएं उसने उतार दी (एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ)  
एकशाटिक उत्तरासंग किया। (अंजलिमउलियग्गहत्थे केशिकुमारममणा  
भिहे सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) फिर उसने अपने दोनों हाथों को जाँडकर  
अंजलिरूप में परिवर्तित किया और केशीकुमारश्रमण के अभिमुख होकर  
अर्थात् जिस ओर केशीकुमार श्रमण विराजमान थे उस ओर सात आठ  
पग तक आगे जाकर (करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्ठु  
एवं वयासी) वहां जाकर उसने अपने दोनों हाथों की बड़े विनय के साथ

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(त एणं) से चित्ते सारही तेमि उज्जाणपालगाणं अंनिए  
एयमट्ठं) त्थार पछी ते चित्रसारथि ते उद्यानपालकेना सुअथी आ अर्थने वृत्तान्तने  
(सोचा निश्म्य हृष्टतुष्टं जाव आसणाओ अवसृज्येइ) सांलणीने अने तेने उद्यमां  
धारण करीनेपूण उष्ट्र अने संतुष्ट चित्तवाणो थयो यावत् ते पोताना आसन परथी उलो थयो.  
(पायपीठाओ पच्चोरुहइ)अने पादपीठ(पग भूकवानुं आसन विशेष)पर पग भूकीने नीचे उतरा  
(पाउयाओ ओमुयइ)अने पगमां पड़ेरेली पावडीओ उतारी दीधी. (एगसाडियं उत्त-  
रासंगं करेइ) ओकशाटिक उत्तरासंग कर्यो. (अंजलिमउलियग्गहत्थे केशिकुमार  
समणाभिमुहे सत्तट्ठपयाइं अणुगच्छइ) त्थार पछी तेणु पोताना अने उद्ये  
लोडीने अंजलि अनावी अने केशीकुमारश्रमणनी सामे सुअ करीने ओटवे के ने  
दिशा तरइ केशीकुमार श्रमण विराजमान हुता ते तरइ सात आठ पग सुधी सामे  
गया. (करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्ठु एवं वयासी)

અર્હદ્વયો યાવત્-સમ્પાત્તેભ્યઃ, નમોઽમૃતુ સ્વલુ વંશિને કુમારશ્રમણાય મમ  
ધર્માચાર્યાય ધર્મોપદેશકાય, વન્દે સ્વલુ ભગવન્તં તત્રગતમિદ્ગતઃ પશ્યતુ મે  
તત્રગત ઇદ્ગતપ્. ઇતિ કૃત્વા વન્દને નમસ્યતિ, તાન ઉદ્યાનપાલકાન્ વિપુ-  
લેન વસ્ત્રગન્ધમાલ્યાલંકારેણ સત્કરોતિ સન્માનયતિ વિપુલં જીવિતાર્હં પ્રીતિ-  
દાનં દદાતિ પ્રતિવિસર્જયતિ । કૌઙ્કિમ્બિકપુરુષાન્ જાવ્દયતિ, એવમવાદીત-

અંજલિ બનાઈ ઓર ઉસે મસ્તક પર સે તોન વારં ઘુનાકર હસ પ્રકાર  
પાઠ પઢને લગા-(નમોઽત્યુગં અરહંતાગં જાવ સંપાત્તાગં, નમોત્યુગં કેમિસ્સ  
કુમારસમણસ્સ મમ ધર્માચરિયસ્સ ધર્મોવદેસગસ્સ, વંદામિ ણં ભગવંતં તત્થ-  
ગયં ઇદ્દગણ) અર્હન્ત ભગવન્તોં કો નમસ્કાર હો યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામક  
સ્થાન કો પ્રાપ્ત હુએ હૈં. મેરે ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક કેશીકુમારશ્રમણ કો  
નમસ્કાર હો. યહાં રહા હુઆ મૈં યહાં પર મૃગવનોદ્યાન મૈં વિરાજમાન  
આપકો નમસ્કાર કરતા હૈં । (પાસડ મૈં તત્થગણ ઇદ્દગયં ત્તિકદ્દુ વંદદ્દે નમં-  
સહ) વહાં રહે હુએ વે ભગવાન્ યહાં રહે હુએ મુઝે દેલ્લે' હસ પ્રકાર કઢકર  
ઉસને વન્દના કી, નમસ્કાર ક્રિયા, (તે ઉજ્જાણપાલણ વિરુલેણં વત્થગંધમલ્લા-  
લંકારેણં સકારેહ) હસ તરહ પરોક્ષવિનય કરકે ફિર ઉસને ઉન ઉદ્યાન-  
પાલકોં કા વિપુલ વસ્ત્ર ગંધ, માલા ંવં અલંકારોં સે સત્કાર ક્રિયા (સમ્મા-  
ણેહ) સન્માન ક્રિયા (વિરુલં જીવિયારિહં પીડ્દાણં દલયહ) ંર અન્ત મૈં ઉનકે  
લિયે વિપુલ માત્રા મૈં જીવિકાયોગ્ય પ્રીતિદાન દિયા (પહિવિમજ્જેહ) ફિર

ત્યાં જીને તેણે પોતાના જાને હાથોની ધૂળ નમ્રપણે અંજલિ બનાવી અને તેને  
મસ્તક પર ત્રણ વખત ફેરવીને આ પ્રમાણે તે પાઠવું ઉચ્ચારણ કરવા લાગ્યો—  
(નમોઽત્યુગં અરહંતાગં જાવ સંપાત્તાગં, નમોત્યુગં કેસિસ્સ કુમારસમણસ્સ મમ  
ધર્માચરિયસ્સ ધર્મોવદેસગસ્સ વંદામિ ણં ભગવંતં તત્થગયં ઇદ્દગણ)  
અર્હંત ભગવંતોને મારા નમસ્કાર છે કે જેઓશ્રીએ યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામકસ્થાનને  
પ્રાપ્ત કર્યું છે. મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક કેશીકુમારશ્રમણને નમસ્કાર છે. આહીથી  
જ હું ત્યાં મૃગવનોદ્યાનમાં વિરાજમાન આપશ્રીને નમસ્કાર કરું છું. (પાસડ મૈં  
તત્થગણ ઇદ્દગયં ત્તિકદ્દુ વંદદ્દે નમંસહ) ત્યાં વિરાજમાન તે ભગવાન આહી  
વિદ્યમાન મને જુએ આ પ્રમાણે કહીને તેણે વંદના કરી નમસ્કાર કર્યો. (તે ઉજ્જા-  
ણપાલણ વિરુલેણં વત્થગંધમલ્લાલંકારેણં સકારેહ) આ પ્રમાણે પરોક્ષ વિનય  
કરીને તેણે તે ઉદ્યાનપાલકોના વિપુલ વસ્ત્ર, ગંધ, માળાઓ અને અલંકારો વડે  
સત્કાર કર્યો. (સમ્માણેહ) સન્માન કર્યું. (વિરુલં જીવિયારિહં પીડ્દાણં દલયહ)  
અને છેવટે તેમને વિપુલ માત્રામાં જીવિકા યોગ્ય પ્રીતિદાન આપ્યું. (પહિવિસજ્જેહ)



क्षिप्रमेव भो देवानुप्रियाः ! चतुर्घण्टमश्वरथं युक्तमेव उपस्थापयन् यावत् प्रत्यर्पयत । ततः खलु ते कौटुम्बिकपुरुषा यावत् क्षिप्रमेव सच्छत्रं सध्वजं यावत् उपस्थापयित्वा तामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयन्ति । ततः खलु स चित्रः सारथिः कौटुम्बिकपुरुषाणामन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य हृष्टतुष्टयावद् हृदयः स्नातः कृन्वन्निकर्मा यावत्-शरीरः यत्रैव चातुर्घण्टो यावद् दूरुह्य सकोरण्टं महता भटचटकरं तदेव यावत् पयुपास्ते धर्मकथा ॥मृ० १२१॥

विसर्जित कर दिया (कोटुंघियपुरिसे सदावेइ) तदनन्तर :सने अपने आज्ञा-कारी सेवकों को बुलाया (सदावित्ता एवं वयामी) बुलाकर उनसे ऐसा कहा (क्षिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घटं आस्सरहं जुत्तामेव उवट्टवेह जाव पच्चप्पिण्हं) हे देवानुप्रियो ! तुम लोग शीघ्र ही चार घंटों वाले अश्वरथ को घोडाओं से युक्त करके उपस्थित करो, यावत् फिर हमें इसकी खबर दो (तएणं ते कोटुंघियपुरिसा जाव खिप्पामेव सच्छत्तं सज्झयं जाव उवट्टवित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति) इसके बाद उन कौटुम्बिक पुरुषोंने यावत् बहुत ही शीघ्र छत्र एवं ध्वजा से युक्त करके उस चार घंटोंवाले अश्वरथ को घोडाओं से युक्त कर उपस्थित कर दिया और पीछे इस खबर को उसके पास दिया. (तएणं से चित्ते सारथी कोटुंघियपुरिसाणं अतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्टतुट्ठ जाव हिजए ण्हाए कयवल्लिकम्मे जाव सरीरे चाउग्घटे आस्सरहे जाव दुरुहित्ता सकोरंटं महया भडचडगरं तं चेव जाव पज्जुवासइ धम्मकहा) तब उस चित्र सारथिने कौटुम्बिक

त्यार पछी तेमने (विसर्जित कर्था. (कोटुंघियपुरिसे सदावेइ) त्यार जाद तेणु पोत्ताना आज्ञाकारी सेवकाने बोलाव्या. (सदावित्ता एवं वयामी) बोलावीने तेमने आ प्रभाणु कथुं. (क्षिप्पामेव भो देवानुप्रिया ! चाउग्घटं आस्सरहं जुत्तामेव उवट्टवेह जाव पच्चप्पिण्हं) हे देवानुप्रियो ! तमे बोके सत्तरे चार घंटोवाणा अश्वरथने घोडाओथी सज्ज करीने अही उपस्थित करे, यावनू पछी अभने णणर आपो. (तए णं ते कोटुंघियपुरिसा जाव खिप्पामेव सच्छत्तं सज्झयं जाव उवट्टवित्ता तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति) त्यार पछी ते कौटुंभिक पुरुषोणे यावत् शीघ्र छत्र अने ध्वजाथी सुसज्जित करीने ते चार घंटोवाणा अश्वरथने घोडाओथी युक्त करीने उपस्थित कर्था. अने तेनी णणर पणु तेनी पासो पड़ोयाडी दीधी. (तए णं से चित्ते सारथी कोटुंघियपुरिसाणं अतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्टतुट्ठ जाव हिजए ण्हाए कयवल्लिकम्मे जाव सरीरे चाउग्घटे आस्सरहे जाव दुरुहित्ता सकोरंटं महया भड चडगरं तं चेव जाव पज्जुवासइ धम्मकहा) ते चित्र सारथिणे कौटुंभिक पुरुषोना भुअथी अश्वरथ तैयार थछ जवानी



‘तएणं से चित्ते’ इत्यादि ।—व्याख्या निगदसिद्धा । नवरम्-चित्र  
सारथिगमनवर्णनमेकादशाधिकशतनमसूत्रं, विलोकनीयम् ॥ १२१ ॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही केशिकुमारसमणस्स अंतिए  
धम्मं सोच्चा निसम्म हट्टुत्तुं तहेव वयासी—एवं खलु भंते ! अम्मं  
पएसी राया अधम्मिए जाव सयस्स वि णं जणवयस्स नो सम्मं कर-  
भरवित्तिं पवत्तेइ, तं जइणं देवाणुप्पिया ! पएसिस्स रण्णो धम्ममाइ-  
क्खेज्जा बहुगुणतरं खलु होज्जा पएसिस्स रण्णो तेसिंणं च बहूणं दुपय  
चउप्पयमियपसुपक्खिसारिसावाणं, तेसिं च बहूणं सामणमाहण-

पुरुषों के सुत्र से अश्वरथ के तैयार हो जाने की बात सुनकर और  
उसे हृदय में धारण कर हृष्टतुष्ट-यावत् हृदय होते हुए स्नान किया,  
बालिकर्म—अर्थात्—काकआदि पक्षियों के लिये अन्न का भाग दिया यावत्  
बहुमूल्य अल्पभारवाले आभूषणों से अलंकृत शरीर होकर जहां चार घंटों-  
वाला अश्वरथ था वहां आया. यावत् उस पर वह बैठ गया. उसके बैठते  
ही छत्रधारीने उस पर कोरष्ठपुष्पों की माला से युक्त छत्र तान दिया,  
विशाल भटों की भीड़ आकर उसके दोनों ओर उपस्थित हो गई. वहां  
पहिले का अवशिष्ट और सब कथन करना चाहिये, यावत् उसने केशि-  
कुमारश्रमण की पर्युपासना की. केशिकुमारश्रमणने धर्मोपदेश दिया ।

टीका—इसकी व्याख्या स्पष्ट है । नवरं-चित्रसारथी के गमन का  
वर्णन १११वें सूत्र में देखना चाहिये ॥ सू. १२१ ॥

चात सांलणीने अने हृदयभां धारण करीने उट्ट-तुष्ट यावत् हृदयवाणे धर्मे स्नान  
क्युं. बलिकर्म ओटले के कागडा वगेरे पक्षीओने भाटे अन्न लाग अर्पित क्यो.  
यावत् बहुमूल्य अल्पभारवाणा आभूषणोथी पोताना शरीरने अलंकृत क्युं अने  
त्यार पछी ते न्यां आरधंठोवाणे अश्वरथ हुतो त्यां आव्यो. यावत् तेमां ओसी गयो.  
ते ओठां त्यारे छत्रधारीओओे डोरंठ पुष्पोनी भाणाथी युक्त छत्र तेनी उपर ताइयुं.  
ते वणते विशाल थोद्धाओानी लीड तेनी आसपास आवीने ओकडी थप गछ. ओडीं  
पडेलां नं नेमज्ज गधुं कथन समज्जुं ओधंओ यावत् तेने केशिकुमारश्रमणनीं पर्यु-  
पासना करी, केशिकुमारश्रमणे धर्मोपदेश आव्यो.

टीका—आ सूत्रनो स्पष्ट ज नवरं-चित्रसारथीनुं गमननुं वर्णन १११ भा  
सूत्र प्रमाणे समज्जुं ओधंओ ॥ १२१ ॥

बुवाचिनो टीका सू. १२२ सूर्याभदेवस्य पूर्वभोजवप्रदेशिराजवर्णनम्

भिक्षुयाणं तं जइ णं देवाणुप्पिया! पएसिस्सि बहुगुणत्तरं होज्जा,  
सयस्स वि णं जणवयस्स ॥ सू. १२२ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिनः कुमारश्रमणस्यान्तिके  
धर्मं श्रुत्वा निश्चयं हृष्टतुष्टं तथैव एवमवादीत्—एवं खलु भदन्त! अस्माकं  
प्रदेशी राजा अधार्मिकः यावत् स्वकस्यापि खलु जनपदस्य नो सम्मं  
करभरवृत्तिं प्रवर्तयति तद् यदि खलु देवानुप्रेय! प्रदेशिने राज्ञे धर्ममा-  
ख्यायात् (तदा) बहुगुणतरं खलु भवेत्, प्रदेशिनो राज्ञस्तेषां च बहूनां  
द्विपद्मद्वयद्वयपशुरक्षिणीपुत्राणां, तेषां च बहूनां श्रमणमाहनभिभुक्ता-

‘तए णं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (से चित्ते सारही) उक्त चित्र सारथिने  
(केमिस्स कुमारसमणस्स) केशीकुमारश्रमण के (अंतिए) पास धम्मं सोच्चा  
निसम्म हृष्टतुष्टं तहेव एवं वयासी) धर्मका उपदेश सुनकर और उसे हृदय में  
धारण कर हृष्टतुष्टचित्त वाला हुआ एवं आनंद से चिभोर होकर प्रीतिमनवाला  
हुआ. इस तरह परमसौमनस्यित होकर वह बोला (एवं खलु भंते! अम्हं  
पएसि राया अहम्मि ए जाव सयस्स वि णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवृत्तिं  
पवत्तोइ) हे भदन्त! हमारा प्रदेशी राजा अधार्मिक है यावत् वह अपने  
देशके प्राप्त कर से भरणपोषणरूप व्यवहार को ठीक तरह से नहीं चलता है—  
(तं जइ णं देवाणुप्पिया! पएसिस्स रण्णो धम्ममाइक्खेज्जा बहुगुणत्तरं होज्जा,  
पएसिस्स रण्णो तेमिं च बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपक्खिसरीसवाणं) तो

‘तए णं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) त्थार पछी (से चित्ते सारही) ते चित्र सारथीअ  
(केमिस्स कुमारसमणस्स) केशीकुमार श्रमणनी (अंतिए) पासैथी (धम्मं सोच्चा  
निसम्म हृष्टतुष्टं तहेव एवं वयासी) धर्म विषे उपदेश सांलणीने. अने तेन  
हृदयमा धारणु करीने, हृष्ट-तुष्ट चित्तवाणो थयो अने आनंदित थअने प्रीतियुक्तमनवाणे  
थयो. आ प्रमाणे परमसौमनास्थित थअने ते जाइयो. (एवं खलु भंते! अम्हं  
पएसि राया अहम्मि ए जाव सयस्स वि णं जणवयस्स नो सम्मं करभर-  
वृत्ति पवत्तोइ) हे भदन्त! हमारे प्रदेशी राजा अधार्मिक छे यावत् ते पोताना  
देशना बोडो पासैथी कर भेणवीने पाणु प्रणत्तु लरणु-पोषणु-तेमज रक्षणु करतो नथी.  
(तं जइ णं देवाणुप्पिया! पएसिस्स रण्णो धम्ममाइक्खेज्जा बहुगुणत्तरं होज्जा,  
पएसिस्स रण्णो तेमिं च बहूणं दुपयचउप्पयमियपसुपक्खिसरीसवाणं)

ણામ્ । તદ્ યદિ યલુ દેવાનુપ્રિય ! પ્રદેશનો વહુગુણતરં ભવેત્, સ્વક-  
સ્યાપિ ચ યલુ જનપદસ્ય ॥ સૂ૦ ૧૨૨ ॥

ટીકા—‘તદ્ ણં સે ચિત્તે’ હત્યાદિ-તતઃ=તદનન્તરં ચલુ મ્ ચિત્રઃ  
સ્વારથિઃ કેશિનઃ કુમારશ્રમણસ્ય અન્તિકે=સમીપે ધર્મે જિનોક્તં શુત્વા=કર્ણ-  
ગોચરીકૃત્ય નિશ્ચય=દૃઢવધાર્ય હૃષ્ટતુષ્ટ તથૈવ=પૂર્વવદેવ હૃષ્ટતુષ્ટચિત્તાનન્દિતઃ  
પ્રીતિમનાઃ પરમસૌમનસ્યિતઃ હર્ષવશવિસર્પદ્હૃદયઃ, હિતિ સંગ્રાહ્યમ્ ।  
અર્થસ્તુ પૂર્વં ગતઃ । એવમવાદીત્-કિમવાદીત્ ? હત્યાહ-એવં ચલુ યત્ હે ભદ્રન્  
અસ્માકં પ્રદેશી રાજા અધાર્મિકઃ યાવત્-યાવત્પદેન-અધર્મિષ્ઠાદીનિ સર્વાણિ-  
વિશેષણાનિ એકશતતમસૂત્રોક્તાનિ સંગ્રાહ્યાણિ, એવામર્થોઽપિ તત્રૈવ વિલો-

યદિ આપ હે દેવાનુપ્રિય ! ઉસ પ્રદેશી રાજા કો જિનપ્રરૂપિત ધર્મ કા ઉપ-  
દેશ દેવે’ તો વહ ઉસ પ્રદેશી રાજા કે લિયે ઓર પરલોક મેં વહુત ગુણ-  
કારી હોગા, તથા અનેક દ્વિપદ, ચતુષ્પદ, મૃગ, પશુ, પક્ષી એવં સરીસૃપ-  
સર્પ આદિકોં કા હિતાવહ હોગા (તેસિં ચ વહુણં સમણમાહણમિક્કચુ-  
યાણં) ઓર ઉન અનેક શ્રમણ માહણ, મિશ્ત્રુકોં કે લિયે વહુત હી અધિક  
લાભદાયક હોગા (તં જહ્ણં દેવાણુપ્પિયા ! પપ્પસિસ્સ વહુગુણતરં હોજ્જા,  
સયસ્સ ચિ ય ણં જણવયસ્સ) યદિ વહ ધર્મો દેશ પ્રદેશી રાજા કા હિત-  
કારક હો જાતા હૈ તો ઉસકેં જનપદ-દેશ કા, ઇસસે વહા ભગા હોગા ।

ટીકાર્થ-ઇસકો સ્પષ્ટ હૈ । ‘હૃષ્ટતુષ્ટ તથૈવ એવં વયાસી’ મેં, તથૈવ’ પદ  
સે ‘હૃષ્ટતુષ્ટચિત્તાનન્દિતઃ, પ્રીતિમનાઃ, પરમસૌમનસ્યિતઃ, હર્ષવશવિસર્પદ્હૃદયઃ’  
ઇસ પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ હૈ, ઇન પદોં કા અર્થ પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ ।  
‘અહમ્મિએ જાવ’ મેં આગત પદ સે ‘અધર્મિષ્ઠ’ આદિક વિશેષણોં કા ગૃહણ

જો આપ દેવાનુપ્રિય તે પ્રદેશી રાજાને જિન પ્રરૂપિત ધર્મનો ઉપદેશ આપો તો તે  
પ્રદેશી રાજાને આ લોક અને પરલોક અતીવ ગુણકારી થાય અને ઘણાં દ્વિપદ, ચતુ-  
ષ્પદ, મૃગ, પશુ, પક્ષી અને સરીસૃપ એટલે કે સાપ વગેરેના માટે પણ હિતાવહ થાય.  
(તેસિં ચ વહુણં સમણમાહણમિક્કચુયાણં) અને તે ઘણા શ્રમણ માહણુ મિશ્ત્રુકોના માટે  
પણ અતીવ હિતાવહ કાર્ય થાય. (તં જહ્ણં દેવાણુપ્પિયા ! પપ્પસિસ્સ વહુગુણતરં  
હોજ્જા, સયસ્સ ચિ ય ણં જણવયસ્સ) જો આપનો ધર્મોપદેશ પ્રદેશી રાજા પોતાના  
છવનમાં ઉતારે તો તેનું પોતાનું અને તેના જનપદ-દેશનું પણ તેનાથી ઘણું કલ્યાણ થાય તેમ છે.

આ સૂત્રનો ટીકાર્થ સ્પષ્ટ જ છે. “હૃષ્ટ તુષ્ટ તથૈવ વયાસી ‘માં’ તથૈવ”  
પદથી “હૃષ્ટતુષ્ટચિત્તાનન્દિતઃ પ્રીતિમનાઃ પરમસૌમનસ્યિતઃ, હર્ષવશ-  
વિસર્પદ્હૃદયઃ” આપાઠનો સંગ્રહ થયો છે. આ સર્વ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ  
કરવામાં આવ્યો છે. “અહમ્મિએ જાવ” માં આવેલ યાવત્ પદથી ‘અધર્મિષ્ઠઃ’

कनोयः, स स्वकस्यापि जनपदस्य=देशस्य करभरवृत्ति-करेण भरः-भरणं-  
पोषणं, तद्रूपां वृत्तिं=व्यवहारं नो सम्यक् प्रवर्त्तयति, तद् यदि खलु हे  
देवानुप्रिय ! प्रदेशिने राज्ञे भवान् धर्मं जिनप्ररूपितम् आख्यायात्-कथयेत्  
तदा प्रदेशिनो राज्ञः बहुगुणतरम्-द्वलोकपरलोकसफलीकरणलक्षणं दया-  
दानादिरूपं वाऽत्यन्तगुणं भवेत् ! तथा बहूनां द्विपदचतुष्पदमृगपशुपक्षि-  
सरीसृपानाम्-तत्र-द्विपदाः=दासीदासादयः चतुष्पदाः ये मृगाः=आरण्याः, पशवः  
=ग्राम्या गोमहिष्यादयः, सरीसृपाः=भुजपरिसर्पाः-गोधादयः उरःपरिसर्पाश्च  
सर्पादयः, तेषां बहुगुणतरं=पालनरक्षणरूपं भवेत् तथा-श्रमणमाहनभिक्षु-  
काणाम्-तत्र-श्रमणाः=शाक्यादयः, माहनाः=ब्राह्मणाः, भिक्षुकाः=भिक्षाजीविनः  
तेषां च बहुगुणतरम्=भिक्षालाभरक्षणादिरूपमतिशयगुणं भवेत् । तत् यदि  
खलु भदन्त ! प्रदेशिनो राज्ञो बहुगुणतरं भवेत् तदा तस्य स्वकस्यापि जन-  
पदस्य=देशस्य बहुगुणतरं योगक्षेमलक्षणं भवेदिति ॥ सू० १२२ ॥

हुआ है। ये सब विशेषण १०१ सूत्र में कहे जा चुके हैं। वहीं पर उनका  
अर्थ भी लिख दिया है। 'बहुगुणतरम्' का तात्पर्य उस प्रदेशी राजा को  
इस लोक एवं परलोक को सफल करनेरूप बहुगुण वाला अथवा दयादा-  
नादिरूप अत्यन्तगुणवाला होगा। दासीदास आदि द्विपद से, मृगादि चतुष्पद  
से, ग्राम्य गोमहिष आदि पशुपद से, भुजपरिसर्प गोधादिक, एवं उरः  
परिसर्प सर्पादिक, सरीसृप पद से गृहीत हुए हैं। इन द्विपदादिकों का पालन  
रक्षणरूप बहुगुणतरगुणवाला वह धर्मोपदेश होगा, शाक्यादिक श्रमण शब्द से  
ब्राह्मण माहन शब्द से, तथा भिक्षाजीवी भिक्षु पद से लिये गये हैं। इन सबके लिये  
भिक्षालाभ एवं संरक्षणादिरूप अतिशय गुणवाला वह धर्मोपदेश होगा ॥ सू. १२२ ॥

वगेरे विशेषणानुं अहुणु सभज्जुं जेधये. आ णधा विशेषणे १०१ भा सूत्रमां  
आवेदा छे. जेनो अर्थ पणु ते सूत्रमां ज स्पष्ट करवामां आव्यो छे. 'बहुगुणतरम्'  
नो अर्थ आ प्रमाणे छे के ते धर्मोपदेश ते प्रदेशी राजना भाटे आ लोकने तेमज  
परलोकने सङ्गण जनाववा इय णहुगुणवाणो थशे अथवा तो दया दान वगेरे इय  
अत्यन्त गुणवाणो थशे. द्विपदथी दासी दास वगेरे अतुं पदथी मृग वगेरे, पशुपदथी  
ग्राम्य गोमहिष वगेरे, सरिसृप पदथी भुजपरिसर्प गोधादिक अने उरःपरिसर्प-  
सर्पादिकतुं 'सरीसृपा पदथी अहुणु थयुं छे. आ द्विपद वगेरेना भाटे पालन रक्षण इय णहुतर गुण-  
वाणो ते धर्मोपदेश थशे. श्रमण शब्दथी शाक्य वगेरे, माहन शब्दथी ब्राह्मण तेमज  
भिक्षुकपदथी भिक्षालाभानुं अहुणु करवामां आव्युं छे. आ सर्वना भाटे संरक्षण तेमज  
भिक्षा लाभ वगेरेथी अधर्मोपदेश अतिशय गुणवाणो थशे. ॥ सू० १२२ ॥

मृग्य—तएणं से केसीकुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी-  
एवं ग्वत्तु चउहिं ठाणेहि चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा,  
सवणयाए, तं जहा— आरामगय वा उज्जाणगयं वा समणं वा  
साहणं वा णो अभिगच्छइ णो वंदइ णो णमंसइ णो सक्कारेइ णो  
सम्माणेइ णो कट्ठाणं संगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेइ, नो अट्ठाइं  
हेइइं पसिणाइं कारणाइं वागरणाइं पुच्छेइ, एएणं ठाणेणं चित्ता !  
जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए । (१) उवस्सयगयं  
सगणं वा तं चैव जाव एएणवि ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं  
धम्मं नो लभइ सवणयाए । (२) गोयग्गगयं समणं वा साहणं  
वा नो जाव पज्जुवासइ, नो विउत्तेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडि-  
लाभइ० नो अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएणं ठाणेणं चित्ता । जीवे केवलि-  
पन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए । (३) जत्थ वि णं समणेणं वा  
साहणेणं वा मद्धि अभिसमागच्छइ तत्थवि णं हत्थेण वा वत्थेण  
वा ल्लेण वा अप्पाणं आवरित्ता चिट्ठइ, नो अट्ठाइं जाव पुच्छइ,  
एएणवि ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं णो  
लभइ सवणयाए, (४) एएहिं च णं चित्ता ! चउहिं  
ठाणेहिं जीवे नो लभइ केवलिपन्नत्तं धम्मं सवणयाए ।  
चउहिं ठाणेहिं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवण-  
याए, तं जहा—(१) आरामगयं वा उज्जाणगयं वा समणं वा साहणं  
वा वंदइ नमंसइ जाव पज्जुवासइ अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएण ठाणेण  
चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवणयाए । एवं [२] उव-  
ग्गगयं [३] गोयग्गगयं समणं वा जाव पज्जुवासइ, विउत्तेणं जाव

पडिलाभेइ अट्टाई जाव पुच्छइ, एएण त्रि० (४) जत्थ वि य णं समणेण  
वा० अभिसमागच्छइ तत्थवि य णं णो हत्थेण वा जाव आवरेत्ता  
चिट्ठेइ, एएणवि ठाणेण चित्ता ! जाव केवलपन्नतं धम्मं लभइ  
सवणयाए । तुज्झं च णं चित्ता ! पएसो राया आरामगयं वा तंचेव  
संभवं भाणियठव आइल्लएणं गमएणं जाव अप्पाणं आवरेत्ता चिट्ठइ  
तं कहं णं चित्ता ! पएसिस्स रत्नो धम्ममोइ विस्वस्सामो ? ॥ सू० १२३ ॥

छाया-ततः खलु केशीकुमारभ्रमणः चित्रं सारथिम् एवमवादीत्-एवं खलु  
चतुर्भिः स्थानैः चित्र ! जीवः केवलप्रज्ञप्तं धर्मं नो लभने श्रवणतयै, तद्यथा-  
(१) आरामगतं वा उद्यानगतं वा श्रमणं वा माह्वनं वा नो अभिगच्छति, नो  
वन्दते, नो नमस्यति, नो सत्करोति, नो सम्मानयति, नो कल्याणं मङ्गलं  
देवतं चैत्यं पयुं पास्ते, अर्थान् हेतून् प्रश्नान् कारणानि व्याकरणानि पृच्छति :

‘तए णं से केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ- (तए णं से) इसके बाद (केसीकुमारसमणे) केशीकुमारभ्रमणने-  
(चित्तं सारहिं) चित्र सारथि से (एवं वयासी) ऐसा कहा- (एवं खलु चउहिं  
ठाणेहिं चित्ता ! जीवे केवलपन्नत्तं धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए) हे चित्र !  
जीव चार कारणों से केवलप्रज्ञप्त धर्म को सुन नहीं सकता है । (तं जहा-  
आरामगयं वा उज्जाणगयं वा, समणं वा णो अभिगच्छइ, णो वंदइ, णो  
णमंसइ, णो सक्कारेइ, णो सम्माणेइ, कल्लणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासइ)  
जैसे-आराम में आये हुए या उद्यान में आये हुए श्रमण के वा माह्वन के

‘तए णं से केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ- (तए णं) त्थार पछी (केसीकुमारसमणे) केशीकुमारभ्रमणे चित्तं  
सारहिं चित्रसारथिने (एवं वयासी) आ प्रमाणे ‘उल्लं’ (एवं खलु ‘चउहिं’  
ठाणेहिं चित्ता ! जीवे केवलपन्नत धम्मं नो लभेज्जा सवणयाए) हे चित्र !  
एवं चार कारणोंने खली धे केवली प्रज्ञप्त धर्महुं श्रमणु करी शकतो नथी. (तं जहा-  
आरामगयं वा उज्जाणगयं वा, समणं वा माह्वनं वा णो अभिगच्छइ, णो वंदइ, णो  
णमंसइ, णो सक्कारेइ, णो सम्माणेइ, णो कल्लणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासइ)  
जैसे आराममां पधारैला के उद्यानमां पधारैला श्रमणु के मल्लणुनी

एतेन स्थानेन चित्र ! जीवः केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं नो लभते श्रवणतायै । (२)  
उपाश्रयगतं श्रमणं वा तदेव यावत् एतेनापि स्थानेन चित्र ! जीवः केवलि-  
प्रज्ञप्तं धर्मं नो लभते श्रवणतायै । (३) गोचराग्रगतं श्रमणं वा माहनं वा

सन्मुख सत्कार आदि करने के निमित्त जो नहीं जाता है, मधुर वचनों से जो सुखशातादि प्रश्नपूर्वक उनकी स्तुति नहीं करता है, उनके समक्ष अपने मस्तक को जो नहीं झुकाता है, अभ्युत्थानादि द्वारा जो उनका सत्कार नहीं करता है, वसति आदि के देने से जो उनका सम्मान नहीं करता है, तथा कल्याणस्वरूप, मंगलस्वरूप, धर्मदेवस्वरूप मानकर एवं विशिष्टज्ञान वाला मानकर जो उनकी पर्युपासना नहीं करता है, (नो अट्टाहं, हेऊहं, पसिणाहं, कारणाहं, वागरणाहं, पुच्छेहं) अर्थ को-जीवाजीवादिक पदार्थों को, हेतुओं को-अन्यथानुपपत्तिरूप साधनों को, प्रश्नों को, कारणों को, व्याकरणों को, नहीं पूछता है, (एएणं ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए) इस कारण से हे चित्र ! जीव केवलिप्रज्ञप्त धर्म को सुन नहीं सकता है। यह प्रथम कारण है । (१) (उवस्सयं समणं वा तं चेव, जाव एएणं वि ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए) उपाश्रय में आये हुए श्रमण के सत्कार आदि करने के निमित्त जो उनके समक्ष नहीं जाता है यावत् उनसे व्याकरणों को नहीं पूछता है, ऐसा जीव इस द्वितीय कारण से भी केवलि-प्रज्ञप्त धर्म को सुन नहीं सकता है । (२)

सामे जे सत्कार वगेरे करवा भाटे जेतो नथी, मधुर वचनोथी सुखशातादि प्रश्नपूर्वक तेमनी स्तुति करतो नथी, तेमनी सामे पो नानु' मस्तक नम्र लावे नभावतो नथी, अभ्युत्थान वगेरे वडे जे तेमने सत्कारतो नथी, वसति वगेरे आपीने तेमनुं सम्मान करतो नथी तेमज कल्याण स्वरूप, मंगलस्वरूप, धर्मदेवस्वरूप मानीने अने विशिष्ट-ज्ञान संपन्न मानीने जे तेमनी पर्युपासना करतो नथी. (नो अट्टाहं, हेऊहं, पसिणाहं, कारणाहं, वागरणाहं, पुच्छेहं) अर्थोने-एव अएव वगेरे पदार्थोने, हेतु-ओने अन्यथानुपपत्तिरूप साधनोने, प्रश्नोने कारणोने, व्याकरणोने पूछतो नथी, (एएणं ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए) हे चित्र ! आ कारणुने दीधि ज एव केवलि प्रज्ञप्त धर्मनुं श्रवण करी शकतो नथी. आ पछेहुं कारण छे. (१) (उवस्सयं समणं वा तं चेव, जाव एएणं वि ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं नो लभइ सवणयाए) उपाश्रयमां पधारेला श्रमणुं के भाहुणुने सत्कार वगेरे करवा भाटे जे तेमनी सामे जेतो नथी. यावत् तेमने व्याकरणो विषे प्रश्न करतो नथी. आ जतनो एव आ पीण कारणुथी पणु केवलिप्रज्ञप्त धर्मनुं



नो यावत् पयुपास्ते नो विपुलेन अशनपानवाद्यस्वाद्येन प्रतिलम्भयान् ।  
नो अर्थान् यावत् पृच्छति, एतेन स्थानेन चित्र ! जीवः केवलपन्नत्तं धर्मं नो लभते श्रवणतायै । (४) यत्रापि खलु श्रवणेन  
वा माहनेन वा सार्द्धम् अभिसमागच्छति, तत्रापि खलु हस्तेन वा वस्त्रेण  
वा छत्रेण वा आत्मानमावृत्य तिष्ठति, नो अर्थान् यावत् पृच्छति एतेना-  
पि स्थानेन चित्र ! जीवः केवलपन्नत्तं धर्मं नो लभते श्रवणतायै, एतश्च खलु  
चित्र ! चतुर्भिः स्थानैर्जीवः नो लभते केवलपन्नत्तं धर्मं श्रवणतायै ॥

(गोचरगगयं समणं वा माहणं वा नो जाव पज्जुवासइ, नो विउलेणं  
असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभइ० नो अट्ठाइं जाव पुच्छइ  
एएणं ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलपन्नत्तं धम्मं ने लभइ सवणयाए)  
गोचरी के लिये-भिक्षा के लिये-गाँव में आये हुए श्रमण के या माहण  
का जो संस्कार आदि करने के निमित्त उनके समक्ष नहीं जाता है, यावत्  
उनकी पयुपासना नहीं करता है, तथा विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्यरूप चार  
प्रकार के आहार द्वारा जो उन्हें प्रतिगृह्य नही करता है, और जो  
अर्थ से लेकर व्याकरण तक उनसे नहीं पूछता है वह जीव है चित्र ! इस  
तृतीय कारण से भी केवलपन्नत्तं धर्म को सुन नहीं सकता है (३)  
(जत्थ वि णं समणेणं वा माहणेणं वा सार्द्धं अभिसमागच्छइ, तत्थ वि णं  
हत्थेण वा वत्थेण वा छत्तेण वा, अप्पाणं आवरित्ता चिट्ठइ, नो अट्ठाइं जाव  
पुच्छइ, एएण वि० ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवलपन्नत्तं धम्मं णो लभइ सवणयाए एएहिं  
च णं चित्ता ! चउहिं ठागेहिं जीवे नो लभइ, केवलपन्नत्तं धम्मं सवणयाए) इसी

श्रवण करी शकतो नथी. (२) (गोचरगगयं समणं वा माहणं वा नो जाव पज्जुवा-  
सइ, नो विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभइ० नो अट्ठाइं जाव  
पुच्छइ एए णं ठाणेणं चित्ता ! जीवे केवल पन्नत्तं धम्मं लभइ  
सवणयाए) गोचरी भाटे-भिक्षा भाटे गाँव में आवेला श्रमण के माहण वगेरेने  
संस्कार वगेरे करवा भाटे के तेमनी सामे जतो नथी, यावत् तेमनी पयुपासना करतो  
नथी, तेमण विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्यरूप चार प्रकारना आहारवडे के तेमने  
प्रतिलालित करतो नथी अने के अर्थथी भांडीने व्याकरण सुधीना यथा विषयेना  
आगतमां तेमने प्रश्नो पूछतो नथी. हे चित्र ! ते एव आ ग्रीण कारणवडे पण  
केवल प्रज्ञ धर्मत्तुं श्रवण करी शकतो नथी (३) (जत्थ वि णं समणेणं वा  
माहणेणं वा सार्द्धं अभिसमागच्छइ, तत्थ वि णं हत्थेण वा वत्थेण वा छत्तेण  
वा, अप्पाणं आवरित्ता चिट्ठइ, नो अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएण वि ठाणेणं  
चित्ता ! जीवः केवलपन्नत्तं धम्मं णो लभइ सवणयाए एएहिं च णं चित्ता !  
चउहिं ठागेहिं जीवे नो लभइ, केवल पन्नत्तं धम्मं सवणयाए) आ प्रमाणे

ચતુર્થિઃ સ્થાનૈઃ ચિત્ર ! જીવઃ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મં લભતે શ્રવણતાયૈ, તથા  
(૧) આરામગત વા ઉદ્યાનગતં વા શ્રમણં વા માહનં વા વન્દતે નમસ્યતિ યાવત્  
પર્યુપાસતે, અર્થાન્ યાવત્ પૃચ્છતિ, एतेन स्थानेन चित्र ! जीवः केवलिप्राप्तं  
धर्मं लभते श्रवणतायै, एवं (२) उपाश्रयगतम् । (३) गोचराग्रगतं श्रानं वा

પ્રકાર જો શ્રમણ અથવા માહન કે સાથ સંગત હો જાતા હૈ ત્યાં પર મી થઈ શ્રમણ  
અથવા માહન સુદ્ધે પહિચાન ન લેં. આ હેતુ સે જો અપને આપકો હાથસે  
વા વસ્ત્ર સે યા છત્ર સે આવૃત કર લેતા હૈ એવં ઉનસે પ્રશ્નાદિ કુછમી  
નહીં પૂછતા હૈ હે ચિત્ર ! આ ચતુર્થ કારણ સે મી જીવ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત  
ધર્મ કો સુન નહીં પાતા હૈ. (૪) આ પ્રકાર હે ચિત્ર ! યે ચાર કારણ હૈં ફિ  
જિનકીં વજહ સે યહ જીવ કેવલો મંગવાન્ દ્વારા કહે ગયેં ધર્મ કો સુન નહીં  
પાતા (ચઉર્હિ ઠાણેહિં ચિત્તા ! જીવે કેવલિપન્નત્તં ધર્મમ્ લભઃ સવણયાણ)  
હે ચિત્ર ! ચાર કારણોં સે જીવ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કો સુન સકતા હૈ (તં જહા—  
આરામગયં વા ઉદ્યાનગયં વા શ્રમણં વા માહનં વા વન્દઈ, નમંસઈ જાવ  
પઞ્જુવામઈ) યે ચાર કારણ આ પ્રકાર સે હૈં—આરામગત યા ઉદ્યાનગત  
શ્રમણ કો યા માહન કો જો વંદના કરતા હૈ નમસ્કાર કરતા હૈ, યાવત્  
उनकी पर्युपासना करता है (अट्टाई जाव पुच्छइ) अर्थों को यावत् पूछता है.  
(एएण ठाणेण चित्ता ! जीवे केवलिपन्नत्तं धम्मं लभइ सवणयाए) इस  
कारण को लेकर हे चित्र ! वह जीव केवलिप्राप्त धर्म को सुन सकता (१)  
है, एवं (उवस्सगयं०) इसी प्रकार जो जीव उपाश्रयों में आये हुए श्रमणे

જે શ્રમણ કે માહણની સામે આવી જતાં તે શ્રમણ કે માહણ તેને ઓળખી લે નહિ  
તે માટે જે પોતાની જાતને હાથવડે, કે વસ્ત્ર વડે કે છત્રવડે છૂપાવી લે છે અને  
તેમને પ્રશ્ન પૂછે તે કંઈ પૂછતો નથી હે ચિત્ર ! આ એવા કારણથી પણ એવ કેવલિ  
પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકતો નથી. (૪) આ પ્રમાણે હે ચિત્ર ! આ ચાર કારણોને  
લીધે જ એવ કેવલિમંગવાન વડે કહેલા ધર્મનું શ્રવણ કરી શકતો નથી. (ચઉર્હિ  
ઠાણેહિં ચિત્તા ! જીવે કેવલિપન્નત્તં ધર્મમ્ લભઃ સવણયાણ) હે ચિત્ર ! ચાર  
કારણોથી એવ કેવલિ-પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકે છે. (તં જહા—આરામગયં વા  
ઉદ્યાનગયં વા શ્રમણં વા માહનં વા વન્દઈ, નમંસઈ જાવ પઞ્જુવામઈ) તે  
ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે.—આરામમાં પધારેલા કે ઉદ્યાનમાં પધારેલા શ્રમણને કે  
માહણને જે વંદન કરે છે નમસ્કાર કરે છે, યાવત તેમની પર્યુપાસના કરે છે. (અટ્ટાઈ  
જાવ પુચ્છઈ) અર્થોને યાવત પૂછે છે. (एएण ठाणेण चित्ता ! जीवे केवलि  
प्राप्तं धम्मं लभइ सवणयाए) આ કારણોને લીધે હે ચિત્ર ! તે એવ કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત

यावत् पर्युपास्ते, विपुलेन यावत् प्रतिलम्भयति, अर्थान् यावत् पृच्छति, एतेनापि०, (४) यत्रापि च खलु श्रमणेन वा० अभिसमागच्छति तत्रापि च खलु नो हस्तेन वा यावत् आवृत्य तिष्ठति, एतेनापि स्थानेन चित्र ! जीवः केवलप्रज्ञः धर्मलभते श्रवणायै, तत्र च खलु चित्र ! प्रदेशो राजा आरामगतं वा तदेव सर्वं भणितव्यम् आदिमेन गमकेन यावद् आत्मानमावृत्य तिष्ठति, तत्कथं खलु चित्र ! प्रदेशिने राज्ञे धर्ममाख्यास्यामः ? ॥ सू० १२३ ॥

से या माहण से उनको वन्दना करता हुआ, नमस्कार करता हुआ, पर्युपासना करता हुआ अर्थों को यावत् पूछता है, ऐसा जीव केवलप्रज्ञः धर्म को सुन सकता है. (२) (गोयरगगयं समणं वा जाव पञ्जुवासइ, विउलेणं जाव पडिलाभेइ, अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएणं वि०) इसी प्रकार जो जीव गोचरीगतश्रमण की या माहण की यावत् पर्युपासना करता है, विपुल आहार से उन्हें प्रतिश्रुति करना है. उनसे अर्थों को यावत् पूछता है—वह जीव केवलप्रज्ञः धर्म को सुन सकता है, (३) (जत्थं वि य णं समणेण वा० अभिसमागच्छइ, तत्थं वि य णं णो हत्थेण वा जाव आवरेत्ता चिट्ठेइ) जहां पर भी श्रमण या माहण के साथ संगत होता है वहां पर जो जीव अपने आप को हाथ से यावत् आवृत्य छूता नहीं है ऐसा वह जीव इस चतुर्थ कारण को लेकर केवलप्रज्ञः जिनधर्म का श्रवण कर सकता है (४) (तुज्झं च णं चित्ता ! पएसी राया आरामगयं वा तं चेव सर्वं भाणियंवं आइल्लएणं गमएणं जाव अप्पाणं आवरेत्ता चिट्ठइ तं कहं णं चित्ता !

धर्मनु श्रवण करी शके छे. (१) ओण प्रमाणे (उवम्मयगयं०) आ प्रमाणे जे एव उपाश्रयोभां आवेदा श्रमणेने के माहणेने वन्दन करतो, नमस्कार करतो, पर्युपासना करतो, अर्थान् यावत् पूछे छे, ओवो एव केवलप्रज्ञः धर्मनु श्रवण करी शके छे. (२) गोयरगगयं समणं वा जाव पञ्जुवासइ, विउलेणं जाव पडिलाभेइ, अट्ठाइं जाव पुच्छइ, एएणं वि०) आ प्रमाणे जे एव गोचरी माटे नीकणेदा श्रमणेनी के माहणेनी यावत् पर्युपासना करे छे, विपुल आहारथी तेमने प्रतिलासित करे छे. तेमने अर्थो विषे यावत् पूछे छे. ते एव केवलप्रज्ञः धर्मनु श्रवण करे छे. (३) (जत्थं वि य णं समणेण वा अभिसमागच्छइ तत्थं वि य णं णो हत्थेण वा जाव आवरेत्ता चिट्ठेइ) श्रमण के मंडाण गमे त्यां भणे जे एव तेओश्रीने जेधने पोतानी. जतने पोताना डांथो वडे यावत् आवृत्य करतो नथी ओवो ते एव आओथा करणुने दीधे केवल प्रज्ञः जिनधर्मनु श्रवण करी शके छे. (४) (तुज्झं च णं चित्ता ! पएसी राया आरामगयं वा तं चेव सर्वं भाणियंवं आइल्लएणं गमएणं जाव

ટીકા—‘તણ’ કેસી’ इत्यादि—

ततः खलु केशीकुमारश्रमणः चित्रं सारथिम् एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण  
अवादीत्=उक्तवान्-हे चित्र ! एवं खलु त्वं विजानोहि, यत् चतुर्भिःस्थानैः  
=कारणैः जीवःकेवलप्रज्ञप्तं=तीर्थकुटुपदिष्टं धर्मं श्रवणतापै=श्रोतुं नो लभते=  
नो प्राप्नोति, तद्यथा-आराधनगतम्-आरामः=विविधपुष्पजात्युपशोभितः, तत्र  
गतं=प्राप्तं वा, उद्यानगतम्-उद्यानं=पुष्पफलोपेतवृक्षोपशोभितं बहुजनसेव्यम्  
उद्यानिकास्थानं=तत्र गतं=प्राप्तं वा श्रमणं साधुं वा माहनं=व्रतधारितं  
श्रावकं वा नो अभिगच्छति=सत्काराद्यर्थं नो अभिमुखं याति, नो वन्दते=

पएसिस्स रन्नो धम्ममाहविस्ससामो ) हे चित्र ! तुम्हारा प्रदेशीराजा  
आराम आदिगत श्रमण के या माहण के न सम्मुख आता है यावत् न  
उनकी पर्युपासना करता है, इत्यादि प्रथम गम से लेकर वह  
चौथे गम तक युक्त बना हुआ है तो फिर मैं उसके लिये किस प्रकार  
से केवलप्रज्ञप्त धर्म का उपदेश दूँ !

टीकार्थ—केशीकुमारश्रमणने चित्र सारथीसे जो कुछ कहा है वह  
इस सूत्र द्वारा प्रकट किया गया है-इसमें यह समझाया गया है कि कौन  
जीव किन २ कारणों से केवलप्रज्ञप्त धर्म सुन सकता है और कौन जीव  
किन २ ही कारणों से उसे नहीं सुन सकता है. केवलप्रज्ञप्त धर्म की अप्राप्ति  
में प्रथम कारण यह है कि श्रमण या माहण-१२ व्रतों का पालनकर्ता-  
गृहस्थ जब किसी उद्यान में-विविध पुष्पों से या फलों से युक्त वृक्षों  
से शोभित ऐसे अनेकजनसेव्य बगीचे में या आराम में-विविध प्रकार की

अप्पाणं आवरेत्ता चिट्ठइ तं क्हं णं चित्ता ! पएसिस्स रन्नो धम्ममाह-  
विस्ससामो) हे चित्र ! तમાरे प्रदेशी राजा आराम के उद्यानમાં આવેલા શ્રમણ  
કે માહણની સામે સત્કારવા જતો નથી યાવત તેમની પર્યુપાસના પણ કરતો નથી  
અને આ પ્રમાણે તે પ્રથમ ગમથી માંડીને ચોથા ગમથી યુક્ત બનેલો છે તો પછી  
હું તેને કેવલિપ્રજ્ઞપ્તધર્મનો ઉપદેશ કેવી રીતે આપું ?

ટીકાર્થ—કેશીકુમાર શ્રમણે ચિત્રસારથીને જે કંઈ કહ્યું છે તે આ સૂત્ર વડે સ્પષ્ટ  
કરવામાં આવ્યું છે. આ સૂત્રવડે આ પ્રમાણે સમજાવવામાં આવ્યું છે કે કયો જીવ  
શા શા કારણોને લીધે કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકે છે અને કયો જીવ શા  
શા કારણોથી તેનું શ્રવણ કરી શકતો નથી. કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મની અપ્રાપ્તિમાં પહેલું  
કારણ એ બતાવવામાં આવ્યું છે કે શ્રમણ કે માહણ-૧૨ વ્રતોનું પાલન કરનાર  
ગૃહસ્થ-જ્યારે ગમે તે ઉદ્યાનમાં-વિવિધ પુષ્પોથી કે ફળોથી યુક્ત વૃક્ષોથી શોભિત  
અનેક જનસેવ્ય બગીચામાં કે આરામમાં-અનેક જાતની પુષ્પ બતિઓથી યુક્ત

मधुरवचनैः सुखशातादिप्रश्नपूर्वकं नो स्तोति, नो नमस्यति=नतमस्तको न भवति, नो सत्कारयति=अभ्युत्थादिना, नो सम्मानयति=वसत्यादिप्रदानेन, 'कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यम्' तत्र-कल्याणं=कल्याणस्वरूपम्, मङ्गलं=मङ्गलस्वरूपम्, दैवतं=धर्मदेवस्वरूपम्, चैत्यं=चितिः=विशिष्टज्ञानं, तथायुक्तं विशिष्टज्ञानवन्तं मन्वा नो पर्युपास्ते=नो सेवते. अर्थान् हेतून् प्रश्नान् कारणानि व्याकरणानि नो पृच्छति । तत्र-अर्थान् जीवाजीवादिपदार्थान्, हेतून्=अन्यथानुपपत्तिरूपान्, जीवा देवादिगतिं कथं पाप्नुवन्ति-इति स्वरूपान्, आत्मना सह कर्मणः कथं सम्बन्धो जायते? इति रूपान् वा, प्रश्नान्=संग्रहानोदार्थं जीवाजीवादिसारूपप्रच्छनावेषयान्, कारणानि='जीवस्य ज्ञानादि त्रयं केन कारणेनोत्पद्यते?' इत्यादिरूपाणि, यद्वा-‘चातुर्गतिलक्षणसंसारभ्रमणं

पुष्पजाति से युक्त स्थान में आया हुआ हो, तब उस समय जो जीव उनकी सत्कृति निमित्त उनके सामने नहीं जाता है, मधुर वचनों से उनकी सुखशाता नहीं पूछता है, उनकी स्तुति नहीं करता है, उनके पास नत-मस्तक नहीं होता है, अभ्युत्थान आदि क्रिया से उनका सत्कार नहीं करता है, वसति आदि प्रदान द्वारा कल्याणस्वरूप, मङ्गलस्वरूप, धर्मदेवस्वरूप, एवं विशिष्ट ज्ञानयुक्त उन्हें मानकर जो उनकी सेवा नहीं करता है. उनसे अर्थों को-जीवाजीवादि पदार्थों को, अन्यथानुपपत्तिरूप हेतु को, जैसे कि जीव देवादिगति में कैसे जाते हैं अथवा-आत्माके साथ कर्मों का संबंध होता है ऐसे हेतु को,-प्रश्नों को-संशयादिकों को दूर करने के लिये जीव अजीव आदि के स्वरूप को पूछनेरूप प्रश्नों को जीवको ज्ञानादित्रय किस कारण से उत्पन्न होते हैं इत्यादिरूप कारणों को, अथवा चातुर्गतिरूप संसारभ्रमण किस कारण से होता है? इत्यादिरूप कारणों को, पृष्ठक-जीवादिक के स्वरूप में

स्थान-मां आवेला होय, त्वादे ते समये जे एव तेमना सत्कार भाटे तेमनी सामे जतो नथी, मधुर वचने वडे तेमनी सुख शाता पछतो नथी, तेमनी स्तुति करतो नथी, तेमनी सामे नम्रलावे मस्तक नभावतो नथी अभ्युत्थान वगेरे क्रियाथी तेमने सत्कार करतो नथी, वसति वगेरे आपीने तेमने कल्याण स्वरूप, मङ्गलस्वरूप, धर्म-देवस्वरूप, अने विशिष्ट ज्ञानयुक्त मानीने जे तेमनी सेवा करतो नथी, तेमने अर्थोने एवाएवादि पदार्थोने, अन्यथानुपपत्तिरूप हेतुने, जेभडे एव देवादि गति डेवी रीते भेणवे छे डे आत्मानी साथे कर्मोना संबंध होय छे एवा हेतुने, प्रश्नने-संशय-वगेरेने दूर करवा भाटे एव अएव वगेरेना स्वरूपने जलएवा भावतना प्रश्नोने ज्ञानादित्रय एवने डेवी रीते प्राप्त थाय छे वगेरे रूप कारणोने, अथवा तो चातुर्गति

કેન કારણેન ભવતિ' इत्यादि रूपाणि, व्याकरणानि=पृष्ठस्य जीवादिस्वरूपस्य उत्तरतया प्रश्नान्तरकरणरूपाणि, तानि नो पृच्छति-एतेन स्थानेन=कारणेन चित्र ! जीवः केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं श्रवणतायै=श्रोतुं नो लभते-इति प्रथमं स्थानम् १। द्वितीयमाह-उपाश्रयगतम्-उपाश्रयो=वसतिः, तत्र गतं श्रमणं वा, इतोऽग्रे-'माहनं वा' इत्यारभ्य 'व्याकरणानि पृच्छति' इत्यन्तः सकलोऽपि पूर्वोक्तः पाठो ग्राह्यः अमुमेवार्थं सूचयितुमाह-तं चेव जाव' इति । हे चित्र ! एतेनाऽपि स्थानेन=कारणेन जीवः केवलिप्रज्ञप्तं धर्मं श्रवणतायै=श्रोतुं नो लभते इति द्वितीयं स्थानम् २। तृतीयमाह-गोचराग्रगतं=भिक्षार्थं ग्रामाभ्यन्तरे पविष्टं श्रमणं वा माहनं वा नो 'यावत्' यावत्पदेन-'अभिगच्छति, नो वन्दते, नो

પ્રાપ્ત કિયે ગયે ઉત્તર મેં પુનઃ પ્રશ્નાન્તર કરનેરૂપ વ્યાકરણોં કો, નહીં પૂછતા હૈ, હસ કારણ સે જીવ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કો સુન નહીં સકતા હૈ-હમ પ્રકાર સે યહ પ્રથમ સ્થાન કા નિરૂપણ હૈ। દ્વિતીયસ્થાન કા કારણ નિરૂપણ હસ પ્રકાર હૈ-ઉપાશ્રય-મેં જાકર શ્રમણ કો, અથવા માહણ કો, જો જીવ પ્રાપ્ત કરકે યાવત્ વ્યાકરણોં કોં નહીં પૂછતા હૈ, હૈ ચિત્ર ! હમ કારણ સે જીવ જીવ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મ કો સુન નહીં પાતા હૈ, યહાં 'ત' ચેવ યાવત્' પદ સે 'માહન' વા' યહાં સે લેકર 'વ્યાકરણાનિ પૂછતિ' વહાં તક કા સમ્પૂર્ણ પાઠ ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ। હસી અર્થ કી સૂચના 'ત' ચેવ જાવ' પદ સે દી ગઈ હૈ। તૃતીયસ્થાન હમ પ્રકાર સે હૈ-શ્રમણ યા માહન ભિક્ષા કે લિયે ગ્રામ કે ખીતર આયા હો, પરન્તુ જો જીવ ઉનકે સમક્ષ નહીં જાતા હૈ, ઉનકો વન્દના નહીં કરતા હૈ ઉન્હે નમસ્કાર નહીં કરતા હૈ. ઉનકા

રૂપ સંસારબ્રમણ શાં કારણથી હોય છે વગેરે રૂપ કારણોને, પૃષ્ઠ જીવાદિકના સ્વરૂપ વિષે જે ઉત્તર આપવામાં આવે તે વિષે ફરી સામે પ્રશ્નોત્તર કરવાં રૂપ વ્યાકરણોને પૂછતો નથી, આ કારણથી જીવ કેવલિ પ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકતો નથી. આ પ્રમાણે આ પ્રથમસ્થાનનું નિરૂપણ છે. દ્વિતીયસ્થાનના કારણનું નિરૂપણ આ પ્રમાણે છે. ઉપાશ્રયમાં જઈને શ્રમણને કે માહણને પ્રાપ્ત કરીને જે જીવ યાવત્ વ્યાકરણોને પૂછતો નથી. હે ચિત્ર ! આ કારણથી પણ જીવ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકતો નથી. એહીં 'ત' ચેવ યાવત્' પદથી 'માહન' વા' એહીંથી માંડીને 'વ્યાકરણાનિ પૂછતિ' એહીં સુધીનો સંપૂર્ણ પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે. એજ અર્થને 'ત' ચેવ જાવ' પદથી સૂચિત કરવામાં આવ્યો છે. તૃતીય સ્થાન આ પ્રમાણે છે.-શ્રમણ કે માહણ ગોચરી માટે-ભિક્ષા માટે-ગામમાં આવેલાં હોય એવી પરિસ્થિતિમાં જે જીવ તેમની સામે જતો નથી, તેમને વન્દન કરતો નથી તેમને નમસ્કાર



नमस्यति, नो सत्कारयति, नो स मानयति, नो कल्याणं मङ्गलं दैत चैन्यम्,  
इति संग्राह्यम्, पयुपास्ते, तथा-विपुलेन=प्रचुरेण अशनपानखाद्यस्वाद्येन=  
अशनादिना चतुर्विधेनाहारेण नो प्रतिभम्भयति-अशनादिकं श्रमणाय माह-  
नाय वा नो ददाति, अर्थात् यावत्-यावत्पदेन-हेतून् प्रश्नान् कारणानि  
व्याकरणानि इति संग्राह्यम् नो पृच्छति। एतेन=उपयुक्तं कारणेन हे  
चित्र ! जीवः केवलप्रज्ञां धर्मं श्रवणतयै=श्रोतुं नो लभते-इति तृतीयं  
स्थानम् ३। चतुर्थस्थानमाह-यत्रापि=स्मिन् कस्मिंश्चदपि स्थाने खलु श्रम  
णेन=साधुना वा महानेन=द्वादशव्रतधारिणा वा सद्धे=सह अभिसमागच्छति=  
संगतो भवति, तत्रापि खलु 'अयं श्रमणो वा-माहनो वा मां न परिचिनुयात्'  
इति हेतोः आत्मानं=स्वं हस्तेन वा वस्त्रेण वा छत्रेण वा आगृत्य=आच्छाद्य  
तिष्ठति नो अर्थात् यावत् पृच्छति। एतेनापि स्थानेन=कारणेन चित्र ! जीवः

सत्कार और सम्मान नहीं करता है, तथा कल्याणरूप, मंगलरूप, धर्मदेव-  
रूप मानकर तथा विशिष्टज्ञानयुक्त मानकर उनको सेवा नहीं करता है,  
तथा विपुल-प्रचुर-अशन, पान, खाद्य, स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार से उन्हें  
प्रतिभामित नहीं करता है, अर्थात् श्रमण के लिये माहन के लिये जो  
चतुर्विध आहार नहीं देता है, एवं अर्थों को, हेतु को, प्रश्नों को, कारणों  
को तथा व्याकरणों को उनसे नहीं पूछता है इस उपयुक्त कारण से हे  
चित्र ! जीव केवलप्रज्ञा धर्म को नहीं सुन सकता है। चतुर्थस्थान  
इस प्रकार से है-चाहे जिस किसी भी स्थान में साधु या  
माहन-१२ व्रतधारी श्रावक के साथ संगत हो जावे-परन्तु वहाँ पर भी  
वह जीव अपने आपको हाथ से, या वस्त्र से, या छत्र से, ढंक लेता है  
इस रूपात् से कि महाराज मुझे पहिचान न ले और न उनसे अर्थादिकों

करतो नथी, तेमनुं सन्मान अने सत्कार करतो नथी तेमन्-तेमनुं कल्याणरूप मंगल-  
रूप, धर्मदेव स्वरूप भानीने तथा विशिष्ट ज्ञानयुक्त भानीने तेमनी सेवा करतो नथी  
तेमन् विपुलप्रचुर अशन, पान, खाद्य, स्वाद्यरूप चतुर्विध आहार-वडे तेमने प्रतिभा-  
मित करतो नथी. ओटवे के श्रमणने के माहणने ने चतुर्विध आहार आपतो नथी  
तथा अर्थीने, हेतुओंने प्रश्नोने कारणोने तथा व्याकरणोने तेमने पूछतो नथी आ  
उक्त कारणथी हे चित्र ! एव केवलप्रज्ञा धर्मनुं श्रवण करी शकतो नथी. चतुर्थ  
स्थान आ प्रमाणे छे-जमे ते स्थाने साधु के माहन-१२ व्रतधारी श्रावक भणे त्यारे  
ने एव पोतानी जतने महाराज अभने कोणणी वे नहि तेवा विचारथी हाथवडे,  
के वस्त्रवडे, के छत्रवडे संताडी हे छे अने तेमने अर्थादिको विषे पणु पूछतो नथी



કેવલિપજ્ઞપ્તં ધર્મં મળતાયૈ=શ્રોતું ન લભતે-इति चतुर्थं स्थानम् ४। सम्प्र-  
त्युपसंहરन्नाह-एतैश्चतुर्भिः स्थानैः खलु चित्र ! जीवः केवलिपज्ज्ञप्तं धर्म-  
श्रवणतायै=श्रोतुं न लभते-इति ।

इत्थं केवलिपज्ज्ञप्तस्य धर्मस्यालाभे चतुर्विधं कारणमुक्तवा सम्प्रति तत्राभे  
चतुर्विधं कारणमाह—‘चउहिं’ इत्यादि ।

हे चित्र ! चतुर्भिः स्थानैः=कारणैः जीवः केवलिपज्ज्ञप्तं धર્मं श्रवण-  
तायै=શ્રોતું લભતે, તથા—‘આરામગયં વા’ इत्यादि । કેવલિપજ્ઞપ્તધર્મલાભે  
યાનિ ચત્વારિ સ્થાનાનિ પ્રોક્તાનિ, તાન્યેવાત્ર તદ્વેપરોત્યેન વિજ્ઞેયાનીતિ ।

કો પૂછતા હૈ—તો એસા જીવ ઇસ કારણ સે મી કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મ કો સુન  
નહીં પાતા હૈ. અવ કેશીકુમારશ્રમણ ઉપસંહાર કરતે હુવ કહતે હૈં જિ હે  
ચિત્ર ! જીવકો ધર્મલાભ હોને મેં એ ચાર કારણ વાધક હૈં । ઇન્કે હોને  
સે જીવ કો કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ ।

इस तरह 'केवलिपज्ज्ञप्त धर्म' के अलाभ में चतुर्विध कारण कहकर  
अव केशीकुमारश्रमण उसका लाभ होने में चार कारणों का कथन करते  
हैं 'चउहिं ठाणेहिं' हे चित्र ! चार कारणों से जीव केवलिपज्ज्ञप्त धर्म को  
सुनता है अर्थात् केवलिपज्ज्ञप्त धर्म के अलाभ में जो चार कारण प्रकट  
किये गये हैं, वे ही चार कारण विपरीतरूप से आचरित होने पर जीव  
के लिये धर्मलाभ के कारण हो जाते हैं यही बात '१ आरामगयं वा उज्जा-  
णगयं वा' इत्यादि चार सूत्रपाठ द्वारा प्रकट किया है ।

તો આ જાતનો જીવ પણ આ કારણથી કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મનું શ્રવણ કરી શકતો  
નથી. હવે કેશીકુમાર શ્રમણ ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે હે ચિત્ર ! જીવને ધર્મલાભની  
પ્રાપ્તિમાં આ ચાર કારણો વિનરૂપે નહીં છે. આ સર્વથી જીવને કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મની  
પ્રાપ્તિ થતી નથી.

આ પ્રમાણે કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મના અલાભ સંબંધી ચાર કારણોનું વિવેચન  
કરીને હવે કેશીકુમાર શ્રમણ કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મના લાભ માટે જે ચાર કારણો છે તેમનું  
કથન કરતાં કહે છે—‘‘ચઉહિં ઠાણેહિં’’ હે ચિત્ર ! ચાર કારણોથી જીવ કેવલિપજ્ઞપ્ત  
ધર્મનું શ્રવણ કરે છે. એટલે કે કેવલિપજ્ઞપ્ત ધર્મના અલાભમાં જે ચાર કારણો  
ખતાવવામાં આવ્યાં છે, તેજ ચારેચાર કારણો વિપરીત રૂપમાં આચરવામાં આવે તો  
તેજ ચાર કારણો ધર્મલાભ માટે ઉપયોગી થઇ જાય છે. એજ વાત ‘‘૧ આરામગયં  
વા ઉજ્જાણગયં વા’’ વગેરે ચાર સૂત્રો વડે પ્રગટ કરવામાં આવી છે.

इत्थं केवलप्रज्ञप्तधर्मालाभयोः कारणान्युत्तवा सम्प्रति केवलप्रज्ञप्त-  
धर्मालाभे यानि कारणानि सन्ति तद्विशिष्ट एव प्रदेशी राजाऽस्ति स कथं  
मया धर्मआख्येयः ? इति केशिकुमारश्रमणश्चित्रं सारथिमाह—‘तुज्झं च  
णं चित्ता ! पएसी राया’ इत्यादि । हे चित्र ! तव=त्वदीयश्च खलु प्रदेशी  
राजाआरामगतं वा, ‘तं चेव सव्वं भाणियव्वं आइल्लएणं गमएणं जाव अप्पोणं  
आवरेत्ता चिट्ठइ’ इति पाठेन तदेव सर्वगमकजातं भणितव्यम्. केन गमकेन ?  
इत्याह—‘आइल्लएणं’ इति आदिमेन गमकेन=आलापकेन ‘उज्जाणगयं वा’  
उद्यानगतं वा, इत्यारभ्य ‘अप्पा णं आवरेत्ता चिट्ठइ’ आन्मानमावृत्य तिष्ठति, इति  
पर्यन्तं भणितव्यम् । एवंविधात्वदीयः प्रदेशी राजाऽस्ति, तत्कथं=केन प्र-  
कारेण खलु चित्र ! एवंविधाय त्वदीयाय प्रदेशिने राज्ञे वयं धर्मम् आख्या-  
स्यामः=उपदेक्ष्याम इति ॥ सू० १२३ ॥

मूलम्—तएणं से चित्त सारही केसिकुमारसमण एवं वयासी एवं खलु-  
भंते ! अणया कयाइं कंबोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया, ते  
मएपएसिस्स रणो अन्नया, चेव उवणीया तं एएणं खलु भंते ! कार-  
णेणं अहं पएसिं रायं देवाणुप्पियाणं अंतिए हव्वमाणेस्सामि, तं मा णं  
देवाणुप्पिया ! तुब्भे पएसिस्स रन्नो धम्ममाइक्खमाणा गिलाएज्जाह,

इस तरह धर्मअप्राप्ति और धर्मप्राप्ति के कारणों को कहकर अब  
केशीकुमारश्रमण चित्र सारथी के प्रति यह प्रकट कर रहे हैं कि प्रदेशी  
राजा केवलप्रज्ञप्त धर्म के अप्राप्ति के कारणों से विशिष्ट है अनः मैं  
उसे किस प्रकार से धर्म का उपदेश दूँ. यही बात केशीकुमारश्रमण  
चित्र सारथि से यहां से आगे कहते हैं. ‘तुज्झं च णं चित्ता । पएसी  
राया’ इत्यादि मूलार्थ में टीका के अनुसार ही इस सब पाठका अर्थ  
लिख ही दिया गया है । अतः पुनः यहाँ नहीं लिखा है ॥ सू० १२३ ॥

आ रीते धर्म अप्राप्ति अने धर्म प्राप्तिना कारणोत्तुं स्पष्टीकरण करीने हुवे  
केशीकुमार श्रमण चित्रसारथीनी सामे आ बात कहे छे के प्रदेशी राजा केवल प्रज्ञप्त  
धर्मना अप्राप्तिना कारणोत्थी युक्त छे. ओथी हु तेने देवी रीते धर्मनो उपदेश करे.  
ओन बात केशिकुमारश्रमण चित्रसारथीने आ प्रमाणे कहे छे—“तुज्झं च णं चित्ता !  
पएसी राया” वगेरे मूलार्थभांज टीकार्य प्रमाणे न आ अधात्तुं विश्लेषण करवा-  
मां आठुं छे. ओथी अही ईरी अर्थ लभवां आठ्यो नथी. ॥ सू. १२३ ॥

अगिलाए णं भंते ! तुब्भे पएसिस्सरणो धम्ममाइक्खेज्जाह, छंदेणं भंते ! तुब्भे पएसिस्सरणो धम्ममाइक्खेज्जाह । तएणं से केसी कुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी आवीयाइ चित्ता ! जाणिस्सामो । तएणं से चित्ते सारही केसि कुमारसमणं वंदइ नमंसइ जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, जामेव दिस्सि पाउब्भए तामेव दिस्सि पडिगए ॥ सू० १२४ ॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिकुमारश्चरणमेवमवादीत्—एवं खलु भदन्त ! अन्यदा कदाचित् काम्बोजैः चत्वारः अश्वाः उपनयमुपनीताः ते मया प्रदेशिने राज्ञे अन्यदैव उपनीताः, तद् एतेन खलु भदन्त ! कारणेन अहं प्रदेशिनं राजानं देवानुप्रियाणामन्तिके हव्यमानेष्यामि । तत मा खलु देवानुप्रियाः ! यूयं प्रदेशिने राज्ञे धर्ममारुग्यान्तो ग्लायत, अग्लानाः

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (से चित्ते सारही) वह चित्र सारथि (केसिकुमारसमणं एवं वयासी) केशी कुमारश्चरण से ऐसा बोला (एवं खलु भंते ! अण्णया कयाइं कंबोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया) हे भदन्त ! किमी एक समय कम्बोजदेशवासियों ने चार घोड़े भेंट रूप में भेजे थे (ते मए पएसिस्सरणो अण्णयाचेव उवणीया उसे मैंने प्रदेशी राजा के समक्ष भेंट में उमी दिन दे दिया (तएणं खलु भंते ! कारणेण अहं पएसि रायं देवानुप्रियाणं अत्तिए हव्यमाणेस्सामि) अतः इस कारण से हे भदन्त ! मैं प्रदेशी राजा को आप देवानुप्रिय के पाम बहुत ही शीघ्र

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) तार पक्षी (से चित्ते सारही) ते चित्र सारथिओ (केसिकुमारसमणं एवं वयासी) केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे विनंती करतां छुं—(एवं खलु भंते ! अण्णया कयाइं कंबोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया) हे भदन्त ! ओह ओह वणते उण्णोण देशवासीओओ तार घोडाओओ प्रदेशी राजाने लेट भोडल्या उता, (ते मए पएसिस्सरणो अण्णयाचेव उवणीया) ते घोडाओओने भे प्रदेशी राजा सामे लेटइयमां अपित करी दीया छे, (तएणं खलु भंते ! कारणेण अहं पएसि रायं देवानुप्रियाणं अत्तिए हव्यमाणेस्सामि) ओथी हे भदन्त ! प्रदेशी राजाने आप देवानुप्रियनी पांसे नदही न उपस्थित करीश.

खलु भदन्त ! यूयं प्रदेशिने राज्ञे धर्ममाख्यात, छन्देन भदन्त ! यूयं  
प्रदेशिने राज्ञे धर्ममाख्यात । ततः खलु स केशीकुमारश्रमणः चित्रं  
सारथिमेवमवादीत्-अपि च चित्र ! ज्ञास्यामः । ततः खलु स चित्रः सारथिः  
केशिनं कुमारश्रमणं वन्दते नमस्यति, यत्रैव चातुर्घण्टः अश्वरथः तत्रैवो

लाङ्गा (तं मा णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे पएसिस्स रन्नो धम्ममाइक्खमाणा  
गिलाएज्जाह) तो आप हे देवानुप्रिय ! प्रदेशी राजा को जिनोक्त धर्म का  
उपदेश करते समय ग्लानि मत करना (अगिलाए णं भंते ! तुब्भे पए-  
सिस्स धम्ममाइक्खेज्जाह) प्रत्युत अग्लानिभाव से ही हे भदन्त ! आप  
प्रदेशी राजा को धर्म का उपदेश करना (छंदेणं भंते ! तुब्भे पएसिस्स रणो  
धम्ममाइक्खेज्जाह) तथा आप अपनी इच्छा के अनुसार ही हे भदन्त ! आप  
प्रदेशी राजा को धर्म का उपदेश देना, उसकी इच्छा के अनुसार नहीं  
(तए णं से केशीकुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं वयासी) तब उन केशी-  
कुमारश्रमणने चित्र सारथि से ऐसा कहा-(अविद्याइं चित्ता जाणिस्सामो)  
हे चित्र ! अक्षर आने पर देखा जावेगा, आप के कथनानुसार उसे  
धर्मोपदेश देने का मेरा भाव तो है। (तए णं से चित्ते सारही केसिं कु-  
मारसमणं वंदइ, नमंसइ, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ)  
इसके अनन्तर चित्र सारथिने केशीकुमारश्रमण को वन्दना की, नमस्कार  
किया, और फिर वह जहां चार घंटोंवाला अश्वरथ था वहां पर आया

(तं मा णं देवाणुप्पिया ! तुब्भे पएसिस्स रन्नो धम्ममाइक्खमाणा गिलाए  
ज्जाह) तो हे देवानुप्रिय ! आपश्री ते प्रदेशी राजने जिनोक्त धर्मने उपदेश  
करतां ग्लानि अनुभवशो नहि. (अगिलाए णं भंते ! तुब्भे पएसिस्स रन्नो धम्म-  
माइक्खेज्जाह) परंतु हे भदन्त ! आपश्री ते प्रदेशी राजने अग्लानिभावशी न  
धर्मोपदेश करशो. (छंदेणं भंते ! तुब्भे पएसिस्स रणो धम्ममाइक्खेज्जाह)  
तेभन हे भदन्त ! आपश्री पोतानी धृच्छा मुज्ज्ज न प्रदेशी राजने धर्मोपदेश करशो.  
तेनी धृच्छा प्रमाणे नहि. (तए णं से केशीकुमारसमणे चित्तं सारहिं एवं  
वयासी) त्थारे ते केशीकुमार श्रमणे ते चित्रसारथिने आ प्रमाणे क्खुं. (अविद्याइं  
चित्ता जाणिस्सामो) हे चित्र ! उचित अवसर आवशे त्थारे जेधं लक्षुं तमो  
कहे हे। ते मुज्ज्ज भारी पण तेभने उपदेश करवानी लावना छे न. (तए णं से  
चित्ते सारही केसिं कुमारसमणं वंदइ, नमंसइ, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे  
तेणेव उवागच्छइ) त्थार पछी चित्रसारथिणे केशिकुमारश्रमणने वंदना करी नम-  
स्कार कर्या अने पछी ते त्थार घंटोथी युक्त अश्वरथ हुतो. त्यां आव्थो. (चाउग्घंटे

पागच्छति, चातुर्घण्टमश्वरथं दूरोहति, यामेव दिशं प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः ॥ सू० १२४ ॥

टीका—‘तए णं से चित्ते’ इत्यादि—ततः खलु स चित्रः सारथिः केशि कुमारश्रमणमेवमवादोत्—एवं खलु हे भदन्त ! अन्यदा कदाचित् = कस्मिंश्चित् काले काम्बोजैः = कम्बोजदेशवासिभिः चत्वारः = चतुःसंख्यकाः अश्वाः उपनयं = प्राभृतम् उपनीताः = प्रापिताः, प्राभृतत्वेन दत्ता इत्यर्थः, ते मया अन्यदैव = तस्मिन्नेव काले प्रदेशिने राज्ञे उपनीताः तदेतेन कारणेन खलु हे भदन्त ! अहं प्रदेशिनं राजानं देवानुप्रियाणां = भवताम् अन्तिके = समीपे हव्यं = शीघ्रम् आनेष्यामि, तत्—तदा हे देवानुप्रियाः ! प्रदेशिने राज्ञे धर्मं = जिनोक्तम् आख्यान्तः = कथयन्तः सन्तो यूयं मा ग्लायत = ग्लानिं मा भजत, एतावदेव न प्रत्युत छन्देन = स्वकीयाभिप्रायेण यथेच्छमित्यर्थः हे भदन्त ! यूयं प्रदेशिने राज्ञे धर्मम् आख्यान्त = कथयत । ततः चित्रसारथेः कथना-

(चातुर्घण्टं आसरहं दुरूहह, जामेव दिशि पादुर्भूतः तामेव दिशि पडिगए) वहां आकर वह उस चारघंटों वाले अश्वरथपर सवार हो गया और जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर चला गया ।

टीकार्थ—चित्र सारथिने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—हे भदन्त ! किसी एक समय मेरे पास कम्बोजदेशवासियों द्वारा भेजे गये ४ घोड़े प्रदेशी राजा के लिये भेंटरूप में आये थे सो मैंने उसी दिन वे घोड़े प्रदेशी राजाके लिये शिक्षित कर दिये, इस तरह हमारी उनकी परस्पर में प्रीति है, इसलिये मैं चाहता हूं कि आप उसे जिनप्रतिपादित धर्म का उपदेश देवें मैं उसे आपके पास शीघ्र ही ले आऊंगा, उपदेश देने में आप किसी भी प्रकार का संकोच न करें, अपनी इच्छा के अनुसार धर्म

आसरहं दुरूहह जामेव दिशि पादुर्भूतः तामेव दिशि पडिगए) त्यां पडोन्थीने ते पोताना आर घंटोवाणा अश्वरथ पर सवार थछ गथे अने जे दिशा तरक्ष्थी ते आवेल हुतो तेज दिशा तरक्ष पाछा जतो रह्यो.

टीकार्थः—चित्रसारथिने केशीकुमारश्रमणने आ प्रमाणे कह्युं—हे भदन्त ! कोछ कोछ वर्षने भारी पासे कम्बोज देशवासीयोने राजने सेटमां आपवा भाटे घोडाओ मोकल्या हुता, तेज दिवसे ते घोडाओने प्रदेशी राजने से अर्पित करी दीधा, आम तेमनी आमारी साथे मित्रता छ, ओथी ज हुं छच्छुं छुं के आपश्री तेमने जिन प्रतिपादित धर्मनो उपदेश करे, तेमने हुं आपश्रीनी पासे जलही लावीश, उपदेश आपवामां आपश्री पोतानी छच्छा मुज्ज धर्मनी वातो प्रदेशी राजने संसणावने.

नन्तरं खलु केशीकुमारश्रमणः चित्रं सारथिम् एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण  
अवादीत्=अकथयत्-‘अविआइ’ अपि च हे चित्र ! ज्ञास्यामः=अवगमिष्यामः  
यथावसरं करिष्याम इत्यर्थः, त्वत्कथनानुसारेण करणस्य मम भावो वर्तते  
इत्याशयः ! ततः खलु स चित्रः सारथिः केशिनं कुमारश्रमणं वदन्ते नमस्यति  
चातुर्घण्टाश्वरथसमीपे समागत्याश्वरथमारोहति, यामेवदिशं समाश्रित्य प्रादु-  
र्भूतः=समागतः तामेवदिशं प्रतिगतः=प्रस्थितः ॥मृ० १२४॥

मूलम्--तएणं से चित्ते सारही कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्ल-  
पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे पभाए कयनियमावस्सए  
सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते साओ गिहाओ णिग्गच्छइ,  
जेणेव पएसिस्स रत्तो गिहे जेणेव पएसि राया तेणेव उवागच्छइ,  
पएस रायं करयल-जाव कट्ठु जएणं विजएणं वच्चावेइ, एवंवयासी-  
एवं खलु देवाणुप्पियाणं कंवोएहिं चत्तारि आसा उवणयं उवणीया  
ते य मए देवाणुप्पियाणं अणया चेव विणइया, तं एएणं सासी !  
ते आसे आइडिंए पासइ । तएणं से पएसि राया चित्तं सारहिं एवं  
वयासी-गच्छाहि णं तुमं चित्ता ! तेहिं चेव चउहिं आसेहिं आसरहे  
जुत्तामेव उवट्टवेहि जाव पच्चप्पिणाहि । तएणं से चित्ते सारही पए-

की बातें उसे सुनावें. चित्र सारथि का इस प्रकार कथन सुनकर केशी-  
कुमारश्रमणने उससे ऐसा कहा-चित्र ! समय आने पर देखा जावेगा. मेरा  
भाव अग्रिम ऐसा हुआ है कि मैं उसे जिनेन्द्रप्रतिपादित धर्म का उपदेश  
दूँ. केशीकुमारश्रमण की इस प्रकार की भावना जानकर चित्रसारथिने उनको  
वन्दनादिकिये और फिर अपने रथ पर सवार होकर अपने स्थान पर  
वापिस हो गया, ॥ मृ० १२४ ॥

चित्रसारथिनुं आ प्रमाणे कथन सांलणीने केशीकुमार श्रमणु तेने आम कल्लुं के डे  
चित्र ! उचित अवसर आवसे त्थारे जेष्ठ वधुं भारी जेवी छच्छ छ के डुं तेने  
जिनेन्द्र प्रतिपादित धर्मने उपदेश कइं. केशीकुमार श्रमणुनीं आ ज्ञातनी लावना  
जानीने चित्रसारथिजे तेमने वन्दन कर्था अने त्थारयणी पोताना रथ पर सवार थयने  
पोताना नि ।सस्थाने पाछा आवतो रह्यो. ॥सू. १२४॥

सिणा रन्ना एवं बुत्ते समाणे हट्टुट्टु जाव-हियाए उवट्टवेइ एयमाण-  
 क्षिय पच्चप्पिणइ । तएणं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स अंतिए  
 एयसट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्टुट्टु-जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे  
 साओ गिहाओ णिग्गच्छइ, जेणामेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव  
 उवागच्छइ, चाउग्घंटे आसरहं दूरुहइ, सेयवियाए नयगीए मज्झं-  
 मज्झेणं णिग्गच्छइ । तएणं से चित्ते सारही तं रहं णेगाइ जोयणाइ  
 उवभासेइ । तएणं से पएसी राया उण्हेण य तण्हाए य रहवाएण य  
 परिकिलंते समाणे चित्तं सारहि एवं वयासी-चित्ता ! परिकिलंते मे  
 सरीरे परावत्तेहि रहं । तएणं से चित्ते सारही रहं परावत्तेइ जेणेव  
 मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, पएसि राय एवं वयासी-ए स णं  
 सामी ! मियवणे उज्जाणे एत्थणं आसणं समं किलासं सम्मं अवणेमो ।  
 तएणं से पएसी राया चित्तं सारहि एवं वयासी-ए होउचित्ता । १२५।

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः कलयं प्रादुष्पभातायां रजन्यां  
 फुल्लोत्फुल्लकमलकोमलोन्मीलिते अथाऽऽपाण्डुरे प्रभाते कृतनियमावस्थके सहस्र

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (से चित्ते सारही) वह चित्रसारथि  
 (कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए) दूसरे दिन जब कि प्रातःकाल के रूप में  
 बदल गई और (फुल्लप्पलकमल कोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे) पभाए कयनि-  
 यमावस्सए) कमल विकसित हो चुके तथा नियम और आवश्यक कृत्य  
 जिसमें लोग कर चुके थे ऐसा पीतधवल प्रभात जब हो गया (सहस्स

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) तार पक्षी (से चित्ते सारही) ते चित्रसारथि-(कल्लं  
 पाउप्पभायाए रयणीए) भील द्विसे न्यारे रात्री प्रातःकालना रूपमां परिशुत थं  
 गं अने (फुल्लप्पलकमलकोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे) पभाए कयनियमाव-  
 स्सए) क्षमणे विकास पाभ्यां तेमं नियम अने आवश्यक कृत्यो नेमां लोक वडे  
 पूरा करवाभां आव्या, अबुं पीतधवल प्रभात न्यारे थुं (सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे



રઠ્ઠમૌ દિનકરે તેજસા જ્વલતિ સ્વાદ્ ગૃહાદ્ નિર્ગચ્છતિ, યત્રૈવ પ્રદેશિનો રાજો ગૃહં યત્રૈવ પ્રદેશો રાજા તત્રૈવોપાગચ્છતિ પ્રદેશિનં રાજાનં કરતલ-યાવત્ કૃત્વા જયેન વિજયેન વર્ધયતિ, એવમવાદીત્-એવં સ્વલુ દેવાનુપ્રિયાણાં કમ્બોજેષુ ચત્વારોઽશ્વા ઉપનયસ્વ ઉપનીતા, તે ચ મયા દેવાનુપ્રિયેઽશ્વઃ અન્યદા-ચૈવ વિનયિતાઃ તદ્ એત સ્વલુ સ્વામિન્ ! તાન્ અશ્વાન્ આત્મદ્વિકાન્ પશ્યત । તતઃ સ્વલુ સ પ્રદેશી રાજા ચિત્રં સારથિસ્વ એવમવાદીત્-ગચ્છ સ્વલુ

રસિસ્મિ દિનયરે તેયસા જલંતે સાઓ ગિહાઓ ગિગ્ગચ્છઙ્) એવં સહસ્રફિ-રણોં વાલા સૂર્ય જવ અપને તેજ સે ચમકને લગા-અપને ઘર સે નિકલા (જેણેવ પર્ણસિસ્મ રણો ગિહે જેણેવ પર્ણો રાયા, તેણેવ ઉવાગચ્છઙ્) નિકલ કર વહ વહાં ગયા જેહાં પ્રદેશી રાજા કા ગૃહ થા ઓર ઉસમેં મી જહાં વહ પ્રદેશો રાજા થા (પર્ણસિરાયં કરયલ જાવ કટ્ટુ જર્ણં વિજર્ણં વદ્ધાવેઙ્) વહાં જાકર ઉસને પ્રદેશી રાજા કો દોનોં હાથ જોડકર બહે વિનય કે સાથ પ્રણામ ક્રિયા ઓર જય વિજય શબ્દોં કા ઉચ્ચારણ કરતે હુએ ઉસે વધાઈ દી (એવં વયાસી) વધાઈ દેકર ફિર ઉમને ઉસસે એમા કહા— (એવં સ્વલુ દેવાનુપ્રિયાણં કંબોર્ણિં ચત્તારિ આસા ઉવળયં ઉવળીયા) કમ્બો-જદેશવાસિયોંને ચાર ઘોડે મેંટરૂપ મેં આપ દેવાનુપ્રિય કે લિયે મેજે થે (તે ય મર્ણ દેવાનુપ્રિયાણં અળ્ળયા ચેવ વિળ્ળયા) ઉન્હે મેંને આપકે લિયે વિનીત ઉમી દિન વના દિયા હૈ અર્થાત્ શિક્ષિત કર દિયા હૈ (તં ઈહ ણં સામી તં આસે આર્હેઙ્કિં પામઙ્) અતઃ આપ પાઈયે ઓર સ્વકીય પ્રશસ્તગતિ ઓદિ

તેયસા જલંતે સાઓ ગિહાઓ ગિગ્ગચ્છઙ્) અને સહસ્ર ફિરણોવાળો સૂર્ય જ્યારે પોતાના તેજથી પ્રકાશિત થવા લાગ્યા. પોતાના ઘરેથી નીકળ્યો. (જેણેવ પર્ણસિસ્મ રણો ગિહે જેણેવ પર્ણો રાયા, તેણેવ ઉવાગચ્છઙ્) નીકળીને તે જ્યાં પ્રદેશી રાજાનું ગૃહ હતું અને તેમાં પણ જ્યાં તે પ્રદેશી રાજા હતો ત્યાં ગયો. (પર્ણસિરાયં કરયલ જાવ કટ્ટુ જર્ણં વિજર્ણં વદ્ધાવેઙ્) ત્યાં જઈને તેણે પ્રદેશી રાજાને બંને હાથ જોડીને નમ્રતાપૂર્વક પ્રણામ કર્યા અને જયવિજયના શબ્દોનું ઉચ્ચારણ કરીને તેને વધામણી આપી. (એવં વયાસી) વધામણી આપી. તેણે તેને આ પ્રમાણે કહ્યું. (એવં સ્વલુ દેવાનુપ્રિયાણં કંબોર્ણિં ચત્તારિ આસા ઉવળયં ઉવળીયા) કંબોજ દેશનાં નાગરિકોએ આપ દેવાનુપ્રિય માટે ચાર ઘોડાઓ ભેટ રૂપમાં મોકલ્યાછે. (તે ય મર્ણ દેવાનુપ્રિયાણં અળ્ળયા ચેવ વિળ્ળયા) તે ઘોડાઓને મેં તેજ દિવસે આપશ્રીના માટે યોગ્ય શિક્ષિત બનાવી દીધા છે. (તં ઈહ ણં સામી તં આસે આર્હેઙ્કિં પામઙ્) એથી આપ પધારો અને સ્વકીય પ્રશસ્ત ગતિ વગેરે શક્તિઓ

त्वं चित्र ! तैरेव चतुर्भिरश्वैः अश्वरथं युक्तमेव उपस्थापय यावत् प्रत्यर्पय ।  
ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिना राज्ञा एवमुक्तः सन् हृष्ट तुष्ट-यावत्  
हृदय उपस्थापयति, एतामाज्ञप्तिकां प्रत्यर्पयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा  
चित्रस्य सागथेरन्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निशम्य हृष्ट तुष्ट-यावद् अल्प-  
महाघाभरणालङ्कितशरीरः स्वाद् गृहाद् निर्गच्छति, यत्रैव चातुर्वर्ण्यः अश्वरथ-

शक्ति से युक्त हुए इन्हे देखाये। (तएणं से पएसी राया चित्तं सारहिं  
एवं वयासी) तब उस प्रदेशी राजाने चित्र सारथि से ऐसा कहा—  
(गच्छहि णं तुमं चित्ता ! तेहिं चैव चउहिं आसेहिं आसरहं जुतामे  
उवड्वेहिं जाव पच्चप्पिणाहि) हे चित्र ! तुम जाओ और उन्हीं कम्बोज  
से प्राप्त हुए चारों घोड़ों से युक्त करके अश्वरथ को तैयार  
कर ले आओ। और उस बात की सुझो पीछे ग़बर दो  
(तएणं से चित्ते सारही पएसिणा रन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्टतुट्ट जाव  
हियए उवड्वेह् एयमाणत्तिपं पच्चप्पिणह्) इस प्रकार से प्रदेशी राजा  
द्वारा कहा गया वह चित्र सारथि बड़ा ही हृष्टतुष्ट यावत् हृदयवाला हुआ  
और उसने चार घोड़ों से युक्त करके अश्वरथ को उपस्थित कर दिया, बाद  
में प्रदेशी राजा को इसका निवेदन किया (तएणं से पएसी राया चित्तस्स  
सारहिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्टतुट्ट जाव अप्पमहग्धाभरणा-  
लंकिगसररीरे साओ गिहाओ गिग्गच्छह्) इसके बाद प्रदेशी राजा चित्र

थी युक्त थयेला ते घोडाओनुं निरीक्षणुं करे। (तएणं से पएसी राया चित्तं  
सारहिं एवं वयासी) तबरे ते प्रदेशी राजाओ चित्रसारथीने आ प्रमाणे कथुं.  
(गच्छहि णं तुमं चित्ता ! तेहिं चैव चउहिं आसेहिं आसरहं जुतामेव  
उवड्वेहिं जाव पच्चप्पिणाहि) हे चित्र ! तमे नओओ अने ते कंओओदेशना नाग-  
रिडोथी प्राप्त थयेला तारेवार घोडाओने रथमां लेडीने ते अश्वरथ आहीं उपस्थित  
करे। अने ते पछी भने आ वातनी भणर आपो। (तएणं से चित्ते सारही  
पएसिणा रन्ना एवं वुत्ते समाणे हट्टतुट्ट जाव हियए उवड्वेह् एयमाण-  
त्तिपं पच्चप्पिणह्) आ प्रमाणे प्रदेशी राजा वडे आज्ञापित थयेला ते चित्रसारथि  
भूणओ हट्टतुट्ट हृदयवाणो थये अने तेणे तारेवार घोडाओथी सज्ज करीने अश्वरथ  
त्यां राजनी सेवामां उपस्थित कर्यो। अने तार पछी तेनी भणर राजनी पास  
पडोआडी। (तएणं से पएसी राया चित्तस्स सारहिस्स अंतिए एयमट्ठं  
सोच्चा निसम्म हट्टतुट्ट जाव अप्पमहग्धाभरणा लंकिगसररीरे साओ गिहाओ  
गिग्गच्छह्) तारपछी प्रदेशी राजा चित्र सारथिनी अश्वरथ उपस्थित थध नवानी

स्तत्रैकोपागच्छति. चातुर्घण्टमश्वरथं दूरोर्हति, श्वेतविकाया नगर्या मध्य-  
मध्येन निर्गच्छति । ततः खलुः स चित्रः सारथिस्तं रथं नैकानि योजनानि  
उद्भ्रामयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा उष्णेन च तृणया च रथवातेन च  
परिक्लान्तः सन् चित्रं सारथिमेवमवादीत्-चित्र ! परिक्लान्तं मे शरीरं, परा-

सारथि की अश्वरथ के तैयार हो जाने की वान की नुनकर और उसे  
हृदय में धारण कर बड़ा ही अधिक हर्षित एवं तुष्ट चित्त हुआ. उसने उसी  
समय अपने शरीर पर बहुमूल्य अल्पभार वाले आभूषणों की धारण किया  
शीघ्र ही वह फिर अपने घर से बाहर निकला (जेणामेव चाउग्रघंटे आप-  
रहे तेजेव उवागच्छह) बाहर निकल कर वह वहां पर आया कि  
जहां पर वह चार घंटों वाला अश्वरथ तैयार किया गया खड़ा था (चाउग्रघंटे  
आसरहं दुरुहइ, सेयवियाए मज्जं मज्जेणं गिग्गच्छइ) वहां आकर वह  
चार घंटों वाले उस रथ पर बैठ गया. फिर वह श्वेतांघ्रिका नगरी के  
ठीक मध्यमार्ग से होकर निकला (तएणं से चित्ते सारही तं रहं जोगाइं  
जोयणाइं उवामेइ) बाद में उस चित्र सारथिने उस रथको अनेक योजनों  
तक बहुत तेज चाल से चलाया. (तएणं से पएसी राया उण्हेण य  
तण्हाए य रहवाएण य परिकिलंते समाणे चित्तं सारहिं एवं वयासी) इस  
कारण वह प्रदेशी राजा आतप से, प्यास से और रथगत्युद्धव वायु से  
खिन्न हो गया, अतः उसने चित्र सारथि से ऐसा कहा-(चित्ता ! परिकि

वात सांलणीने अने तेने इदयमां धारणु करीने जमज्ज दुर्षितअने तुष्ट चित्तवाणो थयो  
तेणु तेज क्षणु पोताना शरीर पर गहुमूढ्य तेमज्ज अल्पभारवाणां आभूषणो धारणु  
कयां अने नद्धी ते पोताना भडेलथी गडार नीकण्यो. (जेणामेव चाउग्रघंटे आस-  
रहे तेजेव उवागच्छइ) गडार नीकणीने ते त्यां आव्यो के न्यां आर घंटवाणो  
अश्वरथ सुसज्ज थईने उलो उतो. (चाउग्रघंटे आसरहं दुरुहइ, सेयवियाए  
नयरीए मज्जं मज्जेणं गिग्गच्छइ) त्यां पडोन्थीने ते आर घंटोवाणा ते अश्वरथ  
पर जेसी गथो अने त्थारपथी ते श्वेतांगिका नगरीना ठीक मध्यवाणा राजमार्ग पर  
थईने नीकण्यो. (तएणं से चित्ते सारही तं रहं जोगाइं जोयणाइं उवामेइ)  
त्थारपथी ते चित्रसारथिणे ते रथने धणु योजने सुधी गहुज तीव्रवेगथी बलाव्यो.  
(तएणं से पएसी राया उण्हेण य तण्हाए य रहवाएण य परिकिलंते समाणे  
चित्तं सारहिं एवं वयासी) तेथी ते प्रदेशी राजा तापथी, तरसथी अने रथनी  
तीव्रगतिने वीधि. सामेथी अथडाता पवनथी गिन्न थई गथो. अथी तेणु चित्र  
सारथिने आ प्रभाणु श्रुं. (चित्ता ! परिकिलंते मे शरीरे परावत्तेहि, रहं)

વર્તય રથમ્ । તતઃ સ્વલુ સ ચિત્રઃ સારથિઃ રથં પરાવર્તયતિ, યત્રૈવ મૃગ-  
વનમુદ્યાનં તત્રૈવોપાગચ્છતિ, પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત્-एण स्वलु स्वामिन्  
मृगवनमुद्यानं, अत्र स्वलु अश्वानां श्रमं क्लामं सम्यग् अपनयामः । ततः  
स्वलु स प्रदेशी राजा चित्रं सारथिमेवमवादीत-एवं भवतु चित्र ! ॥મુ.૦૧૨૫॥

ટીકા—‘ત एणं से चित्ते’ इत्यादि-ततः स्वलु स चित्रः सारथिः  
कल्ये=आगामिनिदिवसे प्रादुष्पभातीयां=प्रादुः-प्रकाशितं प्रभातं यस्यां,  
तस्यां रजन्यां=रात्रौ सत्याम्, निशावमाने इत्यर्थः, अथ=पुनःफुल्लोत्पलकमल-

લતે મે સરીરે પરાવતોહિ રહ) હે ચિત્ર ! મેરા શરીર થક રહા છે, અતઃ તુમ  
રથ કો વાપિસ લૌટા લો (ત एणं से चित्ते सारही रहं परावत्तेइ, जेणेव  
मियवणे उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ) તવ ઝસ ચિત્ર સારથિને રથકો લૌટા લિયા  
ઔર જહાં મૃગવન નામકા ઉદ્યાન થા ઝસ ઔર ચલ દિયા (एणं रायं एयं  
वयासी)વહાં પહુંચ વર ઝસને પ્રદેશો રાજા સે ંસા કહા (एणं सामी मियवणे  
उज्जाणे एत्थ णं आसाणं समं क्लामं सम्मं अवणेमो) હે સ્વામિન્ !  
યહ મૃગવન નામકા ઉદ્યાન હે યહાં ઠહરકર ઘોડોં કો શ્રમ કો ઔર ક્લામ  
કો મેં અચ્છી તરહ સે દૂર કિયે લેતા હું । (त एणं से पएसी राया  
चित्तं सारहि एवं वयासी) તવ વહ પ્રદેશો રાજા ચિત્ર સારથિ સે ઝસ  
પ્રકાર ચોલાં (एवं होउ चिना) હે ચિત્ર ! મલે તુમ ંસા કરો ।

ટીકાર્થ—ઁસકો વાદ દૂસરે દિન ચિત્ર સારથિ પ્રાનઃ કાલ હોતે હી  
રાત્રિકી સમાપ્તિ હોતે હી-અપને ઘર સે નિકલા ંસા સંવંધ યહાં લગાના  
ચાહિયે. જવ યહ ઘર સે નિકલા ઝસ સમયતક કમલ વિકસિત હો ચુકે

હે ચિત્ર ! મારું શરીર શ્રમયુક્ત થઇ ગયું છે, એથી તમે રથને પાછો વાળી લો.  
(त एणं से चित्ते सारही रहं परावत्तेइ, जेणेव मियवणे उज्जाणे तेणेव  
उवागच्छइ) ત્યારે તે ચિત્ર સારથિએ રથને પાછો વાળી લીધો અને જ્યાં મૃગવન  
નામે ઉદ્યાન હતું તે તરફ રથને હાંક્યો. (एणं रायं एयं वयासी) ત્યાં પહોંચીને  
તેણે પ્રદેશી રાજાને આમ કહ્યું. (एणं सामी मियवणे-उज्जाणे एत्थ णं  
आसाणं समं क्लामं सम्मं अवणेमो) હે સ્વામિન્ ! આ મૃગવન નામે ઉદ્યાન  
છે. અહીં રોકાઇને હું ઘોડાઓના થાકને અને ખિન્નતાને સારી રીતે મટાડી લઉં છું.  
(त एणं से पएसी राया चित्तं सारहि एवं वयासी) ત્યારે પ્રદેશી રાજાએ  
ચિત્ર સારથિને આ પ્રમાણે કહ્યું. (एवं होउ चित्ता) હે ચિત્ર ! મારું તમે ભલે આમ કરો.

ટીકાર્થ—ત્યારપછી ખીજ દિવસે રાત્રી પૂરી થતાં તેમજ સવાર થતાં જ ચિત્ર  
સારથિ પોતાના ઘેરથી નીકળ્યો. એવો અર્થ અહીં કરવો ઘટે છે. તે જ્યારે પોતાના

कोमलोन्मीलिते-फुलोत्पलं=विकसितकमलं, कमलो-हरिणविशेषश्च तयोः  
कोमलं=मृदु उन्मीलनम्-कमलदलानां विकसनं हरिणनेत्राणामुन्मेषणं च  
यस्मिन्, कमलविकसनसमये हरिणनेत्रोन्मीलनसमये वेत्यर्थः तथाभूते आपा-  
ण्डुरे-आ=समन्तात् पाण्डुरे=पीतधवलं, तथा-कृतनियमावश्यकै=नियमाः=  
सचितादित्यागल्पाश्चतुर्दशसंख्यकाः,

उक्तञ्च-“सचित्तं १ दन्व २ विगङ्ग ३-चाणह ४ तंबोल ५ वत्थ ६ कुसुमे ७ ।

वाहण ८ सयण ९ विलेपण १०-चंभ ११ दिसि १२ ण्हाण १३ भत्ते १४ ॥ १ ।

छाया-सचित्तं १ दन्व २ विकृत्यु ३ पान ४-ताम्बूल ५ वत्थ ६ कुसुमे ७ । वाहन ८  
शयन ९ विलेपन १० ब्रह्म ११ दिक् १२ स्नान १३ भक्ते १४ ॥ इति,

आवश्यकं=प्रतिक्रमणं तच्चेह रात्रिं कं, तयोः समाहारे नियमावश्यकं, कृतं=  
विहितं नियमावश्यकं यस्मिन् तत्तस्मिन् तादृशे प्रभाते=मातःकाले तथा-  
सहस्ररश्मौ=सहस्रकिरणसंपन्ने दिनकरे=सूर्ये तेजसा ज्वलति=दीप्यमाने सति  
स्वात्=स्वकीयाद् गृहाद् निर्गच्छति, यत्रैव प्रदेशिनो राज्ञो गृहं=भवनं  
यत्रैव च प्रदेशी राजा वर्त्तते तत्रैव उपागच्छति=समागच्छति, प्रदेशिनं  
राजानं करतल-यावत्-करतलपरिगृहीतं शिरावर्त्तं मस्तकेऽञ्जलिं कृत्वा  
जयेन विजयेन वर्द्धयति, वर्द्धयित्वा एवमवादीत्-एवं खलु देवानुप्रियेभ्यः=

थे अथवा कमल और हरिणविशेषों के नेत्र निद्रा विगत हो जाने के कारण  
उपड चुके थे, प्रभात का रंग पीत धवल हो चुका था लोगोंने-धार्मिक जनताने  
१४ नियमों ले लिया था. और रात्रि प्रतिक्रमण भी कर  
लिया था. वे १४ नियमों इस प्रकार से हैं-“सचित्तं दन्व” इत्यादि ।

तथा सहस्रकिरण संपन्न सूर्य भी अपने तेज से दीप्यमान हो चुका था. घर से  
निकलकर वह प्रदेशी राजा के पास पहुँचा. वहाँ पहुँच कर उसने प्रदेशी राजा  
को दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार किया, उन्हें वधाई दी और फिर ऐसा  
कहा आप देवानुप्रिय के लिये जो कम्बोजवासियोंने चार घोड़े भेंटरूप

धेरथी नीकल्यो ते वणते कमणो विकसित थं थूक्यां हुतां. अथवा कमल हरिण (भृगु)  
विशेषना नेत्रो निद्रा रहित थं ज्वाली उघडी थूक्यां हुतां. प्रभातनो वारुं पीतधवल  
थं थूक्यो हुतो. दोहाये-धार्मिक माणुसोये-१४ नियमोने धारण करी लीधा हुता  
अने रात्रिक प्रतिक्रमण पणु करी लीधुं हुतुं. ते १४ नियमो आ प्रमाणे छे.

‘सचित्तं दन्व’ इत्यादि.

तेमज सहस्रकिरण संपन्न सूर्य पणु पोताना तेजथी हेदीप्यमान थं थूक्यो  
हुतो धेरथी नीकलीने आरथि प्रदेशी राजाना पोसे गयो. त्यां पडोन्थीने तेणु प्रदेशी  
राजने जने हाथ जोडीने नमस्कार कर्या तेमने वधामणी आपी अने पछी आ प्रमाणे

भवद्भ्यः काम्बोजैश्चत्वारोऽश्वा उपनयमुपनीताः=प्राभृतत्वेन समानीताः ते च मया देवानुप्रियेभ्यः=भवतां कृते अन्यदैव=तदैव विनयिताः=विनयं प्रापिताः शिक्षिताः, तत्=तस्मात्कारणात् एत आगच्छत तान् आत्मर्द्धिकान्=स्वकीय-प्रशस्तगत्यादिशक्तिसम्पन्नान् अश्वान् पश्यत । ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रं सारथिमेवमवादीत्-गच्छ खलु त्वं चित्र ! तैरेव काम्बोजप्राप्तैश्चतुर्भिरेवैः युक्तमेव=सज्जितमेव अश्वरथम् उपस्थापय यावत् प्रत्यर्पय, यावच्छब्देन उपस्थाप्य एतामाज्ञप्तिकां मम प्रत्यर्पय । ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिना राज्ञा एवम्=अनेन सज्जितरथोपस्थापनरूपेण प्रकारेण उक्तः=कथितः हृष्टतुष्ट यावद्दहृदयः, यावच्छब्देन-हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यतः हर्षवशविसर्पद्दहृदयः सन् उपस्थापयति=तैश्चतुर्भिरेवाश्वैर्युक्तमेवाश्वरथमुपस्थितं करोति एतां=राजोक्ताम् आज्ञप्तिकाम्=आज्ञां प्रत्यर्पयति =‘युक्त एव रथो मयाऽऽनीतः’ इति सूचयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रस्य सारथेः अन्तिके=समीपे-युक्तरथोपस्थापनरूपम् अर्थं=वाक्यं श्रुत्वा कर्णगोचरीकृत्य, निशम्य=हृष्यधार्य हृष्टतुष्ट यावत्-यावच्छब्देन-हृष्टतुष्टचित्तानन्दितः प्रीतिमनाः परमसौमनस्यतो हर्षवशविसर्पद्दहृदयः स्नातः कृतचलिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तः शुद्धपावेऽ १.१ माङ्गल्यानि वस्त्राणि प्रवरपरिहितः, इति सङ्गीत्यम्, अल्पमहार्घाभरणालङ्कृतशरीरः एषामर्थस्तु प्रागुक्त एव, एतादृशः सन् स्वात्=स्वकीयाद् गृहाद् भवनात् निर्गच्छति=निस्सरति ।

में भेजे थे उन्हें मैंने उसी दिन आपके लिये सुशिक्षित कर दिया हैं, अतः आप आ करके उन्हें देख लेवे इस प्रकार चित्र सारथी के कथन को सुनकर प्रदेशी राजाने उससे कहा-तुम शीघ्र ही उन्हें रथ में जोतकर यहां ले आओ चित्र सारथीने ऐसा ही किया. जब रथ तैयार हो जाने का वृत्तान्त प्रदेशी राजा को ज्ञात हुआ तब आकर वह उसमें बैठ गया उसके बैठते ही चित्र सारथीने उस रथ को श्वेतांविका नगरी के मध्यमार्ग से

छुड़ें. के आप देवानुप्रिय भाटें कम्बोजदेशना नागरिकेओ ने चार घोडाओ लेटइयमां भोइल्या हता तेभने तेन द्विक्स आपश्री भाटे सुशिक्षित करी दीधा छे. ओधी आप यधारीने तेभनुं निरीक्षण करी दो आ प्रमाणे चित्रसारथिनुं कथन सांलणीने प्रदेशी राजाओ तेने छुड़ें. के तमे सत्यरे ते घोडाओने रथमां जेतरीने अंडीं उपस्थित करे. चित्र सारथिओ ते प्रमाणेन कामपुइं कथुं न्यारे रथ तैयार थछ नवानी जणर राजनी पासे पछांयाडवाभां आवी त्यारे ते राजा ते रथमां जेसी गथे. राजा न्यारे सवार थछ



ततः खलु स चित्रः सारथिरतं रथं नैकानि=अनेकानि बहूनि योजनानि उद्भ्रा-  
मयति=शीघ्रगत्या भावयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा उष्णेन=आतपेन  
च तृष्णया=पिपासया रथवातेन=रथगत्युद्धवेन वायुना च परिक्रान्तः=खिन्नः  
सन् चित्रं सारथिमेवमवादीत्-हे चित्र ! परिक्रान्तः=खिन्नं मे-मम शरीरम्  
अतो रथं परावर्त्तय=निवर्त्तय । ततः खलु स चित्रः सारथिः रथं परावर्त्त-  
यति, यत्रैव भृगवनमुद्यानं तत्रैवोपागच्छति, प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्-  
एतत् खलु स्वामिन् ! भृगवनमुद्यानमस्ति, अत्र=अस्मिन्मुद्याने स्थित्वा अश्वा-  
नां श्रमं=खेदं क्लमं=उलानि च सम्यक्=समीचीनतया अपनयामः=दूरीकुर्मः।  
ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रं सारथिमेवमवादीत्-हे चित्र ! एवं भवतु=  
यथा त्वया कथितं तथैव भवतु अत्रय तिष्ठाम इति भावः ॥सू० १२५॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही जेणेव मियवणे उज्जाणे जेणेव  
केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरमामंते तेणेव उवागच्छइ, तुरए  
णिगिण्हइ रहं ठवेइ, रहाओ पच्चोरुहइ, तुरए मोएइ, पएंसि रायं एवं

होकर चलाया, जब नगरी से वह रथ बाहर हो गया तब उसने कई  
योजनों तक उस रथको इतने अधिकरूप से चलाया कि प्रदेशी राजा परिक्रान्त  
हो गया, (थक गया) आतप, से तप गया और पिपासा की वेदना से व्या-  
कुल हो उठा। तब सारथि से उसने उसी समय रथको लौटाने के लिये कहा।  
सारथिने आज्ञानुसार रथ को लौटा लिया और भृगवन उद्यान, की ओर  
ले चला। वहां पहुंच कर सारथिने घोड़ों को विश्रान्ति देने के निमित्त  
रथखड़ा कर लिया और प्रदेशी राजा से वहां ठहर कर घोड़ों को मार्गजन्य प-  
रिश्रमको दूर करने की बात कही प्रदेशी राजाने बातको मानलिया । सू. १२५।

गया त्पारे चित्र सारथिञ्चे ते रथने श्वेतांगिका नगरीनी मध्यमार्गमांथी थधने  
डांङ्क्यो. आ प्रमाणे ते रथ ज्यारे श्वेतांगिका नगरीथी णडार नीङ्गी गयो त्पारे  
घण्णायोन्मे सुधी ते रथने तीव्र वेगथी चलाव्यो के जेथी ते प्रदेशी राजा परिक्रान्त थध  
गयो, तापथी तपी गयो अने तरसनी वेदनाथी व्याकुण थध गयो राजाञ्चे सार-  
थिने तरत ज रथ पाछे वाणवानो आदेश आथ्यो. सारथिञ्चे राजानी आज्ञा प्रमाणे  
रथने पाछे वाणी लीधो अने भृगवन उद्याननी तरक्क ते रथने लध गयो. त्यां  
पडोंथीने सारथिञ्चे घोडाञ्चोने विश्रान्त आपवा भाटे रथ ने ठेलो राथ्यो अने  
प्रदेशी राजाने त्यां रोकाधने घोडाञ्चोना रस्ताना थाकने दूर करवानी बात करी.  
प्रदेशी राजाञ्चे पाणु तेनी बात मानी लीधो, ॥सू. १२५॥



वयासी एह णं सासी ! आसाणं समं किलासं सम्मं अवणेमो ! तएणं  
 से पएसी राया रहाओ पच्चोरुहइ, चित्तेण सारहिणा सद्धिं आसाणं  
 समं किलासं सम्मं अवणेषाणे पासइ, जत्थ केसिकुमारसमणं महइ-  
 महालियाए परिसाए मज्झगयं महया सद्देणं धम्मसाइवखमाणं पासि-  
 ता इमेयारूवे अज्झतिथए जाव समुप्पज्जित्था—जड्ढा खलु भो ! जड्ढं  
 पज्जुवासंति, मुंडा खलु भो ! मुंडं पज्जुवासंति, मूढा खलु भो ! मूढं  
 पज्जुवासंति, अपंडिया खलु भो अपंडियं पज्जुवासंति, निव्विण्णाणा  
 खलु भो ! निव्विण्णाणं पज्जुवासंति, से केसणं एस पुरिसे जड्ढं मुंडे  
 मुंडे अपडिए निव्विण्णाणे सिरीए हिरीए उवंगए उत्तप्पसरीरे,  
 एस णं पुरिसे किमाहरमाहारेइ ? किं परिणामेइ ? किं खायइ ?  
 किं पियइ ? किं दलइ ? किं पयच्छइ ? जं णं एस एमहालियाए  
 मणुस्सपरिसाए मज्झगए महया सद्देणं वूयाइ ? एवं सपेहेइ,  
 चित्तं सारहि एवं वयासी—चित्ता ! जड्ढा खलु भो ! जड्ढं पज्जुवासंति  
 जाव वूयाइ, साए वि णं उज्जाणभूमीए नो संचाएमि सम्मं  
 पकामं पवियरित्तए ॥ सू० १२६ ॥

छाया—ततः खलु सचित्रः सारथिः यत्रैव मृगवनमुद्यानं यत्रैव केशिनः  
 कुमारश्रमणस्य अदूरसामन्तं तत्रैवोपागच्छति, तुरगान् निगृह्णाति, रथं

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि—

सूत्रार्थ—(तए णं से चित्ते सारही जेणेव मियवणे उज्जाणे जेणेव केसिस्स  
 कुमारसमणस्स अदूरसामन्ते तेणेव उवागच्छइ) इसके बाद वह चित्रसारथि  
 उस मृगवन उद्यान में स्थित केशिकुमारश्रमण के अदूरसामन्त स्थान पर

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं से चित्ते सारही जेणेव मियवणे उज्जाणे, जेणेव  
 केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामन्ते तेणेव उवागच्छइ) त्थार पछी ते  
 चित्र सारथि ते मृगवन उद्यानमां स्थित केशिकुमारश्रमणनी पासो स्थाने लग गयो.

स्थापयति, रथात् प्रत्यवरोहति, तुरगान् मोचयति, प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्—  
अत्र खलु स्वामिन् ! अश्वानां श्रमं क्लामं सम्पक् अपनयामः । ततः  
खलु स प्रदेशी राजा रथात् प्रत्यवरोहति, चित्रेण सारथिना सार्धम् अश्वानां  
श्रमं क्लामं सम्पक् अपनयन् पश्यति यत्र केसिकुमारश्रमणं महातिमहालयायाः  
परिषदो मध्यगतं महता द्वाब्देन धर्ममाख्यानं दृष्ट्वा अपत्यैतद्रूप  
आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत-जडाः खलु भो ! जडं पयुपासते, मुण्डाः

रथको लेकर गया (तुरए गिगिण्हइ) वहां पहुंचते ही उसने घोड़ों को  
रोक लिया (रहं ठवेइ) और रथको खड़ा कर दिया (रहाओ पच्चोरुहइ)  
रथ के खड़े हो जाने पर वह रथ से नीचे उतरा (तुरए मोएइ) नीचे  
उतर कर घोड़ों को रथ से खोल दिया (पएसिं रायं एं वयासी) फिर  
उसने प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—(एह णं समं क्लामं सम्मं अवणेमो)  
हे स्वामिन् ! रथ खड़ा हो चुका है आप उतर आइये, मैं यहां पर घोड़ों  
के श्रम को एवं उनकी मानसिक ग्लानि को ठीक तरह से दूर करलूं  
(तए णं से पएसीं राया रहाओ पच्चोरुहइ) सारथि के इस कथन से वह  
प्रदेशी राजारथ से नीचे उतरा (चित्तेण सारहिणा सद्धिं आसाणं समं क्लामं  
सम्मं अवणेमाणे पासइ) नीचे उतर कर उसने चित्र सारथि के साथ वहां  
घोड़ों का श्रम एवं क्लम (थकावट) अच्छी तरह से दूर करते हुए, एवं विश्राम  
करते हुए उस ओर देखा (जत्थं केसिकुमारसमणं महइमहालियाए परि-  
साए मज्झमयं महया सद्देणं धम्ममाइक्खमाणं पासित्ता इमेयोरुवे अज्झत्थिए

(तुरए गिगिण्हइ) त्यां प्रहोच्यतां, ज-तेणे घोडाणोने उल्ला राण्या. (रहं ठवेइ)  
अने रथने थोलाव्यो. (रहाओ पच्चोरुहइ) रथ ज्यारे उलो रंडी गयो. त्यारे ते  
रथभांथी नीचे उतर्यो. (तुरए मोएइ) नीचे उतरने घोडाणोने रथभांथी मुक्त क्यो.  
(पएसिं रायं एं वयासी) त्यारे पंथी तेणे प्रदेशी राजने आ प्रनाणे उछुं—  
(एह णं सामी ! आमाणं समं क्लामं सम्मं अवणेमो) हे स्वामिन् ! रथ  
उलो थर थूक्यो छि. आप नीचे उतरो. हुं अडीं घोडाणोना श्रमने अने तेमनी  
मानसिक ग्लानि ने सारी रीते दूर करी दठ. (तए णं से पएसीं राया रहाओ पच्चोरुहइ)  
सारथिना आ कथनथी ते प्रदेशी राज रथभांथी नीचे उतयो. (चित्तेण सारहिणा  
सद्धिं आसाणं समं क्लामं सम्मं अवणेमाणे पासइ) नीचे उतरने तेणे चित्रसार-  
थिनी साथे त्यां घोडाणोनां श्रम अने क्लम सारी रीते दूर करतां तेमज्झ विश्राम  
करतां ते तरइ जेथुं (जत्थं केसिकुमारसमणं महइमहालियाए परिसाए मज्झ-  
मयं महया सद्देणं धम्ममाइक्खमाणं पासित्ता इमेयोरुवे अज्झत्थिए जाव

खलु भो ! मुण्डं पर्युपासते, मूढाः खलु भो ! मूढं पर्युपासते, अपण्डिताः  
खलु भो ! अपण्डितं पर्युपासते, निर्विज्ञानाः खलु भो ! निर्विज्ञानं पर्यु-  
पासते, स कीदृशः खलु एष पुरुषो जडो मुण्डो मूढोऽपण्डितो निर्विज्ञानः  
श्रियो हिया उपगतः उत्तमशरीरः, एष खलु पुरुषः किमाहारमाश्रयति ?

जाव समुपजित्था) कि जिस और एक बहुत बड़ी परिपदा के बीच में  
बैठे हुए केशीकुमारश्रमण जोर २ से धर्म का व्याख्यान कर रहे थे. इस  
प्रकार से उन्हें देखकर उसको इस प्रकार का यह आध्यात्मिक यावत्  
मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ (जड्हा खलु भो ! जडं पञ्जुवासंति, मुंडा  
खलु भो मुण्डं पञ्जुवासंति) अरे ! जो जन जड होते हैं वे जडकी सेवा  
करते हैं और जो जन मुण्ड होते हैं, वे मुण्ड की सेवा करते हैं (मूढा  
खलु भो मूढं पञ्जुवासंति) तथा जो जन मूढ होते हैं, वे मूढ की  
सेवा करते हैं। (अपण्डिया खलु भो अपण्डियं पञ्जुवासंति) जो अपण्डित  
होते हैं वे अपण्डित जन की सेवा करते हैं, (निर्विण्णाणा खलु भो निर्वि-  
ण्णाणं पञ्जुवासंति) जो विशिष्टज्ञान से रहित होते हैं, वे विशिष्टज्ञान से  
रहित की सेवा करते हैं। (से केस णं एस पुरिसे जडे, मुडे, मूढे, अपण्डिय  
निर्विण्णाणे सिरीए हिरीए अवगए उत्तप्पसरीरे) परन्तु यह कैसा पुरुष है  
जो जड, मुण्ड, मूढ, अपण्डित, निर्विज्ञान होता हुआ भी श्री से और  
ही से युक्त है (उत्तप्पसरीरे) शरीर की कान्ति से संपन्न है। (एस णं  
पुरिसे किमाहारमाहारेइ) यह पुरुष क्या किस प्रकार का आहार करता है ?

समुपजित्था) કે જે તરફ એક વિશાળ પરિપદાની વચ્ચે બેઠેલા કેશીકુમારશ્રમણ  
બહુ મોટા સ્વરે ધર્મનું વ્યાખ્યાન કરી રહ્યા હતા. આ પ્રમાણે તેમને બેઠેને તેને  
આ જોતને આધ્યાત્મિક યાવત મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો કે (જડ્હાં ખલુ  
ભો ! જડ્હં પજ્જુવાસંતિ. મુંડાં ખલુ ભો મુંડં પજ્જુવાસંતિ) અરે ! જે લોકો  
જડ હોય છે, તેઓ જડને સેવે છે અને જે લોકો મુંડ હોય છે. તેઓ મુંડની સેવા  
કરે છે. (મૂઢાં ખલુ ભો મૂઢં પજ્જુવાસંતિ) તેમજ જે લોકો મૂઢ હોય છે તેઓ  
મૂઢની સેવા કરે છે. (અપંડિયાં ખલુ ભો અપંડિયં પજ્જુવાસંતિ) જેઓ અપં-  
ડિત હોય છે તેઓ અપંડિતોને સેવે છે. (નિવિણ્ણાણાં ખલુ ભો ! નિર્વિણ્ણાણં  
પજ્જુવાસંતિ) જેઓ વિશિષ્ટ જ્ઞાનથી રહિત છે, તે વિશિષ્ટ જ્ઞાન રહિતને સેવે છે.  
(સે કેસ ણં એસ પુરિસે જડ્હે, મુઢે, મૂઢે, અપંડિય, નિવિણ્ણાણે સિરીએ  
હિરીએ ઉવગએ ઉત્તપ્પસરીરે) પણ આ કેવો પુરુષ છે કે જે જડ, મુંડ, મૂઢ,  
અપંડિત, નિર્વિજ્ઞાન હોવા છતાં શ્રી તેમજ હી થી યુક્ત છે. (ઉત્તપ્પસરીરે)  
શરીરની કાંતિથી સંપન્ન છે. ( એસ ણં પુરિસે કિમાહારમાહારેઈ ) આ પુરુષ કંઈ

किं परिणमयति ? किं स्वादति ? किं पिबति ? किं ददाति ? किं प्रयच्छति ?  
यत् खलु एष एतावन्महालयाय मनुष्यपरिषदो मध्यगतो महता शब्देन  
ब्रवीति ? एवं संप्रेक्ष्यते, चि सारथिमेवमवादीत-चित्र ! जडः खलु  
भो ! जडं पर्युपासते यावद् ब्रवीति, स्वात्यामपि खलु उद्यानभूमौ नो  
शक्नोमि सम्यक् प्रकामं प्रविचरितुम् ॥मु० १२६॥

टीका—'तएण' से चित्ते' इत्यादि—

ततः खलु स चित्रः सारथिर्ग्रैव मृगवनं=मृगवननामकमुद्यानं यत्रैव  
केशिनं कुमारश्चमणस्य अदूरसामन्तं=नातिदूरनातिसमीपरूपं स्थलं तत्रवोप-  
(किं परिणामेऽ) किस प्रकार से खाये हुए भोजन को परिणमाता है ?  
(किं खायइ, किं पियइ, किं दलइ, किं पयच्छइ) कैसी रुचिर वस्तु को यह  
खाता है ? किस प्रकार की रुचिर वस्तु का यह पान करता है ? यह  
लोगों के लिये क्या देता है ? क्या विशेषरूप से यह उन्हें वितरित करता  
है ? (जं णं एस ए महालियाए मणुस्सपरिसाए मज्झगए महया सद्देणं  
बूयाइ) जो यह पुरुष इतनी बड़ी विशाल मनुष्य परिषदा के बीच में  
बैठ कर बड़े जोर से बोल रहा है ? (एवं संपेहेइ) ऐसा उसने विचार  
किया (चित्तं सारहिं एवं वयासी) इस प्रकार विचार करके फिर उसने  
चित्र सारथि से ऐसा कहा—(चित्ता ! जड्हा खलु भो जड्हा पज्जुवासंति,  
जाव बूयाइ, साए वि य णं उज्जाणभूमीए नो सम्मं पकामं पवियरित्तए) हे  
चित्र ! जडजड की पर्युपासना करते हैं यावत् यह बड़े जोर से बोल रहा है मैं अपनी  
भी उस उद्यानभूमि में इच्छानुसार अच्छी तरह से घूम नहीं पा रहा हूँ ।

जातना आहार करे छे ? (किं परिणामेऽ) डेवीरीते आघेला लोअनने परिणुभावे छे ?  
(किं खायइ, किं पियइ, किं दलइ, किं पयच्छइ) कंछ जातनी इयिनी वस्तुना  
आ आहार करे छे ? कंछ जातनी इयिनी वस्तुनं आ पान करे छे ? दोकेने आ  
शुं आपे छे ? विशेषइपथी आ शुं दोकेना भाटे वितरित करे छे ? (जं णं एस  
ए महालियाए मणुस्सपरिसाए मज्झगए महया सद्देणं बूयाइ) जे के आ  
पुइय आटली मोटी दोक परिषदानी वच्चे जेसीने गहु मोटा सादे ओले छे ? (एवं  
संपेहेइ) आ प्रभाणे तेणे विचार कर्यो (चित्तं सारहिं एवं वयासी) आभ  
विचार करीने पछी तेणे चित्र सारथिने आ प्रभाणे कहुं—(चित्ता ! जड्हा खलु भो  
जड्हा पज्जुवासंति, जाव बूयाइ, साए वि य णं उज्जाणभूमीए नो संचा-  
एमि सम्मं पकामं पवियरित्तए) हे चित्र ! जडजडने सेवे छे यावत् आ गहु मोटा सादे  
ओली रह्यो छे. हुं पोते पणु आ उद्यानभूमिमां स्वस्थतापूर्वक सारी रीते डरी डरी शकतो नथी.

गच्छति. तुरगान्=अश्वान् मोचयति=रथात् पृथकीति, प्रदेशान् राजान्  
मेवमवादीत्-हे स्वामिन् ! एत=आगच्छत अत्र अश्वानां=हयानां श्रमं=मार्ग  
जन्यं शारीरं खेदं क्लेशं=मानसिकग्लानिं च सम्यक्=क्रियित्कालावस्थानेन  
समीचीनतया अपनयामः=दूरीकृतम् । ततः=पूर्वोक्त निश्चयानन्तरं स प्रदेशी  
राजा रथात् प्रत्यवरोहति=अवतरति, चित्रेण सारथिना साद्धं तत्राश्वानां स्व-  
स्य च श्रमं क्लेशं च सम्यग् अपनयन्=दूरीकुर्वन् विश्राम्यन् सन् पश्यति यत्र  
केशिकुमारश्रमणं महातिमहालयाः=अतिमहत्याः, परिषदा मध्यगतं=मध्य-  
स्थितं महता शब्देन=उच्चस्वरेण धर्मं=जिनप्रणीतम् आरुह्यन्त=वश्यन्तम्  
दृष्ट्वा च अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणप्रकारकः आध्यात्मिकाः=आत्मगतोऽङ्कुर इव

टीका—इसके बाद वह चित्र सारथि मृगवल नामके उद्यम में  
पहुँचकर केशीकुमारश्रमण से अधिष्ठित प्रदेश के पास पहुँचा. वह प्रदेश  
केशीकुमारश्रमण से न अधिक दूर था, और न अधिक पास ही था.  
पहुँचकर उसने घोड़ों को खड़ा किया। और रथ को रोक दिया. तथा  
प्रदेशी राजा से ऐसा कहा हे स्वामिन् ! आईये, यहां हमलोग घोड़ों के  
मार्गजन्य शारीरिक खेद को एवं मानसिक ग्लानि को कुछ कालतक ठहर  
कर अच्छी तरह से दूर करले। पूर्वोक्त निश्चय के अनन्तर प्रदेशीराजा  
रथ से नीचे उतरा और चित्र सारथि के साथ वहां घोड़ों की एवं निजकी  
थकावट को तथा क्लेश-मानसिक ग्लानि को-अच्छी तरह से दूर करता  
हुआ, तथा विश्राम करता हुआ इधर उधर देखने लगा-देखते-उसकी  
दृष्टि वहां पहुँची जहां केशिकुमारश्रमण अतिमहती (विशाल) परिषदा के  
बीच बैठे हुए उच्चस्वर से जिनप्रणीत धर्म की प्ररूपणा कर रहे थे. उन्हें

टीका—सारथी:—ते चित्र सारथि मृगवल नामके उद्यममां पहुँचीने देशी-  
कुमार श्रमण जयां विशालमान उता तेनी पासे पहुँच्यो. ते स्थान देशीकुमार श्रम-  
णथी वधारे दूर पणु नहि तेमज वधारे नलक्ष पणु नहि उतुं त्यां पहुँचीने तेणे  
घोडाओने उला राण्या अने स्थाने थोलाओ. तेमज प्रदेशी राजाने आ प्रमाणे उहुं  
हे हे स्वामिन् ! पधारे, अही आपणे थोडा समय सुधी रोकधने घोडाओना मार्ग  
जन्य शारीरिक जेदने अने मानसिक ग्लानिने सारी रीते दूर करवा यत्न करीये आ  
प्रमाणे विचार करीने ते प्रदेशी राजा रथ परथी नीचे उतर्यो अने चित्र सारथिनी  
साथे त्यां घोडाओना अने पोताना थाकने तेमज क्लेश-मानसिक ग्लानि-ने सारी  
रीते दूर करता तथा विश्राम करता आभतेम जेवा लाज्यो. जेतां जेत तेमनी नजर  
अति विशाल परिषदानी वर्ये जेसीने मोटा साहे ते परिषदाने जिनप्रणीत धर्मनी

जडोऽयमिति रूपः यावच्छब्देन—‘चिन्तितः=कल्पितः, प्रार्थितः, मनोगतः संकल्पः’ इति संग्राह्यम्, तत्र—चिन्तितः=पुनः पुनः स्मरणरूपो विचारः ‘मुण्डोऽय—’मितिलक्षणो द्विपत्रित इव, कल्पितः=स एव विचारः ‘मुण्डोऽय’ मिति रूपः पल्लवित इव, प्रार्थितः, स एवेष्टरूपेण स्वीकृतः ‘निश्चयेनायमपण्डितः इतिरूपः पुष्पित इव मनोगतः संकल्पः मनसि दृढरूपेण निश्चयः ‘सत्यं निर्विज्ञानः’ इतिलक्षणः फलित इव समुदपद्यत=समुत्पन्नः। तदेव दर्शयति—‘जडो’ इत्यादि,

देखकर इसके मन में इस प्रकार का संकल्प-विचार उत्पन्न हुआ, ‘यहां यावत् पद से संकल्प के आध्यात्मिक, चिन्तित, कल्पित, मनोगत ये विशेषण गृहीत हुए हैं। इनकी सार्थकता इस प्रकार से है, यह विचार उमकी आत्मा में पहिले अंकुर के रूप में जमा, अतः वह आध्यात्मिक हुआ बाद में वह पुनः पुनः स्मरणरूप होने के कारण चिन्तितरूप हो गया अर्थात् यह मुंड है यह मूढ है इस तरह बार-बार स्मृति में आने के कारण यह विचार द्विपत्रित अंकुर की तरह चिन्तितरूप बन गया—पुनः वही विचार यह मुण्डित ही है, और कोई नहीं है इसरूप से निश्चयापन्न होने के कारण पल्लवित हुए अंकुर की तरह प्रार्थित हो गया। ‘अयमपण्डित एव निश्चयेन’ फिर ऐसा निश्चय हो जाने से कि यह नियमतः अपण्डित ही है (पण्डित नहीं है) यह विचार पुष्पित अंकुर की तरह दृष्टरूप से स्वीकृत हो जाने के कारण पुष्पित हो गया। बाद में ‘यह विज्ञान रहित है’ इसरूप से मनमें दृढरूप से निश्चित हो जाने के कारण मनोगत हो गया। तात्पर्य कहने का

प्रश्नपूछा करता तो डेशिकुमारश्रमाण पर पड़ी। तेमने जेधने तेमना मनमां आ-जातने। संकल्प-विचार-उद्बलव्यो। अही यावत् पद्यी संकल्पना आध्यात्मिक, चिन्तित, कल्पित, प्रार्थित, मनोगत आ गंधा विशेषणो अङ्गु करवामां आव्यां छे। आ गंधा विशेषणो नी सार्थकता आ प्रमाणे समजवी। आ विचार तेना आत्मामां पडेलो अङ्कुरना रूपमां जन्म्यो। तेथी ते आध्यात्मिक थयो। त्थारपछी ते बार-बार स्मरणरूप होवा गदल चिन्तित रूप थछ गयो। ओटले डे आ मुंड छे, आ मूढ छे आ प्रमाणे बार-बार स्मृतिमां आववाथी आ विचार द्विपत्रित अङ्कुरनी जेम चिन्तितरूप थछ गयो। पछी तेज विचार आ मुंडित ज छे अन्य नहि, आ प्रमाणे निश्चयापन्न होवा गदल पल्लवित थयेला अङ्कुरनी जेम प्रार्थित थछ गयो। “अयमपण्डित एव निश्चयेन” त्थार पछी आ जातने निश्चय थछ-जवाथी आ नियमतः अपण्डित ज छे आ विचार पुष्पित अङ्कुरनी जेम, धष्ट रूपी स्वीकृत थछ जवा गदल पुष्पित थछ गयो। त्थार आद ‘आ विज्ञान रहित छे’ आ प्रमाणे मनमां दृढरूपमां निश्चित थछ जवाथी आ



જડાઃ=અલસા ઉદ્યોગવર્જિતત્વાત્, યદ્વા-જડા ઇતિ વિવેકવિકલાઃ કર્ત્ત-  
વ્યાકર્ત્તવ્યજ્ઞાનરાહિત્યાત્ જડસ્=જડપુરુષમેનં પર્યુપાસતે=સેવન્તે । તથા-  
મુળ્હાઃ=એતાદૃશા એવ અનાવૃત્તમસ્તકાઃ નિર્લજ્જા ઇત્યર્થઃ, ત એવ મુળ્હં=મુળ્હિત-  
મસ્તકમેનં પર્યુપાસતે । તથા-મૂઠાઃ=મૂર્ખાં હેયોપાદેયજ્ઞાનશૂન્યા એવ મૂઠં=  
સદસદ્વિવેકવિકલમેનં પર્યુપાસતે । અપણ્ડિતાઃ=વ્યાવહારિકબુદ્ધિવિકલાસ્તત્ત્વ-  
જ્ઞાનરહિતત્વાત્, ત એવ અપણ્ડિતં=તત્ત્વજ્ઞાનશૂન્યમેનં પર્યુપાસતે । નિર્વિજ્ઞાનાઃ=

યહ હૈ કિ યહાં પર વિચાર કે ઇન વિશેષણોને વિચાર કી આગેર પુષ્ટિ  
હોતી હુઈ પ્રકટ કીં હૈ । જિસ પ્રકાર અંકુર પહિલે જમતા હૈ, વાદ મેં વહ  
પત્રિત હોતા હૈ, ફિર પુષ્પિત હોતા હૈ, ઓર અન્ત મેં ફલિત હોતા હૈ । ઇસી  
પ્રકાર સે યહાં ઉસકા વિચાર આગેર અધિકર પુષ્ટિ હાતા ગયા । ઇસી વાત  
કો 'જડ્ઠા' આદિપદોં દ્વારા પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ-ઉદ્યોગવર્જિત હોને સે જો  
જડ-અલસ હોતે હૈં અથવા તો 'કર્તવ્યાકર્તવ્યરૂપ વિવેક સે રહિત હોને  
કે કારણ વિવેક વિકલ હૈં વે હી હસ જડ પુરુષ કી ઉપાસના-સેવા કરતે હૈં, તથા  
જો ઇસી જૈસે મુળ્હ-અનાવૃત્ત યુલ્હે મસ્તક વાલે-નિર્લજ્જ હૈં, વે હો ઇસ મુળ્હિત-  
મસ્તકવાલે ઇસકી સેવા કરતે હૈં, તથા જો હેયોપાદેય જ્ઞાન સે શૂન્ય  
મૂઠ જન હૈં વે હી ઇસ અચ્છે બુરે કે જ્ઞાન સે વિકલ હુણ હમ્મકી સેવા  
કરતે હૈં । તત્ત્વજ્ઞાન રહિત હોને કે કારણ જો વ્યવહારિક બુદ્ધિ સે વિકલ  
હૈં, વેહી ઇસ તત્ત્વજ્ઞાન શૂન્ય ઇસ અપણ્ડિત કી સેવા કરતે હૈં, તથા બુદ્ધિ  
હીન હોને સે જો વિશિષ્ટજ્ઞાન સે રહિત હૈં વેહી ઇસ સદ્બોધરહિત કો

મનોગત યદ્ યથો, તાત્પર્ય એ છે કે અહીં વિચારના આ વિશેષણોથી અનુક્રમે  
તે પછીના વિચારોની પુષ્ટિ જ થાય છે. જેમ અંકુર પહેલાં જામે છે, ત્યારપછી તે  
પત્રિત થાય છે, પછી પુષ્પિત થાય છે અને છેવટે ફલિત થાય છે તેમજ અહીં પણ  
તેનો વિચાર અનુક્રમે અધિકાધિક પુષ્ટિ જ થતો જાય છે. આ વાતને 'જડ્ઠા'  
બગેરે પદો વડે પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ઉદ્યોગ રહિત હોવા બદલ જે જડ-આળસુ-  
હોય છે અથવા તો જે કર્તવ્યાકર્તવ્યરૂપ વિવેકથી રહિત હોવા બદલ વિવેક વિકલ  
છે, તે જ આ જડ પુરુષની ઉપાસના-સેવા કરે છે. તેમજ જેઓ એના જેવા જ  
મુળ્હ-અનાવૃત્ત મસ્તકવાળા-નિર્લજ્જ છે તે જ આ મુળ્હિત મસ્તકવાળાઓની સેવા  
કરે છે તેમજ જેઓ હેયોપાદેયના જ્ઞાનથી રહિત મૂઠ જન છે તે જ આ વિવેક-  
રહિત પુરુષને સેવે છે. તત્ત્વજ્ઞાનરહિત હોવાથી જે વ્યવહારિક બુદ્ધિથી વિકલ છે,  
તે જ આ તત્ત્વજ્ઞાન શૂન્ય અપણ્ડિતને સેવે છે. તેમજ બુદ્ધિહીન હોવાથી જે વિશિષ્ટ-  
જ્ઞાનથી રહિત છે તેઓજ આ સદ્બોધ રહિત પુરુષની સેવા કરે છે. આ કઈ જાતની



विशिष्टज्ञानरहिताः बुद्धिहीनत्वात्, त एव निर्विज्ञानं=सद्बोधरहितमेनं पशु-  
पासते। स एष कीदृशः पुरुषः यो जडो मुण्डो मूढोऽपण्डितो निर्विज्ञानोऽपि  
श्रिया==महातिमहालयपरिपदादिशोभया, द्विया=लज्जया-कुचेष्टावर्जनरूपया  
उपगतः=संपन्नः तथा-उत्तमशरीरः=शरीरकान्त्या दीप्यमानो वर्तते इति  
किं कारणम् ? कारणं चिन्तयति-एष खलु पुरुषः कं=किम्प्रकारम् आहारं=  
भोजनम् आहारयति=करंति ? किं=केन प्रकारेण भुक्तं भोजनं परिणमयति=  
परिणामं प्रापयति ?, किं=कीदृशं रुचिरं वस्तु खादति ? किं=कोदृशं रुचिरं  
प्रपणकादिकं पिबति ?, किं ददाति एभ्यो लोकेभ्यः, किं प्रयच्छति=विशेषेण  
ददाति यत्=यस्मात्कारणात् खलु एष पुरुषः एतावन्महालयायाः=महत्याः  
मनुष्यपरिपदो मध्यगतः=मध्योपविष्टः सन् महता शब्देन=उच्चैःस्वरेण ब्रवीति=  
वदति ? । एवं=पूर्वोक्तप्रकारेण संप्रेक्षते=विचारयति, चित्रं सारथिमेवमवा-

सेवा करते हैं। यह कैसा पुरुष है ? जो जड, मुण्ड, मूढ़, अपण्डित एवं निर्वि-  
ज्ञान हुआ भी महानिमहालय परिपदा-याने विशालसभा में शोभा से  
एवं कुचेष्टावर्जनरूप लज्जा से संपन्न बना हुआ है। एवं शरीरकी कान्ति से  
देदीप्यमान हो रहा है। इसमें वारण क्या है ? क्या यह इस प्रकार के  
आहारको करता है जो इसके शरीर में ऐसी कान्ति प्रदान करता है-  
यही बात वह 'कं आहारं आहारयति' इत्यादि पदों द्वारा विचार करता  
है-यह किस प्रकार वे आहारको लेता है ? तथा किस प्रकार से भुक्त भोजन को  
यह परिणमाता है ? यह कैसी रुचिर वस्तु खाता है ?-अगर कैसे रुचिरपान को यह पीता  
है ? यह इन लोको के लिये क्या दे रहा है ? क्या विशेषरूप से यह इन्हे प्रदान  
कर रहा है ? जो यह इस बड़ी भारी मनुष्य परिपदा के बीच में बैठा  
हुआ बड़े जोर से बोल रहा है। इस प्रकार से उसने विचार किया-

व्यक्ति छे के. जे. जड, मुंड, मूढ, अपण्डित अने निर्विज्ञान होवा छतां पणु भडैति-  
महालय परिपदा अटवे के विशाण सलामां शोलाथी अने कुचेष्टा वर्जनरूप लज्जान्ती  
भुक्त थयेवे छे तेमज शरीरकांतथी दीप्यमान थछ रह्यो छे. आनुं शुं कान्ति छे ?  
शुं ते आ नतनो आहार करे छे के जे अना शरीरमां ; अवी. कान्ति उत्पन्न करे  
छे अज वात ते 'कं आहारं आहारयति' वगेरे पढे पडे जातावे छे. अ कछ  
नतनो आहार अछु करे छे ? तेमज कछ नतना भुक्त लोअनने आ परिणुमावे छे ?  
आ कछ नतनी रुचिर वस्तुनो आहार करे छे ? केवा रुचिर पानपदार्थने आ पीवे  
छे ? आ पुरुष आ गधाने शुं आपी रह्यो छे. ? विशेषरूपथी आ गधा अकत्र  
थयेवा लोकेने आ शुं आपी रह्यो छे ? के. जे आ गहु मोटी विशाण परिपदानी  
वञ्छे जेसीने गहु मोटा स्वरथी गोदी रह्यो छे आ प्रमाणे तेखे विचार कर्यो तयार-

दीतं-प्रकटमवदत्-चित्र ! जडाः खलु जडं पर्युपासते, यावत्-यावच्छब्देन-  
पूर्वोक्तं सर्वं ग्राह्यम्, ब्रवीति=उच्चस्वरेण वदति येन कारणेनाह स्वस्यामपि=  
स्वकीयायामपि उद्यानभूमौ सम्यक्=सम्यक्प्रकारेण प्रकामम्-अतिशयं ।  
प्रविचरितुं=संचरितुं नो शक्नोमि=न समर्थो भवामि ॥सू० १२६॥

मूलम्—तएणं से चित्ते सारही पएसिरायं एवं वयासी-एसं णं  
सामी । पासावच्चिजे केसा नामं कुमारसमणे जाइसंपण्णे जावं चउ-  
नाणोवगए अधोऽवहिण्ण अण्णजीविण्ण । तएणं से पएसि राया चित्ते  
सारहिं एवं वयासी-आहोहियं णं वयासि चित्ता ! अण्णजीवियत्तं  
णं वयासि चित्ता ! ? हंता ! सामी ! आहोहियं णं वयामि अण्णजी-  
वियत्तं णं वयामि । अभिगमणिज्जे णं चित्ता ! एस पुरिसे ? हता !  
सामी ! अभिगमणिज्जे । अभिगच्छामो णं चित्ता ! अम्हे एयं पुरिसं ?  
हंता ! सामी ! अभिगच्छामो ॥सू० १२७॥

छाया—ततः खलु स चित्रः सारथिः प्रदेशिराजमेवमवादीत-एष खलु  
स्वामिन् ! पार्श्वोपत्यीयः केशो नामकुमारश्रमणः जानिस्स पन्नः यावत् चतु-

वाद में वह चित्र सारथि से प्रकटरूप में इस तरह से कहने लगा-चित्र !  
जड़ जड़ की उपासना करते हैं इत्यादि यहाँ यावत् शब्द से पूर्वोक्त सब  
कथन जो यह जोर से इस मनुष्य परिषदा के बीच में बोल रहा है  
यहाँ तक का ग्रहण हुआ है। इसी कारण मैं अपनी भी इस उद्यानभूमि  
में ठीक तरह से घूम नहीं पा रहा हूँ ॥ सू० १२६ ॥

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं से चित्ते सारही पएसिरायं एवं वयासी) तव

पक्षी ते प्रकटरूपमें चित्र सारथिने आ प्रमाणों के द्वारा लाये। के हें चित्र ! जडा-  
जडनी उपासना करे छे बगैरे, अही यावत् शब्दथी पूर्वोक्तं णं कथन-के ने आ  
मोटा साहें मनुष्य परिषदानी वर जोली रखे छे, अही सुधीनुं ग्रहण करुं नेछये,  
अथी ने हें आ मोरी ने उद्यान भूमिमां सारी रीते डरीइरी शक्ती नथी ॥सू० १२६॥

‘तएणं से चित्ते सारही’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं से चित्ते सारही पएसिरायं एवं वयासी) त्वारे .

ज्ञानोपगतः अधोऽवधिकः आन्नजीवितः । ततः खलु म प्रदेशी राजा चित्रं  
सारथिमेवमवादीत्—अधोऽवधिक्यं खलु वदसि चित्र ! अन्नजीवितत्वं खलु

उस चित्र सारथिने प्रदेशी राजा से कहा—(ए सणं मामो ! पासावच्चिज्जे  
केसी नामं कुमारमणणे जाइसम्पणणे जाव चउनाणोवगण) हे स्वामिन !  
ये पुरोवर्ती केशीकुमारश्रमण हैं । जो कि पार्श्वनाथ की शिष्यपरम्परा में  
उत्पन्न हुए हैं। इन्होंने कुमारवस्था में ही संयम ग्रहण किया है इस-  
लिये इन्हें कुमारश्रमण कहा गया है। ये जातिसंपन्न हैं, यावत् कुलसंपन्न  
हैं, इत्यादि पूर्व में कहे गये विशेषणों वाले हैं। इन विशेषणों  
का अर्थ वहीं पर लिखा जा चुका है। अतः यहां पर पुनः  
नहीं लिखा है। ये मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान और मनः पर्यवज्ञान  
के अधिपति हैं—चार ज्ञान के धारी हैं (अधोऽवहिं अण्णजीविण) इनका  
जो अवधिज्ञान है वह परमावधि से किञ्चित ही न्यून है। इनका जीवन  
प्रासुक एषणीय अन्नपान से है, अर्थात् ये प्रासुक एषणीय ही आहार लेते  
हैं, उद्गमादि दोष से दूषित आहार नहीं लेते हैं। (तए णं से पहीसी  
राया चित्तं सारहिं एवं वयासी) तब प्रदेशी राजाने चित्र सारथि से  
ऐसा कहा—(आहोहियं णं वयासी चित्ता ! अण्णजीविणत्तं णं वयासी चित्ता ?)  
हे चित्र ! जो तुम ऐसा कहते हो कि इनका अवधिज्ञान परमावधि से

चित्र सारथिने प्रदेशी राजाने आ प्रमाणे कह्युं (ए सणं सामी ! पासावच्चिज्जे  
केसी नामं कुमारमणणे जाइसम्पणणे जाव चउनाणोवगण) हे स्वामिन ! आ  
आपणी सामे केशीकुमार श्रमण छे, हे जेयो पार्श्वनाथनी शिष्यपरंपराभां उत्पन्न  
थया छे, ओमणे कुमारवस्थाभां न संयम अइलु कर्यो छे, ओथी न ओमने कुमार-  
श्रमणु कहेवाभां आव्या छे, ओयो नतिसंपन्न छे, यावत् कुलसंपन्न छे, वगेरे  
पहेला कहेवायेलां विशेषणोथी युक्त छे, आ गधा विशेषणोने अर्थ पहेलां स्पष्ट  
करवाभां आव्या छे, तेथी अडीं इरी कहेवाभां आव्या नथी, ओयो मतिज्ञान, श्रुत-  
ज्ञान, अवधिज्ञान अने मनःपर्यवज्ञाननां अधिपति छे, आर ज्ञानधारी छे,  
(अधोऽवहिं अण्णजीविण) ओमनुं जे अवधिज्ञान छे ते परमावधिथी थोडुं न कम  
छे, ओमनुं एवन प्रासुक एषणीय अन्नपानथी छे, ओटवे के ओयो प्रासुक एषणीय  
आहार अइलु करे छे, उद्गम वगेरे दोषोथी दूषित आहार ओयो अइलु करता नथी :  
(तए णं से पहीसी राया चित्तं सारहिं एवं वयासी) तब प्रदेशी राजाने  
चित्र सारथिने आ प्रमाणे कह्युं, (आहोहियं णं वयासी चित्ता ! अण्णजीवि-  
णत्तं णं वयासी चित्ता ?) हे चित्र ! जे तबे आ प्रमाणे कहे छो के ओमनुं अव-  
धिज्ञान परमावधि करता थोडुं न अल्प छे तेमनं ओयो प्रासुक एषणीय आहार

વ્રદસિ ચિત્ર ! ? । હન્ત સ્વામિન્ ! આધોઽવધિક્યં સ્વલુ વદામિ અન્નજીવિ-  
તત્ત્વં સ્વલુ વદામિ । અભિગમનીયઃ સ્વલુ ચિત્ર ! એપ પુરુષઃ ? હન્ત ! સ્વામિન્ !  
અભિગમનીયઃ । અભિગચ્છામ સ્વલુ ચિત્ર ! :વયં એનં પુરુષમ્ ? હન્ત ! સ્વા  
મિન્ ! અભિગચ્છામઃ ॥મુ૦ ૧૦૭॥

ટીકા—‘તણ્ણં સે ચિત્તે’ इत्यादि—ततः स्वलु स चित्रः सारथिः प्रदेशि-  
राजमेवमवादीत्—हे स्वामिन् ! एपः=अयं—पुरोवर्त्ती पार्श्वपत्नीयः=पार्श्वस्वामि  
शिष्यपरम्परासंज्ञातः केशी नाम कुमारश्रमणः=कुमारश्चासौ श्रमणश्च कुमार-  
श्रमणः कुमारावस्थायामेव गृहीतसंयमः, कीदृशोऽयमित्याह—जातिसंपन्नः यावत्-  
यावच्छब्देन ‘कुलसंपन्नः’ इत्यादिविशेषणा न स र्वाणि पूर्वसूत्रोक्तानि संग्राह्याणि

કિંચિત્ હી ન્યૂન હૈ તથા યે પ્રાસુક એષણીય હી આહાર લેતે હૈં મો કયા  
યહ વાત તુમ સત્ય કહતે હો ? (હંતા સામી ! આહોહિયં ણં વયામિ, અણજી-  
વિચત્તં ણં વયામિ) હાં, સ્વામિન્ ! મૈં સત્ય કહતા હૂં કિં इनका अवधि-  
જ્ઞાન પરમાવધિ સે કિંચિત્ ન્યૂન હૈં ઓર યે પ્રાસુક એષણીય હી આહાર  
લેતે હૈં । (અભિગમણિજ્ઞે ણં ચિત્તા ! એમ પુરિસે) તો હૈ ચિત્ર ! યહ પુરુષ  
અભિગમનીય હૈ. અર્થાત્ પરિચય કરને કે યોગ્ય હૈં (હંતા સામી ! ‘અભિ-  
ગમણિજ્ઞે) હાં સ્વામિન્ । યે આપકે લિયે અભિગમનીય હૈં અર્થાત્ પરિ  
ચય કરને કે યોગ્ય હૈં । (અભિગચ્છામો ણં ચિત્તા ! અમ્હં એયં પુરિસં)  
તો હૈ ચિત્ર ! મૈં इनके साथ परिचय करलुं ? (હંતા સામી ! અભિગચ્છામો)  
હાં સ્વામિન્ ! આપ इनके साथ परिचय करें ।

इसका टीकार्थ इस मूलार्थ के जैसा ही है । केवल विशेषता अण-  
ज विचत्तं’ पद में है, इसका अर्थ तो मूलार्थ में लिखा जा चुका है—

જ અહણુ કરે છે તો શું આવાત સાચી છે ? (હંતા સામી ! આહોહિયં ણં વયામિ  
અણજીવિચત્તં ણં વયામી) હાં સ્વામિન્ ! હું સાચી વાત કહું છું. એમનું  
અવધિજ્ઞાન પરમાવધિ કરતાં થોડું કમ છે અને એઓ પ્રાસુક એષણીય આહાર  
અહણુ કરે છે. (અભિગમણિજ્ઞે ણં ચિત્તા ! એમ પુરિસે) તો હૈ ચિત્ર ! આ પુરુષ  
અભિગમનીય છે એટલે કે ઓળખાણ કરવા યોગ્ય છે. (હંતા સામી ! અભિગમણિજ્ઞે)  
હાં સ્વામિન્ ! એઓ આપના માટે અભિગમનીય છે એટલે કે ઓળખાણ કરવા યોગ્ય છે.  
(અભિગચ્છામો ણં ચિત્તા ! અમ્હં એયં પુરિસં) તો હૈ ચિત્ર ! હું એમની સાથે ઓળખાણુ કરું ?  
(હંતા સામી અભિગચ્છામો) હાં સ્વામિન્ તમે એમની સાથે ઓળખાણુ કરી લો.

આ સૂત્રનો ટીકાર્થ મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. વિશેષતા ફક્ત ‘અણજીવિચત્તં’  
પદમાં છે. આનો એક અર્થ તો મૂલાર્થમાં જ લખવામાં આવ્યો છે. અને બીજો

अर्थोऽपि तत एव बोध्यः । चतुर्ज्ञानोपगतः=मत्यादिज्ञानचतुष्टयसंपन्नः  
अधोऽवधिकः=अधः=परमावधेरधोवर्ती अवधार्यस्य स तथा—परमावधेः किञ्च  
न्यूनावधियुक्तः अन्नजीवित=अन्नेन=प्राप्तुकैपणीयान्नमानेण जीवितं=जीवनं  
यस्य स तथा । तथा—‘अन्यजीवितः’ इति वा छाया तत्र—अन्यस्मै न तु  
स्वस्मै सर्वविरतिमत्त्वात् जीवनमरणाशंसाविप्रमुक्तत्वाद्वा जीवितं=जीवनं  
यस्य स तथा, तादृशो वर्तते ! ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रं सारथि-  
मेवमवादीत्—हे चित्र ! अस्य मुनेस्त्वम् अधोऽवधिक्यम्=अधोऽवधित्वं वदसि=  
सत्यं कथयसि ? तथा—अन्नजीवितत्वम् अन्यजीवितत्वं वाऽस्यमुनेः ! हे चित्र !  
त्वं सत्यं कथयसि ? इति पृच्छानन्तरं चित्रः । सारथिः प्राह—हे स्वामिन् !  
‘हन्त ! इति स्वीकारे ‘हँ !’ इति भाषायाम्, अस्य मुनेः हम् अधोऽवधिक्यं  
खलु वदामि सत्यं कथयामि, तथा अन्नजीवितत्वम् अन्यजीवितत्वं वा वदामि=  
सत्यं कथयामि । पुनः प्रदेशी राजा प्राह—हे चित्र ! एष पुरुषः किम् अस्माकम्  
अभिगमनीयः=परिचययोग्योऽस्ति ? हन्त हे स्वामिन् ! एष मुनिः अभि-  
गमनीयोऽस्ति । पुनः प्रदेशी राजा पृच्छति—एवं तर्हि हे चित्र ! एतं पुरुषं वयम्  
अभिगच्छाम । अनेन सह परिचयं कराम ? ! चित्रः सारथिः प्राह—हन्त हे  
स्वामिन् ! अभिगच्छाम=अनेन सह वयं परिचयं कराम ॥ सू० १२७ ॥

मूलम्—तए णं से पएसी राया चित्तेण सारहिणा सद्धिं जेणेव  
केसीकुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ, केसिस्स कुमारसमणस्स अदूर-  
सामंते ठिच्चा एवं वयासी-तुब्भे णं भंते ! आहोहिया अण्ण-  
जीविया ? । तएणं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासा-  
पएसी ! से जहाणामए अंकवाणियाइवा संखवाणियाइवा दंत-  
वाणियाइवा सुंक्रं भंसिउंकामा णो सम्मं पंथं पुच्छति, एवामेव  
पएसी ! तुब्भेवि विणयं भंसेउकामो नो सम्मं पुच्छसि, से णूणं तव

और दूसरा अर्थ ‘अन्यजीवित’ इस छायापक्ष में ऐसा होता है कि  
सर्वविरतियुक्त होने से अथवा जीवन मरण की आशंका से रहित होने  
से इनका जीवन दूसरों के लिये ही है अपने लिये नहीं है ॥ सू. १२७ ॥

अर्थ ‘अन्यजीवित’ आ ‘छायापक्ष’ में आ प्रमाणे थाय छे. ई सर्वविरतियुक्त होवाथी  
अथवा जीवनमरणनी अशंसाथी रहित होवाथी ओमनुं जीवन जीवओना भाटे  
न छे पोताना भाटे नहि. ॥ सू. १२७ ॥

पएसी ! ममं पासित्ता अयमेयारूढे अज्झत्थिए जाव समुप्पजित्था-  
जडा खलु भो ! ज्जडं जुपवासति जाव पवियरित्तिए से णूणं पएसी !  
अट्ठे समत्थे ? हंता ! अत्थि ॥सू० १२८॥

छाया—तवः खलु स प्रदेशी राजा चित्रेण सारथिना सार्धं यत्रैव  
केशी कुमारश्रमणः तत्रैव उवागच्छति. केशिनः कुमारश्रमणस्य अदूरसा-  
मन्ते स्थित्वा एवमवादीत्—युयं खलु भदन्त ! अधोऽवधिकाः अन्नजी-  
विताः । ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत—प्रदे-  
शिन् ! तद्यथा नाम—अङ्कवणिज इति वा शङ्खवणिज इति वा दन्तवणिज-

‘तए णं से पएसी राया चित्तेण सारहिणा सद्धिं इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (से पएसी राया चित्तेण सारहिणा  
सद्धिं) वह प्रदेशी राजा चित्र सारथि के साथ (जेणेव केसिकुमारसमणे  
तेणेव उवागच्छइ) जहाँ केशिकुमारश्रमण थे वहाँ पर गया (केसिस्स कुमा-  
रसमणस्स अदूरसामन्ते ठिच्चा एवं वयासी) वहाँ जाकर वह केशिकुमार  
श्रमण से ऐसे स्थान पर खड़ा रह गया कि जो स्थान न उनसे अधिक  
दूर था और न अधिक पास था । वहीं से खड़े इसने उनसे ऐसा कहा—  
(तवमे णं भन्ते ! आहोहिया अण्णजीविआ) हे भदन्त ! आपका ज्ञान—व-  
धिज्ञान परमावधि से किंचित् न्यून है, और आप प्रासुक एषणीय ही  
आहार करते हैं ? (तए णं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी)  
तब केशी कुमार श्रमणने प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—पएसी ! से तदा  
णामए अंकराणि गइ वा, दंतवणिगइ वा, सुकं भंसिउं कामा णो पम्मं

‘तए णं से पएसी राया चित्तेण सारहिणा सद्धिं’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं) त्वारपछी (से पएसी राया चित्तेण सारहिणा सद्धिं)  
ते प्रदेशी राजा चित्र सारथीनी साथे (जेणेव केसि कुमारसमणे तेणेव उवागच्छइ)  
जहाँ केशिकुमार श्रमण उता त्यां गयां. (केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामन्ते  
ठिच्चा एवं वयासी) त्यां बंधने ते केशिकुमार श्रमणथी ओवा स्थाने उला रह्या  
ठे ओ स्थान तेमनाथी वधारे दूर पणु नहिं हुतुं अने वधारे नलुक पणु नहिं हुतुं  
त्यां उला उला न तेणु तेमने आ प्रमाणे क्खुं. (तवमे णं भन्ते ! आहोहिया  
अण्णजीविआ) हे भदन्त ! आपतुं ज्ञान—परमावधि करतां थोडुं कम छे ? अने  
आप प्रासुक एषणीय आहार न अहणु करे छे ? (तए णं केसीकुमारसमणे  
पएसिं रायं एवं वयासी) त्वारे केशीकुमार श्रमणे प्रदेशी राजाने आ प्रमाणे क्खुं



इति वा, शुल्कं भ्रंशयितुकामा नो सम्यक् पन्थानं पृच्छन्ति, एवमेव प्रदेशिन् ! त्वमपि विनयं भ्रंशयितुकामा नो सम्यक् पृच्छसि, अथ नूनं तव प्रदेशिन् ! मां दृष्ट्वा अयमेतद्रूपः आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत-जडाः खलु भो ! जडं पर्युपासते यावत् प्रविचरितुं स नूनं प्रदेशिन् ! अर्थः समर्थः ? हन्त ! अस्ति ॥ सू० १२८ ॥

पंथं पृच्छन्ति) हे प्रदेशिन् ! जैसे अंकरत्न के व्यापारी, अथवा शंखरत्न के व्यापारी, या दन्त के व्यापारी,—अर्थात् शंख शुभ भी होता है इसलिये उसको रत्न कहा है, राजदेय भाग को नहीं देने की इच्छा वाले होकर जाने के अच्छे मार्ग को नहीं पूछते हैं (एवामेव पएसी तुब्भे वि यणं भंसेउकामो नो सम्मं पृच्छसि) इसी प्रकार से हे प्रदेशिन् ! विनयरूप प्रतिपत्ति को नहीं करने की कामना वाले बने हुए तुमने भी यह अच्छेरूप से नहीं पूछा है. (से णूणं तव पएसी ममं पासित्ता अयमेयारूवे अउत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) हे प्रदेशिन् ! मुझे देखकर तुम्हें इस प्रकार का यह आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प हुआ है (जड्हा खलु भो ! जड्हा पज्जुवासंति जाव पवियरित्तए) जड पुरुष जड पुरुषकी पर्युपासना करते हैं यावत् मैं अपनी भी इस उद्यान भूमि में अच्छी तरह से घूम नहीं पा रहा हू (से णूणं पएसी ! अट्ठे समत्थे ?) हे प्रदेशिन् ! कहो मैं ठीक कह रहा हूँ न? (हंता, अत्थि) हां, आप ठीक कह रहे हैं।

(पएसी ! से जहाणामए अंकवाणियाइ वा, संखवाणियाइ वा, दंतवाणियाइ वा, सुकं भंसिउकामा णो सम्मं पंथं पृच्छन्ति) हे प्रदेशिन् ! जैसे अंकरत्नना बडेपारी, हे शंखरत्नना बडेपारी हे दन्तना बडेपारी (शंभ शुभ पणु गणाय छे तेथी अड्डीं तेने रत्नइये उद्वेयवाभां आये छे) राजकर आयवानी धनना न धरावता त्यांथी जवाना सारा भागी भाटे पूछपरछ करता नथी (एवामेव पएसी तुब्भे वि वि यणं भंसेउकामो नो सम्मं पृच्छसि) आ प्रमाणे हे प्रदेशिन् ! विनयइय प्रतिपत्तिने न आयरतां तमोये पणु आ वात शिष्टभावथी-नअताथी-पूछी नथी. (से णूणं तव पएसी ममं पासित्ता अयमेयारूवे अउत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) हे प्रदेशिन् ! मने जेधने तमने आ प्रमाणेनो आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न थये छे हे (जड्हा खलु भो ! जड्हा पज्जुवासंति जाव पवियरित्तए) जड पुरुषो जडने सेवे छे यावत् हुं आ भारी पोटानी उद्यान भूमिभां पणु सारी रीते आरामथी करी शकतो नथी. (से णूणं पएसी ! अट्ठे समत्थे ?) हे प्रदेशिन् ! जोटो हुं परापर कहुं छुं ने ? (हंता, अत्थि) हां, आप ठीक कहो छ।



टीका—‘तएणं से पएसी’ इत्यादि—ततः खलु स प्रदेशो राजा चित्रेण सारथिना सार्धं यत्रैव केशीकुमारश्रमणस्तत्रैवोपागच्छति=समागच्छति, केशिनःकुमारश्रमणस्य अदूरस्सामन्ते=नातिदूरे नातिसमीपे स्थित्वा अनुपविश्यैव एवमवादीत्-यूयं खलु हे भदन्त अधोऽवधिकाः-अधोऽवधिसम्पन्नाः? अन्नजीविताः-प्रासुकैपणीयान्नमात्रं विनः अन्यजीविनो वा? ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्-हे प्रदेशिन! तदयथा इति दृष्टान्ते, नामेति वाक्यालङ्कारे, शङ्खवणिजः=अङ्गरत्नव्यापारिणः, ‘इति’ वाक्यालङ्कारे ‘वा’ समुच्चये, शङ्खवणिजः=शङ्खरत्नव्यापारिणः, दन्तवणिजः=हस्तिदन्तव्यापारिणः उपलक्षणात्सर्वरत्नव्यापारिणः श्रुत्वा=राजदेयं भागं भ्रंशयितुकामाः=अदातुकामाः नो सम्यक्=समीचीनतया पन्थानं=गम्यमार्गं पृच्छन्ति, एवमेव=अनयैव रीत्या हे प्रदेशिन! त्वमपि विनयः=प्रतिपत्तिरूपं भ्रंशयितुकामः=भक्तुं काम नो सम्यक् पृच्छसि। अथ=वाक्यारम्भे नूनं=निश्चयेन हे प्रदेशिन! तव मां दृष्ट्वा अयमेतद्रूपः=वक्ष्यमाणप्रकारकः आध्यात्मिकः आत्मगतः यावत् कल्पितः प्रार्थित, चिन्तितः मनोगतः=मनः-स्थितः संकल्पः=विचारः समुपपद्यत=समुत्पन्नः, तदेव दर्शयति-जडाःखलु भो! जडं पथुपास्ते यावत् प्रविचरितुम्, यावत्पदसंग्राह्यः सर्वोऽपि पाठः पूर्वगतः, स तदर्थश्च तत एवावलोकनीयः। हे प्रदेशिन! सोऽर्थः=मदुक्तस्त्वद्दृष्टगतविचाररूपोऽर्थः नूनं=निश्चितं समर्थो=वास्तविको वर्तते? प्रदेशी राजा प्राह—हन्त! अस्ति=अयमर्थः समर्थाऽस्ति सत्यमस्तीति भावः ॥ सू० १२८ ॥

टीकार्थ—स्पष्ट है. यहां ‘इति’ शब्द वाक्यालंकार में और ‘वा’ शब्द समुच्चय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। तथा ‘तद् यथा’ पद दृष्टान्त में आया है। उपलक्षण से यहां समस्त रत्न व्यापारी को ग्रहण करना चाहिये. यावत् पद से संकल्प के कल्पित, प्रार्थित, चिन्तित और मनोगत ये विशेषण ग्रहण किये गये हैं। तथा-‘पज्जुवासंति जाव’ के यावत् पद से पूर्वगत समस्त पाठ गृहीत हुआ है। यह पाठ १२६वें सूत्र में प्रकट किया गया है। सू. १२८।

टीकार्थ—आ सूत्रेनो टीकार्थ स्पष्ट न छि. अर्ही ‘इति’ शब्द वाक्यालंकारमां, अने ‘वा’ शब्द समुच्चय अर्थमां वपःयेन छि. तेमज ‘तद् यथा’ पद दृष्टान्तमां आवेन छि. उपलक्षण थी अर्ही जधा रत्नना वेपारीओतुं अडणु समजपुं लेधये. यावत् पहथी संकल्पना कल्पित, प्रार्थित, चिन्तित अने मनोगत ओ विशेषणु अडणु करवा. लेधये ‘पज्जुवासंति जाव’ ना यावत् पहथी पूर्वगत समस्त पाठुं अडणु समजपुं लेधये. आ पाठ १२६मां सूत्रमां आपेल छि. ॥ सू. १२८ ॥

मूलम्--तएणं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी  
मे केणं भंते ! तुज्झं नाणे वा दंसणे वा जेणं तुज्झे मम एयाह्वं  
अज्झत्थियं जाव संकप्पं समुप्पण्णं जाणह पासह ? तएणं से केसी  
कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी--एवं खलु पएसि ! अहं सम-  
णाणं निग्गंथाणं पंचविहे नाणे पणत्ते, तं जहा--आभिणिवोहिय-  
णाणे<sup>१</sup> सुयणाणे<sup>२</sup> ओहिणाणे<sup>३</sup> मणपज्जवमाणे<sup>४</sup> केवलणाणे<sup>५</sup> ५ ।  
से किं तं आभिणिवोहियणाणे ? आभिणिवोहियणाणे चउव्विहे पणत्ते,  
तं जहा--उग्गहे<sup>१</sup> ईहा<sup>२</sup> अवाए<sup>३</sup> धारणा<sup>४</sup> । से किं तं उग्गहे ? उग्गहे  
दुव्विहे पणत्ते, जहा नंदीए जाव से तं धारणा, से तं आभिणिवो-  
हियणाणे । से किं तं सुयणाणे ? सुयणाणे दुव्विहे पणत्ते--अंगपविट्ठं  
च अंगवाहिरियं च, सव्वं भाणियव्वं जाव दिट्ठिवाओ । ओहिणाणं  
भवपच्चइयंखाओवसमियं जहा नंदीए मणपज्जवनाणे दुव्विहे पणत्ते,  
तं जहा--उज्जुमई य विउलमई य, तहेव केवलनाणं सव्वं भाणि-  
यव्वं । तत्थ णं जे से आभिणिवोहिनाणे, से णं मम अत्थि । तत्थ णं  
जे से सुयणाणे से वि य ममं अत्थि । तत्थ णं जे से ओहिणाणे से  
वि य ममं अत्थि । तत्थ णं जे से मणपज्जवनाणे से वि य ममं  
अत्थि । तत्थ णं जे से केवलनाणे से णं ममं नत्थि, से णं अत्रि-  
हंताणं भगवंताणं । इच्चेएणं पएसी ! अहं तव चउव्विहेणं छाउ-  
मत्थिएणं णाणेणं इमेयारूवं अज्झत्थियं जाव संकप्पं समुप्पण्णं  
जाणाभि--पासामि ॥ सू. १२९ ॥

છાયા—તતઃ खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणम् एवमवा-  
दीत्—तर्हि खलु भदन्त ! युष्माकं ज्ञानं वा दर्शनं वा, येन यूयं मम  
सुखरूपम् आध्यात्मिकं यावत् संकल्पं समुत्पन्नं जानीथ पश्यथ ? ततः  
खलु स केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानं एवमवादीत् एवं खलु मदे-  
शिनं ! अस्माकं श्रमणानां निर्ग्रन्थानां पञ्चविधं ज्ञानं प्रवृत्तम्, तद्यथा—  
आभिनिबोधिकज्ञानम् १, अतज्ञानम् २, अवधिज्ञानम् ३, मनःपर्यवज्ञानम् ४,  
केवलज्ञानम् ५ । अथ किं तद् आभिनिबोधिकज्ञानम् ? आभिनिबोधिकज्ञानं

‘तए णं से पएसी राया’ इति’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તए णं से पएसी राया केंसि कुमारसमणं एवं वयासी)  
પુત્રઃ उस प्रदेशी राजाने केशी कुमारश्रमण से ऐसा कश—(से केणं  
भंते ! तुज्झो, नाणे वा दंसणे वा जेणं तुज्झो मम एयारुवं अज्झ  
त्थियं जाव संकल्पं समुत्पणं जाणह पासह ?) हे भदन्त ! ऐसा आपका  
बह कौनसा ज्ञान अथवा दर्शन है कि जिसके द्वारा आपने मेरे इस  
कल्पने हुए आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प को जाना है, और देखा है—  
(तए णं से केसी कुमारसमणे पएसि रायं एवं वयासी) तब केशीकुमार-  
श्रमणने उस प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—(एवं खलु पएसी अम्हं सम-  
णाणं णिग्गंथाणं पंचविहे नाणे पणत्ते तं जहा—आभिनिबोहियनाणे, सुय-  
नाणे, ओहिनाणे, मणपज्जवनाणे केवलणाणे) हे प्रदेशिन ! हम श्रमण निर्ग्रन्थों  
के मत में पांच प्रकार के ज्ञान कहे गये हैं जैसे आभिनिबोधिकज्ञान,—मतिज्ञान  
श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान (से किं तं आभिनि-

‘त एणं से पएसी राया’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તए णं से पएसी राया केंसि कुमारसमणं एवं वयासी) કરી  
તે પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું કે (સે કેણં ભંતે ! તુજ્ઞો  
નાણે વા દંસણે વા જેણં તુજ્ઞો મમ એયારુવં અજ્ઞત્થિયં જાવ સંકલ્પં  
સમુત્પણં જાણહ પાસહ ?) હે ભદન્ત ! આપના પાસે એવું કંઈ જાતનું જ્ઞાન કે  
દર્શન છે કે જેનાવડે આપ આમામાં ઉત્પન્ન થયેલ આધ્યાત્મિક યાવત્ મનોગત સંકલ્પને  
જાણી ગયા છો, અને જોઈ ગયા છો. (તए णं से केसीकुमारसमणे पएसि  
रायं एवं वयासी) ત્યારે કેશીકુમાર શ્રમણે તે પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું—  
(एवं खलु पएसी ! अम्हं समणाणं णिग्गंथाणं पंचविहे नाणे पणत्ते तं  
जहा—आभिनिबोहियनणे, सुयनाणे, ओहिनाणे, मणपज्जवनाणे, केवलणाणे)  
हे प्रदेशिन ! आमांश श्रमण निर्ग्रन्थानां मतमां पांच प्रकारना ज्ञान कहेवामां आव्यां

चतुर्विधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अवग्रहः १, ईहा २, अवायः ३, धारणा ४।  
अथ कोऽसौ अवग्रहः अवग्रहो द्विविधः प्रज्ञप्तः यथा नन्द्यां यावत् सैषा  
धारणा, तदेतद्, आभिनिबोधिकज्ञानम्। अथ किं तत् श्रुतज्ञानम्? श्रुतज्ञानं  
द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अङ्गप्रविष्टं च अङ्गवाह्यं च, सर्वं भणितव्यं यावत्-  
दृष्टिवादः। अवधिज्ञानं भवप्रत्ययिकं क्षायोपशमिकं यथा नन्द्याम् (नं. पृ.

बोहियणाणे) हे भदन्त ! आभिनिबोधिकज्ञान का क्या स्वरूप है ? (आभिणि-  
बोहियणाणे चउन्विहे पणत्ते) हे प्रदेशिन् ! आभिनिबोधिकज्ञान चार प्रकार  
का कहा गया है। (तं जहा-उग्गहे १ ईहा २ अवाए ३ धारणा ४) जैसे-  
अवग्रह. ईहा, अवाय और धारणा। (से किं तं उग्गहे) हे भदन्त ! अवग्रह  
ज्ञान का क्या स्वरूप है। (जहानंदीए जाव से तं धारणा, से तं आभिणि  
बोहियणाणे) अवग्रह से लेकर धारणापर्यन्त सब विवेचन नन्दीसूत्र में  
कहा गया है, इस प्रकार वह आभिनिबोधिकज्ञान का स्वरूप है। (से किं  
तं सुयनाणे) हे भदन्त ! श्रुतज्ञान का क्या स्वरूप है ? (सुयनाणे दुविहे-  
पणत्ते) हे प्रदेशिन् ! श्रुतज्ञान दो प्रकार का कहा गया है। (तं जहा-  
अंगप्रविष्टं च अंगवाहिरियं च) जैसे-अंगप्रविष्ट और अंगवाह्य (सर्वं भाणि  
यव्वं जाव दिट्ठिवाओ) इन दोनों श्रुतज्ञानों का वर्णन भी नन्दीसूत्र में कहा गया  
है अतः दृष्टिवाद तक श्रुतज्ञान का समस्त वर्णन वहां से देखना चाहिये,  
(ओहिनाणं भवपच्चइयं खओवसमियं जहा नंदीए) अवधिज्ञान भवप्रत्ययिक

छे. जेभडे आलिनिबोधिज्ञान, भतिज्ञान श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, भनः पर्थवज्ञान अने केवलज्ञान.  
(से किं तं आभिणिबोहियणाणे) छे लहत ! आलिनिबोधिज्ञानतुं स्वरूप केवुं  
छे ? (आभिणिबोहियणाणे चउन्विहे पणत्ते) छे प्रदेशिन् ! आलिनिबोधिज्ञान  
चार प्रकारतुं छेवाय छे. (तं जहा-उग्गहे १ ईहा २ अवाए ३ धारणा ४) जेभडे  
अवग्रह १, ईहा २, अवाय ३, अने धारणा ४, (से किं तं उग्गहे) छे लहत ! अवग्रह  
ज्ञानतुं स्वरूप केवुं छे ? (उग्गहे दुविहे पणत्ते) छे प्रदेशिन् अवग्रह ज्ञान छे प्रकार  
तुं छेवाय छे. (जहा नंदीए जाव से तं धारणा, से तं आभिणिबोहियणाणे)  
अवग्रहथी भांडीने धारणा सुधीतुं समस्त विवेचन नन्दीसूत्रमां स्पष्ट करवामां  
आव्युं छे. आ प्रमाणे आ आलिनिबोधिज्ञानतुं स्वरूप छे ? (से किं तं सुयनाणे)  
छे लहत ! श्रुतज्ञानतुं स्वरूप केवुं छे ? (सुयनाणे दुविहे पणत्ते) छे प्रदेशिन् !  
श्रुतज्ञान छे प्रकारतुं छे. (तं जहा अंगप्रविष्टं च अंगवाहिरियं च) जेभडे अंग  
प्रविष्ट अंगवाह्य. (सर्वं भाणियव्वं जाव दिट्ठिवाओ) आ गन्ने श्रुतज्ञानोतुं वरुण  
पणु नन्दीसूत्रमां करवामां आव्युं छे. तेथी दृष्टिवाद सुधी श्रुतज्ञानतुं गधुं वरुण  
त्याथी न न्नाथी लेवुं लेधथि. (ओहिनाणं भवपच्चइयं खओवसमियं जहा नंदीए)

૧૬૮ પં. ૪) । મનઃપર્યવજ્ઞાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞાતં, તથા-ઋજુમતિશ્ચ વિપુલમતિશ્ચ તથૈવ કેવલજ્ઞાનં સર્વં ભણિનવ્યમ્ । તત્ર ચ્ચલુ યત્તાત્ આભિનિવોધિકજ્ઞાનં તત્ચલુ મમાસ્તિ ૧ । તત્ર ચ્ચલુ યત્તાત્ શ્રુતજ્ઞાનં તદપિ ચ મમાસ્તિ ૨ । તત્ર ચ્ચલુ યત્તાત્ અવધિજ્ઞાનં તદપિ ચ મમાસ્તિ ૩ । તત્ર-ચ્ચલુ યત્તાત્ મનઃપર્યવજ્ઞાનં તદપિ ચ મમાસ્તિ ૪ । તત્ર ચ્ચલુ યત્તાત્ કેવલજ્ઞાનં તત્ચલુ મમ નાસ્તિ, તત્ચલુ અર્હતાં ભગવતામ્ । હત્યેતેન પ્રદેશિન્ ! અહં તવ ચતુર્વિધેન છાદ્યસ્થિકેન જ્ઞાનેન એતમેતદ્દ્રૂપમ્ આધ્યાત્મિક યાવત્ સંકલ્પં સમુત્પન્નં જાનામિ પશ્યામિ ॥ સૂ. ૧૨૯ ॥

और क्षायोपशमिकके भेद से दो प्रकार का कहा गया है । इसका भी वर्णन नन्दीसूत्र में किया गया है । (मणपज्जवनाणे दुविहे पणत्ते) मनःपर्यव-  
ज्ञान दो प्रकार का कहा गया है (तं जहा-उज्जुमईय. विउलमईय)-ऋजु-  
मति और विपुलमति, (तहेव केवलनाणं सर्वं भाणियव्वं) इसी प्रकार  
केवलज्ञान का वर्णन भी यहां पर करना चाहिये (तत्थ णं जे से आभि-  
णिवोदियनाणे से णं मम अत्थि) इन पांच ज्ञानों में से मुझे मतिज्ञान  
रूप आभिनिवोधिकज्ञान है । (तत्थ णं जे से सुयनाणे से वि य ममं अत्थि)  
श्रुतज्ञान भी है (ओदियणाणे से वि य ममं अत्थि) अवधिज्ञान भी है ।  
(तत्थ णं जे से मणपज्जवनाणे से वि य ममं अत्थि) और मुझे मनः  
पर्यवज्ञान भी है । (तत्थ णं जे से केवलनाणे से णं ममं नत्थि) केवल  
ज्ञान मुझे नहीं है (से णं अरिहंताणं भगवन्ताणं) यह केवलज्ञान अर्हन्त  
भगवन्तों के होता है । (इच्चैएणं पएसी ! अहं तव चउव्विहेणं छाउ-

અવધિજ્ઞાન ભવપ્રત્યયિક અને ક્ષાયોપશમિકના ભેદથી બે પ્રકારનું કહેવાય છે. આનું  
વર્ણન પણ નન્દીસૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. (મણપજ્જવનાણે, દુવિહે પણત્તે)  
મનઃ પર્યવજ્ઞાન બે પ્રકારનું કહેવાય છે. (તં જહા ઉજ્જુમઈ ય વિઉલમઈ ય)  
ઋમકે ઋજુમતિ અને વિપુલમતિ (તહેવ કેવલનાણં સર્વં ભાણિયવ્વં) આ પ્રમાણે  
૪ કેવલજ્ઞાનનું વર્ણન પણ કર્યું બેઠ્યું. (તત્થ ણં જે સે આભિણિવોદિયનાણે સે  
ણં મમ અત્થિ) આ પાંચ જ્ઞાનોમાંથી મને મતિજ્ઞાનરૂપ આભિનિવોધિકજ્ઞાન છે.  
(તત્થ ણં જે સે સુયનાણે સે વિ ય મમં અત્થિ) શ્રુતજ્ઞાન પણ છે. (ઓદિય  
નાણે સે વિ ય મમં અત્થિ) અવધિજ્ઞાન પણ છે. (તત્થ ણં જે સે મણપજ્જવ  
નાણે સે વિ ય મમં અત્થિ) અને મનઃપર્યવજ્ઞાન પણ છે. (તત્થ ણં જે સે  
કેવલનાણે સે ણં મમં નત્થિ) પરંતુ મને કેવલજ્ઞાન નથી. (સે ણં અરિહંતાણં  
ભગવન્તાણં, આ કેવળજ્ઞાન અર્હન્ત ભગવન્તોને હોય છે. (इच्चैएणं पएसी !  
अहं तव चउव्विहेणं छउमत्थिएणं णाणेणं इमेयारूपं अज्झत्थियं जाव संकल्पं

टीका—‘तए णं से पएसी’ इत्यादि—ततः खलु स प्रदेशी राजा  
 केशिनं कुमारश्रमणसू एवमवादीत्—तत् किम्=कीदृशं खलु हे भदन्त !  
 युष्माकं ज्ञानं वा दर्शनं वा अस्ति येन ज्ञानेन वा दर्शनेन वा यूयं मम  
 एतद्रूपं=पूर्वोक्तप्रकारम् आध्यात्मिकम्=आत्मगतविचारम् यावत् संकल्पम्,  
 यावच्छब्देन-चिन्तितं, कल्पितं, प्रार्थितं मनोगतम्, इति संग्राह्यम्, संकल्पं=समु-  
 त्पन्नं=समुद्भूतं जानीथ=ज्ञानविषयीकुरुथ पश्यथ=दर्शनविषयीकुरुथ। ततः=प्रदेशि  
 राजप्रश्नान्तरं खलु स केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानम् एवमवादीत्—  
 एवं खलु हे प्रदेशिन ! अस्माकं श्रमणानां निर्ग्रन्थानां पञ्चविधं ज्ञानं  
 प्रज्ञप्तं, तद्यथा—आभिनिबोधिकज्ञानम् १ श्रुतज्ञानम् २, अवधिज्ञानम् ३,  
 मनःपर्यवज्ञानम् ४, केवलज्ञानम् ५। तत्र—आभिनिबोधिकज्ञानं चतुर्विधं प्रज्ञप्तं,  
 त यथा—अवग्रहः १, ईहा २, अवायः ३, धारणा ४। अथ कोऽसौ अवग्रहः !

‘स्थिएण’ णाणेणं इमेयारूढं अज्झत्थियं जाव संकप्पं समुप्पण्णं जाणामि पासामि)  
 इस तरह से हे प्रदेशिन मैंने इन छात्रस्थिक चतुर्विधज्ञान के द्वारा तुम्हारे  
 इस प्रकार के समुत्पन्न हुए इस संकल्प को जान लिया है और देख लिया है।

टीकार्थ—इसके बाद प्रदेशी राजाने केशी कुमारश्रमण से इस प्रकार  
 कहा—हे भदन्त ? आपका ज्ञान दर्शन किस प्रकार का है कि जिससे आपने  
 मेरे उत्पन्न हुए इस प्रकार के आध्यात्मिक, चिन्तित, कल्पित, प्रार्थित  
 एवं मनोगत इस संकल्प को जान लिया है, और देख लिया है ? इस  
 प्रकार के प्रदेशी राजा के पूछने पर केशीकुमारश्रमणने उससे ऐसा  
 कहा—हे प्रदेशिन ! श्रमणनिर्ग्रन्थों का ज्ञान पांच प्रकार का कहा गया है,  
 अभिनिबोधिकज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यवज्ञान ४, और  
 केवलज्ञान ५. इनमें आभिनिबोधिकज्ञान अवग्रह, ईहा, अवाय, और धारणा के

समुत्पण्णं जाणामि पासामि) आ प्रमाणे हे प्रदेशिन ! मे' आ छात्रस्थिक आर  
 प्रकारना ज्ञाने। वडे तमारामां समुत्पन्न थयेल संकल्प णाणी दांघे छे अने जेधलीधे छे।

टीकार्थ—त्यारपछी प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमणने आ प्रमाणे कहुं के हे  
 भदन्त ! आपनूं ज्ञानदर्शन कथं ज्ञातनुं छे। के जेथी आपे भारामां उत्पन्न थयेल  
 आध्यात्मिक, चिन्तित, कल्पित, प्रार्थित अने मनोगत आ संकल्प णाणी गया छे  
 अने जेध गया छे ? आ प्रमाणे प्रदेशी राजाना प्रश्नने सांखणीने केशीकुमार श्रमण  
 तेभने आ रीते कहुं के ‘हे’ प्रदेशिन ! श्रमण निर्ग्रन्थानुं ज्ञान पांच प्रकारनुं कहेवाय  
 छे। आभिनिबोधिकज्ञान १, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यवज्ञान ४, अने केवलज्ञान  
 ५, आमां आभिनिबोधिकज्ञान अवग्रह, ईहा, अवाय अने धारणा लेहोथी आर



इति प्रश्ने आह-अवग्रहो द्विविधः प्रज्ञप्तः यथा नन्द्यां यावत् सैषा धारणा= अवग्रहादारभ्य धारणापर्यन्तं सर्वमाभिनिबोधिकज्ञानविवरणं नन्दीसूत्रे विद्यो- कनीयम् । अर्थस्तु नन्दीसूत्रस्य मत्कृतज्ञानचन्द्रिका टीकातो बोध्यः । तदेतद् आभिनिबोधिकज्ञानम् । अथ किं तत् श्रुतज्ञानम् ? श्रुतज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-अङ्गप्रविष्टम् १' अङ्गबाह्यं च सर्वं=श्रुतज्ञानविषयकं सर्वं विवरणं भणितव्यं= नन्दीसूत्रोक्तमेवात्र पठितव्यं, यावत्-दृष्टिवादः=दृष्टिवादविव- रणपर्यन्तमिति २ । अवधिज्ञानं-भवप्रत्ययिकं क्षायोपशमिकं चेति द्विविधं, यथा नन्द्यां=नन्दीसूत्रे यथाकथितं तथैव सर्वं विज्ञेयम् । अर्थोऽपि तत्रैव मत्कृत- ज्ञानचन्द्रिकाटीकायामवलोकनीयः ३ । मनःपर्यवज्ञानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा-

भेદ. સે ચાર પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ. અવગ્રહ કા સ્વરૂપ કયા હૈ? ઇસ પ્રશ્ન કૈ ઉત્તર મૈં કેશિકુમારશ્રમણ ને કહા કિ અર્થાવગ્રહ ઔર વ્યઝજ- નાવગ્રહ કૈ ભેદ સે અવગ્રહ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ. નન્દીસૂત્ર મૈં અવગ્રહ સે લેકર ધારણા તકકા પૂર્ણવિષય આભિનિબોધિકજ્ઞાન કૈ વિવરણપ્રકરણ મૈં બહુત હી સુંદર ઢંગ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ। નન્દીસૂત્ર કૈ ડપર હમને જ્ઞાનચન્દ્રિકા નામ કી ટીકા લિખી હૈ ઉસમૈં યહ સર્વ વિષય સ્પષ્ટ રૂપ સે સમજાયા ગયા હૈ. અતઃવિશેષ જિજ્ઞાસુ ઇસ વિષય કો વઢાં સે દેખ લેવૈં। શ્રુતજ્ઞાન મી અઙ્ગપ્રવિષ્ટ ઔર અઙ્ગબાહ્ય કૈ ભેદ સે દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ. ઇસ વિષય કા મી સ્પષ્ટીકરણ નન્દીસૂત્ર મૈં કિયા જાચુકા હૈ। ભવપ્રત્યયિક અવધિ ઔર ક્ષાયોપશમિકઅવધિ ઇસ પ્રકાર સે અવધિજ્ઞાન દો તરહ કા કહા ગયા હૈ। ઇનકામી વર્ણન વહીં પર કિયા ગયા હૈ। ઋજુ-

પ્રકારનું કહેવાય છે અવગ્રહનું સ્વરૂપ કેવું છે? આ બાબતના પ્રશ્નના ઉત્તરમાં કેશિ- કુમાર શ્રમણે કહ્યું કે અર્થાવગ્રહ અને વ્યંજનાવગ્રહના ભેદથી અવગ્રહના બે પ્રકારો કહેવાય છે; નંદીસૂત્રમાં અવગ્રહથી માંડીને ધારણ સુધીની સંપૂર્ણ વિગત આભિનિ- બોધિકજ્ઞાનના વિવરણ પ્રકરણમાં ખૂબજ સારી રીતે રજૂ કરવામાં આવી છે. નંદીસૂત્રની અભાગે 'જ્ઞાનચન્દ્રિકા' નામે ટીકા લખી છે તેમાં આ બધી બાબતોનું સવિસ્તાર સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવ્યું છે. તેથી વિશેષ જિજ્ઞાસુ સમજીને ત્યાંથીજ વાંચવા યત્ન કરે, શ્રુતજ્ઞાન પણ અંગ પ્રવિષ્ટ અને અંગ બાહ્યના ભેદથી બે પ્રકારનું કહેવાય છે. આ બાબતનું સ્પષ્ટીકરણ પણ નંદીસૂત્રમાં કરવામાં આવ્યું છે. ભવ પ્રત્યયિક અવધિ અને ક્ષાયોપશમિક અવધિ આ પ્રમાણે અવધિજ્ઞાન બે પ્રકારનું કહેવાય છે. આ વિષેનું વર્ણન પણ ત્યાંજ કરવામાં આવ્યું છે. ઋજુમતિ અને વિપુલમતિનો ભેદથી મનઃ પર્યવજ્ઞાન બે પ્રકારનું કહેવાય છે. આ વિષેનું સમસ્ત વિવરણ નંદીસૂત્રમાંથી બાણી



ઋજુમતિશ્ચ । વિપુલમતિશ્ચ । અસ્વાપ સર્વ વિવરણં નન્દીમૂત્રે દ્રષ્ટવ્યમ્ ।  
તથૈવ=નન્દીમૂત્રોક્તપ્રકારેણૈવ કેવલજ્ઞાનં=કેવલજ્ઞાનવિવરણં સર્વં મણિતત્ત્વમ્ ।  
તત્ર=તેષુ પઞ્ચસુ જ્ઞાનેષુ સ્વલુ યત્તદ્ આભિનિવોધિકજ્ઞાનં તત્ સ્વલુ મમાસ્તિ ।  
અર્થજ્ઞાનમ૨, અવધિજ્ઞાનમ૩, મનઃપર્યવજ્ઞાનં ૪ ચેતિ જ્ઞાન-  
ચતુષ્ટયં મમાસ્તિ । તત્ર=તેષુ પઞ્ચસુ જ્ઞાનેષુ યત્તત્ કેવલજ્ઞાનં તત્ મમ નાસ્તિ=  
ન વિચિત્રે તત્=કેવલજ્ઞાનં સ્વલુ અર્હતાં ભગવતાં ભવતિ નાન્યેષામિતિ । इत्ये-  
તેન=પૂર્વોક્તેન કારણેન હે પ્રદેશિન ! રાજન ! અહં ચતુર્વિધેન=ચતુષ્પ્રકારકેન-  
છાદ્યસ્થિકેન=છાદ્યસ્થસસ્વન્ધિના જ્ઞાનેન તત્ર એતમ્ એતદ્વિધં=ત્વદન્તઃકરણસ્થમ્-  
આધ્યાત્મિકં યાવત્ સંકલ્પં=મનોગતં સંકલ્પં સમુત્પન્નં જાનામિ પશ્યામિ સૂ. ૧૨૯ ।

મૂલમ્—તેણે જે પાણી રાયા કેસિકુમારસમળે એવં વયાસી--  
અહં જે ભંતે ! હું ઉવવિસામિ ? પાણી ! સાણે ઉજ્જાળભૂમીએ તુમંસી  
ચેવ જાણે, તેણે જે પાણી રાયા ચિત્તે જે સારહિણા સદ્ધિ કેસિ-  
સ્સ કુમારસમળસ્સ અદૂરસામંતે ઉવવિસઈ, કેસિકુમારસમળે એવં  
વયાસી તુઠ્ઠમે જે ભંતે ! સમળાણે ણિગંથાણે એસા સળ્ળા એસા પડ-  
ળા એસા દિટ્ઠી એસા રૂઠ્ઠે એસ હેઝ એસ ઉવએસે સંકપ્પે એસા

મતિ ઓર વિપુલમતિ કે ભેદ સે મનઃપર્યવજ્ઞાન દો પ્રકાર કા કહા ગયા  
હે । ઇસકા સમસ્ત વિવરણ નન્દીમૂત્ર સે જાનને યોગ્ય હૈ । હસી પ્રકાર  
કેવલજ્ઞાનવિષયક સમસ્ત કથન ભી વહીં સે જાનના ચાહિયે । ઇન પ્રદર્શિત પાંચ  
જ્ઞાનોં મેં સે મુદ્ધે ચારજ્ઞાન પ્રાપ્ત હૈં, આભિનિવોધિકજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિ-  
જ્ઞાન, એવં મનઃપર્યવજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાન મુદ્ધે નહીં હૈ. યહ જ્ઞાન અર્હન્ત ભગ  
વન્તોં કો હી હોતા હૈ । અતઃ હં પ્રદેશિન ! મેં ઇન ચાર છાદ્યસ્થિક જ્ઞાન  
સે ઉત્પન્ન હુએ ઇસ તુમ્હારે અન્તઃકરણસ્થ આધ્યાત્મિક યાવત્ મનોગત સંકલ્પ  
કો જાન ગયા હૂં ઓર દેગ્ધ ચુકા હૂં ॥ મૂ. ૧૨૯ ॥

લેવું જોઈએ. આ પ્રમાણે કેવલજ્ઞાન વિષયક સમસ્ત કથન પણ ત્યાંથી જ બાણી લેવું  
જોઈએ. ઉપર બાણીવેલ પાંચ જ્ઞાનોમાંથી મને ચાર જ્ઞાન પ્રાપ્ત થયેલ છે. આભિનિ-  
વોધિકજ્ઞાન, (મતિજ્ઞાન) શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાન મને કેવલજ્ઞાન  
પ્રાપ્ત થયેલ નથી. આ જ્ઞાન અહીં ત લગવંતોને જ હોય છે. એથી હું પ્રદેશિન !  
હું આ ચાર છાદ્યસ્થિક જ્ઞાનથી ઉત્પન્ન થયેલ તમારા આ અન્તઃકરણસ્થ આધ્યાત્મિક  
યાવત્ મનોગત સંકલ્પને બાણી ગયો છું અને જોઈ ગયો છું. ॥ સૂ. ૧૨૯ ॥

तुला एस माणे एस पमाणे एस समोसरणे जहा अण्णो जीवो-  
अण्णं सरीरं, णो तं जीवो तं सरीरं? तएणं केसीकुमारसमणे पएसि  
रायं एवं वयासी- पएसी! अम्हं समणाणं णिग्गंथाणं एसा  
सण्णा जाव एस समोसरणे जहा अण्णो जीवो अण्णं सरीरं  
णो तं जीवो तं सरीरं ॥ सू० १३० ॥

छाया—ततः खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणमेवमवादीत्  
अहं खलु भदन्त ! इह उपविशामि ? प्रदेशिन् ? एतस्या उद्यानभूमेस्त्वमसि  
एव दायकः, ततः खलु स प्रदेशी राजा चित्रेण सारथिना सार्द्धं केशिनः  
कुमारश्रमणस्य अदूरसामन्ते उपविशति, केशिकुमारश्रमणमेवमवादीत्—युष्माकं

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं से पएसी राया केसि कुमारसमणं एवं वयासी) इसके  
बा. केशीकुमारश्रमण से उस प्रदेशी राजाने ऐसा कहा (अहं णं भंते!  
इहं उधावसामि) हे भदन्त ! मैं इस स्थान में बैठ जाऊं ? (पएसी ! साए  
उज्जाणभूमीए तुमंसि चेव जाणए) तब केशीकुमारश्रमणने उससे कहा  
हे प्रदेशिन् ! इस उद्यानभूमि के तुम हो दायक हो—अर्थात् उपवेशन के  
विषय में या अनुपवेशन के विषय में मैं क्या कहूँ—यह तो स्वयं ही  
जानो । (तए णं से पएसी राया चित्तेण सारथिणा सद्धिं केसिस्स कुमार  
समणस्स अदूरसामन्ते उवविसइ) इसके बाद वह प्रदेशी राजा चित्र सारथि  
के साथ केशीकुमारश्रमण के समीप—न अधिक दूर और न अधिक

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं से पएसी राया केसि कुमारसमणं एवं वयासी)  
त्यारपणी केशीकुमारश्रमणने ते प्रदेशी राजाने आ प्रभावे क्खं—(अहं णं भंते !  
इहं उवविसामि) हे भदन्त ! मैं इस स्थान में बैठूँ ? (पएसी ! साए उज्जाण  
भूमीए तुमंसि चेव जाणए) तब केशीकुमारश्रमणने ते राजाने आ प्रभावे  
क्खं के हे प्रदेशिन् ! आ उद्यानभूमिना तमे ञ् सपक्खे ओएवे के उपवेशन माटे  
के अनुपवेशन माटे मारे तमने क्खेवुं ते अमार साधुकवथी णहार छे जेथी ते  
माटे तमे पोतेज विचारी वे। (तए णं से पएसी राया चित्तेण सारथिणा  
सद्धिं केसिस्स कुमारसमणस्स अदूरसामन्ते उवविसइ) त्यारपणी ते प्रदेशी  
राज चित्रसारथिनी साथे केशिकुमारश्रमणनी पासे—वधादे हर पणु नहि—  
तेमज वधादे नल्लक पणु नहि—जेवा स्थाने जेसी गयो. (केसिकुमारसमणं एवं

સ્વલુ ભદન્ત ! શ્રમણાનાં નિર્ગન્થાનામ્ એવા સંજ્ઞા એવા પ્રતિજ્ઞા એવા દૃષ્ટિઃ  
એવા રુચિઃ એવ હેતુઃ એવ ઉપદેશઃ એવ સંકલ્પઃ એવા તુલા એતત્ માનમ્ એતત્  
સમવસરણમ્ યથા-અન્યો જીવઃ અન્યત્ શરીરમ્, નો તત્ જીવઃ તત્ શરી-  
રમ્ ? તતઃ સ્વલુ કેશીકુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત-પ્રદેશિન્  
અસ્માકં શ્રમણાનાં નિર્ગન્થાનામ્ એવા સંજ્ઞા યાવત્ એતત્ સમવસરણં યથા-  
અન્યો જીવઃ અન્યત્ શરીરમ્, નો તત્ જીવઃ સ શરીરમ્ ॥ સૂ૦ ૧૩૦ ॥

પાસ કે સ્થાન મેં બેઠ ગયા (કેસીકુમારસમણં એવં વયાસી) ઔર કેશી-  
કુમારશ્રમણ સે इस प्रकार बोला-(तुम्हे णं भन्ते ! समणाणं निर्गन्थाणं एसा  
सण्णा एसा पइण्णा एसा दिट्ठी, एसा रुई एस हेऊ) हे भदन्त ! आप  
श्रमण निर्ग्रन्थों की यह संज्ञा है. यह प्रतिज्ञा है, (पदार्थ के स्वरूपका  
निश्चय ज्ञानरूप) यह दृष्टि है, यह रुचि है, यह हेतु है (एस उवएसे एस  
संकल्पे एसा तुला, एस माणे, एस पमाणे. एस समोसरणे) यह उपदेश  
है, यह संकल्प है, यह तुला है, यह मान है, यह प्रमाण है, यह समव-  
सरण है (जहा अण्णो जीवो, अण्णं सरीरं) कि जीव भिन्न है और शरीर भिन्न है,  
(णो तं जीवो तं सरीरं) न जीव शरीररूप है. और न शरीर जीवरूप है। (तए  
णं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी) तब केशी कुमारश्रमणने प्रदेशी  
राजा से ऐसा कहा-(पएसी ? अम्हं समणाणं निर्गन्थाणं एसा सण्णा जाव  
एस समवसरणे जहा अण्णो जीवो. अण्णं सरीरं, णो तं जीवो तं सरीरं)

વયાસી) અને કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું-(તુમ્હે ણં ભન્તે ! સમણાણં  
નિર્ગન્થાણં એસા સણ્ણા એસા પહ્ણા એસા દિટ્ઠી, એસા રૂઈ, એસ હેઊ)  
હે ભદન્ત ! આપ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોની આ સંજ્ઞા છે, આ પ્રતિજ્ઞા છે, આ દૃષ્ટિ છે,  
આ રુચિ છે, આ હેતુ છે, (એસ ઉવએસે, એસ સંકલ્પે એસા તુલા, એસ માણે.  
એસ પમાણે, એસ સમોસરણે) આ ઉપદેશ છે, આ સંકલ્પ છે, આ તુલા છે, આ  
માણ છે, આ પ્રમાણ છે, આ સમવસરણ છે. (જહા અણ્ણો જીવો, અણ્ણં સરીરં,  
ણો તં જીવો, તં સરીરં) કે જીવ અને શરીર જુદાંજુદાં છે. ન જીવ શરીર રૂપ  
છે અને ન શરીર જીવરૂપ છે. (તએ ણં કેસીકુમારસમણે પએસિં રાયં એવં  
વયાસી) ત્યારે કેશીકુમાર શ્રમણે પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું કે (પએસી ! અમ્હં  
સમણાણં નિર્ગન્થાણં એસા સણ્ણા જાવ એસ સમવસરણે જહા અણ્ણો જીવો  
અણ્ણં સરીરં, ણો તં જીવો તં સરીરં) હે પ્રદેશિન ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોની આ

ટીકા— ‘તપ્ત ણં સં પપ્મી રાયા’ હત્યાદિ—તતઃ સ્વત્વ મ્ પ્રદેશી-  
રાજા કેશિનં કુમારશ્રમણં પવમ્—અનુપદં વક્ષ્યમાણં વચનમ્ અવાદીત્—  
હે ભદન્ત! અહં સ્વત્વ હહ—અગ્નિન સ્થાને ઉપવિશામિ? તતઃ કેશીકુમાર-  
શ્રમણ આહ—હે પ્રદેશિન્ ! પતમ્યાઃ ઉદ્યાનભૂમેઃ ત્વમેવ જ્ઞાયકઃ અસિ ણ્ણા  
ઉદ્યાનભૂમિસ્તવનિશ્ચિતા, નામ્માકમુપવેજનાનુપવેજનવિપયે વક્તું કલ્પતે, ત્વમેવ  
જ્ઞાનાસીતિ ભાવઃ। તતઃ સ્વત્વ સ્વ પ્રદેશી રાજા ચિત્રેણ સારથિના સાર્દઃ—  
કેશિન! કુમારશ્રમણસ્ય અદ્વરસામન્તે-નાતિક્ષે નાતિસમીપે ઉપવિશતિ, ઉપ-  
વિશ્ય સ કેશિકુમારશ્રમણસ પવમ્—અનુપદં વક્ષ્યમાણં વચનમ્ અવાદીત્—હે  
ભદન્ત! યુષ્માકં સ્વત્વ શ્રમણાનાં નિર્ગન્થાનામ્, ણ્ણા હ્યં સંજ્ઞા-સમ્ય-  
જ્ઞાનમ્ અસ્તિ પવમગ્રેડપિ ક્રિયા, ણ્ણા પ્રતિજ્ઞા-નિશ્ચયરૂપા સ્વીકારઃ, ણ્ણા  
દૃષ્ટિઃ-દર્શનં-સ્વતત્ત્વમ્, ણ્ણા રુચિઃ—શ્રદ્ધાપૂર્વકોડમિત્લાપઃ, ણ્ણ હેતુઃ—

હે પ્રદેશિન હમ શ્રમણ નિર્ગન્થોં કો યદ્દ સંજ્ઞા હૈ, યાવત્ યદ્દ સમવસરણ હૈ કિ જીવ  
ભિન્ન હૈ ઓર શરીરભિન્ન હૈ, જીવ શરીરરૂપ નહીં હૈ ઓર શરીર જીવરૂપ નહીં હૈ।

ટીકાર્થ—મૂલાર્થ કે જેસા હી હૈ. પરન્તુ ભાવાર્થ હસકા હસ પ્રસંગમેં  
સે હૈ—કેશી કુમારશ્રમ કો પવં પ્રદેશી રાજા કો વાતચીત કે હસ પ્રસંગ  
મેં જવ પ્રદેશી રાજાને અપને ચૈઠને કો વાત પૂછી તવ હસમેં અપનો અનુ-  
મતિ દેના સાધુકલ્પ કે અનુકૂલ નહીં હૈ, અર્થાન્ તુમ ચૈઠો-ઉઠોં હત્યાદિ  
કહના સાધુઓં કો કલ્પતા નહીં હોને સે અયોગ્ય પ્રકટ કિયે, તવ પ્રદેશી રાજા  
ચિત્ર સારથિ કે સાથ વહાં વૈઠ ગયા. ફિર ડસને કેશી કુમારશ્રમણ  
સે એસા પૂછા કિ હૈ ભદન્ત! આપ કો એસી જો સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપ સંજ્ઞા હૈ.  
એસી આપકો તત્ત્વનિશ્ચયરૂપ જો પ્રતિજ્ઞા હૈ, એસી આપકો દર્શનરૂપ દૃષ્ટિ—

સંજ્ઞા છે, યાવત્ આ સમવસરણ છે કે છવ અને શરીર જુદાંબુદાં છે. છવ શરીર  
રૂપ નથી અને શરીર છવરૂપ નથી.

ટીકાર્થ—મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે પણ ભાવાર્થ આ સુબળ છે. કેશીકુમાર શ્રમણ  
અને પ્રદેશી રાજાના વાર્તાલાપમાં જ્યારે પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમાર શ્રમણને ત્યાં બેસ-  
વાની વાત પૂછી ત્યારે રીતે કહેવું તે અમારા સાધુકલ્પથી બહાર છે. જેથી તે  
બાળતમાં તમોસ્વયં નિર્ણય કરે તેમ કહી. તેમની ધચ્છા પર જ છાડી ત્યાર  
પછી પ્રદેશી રાજા પોતાના ઉચિત સ્થાન પર ચિત્રસારથિની પાસે બેસી ગયો. અને  
ત્યાં બેસીને કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હે ભદન્ત! આપની જે આ  
બાળતની સમ્યગ્જ્ઞાનરૂપ સંજ્ઞા છે, તત્ત્વ-નિશ્ચયરૂપ જે પ્રતિજ્ઞા છે, દર્શનરૂપ દૃષ્ટિ સ્વતત્ત્વ

સર્વસ્યાપિ દર્શનપ્રતિપાદ્યાર્થસ્ય-एतत्कारणम्-युष्माकं दर्शनम्, एष उपदेशः-  
 शिक्षावचनम् एष संकल्पः-सर्वदैव भवतां तात्त्विकोऽध्यवसायः, एषा तुला-  
 तुलेव तव स्वीकारः, तत्र तुलासादृश्यं च मेयपदार्थपरिच्छेदकत्वेन, एवम्  
 एतत् मानम्-प्रस्थादिमानसदृशस्तवस्वीकारः, मानसादृश्यमपि मेयपदार्थ  
 परिच्छेदकत्वेन, एतत् प्रमाणप्रत्यक्षादिप्रमाणसदृशस्तव स्वीकारः, प्रत्यक्षादि  
 सादृश्यं च स्वीकारे दृष्टेष्टाविरोधित्वेन, यथा प्रत्यक्षादिप्रमाणं दृष्टेष्टं न  
 विरुणद्धि तथा तवस्वीकारोऽपि । एतत् समवसरणं-बहूनामेकत्रमिलनम्  
 तद्वत् तव स्वीकारः, यथा समवसरणे बहवो जना आगत्य मिलन्ति तथैव  
 तव स्वीकारे सर्वाणि तत्त्वानि समाविशन्ति तत्स्वीकारस्वरूपमाह-यथा अन्यो  
 जीवः अन्यत् शरीरमिति-जीवः-उपयोगलक्षणः, अन्यः-शरीराद् भिन्नोऽस्ति,  
 एवं शरीरम् अन्यत्-जीवाद्विज्ञमस्ति, इत्येवं जीवशरीरयोः पार्थक्यमन्वय-

સ્વતત્વ હૈં, ऐसी जो आपकी श्रद्धापूर्वक अभिलापरूप रुचि है, ऐसा जो दर्शन  
 प्रतिपाद्य समस्त भी अर्थका आपका दर्शन कारणरूप हेतु है, ऐसा जो आपका  
 शिक्षा वचनरूप उपदेश है, ऐसा जो आपका संकल्प है. सर्वदा आपका  
 तात्त्विक अध्यवसाय है, तुला के जैसी मेयपदार्थ की परिच्छेदक होने से  
 ऐसी जो आपकी मान्यता है, प्रस्थादिमान के जैसी आपकी ऐसी जो  
 स्वीकृति-दृढधारणा है, आपका ऐसा जो दृष्ट-प्रत्यक्ष एवं दृष्ट अनुमान  
 से अविरोधी होने के कारण प्रत्यक्षादि प्रमाण स्वरूप जैसा मन्तव्य है,  
 आपकी ऐसी जो कथनी समवसरणरूप है (अर्थात् समवसरण में जैसे  
 अनेक जन आकर के मिलते हैं उसी प्रकार से तुम्हारे स्वीकाररूप सिद्धान्त  
 में समस्ततत्त्व अन्तर्हित हो जाते हैं, अतः यह समवसरणरूप है) कि-  
 उपयोगलक्षणवाला जीव अन्य है-शरीर से भिन्न है-भिन्न स्वरूपवाला

છે, શ્રદ્ધાપૂર્વક અભિલાપ રુચિ છે, દર્શનપ્રતિપાદ્ય સમસ્ત અર્થનું આપનું દર્શન  
 કારણરૂપ હેતુ છે, શિક્ષા વાચનરૂપ ઉપદેશ છે, સંકલ્પ છે, સર્વદા તાત્ત્વિક અધ્યવસાય છે,  
 તુલાની જેમ મેયપદાર્થની પરિચ્છેદક હોવાથી એવીજ આપની માન્યતા છે, પ્રસ્થાદિ-  
 માન જેવી આપની દૃઢધારણા છે, દૃષ્ટપ્રત્યક્ષ અને દૃષ્ટ અનુમાનથી અવિરોધી હોવા  
 બદલ પ્રત્યક્ષ વગેરે પ્રમાણરૂપ આપનું મંતવ્ય છે, આપની એવી જે કથની સમવ-  
 સરણરૂપ છે (એટલે કે સમવસરણમાં જેમ ઘણા લોકો આવીને એકત્ર થાય છે તેમજ  
 તમારા સ્વીકારરૂપ સિદ્ધાન્તમાં બધા તત્ત્વો અંતર્હિત થઈ જાય છે. એથી આ સમવ-  
 સરણ છે.) કે ઉપયોગ લક્ષણવાળો જીવ અન્ય છે. શરીર કરતાં જુદો છે, જુદા સ્વરૂપ

મુખેનોક્ત્વા વ્યતિરેકમુખેન તદેવાઽઽહ-‘ળો ત’ હત્યાદિ-તત્=શરીરં જીવો  
 ન જીવશ્ચ શરીરં ન, ‘ળો ત’ इति वाक्ये उभावपि तच्छब्दावव्ययम् । ततः  
 खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्-अस्माकं श्रमणानां  
 निर्ग्रन्थानाम् एषा संज्ञा यावद् एतत् समवसरणं यथा अन्यो जीवः अन्यत्  
 शरीरं, नो तत् जीवो नो स शरीरम् ॥ सू० १३०॥

મૂલમ્--તણે ણં સે પણસી રાજા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી-  
 જહુ ણં મંતે ! તુભં સમણાણં ણિગ્ગંથાણં ણસા સણ્ણા જાવ સમો-  
 સરણે-જહા અણ્ણો જીવો અણ્ણં સરીરં ણો તં જીવો તં સરીર, એવં  
 खलु ममं अज्जए होत्था, इहेव जंबूदीवे दीवे सेयवियाए णवरीए  
 अधम्मिए जाव सयस्स वि य णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं  
 पवत्तेइ, से णं तुब्भं वत्तव्वयाए सुवहुं पावं कम्मं कलिकलुसं सम-  
 जिणित्ता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु नरएसु णेरइयत्ताए उव-  
 वण्णे । तस्स णं अज्जगस्स अहं णत्तुए होत्था-इट्ठे कंते पिए मणुण्णे  
 मणामे थेजे वेसासिए संमए बहुमए रयणकरंडगसमाणे जीवि  
 उस्सविए हिययणंदणिजे-उंबरपुप्फं पिव दुल्लभे सवणायाए, किमंग

है. और शरीर उससे भिन्न है (यह अन्वयमुख से कथन है) । शरीर जीव-  
 रूप नहीं है (यह व्यतिरेकमुख से कथन है) सो यह सत्य है न ? इस  
 प्रकार प्रदेशी राजा के कृत इस प्रश्न को सुनकर केशीकुमारश्रमणने उससे  
 कहा-हां, प्रदेशिन । हम श्रमण निर्ग्रन्थों की ऐसी ही संज्ञा यावत् सम-  
 वसरण है कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है. जीव शरीररूप नहीं  
 है. और शरीर जीवरूप नहीं है इस प्रकार से दोनों में सर्वथा पृथक्ता है । सू. १३० ।

વાળો છે અને શરીર તેનાથી બુદ્ધ છે. (આ અન્વયમુખથી કથન છે) શરીર જીવરૂપ  
 નથી. જીવ શરીરરૂપ નથી. (આ વ્યતિરેક મુખથી કથન છે.) તો આ બધું સત્ય છે ?  
 આ બીજાના પ્રદેશી રાજાના પ્રશ્નને સાંભળીને કૈશીકુમાર શ્રમણે તેને કહ્યું કે હાં પ્રદે-  
 શિન ! અમારા જેવા શ્રમણ નિર્ગ્રંથોની એવી જ સંજ્ઞા યાવત્ સમવસરણ છે કે  
 જીવ બુદ્ધ છે અને શરીર બુદ્ધ છે. જીવ શરીરરૂપ નથી અને શરીર જીવરૂપ નથી.  
 આ પ્રમાણે બંને સાવ બુદ્ધ બુદ્ધ છે. ॥ સૂ. ૧૩૦ ॥

पुण पासाणयाए ? तं जइ णं से । अज्जए णं ममं आगंतुं वएज्जा-  
एवं खलु नत्तुया ! अहं तव अज्जए होत्था, इहेव सेयवियाए नयरीए  
अधम्मिए जाव नो सस्सं करभरवित्तिं पवत्तोम, तएणं अहं सुबहुं  
पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणित्ता नएसु उववण्णे तं माणं  
नत्तुया ! तुमंपि भवाहि अधम्मिए जाव णो सस्सं करभरवित्तिं  
पवत्तेहि, माणं तुमंपि एवं चेव सुबहुं पावकम्मं जाव उववज्जिहिसि,  
तं जइ णं से अज्जए ममं आगंतुं वएज्जा तो णं अहं सदहेज्जा पत्ति-  
एज्जा रोएज्जा जहा अन्नो जीवोअन्नं सरीरं णो तं जीवो णो तं सरीरं,  
जम्हा णं से अज्जए ममं आगंतुं नो एवं वयासी तम्हा सुपइट्ठिया  
मम पइन्ना समणाउसो ! जहा तज्जीवो तं सरीरं ॥ सू० १३१ ॥

छाया—ततः खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणमेवमवादीत् यदि खलु  
भदन्त ! युष्माकं श्रमणानां निर्ग्रन्थानामेषा संज्ञा यावत् समवसरणं यथा—अन्यो  
जीवः अन्यत् शरीरम् न तत् जीवः स शरीरम् एवं खलु मम आर्यकोऽभवत्, इहैव

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं से पएसी राया केशिकुमार समणं एवं वयासी)  
तव उस प्रदेशीराजाने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(जइ णं भंते !  
तुम्हें समणाणं निर्ग्रन्थाणं एसा सण्णा जाव समोसरणे) हे भदन्त ! यदि  
आप श्रमण निर्ग्रन्थों की ऐसी संज्ञा यावत् समवसरण है कि (अण्णो  
जीवो अण्णं सरीरं) जीव अन्य है और शरीर अन्य है (णो तं जीवो तं

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं से पएसी राया केशिकुमारसमण एवं वयासी)  
त्यारे ते प्रदेशी राजाने केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे उछुं के (जइ णं भंते !  
तुम्हें समणाणं निर्ग्रन्थाणं एसा सण्णा जाव समोसरणे) हे भदन्त ! जे आप  
जेवा श्रमण निर्ग्रन्थोनी जेवी संज्ञा यावत् समवसरण छे के (अण्णो जीवो अण्णं सरीरं)  
एव अन्य छे अने शरीर अन्य छे (णो तं जीवो तं सरीरं) एव शरीरइप



जम्बूद्वीपे द्वीपे श्वेताविकायां नगर्याम् अधार्मिकः यावत् स्वकरयापि च खलु जनपदस्य नो सम्मं करभरवित्तिं प्रावर्तयत्, स खलु युष्माकं वक्तव्यतया सुबहु पापं कर्म कलिकलुषं समज्यं कालमासे कालं कृत्वा अन्यतरेषु नरकेषु नैरयिकतया उपपन्नः । तस्य खलु आर्यकस्य अहं नष्टकः अभवम्, दृष्टः

(सरीर) जीव शरीररूप नहीं है. शरीर जीवरूप नहीं है. (एवं खलु मम अज्जिए होत्था-इहेव जंबूदीवे दीवे सेयंविद्याए णयरीए अधम्मिए जाव सयस्स वि य णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेइ) तो इस बातको यदि मेरें पितामह आकर के पुष्ट करें-सुझ से कहें-तो मैं आपके इस कथन पर विश्वास कर सकता हूं ऐसा संबंध यहां लगाना चाहिये, इसी बात को वह इस आगे के सूत्रपाठ से प्रदर्शित करता है-वह कहता है कि इसी जम्बूद्वीप नामके द्वीप में स्थित इस श्वेताविका नगरी में मेरे पितामह-दादा थे. ये अधार्मिक थे, यावत् भग्ने प्रजाजनों का टेक्स लेकर भी उनका पोषण अच्छी तरह से नहीं करते थे. (से णं तुव्वं वत्तव्वयाए सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणिच्चा कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु नरएसु णेरइयत्ताए उव्वण्णे) वे आपके कथनानुसार बहुत पापी थे. अतिमलिन बहुत से पापकर्मों का उपार्जन करके वे कालमास में काल करके किसी एक नरक में नैरयिक की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। (तस्स

नथी. शरीर लवश्य नथी. (एवं खलु मम अज्जिए होत्था इहेव जंबूदीवे दीवे सेयंविद्याए णयरीए अधम्मिए जाव सयस्स वि य णं जणवयस्स नो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेइ) तो आ बात जो भारा पितामह आवीने भने कहे तो हुं आपना कथन पर विश्वास भूझी शकुं तेम छुं. ओवो संबंध अहीं लगाववो नोद्यो. ओज बातने ते आ सूत्रपाठवडे प्रदर्शित करतां कहे छे के आज जंबूद्वीप नामना द्वीपमां स्थित श्वेताविका नगरीमां भारा पितामह होता. तेओ अधार्मिक होता यावत् पोताना अन्नानो पासोथी कर वसूल करीने पणु तेमहुं सरस रीते लक्षण पोषण तेमज्ज वक्षण करता न होता. (से णं तुव्वं वत्तव्वयाए सुबहुं पावं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणिच्चा कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु नरएसु णेरइयत्ताए उव्वण्णे) आपथीना कथन सुज्ज तेओ गहु मोटा पापी होता. आतमिलन धणुं पापकर्मोहुं उपार्जन करीने तेओ कालमासमां काल करीने कोइ ओइ नरकमां नैरयिकनी पर्यायमां जन्म पाभ्यां छे. (तस्स णं अज्जगरस अहं णत्तुए होत्था, इट्ठे कंते

कान्तः प्रियः मनोज्ञः मनोऽमः स्थैर्यः विश्वासिकः संमतः बहुमतः अनुमतः  
रत्नकरण्डकसमानः जीवितोन्मविकः हृदयानन्दिजननः, उदुम्बरपुष्पमिव दुर्लभः  
श्रवणतया किमङ्ग पुनः दर्शनतया ? तद् यदि खलु स आर्यकः मम आग-  
त्य वदेत्-एवं खलु नक्तुक ! अहं तव आर्यकोऽभवम्, इहैव श्वेतविकायां  
नगर्याम् अधार्मिको यावत् नो सम्यक् करभरवृत्तिं प्रावर्तयम्, ततः खलु

णं अज्जगम्म अहं णत्तुए होत्था, इट्ठे कंते पिए मणुण्णे मणामे, थेज्जे  
वेमासिए संमए बहुमए रयणकरंडगममाणे जीविउस्सविए) उन अर्यक का  
मैं पौत्र हूं मैं उन्हें अभिलषित था. कान्त था, प्रिय था, मनोज्ञ था मनो-  
गम्य था, स्थैर्यरूप था, विश्वासपात्र था, सन्मानपात्र था, प्रचुर मानपात्र  
था, हृदयप्रिय था, रत्नकरण्डक के जैसा था, जीवन के उत्सवरूप था.  
(हिययणंदिजणणे उंवरपुष्पंविंव दुल्लहे सवणयाए, किमंगपुण पासणयाए)  
उनके हृदय के आनन्द जनक था, उदुम्बरपुष्प के समान मैं उन्हें सुनने के  
लिखे दुर्लभ था-देखनेकी बात तो क्या कहनी (तं जइ णं से अज्जए  
णं ममं आगंतुं वएज्जा) तो यदि वे आर्यक आकर के सुझसे ऐसा कहे  
(एवं खलु नत्तया ! अहं तं अज्जए होत्था, इहेव सेयंबियाए नयरीए  
अधम्मिए जाव नो सम्मं करभरविन्ति पवत्तेमि) हे पौत्र ! मैं तुम्हारा  
आर्यक-पितामह था, इसी श्वेतांगिका नगरी में अधार्मिक बना हुआ मैं  
अच्छो तरह से प्रजाजन से प्राप्त टेकम से उनका पोषण नहीं करता था.

पिए मणुण्णे मणामे, थेज्जे वेमासिए संमए बहुमए रयणकरंडगममाणे  
जीविउस्सविए) ते आर्यकनो हुं पौत्र छुं. हुं तेमना भाटे अभिलषित हुतो, कान्त  
हुतो, प्रिय हुतो, मनोज्ञ हुतो. मनोगम्य हुतो, स्थैर्यरूप हुतो, विश्वासपात्र हुतो,  
सन्मानपात्र हुतो, प्रचुर मानपात्र हुतो, हृदयप्रिय हुतो, रत्न करंडक जैसा हुतो,  
जीवनना उत्सवरूप हुतो. (हिययणंदिजणणे उंवरपुष्पं विंव दुल्लहे सवणयाए  
किमंग पुण पासणयाए) तेमना हृदयने आनंद आपनारे हुतो उमराना पुष्पनी  
जेम हुं तेमना भाटे जेवानी बात तो दूर रही. सांख्यवा भाटे पणु दुर्लभ हुतो  
(तं जइ णं से अज्जए णं ममं आगंतुवएज्जा) तो हुवे जे ते आर्यक आवीने  
मने आम कहे के (एवं खलु नत्तया ! अहं तं अज्जए होत्था, इहेव सेयंबियाए  
नयरीए अधम्मिए जाव नो सम्मं करभरविन्ति पवत्तेमि) हे पौत्र ! हुं तभादे  
आर्यक-पितामह हुतो. आज श्वेतांगिका नगरीमां अधार्मिक थधने प्रजाजनो पासैथी  
कर वसूल करीने पणु तेमनुं रक्षण-पोषण वगेरे करतो न हुतो. (तए णं अहं

अहं सुबहु पापं कर्म कलिकलुसं समज्जिणत्ता नरएसु उपपन्नः, तद् मा खलु नप्तुक! त्वमाप भव अधार्मिकः यावद् नो सम्यक् करमावृत्तिं प्रवर्तय, मा खलु त्वमपि एवमेव सुबहु पापकर्म यावद् उपपत्स्यसे, तद् यदि खलु स आर्यकः मम आगत्य वदेत-ततः खलु अहं श्रद्धयाम् प्रतीयाम् रोचयेयं, यथा-अन्नो जीवः अन्यत् शरीरम्, नो तत् जीवः स शरीरम्, यस्मात् खलु स

(तए णं अहं सुबहुं पापं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणत्ता नरएसु उववण्णे) अतः मैने बहुत अधिक अतिकल्प पापों का संचय किया था-और इससे मैं नरको मैं से किसी एक नरक में नारक की पर्याय से उत्पन्न हुआ हूँ (तं मा णं नत्तुया ! तुमपि भवाहि अधम्मिण जाव णो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेहिं) इसलिये हे पौत्र ! तुम अधार्मिक मत होना, और प्रजाजनों से प्राप्त टेक्स से उनके पोषण में असावधान मत रहना प्रत्युत उससे उनका पोषण अच्छी तरह से करना (मा णं तुमं पि एवं चेव सुबहुं पावकम्मं जाव उववज्जिहिमि) नहीं तो तुम भी इसी तरह से बहुत अधिक पाप कर्म का यावत् उपार्जन करोगे, इसलिये ऐसे पापकर्मों का उपार्जन मेरे द्वारा न हो इस तरह से (तं जइ णं से अज्जए ममं आगंतुं चएज्जा) यदि वे आर्यक आकरके मुझे समझावें (तो णं अहं सद्वहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा जहा अन्नो जीवो अन्नं सरीरं णो तं जीवो तं सरीरं) तो मैं आपके इस कथन पर विश्वास करूँ और उसे अपनी प्रतीति का विषय बनाऊँ, तथा अपना रुचि के भितर उसे उतारूँ (जहा अन्नो जीवो, अन्नं

सुबहुं पापं कम्मं कलिकलुसं समज्जिणत्ता नरएसु उववण्णे) ऐथी भे धण्णा अतिकलुथ पापोनो संचय कर्यो छि अने ऐथी ज नरकोमांथी केहिंके नरकमां नारकना पर्यायमां उत्पन्न थयो छुं. (त मा णं नत्तुया ! तुमपि भवाहि अधम्मिण जाव णो सम्मं करभरवित्तिं पवत्तेहिं) भाटे छे पौत्र ! तमे अधार्मिक थशे नहि अने प्रणज्जेने पासैथी कर वसुल करीने तेमना पोषणुना काममां असावधान रहेशे नहि पणु तेमतुं सरस रीते पोषणु करेशे. (मा णं तुमं पि एवं चेव सुबहुं पावकम्मं जाव उववज्जिहिमि) नहितर तमे पणु भारी जेम ज धण्णा वधारे पापकर्मंतुं यावत् उपार्जन करेशे. आ प्रमाणे आ ज्ञातनां पापकर्मंतुं उपार्जन भारा वडे थाय नहि तेम (तं जइ णं से अज्जए ममं आगंतुं चएज्जा ) तेथी ते आर्यक आवीने भने समज्जे. (तो णं अहं सद्वहेज्जा पत्तिएज्जा, रोएज्जा, जहा अन्नो जीवो अन्नं सरीरं णो तं जीवो तं सरीरं) तो हुं आपना अ कथन पर विश्वास करी शकुं अने तेने भारी प्रतीतिने तेमज रुचिने विषय जनावी

આર્યકઃ મમ આગત્ય ના એવમવાદીત, તસ્માત સુપ્રતિષ્ઠિતા મમ પ્રતિજ્ઞા શ્રમ-  
ણાઽઽયુષ્મન્ ! યથા તજ્જીવઃ સ શરીરમ્ ॥ સૂ. ૧૩૧ ॥

ટીકા—‘ત ણં સે પણી’ इत्यादि—=ततः खलु स प्रदेशी राजा  
केशिनं कुमारश्रमणम् एवम्-अनुपदं वक्ष्यमाणं वचनम् अवादीत-हे मदन्त !  
यदि चेत् खलु युष्माकं श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम् एषा संज्ञा यावत् समवसरणं  
यथा-अन्यो जीवः अन्यत् शरीरं नो तत् जीवः स शरीरम्. एवं-वक्ष्यमाण-  
स्वरूपः खलु मम आर्यकः-पितामहः अभवत्, इहैव-आस्मिन्नेव जम्बूद्वीपे-  
द्वीपे श्वेतिकायां नगर्याम् अधार्मिकः धर्माचरणवर्जितः यावत्--याव-  
त्पदेन-अधर्मिष्ठ इत्यादीनां पदानां सङ्ग्रह एकशततममृत्राद् बोध्यः अर्थो-  
ऽपि तत्रैव । स्वकस्यापि-स्वस्यापि च खलु जनपदस्य-देशस्य करभरवृत्तिं  
करेण स्वग्राह्यभागग्रहणेन यो भरः-पजानां भरणं=पोषणं तद्वया या वृत्तस्तां  
सम्यक्-सुष्ठुरीत्या नो प्रावर्तयत्-अत्र मूले ‘पवतेह’ इत्यार्षित्वाद् भूतार्थे  
वर्तमाननिर्देशः । सः-पूर्वोक्तः आर्यकः खलु युष्माकं वक्तव्यतया=मतेन  
सुबहु-प्रचुरं कलिकलुपम्-अतिमलिनं पापं कर्म समर्ज्य-समुपाज्य कालमासे-  
कालं कृत्वा, अन्यतरेषु-अन्यतमेषु नरकेषु नैरयिकतया-नारकतया उपपन्नः-  
ममुत्पन्नः । तस्य खलु आर्यकस्य अहं नष्टकः=पौत्रः अभवम्, कीदृशोऽहम-

સરારં. ણો તં જીવો તં સરીરં) કિ જીવ અન્ય હૈ ઓર શરીર અન્ય હૈ, જીવશરીર-  
રૂપ નહીં હૈ, શરીર જીવરૂપ નહીં હૈ. (જમ્હા ણં સે અજ્જણ મમં નો એવં  
તમ્હા સુપહ્વિયા મમ પહન્ના સમણાઉસો ! જહા તજ્જીવો તં સરીરં) પરંતુ  
જિમ કારણ સે આર્યકને આકરકે સુઝસે એસા કહા નહીં હૈ, ઇમ  
કારણ સે હે શ્રમણ ! આયુષ્મન્ ! મેરી યહ પ્રતિજ્ઞા સુપ્રતિષ્ઠિત-સુસ્થિર હૈ  
કિ જો જીવ હૈ વહી શરીર હૈ ઓર જો શરીર હૈ વહી જીવ હૈ.

ટીકાર્થ—મૂલાર્થ કે અનુરૂપ હી હૈ. પરંતુ જો વિશેષતા હૈ વહ ઇસ  
પ્રકાર સે હૈ—પ્રદેશી રાજાને જો અપને કો ઇષ્ટાદિ વિશેષણોં વાલા પ્રકટ  
કિયા હૈ સો ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ વહ આર્યક કો અભિલ્ખિત થા

શકું તેમ છું. (જહા અન્નો જીવો, અન્નં સરીરં, ણો તં જીવો, તં સરીરં)  
હે એવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે, એવ શરીરરૂપ નથી. (જમ્હા ણં સે અજ્જણ  
મમં આગતું નો એવં વયામી, તમ્હા સુપહ્વિયા મમ પહન્ના સમણાઉસો !  
જહા તજ્જીવો તં સરીરં) પરંતુ જે કારણને લીધે આર્યકે આવીને મને આ પ્રમાણે  
કહું નથી તેથી જ હું શ્રમણ ! આયુષ્મન્ ! મારી આ પ્રતિજ્ઞા સુપ્રતિષ્ઠિત-સુસ્થિર-છે  
હે જે એવ છે તેજ શરીર છે અને જે શરીર છે તે જ એવ છે.

ટીકાર્થ—મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. પરંતુ વિશેષતા આટલી જ છે કે પ્રદેશી  
રાજાએ જે પોતાને ઇષ્ટ વગેરે વિશેષણોવાળો બતાવ્યો છે. તો તેનું કારણ એ છે કે

भवमित्याह-इष्टः-अभिलषितः, कान्तः-कमनीयत्वात्, प्रियः-प्रेमपात्रत्वात्, मनोज्ञः-मनसा सम्यगपेक्ष्यतया ज्ञातत्वात्, मनोऽमः-मनोगम्यः, अतिप्रियत्वेन मनस्यवस्थितत्वात्, स्थैर्य-स्थिरतागुणसम्पन्नः, वैश्वसिकः-विश्वासपात्रम् संमतः-संमानपात्रम्, बहुमतः-प्रचुरमानपात्रम्, अनुमतः-हृदयप्रियः तदाज्ञाराधकत्वात्, रत्नकरण्डकसमानः-रत्नानां-कर्केतनादीनां यत् करण्डकं तत्समानः-रत्नकरण्डक-तुल्यत्वं चात्रात्यन्तापेक्षत्वेन बोध्यम्, जीवितोत्सविकः-जीवितस्य-जीवनस्य य उत्सवः-उत्सविकः=उत्सवरूपः, नव नव हर्षजनकत्वात् हृदयानन्दजननः-हृदयानन्दकारकः, उदुम्बरपुष्पमिव-उदुम्बरपुष्पं यथा दुर्लभं-तथाऽहमापि श्रवणतया-श्रवणेन, अज्ञ ! हे मुने ! किं पुनः दर्शनतया-दर्शनेन अपि तु दर्शनेनात्यन्तदुर्लभोऽहमित्यर्थः, तत्-तस्मात् यदि-चेत् खलु स आर्यकः मम आगत्य वदेत् कथयेत्-वथनीयस्वरूपमाह-एवं खलु वक्तुक !-हे पौत्र ! अहं तव आर्यकः=पितामहः अभवम्, इहैव-अस्यामेव श्वेतांशिकायां नगर्याम् अधार्मिको याचत नो सम्यक् करभरवृत्तिं प्रावर्तयम्-अत्रापि मूले 'पवत्तेमि' इत्यर्पित्वाद् भूतार्थे वर्त्तमाननिर्देशः । ततः-तस्मा-

इसलिये इष्ट था, कमनीय-सुंदर होने से कान्त था, प्रेमपात्र होने से प्रिय था, मनसे उसे अच्छी तरह से अपेक्षरूप से जाना था इसलिये मनोज्ञ था, अतिप्रिय होने के कारण मनमें अवस्थित था. इसलिये वह मनोऽम था, मनोगम्य था. स्थिरतागुण से संपन्न था-अतः स्थैर्यरूप था विश्वासपात्र होने से वैश्वसिक था, सम्मानपात्र होने से संमत था. प्रचुररूप में मानपात्र, होने से प्रचुर मानपात्ररूप था. उसकी आज्ञा का आराधक होने से अनुमत-हृदय प्रिय था अत्यन्त अपेक्षित होने से रत्नकरण्डक के समान था. नवर हर्षजनक होने से उत्सविक उत्सवरूप था, इसीलिये हृदयाह्लादक था. मूल में 'पवत्तेमि' ऐसा जो वर्तमानरूप से निर्देश हुआ है

ते आर्यकने अभिलषित हुतो-ओथी इष्ट हुतो, कमनीय होवाथी कान्त हुतो, प्रेमपात्र होवाथी प्रिय हुतो, मने तेने सारी रीते अपेक्षरूपथी नाली लीधी हुतो ओथी ते मनोज्ञ हुतो, अतिप्रिय होवाथी ते मनमां अवस्थित हुतो ओथी ते मनोऽम हुतो-मनोगम्य हुतो. स्थिरताना गुणथी संपन्न हुतो. ओथी स्थैर्यरूप हुतो, विश्वासपात्र होवाथी वैश्वसिक हुतो, सम्मानपात्र होवाथी संमत हुतो, प्रचुररूपमां मानपात्र होवाथी प्रचुरमानपात्र रूप हुतो. तेनी आज्ञाने माननार होवाथी अनुमत-हृदयप्रिय हुतो, अत्यंत अपेक्ष्य होवाथी रत्नकरण्डकनी नेम हुतो. नवनवीन हर्षजनक होवाथी उत्सविक-उत्सवरूप हुतो-ओथी न ते हृदयाह्लादक हुतो, भूतमां 'पवत्तेमि' ओवे ने

त्कारणात्-खलु अहं सुबहु-अन्यन्तं कलिकलुपस्=अतिमलिनं पापं कर्म  
समर्ज्य=समुपाज्यं नरकेषु उपपन्नः-नारकतयोत्पन्नोऽभवत्. तत्-तस्मात्कार-  
णात् नप्तुक!-हे पौत्र ! त्वमपि तथा सा भव, अधार्मिको यावत् नो सम्यक्  
करभरवृत्तिं प्रवर्तय-निषेधार्थकपदद्वयं प्रकृतार्थं दृढयतीति त्वमवश्यमेव  
धार्मिकादिविशेषणाविशिष्टो भूत्वा स्वकस्य जनपदस्य करभरवृत्तिं सम्यक्  
प्रवर्तयेति भावः । सा खलु त्वमपि एवमेव-अहमिव सुबहु-पापकर्म यावत्  
यावच्छब्देन-समुपाज्यं-नरकेषु नैरयिकतया इति संग्राह्यम्, उत्पत्त्यसे-मा  
लत्थेया इत्यर्थः, तत्-तस्मात् कारणाद्-यदि-चेत् खलु आर्यको मम  
आगत्य वदेत्-कथयेत्, ततः-नदा खलु अहं श्रद्धयाम्-भवद्वचने श्रद्धां कुर्याम्  
प्रतीयां-विशेषतो दिव्यस्याम्, रोच्यं रुचिं त्रिषयीकुर्याम् यथा अन्यो जीवो  
ऽन्यच्छरीरम् नो तत् जीवः स शरीरम्-इति। यस्मात् हेतोः खलु सः पूर्वोक्तः आर्य-  
कः ममागत्य नो-न एवं पूर्वोक्तप्रकारेण अवादीत्-हे श्रमणायुष्मन् ! तस्माद्  
हेतोः मम प्रतिज्ञा सुप्रतिष्ठिता-सुस्थिरा यथा तत् जीवः स शरीरम् इति ॥सू. १३१॥

मूलम्-तएणं केसीकुमारसमणे पएसी राय एव वयासी-अत्थि  
णं पएसी ! तव सूरियकता णास देवी ? हंता अत्थि, जइ णं तुम  
पएसी त सूरियकंतं देविं पहाय कयवलिकस्सं कयकोउयमंगलपाय-  
च्छित्तं सव्वालंकारभूसिय केणइ पुरिसेण पहाएणं जाव सव्वाल-  
कारभूसिएण सद्धिं इट्ठे सदफरित्तसख्खे गंधे पंचविहे माणुस्सए  
काभभोगे पच्चणुवभवमाणिं पासिज्जासे तस्स णं तुमं पएसी ! पुरिस-  
स्स क डंडं निवत्तेज्जासि ? अहंण भंते ! तं पुरिसं हत्थच्छिण्णणं

वह आर्ष होने से भूत अर्थ में हुआ है 'तं माण नत्तया ! तुमपि' इत्यादि  
सूत्र में आगत दो निषेधार्थक पद प्रकृत अर्थ की पुष्टि करते हैं अर्थात्  
तुम अवश्य ही धार्मिक आदि विशेषणों वाले होकर अपने जनपद की  
करभरवृत्ति को अच्छी तरह से चलाओ-यह अर्थ पुष्ट होता है ॥सू. १३१॥

वर्तमानश्रमां निर्देश थयेल छे ते आर्ष होवाथी भूत अर्थमां न थयेल छे आम्  
समंजसुं. 'तं माणं नत्तया ! तुमपि' वगेरे सूत्रमां आवेलां जे निषेधार्थकपदो प्रकृत  
अर्थमें न पोषे छे. ओटले के तमे अवश्यमेव धार्मिक वगेरे विशेषणोथी संपन्न थधने पोताना  
जनपदनी करभरवृत्तिने सारी रीते चलावो-आ अर्थ पुष्ट थाय छे. ॥ सू. १३१॥

वा सूलाङ्गं वा सूलभिन्नं वा पायच्छिन्नं वा एगाहच्चं कूडाहच्चं  
 जीवियाओ ववरोवएजा । अहं णं पएसी से पुरिसे तुम एवं वदेजा-  
 मा ताव मे सामी ! सुहुत्तं हत्थच्छिण्णं वा जाव जीवियाओ  
 ववरोवेहि जाव तावं अहं भित्तणाडणियगसयणसंबंधिपोरयणं एवं  
 वयामि एवं खलु देवाणुप्पिया । पावाइं कम्माइं समायरत्ता इमेया-  
 रुव्वं आवइं पाविज्जामि, त मा णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेवि केइ  
 पावाइं कम्माइं समायरइ, मा णं भे वि एवं चेव आवइं पावेज्जाहि  
 य जहा णं अहं, तस्स णं तुमं पएसी । पुरिसस्स खणमवि एयमट्ठं  
 पडिसुणेज्जासि ? णो इणट्ठे समट्ठे, कम्हा णं ? जम्हा णं भंते ! अव-  
 रोही णं से पुरिसे, एवामेव पएसी ! तववि अज्जए होत्था इहेव  
 सेयवियाए णयरीए अधम्मिण्ण जाव णो सम्मं करभरविंत्ति पदत्तेइ,  
 से णं अम्हं वत्तव्वयाए सुवहु जाव उववन्नो, तस्स ण अज्जगस्स  
 तुमं णत्तुए होत्था इट्ठे कंते जाव पासणयाए, से णं इच्चइ माणुसं  
 लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ।  
 चउहं ठाणेहिं पएसी ! अहुणोववण्णए नरएसु नेरइए इच्छेइ माणुसं  
 लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ-१ अहुणोववन्नए  
 नरएसु नेरइए से णं तत्थ महव्वभूयं वेयणं वेदेमाणे इच्छेज्जा माणु-  
 ससं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ । २ । अहुणोववन्नए  
 नरएसु नेरइए नरयपालेहिं भुज्जो भुज्जो समहिट्ठिज्जमाणे इच्छइ  
 माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ । ३ । अहुणोववन्नए  
 नरएसु नेरइए निरयवेयणिज्जंसि कम्मंसि अवखीणंसि अवेइयंसि



अनिजिन्नसि इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं  
सचाएइ हव्वमागच्छित्तए । ४। एवं निरयाउंसि अवखीणे, अचेइए,  
अणिज्जिण्णे इच्छेज्जा माणुस्सं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं  
संचाएइ । इच्छेएहिं चउहिं ठाणेहिं पएसी ! अहुणोववन्ने नरएसु  
नेरइएसु नेरइए इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं  
संचाएइ । तं सद्वहोहि णं पएसी ! जहा—अन्नो जीवो अन्नं सरीरं  
नो तं जीवो तं सरीरं ॥सू० १३२॥

छाया—ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत अस्ति  
खलु प्रदेशिन ! तव सूर्यकान्ता नाम देवी ? हन्त अस्ति, यदि खलु त्वं  
प्रदेशिन ! तां सूर्यकान्तां देवीं स्नातां कृतवतिकर्मा कृतकौतुकमङ्गलप्रा-  
यश्चित्तां सर्वालङ्कारभूषितां केनोपि पुरुषेण स्नातेन यावत् सर्वालङ्कारभूषि-  
तेन मार्द्रमू इष्टान् शब्दस्पर्शरसरूपगन्धान् पञ्चविधान् मानुष्यकान् काम-

‘तए णं केसीकुमारसमणे पएसि रायं एवं वयासी इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे) इसके बाद केशीकुमारश्रमणने  
(पएसि रायं एवं वयासी) प्रदेशो राजा से ऐसा कहा—(अत्थि णं पएसी!  
तव सूरियकन्ता णामं देवी ? हे प्रदेशिन् तुम्हारी सूर्यकान्ता नामकी देवी है ?  
(हंता, अत्थि) हां भदन्त ! है (जइ णं तुमं पएसी ! तं सूरियकन्तं देविं  
ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारभूसियं केणइ  
पुरिसेणं ण्हाएणं, जाव सव्वालंकारभूसिएणं सद्धिं इट्ठे सदफरिसरसरूवे गंधे  
पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमार्ण पासिज्जासि) यदि हे प्रदेशिन !

‘तए णं केसीकुमारसमणे पएसि रायं एवं वयासी’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—( तए णं केसीकुमारसमणे ) त्थारपछी केशीकुमार श्रमणे (पएसीं  
रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजाने आ प्रभाणे उहुं. (अत्थि णं पएसी ! तव  
सूरियकन्ता णामं देवी ? ) हे प्रदेशीन् ! तमारी सूर्यकान्ता नामे देवी छ ?  
(हंता, अत्थि) हां भदन्त ! छ. (जइणं तुमं पएसी ! तं सूरियकन्तं देविं  
ण्हायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारभूसियं  
केणइ पुरिसेणं ण्हाएणं, जाव सव्वालंकारभूसिएणं सद्धिं इट्ठे सदफरिस-  
रसरूवगंधं पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमार्ण पासिज्जासि) तो हे

મોહાન પ્રત્યનુમાન્તીં પશ્યેઃ (તદા) તમ્ય સ્વત્તુ ત્વં પ્રદેશિન્ ! કં દણ્ડં નિર્વર્તયેઃ ? અહં સ્વત્તુ ભદન્ત ! તં પુરુષં હસ્તચ્છિન્નકં વા શૂલ્કાભિન્નકં વા શૂલ્ભિન્નકં વા પાદચ્છિન્નકં વા ઇકાઽઽઘાતં કૂટાઘાતં જીવિતાદ વ્યપ-  
રોપયેયમ્ અથ સ્વત્તુ પ્રદેશન ! મ પુરુષઃ ત્વાસ્મ એવં વદેત્ મા ગાચત્

તુમ સ્નાન, કૃતચલિકર્મા—(કાક આદિ કો અન્નાદિકા ભાગ દેનેહ્યા ઉમ દેશીઓં કિ જિમને કૌતુક, મંગલરૂપ પ્રાયશ્ચિનેં કર લિયા હૈ, ઔર સમસ્ત અલંકારોં સે જો વિભૂષિત થનો હુઈ હૈ કિસી મી સ્નાન યાવત્ સર્વાલંકાર-  
વિભૂષિત પરપુરુષ કે સાથ ઇષ્ટ શબ્દ, સ્પર્શ, રસ, રૂપ, ગંધ ઇત પાંચ પ્રકાર કે મનુષ્યભવ સંબંધી કામભોગોં કા અનુભવ કરતી હુઈ દેખલો તો (તસ્મ ણં તુમં પપ્મી ! પુરિસસ્મ કં હંડં નિવ્વુત્તેજ્જામિ ?) તો હે પ્રદે-  
શિન્ ! તુમ ઉમ પુરુષ કે લિયે કયા-કેસા દણ્ડ દો ? (અહં ણં મંતે ! તં પુરિસં હસ્થવિણગં વા મૂલાઙ્ગં વા મૂલભિન્નગં વા પાપચ્છિન્નગં વા ઇગા-  
હચં કૂટાહચં જીવિયાઓ વારોવેજ્જા) તવ પ્રદેશી રાજાને કહા—હે ભદન્ત ! મૈં ઉમ પુરુષ કા એમા દંડ હૂં કિ જિસસે ઉસકે દોનોં હાથ કાટ લિયે જાવેં, યા ઉસે શૂલી પર ચઢા દિયા જાવે, યા ઉસકે દોનોં પગ કાટ લિયે જાવેં, યા એક હો મદાર મેં ઉમકા પ્રાણ લે લિયા જાવે, વા કિસી પર્વત શિખર પર ઉસે ચઢાકરે વહાં ઉસે ધકેલ દિયા જાવે. કિ જિમસે વહ અપને જીવન સે રહિત હાવૈડે. (અહં ણં પપ્મી ! સે પુરિસે

પ્રદેશિન્ ! તમે જેણે સ્નાત, કૃત બલિકર્મા—કાગડા વગેરેને અન્ન ભાગ આપ્યો છે એવી તે દેવીને કે જેણે કોતુક મંગલરૂપ પ્રાયશ્ચિત્તો કરી લીધા છે. અને સમસ્ત અલં-  
કારોથી જે વિભૂષિત થઈ ગયેલી છે અને ગમે તે સ્નાન યાવત્ સર્વાલંકારવિભૂષિત પરપુરુષની સાથે ઇષ્ટ શબ્દ, સ્પર્શ, રસ, રૂપ, ગંધ આ પાંચ પ્રકારના મનુષ્યભવ સંબંધી કામભોગો ભોગવતી બેઠી હો તે (તસ્મ ણં તુમં પપ્મી ! પુરિસસ્મ કં હંડં નિવ્વુત્તેજ્જામિ ?) તો હે પ્રદેશિન્ ! તમે તે પુરુષને કઈ બાતની શિક્ષા કરશો ? (અહં ણં મંતે ! તં પુરિસં હસ્થવિણગં વા મૂલાઙ્ગં વા મૂલભિન્નગં વા પાપચ્છિન્નગં વા ઇગાહચં કૂટાહચં જીવિયાઓ વારોવેજ્જા) ત્યારે પ્રદેશી રાજાએ કહ્યું હે ભદન્ત ! હું તે પુરુષને આ બાતની શિક્ષા કરીશ કે જેથી તેના બન્ને હાથો કાપી લેવામાં આવે કે તેને શૂલી પર ચઢાવવામાં આવે કે તેના બન્ને પગો કાપી નાખવામાં આવે કે એક જ ધામાં તેને મારી નાખવામાં આવે અગર પર્વતશિખર પર લઈ જઈ તેને ત્યાંથી નીચે ફેંકી દેવામાં આવે કે જેથી પરિણામે તે મૃત્યુ પામે.

स्वामिन ! मुहुर्न कं हस्तच्छिन्नकं वा यावत् जीविताद् व्यपापय यावत्  
यावद् अहं मित्र ज्ञाति-निजक स्वजनसम्बन्धिपरिजनम् एवं वदामि-एवं  
खलु देवानुप्रिया ! पापानि कर्माणि समाचर्य इमां मेतद्रूपाम् आपत्तिं प्राप्नोमि,  
तत् मा खलु देवानुप्रियाः ! गृयमपि केचित् पापानि कर्माणि समाचरत, मा  
खलु गृयमपि एवमेव आपत्तिं प्राप्नुत यथा खलु अहं, तस्य खलु त्वं प्रदे-

तुमं एवं वएज्जा-मा ताव मे सामी ! मुहुत्तगं हत्थाच्छिण्णगं वा जीवियाओ  
ववरोवेहि जाव ताव अहं मित्तणाइणियगमयणसंबंधिपरियणं एवं वयामि)  
इस प्रकार से प्रदेशी राजा का कथन सुनकर केशीश्रमणने उसमे गम्मा  
कहा-हे प्रदेशिन ! यदि वह तुमसे ऐसा कहे-हे स्वामिन ! आप थोड़ी  
देर तक ठहरिये. मेरे हाथ पैर न काटिये यावत् मुझे जीवन से रहित न  
कीजिये, तब तक मैं मित्र, माता आदि ज्ञाति, स्वपुत्रादिक निजक, पितृव्यादि  
स्वजन श्वशुर आदिक सम्बन्धिजन, दासी दास आदि परिजन, इन सब  
मे ऐसा कह दूं कि (एवं खलु देवानुप्रिया ? पावाइं कम्माइं समायरत्ता  
इमेयारुवं आवइं पाविज्जामि) हे देवानुप्रियो ! मैं पापकर्मों को समाचरित करके  
इस प्रकार की आपत्ति को पा रहा हूं (तं मा णं देवानुप्रिया ! तुव्मे  
वि केइं पावाइं कम्माइं समायरइ) इसलिये हे देवानुप्रियो ! आप लोग कोई  
भी पापकर्म मत करना कि (मा णं मे वि एवं चेव आवइं पावेज्जाहि  
य जहा णं अहं) जिसमे तुमको भी ऐसी आपत्ति में पडना पडे, जैसा

(अहं णं पएसी ! से पुरिमे तुमं वदेज्जा मा ताव मे सामी ! मुहुत्तगं हत्थ-  
च्छिण्णगं वा जाव जीवियाओ ववरोवेहि जाव ताव अहं मित्तणाइणियग-  
मयणसंबंधिपरियणं एवं वयामि) आ प्रभाणु प्रदेशी राजतुं कथन सांभलीने  
केशीकुमार श्रमणु तेमने क्खुं के डे प्रदेशिन ! जे तमने आ प्रभाणु कडे के स्वामिन !  
आप थोड़ी वणत थोली जव. भारा हाथपग कपो नदि यावत् मने छवन रहित  
पणु जनावो नहि. हुं मित्र, माता, पिता वगेरे ज्ञाति, स्वपुत्रादिक निजक पितृ-  
व्यादि स्वजन, श्वशुर वगेरे संबन्धीजन, दासदासी वगेरे परिजन आ जधाने  
आ प्रभाणु कडी हठं के (एवं खलु देवानुप्रिया ! पावाइं कम्माइं समा-  
यरत्ता इमेयारुवं आवइं पाविज्जामि) हे देवानुप्रियो ! हुं पापकर्मों आचरणु  
करीने आ जतनी शिक्षा लोगवी रह्यो छुं. (तं मा णं देवानुप्रिया !  
तुव्मे वि केइं पावाइं कम्माइं समायरइ) अथी डे देवानुप्रियो तमे कर्धपणु  
जतनुं पापकर्म आचरता नहि. (मा णं मे वि एवं चेव आवइं पावेज्जाहि  
य जहा णं अहं) अथी तमने आ जतनी शिक्षा लोगवी पडे के जेवी हुं लोगवी रह्यो छुं

शिन् ! पुरुषस्य क्षणमपि एतमर्थं प्रतिशृणुयाः ?, नायमर्थः समर्थः, कस्मात् खलु ?, यस्मात् खलु भदन्त ! अपराधी खलु स पुरुषः, एवमेव प्रदे शन् ! तच्चापि आर्यकोऽभवत् इहैव श्वेतविकायां नगर्याम् अधार्मिको याचत नो सम्यक् करभरवृत्तिं प्रावर्तयत्, स खलु मम वक्तव्यतया सुबहु यावत् उपपन्नः, तस्य खलु आर्यकस्य त्वं नष्टकोऽभवः, इष्टः कान्तः यावद् दर्शनतया, स खलु इच्छति मनुष्यं लोकं जीवन्मागन्तुं नैव खलु शक्नोति जीवन्मागन्तुम्, चतुर्भिः स्थानैः प्रदेशिन् ! अधुनोपपन्नकः नरकेषु नैरर्थिकः

किं नै पड गया हं । (तस्स णं तुमं पएसी ! पुरिसस्स खणमवि एवमट्ठं पडिसुणेज्जासि ? ) तो हे प्रदेशिन् ! तुम क्या उस पुरुष की बात का थोड़ी सी भी देर के लिये स्वीकार कर लोगे ? (णो इणट्ठे समट्ठं) हे भदन्त ! यह अर्थ समर्थ नहीं है—अर्थात् उसकी यह बात स्वीकार नहीं की जावेगी (जम्हा) क्यों कि (णं से भत्ते ! अवराही णं से पुरिसे) हे भदन्त ! वह पुरुष अपराधी है । (एवामेव पएसी ! तव वि अज्जए होत्था) तो इसी तरह से हे प्रदेशिन् ! तुम्हारे भी आर्थिक हुए हैं । (एवामेव इहेव सेयंविद्याए णयरीए अधम्मिए णो, सम्मं करभरवृत्तिं पवत्तेइ) उन्होंने इस श्वेतांविका नगरी में अपना जीवन अधार्मिक बनाया है, तथा प्रजाजन से प्राप्त टेक्स से उनका उन्होंने अच्छी तरह से पालनपोषण नहीं किया है । (से णं अम्हं वत्तव्वाए सुबहुं जाव उव्वन्नो) इस तरह मेरी वक्तव्यता के अनुसार वे अनेक अतिमालिन पाप कर्मों का अर्जन करके यावत् किमा एक नरक की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं । (तस्स णं अज्जगस्स तुमं णत्तुए हात्था, इट्ठे कंते जाव पासणयाए) उन्हीं आर्यक के तुम इष्ट कान्त

(तस्स णं तुमं पएसी ! पुरिसस्स खणमवि एवमट्ठं पडिसुणेज्जासि ?) तो हे प्रदेशिन् ! तुं तमे ते पुरुषनी बातने थोडा वणत भाटे पणु स्वीकारी देखो ? (णो इणट्ठे समट्ठे) हे भदन्त ! आ अर्थ समर्थ नहीं अटवे हे तेनी आ बात स्वीकारनामां आवशे नहि । (जम्हा) केभके (णं से भत्ते ! अवराही णं से पुरिसे) हे भदन्त ! ते पुरुष अपराधी छे । (एवामेव पएसी ! तव वि अज्जए होत्था) तो आ प्रमाणे न हे प्रदेशिन् तमारा भाटे पणु आर्थिक थया छे । (एवामेव इहेव सेयंविद्याए णयरीए अधम्मिए णो सम्मं करभरवृत्तिं पवत्तेइ) तेभणु पोतातुं छवन श्वेतांजिका नगरीमां अधार्मिक रीते पसार कथुं छे तेमज्ज प्रज्जनेना पासेथी कर-पसूल करीने पणु तेमज्ज सारी पेडे पोषण कथुं नथी । (से णं अम्हं वत्तव्वाए सुबहुं जाव उव्वन्नो) आ प्रमाणे मारा कथन मुज्ज तेमणु धणुं पायकभोतुं अज्ज करीने यावत् कोछ ओक नरकमां नारकनी पर्यायथी जन्म पाभ्यां छे । (तस्स णं अज्जगस्स तुमं णत्तुए होत्था, इट्ठे कंते जाव पासणयाए )

इच्छति मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं नैव खलु शक्नोति—१ अधुनोपपन्नकः नरकेषु नैरयिकः स खलु तत्र महद्भूतां वेदनां वेदयन् इच्छेत् मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं नैव खलु शक्नोति । २ अधुनोपपन्नको नरकेषु नैरयिका नरकपालैः भूयो भूयः समधिष्ठीयमानः इच्छति मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं

आदि विशेषणों वाले पौत्र हो (से णं इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ, हव्वमागच्छित्तए) वे तुम्हारे आर्यक ! यद्यपि हम मनुष्यलोक में वहां से जल्दी से जल्दी आना चाहते हैं, परन्तु वे वहां से आने के लिये असमर्थ हैं। (चउहिं ठाणेहिं पएसी ! अहुणोववणए नरएसु नेरइए इच्छइ, माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ) क्यों की हे प्रदेशिन ! अधुनोपपन्नक नारक चार कारणों को लेकर मनुष्यलोक में शीघ्र आने की इच्छा करता हुआ भी वह वहां से शीघ्र नहीं आ सकता है । (१ अहुणोववन्नए, नरएसु नेरइए-से णं तत्थ महब्भूयं वेयणं वेदेमाणे इच्छेज्जा माणुस्सं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ) वे चार कारण इस प्रकार से हैं—अधुनोपपन्नक नैरयिक नरकों में बहुत बड़ी वेदना का अनुभव करता है, अतः वह चाहता है कि मैं मनुष्यलोक में उत्पन्न हो जाऊं—परन्तु वह वहां से निकलने में सर्वथा असमर्थ होता है—वहां नहीं आ सकता है ? (२ अहुणोववन्नए नरएसु नेरइए नरय-

तेज आर्यकना तमे छट्ठां वगेरे विशेषणोवाणा पौत्र छि. (से णं इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ, हव्वमागच्छित्तए) तभास ते आर्यक ने के मनुष्यलोकमां त्यांथी जलदीमां जलदी आववा छच्छे छे, परंतु तेओ त्यांथी आववामां असमर्थ छे. (चउहिं ठाणेहिं पएसी ! अहुणोववणए नरएसु नेरइए इच्छइ, माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ) केभके हे प्रदेशिन ! अधुनोपपन्नक नारक चार कारणोने लीधे मनुष्यलोकमां जलदी आववानी छच्छा धरावे छे छतांओ ते त्यांथी जलदी आवी शक्ती नथी. (१ अहुणोववन्नए, नरएसु नेरइए से णं तत्थ महब्भूयं वेयणं वेदेमाणे इच्छेज्जा माणुस्सं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ) ते चार कारणो आ प्रमाणे छे. "अधुनोपपन्नकनैरयिक नरकेमां तीव्र वेदनाने अनुभवे छे ओथी ते छच्छे छे के हुं मनुष्यलोकमां जन्म पासुं परंतु ते त्यांथी नीकणवामां सर्वथा असमर्थ होय छे, अही ते आवी शक्ती नथी १. (२ अहुणोववन्नए नरएसु नेरइए नरय-

यपालेहिं भुज्जो भुज्जो समधिष्ठिज्जमाणे इच्छइ, माणुसं लोगं हव्वमाग-

नैव खलु शक्नोति । ३ अधुनोपपन्नकः नरकेषु नैरयिकः निरयवेदनीये कर्मणि अक्षीणे अवेदिते अनिर्जिणे इच्छति मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं नैव खलु शक्नोति । ४ एवम् अधुनोपपन्नको नरकेषु नैरयिको निरयाऽऽयुषि कर्मणि अक्षीणे अवेदिते अनिर्जिणे इच्छति मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं नैव खलु शक्नोति शीघ्रमागन्तुम्' इत्येतैश्चतुर्भिः स्थानैः प्रदेशिन् ! अधुनोपपन्नकः

पालेहिं भुज्जो भुज्जो समाह्वितज्जमाणे इच्छइ, माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ) अधुनोपपन्न नारक नरकों में परमाधार्मिकरूप नरकपालों द्वारा बार बार आक्रम्यमाण होता हुआ यह चाहता है कि मैं मनुष्यलोक में शीघ्र उत्पन्न हो जाऊं, परन्तु वह मनुष्यलोकमें शीघ्र उत्पन्न नहीं हो सकता है २ (अहृणोववन्नए नरएसु नेरइए निरयवेयणिज्जंसि कम्मंसि अवस्वीणंसि अवेइयंसि अनिज्जिन्नंसि इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए) अधुनोपपन्नक नारक नरक में नरक-भोग्य अशातवेदनीय कर्म के अक्षीण होने पर, अननुभूत होने पर एवं अनिर्जिण नाश होने पर, मनुष्यलोक में आनेका अभिलाषी होता हुआ भी नहीं आ सकता है ३ (४ एवं नेरयाउंसि अवस्वीणे अवेइए अणिज्जिणणे-इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ) इसी प्रकार चौथा कारण यह है कि उसके नरकसंबंधी आयु क्षीण नहीं हुआ है, उसका वेदन नहीं हो चुका है, तथा नारक आयु की निर्जरा भी नहीं हुई है इसी कारण से वह मनुष्यलोक में आने को इच्छा करता हुआ भी नहीं आ सकता है (इच्चे-

च्छित्तए नो चेव णं संचाएइ) अधुनोपपन्नक नारक नारकों में परमाधार्मिक ३ प नरकपालों वडे बार-बार आक्रम्यमाण थधने ते ओम धच्छे छे छे हुं मनुष्यलोक में उत्पन्न था ३ परन्तु ते मनुष्यलोक में उत्पन्न थध शक्ते नथी, २. (अहृणो-ववन्नए नरएसु नेरइए निरयवेयणिज्जंसि कम्मंसि अवस्वीणंसि अवेइयंसि अनिज्जिन्नंसि इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए) अधुनोपपन्नक नारक नरक में लोभ्य अशात वेदनीय कर्म अक्षीण होवाथी अननुभूत होवाथी अने अनिर्जिण होवाथी मनुष्यलोक में आववानी अभिलाषा राणे छे छतांओ ते त्याथी सुकत थध शक्ते नथी. अने (४ एवं नेरयाउंसी अवस्वीणे अवेइए अणिज्जिणणे इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ) आ प्रमाणे न थोथुं कारणे आ प्रमाणे छे छे नरकसंबंधी तेत्तं आयु क्षीण थयुं नथी, तेत्तं वेदन थयुं नथी न नारक आयु की निर्जरा-पण थध नथी ओथी न ते मनुष्यलोक में आववानी धच्छा धरावे छे छतांओ आवी

નરકેષુ નૈરથિકઃ ઇચ્છતિ માનુષ્યં લોકં શીઘ્રમાગન્તું નૈવ સ્વલુ શવનોતિ ।  
તત્ શ્રદ્ધેહિ સ્વલુ પ્રદેશિન્ ! યથા-અન્યો જીવ અન્યત્ શરીરમ્ નો તજ્જીવઃ સ  
શરીરમ્ ॥ મ. ૧૩૨ ॥

ટીકા--'તદ્ ણં કેમીકુવારસમણે' इत्यादि-ततः-तदनन्तरम्, स्वलु  
केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत-हे प्रदेशिन ! तव सूर्यकान्ता-  
नाम देवी=गङ्गा अस्ति स्वलु ?, ततः प्रदेशी राजोत्तरयति-हन्त !' इति

एहिं चउह ठाणेह पएसी ! अहुणोववन्ने नरएसु नेरइएसु नेरइए  
इच्छइ माणुमं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ) इस प्रकार  
इन चार कारणों से हे प्रदेशिन ! अधुनोपपन्नक नारक मनुष्यलोक में शीघ्र  
जाने का अभिलाषी होता हुआ भी वह वहां से शीघ्र मनुष्यलोक में  
नहीं आ सकता है। (तं सदहाहि णं पएसी ! जहा अन्नो जीवो अन्नं  
सरीरं नो तं जीवो तं मरीरं) इसलिये हे प्रदेशिन ! तुम इस बात पर  
अवश्य विश्वास करो, कि जीव भिन्न है और शरीर भिन्न है ।

टीकार्थ—केशीकुमारश्रमणने प्रदेशी राजा से जो कहा वह इस सूत्र  
द्वारा प्रकट किया गया है. इसमें जीव भिन्न है और शरीरभिन्न है इस  
बातको उसके आर्यक-(पितामह दादा) नरक से आकर उसे क्यों नहीं  
समझाते हैं इस बात का उत्तर उसे समझाया गया है. उससे केशी-  
कुमारश्रमणने कहा हे प्रदेशिन ! तुम्हारी जो सूर्यकान्ता देवी है उससे  
यदि कोई मनुष्य उसी के जैसे विशेषणों वाला बन कर मनोऽनुकूल शब्द

शक्तो नथी. (इच्चेएह चउह ठाणेह पएसी ! अहुणोववन्ने नरएसु नेर-  
इएसु नेरइए इच्छइ माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव णं संचाएइ)  
आ प्रभाण्णे आ यारे यार कारणोथी हे प्रदेशिन् ! अधुनोपपन्नक नारक मनुष्यલોકમાં  
જલદી આવવાની ઇચ્છા રાખતો હોય છતાં એ ત્યાંથી જલદી મનુષ્યલોકમાં આવી  
શકતો નથી (તં સદહાહિ ણં પએસી ! જહા અન્નો જીવો અન્નં સરીરં, નો તં જીવો  
તં સરીરં) એથી હે પ્રદેશિન ! તમે આ વાત પર અવશ્ય વિશ્વાસ કરો કે જીવ  
લિન્ન છે અને શરીર લિન્ન છે.

ટીકાર્થ—કેશીકુમારશ્રમણે પ્રદેશી રાજાને જે કંઈ કહ્યું છે તે બધું આ સૂત્ર  
વડે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. આમાં જીવ લિન્ન છે અને શરીર લિન્ન છે એ વાતને  
તેના આર્યક (પિતામહ-દાદા) નરકમાંથી આવીને કેમ સમજાવતા નથી એ વાત આ પ્રમાણે  
તેને સમજાવવામાં આવી છે. કેશીકુમારશ્રમણે કહ્યું કે હે પ્રદેશિન્ ! તમારી  
જે સૂર્યકાંતાદેવી છે તેની સાથે જે કેઈ માણસ તેના જેવાં વિશેષણોથી યુક્ત થઈને



स्वीकारे अग्नि-विद्यते मम सूर्यकांता देवा । ततः केशाकुमारश्रमण-  
 आह-यदि-चेन् खलु त्वं प्रदेशी राजा तां-पूर्वोक्तां सूर्यकान्तां देवीं  
 स्नातां-कृतमनानां, कृतबलिकर्माणं-कृतवायमादि निमित्तान्नमागां, कृत-  
 कौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तां-कृतमर्षापुण्यनित्यकादि मङ्गलार्थपापशोधनक्रियां, सर्वा-  
 लङ्कारभूषितां-सकलाङ्गोपाङ्गाभरणालङ्कृतां केनापि केनचित् पुरुषेण सार्द्धं,  
 कीदृशेन ? इत्याह-स्नातेन ? इत्याह-स्नातेन यावत्-यावत्पदेन-कृतबलि-  
 कर्मणा कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तेन' इत्येषां सङ्ग्रहः, तथा सर्वालङ्कारभूषितेन  
 सार्द्धं इष्टान्-मनोऽनुकूलान् शब्द-स्पर्श-रसरूप-गन्धान्, पञ्चविधान्-पञ्च-  
 प्रकारान् मनुष्यकान्-मानुष्यलोकभवान् कामभोगान्-पूर्वोक्तान् शब्दादीन्द्रिय-  
 त्रिषयान् प्रत्यनुभवन्तो-अनुभवविषयीकुर्वतीम् पश्येथ, तस्मिन्नवमरे हे प्रदे-  
 शिन ! त्वं तस्य-पूर्वोक्तस्य खलु कं-कीदृशं दण्डं निग्रहं निर्वर्तये:-कुर्याः ? ।  
 ततः प्रदेशिराज आह-हे भदन्त ! अहं खलु तं-कृततादृशदुराचारं पुरुषं  
 हस्ताच्छिन्नकं-हस्तौ छिन्नौ यस्य तादृशं वा-अथवा शूलान्तिकं-शूलारोपितं वा  
 भिन्नकं-शूलेन भिन्नः शूलभिन्नः स एव शूलभिन्नकस्तम्, वा-अथवा पाद-  
 च्छिन्नकं-छिन्नौ पादौ यस्य तम् वा अथवा एकाऽऽघातम्-एकः-सकृत् आघातः-  
 प्रहारो यस्मिन्, तम्, कूटाऽऽघातं-कूटेन-पर्वतशिखरेण तदुपरिसमारोपणद्वारा  
 पातनेन आघातः-बधो यस्य तं तथा, जीवितात्-व्यपरोपयेयं-वियोजयेयम्,  
 जीवरहितं कुर्यामित्यर्थः, इति प्रदेशिराजनिवेदनानन्तरं पुनः केशीश्रमणः  
 पृच्छति-अथ खलु हे प्रदेशिन ! यदि सः पुरुषः त्वाम् एवम् अनुपदं  
 वक्ष्यमाणं वचनं वदेत्-कथयेत्-तथाहि-मे-मां हे स्वामिन् ! यावत्-मित्रा-

स्पर्श-रस-रूप गन्धादि पांच प्रकारके मनुष्यभक्त संबंधों कामभोगों को  
 भोगे और तुम इस बान को देखलो तो उस अस्सर में तुम उस पुरुष के  
 लिये क्या दण्ड दो ? तब प्रदेशी राजाने कहा-हे भदन्त ! ऐसे दुराचारी  
 पुरुष को मैं अङ्गभङ्ग का यावत् जीवरहित होने का दण्ड दूँ ठीक है-  
 इस पर यदि वह पुनः तुम से ऐसा निवेदन करे कि हे स्वामिन् ! थोड़ी  
 देर आप मुझे इस दण्ड से रहित कर दीजिये इतने में मैं अपने मित्रा-

रमण्यु करे मनोऽनुकूल शब्द स्पर्श रस रूप गंध वगैरे पांच प्रकारका मनुष्य-  
 संबंधी कामभोगों लोभाने और तमो आशुं करतां नोछे वो तो ते वधते तमो ते  
 पुरुषने श्री शिक्षा करो ? त्वारे प्रदेशी राजाओ कहुं के हे लहंत ! ओवा दुराचारी पुरुषने  
 हुं अंगलंगनी यावत् निष्प्राण करी मकुवानी शिक्षा आपुं ते योग्य कडेवाय. ओना  
 पछी ते इरी तमने ओवी रीते विनंती करे के हे स्वामिन् ! थोडा वधत माटे मने  
 रक्त आपो के नोथी हुं मित्र वगैरे स्वजनोने आभ कहुं के हे देवानुप्रियो तमाराभांथी

दीन् प्रति वक्ष्यमाणपिपयनिवेदनसमयावधिमुहूर्तमुहूर्तमात्रं मां हस्त-  
च्छिन्नकं वा यावत्-यावत्पदेनोपर्युक्तपदानां संग्रहा बोध्यः, तदर्थश्चोपर्युक्त  
एव, जीवितान् मा व्यपरोपय-न वियोजय, मा मारयेत्यर्थः यावत्-यत्समय-  
पर्यन्तं 'तावत्' इति वाक्यालङ्कारे, अहं मित्र-ज्ञाति-निज-क-स्वजन-सम्बन्धि  
परिजनं मित्राणि-सुहृदः, ज्ञानयः-मातापितृभ्रात्रादयः, निजकाः-स्वपुत्रादयः  
स्वजनाः-पितृव्यादयः, सम्बन्धिनः-श्वशुरादयः, परिजनाः-दासी दासादयः,  
एषां समाहारो मित्र-ज्ञाति-निजक स्वजन-सम्बन्धि-परिजनं, तत्तथा, एवम्  
अनुपदं वक्ष्यमाणं वचनं वदामि-कथयामि, यथा-हे देवानुप्रियाः! यूयम्  
एवं-वक्ष्यमाणं शृणुत-'अहं पापानि कर्माणि समाचर्य-कृत्वा इमान्-एतदूपां-  
प्रदेशीराजोपनीयमानां कुमारण्या जविताद् व्यपरोपणीयतारूपाम् आपत्तिम्-  
आपदं प्राप्नोमि-प्राप्तोऽऽस्मि, तत्-तस्मात्कारणात्-पापकर्मणामापत्तिप्राप-  
कत्वाद्धेतोः, हे देवानुप्रियाः! यूयमपि-मदीयमित्रादयः केचित्-केऽपि पापानि  
कर्माणि मा समाचरत-न प्रकुरुत 'भेवि' इति यूयमपि एवमेव=अनेनैव-  
प्रकारेण आपत्तिं मा प्राप्नुत-यथा खलु अहम् इति। तस्य खलु त्वम् एतं=  
तत्कथनरूपम् अर्थं हे प्रदेशिन्! प्रतिशुणुयाः-स्वीकुर्याः? प्रदेशी कथयति-  
अयम्-अनन्तरोक्तोऽर्थः नो समर्थः-न युज्यते, कस्मात् खलु न समर्थः?  
इति जिज्ञासायामाह-'यस्मात्' इत्यादि-हे भ्रान्त! यस्मात् खलु सपुरुषः  
मे-मम अपराधी वर्तते' इति हेतोः अयमर्थो न समर्थः, केशीकुमारश्रमणः

दिजनो से ऐसा कह दूँ कि हे देवानुप्रियो! तुम लोगों में से कोई  
भी जन ऐसा पापकर्म नहीं करना-नहीं तो मेरी जैसी आपत्ति को भोगना  
पड़ेगा तो क्या हे प्रदेशिन्! तुम उसकी इस बातको मान लोगे! यदि  
कहो कि नहीं तो इस पर पुनः यही पूछा जा सकता है कि क्यों नहीं?  
तुम कह सकते हो! इसके उत्तर में वह अपराधी है। तो इसी प्रकार से हे  
प्रदेशिन्! तुम्हारे जो आर्यक (दादा) हैं वे भी अनेक मलिन पापकर्मों को कमाकर  
यहाँ से नरक में नारक की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं-अतः जब तक वे  
वहाँ की पूरी स्थिति को नहीं भोग लेते हैं-तब तक वे अपनी इच्छा

कोषपणु ऐषु पापकर्म करशो नहि नहितर भारा नेवी शिक्षा लोगववी पडेशे तो  
शुं हे प्रदेशिन् तमे तेनी आ वात स्वीकारी वेशो? हुवे ने तमे आस कडो के  
नहि, तो येना पर क्षी तमने पूछवामां आवे के केमे नहि? येना उत्तरमां तमे  
कडेशो के से अपराधी छे तो आ प्रमाणे हे प्रदेशिन् तमारा ने आर्यक छे  
तेयो पणु धणां पापकर्मोनु अर्जनकरीने अडीथी नरकमां नरकनी  
पर्यायथी नरक पाप्मा छे ऐथी जयां सुधी तेयो त्यानी संपूर्ण प्राप्त

પાદ-હે પદોશન ! એવમેવ-અનેનૈવ પ્રકારેણ તવાપિ આર્યકાઽમવત્, પિતા-  
મદો કીદર્શોઽમવત્ ? હત્યાહ-સ ચ હૈવ-શ્વેતચિકાયાં નગર્યામધ્યામિકો  
યાવત્તનો સમ્યક્ કરમ્ભરર્તાન પાવર્તયત્ । સઃ-તવાર્યકઃ સ્વલુ મમ વક્ત-  
વ્યતયા-કથનાનુસારેણ સુશ્રુત્વાદત-ચાવત્પદેન-“પારં કર્મ માણાતિપાનાદિકં  
મમઽર્ય નરકેષુ” હત્યેષાં પદાનાં સદ્ગુહઃ ઉત્પન્નઃ સમુત્પન્નઃ” તસ્ય-પૂર્વોક્તસ્ય  
આર્યકસ્ય સ્વલુ ત્વં નત્તુકઃ પૌત્રોઽભાઃ, કીદર્શઃ ? હતિજિજ્ઞાસાયા-  
માહ-હૃષ્ટઃ કાન્તા યાવદ્ દર્શનતયા, । સઃ-નરકં પૂપપન્નઃ સ્વલુ સમ્પ્રતિ  
માનુષ્યં લોકં હવ્યં-શીઘ્રમાગન્તુમિચ્છતિ, પરન્તુ સ શીઘ્રમાગન્તું નો શક્નોતિ ।  
કુતો ન ઇતિ જિજ્ઞાસાયાં શૃણુ-હે પ્રદેશિન્ ! ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈઃ-કારણેઃ,  
અધુનોપપન્નઃ-તત્કાલોત્પન્નો નરકેષુ-નરકમધ્યે, નૈરયિકઃ નારકઃ માનુષ્યં  
લોકં શીઘ્રમાગન્તુમિચ્છતિ પરન્તુ શીઘ્રં આગન્તું નો શક્નોતિ-તાનિ ચત્વારિ  
સ્થાનાન્યેવમ્-અધુનોપપન્નો નરકેષુ નૈરયિકઃ સઃ સ્વલુ તત્ર-નરકેષુ મહ-  
દ્ભૂતાં-મહર્તી વેદનાં વેદયન્-અનુમવત માનુષ્યં લોકં શીઘ્રમાગન્તુમિચ્છેત  
પરન્તુ આગન્તું નૈવ શક્નોતિ ? । અધુનોપપન્નો નરકેષુ નૈરયિકો નરકપાલૈઃ-  
પરમાધર્મિકૈર્દૈર્વૈશ્વેભ્યઃ-પુનઃપુનઃ સમધિષ્ઠીયમાનઃ-આક્રમ્યમાણઃ સન  
ઇચ્છતિ માનુષ્યં લોકમાગન્તું કિન્તુ ન શક્નોતિ ૨ । તૃતીયં સ્થાનમાહ-“અધુ-  
નોપપન્નો નરકેષુ નૈરયિકઃ, નિરયવેદનાયે-નરકભાગ્યે અઝાતવેદનીયે કર્મેણિ  
અક્ષીણે-ક્ષયમપ્રાપ્તે અવેદિતે-અનુભૂતે, અનિર્જીણે-નાશમપ્રાપ્તે ચ સતિ  
હચ્છતિ માનુષ્યં લોકમાગન્તું કિન્તુ ન શક્નોત્યાગન્તુમ્ ૩ । અત્રેણ પ્રકારેણ નિર-  
યાયુપિ-નરકસમ્બન્ધિનિ આયુઃકર્મણિ અક્ષીણેઽવેદિતેઽનિર્જીણે-નિર્જરામ-  
પ્રાપ્તે ચ સતિ, ઇચ્છતિ માનુષ્યં લોકમાગન્તું કિન્તુ ન શક્નોતિ ૪ । ઇત્યેતૈઃ  
અનન્તરોક્તૈશ્ચતુર્ભિઃ સ્થાનૈઃ હે પ્રદેશિન્ ! અધુનોપપન્ન ઇત્યાદીનાં વિચરણં  
પાગવત્ । તત્-તસ્માત્કારણાત્ હે પ્રદેશિન્ ! ત્વં શ્રદ્દેહિ-મદ્વચને વિશ્વમિહિ  
સ્વલુ, યથા-અન્યો જીવઃ, અન્યત્ શરીરમ્, નો મ જીવઃ તત્ શરીરમ્

કે અનુસાર યહાં નહીં આ સકતે હૈં. કયોં કિ નારક જીવોં કો યહાં આને  
મેં ચાર કારણ વાચક હૈં જો મૂલાર્થ મેં પ્રકટ કિયે જા ચુકે હૈં. ઇસલિયે  
હે પ્રદેશિન ! તુમ મેરે ઇસ વચન પર કિ જીવ મિન્ન હૈં ઓર શરીર મિન્ન  
હૈં, જીવ શરીરરૂપ નહીં હૈં, ઓર શરીર જીવ રૂપ નહીં હૈં વિશ્વાસ રહો,

સ્થિતિને લોગવી લેશે નહિ ત્યાં સુધી તેઓ પોતાની ઇચ્છા મુજબ અહીં આવી  
શકશે નહિ કેમકે નારકજીવોને અહીં આવવા માટે ચાર કારણો બાધક છે. જે  
મૂલાર્થમાં બતાવવામાં આવ્યા છે. એથી હે પ્રદેશિન ! તમે મારા આ વચન પર-હે  
જીવ મિન્ન છે અને શરીર મિન્ન છે, જીવ શરીરરૂપ નથી, અને શરીર જીવરૂપ નથી,

इति । यदि जीव-शरीरयोर्भेदो न स्यात्तदा पूर्वोक्तकारणचतुष्टयेन नरक-  
भोगं कः कुर्यात् ? शरीरस्य तु मनुष्यलोक एव नष्टत्वात्, शरीरभिन्नत्वे  
तु जीवस्य शरीरनाशेऽपि अत्त्वादुक्तहेतुचतुष्टयेन नरकभोगं कर्तुं जीवः  
शक्यो भवति ॥ सू० १३२ ॥

મૂલમ્—તણાં સે પણસી રાયા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસા-  
અતિથિં ણં મંતે ! ણસા પણાઓ ઉવમા, ઇમેણ પુણ કારણેણ નો.ઉવા-  
ગચ્છહિ । એવં સ્વલુ મંતે ! મમ અજ્ઞિયા હોત્થા ઇહેવ સેયવિયાણ નય-  
રીણ ધમ્મિયા જાવ વિત્તિં કપ્પેમાણી સમણોવાસિયા અભિગય જીવાં  
સઠ્ઠો વણાઓ જાવ અપ્પાણં માવેમાણી વિહરહિ, સા ણંતુજ્ઞં વત્તઠ્ઠવયાણ  
સુબહું પુન્નોવચયં સમજ્ઞિણિત્તા કાલમાસે કાલં કિચ્છા અણયરેસુ  
દેવલોણસુ દેવત્તાણ ઉવવણ્ણા, તીસેણં અજ્ઞિયાણ અહં નત્તુણ હોત્થા ઇદ્દે  
કંતે જાવ પાસણયાણ, તં જહ્ ણં સા અજ્ઞિગાં મમ આગંતું એવં વણ્ણા-  
એવં સ્વલુ નત્તુઆ ! અહં તવ અજ્ઞિયા હોત્થા, ઇહેવ સેયવિયાણ  
નયરીણ ધમ્મિયા જાવ વિત્ત કપ્પેમાણી સમણોવાસિયા જાવ વિહ-

यदि जीव और शरीर में भेद नहीं होता तो पूर्वोक्त कारण चतुष्टय में  
नरक भोग कौन करे? वयों कि शरीर तो मनुष्यलोक में ही नष्ट हो जाता  
है उसके नष्ट होने पर तदभिन्न जीव भी नष्ट हो जायेगा । परन्तु जब शरीर  
से भिन्न जीव को माना जाता है तो शरीर के नाश होने पर भी जीव  
का सद्भाव रहता ही है। अतः उक्त हेतु चतुष्टय से नरकभोग करने के लिये जीव समर्थ  
होता है। इस प्रकार से यह टीका का भाव लिखा गया है ॥ सू. १३२ ॥

વિદ્યાસ. રાજો. જો જીવ અને શરીરમાં ભિન્નતા ન હોત તો પૂર્વોક્ત કારણ ચતુષ્ટયમાં  
નરકભોગ કરે કોણ ? કેમકે શરીર તો મનુષ્ય લોકમાં જ નષ્ટ થઈ જાય છે, તેના નાશ  
પછી તદ્ભિન્ન જીવ પણ નષ્ટ થઈ જ જશે જ. પરંતુ જ્યારે શરીર ધરતાં ભિન્ન  
જીવને માનવામાં આવે છે તો શરીરના વિનાશ પછી પણ જીવનો સદ્ભાવ રહેજ  
છે. ઉક્ત હેતુ ચતુષ્ટયથી નરકભોગ માટે જીવ સમર્થ હોય છે. આ પ્રમાણે આ ટીકા  
નો ભાવ લેખવામાં આવ્યો છે. ॥સૂ. ૧૩૨॥

રામિ, તથા ણં અહં સુબહું પુણ્ણોવચયં સમજ્ઞિણિત્તા કાલમાસે કાલં  
 કિંચ્ચા દેવલોણસુ ઉવવણ્ણા, તં તુમંપિ ણત્તુયા ! ભવાહિ ધમ્મિણ  
 જાવ વિહરોહિ, તથા ણં તુમંપિ એવં ચેવ સુબહું પુણ્ણોવચયં સમજ્ઞિ-  
 ણિત્તા જાવ ઉવવજ્ઞિહિસિ, તં જહં ણં આજ્ઞયા મમ આગતું એવં  
 વણ્ણા તો ણં અહં સદ્દહેજ્ઞા પત્તિણ્ણા રોણ્ણા જહા અણ્ણો જીવો  
 અણ્ણં સરીર, ણો તં જાવો તં સરીરં, જમ્હા સા અજ્ઞિયા મમ આગતું  
 ણો એવં વયાસી તમ્હા સુપ્પઙ્ગિયા મે પ્પણ્ણા જહા તં જીવો તં  
 સરીરં નો અન્નો જીવો અન્ન સરીરં ॥ સૂ. ૧૩૩ ॥

છાયા—તતઃ સ્વલુપસ પ્રદેશી રાજા કેશિનં કુમારશ્રમણમેવમવાદીત્  
 અસ્તિ સ્વલુ ભદંત ! એવાઃ પ્રજ્ઞાતઉપમાઃ, અનેન પુનઃ કારણેન નો ઉવાગચ્છતિ,

‘તથા ણં સે પણ્ણી રાયા’ इत्यादि ।

સુત્રાર્થ—(તથા ણં) इसके बाद (से पण्णी राया कोस कुमारसमणं  
 एवं वयासी) उस प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से इस प्रकार कहा—  
 (अत्थि णं भंते ! एसा पण्णाओ उवमा इमेण पुण कारणेण नो उवागच्छइ)  
 हैं भदन्त ! जीव और शरीर को भिन्न प्रकट करने में ‘मेरे आर्यक—(पिता-  
 मह) इस कारण से नहीं आते हैं’ यहां त ६ के सन्दर्भ से जो आपने उपमा दी है,  
 सो यह उपमा प्रज्ञात-दृष्टान्त है। यह वास्तविकी उपमा नहीं है) तो भी मैं यह  
 मान लेता हूं कि मेरे पितामह—आर्यक आपके द्वारा प्रदर्शित कारणों की  
 वजह से यहां नहीं आते हैं—सो भले न जावे परन्तु (एवं स्वलु भंते !

‘त एणं से पण्णी राया’ इत्यादि ।

સુત્રાર્થ—(તથા ણં) ત્યાર પછી (સે પણ્ણી રાયા કોસ કુમારસમણં  
 એવં વયાસી) તે પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું—અત્થિ ણં  
 ભંતે ! એસા પણ્ણાઓ ઉવમા ઇમેણ પુણ કારણેણ નો ઉવાગચ્છઈ) હે ભદંત !  
 જીવ અને શરીરને ભિન્ન પ્રકટ કરવામાં “મારા આર્યક (પિતામહ) આ કારણને લીધે  
 આવતા નથી” અહીં સુધીના સંદર્ભ લગી જે કંઈ પણ તમે ઉપમા રૂપમાં કહ્યું છે  
 તો તે ઉપમા પ્રજ્ઞાત-દૃષ્ટાન્ત છે, આ વાસ્તવિકી ઉપમા નથી, છતાં એ હું તમારી  
 આ વાત સ્વીકારી લઉં કે મારા પિતામહ આર્યક તમારા વડે પ્રદર્શિત કારણોને  
 લીધે જ અહીં આવી શકતા નથી. તો તેઓ ભલે ન આવે. પરંતુ (એવં સ્વલુ ભંતે !

एवं खलु भदंत ! मम आर्यिकाऽभवत्, इहैव श्वेतविकार्या नगर्यां धार्मिकी यावद् वृत्तिं कल्पयमाना श्रमणोपासिका अभिगतजीवा० सर्वो वर्णकः यावद् आत्मानं भावयन्ती विहरति, सा खलु तत्र वक्तव्यतया सुबहुं पुण्योपचयं समर्ज्य कालमासे कालं कृत्वा अन्यतरेषु देवलोकेषु देवतयोपपन्ना, तस्याः खलु आर्यिकायाः अहं नष्टकोऽभवम्, इष्टः कान्तः यावद् दर्शनंतया, तद् यदि खलु माऽऽर्यिका मम आगत्य एवं वदेत्-एवं खलु नष्टक ! अहं

मम अज्जिया होत्था इहेव सेयंविद्याए नयरीए धम्मिया जाव विात्त कप्पे-  
माणी समणोवासिया अभिगय जीवा० सव्वओ वण्णओ जाव अप्पाणं भावे-  
माणी विहरइ) हे भदन्त ! मेरी जो आर्यिका-(दादी) हुई है, वह तो इस  
श्वेतांविका नगरी में धार्मिक थी यावत् धर्म से ही अपनी जीवनयात्रा  
चलानी थी, श्रमणोपासिका थी, जीवअजीव तत्त्व के स्वरूप को जानती  
थी, इत्यादि सर्व वर्णन यहां पर करना चाहिये. यावत् वह आत्मा को  
भक्ति करती हुई अपने समय को व्यतीत करती थी (सा णं तुज्झ वत्त-  
व्याए सुबहुं पुणोवचयं ममज्जिणिज्जा कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु  
देवत्ताए उववन्ना) वह आपके कथनानुसार बहुत अधिक पुण्य का उपचय  
करके कालमास में काल कर देवलोकों में से किसी एक देवलोक में देव  
की पर्याय से उत्पन्न हुए हैं। (तीसे णं अज्जियाए अहं नत्तुए होत्था)  
मैं उसका पौत्र हुआ हूं (इदं कंते जाव पासणयाए) मैं उसके  
लिये इष्टअभिलषित. कान्त था यावत् दर्शन के लिये भी दुर्लभ था.

मम अज्जिया होत्था इहेव सेयंविद्याए नयरीए धम्मिया जाव विात्त  
कप्पेमाणी समणोवासिया अभिगयजीवा० सव्वओ वण्णओ जाव अप्पाणं  
भावेमाणी विहरइ) हे भदंत ! मेरी जो आर्यिका (दादी) थी, छे ते तो आ  
श्वेतांविका नगरीमां धार्मिक हुता यावत् धर्महुं आयरणु करीने पोतानुं एवन  
पसार कथुं हुतुं. तेओ श्रमणोपासिका हुता, एव अवतत्त्वना स्वइयनेः जाणुता  
हुता. वगेरे णधुं वणुन अहीं समणु देवुं जेधओ. तेओ पोताना आत्माने भावित  
करता पोताने समय पसार करता हुता. (सा णं तुज्झ वत्त व्याए सुबहुं पुणो-  
वचयंसमज्जिणिज्जा कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववन्ना)  
तेओ आपना कथन सुण्ण भूण्ण पुण्य संयय करीने काल मासमां काल करीने  
देवलोकांथी केध ओक देवलोकां देवनी पर्यायमां जन्म पाया छे. ( तीसे णं  
अज्जियाए अहं न ए होत्था) तेमने हुं पौत्र थये छुं. (इदं कंते जाव  
पासणयाए) हुं तेमना माटे धष्ट, अभिलषित, शंत हुता यावत् दर्शन माटे पणु



तव आर्थिकाऽभवत्, इहैव श्वेतविकार्या नगर्या धार्मिकी यावत् वृत्ति  
कल्पयमाना श्रमणोपासिका यावद् विहरामि । ततः खलु अहं सुबहुं पुण्यो-  
पचयं समर्ज्य कालमासे कालं कृत्वा देवलोकेषु उपपन्ना, तत् त्वमपि  
नप्तुक ! भव धार्मिकः यावद् विहर, ततः खलु त्वमपि एवमेव सुबहुं

(तं जइ णं सा अज्जिया मम आगंतुं एवं वएज्जा) वह यदि आर्थिका (दादी)  
मुझ से आकरके ऐसा कहे (एवं खलु नत्तुया ! अहं तव अज्जिया होत्था,  
इहेव सेयवियाए नयरीए धम्मिया जाव वित्ति कप्पेमाणी समणोवासिया  
जाव विहरामि) हे पौत्र ! मैं तुम्हारी दादी थी. इसी श्वेतांशिका  
नृणां में मैं धार्मिक जीवन व्यतीत करती हुई यावत् अपनी जीवनयात्रा  
श्रुतांती थी. जीव अजीव तत्त्व के स्वरूप की ज्ञाता थी, तथा तप और  
संयम से अपनी आत्माको भावित करती हुई अपने समय को व्यतीत  
किया करती थी. (तए णं अहं सुबहुं पुण्णोवचयं समज्जिजणित्ता कालमासे  
कालं किच्चा, देवलोएसु उववण्णा) इस तरह मैंने बहुत अधिक पुण्य का  
संचय किया और संचय करके जब मैं मरण के अवसर पर मरी तो  
देवलोकों में से किसी एक देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हुई हूं  
(तं तुमपि नत्तुया ! भवाहि धम्मिए जाव विहराहि) इसलिये हे पौत्र !  
तुम भी धार्मिक जीवन व्यतीत करो और धर्मानुग आदि विशेषणों वाले  
बनो ! तथा धर्म से ही अपनी जीवनयात्रा करते हुए यावत् श्रमणोपासक

हुईल डतो. (तं जइ णं सा अज्जिया मम आगंतुं एवं वएज्जा) ते आर्थिका  
(दादी) ने भने आवीने आम डडे डे (एवं खलु नत्तुया ! अहं तव अज्जिया  
होत्था, इहेव सेयवियाए नयरीए धम्मिया जाव वित्ति कप्पेमाणी  
समणोवासिया जाव विहरामि) हे पौत्र ! हुं तमारी पितामही डती. ये  
श्वेतांशिका नगरीमां धार्मिक एवन पसार करती यावत् पोतानी एवनयात्रा जोडती  
डती. हुं श्रमणोपासिका डती, एव अएव तत्त्वना स्वइपने जाणुती डती तेमज्ज  
तप अने संयमथी पोताना आत्माने भावित करती पोतानो समय पसार करती डती.  
(तए णं अहं सुबहुं पुण्णोवचयं समज्जिजणित्ता कालमासे कालं किच्चा,  
देवलोएसु उववण्णा) ओ रीते में धणा पुण्यनो संयम डथी अने संयम डरीने  
गारे हुं भरणु डणे मरी तगरे देवलोकांमथी डेअ डेअ देवलोकांम देवनी पर्यायथी  
जन्म पायी डुं. (तं तुमपि नत्तुया ! भवाहि धम्मिए जाव विहराहि) ओथी ज  
हे पौत्र ! तमे पणु धार्मिक एवन पसार डरे अने धर्मानुग वगेरे विशेषणोथी  
संपन्न गनो. तेमज्ज धर्मथी ज पोतानी एवनयात्रा आगण धपावतां यावत्



પુણ્યોપચયં સમર્જ્ય યાવદ્ ઉપપત્સ્યસે, તદ્ યદિ સ્વલુ આર્યિકા સમ  
આગત્ય-એવં વદેત્, તદા ન્વહુ અહં શ્રદ્ધ્યામ પ્રતીયાં રોચયેયં યથા-  
અન્યો જીવઃ, અન્યચ્છરીરમ્. નો તજ્જીવસ્તચ્છરીરમ્ । યસ્માત્ સાઽઽર્યિકા  
મમાઽઽગત્ય નો એવમવાદીત, તસ્માત્ સુપ્રતિષ્ઠિતા મે પ્રતિજ્ઞા યથા-તજ્જીવઃ  
સ્સચ્છરીરમ્, નો અન્યો જીવઃ, અન્યચ્છરીરમ્ ॥મૂ. ૧૩૩॥

વનો. (તે જાણે તું પણ એવું કેવલ સુવહુ પુણ્યોપચયં સમર્જિજ્ઞા જાવ  
ઉવવજ્જિહસિ)-ઇસ તરહ કરકે તુમ માં મેરો હી તરહ સે પુણ્ય કા ઉપ-  
ચય કરકે યાવત્ દેવલોકાં મેં કિમી એક દેવલોક મેં દેવ કી પર્યાય સે  
ઉત્પન્ન હો જાઓગે. (તં જહ્ણં અજ્જિયા મમ આગતું એવં વણ્ણજા, તો  
જાં અહં સદ્ધેજ્જા, પત્તિણ્ણજા, રોહિણ્ણજા, જહા અણ્ણો જીવો, અણ્ણં સરીરં  
જો તં જીવો તં સરીરં) ઇસ તરહ સે હે મદન્ત ! વહ આર્યિકા આકર  
કે મુઝ્ઝ સે એસા કહે તો મેં તુમ્હારે ઇસ કથન પર કિ જીવ અન્ય હૈ  
ઔર શરીર અન્ય હૈ તથા-જીવ શરીરરૂપ નહીં હૈ ઔર શરીર જોવરૂપ નહીં  
હૈ વિશ્વાસ કર સકતા હું પ્રતીતિ કર સકતાહું ઔર ઉસે અપની રૂચ કા  
વિષય વના સકતા હું. (જમ્હા સા અજ્જિયા મમ આગતું જો એવં  
વયાસી-તમ્હા સુપહ્ણિયા-મે પહ્ણા-જહા તં જીવો અન્નં સરીરં) પરન્તુ  
જિસ કારણ સે વહ આર્યિકા મુઝ્ઝ સે આકર કે એસા કહતી નહીં હૈ,  
અતઃ ઇસ કારણ સે મેરા-યહ મન્તવ્ય હૈ કિ જીવ હૈ વહી શરીર હૈ જીવ  
શરીર સે ભિન્ન નહીં હૈ ઔર શરીર જીવ સે ભિન્ન નહીં હૈ સુસ્થિર હૈ અર્થાત્ સત્ય હૈ.

શ્રમણોપાસક થાઓ. (તે જાણે તું પણ એવું કેવલ સુવહુ પુણ્યોપચયં સમર્જિ-  
જ્ઞા જાવ ઉવવજ્જિહસિ) આ પ્રમાણે તમે પણ મારી જેમજી પુણ્યોપચય દેવની  
પર્યાયથી જન્મ પામશે. (તં જહ્ણં અજ્જિયા મમ આગતું એવં વણ્ણજા તો જાં  
અહં સદ્ધેજ્જા, પત્તિણ્ણજા, જહા અણ્ણો જીવો, અણ્ણં સરીરં જો તં  
જીવો તં સરીરં) આ પ્રમાણે હે ભદ્રંત ! તે આર્યિકા આવીને મને આમ કહે  
તો હું તમારા આ કથન પર કે છવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે તેમજ છવ  
શરીરરૂપ નથી અને શરીર છવરૂપ નથી-વિશ્વાસ કરી શકું છું. પ્રતીતિ કરી શકું  
છું. અને તેને પોતાની રુચિને ગમતો વિષય બનાવી શકું છું. (જમ્હા સા અજ્જિયા  
મમ આગતું જો એવં વયાસી-તમ્હા સુપહ્ણિયા મે પહ્ણા-જહા તં જીવો  
તં સરીરં નો અન્નો જીવો અન્નં સરીરં) પરંતુ જે કારણને લીધે તે આર્યિકા મને  
આવીને આ પ્રમાણે કહેતા નથી તે કારણથી જ મારું આ બલતું મન્તવ્ય છે કે  
જે છવ છે તે જ શરીર છે છવ શરીરથી ભિન્ન નથી અને શરીર છવથી ભિન્ન  
નથી. આ વાત સુસ્થિર છે-સત્ય છે

टीका—‘तएणं से पएसी’ इत्यादि—

ततः—तदन्तरं, स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणम्, एवम्—अनु  
पदं वक्ष्यमाणं वचनम्, अवादीत—हे भदन्त ! जीवशरीरयोर्भेदे अनेन  
पुनः कारणेन नो उपागच्छति—इत्यन्तस्मन्दर्भेण या उपमा भवता  
दत्ता, एषा खलु प्रज्ञात=बुद्धिविशेषात्—बुद्धिविशेषजन्या उपमा=दृष्टान्तः  
अस्ति, नत्विद्यं वास्तविकी उपमाऽस्ति, तथापि मन्ये यन्मत्पितामहो  
भवदुक्तकारणैर्नोपागच्छत्विति। परन्तु हे भदन्त ! मम-आर्थिका-पितामही  
खलु एवं=वक्ष्यमाणप्रकारा अभवत्—साक्षाऽभवादिति जिज्ञासयामाह—इहै-  
वेत्यादि—इहैव-अस्यामेवश्वेतांबिकायां-नगर्याम् सा कीदृशी ? इत्यत्राह—  
धार्मिकीत्यादि—धार्मिकी—धर्माचरणशीला, यावत्—यावत्पदेन—“धर्मानुगा,  
धर्मिष्ठा धर्माख्यायिनी धर्मप्रलोकिनी धर्मप्ररञ्जना धर्मसमुदाचारा धर्मेणैव”  
इत्येषां संग्रहः, तत्र—धर्मानुगा धर्मम् अनुगच्छति-अनुसरति या सा तथा,  
धर्मिष्ठा=धर्मप्रिया, धर्माख्यायिनी=धर्मप्रतिपादिका, धर्मप्रलोकिनी=धर्म-

टीकार्थ—इमके बाद प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—  
हे भदन्त ! जीव और शरीर को भिन्नता प्रदर्शित करने के निमित्त जो  
आपने उपमा दी है, वह तो केवल आपकी बुद्धि से जन्य एक दृष्टान्त-  
मात्र है. यह उपमा—दृष्टान्त सत्यार्थकोटि में नहीं आ सकती है। फिर  
भी आपके कथनानुसार यह मान लेता हूँ कि मेरे आर्थिक-प्रदर्शित चार  
कारणों के कारण यहां नहीं आ सकते हैं। सो वे नः आवे—परन्तु मेरी  
जो दादी थी—जो कि इसी श्वेतांबिका नगरी में रहती थी, और धार्मिक-  
धर्माचरण शील थी यावत् जो धर्मानुगधर्म का अनुसरण करने वाली थी,  
धर्मिष्ठा—धर्मप्रिया थी, धर्माख्यायिनी—धर्म का उपदेश देनेवाली थी, धर्म-

टीकार्थ—त्यारपछी प्रदेशी राजाणे केशीकुमारश्रमणने आ प्रमाणे कहुं के हे  
सदंत ! एव अने शरीरनी लिन्नता प्रदर्शित करता ने तमे उपमा आपी छे ते  
तो इकत तमारी बुद्धिथी कल्पित करेले ओक दृष्टांत मात्र न छे. ओथी तमारी आ  
उपमा-दृष्टान्त-सत्यार्थ केटिमां आवी शके तेम नथी. छतांणे तमारा कहा मुज्ज  
आ वात मानी लउं छुं के मारा आर्थिक तमे कहेला आर कारणेने लीये अहां  
आवी शकता नथी तो लवे ते न आवे परंतु मारा ने दादी हुता—के नेओ आ  
श्वेतांबिका नगरीमां रहेता हुता, अने धार्मिक-धर्माचरणशील हुता यावत् ने धर्मा-  
नुगा-धर्मने अनुसरनारा हुता, धर्मिष्ठा—धर्मप्रिय हुता, धर्माख्यायिनी—धर्मने उप-

दर्शिनी, धर्मप्ररञ्जना=धर्मानुगतिगिणी, धर्मसमुदाचारा=धार्मिकसदाचारसंपन्ना, धर्मेणैव=जिनोक्तधर्मेणैव वृत्ति=जीवनयात्रां, कल्पयमाना-कुर्वाणा, पुनःसा कीदृशी? इति जिज्ञासायासाह-“अभिगतजीवाऽजीवे”-त्यादि-सर्वः वर्णकः-वर्णनकारकपदसमूहो बोध्यः, यावद् आत्मानं भावयमाना व्यहरत । अत्रत्य यावत्पदेन-‘अभिगतजीवाजीवा’ इत्यादि सर्वोऽपि पाटश्चतुर्दशाधिकैक-शततममूत्रतः स्त्रीत्वनिर्देशेन बोध्यः । अर्धोऽपि तत्रत एव विज्ञेयः । सा=अनन्तरोक्ता आर्यिका पितामही खलु तव वक्तव्यतया तवमतेन सुबहुम्-अतिप्रचुरं, पुण्योपचयं-पुण्यकर्मसमूहं समर्ज्यसमुपाज्यं कालमासे कालं

प्रलोकिनी थी, धर्मप्ररञ्जना-धर्मानुरागवाली थी, धर्मसमुदाचारा-धार्मिक सदाचार से संपन्न थी. और जिनाक्तधर्म से ही अपनी जीवनयात्रा करने वाली थी. तथा जीव और अजीव तत्त्व के स्वरूप की ज्ञाता थी. अभिगतजीवाजीवा’ इत्यादिरूप से वर्णन करने वाला पदसमूह और यहां यावत्पद से गृहीत पदसमूह ११४ वे सूत्र में वर्णित हुआ है, सो उसे यहां स्त्रीलिङ्ग की विशेषता लगाकर ग्रहण कर कहना चाहिये तथा इन पदों का अर्थ भी वहां से जानना चाहिये. ऐसी वह आर्यिका-पितामही-दादी आपके मन्तव्यानुसार अतिप्रचुर पुण्य का उपचय करके कालमास में जब मरी तब वह अनेकविध देवलोकों में देव की पर्याय से उत्पन्न हुई है. उस आर्यिका का मैं पौत्र हूं, जो धर्म उसको बहुत अधिक दृष्ट यावत् कान्त था. यावत् पदसे वहां १३२ वे सूत्र में प्रोक्त इस विषय के विशेषणगृहीत हुए हैं। ये विशेषण वहां उसके पितामह के प्रकरण दिये गये हैं।

देश करनेवाला होता, धर्मप्रलोकिनी-धर्मदर्शिनी होता, धर्मप्ररञ्जना-धर्मानुरागवाला होता, धर्मसमुदाचारा-धार्मिक सदाचार संपन्न होता अने जिनोक्त धर्म प्रमाणों को पोतानुं लुपन पसार करता है । तेमज लुप अने अलुप तत्त्वना स्वइपने जाणुनारा होता ‘अभिगत जीवाजीवा’ लुप अने अने अलुप वगेरे रूपमां वर्णन करनेवाले पद समूह अने अर्धी यावत्पदथी गृहीत पद समूह ११४मो सूत्रमां वर्णित थयेले छि. अर्धी तेने स्त्रीलिङ्गनी विलक्षित लगाडीने अर्थ करवे जेधये तेमज आ पढोने अर्थ पणु त्यांथी ज जाणी लेवे जेधये. जेवी ते आर्यिका दादी तमारा मन्तव्य मुजण अति-प्रत्युर पुण्यने सन्धय करीने कालमासमां जयारे भरणु पाभ्या तयारे ते धणु देवलोकेमां देवनी पर्यायथी जन्म पाभ्या छि. ते आर्यिकानो हुं पौत्र छुं तेमने धर्म भूषण छष्ट यावत् कान्त हुतो यावत् पदथी अर्धी १३२मां सूत्रमां प्रोक्त आ विषयना विशेषणो गृहीत थयां आ विशेषणो त्यां तेना दादाना प्रकरणमां

कृत्वा अन्यतरेषु-अनेकविधेषु देवलोकेषु कस्मिंश्चिद् देवलोके देवतया देवत्वेन उपपन्नाः, तस्याः खलु आर्यिकायाः अहं नप्तृकः-पौत्रः अभवम्, कीदृशः? इत्यात्राऽऽह-इष्टः कान्तः यावत्-दर्शनतया, अत्र यावत्पदेन द्वात्रिंशदुत्तर-शतैकतमसूत्रे एतत्पितामहवक्तव्यतारूपः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः । व्याख्यापि तत्रैव विलोकनीया ।

तत्-तस्मात् यदि खलु मा-पूर्वोक्ता आर्यिका मम आगत्य-एवम्-अनुप्राप्तं वक्ष्यमाणं वचनं, वदेत्-कथयेत्-नप्तृक ! हे पौत्र ! एवं खलु-वक्ष्यमाणप्रकारकं शृणु-अहं तव आर्यिकाऽभवम् कुत्र ! इत्यात्राऽऽह-इहैव-अस्यामेव श्वेतविकायां नगर्यां धार्मिकी, यावत्-धर्मेणैव वर्तित कल्पयमाना श्रमणोपासिका-श्राविका यावत्-व्यहरम् । ततः-तस्मात्कारणात् सुबहुं-प्रचुरतरं पुण्योपचयं समर्प्य कालमासे कालं कृत्वा देवलोकेषु उपपन्ना, ततः-तस्मान्कारणात् नप्तृक !-हे पौत्र ! त्वमपि धार्मिको यावत्-धर्मानुगादि विशेषणविशिष्टो भव, तथा-धर्मेणैव वर्तित कल्पयमानः अभिगत जीवाजीवादि विशेषणविशिष्टः श्रावको भूत्वा विहर । ततः-तादृशाचरणेन खलु त्वमपि

अतः वही से इन्हे और इनके अर्थ को जानना चाहिये, ऐसी वह मेरी आर्यिका-दादी आकरके मुझ से ऐसा यदि कहे कि हे नप्तृक-पौत्र ! मैं इसी श्वेतांविका नगरी में तेरी दादी थी, और धार्मिक यावत् धर्म से ही अपनी जीवन यात्रा चलानेवाली थी, श्रमणोपासिका-श्राविका थी, इत्यादि मैंने प्रचुरतर पुण्य का उपार्जन कर कालमास में जब सरण किया-तो मैं देवलोको में से किसी एक देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हुई हूं, इसलिये हे पौत्र ! तुम भी धार्मिक यावत् धर्मानुग आदि विशेषणों वाले बनो, तदा धर्म से ही अपनी जीवनयात्रा का निर्वाह करते हुए जीव और अजीव तत्त्व के स्वरूप के ज्ञाता बनो और सच्चे अर्थ में श्रावक बन-

आवेलां छे तेथी जिज्ञासुओओ त्यांथी न नाथी देवां नेछओ, ओवा भारा आर्यिका दादी आवीने भने ने आ प्रमाणे छडे डे छे पौत्र ! हुं आ श्वेतांविका नगरीमां तारी दादी छती अने धार्मिक यावत् धर्मायरथुथी न पोतानी एवनयात्रा पसार करती छती, हुं श्रमणोपासिका-श्राविका छती वगेरे प्रचुरतर पुण्यतुं उपाजन करीने कालमासमां न्यारे मृत्यु पाभी त्यारे देवलोकमांथी डोछ ओक देवलोकमां देवनी पर्यायथी नन्म पाभीछुं, तेथी छे पौत्र ! तमे पण धार्मिक यावत् धर्मानुग वगेरे विशेषणो वाणा तेमन धर्मथी न पोतानुं एवन पसार करता एवअने अएव तत्त्वना स्वप्नने नाजुनारा थाओ, अने साया अणुंमां श्रावक थधने पोताना एवनने सङ्ग जनाओ, ने तमे आ प्रमाणे धार्मिक आयरणुयुक्त अन्तःकरणवाणा थाओ तो तमे

एवमेव अहमिव सुबहुं प्रचुरतरं पुण्योपवयं समज्यं यावत्-यावत्पदेन काल-  
मासे कालं कृत्वाऽन्यतरेषु अनेकविधेषु देवलोकेषु कस्मिंश्चिद्देवलोके उप-  
पत्स्यसे-उत्पन्नो भविष्यसि, तत्-तस्माद् हेतोः यदि खलु आर्यिका मम  
आगत्य एवं वदेत् तदा खलु अहं श्रद्धया-तद्वचने विश्वस्याम्, प्रतीया-  
विशेषतो विश्वासं कुर्याम्, गोचयेदं-रुचिविषयं कुर्याम् यथा-अन्यो जीवः  
ऽन्यत् शरीरम्, ना तज्ज वःस्सशरीरम्, इति । यस्मात्-कारणात् सा-पूर्वोक्ता  
आर्यिका मम आगत्य एवम्-अनन्तरोक्तप्रकारम् वचनं नोन अवादीत्-नाकथ-  
यत् तस्मात्-कारणात् मे-मम प्रतिज्ञा-स्वीकारः सुप्रतिष्ठिता-सत्याऽस्ति,  
प्रतिज्ञाविषयमाह यथेत्यादि-यथा-तथाहि-तज्जीवःस्सशरीरम्, नो अन्यो जीवः,  
अन्यच्छरीरम्, इति ॥ सू० १३३ ॥

कर अपने जीवन को सफल करो, यदि तुम इस प्रकार के धार्मिक आचरण  
से वासितान्तःकरणवाले हो जाते तो तुम मेरे जैसे ही प्रचुरतर पुण्य  
का उपार्जन करके यावत्-कालमास में कालकर अनेकविध देवलोको में  
से किसी एक देवलोक में देवकी पर्याय से उत्पन्न हो जाओगे. इस  
प्रकार से मेरी आर्यिका-दादी मेरे पास आकर ऐसा कहे तो मैं आपके  
इस वचन पर विश्वास करूँ, प्रतीति-विशेषरूप से विश्वास करूँ, उस पर  
रुचि करूँ, कि जीव भिन्न है, शरीर भिन्न है, वह शरीर जीवरूप नहीं है,  
और जीव शरीररूप नहीं है-परन्तु जिस कारण से वह अभी तक मुझ से आकर  
के ऐसा नहीं कहती है. इसी कारण से हे भदन्त ! मैं अपनी इस मन्तव्य  
पर कि 'जीव और शरीर एक हैं जीव भिन्न नहीं है और शरीर भिन्न नहीं  
है' अटल हूँ, उसे सत्य मान रहा हूँ ॥ सू० १३३ ॥

પણ મારી જેમ જ પ્રચુરતર પુણ્યોત્તુ ઉપાર્જન કરીને યાવત કાલમાસમાં કાલ કરીને  
અનેકવિધ દેવલોકોમાંથી કોઈ પણ એક દેવલોકમાં દેવના પર્યાયથી જન્મ પામશે,  
આ પ્રમાણે જો મારા આર્યિકા-દાદી મારી પાસે આવીને આમ કહે તો હું તમારી  
પર વિશ્વાસ કરું, પ્રતીતિ-વિશેષરૂપથી વિશ્વાસ કરું, તેમાં રુચિ ઉત્પન્ન કરું કે જીવ  
ભિન્ન છે, શરીર ભિન્ન છે, અને શરીર જીવરૂપ નથી અને જીવ શરીરરૂપ નથી,  
પરંતુ જે કારણને લીધે હજી સુધા તેઓ મારી પાસે આવીને મને કહેતા નથી તે  
કારણને લીધે હે ભદ્રંત ! મારા આ વિચાર પર કે જીવ અને શરીર એકજ છે જીવ  
ભિન્ન નથી, અને શરીર ભિન્ન નથી. દહ છું, તેને જ સત્ય માનીને વળગી રહું  
છું ॥ સૂ. ૧૩૩ ॥

मूलम्—तएणं केसी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-जइ  
 णं तुमं पएसी ! णहायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं  
 उल्लपडसाडगं भिगारकडुं च्छुयहत्थगयं देवकुलमणुपविसमाणं केइ  
 य पुरीसे वच्चघरंसि ठिच्चा एवं वदेज्जा एह ताव सामी ! इह मुह-  
 त्तगं आसयह वा चिट्ठह वा निसीयह वा तुयट्टह वा, तस्स णं तुमं  
 पएसी ! पुरिसस्स खणमवि एयमट्ठं पडिसुणज्जामि ? णो इणट्ठे  
 समट्ठे । कम्हा ? भंते ! असुइ असुइसामंते । एवामेव पएसी ! तववि  
 अज्जिआ होत्था इहेव सेयवियाए णयरीए धम्मिया जाव विहरइ, सा  
 णं अम्हं वत्तवयाए सुवहु जाव उववन्ना, तीसे णं अज्जियाए तुमं  
 णत्तुए होत्था इट्ठे जाव किमंगपुण पासणयाए ? सा णं इच्छइ  
 माणुसं लोग हव्वमागच्छित्तए, णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए ।

चऊहिं ठाणेहि पएसी । अहुणोववण्णए देवे देवलोएसु इच्छेज्जा  
 माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ-अहुणोववण्णे  
 देवे देवलोएसु दिव्वेहि कामभोगेहि मुच्छिए गिच्छे गट्टिए अज्झो-  
 ववण्णे से णं माणुसे लोगे नो आढाइ नो परिज्जाणाइ मे णं  
 इच्छिज्जा माणुसं नो चेव णं संचाएइ । अहुणोववण्णए देवे देव-  
 लोएसु दिव्वेहिं कामभोगेहि मुच्छिए जाव अज्झोववण्णे, तस्स णं  
 माणुस्से पेम्मे वोच्छिन्ने भवइ दिव्वे पेम्मे संकंते भवइ, से णं  
 इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्वमागच्छित्तए नो चेव संचाएइ (२) अहु-  
 णोववण्णे देवे दिव्वेहिं कामभोगेहि मुच्छिए जाव अज्झोववण्णे,  
 तस्स णं एवं भवइ-इयानि गच्छं मुहुत्तणं गच्छं तेणं कालेणं इट्ठ

अप्पाउया णरा कालधम्मणा संजुत्ता भवंति, से णं इच्छेज्जा माणुस्सं  
लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ।३। अहुणोववण्णे देवे  
दिव्वेहिं जाव अज्झोववण्णे, तस्स माणुस्सए उराले दुग्गंधे पडिकूले  
पडिलोमे यावि भवइ, उहुं पि य णं जाव चत्तारि पंच जोयणसए  
असुभे माणुस्सए गंधे अभिसमागच्छइ, से णं इच्छेज्जा माणुस्सं  
लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ।४। इच्चेएहिं चउहिं  
ठाणेहि पएसी ! अहुणोववण्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुस्सं  
लोगं हव्वमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए तं  
सद्धाहि णं तुमं पएसी ! जहा—अन्नो जीवो अन्नं सरीरं, नो तं  
जीवो तं सरीरं २ ॥सू० १३४॥

छाया—ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं (आजानमेवमवादीत यदि  
खलु त्वं प्रदेशिन् ! स्नातं कृतबलिकर्मणिं कृतकौतुकमङ्गल-प्रायश्चित्तम्  
आर्द्रपटशाटकं भृङ्गारकटुच्छुकहस्तगतं देवकुलमनुपविशन्तं कोऽपि पुरुषो

‘तए णं केशीकुमारसमणे’ इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (केशी कुमारसमणे) केशीकुमारश्रम-  
णने (पएसि रायं) प्रदेशी राजा से (एवं वयासी) ऐसा कहा—(जइणं तुमं  
पएसी ! ण्हायं कयवलिकम्मं, कयकोउयमंगलपायच्छित्तं उल्लपडसाडगं) हे  
प्रदेशिन ! जिस समय तुम कृतस्नान होकर, कृतबलिकर्मा होकर,—वायसादिकों  
के लिये कृत अन्नविभागवाले होकर, कृत मपीतिलकादि मांगलिक प्राय-  
श्चित्त विधि वाले होकर, जलसिक्तवस्त्रशाटकयुक्त होकर (भृङ्गारकटुच्छु-  
कहस्तगतं) एवं भृङ्गार कटुच्छुक हस्तगत होकर (देवकुलमनुपविसमाणं)

‘तए णं केशी कुमारसमणे’ इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तए णं) तयारपछी (केशी कुमारसमणे) केशीकुमारश्रमणे (पएसि रायं)  
प्रदेशी राजने (एवं वयासी) आ प्रभाणे इधुं (जइणं तुमं पएसी ! ण्हायं  
कयवलिकम्मं, कयकोउयमंगलपायच्छित्तं उल्लपडसाडगं) हे प्रदेशिन  
ने वण्णते तमे स्नान करीने, बलिकर्म—ओठले के आगडा वगेरेने अन्न लाग आपीने  
अथ तिलक वगेरे इय मांगलिक प्रायश्चित्त विधि पतापीने पाणीवडे पणदेणाधोतवस्त्र



वर्चोगृहे स्थित्वा एवं वदेत्—एत तावत् स्वामिन् ! इह मुहुर्त्तकम् आस्थ्वन्  
वा तिष्ठत वा निषीदत वा त्वग्यत्तयित वा, नस्य खलु त्वं प्रदेशिन !  
पुरुषस्य क्षणमपि एतमर्थं प्रतिशृणुयाः ? नो अयमर्थः समर्थः । कस्मात् ?  
भदन्त ! अशुचि अशुचिसामन्तम् । एवमेव प्रदेशिन ! तच्चापि आर्यिवा  
ऽभवत् इहेव श्वेतविकायां नगर्यां धार्मिकी यावत् व्यहरत् सा खलु अस्माकं

यक्षायतन में घुस रहे हो, उस समय (केइ य पुरिसे) तुम से कोई पुरुष  
(वच्चघरंसि ठिच्चा एवं वएज्जा) विष्ठागृह में स्थित होकर ऐसा कहे (एह  
ताव सामी ! इह मुहुत्तगं आसयह, वा चिट्ठह वा, निसीयह वा, तुयट्ठह वा)  
हे स्वामिन् ! आप आइये और एक मुहुर्त्तमात्र समयतक यहाँ बैठिये,  
अथवा ठहरिये, सुखपूर्वक रहिये लेटिये (तस्म णं तुमं पएसी ! पुरिस-  
स्स खणमपि एयमट्ठं पडिसुणेज्जासि) हे प्रदेशिन् ! तुम उस पुरुष की  
उस बात को एक क्षण के लिये भी स्वीकार कर लोगे क्या ? (णो इणट्ठे  
समट्ठे हे भदन्त ! उस समय उस पुरुष की यह बात स्वीकार योग्य  
नहीं हो सकती है (कम्हा) हे प्रदेशिन् ! किस कारण से उस पुरुष की  
वह बात स्वीकार योग्य नहीं हो सकती है ? (भन्ते ! असुई असुइ  
सामन्ते) हे भदन्त ! क्यों कि वह स्थान अपवित्र है और सब तरफ  
से अपवित्र वस्तु से युक्त हैं । (एवामेव पएसी ! तव वि अज्जिया होत्था,  
इहेव, सेयं वियाए णयरीए धम्मिया जाव विहरइ) इसी प्रकार से हे

शुक्ल धधने (भिगारकडुच्छुयदत्थगयं) अने भंगार तेमण कटुच्छुक धावमां  
धधने (देवकुलमणुपविसमाणं) यक्षायतन (व्यंतरायतन)मां प्रवेशता छाय ते समथे  
(केइणपुरिसे) तमने डोळ भाणुस (वच्चघरंसि ठिच्चा एवं वएज्जा) णणइमां  
रहीने आ प्रभाणु कडे (एह ताव सामी ! इह मुहुत्तगं आसयह वा चिट्ठह वा  
निसीयह वा, तुयट्ठह वा) हे स्वामिन् ! तमे आवो अने इकत ओक मुहुर्त्त नेटला  
समय सुधी अहीं णेसो के उला रडो, सुणेयी रडो के आरम्भ करो. (तस्म णं तुमं  
पएसी ! पुरिसस्स खणमपि एयमट्ठं पडिसुणेज्जासि) तो हे प्रदेशिन् ! तमे ते  
भाणुसनी ते वातने थोडा वणत भांटे पणु स्वीकारथो ? (णो इणट्ठे समट्ठे) हे भदन्त !  
ते वणते ते भाणुसनी आ वात स्वीकारवामां आवशे नहि. (कम्हा) हे प्रदेशिन् !  
था कारणुथी ते भाणुसनी ते वात तमारामां स्वीकार्यं थशे नहि ? (भन्ते ! असुई  
असुइ सामन्ते) हे भदन्त ! केभके ते स्थान अपवित्र छे अने णधे ते अपवित्र  
वस्तुओथी युक्त छे. (एवामेव पएसी ! तव वि अज्जिया होत्था, इहेव सेयं-  
वियाए णयरीए धम्मिया जाव विहरइ) आ प्रभाणु ने हे प्रदेशिन् आ श्वेतां-

વક્તવ્યતયા સુવહું યાવદ્ ઉપવન્ના તસ્યાઃ સ્વલુ આર્યિકાયાઃ સ્વં નપ્તુકો  
 ડમ્વઃ દૃષ્ટઃ યાવત્ કિમદ્ઙ્ ! પુનર્દર્શનતયા ? સ્મા સ્વલુ ઇચ્છઈ માનુષ્યં લોકં  
 શીઘ્રમાગન્તું, નૈવ સ્વલુ શક્નોતિ શીઘ્રમાગન્તુમ્ ।

ચતુર્મિઃ સ્થાનૈઃ પ્રદેશિન ! અધુનોપવન્નો દેવો દેવલોકેષુ ઇચ્છેત  
 માનુષ્યં લોકં હવ્યમાગન્તું નૈવ સ્વલુ શક્નોતિ । અધુનોપવન્નો દેવો દેવ-

પ્રદેશિન ! इस श्वेतांशिका नगरी में तुम्हारी आर्यिका-दादी भी धार्मिक  
 यावत् धर्मानुरागादि विशेषणों से विशिष्ट हुई है (सा णं अहं वत्तव्वयाए  
 सुवहुं जाव उववन्ना, तीसे णं अज्जियाए तुमं णत्तुए होत्था इट्ठे जाव  
 किमंग पुणपामणयाए) वह हमारी वक्तव्यता के अनुसार-मान्यता के  
 अनुसार अनिशय बहुत अधिक पुण्य का उपार्जन करके और कालमाप  
 में काल करके देवलोकों में से किसी एक देवलोक में देव की पर्याय  
 से उत्पन्न हो गई है। उस आर्यिका-दादी के तुम पौत्र हुए हो, जो उसे  
 तुम इष्ट कान्त आदि विशेषणों वाले थे, और उदुम्बर पुष्प के समान  
 उसे सुनने के लिये उस समय तुम दुर्लभ थे, फिर तुम्हारे देखने की  
 बात ही क्या कहना, (सा णं इच्छइ माणुमं लोगं हव्वमागच्छित्तए  
 णोचेव णं संचाएइ हव्वमागच्छित्तए) वह आर्यिका-दादी मनुष्यलोक में  
 आनेकी इच्छा तो करती है, परन्तु आ नहीं सकती है ! इसमें चार कारण  
 हैं जो इस प्रकार से हैं—(चऊहि ठाणेहि पएसी अहुणोववन्नए देवे देव-  
 लोएसु इच्छेज्जा माणुमं लोगं हव्वमागच्छित्तए, णो चेव णं संचाएइ)

બિશા નગરીમા તમારા આર્યિકા દાદી પણ ધાર્મિકી યાવત્ ધર્માનુરાગ વગેરે વિશેષણો  
 વાળા થયા છે. (સા ણં અહં વત્તવ્વયાએ સુવહું જાવ ઉવવન્ના, તીસે ણં  
 અજ્જિયાએ તુમં ણત્તુએ હોત્થા ઇટ્ઠે જાવ કિમંગપુણપામણયાએ) તે આમારી  
 વક્તવ્યતા મુજબ-માન્યતા મુજબ અતિશય પુણ્યોનું ઉપાર્જન કરીને કાલમાપમાં  
 કાલ કરીને દેવલોકોમાંથી કોઈ પણ એક દેવલોકમાં દેવની પર્યાયથી જન્મ પામ્યાં છે.  
 તે આર્યિકા-દાદીના તમે પૌત્ર છો, તમે તેના માટે ઇષ્ટ કાન્ત વગેરે વિશેષણોવાળા  
 હતા અને ઉદુમ્બર પુષ્પની જેમ તમે તેના માટે શ્રવણદુર્લભ હતા, તો પછી તમારી  
 જોવાની તો વાત જ શી કરવી. (સા ણં ઇચ્છઈ માણુમં લોગં હવ્વમાગચ્છિત્તએ  
 ણોં ચેવ ણં સંચાએइ હવ્વમાગચ્છિત્તએ) તે આર્યિકા દાદી મનુષ્યલોકમાં આવવાની  
 ઇચ્છા તો રાખે છે, પણ આવી શકતા નથી. આનાં ચાર કારણો છે તે આ પ્રમાણે  
 છે. (ચઊહિં ઠાણેહિં પએસી અહુણોવવન્નએ દેવે દેવલોએસુ ઇચ્છેજ્જા માણુતં  
 લોગં હવ્વમાગચ્છિત્તએ, ણોં ચેવ ણં સંચાએइ) હે પ્રદેશિન ! તે ચાર કારણો

લોકેષુ દિવ્યેષુ કામભોગેષુ મૃચ્છિતો યદ્વ અથિતઃ અધ્યુપપન્નઃ સ સ્વલુ માનુષ્યાન્ ભોગાન્ નો આદ્રિયતે નો પરિજાનાતિ, સ સ્વલુ ઇચ્છેન્ માનુષ્યં લોગં હવ્યમાગન્તું નૈવ સ્વલુ જાવનોતિ ?। અધુનોપપન્નો દેવો દેવલોકેષુ દિવ્યેષુ કામભોગેષુ મૃચ્છિતો યાવત્ અધ્યુપપન્નઃ, તસ્ય સ્વલુ માનુષ્યં પ્રેમ

હે પ્રદેશિન્ન ! વે ચાર કારણ એસે હૈં કિં જિનકે કારણ સે અધુનોપપન્નક દેવ દેવલોક મેં તત્કાલોત્પન્ન દેવમનુષ્યલોક મેં શીઘ્ર આના ચાહતા હૈ, પરન્તુ વહ નહીં આસકતા હૈ. સો ઉસમેં પ્રથમ કારણ એસા હૈ—(અહુણોવવ્રણ દેવે દેવલોએસુ દિવ્વેહિં કામભોગેહિં મુચ્છિણ ગિદ્દે ગઢિણ અજ્ઞોવવ્રણે સે માણસે લોગે ણો આઢાઈ, નો પરિજાણાઈ) અધુનોપપન્નક દેવ દેવલોકોં મેં દિવ્યકામભોગોં મેં મૃચ્છિત હો જાતા હૈ, યદ્વ—વિષયોંભોગ કી અભિલાષા સે ગ્રસ્ત હો જાતા હૈ, ગ્રથિત—વિષયોં મેં આસક્ત હો જાતા હૈ, અધ્યુપપન્ન—ઉનમેં અત્યન્ત આસક્તિવાલા બન જાતા હૈ। અતઃ વહ મનુષ્યલોક સંબંધી શબ્દાદિક વિષયોં કો આદર કી દૃષ્ટિ સે નહીં દેખતા હૈ, ઉનકી અપેક્ષા નહીં કરતા હૈ, ઓર ન ઉંહે જાનને કી હી ઇચ્છા ધરતા હૈ (સે ણં ઇચ્છેજ્ઞા માણસં નો ચેવ ણં સંચાણ્ ?) એસા વહ દેવ કિસી પ્રકાર મનુષ્યલોક મેં આનેકી ઇચ્છા કરે તો ભી દેવભોગોં કી આસક્તિ સે વહ યહાં નહીં આના ચાહતા હૈ। (અહુણોવવ્રણ દેવે દેવલોએસુ દિવ્વેહિં કામભોગેહિં મુચ્છિણ જાવ અજ્ઞોવવ્રણે) અધુનોપપન્ન દેવ દેવલોક

આ પ્રમાણે છે કે જેને લીધે અધુનોપપન્નકદેવ દેવલોકમાંથી તત્કાલોત્પન્ન દેવ મનુષ્યલોકમાં જલદી આવવા ઇચ્છે છે પરંતુ તે આવી શકતા નથી તેનું પહેલું કારણ આ પ્રમાણે છે— (અહુણોવવ્રણ દેવે દેવલોએસુ દિવ્વેહિં કામભોગેહિં મુચ્છિણ ગિદ્દે ગઢિણ અજ્ઞોવવ્રણે સે માણસે લોગે ણો આઢાઈ નો પરિજાણા અધુનોપપન્નક દેવ દેવલોકમાં દિવ્યકામભોગોમાં મૃચ્છિત થઈ જાય છે, યદ્વ—વિષયોભોગની અભિલાષાથી આકાંત થઈ જાય છે, ગ્રથિત—વિષયોમાં આસક્ત થઈ જાય છે. અને અધ્યુપપન્ન અને તેમાં અતીવ આસક્તિ—યુક્ત થઈ જાય છે. એથી મનુષ્યલોકના શબ્દ વગેરે વિષયોને સન્માનની દૃષ્ટિએ જોતો નથી, તેની તે અપેક્ષા રાખતો નથી અને તેના સંબંધમાં તે કંઈપણ જાણવાની પણ ઇચ્છા ધરાવતો નથી. (સેણં ઇચ્છેજ્ઞા માણસં નો ચેવ ણં સંચાણ્ ?) એવો તે દેવ જો કદાચ મનુષ્યલોકમાં આવવાની ઇચ્છા રાખતો હોય તો પણ દેવલોગોની આસક્તિને લીધે તે અહીં આવવા ઇચ્છતા નથી. (અહુણોવવ્રણ દેવે દેવલોએસુ દિવ્વેહિં કામભોગેહિં મુચ્છિણ જાવ અજ્ઞોવવ્રણે) અધુનોપપન્ન દેવ દેવલોકમાં દિવ્ય

व्युच्छिन्नं भवति दिव्यं प्रेम संक्रान्तं भवति. स खलु इच्छेत् मानुष्यं लोकं हव्यमागन्तुं नैव खलु शक्नोति २ । अधुनोपपन्नो देवो दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो यावत् अध्युपपन्नः, तस्य खलु एवं भवति, इदानीं गमिष्यामि मुहूर्तेन गमिष्यामि तस्मिन् काले इह अल्पायुषो नराः कालधर्मेण संयुक्ता भवन्ति, स खलु इच्छेत् मानुष्यं लोकं हव्यमागन्तुं नैव खलु शक्नोति

में दिव्य कामभोगों में मूर्च्छित हो जाता है यावत् अध्युपपन्न हो जाता है सो (तस्मिन् माणुसे प्रेमे वोच्छिन्ने भवइ, दिव्ये प्रेमे संक्रान्ते भवइ) इसका मनुष्य-संबंधी प्रेम व्युच्छिन्न-टूट जाता है और देव-लोक संबंधी प्रेम उसके हृदय में संक्रान्त-प्रविष्ट हो जाता है । (मे गं इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्यमागच्छित्तए, नो चेव संचाएइ) अतः वह मनुष्यलोक में आनेका अभिलाषी होता हुआ भी आना नहीं चाहता है. (अधुनोववन्ने देवे दिव्वेहिं कामभोगेहिं मुच्छिए जाव अज्झोववणे, तस्मिन् गं एवं भवइ, इयाणिं गच्छं, मुहुत्तेणं गच्छं, तेणं कालेणं इदं अत्पाउयाणरा, कालधम्मणा संजुत्ता भवन्ति, से गं इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्यमागच्छित्तए गो चेव गं संचाएइ) अधुनोपपन्न देव देवलोक में दिव्य कामभोगों के द्वारा मूर्च्छित हो जाता है यावत् अध्युपपन्न-आमक्त हो जाता है सो उसके मन में ऐसा होता है कि अब जाता हूँ, थोड़े काल पीछे जाऊंगा-उस काल में मर्त्यलोक में मनुष्य-माता, पिता, पुत्र, कलत्रादिक कि जिन की आयु समाप्त हो चुकी होती है, वे कालधर्म से संयुक्त हो जाते

कामभोगोभां मूर्च्छितं थं नयं छि यावत् अध्युपपन्नं थं नयं छि तो (तस्मिन् माणुसे प्रेमे वोच्छिन्ने भवइ, दिव्ये प्रेमे संक्रान्ते भवइ) तेना मनुष्य संबंधी प्रेम व्युच्छिन्न थं नयं छि अने स्वर्गलोकभां संबंधी प्रेम तेना हृदयभां संक्रान्त प्रविष्ट-थं नयं छि. (से गं इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्यमागच्छित्तए नो चेव संचाएइ) अथी ते मनुष्यलोकभां आववानीं अलिखाया राणतो डाय छतां पणु ते अहीं आववा धच्छतो नथी. (अधुनोववन्ने देवे दिव्वेहिं कामभोगेहिं मुच्छिए जाव अज्झोववणे, तस्मिन् गं एवं भवइ, इयाणिं गच्छं, मुहुत्तेणं गच्छं तेणं कालेणं इदं अत्पाउयाणरा कालधम्मणा संजुत्ता भवन्ति, से गं इच्छेज्जा माणुसं लोगं हव्यमागच्छित्तए गो चेव गं संचाएइ) अधुनोपपन्न देव देवलोकभां दिव्य कामभोगो वडे मूर्च्छितं थं नयं छि यावत् अध्युपपन्नं थं नयं छि, अने अथी परिस्थितिभां तेना मनभां आ प्रमाणे थाय डे डवे नयं थ, थोडा वणत पछी नयं थ, ते समये मर्त्यलोकभां माणुस माता, पिता, पुत्र कलत्र वगेरे नयं थ

૩। અધુનાપપન્નો દેવો દિવ્યેષુ યાવત અધ્યુપપન્નઃ, તસ્ય માનુષ્યકઃ ઉદારઃ દુર્ગન્ધઃ પ્રતિકૂલઃ પ્રતિલોમઃપિ ભવતિ, ઝર્ધ્વમપિ ચ સ્વલુ યાવચતુઃપન્ન યોજનશતમ્ અશુભો ગન્ધોઽમિસમાગચ્છતિ, સ સ્વલુ ઇચ્છેત્ માનુષ્યં લોકં હવ્યમાગન્તું નૈવ સ્વલુ શવનોતિ । ઇત્યેતૈઃ ચતુર્મિઃ સ્થાનૈઃ પ્રદેશિન ? અધુ-

હૈ, સૌ વહ દેવ મનુષ્યલોક મેં આને વા અભિલાષી ચના રહને પર મી યહાં નહીં આ સકતા હૈ । (અહુનોવવન્ને દેવે દિવ્યેહિં જાવ અઙ્ગોવવણે. તસ્મ માણુસસૅ ઉરાલે દુર્ગન્ધે પઢિકૂલે પઢિલોમે યાવિ ભવઈ) ચૌથા કારણ યહાં પર નહીં આમકને વા દેસા હૈ કિ-અધુનોપપન્ન દેવ દિવ્ય કામભોગો મેં યાવત અધ્યુપપન્ન હો જાતા હૈ, સૌ ઉમકે લિયે ઔદારિક શરીર સંબંધી ગોમૃતકકલેવરાદિ સમુત્પન્ન દુર્ગન્ધ-ધ્રાણેન્દ્રિય કે અનુકૂલ નહીં પડતા હૈ, પ્રત્યુત વહ-એ-પ્રતિકૂલ-અનિષ્ટ કર પ્રતીત હોતા હૈ (ઉહ્મં પિ ય ણં જાવ ચત્તારિ પંચ જોયણસૅ અસુમે માણુસસૅ ગંધે અમિસમાગચ્છઈ, સે ણં ઇચ્છેજ્જા માણુસં લોગં હવ્યમાગચ્છત્તૅ ણો ચેવ ણં સંચાણઈ) તથા વહ મનુષ્યલોક સંબંધી અશુભ ગંધ ચારસૌ યા પાંચસૌ યોજન તક ડપર મેં સવ તરફ ફેલ જાતા-હૈ-અતઃ મનુષ્યલોક મેં આને વા અભિલાષી ચના હુઆ વહ દેવ ડસ દુર્ગન્ધ કે કારણ યહાં નહીં આ સકતા હૈ અર્થાત્ યુગલિયોં કે સમય મેં ચારસૌ યોજન ઔર મનુષ્ય મેં પાંચસૌ યોજન તક દુર્ગન્ધ જાતા હૈ (ઈચ્છેઈહિં ચઉહિં ઠાણેઈહિં પૅસી ! અહુનો

મૃત્યુ પ્રાપ્ત કરી ચૂકે છે અને આમ તે દેવ મનુષ્ય લોકમાં આવવાની અસિલાષા સંપત્તિ હોય છતાંયે અહીં આવી શકતો નથી. (અહુનોવવન્ને દેવે દિવ્યેહિં જાવ અઙ્ગોવવણે, તસ્મ માણુસસૅ ઉરાલે દુર્ગન્ધે પઢિકૂલે પઢિલોમે યાવિ ભવઈ) અહીં ન આવવાનું એથું કારણ આ પ્રમાણે છે કે અધુનોપપન્નક દેવ દિવ્ય કામ ભોગોમાં યાવત અધ્યુપપન્ન થઈ જાય છે, તો તેના માટે ઔદારિક શરીર સંબંધી ગોમૃતક કલેવરાદિ સમુત્પન્ન દુર્ગન્ધ ધ્રાણેન્દ્રિયના માટે અનુકૂલ કહી શકાય નહિ, પણ એના વિરુદ્ધ તે તેને પ્રતિકૂલ અનિષ્ટકર લાગે છે. (ઉહ્મં પિ ય ણં જાવ ચત્તારિ પંચ જોયણસૅ અસુમે માણુસસૅ ગંધે અમિસમાગચ્છઈ, સે ણં ઇચ્છેજ્જા માણુસં લોગં હવ્યમાગચ્છત્તૅ ણો ચેવ ણં સંચાણઈ) તેમજ તે મનુષ્ય લોક સંબંધી અશુભ ગંધ ચારસૌ કે પાંચસૌ યોજન સુધી ઉપર આકાશમાં એમર પ્રસરીને રહે છે એથી મનુષ્યલોકમાં આવવાની અસિલાષા ધરાવતો હોય છતાંયે તે દેવ તે દુર્ગન્ધને લીધે અહીં આવી શકતો નથી એટલે કે યુગલીઓના સમયમાં ચારસૌ યોજનને મનુષ્યમાં પાંચસૌ યોજન સુધી દુર્ગન્ધ જાય છે. (ઈચ્છેઈહિં

नोपपन्नो देवो देवलोकेषु इच्छेत् मानुष्यं लोकं शीघ्रमागन्तुं नैव शक्नोति  
हव्यमागन्तुम् तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! यथा-अन्यो जीवः अन्यत्  
शरीरम्, नां तज्जीवः स शरीरम् २ ॥सू० १३४॥

टीका-‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि-ततः खलु केश कुमारश्रवणः  
प्रदेशिराजम् एवम्-वक्ष्यमाणवचनमवादीत्-हे प्रदेशिन् ! यदि-चेत् खलु  
त्वां स्नातं कृतस्नानं कृतचलिकर्माणं कृतवायसादिनिमित्तान्नभाजं कृतकौतुक-  
मङ्गलपायश्चित्तं-कृतमषीतिलकादि माङ्गलिकप्रायश्चित्तविधिम्, आर्द्रपटशाटकं-  
जलसिक्कवस्त्रशाटकयुक्तं भृङ्गारकटुच्छुकहस्तगतं-हस्तगृहीतभृङ्गारदर्वीकम्, देव-  
कुलं-यक्षायतनम् अनुप्रविशन्तम्-गच्छन्तम्, कोऽपि-कश्चिदपि पुरुषो वर्चो-  
गृहे विष्टागृहे स्थित्वा एवम्, वदेत्-कथयेत्-हे स्वामिन् ! युयमिह तावद् एत  
आगच्छत इह मूर्त्तिं पूर्वतमात्रसमयं यावत् आस्थवम्-उपविशत, वा-  
अथवा तिष्ठत-इहस्थिता भवत, निपीदत-समुग्रमुपविशत, त्वग्वर्त्तयत-शयनं-  
कुरुत, अत्र वा शब्दो वाक्यालङ्कारे, तस्य पुरुषस्य खलु हे प्रदेशिन् !  
त्वं एतमर्थं किम् प्रतिशणुयाः-स्वीकुर्याः ? प्रदेशीप्राह-

नायमर्थः समर्थः-अयमर्थः स्वीकारयोग्यो नास्ति किमर्थमित्याह-हे-अदन्त !  
तत्स्थानम्-अशुचि-अपवित्रम्, अशुचिमासन्नम्=सर्वतोऽशुचि युक्तम्, तस्मा-  
ववर्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं लामं हव्यमागच्छित्तए णो चेव  
णं संचाएइ हव्यमागच्छित्तए, तं सदहाहि णं तुमं पएमी ! जहा अन्नो  
जीवो अन्नं सरीरं, नो तं जीवो तं सरीरं) हे प्रदेशिन् ! ये चार कारण हैं जो  
अधुनोपपन्न देव को मानुष्यलोक में आने की इच्छा करने पर भी उसे  
यहां आने में बाधक होते हैं । इसलिये हे प्रदेशिन् ! तुम मेरे कहने  
में श्रद्धा करो कि जीव अन्य है और शरीर अन्य हैं जीव शरीररूप नहीं है  
और शरीर जीवरूप नहीं है ।

टीकार्थ-इस सूत्र का मूलार्थ के जैसा ही है ॥सू. १३४॥

चउहिं ठाणेहिं पएसी ! अहुणोववर्णे देवे देवलोएसु इच्छेज्जा माणुसं  
लोकं हव्यमागच्छित्तए णो चेव णं संचाएइ हव्यमागच्छित्तए, तं सदहाहि  
णं तुमं पएमी ! जहा अन्नो जीवो अन्नं सरीरं नो तं जीवो तं सरीरं)  
हे प्रदेशिन् ! आ चार कारणे छे के जेथी अधुनोपपन्न देव मानुष्य-लोकमां आव-  
वानी छच्छा राखतो होय छतांये ते अही आवी शक्ते नथी, ओटला भाटे छे  
प्रदेशिन् ! तमे भारी बात पर श्रद्धा सणो के एव अन्य छे अने शरीर अन्य  
छे, एव शरीर इय नथी अने शरीर एव इय नथी.

टीकार्थः-आ सूत्रेनो टीकार्थं भूलायं प्रमाणे न छे ॥१३४॥

न्नोचितोऽयमर्थः इति बोध्यम्, केशीश्रमणः प्राह-हे प्रदेशिन ! एवमेव-  
 इत्थमेव तवापि आर्यिकाऽभवत् कुत्र साऽभवदित्यत्राऽऽह-इहैव श्वेतविकायां  
 नगर्यां धार्मिकी-यावत्-यावत्पदेन-धर्मानुगादिविशेषणविशिष्टा व्यहरत,  
 सा-आर्यिका खलु मम वक्तव्यतया-मम मतेन सुबहुं यावत्-यावत्पदेन-  
 “पुण्योपचयं समर्ज्यं बालमासे कालं कृत्वाऽन्यतरेषु देवलोकेषु देवतया  
 उपपन्ना, तस्याः खलु आर्यिकायाः त्वं नष्टकः-पौत्रोऽभवः, कीदृशः ?  
 इत्थत्राऽऽह-इष्टः यावत्-यावत्पदेन-इष्टकान्तादिविशेषणविशिष्टः उदुम्बर  
 पुष्पमिव दुर्लभः श्रवणतया, किमङ्ग पुनर्दर्शनतया, एतादृशस्त्वमभूः । सा-  
 आर्यिका खलु मानुष्यलोकमागन्तुमिच्छति किन्तु नैव शक्नोति ।

कुतो न शक्नोति ? इति जिज्ञासायामाह-हे प्रदेशिन् ! चतुर्भिः-  
 स्थानैः अधुनोपपन्नः-तत्कालोत्पन्नो देवः देवलोकेषु मानुष्यं लोकं शीघ्र-  
 मागन्तुमिच्छेद्-अभिलषेत् किन्तु नैव शक्नोति-तत्र प्रथमकारणमाह-  
 अधुनोपपन्नो देवो देवलोकेषु कामभोगेषु मूर्च्छितः-मूर्च्छामधिगतः, गृद्धः-  
 विषयोपभोगाभिलाषग्रस्तः, ग्रथितः आसक्तः, अध्युपपन्नः-अत्यासक्तः स  
 खलु मानुष्यान्-मानुष्यलोकसम्बन्धिनः भोगान्-शब्दादीन् विषयान् नो  
 आद्रियते नापेक्षते, अतएव नो परिजानात-विज्ञातुं नेच्छति, स खलु देवः  
 कथंचित् मानुष्यं लोकमागन्तुमिच्छेदपि किन्तु देवभोगासक्त्या नैवागन्तु  
 शक्नोति-नेच्छतीत्यर्थः १। द्वितीयस्थानमाह-अधुनोपपन्न इत्यारभ्य  
 अध्युपपन्नः इति पर्यन्तानां चिवरणं प्राग्वत्, तस्य-देवस्य मानुष्यं-मनु-  
 ष्यसम्बन्धि प्रेम व्युच्छिन्नं मनुष्यलोकसुखापेक्षयाऽधिकदिव्यसुखेन प्रति-  
 हतं भवति तथा-दिव्यं-स्वर्गलोकसम्बन्धि प्रेम संक्रान्तं-हृद्यनुप्रविष्टं  
 भवति, तेन हेतुना स देव आगन्तुं न शक्नोति २।  
 अधुनोपपन्नो देवो दिव्येषु कामभोगेषु मूर्च्छितो गृद्धो ग्रथितोऽध्यु-  
 पपन्नो भवति, तस्य खलु देवस्य एवम्-अनुपदवक्ष्यमाणस्वरूपो भिलाषो  
 भवति तथाहि-इदानीम्-अधुना गमिष्यामि, तथा पूर्वेन घटिकाद्वया-  
 नन्तरं गमिष्यामि । तस्मिन् काले इह-मन्यलोके नराः-मातापितृपुत्र-  
 कलत्रादयः अल्पायुषः अल्पजीविनः कालधर्मेण-मृत्युना संयुक्ताः भवन्ति,  
 सः देव आगन्तुं न शक्नोति ३। अथ चतुर्थस्थानमाह-“अधुनोपपन्नो देवो  
 दिव्यभोगासक्तो भवति, तस्य देवस्य औदारिकः=औदारिकशरीरसम्बन्धी  
 गोमृतककलेवरादिसमुद्भूतो दुर्गन्धः प्रतिकूलः घ्राणेन्द्रियान्नूकूलः, प्रतिलोमः-  
 घ्राणानिष्टकरश्चापि भवति । तथा-अशुभः सः गन्ध ऊर्ध्वमाप उपरिप्रदेशेऽपि च



खलु यावच्चतुःपञ्चयोजनशतं—चत्वारि वा पञ्च वा योजनानां शतानि यावत्  
अभिसमागच्छति-अमितः प्रसरति. स देवः मानुष्यं लोकमागन्तुम्, इच्छेत्  
परन्तु तद्गुर्गन्धवशादागन्तुं न शक्नोति ४। हे प्रदेशिन् । इत्येतैः चतुर्भिः  
स्थानैः—देवा आगन्तुं न शक्नुवन्तीति । नत् तस्मात्कारणात् हे प्रदेशिन् !  
त्वं श्रद्धेहि—मद्वचने श्रद्धां कुरु यथा—अन्यो जीवः अन्यत् शरीरम् नो तज्जीवः  
स शरीरम्, इति ॥मू० १३४॥

मूलम्—तएणं से पएसी राया केमिं कुमारसमणं एवं वयासी—  
अत्थिणं भंते ! एसा पण्णा उवमा, इमणं पुण कारणेण णो उवा-  
गच्छइ, एवं खलु भंते ! अहं अन्नया कयाइं बाहिरियाए उवट्ठाण-  
सालाए अणेगगणणायक-दंडणायग राईसर-तलवर—माडंबिय-केडुं-  
यि — इट्ठमसेट्ठि सेणावइ — सत्थवाह-मंति-भहामंति-गणग-  
दोवारिय-अमच्चचेड—पीढमइ-नगर-निगम-दूय-सधिवालेहिं सद्धि संप-  
ग्गिडुडे विहरामि । तएणं मम णगरगुत्तिया ससक्खं सहोढं सगेवेज्जं  
अवउडमबंधणवद्धं चोरं उवणेति, तएणं अहं तं पुरिसं जीवत  
चेव अउकुंभीए पक्खिवावेमि, अउमएणं पिहाणएणं पिहावेमि, अएण  
य तउएण य आयावेमि, आयपच्चइएहिं पुरिसेह रक्खावेमि, तए  
अहं अणण्या कयाइं जेणामेव सा अउकुंभी तेणामेव उवागच्छामि,  
उवागच्छित्ता तं आउकुंभ उग्गलत्थावेमि, उग्गलत्थावित्ता तं  
पुरिसं सयमेव पासामि णो चेव णं तीसे अयकुंभीए केइ छिड्डेइ वा  
विवरेइ वा अंतरेइ वा राईवा जओ णं से जीवे अंतोहितो बहिया  
णिग्गए, जइ णं भते ! तीसे अउकुंभीए होज्जा केइ छिड्डे वा जाव  
राई वा जओ णं से जीवे अंतोहितो बहिया णिग्गए, तो णं अहं  
सदहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा जहा-अन्नो जीवो अन्न सरीरं नो त

જીવો તં સરીરં, જમ્હા ણં મંતે ! તીસે. અડકુમ્મીએ ણત્થિ કેહ  
છિહુ વા જાવ નિગ્ગણ, તમ્હા સુપહિટ્ઠિયા મે પહ્ણા જહા-તં  
જીવો તં સરીરં, નો અન્નો જીવો અન્ન સરીરં ॥સૂ. ૧૩૫॥

છાયા—તતઃસ્વલુ સ પ્રદેશી રાજા કેશિનં કુમારશ્રમણમેવમવાદીત્  
અસ્તિ સ્વલુ મદન્ત ! એસા પ્રજ્ઞા ઉપમા, અનેન પુનઃકારણેન નો ઉપાગ-  
ચ્છતિ, એવં સ્વલુ મદન્ત ! અહમન્યદા કદાચિત્ વાહ્યાયામ્ ઉપસ્થાનશાલા-  
યામ્ અનેકગણનાયક-દંડનાયક-રાજેશ્વર-તલવર-માહમ્બિક-કોહુમ્બિ-  
કેમ્બ-સેટ્ઠિ-સેનાપતિ-સાર્થવાહ-મન્ત્રી-મહામન્ત્રી-ગણક-દોવારિકા-ડમાત્ય-  
ચેટ-પીઠમદ-નગર-નિગમ-દૂત-રુન્ધિપાલૈઃ સાર્દ્ધં સંપરિવૃત્તો વિહરામિ ।

‘તણં સે પણ્સી રાયા હત્યાદિ ।

સુત્રાર્થ—(તણં) इसकेबाद (पण्सी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी) प्रदेगी राजाने केशीकुमार श्रमण से ऐसा कहा—(अत्थि णं मंते ! एसा पण्णा उवमा, इमेणं पुण कारणेणं णो उवागच्छइ) हे भदन्त ! यह जीव एवं शरीर में भेदरूप बुद्धि केवल उपमामात्र है, जैसा कि अभी प्रकट किया गया है—कि इसर कारण से देव यहां नहीं आता है. (एवं स्वलु मंते ! अहं अन्नया कयाहं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए) हे भदन्त ! किसी एक समय मैं बाह्य उपस्थान शाला में (अणेगगणनायक, दंडणा-  
यक-राईसर-तलवर-माहंबिय-कोहुंबिय-इवम-सेट्ठि-सेणावड-सत्थवाह-  
मंति-महामंति-गणग-दोवारिय-अमच्च-चेड-पीठमद-नगर-निगम-दूय-  
संधिवालेहिं सद्धिं संपरिवुडे विहरामि) અનેક ગણનાયક, દંડનાયક, રાજા,

સુત્રાર્થ—(તણં) त्यारपछी (पण्सी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी) प्रदेशी राजाने देशी कुमार श्रमणने आ प्रमाणे कह्युं— (अत्थि णं मंते ! एसा पण्णा उवमा. इमेणं पुण कारणेणं णो उवागच्छइ) हे भदन्त ! तमे देवने आहुं न आववा भाटे ने कंथ कह्युं छे तेना वडे तो एव अने शरीरमां लेदइय बुद्धि इत उपमाभात्र न छे आम स्पष्टपणे लाषित थाय छे. (एवं स्वलु मंते ! अं अन्नया कयाहं बाहिरियाए उवट्ठाणसालाए) हे भदन्त ! कोध अेक वण्ते जाह्य उपस्थानशालाभां हुं (अणेगगणनायकदंडणायक-राईसर-तलवर-माहं-  
यिय कोहुंबिय-इवम-सेट्ठि-सेणावड-सत्थवाह-मंति-महामंति-गणग-दो-  
वारिय-अमच्च-चेड-पीठमद-नगर-निगम-दूय-संधि-वालेहिं-सद्धिं संपरि-

ततः खलु मम नगरशुक्तिः समक्षं महोदं सग्रेवेयकम् अवहोदमवधनवद्धं  
चौरमुपनयन्ति, ततः खलु अहं तं पुरुषं जीवन्तमेव अयःकुम्भ्यां पक्षेऽयामि,  
अयामयेन पिधानकेन पिद्यापयामि. अयमा च त्रपुणा च आतापयामि,  
आत्मप्रत्यधिकैः पुरुषैः रक्षयामि. ततोऽहमन्यदा कदाचित् यत्रच सा अयः

ईश्वर ऐश्वर्यसंपन्न, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इक्ष्वा, श्रेष्ठी. सेनापति,  
सार्थवाह, मन्त्री, महामंत्री, गणक, दीवारिक, अमात्य, चेट, पोटमर्द,  
नगरनिवासीजन, व्यापारिगण, दूत, मन्त्रिपारु, इन सबके साथ बैठा हुआ  
था. (तएणं मम नगरशुक्तिया ससक्खं, सहोदं, सगेवेज्जं, अवउडमवध-  
णवद्धं चोरं उवणेति) इतने में नगररक्षक मेरे समक्ष महोदं-चुराई हुई  
वस्तुओं सहित, सग्रेवेयक-ग्रीवा में जिसने चुराई हुई वस्तुओं को बांधा  
है ऐसे चोर को अवकोटक-(मुसकिया) बांधन से बांधकर लाये (तएणं  
अहं तं पुरिसं जीवन्तं चेव अउकुम्भीए पक्खिवावेमि) मैं उस पुरुष को  
जीवितावस्था में ही लोह की कोठी में बन्द करवा दिया-और (अउम-  
एणं पिहाणएणं पिहावेमि) उसके मुन्वहो-कोठी के मुव को लोह के ढकन  
से बन्द करवा दिया-ढकवा दिया. (अएण य तउएण य आयावेमि) बाद  
में फिर मैंने उसे द्रवीभूत लोहे से और द्रवित रांग से अङ्कित करवा  
दिया, (आयपच्चइएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि) यह सब करवाकर फिर मैंने  
अपने विश्वासपात्र पुरुषों को उसकी रक्षा के निमत नियुक्त करवा दिया.

बूढ़े विहरामि) धणा गणुनायको, दंडनायको, राज, ईश्वर, ऐश्वर्य, संपन्न, तलवर  
मांडम्बिक, कौटुम्बिक, इक्ष्वा, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह, मन्त्री, महामन्त्री, गणक,  
दीवारिक, अमात्य, चेट, पोटमर्द, नगरनिवासीजन, बडेपारीयो, दू तो, संधिपालो,  
आ अध्यानी साथे बैठो डतो, (तए णं मम नगरशुक्तिया ससक्खं सहोदं, सगेवे-  
ज्जं, अवउडमवधनवद्धं चोरं उवणेति) ओटलाभां नगररक्षक भारी साथे सहोदं  
-चोरोंओली वस्तुओंनी साथे, सग्रेवेयक-ओनी डोकभां चोरोंओली वस्तुओं बांधवाभां  
आवी छ ओवा चोरने अवकोटक-णन्ने डायये लेगा बांधीने लाव्या. (तए णं अहं  
तं पुरिसं जीवन्तं चेव अउकुम्भीए पक्खिवावेमि) में ते पुरुषने एवने  
न डोण्डना नणामां बंद करावी दीधो. अने (अउमएणं पिहाणएणं पिहावेमि)  
ते नणाने डोण्डना ढाङ्कणुथी बांध करावी दीधो. (अएण य तउएण य आयावेमि)  
त्यार पछी में तेने द्रवीभूत डोण्ड तेमण द्रवित रांगथी अङ्कित करावी दीधो.  
(आयपच्चइएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि) आ अधुं करावने पछी में तेना रक्षा

स्कम्भो तत्रैव उपागच्छामि. उपागम्य तामयःकुम्भोम्. उन्क्षेयामि उन्क्षेयं  
तं पुरुषं स्वयमेव पश्यामि नो चैव खलु तस्यां अयस्कम्भ्यां किञ्चित् छिद्रमिति  
वा विवरमिति वा अन्नमिति वा राजिरिति वा यतः खलु स जीवः अन्त-  
राद् वह्निर्निर्गतः, यदि खलु भदन्त ! तस्यां अयस्कम्भ्यां भवेत् किमपि छिद्रं  
वा यावद् राजिर्वा यतः खलु स जीवः अन्तराद् वह्निर्निर्गतः, तदा खलु  
अहं श्रद्धयां प्रतोयां रोचयेयं यथा-अन्यो जीवः अन्यत् शरीरं नो तज्जीव

(तए अहं अग्न्या कयाइं जेणामेव सा अउकुंभी तेणामेव उवागच्छामि)  
एक दिन की बात है कि मैं उस अयःकुम्भी के-लोहेकी कोठी के पास  
गया (उवागच्छित्ता तं आउकुंभि उगगलत्थावेमि) वहां जाकर मैंने उस  
लोहेकी कोठी को खुलवाया (उगगलत्थावित्ता तं पुरिसं स्वयमेव पासामि  
णं चैव णं तीसे अयकुंभीए केइ छिड्डेइवा विवरेइ वा, अंतरेइ वा राइ वा  
जओण से जीवे अंतोहिंतो वहिया निग्गए) खुलवाकर मैंने स्वयं उस चोर  
को देखा तो वह वहां सरा पड़ा था, जब कि उस लोहेकी कोठी में न कोई  
छिद्र था, न कोई विवर था, न अवकाश था, न कोई रेखा थी, कि  
जिससेद्वारेक उस चोर पुरुष का जीव उस लोहेकी कोठी के  
भीतर से बाहर निकल जाता (जइ णं भंते ! तीसे अउकुंभीए- होजा  
केइ छिड्डे वा जाव राइ वा जओ णं से जीवे अंतोहिंतो वहिया  
निग्गए) हूं भदन्त ! यदि उस लोहेकी कोठी में, कोई छिद्र वा यावत्  
रेखा होती तो उससे होकर वह चोर पुरुष का जाव भीतर से बाहर

भाटे विश्वासपात्र पुश्चोनी निश्चित करीदायी. (तए अहं अण्णया कयाइं जेणामेव  
सा अउकुंभी तेणामेव उवागच्छामि) एक द्विषनी बात छि डेडुं ते बोण्डना  
नणा पासो गयो, (उवागच्छित्ता तं आउकुंभि उगगलत्थावेमि) त्यां जधने भं  
छि बोण्डना नणाने उधडव्यो. (उगगलत्थावित्ता तं पुरिसं स्वयमेव पासामि, णो  
चैव णं तीसे अयकुंभीए केइ छिड्डेइ वा विवरेइ वा, अंतरेइ वा, राइ-  
वा, जओ णं से जीवे अंतोहिंतो वहिया निग्गए) उधडवीने भं पोते ते चोरने  
जेयो. तो ते तेमां भूतावस्थाभां पडेवो डतो. न्यारे ते बोण्डना नणाभां न छिद्र  
डतुं के न विवर डतुं के न अवकाश डतो के न रेखा डती के जेथी ते चोरने  
एव ते बोण्डना नणाभांथी गडार नीकणी जतो रडे. (जइ णं भंते ! तीसे अउकुं  
भीए होजा केइ छिड्डे वा जाव राइ वा जओ णं से जीवे अंतोहिंतो  
वहिया निग्गए) छे भदन्त ! जे ते बोण्डना नणाभां डेछि छिद्र के यावत् रेखा  
डोत तो तेमांथी यधने ते चोर पुश्चोनी एव अंदरथी गडार नीकणी शकत. (तो णं

मंशरारम्, यस्माद् भदन्त ! तस्या अयस्कुम्भ्याः नास्ति किञ्चित् छिद्रं वा यावत् निर्गतः, तस्मात् सुप्रतिष्ठिता मे प्रतिज्ञा यथा-संजीवः तत् शरीरम्, नो अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरम् ॥ मृ० १३५॥

टीका— तएणं से पएसी राया' इत्यादि-ततः-केशिकुमारवचन-श्रवणानन्तरं खलु म प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणम् एवम्-श्रवादित-हे भदन्त ! एषा-जावशरीरयो र्भेदरूपा प्रज्ञा=बुद्धिः उपमा=उपमायात्रम् अस्ति-विद्यते, यद् अनेन कारणेन देवो नो उपागच्छतोति । हे भदन्त ! एवं-पूर्वीक्तप्रकारेणान्यदापि वृत्तमस्ति यद् अहम्-अन्यदा-कदाचित्-अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित् समये-वाह्यायाम्-उपस्थानशाळायाम् अनेकगणनायक-दण्डनायक-राजेश्वर-तलव-माडम्बिक-कौटुम्बिके-भ्य-श्रेष्ठि-सेनापति-सार्थवाह-

निकलता (तो णं अहं सदहेज्जा पत्तिएज्जा-रोएज्जा जहा-अन्नो जीवो अन्नं सरीरं नो तं जीवो तं सरीरं) तो मैं आपको इस घात पर विश्वास कर लेना. प्रतीति कर लेता, उसे रुचि का विषय बना लेना कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है, जीव शरीर रूप नहीं है और शरीर जीवरूप नहीं है (जम्हा णं भंते ! तीसे अउकुंभीए णत्थि केइ छिद्धे वा जाव निग्गए, तम्हा सुपहट्ठिया मे पइण्णा जहा-तं जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं) जिस कारण हे भदन्त ! उस लोहे की कोठी में कोई, छिद्र अथवा यावत् रेखा नहीं थी कि जिससे उसका जीव बाहर निकल जाता. अतः छिद्रादि के अभाव से निकलने में अशक्त होने के कारण मेरा ही यह मन्तव्य ठीक है कि जो जीव है, वही शरीर है, जीव शरीर से भिन्न नहीं है और शरीर जीव से भिन्न नहीं है ।

अहं सदहेज्जा पत्तिएज्जा रोएज्जा जहा-अन्नो जीवो अन्नं सरीरं नो तं जीवो तं सरीरं) तो हुं तमारी आ वात पर विश्वास करी लेत, प्रतीति करी लेत अने तेने मारी इत्थिने विषय बनावी लेत के एव अन्य छि अने शरीर अन्य छि, एव शरीररूप नहीं अने शरीर एवरूप नहीं. (जम्हा णं भंते ! तीसे अउकुंभीए णत्थि केइ छिद्धे वा जाव निग्गए, तम्हा सुपहट्ठिया मे पइण्णा जहा-तं जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं) नेने दीधे हे जहंत ! ते दोभाउना नणाभां केछ छिद्र के यावत् रेखा नहीं के नेथी तेने एव पहार नीकणी जेतो. रहे माटे छिद्र वजेरेना अभावभां पहार नीकणवामां अशक्त होवा पहल मारी ज आ जतनी भान्यता उचित लागे छि के ने एव छि. तेज शरीर छि, एव शरीरथी भिन्न नहीं अने शरीर एवथी भिन्न नहीं.

મન્ત્રિ-મહામન્ત્રિ-ગણક-દૌવારિકા-ડમાન્ય-ચેટ-પીઠમર્દ-નગર-નિગમ-  
 હૂત-સ્મિધપાલૈઃ-અનેકે ચે ગણનાયકા દયઃ-તત્ર ગણનાયકાઃ-ગગમ્વામિનઃ,  
 દણ્ડનાયકાઃ-દણ્ડવિધાયકાઃ, રાજાનઃ-પ્રસિદ્ધાઃ, ઈશ્વરા-ऐश्वर्यसम्पन्नाः,  
 તલવરાઃ-સન્તુષ્ટરાજદક્ષપટ્ટવન્ધપરિભૂષિતરાજકલ્પાઃ, માંડમ્બિકાઃ-ગ્રામપશ્ચ-  
 ૫સ્તીપતયઃ, યદ્વા-સાર્દ્ધક્રોશદ્વયપરિમિતમાન્તરૈર્વિચ્છિદ્ય વિચ્છિદ્ય સ્થિતાનાં  
 ગ્રામાણામધિપતયઃ, કૌટુમ્બિકાઃ-વહુકુટુમ્બપ્રતિપાલકાઃ, ઇશ્યાઃ-ઇમો-હસ્તી  
 તત્પ્રમાણં દ્રવ્યસર્હન્તીત ઇશ્યાઃ, તે ચ જઘન્ય-મધ્યમોત્કૃષ્ટભેદાત ત્રિ-  
 પ્રકારાઃ, તત્ર હસ્તિપરિમિતમણિમુક્તા-પ્રવાલ-સુવર્ણ-રજતાદિદ્રવ્યરાશિ સ્વા-  
 મિનો જઘન્યાઃ, હસ્તિપરિમિતવજ્રમણિમાણિક્યરાશિસ્વામિનો મધ્યમાઃ.

ટીકાર્થ-સ્પષ્ટ હૈં-પરન્તુ જો હસમેં ગણનાયક આદિ પદ આવે હૈં उनकी व्याख्या  
 इस प्रकार से है-गण के जो स्वामी होने हैं, वे गणनायक हैं दण्ड का  
 जो विधान करते हैं. वे दण्डनायक हैं, राजा प्रसिद्ध हैं, ऐश्वर्य से जो युक्त  
 होते हैं वे ईश्वर हैं. सन्तुष्ट हुए राजा द्वारा जिन्हें विशेष पोशाक  
 दी जाती है ऐ राजतुल्य व्यक्तियों का नाम तलवर है पांच सौ ग्राम  
 के जो अधिपति होते हैं वे मांडम्यंक हैं, अथवा ढाई ढाई कोस के  
 अन्तर से बसे हुए ग्रामों के जो अधिपति होते हैं वे मांडम्विक  
 हैं, बहुत कुटुम्ब का पालन पोषण करनेवाले जो होते हैं कौटुम्बिक हैं,  
 हस्तिप्रमाण द्रव्य-मणि-मुक्ता-प्रवाल-सुवर्ण-रजत-आदि द्रव्यराशि के  
 जो स्वामी होते हैं वे जघन्य इश्य हैं तथा-हस्तिपरिमित वज्र, मणि,  
 माणिक्यराशि के जो स्वामी होने हैं वे मध्यम इश्य हैं हस्तिपरिमित

ટીકાર્થ-ટીકાર્થ સ્પષ્ટ ન છે. પરંતુ આ સૂત્રમાં ગણનાયક વગેરે ને પદો  
 આવેલ છે તેમની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે છે. ગણના ને સ્વામી હોય છે તે ગણ-  
 નાયક છે. દંડનું ને વિધાન કરે છે. તે દંડનાયક છે. રાજા પ્રસિદ્ધ છે. ઔશ્વર્યથી  
 ને સમ્પન્ન હોય છે તે ઇશ્વર છે. સંતુષ્ટ થયેલા રાજા વડે જેમને પહેરવાના વસ્ત્રો  
 આપવામાં આવે છે એવી રાજતુલ્ય વ્યક્તિઓ તલવર કહેવાય છે. પાંચસો ગ્રામના  
 ને અધિપતિ હોય છે. તે માંડમ્બિક છે અથવા તે અઢી અઢી કોસના અંતરે વસેલા  
 ગ્રામોના ને અધિપતિ હોય છે તે માંડમ્બિક છે. ઘણા કુટુંબોનું પાલન-પોષણ કરનાર  
 ને હોય છે તે કૌટુંબિક છે. હસ્તિપ્રમાણ દ્રવ્ય-મણિ-મુક્તા-પ્રવાલ-સુવર્ણ-રજત  
 વગેરે દ્રવ્યરાશિના ને સ્વામી હોય છે તે જઘન્ય ઇશ્ય છે- તેમજ હસ્તિપરિમિત  
 વજ્ર, મણિ, માણિક્ય રાશિના ને સ્વામી હોય છે તે મધ્યમ ઇશ્ય છે, ક્રૂટ હસ્તિ-

हस्तिपरिमितकेवलवज्रराशिस्वामिन उत्कृष्टाः, श्रेष्ठिनः-लक्ष्मीकृपाकटाक्ष-  
मत्यक्षलक्ष्यमाणद्रविणलक्षलक्षणविलक्षणहिरण्यपट्टसमलङ्कृतमूर्धानो नगरप्रधान-  
व्यवहारकारिणः, सेनापतयः-चतुरङ्गसेनानायकाः सार्थवाहाः-गणिम-धरिम-  
मेय-परिच्छेद्यरूप-क्रयविक्रेयवस्तुजानमादाय लाभेच्छया देशान्तराणि व्रजतां  
सार्थवाहयन्ति-योग-क्षेमाभ्यां परिपालयन्ति, दीनजनोपकराय मूलधनं दत्त्वा  
तान् समर्द्धयन्तीति तथा, तत्र गणिमम्-एक-द्वि-त्रि-चतुरादिसंख्याक्रमेण  
यदीयते, यथा-नारिकेल-पूगीफल-कदलीफलादिकम्, धरिमम्-तुलासूत्रेणो-  
त्तोल्य यदीयते, यथा-त्रीहि-यव-लवण-सितादि, मेयं-शरावलघुभाण्डादिनो-  
त्तोल्य यदीयते, यथा-दुग्ध-धृत-तैल-मभृति, परिच्छेद्यं च-मत्यक्षतोनि-  
कादिपरीक्षया यदीयते, यथा-मणिमुक्ता-प्रवालाऽऽभरणादि, मन्त्री-रहस्य-  
कार्यकारी स एव महान् महामन्त्री, गणकाः ज्योतिषवेत्तारः, दौवारिकाः-द्वारि-  
नियुक्ताः द्वारपालाः, अमात्याः राज्याधिष्ठायकाः सहवासिराजपुरुषविशेषाः,  
चैटाः-चरणसेवकाः किङ्कराः, पीठ मर्द्दाः-राजत्वमीपत्थायिनो राजवयस्काः  
सेवकविशेषाः, नगरेति नागरा नगरनिवासिनो जनाः, निगमाः-व्यापारिगणः,

केवल वज्रराशि के जो स्वामी होते हैं वे उत्कृष्ट इन्ध हैं. लक्ष्मी की  
जिनपर पूरी २कृपा है, और इसी कृपा के कारण जिनके लाखों के  
खजाने हों, तथा जिनके मस्तक पर उन्हीं को सूचित करनेवाला चान्दी  
का विलक्षण पट्ट शोभायमान हो रहा हो ऐसे नगर के प्रधानव्यापारी  
श्रेष्ठी कहलाते हैं। चतुरङ्गसेना के नायक जो होते हैं वे सेनापति हैं, जो  
गणिम-गिनकर खरीदने बेचने योग्य नारियल, सुपारी केला आदि मेय-शराब  
आदि से नापकर खरीदने बेचने योग्य दूध, घी, तेल, आदि वस्तुओं का तथा  
परिच्छेद्य-कसौटी आदि पर परीक्षा करके खरीदने बेचने योग्य मणि,  
मोती, मूंगा, गहना आदिवस्तुओं को लेकर लाभ के लिये देशान्तर में जाने

परिमित वज्रराशिना जो स्वामी होय छ ते उत्कृष्ट धन्य छ. जेनी ऊपर लक्ष्मीनी  
पूरा कृपा छ अने ओथी न जेमनी पासो लाजोना लंडर लरेला छ तेमज जेमना  
मस्तक पर तेमने न सूचयतो चान्दीना विलक्षण पट्ट शोभायमान यध रडो होय  
ओवा नगरना प्रधान व्यापारी श्रेष्ठी कहवाय छ. जो चतुरंग सेनाना नायक होय  
छ ते सेनापति छ जो गणिम-गण्णीने बेपार करवा योग्य नारियल, सोपारी देणा  
वगेरे वस्तुओने गणिम कहे छ मेय-शरावा वगेरे नाना वासाय वगेरेथी भापीने बेपार करवा  
योग्य दूध, घी, तेल वगेरे वस्तुओने मेय कहेछ तेमज परिच्छेद्य कसौटी वगेरे पर परीक्षय  
करीनेबेपार करवा योग्य मणि, मोती प्रवाल, आभूषणो वगेरे वस्तुओने साथे



દૂતાઃ-વાર્તાહારિણો જનાઃ, સન્ધિપાલાઃ-રાજ્યસન્ધિરક્ષકાઃ, एतैः अनेक  
गणनायकादिभिः साद्धं संपरिवृतः-परिवेष्टितः विहरामि-तिष्ठामि । ततः-  
तदनन्तरम् तस्मिन् काले नगरगुप्तिकाः-नगररक्षकाः, मम समक्षं सद्योद्ध-  
चोरितवस्तुसहितम् । सग्रैवेयकम्-ग्रीवावद्धचोरितवस्तुकम् अवकोटकबन्धन-  
बद्धम्-अवकोटकेन-ग्रीवायाः पश्चाद्भागे मोटनेन यत्तया सह हस्तयोर्वन्धनं,  
तदवकोटकबन्धनं, तेन बद्धं चौरम् उपनयन्ति-मम समीपे आनयन्ति, ततः

વાલે સાર્થ કો લે જાતે હૈ, તથા યોગ નર્હ વસ્તુની પ્રાપ્તિ ઔર ક્ષેમ-પ્રાપ્તવસ્તુ કી  
રક્ષા કે દ્વારા ઉનકા પાલન કરતે હૈ, અનાથ કી મલાઈ કે લિયે ઉન્હે પૂંજી દેકર  
વ્યાપારદ્વારા ધનવાન બનાતે હૈ વહ સાર્થવાહ હૈ. રાજાકે લિયે ઉચિતમંત્ર સલાહ  
દેનેવાલે કા નામ મંત્રી હૈ. હન મંત્રીયોં કે ઉપર જો મંત્રી હોતા હૈ વહ મહામંત્રી હૈ,  
જ્યોતિષશાસ્ત્ર કે વેત્તા કા નામ ગણક હૈ. દ્વાર પર રક્ષા કે નિમિત્ત  
નિયુક્ત હુણ વ્યક્તિ કા નામ દ્વારપાલ હૈ, રાજ્ય કે અધિષ્ઠાયક સહ-  
વાસિરાજપુરુષવિશેષ કા નામ અમાત્ય હૈ. ચરણ સેવક કા નામ ચેટ  
હૈ, રાજા કી ઉસર કે વરાવર જો વ્યક્તિ રાજા કે હી પાસ રહતે હૈ  
એસે સેવક વિશેષ કા નામ પીઠમર્દ હૈ, નગરનિવાસી જનતા કા નામ  
નાગરિક હૈ. વ્યાપારિગણ કા નામ નિગમ હૈ. સન્દેશ દર કા નામ દૂત  
હૈ. રાજ્યસન્ધિકે રક્ષક કા નામ સન્ધિપાલ હૈ. ગ્રીવા કે પશ્ચાદ્ભાગ મેં  
મોડને સે જો ઉસી ગ્રીવા કે સાથે દોનોં હાથોં કા વાંધના જિસ વંધન  
મેં હોતા હૈ ઉસ વંધન કા નામ અવકોટક વંધન હૈ. પ્રદેશી રાજા કે

લઈને લાલ માટે દેશાંતરમાં જનાર સાર્થને લઈ જાય છે તેમજ યોગ-નવી વસ્તુની  
પ્રાપ્તિ અને ક્ષેમ પ્રાપ્ત વસ્તુની રક્ષા વડે તેમનું પાલન કરે છે ગરીબ માણસોના બલા  
માટે તેમને દ્રવ્ય આપીને વેપારવડે તેમને ધનવાન બનાવે છે તે સાર્થવાહ કહેવાય  
છે. રાજાને જે યોગ્ય મંત્ર-સલાહ આપે છે તે મંત્રી છે. આ મંત્રિઓની ઉપર જે  
મંત્રી હોય છે તે મહામંત્રી છે. જ્યોતિષશાસ્ત્રને જાણનાર ગણક કહેવાય છે. દ્વાર પર  
રક્ષા માટે નિયુક્ત કરેલ માણસને દ્વારપાલ કહે છે. રાજ્યના અધિષ્ઠાપક સહવાસિ  
રાજપુરુષ વિશેષનું નામ અમાત્ય છે. ચરણ સેવકનું નામ ચેટ છે. રાજાની ઉમરની  
જ જે વ્યક્તિ રાજાની પાસે રહે છે એવી સેવક વિશેષ વ્યક્તિનું નામ પીઠમર્દ  
છે. નગર નિવાસી જનતા નાગરિક કહેવાય છે. વેપારી ગણનું નામ નિગમ છે.  
છે સંદેશદરનું નામ દૂત છે. રાજ્યસંધિના રક્ષકનું નામ સંધિપાલ છે. ગ્રીવાને  
પાછળની તરફ વાળવાથી તે ગ્રીવાની સાથે જાંઘને હાથો જે બાંધનથી બાંધવામાં આવે  
છે તે બાંધનનું નામ અવકોટક બાંધન છે. પ્રદેશી રાજાનું કહેવું આ પ્રમાણે છે.

खलु अहं तं पुरुषं जीवन्तमेव अयस्कुम्भ्यां लोहकोष्ठिकायां पक्षेपयामि,  
तामयस्कुम्भीम् अयोमयेन-लोहमयेन पिधानेन-आच्छादनेन पिधापयामि-  
आच्छादयामि, तामयस्कुम्भीं च-पुनः अयसा-द्रवीभूतलोहेन च-पुनः त्रपुणा  
त्रपुद्वेण अङ्कयामि-अङ्कितां करोमि-मुद्रितां करोमीत्यर्थः । तामयस्कुम्भीम्  
आत्मप्रत्ययिकैः-निजविश्वासपात्रैः पुरुषैः रक्षयामि-रक्षितां कारयामि, ततः-  
तदनन्तरम्, अहम् अन्यदा कदाचित्-अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्काले यत्रैव चोर-  
युक्ता अयस्कुम्भी तत्रैव-उपागच्छामि, उपागम्य-तामयस्कुम्भीम् 'उगल-  
त्थावेमि' ति उत्क्षेपयामि उद्घाटयामि, अत्र-उत्पूर्वकस्य क्षिपूधातो गल-  
त्थादेशेन रूपसिद्धि र्बोध्याः । "हेम० । ८।४।१४३।" उत्क्षेप्य-उद्घाटय  
तत्रस्थितं तं पुरुषं-चोरं स्वयमेव पश्यामि, नैव खलु तस्यां अयस्कुम्भ्यां  
किञ्चित्-किमपि छिद्रमिति वा विवरं-विलम् इति वा अन्तरम्-अवकाशः  
इति वा राजिः-लेखा इति वा आसीत्, यतः-यस्मात् छिद्रादितः स जीवः  
चोरपुरुषजीवः अन्तः-अयस्कुम्भ्या अन्तरप्रदेशात् बहिः-बहिः प्रदेशे निर्गतः  
निसृतो भवितुमर्हेत्, हे भदन्त ! यदि-चेत् खलु तस्या अयस्कुम्भ्याः  
किञ्चित् छिद्रं यावत्-यावत्पदेन-"विवरम्, अन्तरम्, राजिः" इत्येषां  
सङ्ग्रहो बोध्यः एवं च छिद्रादि भवेत्-स्यात् यतः-यस्मात् छिद्रादितः खलु  
स जीवः अन्तः अयस्कुम्भीमध्यात् बहिर्निर्गतः स्यात्, तदा-अयस्कुम्भीमध्यतः  
स्तचोरजीवनिस्सरणे सति खलु अहं श्रद्धयां तव वचने विश्वस्याम्, पतीयां-  
विशेषतो विश्वस्याम्, रोचयेयं रुचिर्विषयं कुर्याम्, यथा-अन्यो जीवः अन्यत्  
शरीरम् नो तत जीवः स शरीरम् । यस्मात्-कारणात् खलु भदन्त ! तस्याः

कहने का अभिप्राय ऐसा है कि जब चोर को पूर्वोक्त रूप से बांधकर  
लोहे की कोठी में बन्द कर दिया गया और लोहे को गलाकर तथा  
रांग को गलाकर उसके ढक्कन सहित मुख को इस तरह से बन्द कर  
दिया गया कि उसमें थोड़ा सा भी छिद्र आदि न रहा । तब ऐसी स्थिति  
में वह चोर उसमें मर गया. इस पर ऐसा विचार उस प्रदेशी राजा  
को हुआ कि यदि जीव और शरीर भिन्न २ हैं तो उस कोठी में  
छिद्र आदि के अभाव से उसका जीव उसमें से कहां से होकर निकला,

ग्यारे चारने पूर्वोक्त रीते जांधीने दोण्डना नणामां जांध करवामां आंव्ये. अने  
दोण्डने पीगणावीने तेमण् रांगने पीगणावीने ते ढांकणु सडित मुणने, ओवा  
प्रकारे जांध करवामां आंव्युं के तेमां जराव्ये छिद्र वगेरे रहुं नडि. त्यारे ओवी  
परिस्थितिमां ते चार तेमां भरणु पाव्ये. अने लघने ते प्रदेशी राजने आ जातने।

અવસ્કુમ્ભ્યાઃ નાસ્તુ, કિંશ્ચન્નં છિદ્રં વા યાતુ-રાજર્વા, યતઃ સ જોત્તો-  
 ઽન્તઃ-મધ્યાદ્ બહિર્નિર્ગતઃ સ્યાત્ તસ્માત્ કારણાત્ છિદ્રાદિવિરદેણ નિઃસર્વ-  
 મશક્તત્વાત્ મૈ-મમ પ્રતિજ્ઞા મન્તવ્યરૂપા સુપ્રતિષ્ઠિતા-સુષ્ટુ સમવસ્થિતા ન  
 ત્વં લખિષ્ઠિતા યયા તજ્જીવઃ સ શરીરમ્, નો અન્યો જીવઃ અન્યચ્છરીરમ્ ॥સૂ. ૧૩૫॥

મૂલમ્—તણે પં કેસીકુમારસમણે પણેસિં રાયં એવં વયાસી-  
 સે જહાનામણે કૂડાગારસાલા સિયાં દુહઓ લિત્તા ગુત્તા ગુત્તદુવારા  
 ણિવાયગંભીરા, અહ પં કેહ પુરિસે ભેરિ ચ દંડં ચ ગહાય કૂડાગાર-  
 સાલા અંતો અંતો અણુપ્પવિસહ તીસે કૂડાગારસાલા સઠ્ઠવઓ  
 સમંતા ઘણણિચ્ચિયનિરંતરણેચ્છિહ્હાઈં દુવારવયણાઈં પિહેહ, તીસે  
 કૂડાગારસાલા બહુમજ્જદેસમાણે ઠિચ્ચાતંભેરિ દંડણં મહયા  
 મહયા સદેણં તાલેજ્જા, સે ણૂણં પણેસી ! સે સદે પં અંતોહિંતો બહિયા  
 નિગ્ગચ્છહ ? હંતા નિગ્ગચ્છહ, અત્થિ પં પણેસી ! તીસે કૂડાગાર-  
 સાલા કેહ છિદે વા જાવ રાઈ વા જઓ પં સે સદે અંતોહિંતો  
 બહિયા નિગ્ગણે ? નો હ્ણટ્ટે સમટ્ટે, એવામેવ પણેસી ! જીવે વિ  
 અપ્પહિહયગઈ પુઢવિં મિચ્ચા સિલંમિચ્ચાઅંતોહિંતો બહિયા નિગ્ગચ્છહ,  
 તં સદહાહિ પં તુમં પણેસી અણ્ણો જીવો અણ્ણં સરીરં, નો તં  
 જીવો તં સરીરં ૩ ॥સૂ. ૧૩૬॥

અતઃ નિકલને કે અભાવ યહી પ્રતીત હોતા હૈ કિ જીવ શરીર સે ભિન્ન  
 નહીં હૈ જો જીવ હૈ વહી શરીર હૈ ઓર જો શરીર હૈ વહી જીવ હૈ ॥સૂ. ૧૩૫॥

બિચાર થયો કે જો એવ અનેશરીર જુદાં જુદાં તે હોય તો નળામાં છિદ્ર વગેરે ન  
 હોવાથી તેનો એવ તેમાંથી ક્યાં થઈને નીકળ્યો ? નીકળી ન શકવાને લીધે આ વાત  
 સ્પષ્ટ રીતે જણાય છે કે એવ શરીરથી ભિન્ન નથી. જે એવ છે તેજ શરીર છે  
 અને જે શરીર છે તેજ એવ છે. ॥ સૂ. ૧૩૫ ॥

छाया—ततःखलु केशी कुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत् -  
सा यथानामकं कूटाकारशाला स्यात् द्विधातो लिप्ता गुप्ता गुप्तद्वारा निवात-  
गम्भीरा, अथ खलु कश्चिन् पुरुषः भेरीं च दण्डं च गृहीत्वा कूटाऽऽकार-  
शालायामन्तरन्तः अनुप्रविशति तस्याः कूटाऽऽकारशालायाः सर्वतः समन्तात्  
घननिचितनिरन्तरनिश्छिद्राणि द्वारवदनानि पिदधाति, तस्याः कूटाऽऽकार-

‘तएणं केशी कुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केशीकुमारसमणे) इसके बाद केशीकुमार श्रमणने  
(पएसिं रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजा से ऐसा कडा (सें जहा नामए कूडागा-  
रशाला सिया दुहओ लिप्ता गुप्ता गुप्त दुवारा निवायगंभीरा) हे प्रदेशिन  
! जैसे कोई एक कूटाकारशाला हो पर्वत की शिखर जैसी आकृति-  
वाला भवन हो और वह भीतर बाहर में आच्छादित हो, आच्छादित द्वार  
प्रदेशवाली हो, निवात गंभीर हो वायुहित होती हुई गंभीर अन्तः प्रदेशवाली हो  
(अहणं केइपुरिसे भेरिं च दंडं च गहाय कूडागारसालाए अंतो अणुप्पविसइ)  
अथ कोई पुरुष भेरी और दंड को लेकर उस कूटाकारशाला के भीतर घुस  
जाता है, (तीसेकूडागारसालाए सव्वओ समंता घणनिचियनिरंतरणिच्छिड्डाइं  
दुवारवयणाइं पिहेइ) और घुसकर वह उसके दरवाजों को चारों तरफ से इस  
तरह से बन्दकर लेता है कि जिससे उनके किवाड आपस में बिलकुल सट  
जाते हैं थोडा सा भी अन्तर उनमें नहीं रहता है. छिद्र उनके बन्द हो जाते हैं,

‘तएणं केशीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केशीकुमारसमणे) त्थार पछी केशी कुमार श्रमणे  
(पएसिं रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजने आ प्रमाणे कहुं (से जहा नामए  
कूडागारशाला सिया दुहओ लिप्ता गुप्ता-गुप्तद्वारा निवायगंभीरा)  
हे प्रदेशिन ! जेम केअ ओक कूटाकारशाला होय पर्वतना आकार जेवुं भवन होय  
अने ते णहार अने अंदरना भागमां आच्छादित द्वार. प्रदेशयुक्त होय, निवात  
गंभीर होय—पवन रहित तेमज गंभीर अंतः प्रदेश युक्त होय, (अह णं केइ  
पुरिसे भेरिं च दंडं च गहाय कूडागारसालाए अंतो अणुप्पविसइ) हवे  
केअ पुरुष भेरी अने दंडाने सधने ते कूटाकार शालाभां पेसी जाय छे. (तीसे कूडा-  
गारसालाए सव्वओ समंता घणनिचियनिरंतरणिच्छिड्डाइं दुवारवयणाइं  
पिहेइ) अने पेसीने ते णधा द्वारेने आ प्रमाणे णंध करी दे छे के जेथी तेमना  
आरण्याना कमाओ ओकदम अडीने णंध थंज जाय छे. तेमनी वच्चे थोडुं पणु अेता

शालायाः बहुमध्यदेशभागे स्थित्वा तां भेरीं दण्डकेन महता महता शब्देन ताडयेत्, अथ नूनं प्रदेशिन् ! स शब्दः खलु अन्तः वह्निर्निर्गच्छति ? इन्त निर्गच्छति । अस्ति खलु प्रदेशिन् ! तस्याः कूटाऽऽकारशालायाः किञ्चित् छिद्रं वा यावत् राजिर्वा यतः खलु स शब्दोऽन्तर्बहिर्निर्गतः ? नायमर्थः समर्थः, एवमेव प्रदेशिन् जीवोऽपि अप्रतिहतगतिः पृथिवीं भित्वा शैलं भित्वा अन्तर्बहिर्निर्गच्छति तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! अन्यो जीवः अन्यच्छरीरं, नो तज्जीवः स शरीरम् ॥ सू० १३६॥

टीका—‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि—ततः खलु केशी कुमारश्चमणः एवमवादीत्—तद् यथा नामकं=यथा दृष्टान्तम्=एतद्विषये दृष्टान्तं प्रदर्शयते, काचित् कूटाऽऽकारशाला—पर्वतशिखराकृतिकभवनम् स्यात् भवेत्, सा च द्विधातः—अन्तर्बहिःप्रदेशयोः गुप्ता आच्छादिता, गुप्तद्वारा—आच्छादितद्वारप्रदेशा निवातगम्भीरा निवाता पवनरहिता सतो गम्भीरा-गम्भीरान्तःप्रदेशा स्यात् । अथ खलु तस्याः कूटाकारशालायाः अन्तरन्तः-

है, (तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेशभाए ठिच्चा तं भेरीं दंडएणं महया २ सङ्गेणं ताळेज्जा) इस तरह से करके अब उस कूटाकार शालाके बिल-कुल मध्यभागमें खडा होकर उस भेरी को जोर २ से उस डंडे से इस ढंग से बजाता है कि जिससे उसमें से बहुत ही अधिक जोर की उँची अ.वाज निकले (सेणूणं पएसी से सङ्गे अंतोहितो वहिया निग्गच्छइ) अब प्रदेशिन् ! यह कहो वह उसका शब्द जो कि दण्डाघात से उत्पन्न हुआ है उस कूटाकारशाला के मध्य प्रदेश से बाहर निकलता है या नहि ? (हंता, निग्गच्छइ) हाँ, भदन्त ! बाहर निकलता है । (अत्थिणं पएसी ! तीसे कूडागारसालाए केइछिद्देवा जाव राई वा जओणं से सद् अंतोहितो वहिया निग्गए) तो हे प्रदेशिन् ! विचारो उस कूटाकारशालामें न

रहेती नथी. तेमनां णधा छिन्दो णं द थं णय छे. (तीसे कूडागारसालाए बहु-मज्झदेशभाए ठिच्चा तं भेरीं दंडएणं मसया महया सङ्गेणं ताळेज्जा) आ प्रमाणे करीने ते कूटाकारशालाना ओकहम मध्यलाजभां ते उलो थंने ते लेरीने ते दंडाथी आ आ प्रमाणे वगाडे छे के तेमांथी णहु न लयंकर शब्द नीकणे. (से तेणं पएसी से सङ्गे अंतोहितो वहिया निग्गच्छइ ?) डवे प्रदेशिन् ! तमे मने कहो छे ते लेरीमांथी उत्पन्न थतो शब्द ते कूटाकार शालाना मध्यप्रदेशमांथी णहार नीकणे छे. (हंता निग्गच्छइ) छे लहंता णहार नीकणे छे. (अत्थिणं पएसी ! तीसे कूडागारसालाए केइछिद्दे वा जाई वा जओ णं सङ्गे अंतो वहिया निग्गए) ते छे प्रदेशिन् ! तमे विचार

અત્યન્તમધ્યપ્રદેશે કશ્ચિત્ કોઽપિ પુરુષઃ મેરીં ચ પુનઃ દણ્ડં ગૃહીત્વા અનુપવિ  
શ્રતિ, સ પ્રવિષ્ઠઃ પુરુષઃ તસ્યાઃ કૂટાઽઽકારશાલાયાઃ-તત્કૂટાકારશાલા-  
સમ્બન્ધીનિ ઘનનિચિતનિરન્તરનિશ્ચિદ્રાણિ-ઘનનિ નિચિદ્રાણિ નિચિતાનિ-અત્ય-  
ન્તમિલિતાનિ અત એવ નિરન્તરાણિ-અન્તરરહિતાનિ ચ-પુનઃ નિશ્ચિદ્રાણિ-  
ચિદ્રરહિતાનિ દ્વારવદનાનિ-દ્વારમુખાનિ સર્વતઃ-સર્વદિશુ સમન્તાત્-  
સર્વં ત્રિદિશુ પિદધાતિ-આચ્છાદયતિ, તસ્યાઃ પિહિતાયાઃ કૂટાકારશાલાયાઃ ઘણું  
મધ્યવદેશભાગે-અત્યન્તમધ્યવદેશભાગે. સ્થિત્વા સ પુરુષઃ તાં મેરીં દણ્ડકેન  
મહતા મહતા શબ્દેન યથા અત્યુચ્ચઃ શબ્દઃ સમુત્પન્નેન તથેત્પર્યઃ તાડયેત્-અથઃ  
નૂનં હે પ્રદેશિન્ ! સઃ-દણ્ડાઘાતજનિતઃ શબ્દઃ મેરીશબ્દઃ અન્તઃ-મધ્ય  
પ્રદેશાત્ બહિઃ-બહિપ્રદેશે નિર્ગચ્છતિ ?-નિસ્સરતિ ? इति પ્રશ્નઃ । પ્રદેશી માહ-  
-દન્ત ! इति સ્વીકારે હે મદન્ત ! નિર્ગચ્છતિ-કેશીકુમારશ્રમણઃ કથયતિ  
હે પ્રદેશિન્ ! તસ્યાઃ-કૂટાઽઽકારશાલાયા કિઞ્ચિત્ ચિદ્રં વા યાવત્ વિવરં વા  
અન્તરં વા રાજિર્વા અસ્તિ યતઃ યસ્માત્ સ શબ્દઃ અન્તઃ કૂટાકારશાલાઽ  
અન્તરપ્રદેશાત્ બહિર્નિર્ગતઃનિસ્રુતઃ સ્યાત્ ? । इति કેશિના પૃષ્ઠે પ્રદેશી માહ-  
નાયમર્થઃ સમર્થઃ ચિદ્રાદિ રૂપોઽર્થસ્તત્ર ન યુજ્યતે સર્વથાઽઽવૃત્તવાત્ । પુનરપિ  
કેશીમાહ-હે પ્રદેશિન્ ! એવમેવ-એતદ્દૃષ્ટાન્તનુસારેણેવ અપ્રતિહતગતિઃ-અંકુ-  
ષ્ઠિતગતિઃ જીવોઽપિ પૃથિવીં મિચ્વા શિલાં-પ્રસ્તરં મિચ્વા પર્વતં મિત્વા અન્તઃ  
મધ્યપ્રદેશાત્ બહિર્નિર્ગચ્છતિ, તત્-તસ્માત્-ઉક્તદૃષ્ટાન્તેન હે પ્રદેશિન્ !  
ત્વં શ્રદ્દેહિ-મદ્રચ્ચને શ્રદ્દાં કુરુ અન્યો જીવઃ અન્યત્ શરીરમ્, નો સ જીવઃ  
તચ્છરીરમ્ ॥ સુ. ૧૩૬ ॥

કોઈ ચિદ્ર હૈ, યાવત્ ન કોઈ રેખા હૈ કિ જિસસે હોકર વહ શબ્દ ઉસમે  
સે બાહર નિકલા હો ? (જો હજારે સમદ્રે) હે મદન્ત ! યહ અર્થ સમર્થ  
નહીં હૈ. અર્થાત્ વહાં પર કોઈ ચિદ્રોદિ નહીં હૈ. (એવામેવ પાસી ! જીવેવિ-  
અપ્પહિહયગઈ પુઢિયિ મિચ્વા, સીલં મિચ્વા અંતોર્હિતો બહિયા ણિગચ્છઈ)  
હસી પ્રકાર હે પ્રદેશિન્ ! જીવ બી અપ્રતિહત ગતિવાલા હૈ અતઃ વહ પૃથિવી  
કો ભેદ કરકે, શિલા કો ભેદ કરકે ઉસકે ખીતર સે હોકર  
બાહર નિકલ જાતા હૈ. (તં સદ્દહાહિ ણં તુમં પાસી ! અણ્ણો-

કરો કે તે કૂટાગાર શાળામાં કોઈ ચિદ્ર નથી યાવત્ કોઈ રેખા (તરાડ) પણ નથી કે  
જેમનાથી તે શબ્દ તેમાંથી બહાર નીકળતો હોય ? (જો હજારે સમદ્રે) હે મદન્ત !  
આ અર્થ સમર્થ નથી એટલે કે તેમાં કોઈ ચિદ્ર વગેરે નથી. (એવામેવ પાસી  
! જીવે વિ અપ્પહિહયગઈ, પુઢિયિમિચ્વા, સિલં મિચ્વા, અંતોર્હિતો બહિયા  
ણિગચ્છઈ) આ પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ ! એવ પણ અપ્રતિહત ગતિ યુક્ત છે. એથી  
તે પૃથિવીનું ભેદન કરીને, શિલાનું ભેદન કરીને, તેની અંદર થઈને બહાર નીકળી  
બાહર છે. (તં સદ્દહાહિ ણં તુમં પાસી ! અણ્ણો જીવો અણ્ણં સરીરં ણો તં જીવો



મૂલ—તણ ણં પણ્ણી રાયા કેસિકુમારસમણં એવં વયાસી  
 અત્થિણં મંતે ! એસા પળ્ણાઓ ઉવમો, ઇમેણ પુણ કારણેણં ણો  
 ઉવાગચ્છઈ, એવં ચલુ મંતે ! અહં અન્નયા કયાઈ બાહિરિયાણ ઉવ-  
 ટ્ઠાણસાલાણ જાવ વિહરામિ, તણં મમં ણગરગુત્તિયા સસક્કં જાવ  
 ઉવળેંતિ, તણં અહં તં પુરિસં જીવિયાઓ વવરોવેમિ, વવરોવેત્તા  
 અડકુંભીણ પક્કિવાવેમિ અડમણં પિહાણણં પિહાવેમિ જાવ આય-  
 પચ્ચઈણં પુરિસેહિં રક્કિવાવેમિ, તણં અહં અન્નયા કયાઈ જેણેવ સા  
 અડકુંભી, તેણેવ ઉવાગચ્છામિ, તં અડકુંભિં ઉગ્ગલત્થાવેમિ, તં અડ-  
 કુંભિં કિમિકુંભિપિવ પાસામિ, ણોચેવણં તીમે અડકુંભીણ કેઈછિદ્ધે  
 વા જોવ રાઈઈ વા જઓ ણં તે જીવા વહિયાહિંતો અણુપ્પવિટ્ઠા, જઈ  
 ણં તીસે અડકુંભીણ હોજા કેઈ છિદ્ધેઈ વા જોવ અણુપ્પવિટ્ઠા, તો ણં  
 અહં સદ્ધહેજ્જા, જહા—અન્નો જીવો તં ચેવ, જમ્હા ણં તીસે અડકું-  
 ભીણ નત્થિ કેઈ છિદ્ધેઈ વા જાવ અણુપ્પવિટ્ઠા તમ્હા સુપ્પઈટ્ઠિઆ મે  
 પડળ્ણા જહા—તં જીવો તં સરીરં તં ચેવ ॥ સૂ. ૧૩૭ ॥

છાયા—તતઃચલુ પ્રદેશી રાજા કેશીકુમારશ્રમણમેવમવાદીત્વ અસ્તિ  
 ચલુ મદન્ત ! એવા પ્રજ્ઞાત ઉપમા અનેન પુનઃકારણેન નો ઉપાગચ્છતિ),  
 જીવો અણં સરીરં ણો તં જીવો તં સરીરં) અતઃ હે પ્રદેશિન ! તુમ વિશ્વાસ  
 કરો જીવ મિન્ન હૈ ઓર શરીર મિન્ન હૈ. જીવ શરીર રૂપ નહી હૈ ઓર  
 શરીર જીવરૂપ નહી હૈ ।

ટીકાર્થ કો લેકર હી યહ મૂલાર્થ લિખ્વા હૈ. ભાવાર્થ ઇસકા કેવલ  
 યહી હૈ કિ જિસ પ્રકાર શબ્દ અપ્રતિહતગતિવાલા હૈ ઉસી પ્રકાર સે જીવ  
 મી અપ્રતિહતગતિવાલા હૈ અતઃ વહ કિસી મી સ્થિતિમે પ્રતિહતગતિ  
 વાલા નહી હો સકતા હૈ ॥ સૂ. ૧૩૬ ॥

‘તણ ણં પણ્ણી રાયા’ ઇત્યાદિ ।

મુત્રાર્થ—(તણ) ઇસકે બાદ (પણ્ણી રાયા) પ્રદેશી રાજાને (કેસી-  
 તં સરીરં) એથી હે પ્રદેશિન ! તમે વિશ્વાસ કરો કે જીવ મિન્ન છે અને શરીર  
 મિન્ન છે. જીવ શરીર રૂપ નથી અને શરીર જીવ રૂપ નથી.

ટીકાર્થ—તે લક્ષ્યમાં રાખીને જ આ મૂલાર્થ લખવામાં આવ્યો છે. આનો  
 ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે જેમ શબ્દ અપ્રતિહત ગતિ યુક્ત હોય છે. એથી તે ગમે  
 તે સ્થિતિમાં પણ પ્રતિહત ગતિયુક્ત થઈ શકે નહિ. ॥ સૂ. ૧૩૬ ॥

‘તણ ણં પણ્ણી રાયા’ ઇત્યાદિ ।

મુત્રાર્થ—(તણ) ત્યાર પછી (પણ્ણી રાયા) કેશી કુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે



एवं खलु भदन्त ! अहमन्यदा कदाचित् बाह्यापाए उपस्थानशालायां यावत्  
विहरामि, ततः खलु मम नगर गुप्तिकाः ससाक्ष्यं यावद् उपनयन्मि ततः  
खलु अहं तं पुरुषं जीविताद् व्यपरोपयामि, व्यपरोप्य अयस्कुम्भ्यां प्रक्षे-  
पयापि अयोमयेन पिधानकेन पिधापयामि यावत् आत्मप्रत्ययिकैः पुरुषैः  
रक्षयामि, ततः खलु अहं अन्यदा कदाचित् यत्रैव सा अयस्कुम्भी तत्रैव

कुमारसमणं एवं वयासी) केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(अत्थि णं  
भंते ! एसा पण्णाओ उवमा) हे भदन्त ! यह आपके द्वारा कही गई  
उपमा—(दृष्टान्त) बुद्धिविशेष रूप है (इमेण पुण कारणेणं णो उ०) किन्तु इस  
वक्ष्यमाण कारण से मेरे मनमें जीव और शरीर का भेद नहीं आता  
है—युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होता है। इसी बात को अब प्रदेशी राजा प्रकट करता  
है—(एवं खलु भंते ! अहं अन्नया कयाहं वाहिरियाए उवट्ठाणसालाए जाव  
विहरामि) हे भदन्त ! मैं एक दिन बाहर की उपस्थान शाला में यावत् बैठा  
हुमा था (तएणं ममं णगरगुप्तिया ससक्खं जाव उवणेति) उस मेरे नगर  
रक्षकोंने साक्षिसहित यावत् एक चोर को उपस्थित किया (तएणं अहं  
तं पुरिसं जीविताओ ववरोवेमि) मैंने उन चोर को प्राणरहित कर दिया  
(ववरोत्ता अउकुंभीए पक्खिवावेमि अउमएणं पिहाणयणं पिहावेमि)  
प्राणरहित करके फिर मैंने उसे अयस्कुंभी (लोहेकी कोठी) में अपने पुरुषों  
से डलवा दिया (जाव आयपच्चइएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि) यावत् फिर मैंने  
अपने आत्मरक्षक पुरुषों का वहां पहरा नियुक्त कर दिया. (तएणं अहं

उद्ध—(अत्थिणं भंते ! एसा पण्णाओ उवमा) हे भदन्त ! आ तमारा वडे  
प्रयुक्त उपमा (दृष्टान्त) बुद्धि विशेष रूप से. (इमेण पुण कारणेणं णो उ०)  
येनाथी मारा मतमां एव अने शरीरनी लिन्नतानो विचार उत्पन्न थयो नथी  
भने आ बात युक्तितत्त्व पणु लागी नहि. येन बात हुवे प्रदेशी राजा आ प्रमाणे  
प्रकट करे छे (एवं खलु भंते ! अहं अन्नया कयाहं वाहिरियाए उवट्ठाण  
सालाए जाव विहरामि) हे भदन्त ! हुं ओक दिवस गह्वरनी उपस्थान शालामां  
गेठा हुतो. (तएणं ममं णगरगुप्तिया ससक्खं जाव उवणेति) मारा  
नगर रक्षके ओक साक्षित सहित यावत् ओक औरने मारी सामे उपस्थित  
कर्यो (तएणं अहं तं पुरिसं जीविताओ ववरोवेमि) मैं ते औरने मारी नाथ्यो.  
(ववरोवेसा अउकुंभीए पक्खिवावेमि अउमएणं पिहाणएणं पिहावेमि)  
मारीने तेने मैं दोणउना नणामां पोताना भाणुसे नणावी दीयो. (जाव  
आयपच्चइएहिं पुरिसेहिं रक्खावेमि) यावत् पछी मैं त्यां आत्मरक्षक युद्धोने

उपागच्छामि तामयस्कुम्भीमुत्क्षेपयामि, तामयस्कुम्भी कृमिकुम्भीमिव पश्यामि  
नैव खलु तस्याः कुम्भ्याः किञ्चित् छिद्रमिति वा यावद् राजिरिति वा यतः  
खलु ते जीवा बाह्याद् अनुप्रविष्टाः, यदि खलु तस्याः अयस्कुम्भ्याः  
भवेत् किञ्चित् छिद्रमिति वा यावद् अनुप्रविष्टाः तदाऽहं श्रद्धया यथा  
-अन्यो जीवः तदेव, यस्मात् खलु तस्या अयस्कुम्भ्याः नास्ति किमपि

अन्नया कयाहं जेणेव सा अउकुंभी तेणेव उवागच्छामि) कुछ दिनों के  
बाद फिर मैं उस अयस्कुंभी के पास गया (तं अयकुंभि उगगलत्थावेमि)  
उस अयस्कुंभी को उधाडा (तं अउकुंभि किमिकुंभिपिव पासामि, णो  
चेव णं तीसे अउकुंभीए केइ छिड्डेइ वा जाव राईइ वा जओ णं ते जीवा  
बहियारहितो अणुप्पविट्ठा) उधाडते ही मैंने उसमें देखा कि वहां उस अय-  
स्कुंभी में कृमिकुलों को देखा कि जिससे वह अयस्कुंभी कीटमयी हो  
रही थी. अब विचारने की बात यहां ऐसी है कि जब उस अयस्कुंभी  
में न कोई छिद्र था यावत् न कोई रेखा ही थी, कि जिससे होकर वे  
जीव उसमें बाहिर से आये (जइणं तीसे अउकुंभीए होज्जा केइ छिड्डेइ  
वा जाव अणुप्पविट्ठा) यदि उसमें कोई छिन्द्रादि होता तो यह बात मान भी  
ली जाती कि वे उनमें होकर उसमें प्रविष्ट हो गये हैं (तो णं अहं  
सइ हेज्जा-जहा-अन्नो जीवो तं चेव, जम्हाणं तीसे अउकुंभीए णत्थि  
केइ छिड्डेइ वा जाव अणुप्पविट्ठा तम्हा सुपइइट्ठिया मे पइण्णा जहा-तं जीवो

गोऽपी दीधा. (तए णं अहं अन्नया कयाहं जेणेव सा अउकुंभी तेणेव  
उवागच्छामि) थोडा दिवसो बाद हुं इसी ते बोधउना नणानी पासो गये  
(तं अयकुंभि उगगलत्थावेमि) ते बोधउना नणाने उधाउये (तं  
अयकुंभि किमिकुंभि पिव पासामि, णो चेव णं तीसे अउकुंभीए  
केइ छिड्डेइ वा, जाव राईइ वा जओ णं ते जीवा बहियारहितो अणुप्पविट्ठा)  
उद्घाटित करतानी साथे न भे ते बोधउना नणाभां कृमिकुलोने लेया-ते नणे  
कीटयुक्त थछ गये हुतो. हुवे आ बात विचार करवा थोप्य छे के न्यारे नणाभां  
कोइ पणु छिन्द्र यावत् कोइ पणु रेणा (तरांड) नछोती के नेथी ते एवे अछारथी  
तेभां प्रविष्ट थछ थके (जइणं तीसे अउकुंभीए होज्जा केइ छिड्डेइ वा जाव  
अणुप्पविट्ठा) ले तेभां छिद्र वगेरे छोट तो आवी बात मानवाभां पणु आवी  
थके तेभां थछने ते नणाभां कृमिओ प्रविष्ट थयां छे. (तो णं अहं सइहेज्जा-जहा  
-अन्नो जीवो तं चेव, जम्हाणं तीसे अउकुंभीए णत्थि केइ छिड्डेइ  
वा जाव अणुप्पविट्ठा तम्हा सुपइइट्ठिया मे पइण्णा जहा तं जीवो तं सरीरं

છિદ્રમિતિ વા યાવદ્ અનુપચિષ્ટાઃ તસ્માત્ સુપ્રતિષ્ઠિતા મે પ્રતિજ્ઞા યથા તજ્જીવઃ સ શરીરં તદેવ ॥ સૂ. ૧૩૭ ॥

‘તણ્ પં પણ્સી રાયા’ इत्यादि—

ટીકા--તતઃ खलु प्रदेशी राजा पुनः केशिकुमारश्रमणम् एषः भवादीत् हे भदन्त ! एषा-भवदुक्ता उपमा=दृष्टान्तः प्रज्ञातः=बुद्धिविशेष-पात, बुद्धिविशेषजन्या अस्ति, किन्तु अनेन-वक्ष्यमाणेन पुनः कारणेन मे-मम मनसि जीवशरीरयो भेदः नोपागच्छति न संगच्छते युक्तियुक्तो नो प्रतिभातीत्यर्थः । तदेव दर्शयति-हे भदन्त ! एवम्-इत्थं खलु अहम् अन्यदा कदाचित्-अन्यस्मिन् कस्मिंश्चित्काले बाह्यायाम् उपस्थानशालायां यावत्-यावत्पदेन-अनेकगणनायकादिभिः सार्द्धं संपरिवृतो विहरामि, ततः तदा खलु मम नगरगुप्तिकाः-नगररक्षकाः-ससाक्षिकं-साक्षिसहितम्, यावत्-यावत्पदेन-सहोढादिविशेषणविशिष्टं चोरम् उपनयन्ति-उपस्थापयन्ति; ततः खलु अहं तं-पूर्वोक्तं चोरं जीवितात् व्यपरोपयामि-प्राणरहितं करोमि, व्यप-रोप्य मारयित्वा अयस्कुम्भ्यां प्रक्षेपयामि-स्वपुरुषैर्निधापयामि, प्रक्षेपितचोरां तामयस्कुम्भीम् अयोमयेन-लोहमयेन पिधानेन पिधापयामि-आच्छादयामि, यावत् यावत्पदेन-अयसा च त्रपुणा च अङ्कयामि, आत्मप्रत्ययिकैः-स्ववि-

तं शरीरं चेव) और इसी कारण मैं भी यह श्रद्धा करता हूँ कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है । जिस कारण से उस अयस्कुंभी में कोई छिद्र आदि नहीं थे, फिर भी उसमें जीव आ गये तो इस कारण से मैं तो यही विश्वास करता हूँ कि मेरा कथन कि जीव शरीर रूप है और शरीर जीवरूप है सुप्रतिष्ठित हैं ।

ટીકાર્થે इस मूलार्थ के जैसा ही है, यहां ‘उवट्ठाणसालाए जाव’ के इस यावत् पद से पूर्वोक्त अनेक गणनायक आदिकों का ग्रहण हुआ है । तथा ‘ससक्खं जाव’ के इस यावत्पद से सहोढादिविशेषणों का ग्रहण

चेव) અને એથી જ મને પણ આ વાતમાં ફરી શ્રદ્ધા છે કે જીવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે. જે કારણથી તે લોખંડના નળામાં છિદ્ર વગેરે નહોતા છતાંએ તેમાં જોવા પ્રવેશ પામ્યા તે કારણથી મને તો એ જ લાગે છે કે જીવ શરીર રૂપ છે. અને શરીર જીવરૂપ છે. એ કથન પર મારો સંપૂર્ણપણે વિશ્વાસ સુપ્રતિષ્ઠિત છે.

આ સૂત્રનો ટીકાર્થ મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. અહીં ‘उवट्ठाणसालाए जाव’ ના આ ‘यावत्’ પદથી પૂર્વોક્ત અनेक गणनायक वगैरेतुं ગ્રહણ થયું છે. તથા ‘ससक्खं जाव’ ના આ यावत्पदથી सहोढादि विशेषणेतुं ગ્રહણ થયું છે. ‘पिहा-

શ્વાસપાત્રૈઃ પુરુષૈઃ રક્ષયામિ, તનઃ સ્વલ્પ ગ્રહમ્ અન્યદા કદાચિત્ યત્રૈવ-યસ્મિન્નેવ સ્થાને સ્થા-સુરક્ષિતા અયસ્કુમ્ભી તથૈવ-તસ્મિન્નેવ સ્થાને ઉપાગચ્છામિ-તદન્તિકં ગચ્છામિ, ગત્વા તામ્ ઉત્ક્ષેપયામિ-ઉદ્ઘાટયામિ । તામયસ્કુમ્ભી કૃમિ-કુમ્ભીમિવ ક્રીટમયીમેવ-કુમ્ભીં પશ્યમિ નૈવ સ્વલ્પ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ અયસ્કુમ્ભ્યાઃ કિઞ્ચિત્-કિમપિ છિદ્રમિતિ વા યાવત્-વિવરં અન્તરમ્ રાજિ-વાનાસ્તિ યતઃ-યસ્માત્-છિદ્રાદેઃ તે કૃમિજીવાઃ વાહ્યાત્-વાહ્યપ્રદેશાત્ અનુ-પ્રવિષ્ટાઃ-અભ્યન્તરે પ્રવિષ્ટા ભવેયુઃ । યદિ-ચેત્ સ્વલ્પ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ, અયસ્કુમ્ભ્યાઃ ભવેત્-સ્યાત્ કિઞ્ચિત્ છિદ્રમ્ યાવદ્ વિવરાદિકં ભવેત્, યતસ્તે જીવાઃ વાહ્યપ્રદેશ અનુપ્રવિષ્ટાઃ સ્યુ ત, સ્વલ્પ અહં શ્રદ્ધધ્યાં-તવ વચને ચિન્વસ્યામ્, અન્યો જીવઃ તદેવ-પૂર્વોક્તમેવ અન્યો જીવઃ અન્યચ્છરીરં નો તજ્જીવઃ સ શરીરમ્ ઇતિ । યસ્માત્-કારણાત્ સ્વલ્પ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ અય-સ્કુમ્ભ્યાઃ નાસ્તિ કિઞ્ચિત્ કિમપિ છિદ્રાદિકં યતસ્તે જીવાઃ વાહ્યપ્રદેશાત્ અનુપ્રવિષ્ટાઃ સ્યુઃ તસ્માત્ મૈ-મમ પ્રતિજ્ઞા-સ્વીકારઃ સુ-પ્રતિષ્ઠિતા-સ્થિરા યથા--તજ્જીવઃ સ શરીરં તદેવ-પૂર્વોક્તમેવ નો અન્યો જીવોઽન્યચ્છરીરમ્ ઇતિ ॥ સૂ. ૧૩૭ ॥

મૂલમ—તદ્ ણં કેલીકુમારસમણે પપ્પસિં રાયં એવં વયાસી ! અત્થિણં તુમે પપ્પસી કયાહ્મ અદ્ધત્તપુવ્વે વા ધમાવિયપુવ્વે વા ? હંતા અત્થિ, સે ણૂણં પપ્પસી ! અદ્ધત્તે સમાણે સવ્વે અગણિપરિણદ્ધ ભવદ્ધ, ? હંતા ભવદ્ધ, અત્થિણં પપ્પસી ! તસ્સ અયસ્સ કેદ્ધિ છિદ્ધેદ્ધ વા જેણં સે

હુઆ હૈ । ‘પિહાવેમિ જાવ’ મેં આયે દુણ્ણુ હસ યાવત્પદ સે ‘દ્રવિત લોહે સે ઔર દ્રવિતરાંગ સે મૈને ઉસે અત્યન્ત કરવા દિયા’ હસ પૂર્વોક્ત પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । હસ સૂત્ર કા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ જવ કિ ઉસ અયસ્કુમ્ભી મેં કિસી બી પ્રકાર કા કોઈ મી છિદ્રાદિ નહીં થા તો ઉસમેં બાહર સે જીવ કૈસે પ્રવિષ્ટ હો ગયે, વહાં તો કેવલ ચોર કા હી વહ્ણુ ગુત શરીર પડા થા અતઃ જીવ ઔર શરીર મિન્ન ૨ નહીં હૈ યહી કથન સમુચિત હૈ । સૂ. ૧૩૭।

‘વેમિ જાવ’ માં આવેલ યાવત્ પદ્ધતી દ્રવિત લોખંડી અને દ્રવિત રાંગાથી મેં તેને અંકિત કરાવી દીધો’ આ પાઠનું ગ્રહણ થયું છે. આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે જ્યારે તે લોખંડના નળામાં કેદપણુ છિદ્ર વગેરે ન હોતા છતાંયે તેમાં બહારથી લવો દેવી રીતે પ્રવેશ પામ્યા. ત્યાં તો ક્ષેપિત ચોરનું મૂત શરીર પડ્યું હતું એથી લવ અને શરીર ભિન્ન નથી, આ વાત સમુચિત છે. । સૂ. ૧૩૭।

જોઈ વહિયાહિંતો અંતો અણુપ્પવિટ્ટે ? ણો ઇણટ્ટે સમટ્ટે એવામેવ  
પણ્ણી ! જીવોઽવિ અપ્પહિહયગઈ પુઢવિં ભિચ્ચા સિલંભિચ્ચા વહિ-  
યાહિંતો અણુપ્પવિસઈ, તં સદ્દહાહિ ણં તુમં પણ્ણી ! તહેવ ।સૂ૦ ૧૩૮।

છાયા—તતઃ સ્વલુ કેશીકુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત્  
અસ્તિ સ્વલુ ત્વયા પ્રદેશિન્ ! કદાચિદ્ અયોધ્માતપૂર્વંવા ધ્માપિતપૂર્વ  
વા ? હન્ત અસ્તિ, સ નૂનં પ્રદેશિન્ ! અયોધ્માતં સત્ સર્વં અગ્નિપરિણતં  
ભવતિ ? હન્ત ભવતિ, અસ્તિ સ્વલુ પ્રદેશિન્ ! તસ્ય અયસઃ કિઞ્ચિત્ છિદ્ર-  
મિતિ વા યેન તત્ જ્યોતિઃ વાહ્યાત્ અન્તર્ગતુપ્રવિષ્ટમ્ નો અયમર્થઃ સમર્થઃ,

‘તણ્ણં કેસીકુમાર સમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ્ણં) હસકે વાદ (કેસીકુમારસમણે પણ્ણિં રાયં એવં  
વયાસી) કેશીકુમાર શ્રમણ ને પ્રદેશી રાજા સે એસા કહા (અત્થિ ણં મંતે !  
પણ્ણી ! કયાઈ અણ્ણંતપુણ્ણે વા ધ્માવિયપુણ્ણે વા) હે પ્રદેશિન્ ! તુમ્હારે  
પાસ એલા લોહા હૈ કિ જિસે તુમને પહિલે કમ્મી અગ્નિ મેં તપાયા હો  
યા કિસી સે તપવાયા હો ? (હંતા અત્થિ) હાં મદન્ત ! હૈ (સે ણૂણં પણ્ણી  
અણ્ણંતે સમાણે સવ્ણે અગ્નિ પરિણ્ણ મવઈ) તો હે પ્રદેશિન્ મેં તુમસે એસા  
પૂછતા હું કિ વહ લોહા જવ અગ્નિમેં તપાયા જાતા હૈ તવ વહ  
સમ્પૂર્ણરૂપસે અગ્નિરૂપ સે પરિણત હો જાતા હૈ ન ? (હંતા ? મવઈ)  
પ્રદેશીને કહા હાં હો જાતા હૈ (અત્થિ ણં પણ્ણી ! તસસ  
અયસસ કેઈં છિટ્ઠેઈ વા જેણં સે જોઈ વહિયાહિંતો અંતો અણુપ્પવિટ્ટે?)

‘તણ્ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ્ણં) ત્યાર પછી (કેસીકુમારસમણે પણ્ણિં રાયં એવં વયાસી)  
કેશીકુમાર શ્રમણે પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું—(અત્થિ ણં મંતે ! પણ્ણી !  
કયાઈ અણ્ણંતપુણ્ણે વા ધ્માવિય પુણ્ણે વા) હે પ્રદેશિન્ ! તમારી પાસે એવું  
પણ્ણ લોખંડ છે. જેને પહેલાં ગમે ત્યારે અગ્નિમાં બીતું કયું કરાવ્યું હોય ? (હંતા  
અત્થિ) હાલ સદંત ! છે. (સે ણૂણં પણ્ણી અણ્ણંતે સમાણે સવ્ણે અગ્નિ  
પરિણ્ણ મવઈ ?) તો હે પ્રદેશિન્ ! હું તમને આમ પ્રશ્ન કરું છું કે તે લોખંડ  
ન્યારે અગ્નિ પર તપાવવામાં આવે છે. ત્યારે તે સંપૂર્ણપણે અગ્નિ રૂપમાં પરિણત  
થઈ જાય છે. (હંતા મવઈ) પ્રદેશીએ ઉત્તરમાં કહ્યું હા, સદંત થઈ જાય છે.  
(અત્થિ ણં પણ્ણી ! તસસ અયસસ કેઈં છિટ્ઠેઈ વા જેણં સે જોઈ વહિયાહિંતો  
અંતો અણુપ્પવિટ્ટે ?) તો શું હે પ્રદેશિન્ ! તે લોખંડમાં છિદ્ર હોય છે કે નથી

શ્વાસપાત્રેઃ પુરુષેઃ રક્ષયમિ, તનઃ સ્વલુ બ્રહ્મ અન્યદા કદાચિત્ત યત્રૈવ-યસ્મિન્નેવ સ્થાને સ્વા-સુરક્ષિતા અયસ્કુસ્મ્ભી તત્રૈવ-તસ્મિન્નેવ સ્થાને ઉપાગચ્છામિ-તદન્તિકં ગચ્છામિ, ગત્વા તામ્ ઉત્ક્ષેપયમિ-ઉદ્ઘાટયમિ । તામયસ્કુસ્મ્ભીં કૃમિ-કુસ્મ્ભીમિવ ક્રીટમયીમેત્ર-કુસ્મ્ભીં પશ્યમિ નૈવ સ્વલુ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ અયસ્કુસ્મ્ભ્યાઃ કિઞ્ચિત્-કિમપિ છિદ્રમિતિ વા યાવત્-વિવરં અન્તરમ્ રાજિ-ર્વાનાસ્તિ યતઃ-યસ્માત્-છિદ્રાદેઃ તે કૃમિજીવાઃ યાહ્યાત્-યાહ્યપ્રદેશાત્ અનુ-પ્રવિષ્ટાઃ-અભ્યન્તરે પ્રવિષ્ટા ભવેયુઃ । યદિ-ચેત્ સ્વલુ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ, અયસ્કુસ્મ્ભ્યાઃ ભવેત્-સ્વાત્ કિઞ્ચિત્ છિદ્રમ્ યાવદ્ વિવરાદિકં ભવેત્, યતસ્તે જીવાઃ યાહ્યપ્રદેશા અનુપ્રવિષ્ટાઃ સ્યુ ત, સ્વલુ અહં શ્રદ્ધધ્યાં-તવ વચને વિશ્વસ્યામ્, અન્યો જીવઃ તદેવ-પૂર્વોક્તમેવ અન્યો જીવઃ અન્યચ્છરીરં નો તજ્જીવઃ સ શરીરમ્ इति । યસ્માત્-કારણાત્ સ્વલુ તસ્યાઃ-સુરક્ષિતાયાઃ અય-સ્કુસ્મ્ભ્યાઃ નાસ્તિ કિઞ્ચિત્ કિમપિ છિદ્રાદિકં યતસ્તે જીવાઃ યાહ્યપ્રદેશાત્ અનુપ્રવિષ્ટાઃ સ્યુઃ તસ્માત્ મે-મમ પ્રતિજ્ઞા-સ્વીકારઃ સુ-પ્રતિષ્ઠિતા-સ્થિરા યથા--તત્તજ્જીવઃ સ શરીરં તદેવ-પૂર્વોક્તમેવ નો અન્યો જીવોઽન્યચ્છરીરમ્ इति ॥ સૂ. ૧૩૭ ॥

મૂળમ—તદ્દેશં કેસીકુમારસમણે પદસિં રાયં એવં વયાસી ! અતિથિયં તુમે પદસી કયાદ્ અદ્યં તપુર્વે વા ધમાવિયપુર્વે વા ? હંતા અતિથિ, સે જૂળં પદસી ! અદ્યંતે સમાણે સર્વે અગ્નિપરિણદ્ ભવદ્, ? હંતા ભવદ્, અતિથિયં પદસી ! તસ્સ અયસ્સ કેદ્ છિદ્દેદ્ વા જેણં સે

હુઆ હૈ । ‘પિદ્ધાવેમિ જાવ’ મેં આયે હુદ્દે હસ યાવત્પદ સે ‘દ્રવિત લોહે સે ઔર દ્રવિતરાંગ સે મૈને ઉસે અત્યન્ત કરવા દિયા’ હસ પૂર્વોક્ત પાઠ કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । હમ સૂત્ર કા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ જબ કિ ઉસ અયસ્કુમ્ભી મેં કિસી બી પ્રકાર કા કોઈ મી છિદ્રાદિ નહીં થા તો ઉસમેં બાહર સે જીવ કૈસે પ્રવિષ્ટ હો ગયે, વ્હાં તો કેવલ ચોર કા હી વહ ગૃત શરીર પડા થા અતઃ જીવ ઔર શરીર ભિન્ન ૨ નહીં હૈ યહી કથન સમુચિત હૈ । સૂ. ૧૩૭।

‘વેમિ જાવ’ માં આવેલ યાવત્ પદથી દ્રવિત લોખંડથી અને દ્રવિત રાંગાથી મેં તેને અંકિત કરાવી દીધો’ આ પાઠનું ગ્રહણ થયું છે. આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે જ્યારે તે લોખંડના નળામાં કોઈપણ છિદ્ર વગેરે ન હોતા છતાંયે તેમાં બહારથી લોખંડેવી રીતે પ્રવેશ પામ્યા. ત્યાં તો ક્ષત ચોરનું મૃત શરીર પડ્યું હતું એથી લોખંડ અને શરીર ભિન્ન નથી, આ વાત સમુચિત છે. । સૂ. ૧૩૭।



જોઈ બહિયાહિંતો અંતો અણુપ્પવિટ્ટે ? ણો ઇણટ્ટે સમટ્ટે એવામેવ  
પણ્ણી ! જીવોઽવિ અપ્પહિહયગઈ પુઢવિં ભિચ્ચા સિલંભિચ્ચા બહિ-  
યાહિંતો અણુપ્પવિસઈ, તં સદ્દહાહિ ણં તુમં પણ્ણી ! તહેવ । સૂ. ૧૩૮।

હાયા—તતઃ સ્વલુ કેશીકુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત્  
અસ્તિ સ્વલુ ત્વયા પ્રદેશિન્ ! કદાચિદ્ અયોધ્માતપૂર્વંવા ધ્માપિતપૂર્વ  
વા ? હન્ત અસ્તિ, સ નૂનં પ્રદેશિન્ ! અયોધ્માતં સત્ સર્વં અગ્નિપરિણતં  
ભવતિ ? હન્ત ભવતિ, અસ્તિ સ્વલુ પ્રદેશિન્ ! તસ્ય અયસઃ કિઞ્ચિત્ છિદ્ર-  
મિતિ વા યેન તત્ જ્યોતિઃ વાહ્યાત્ અન્તરનુપ્રવિષ્ટમ્ નો અયમર્થઃ સમર્થઃ,

‘તણ્ણં કેસીકુમાર સમણે’ इत्यादि ।

સુત્રાર્થ—(તણ્ણં) હસકે બાદ (કેસીકુમારસમણે પણ્ણી રાયં એવં  
વયાસી) કેશીકુમાર શ્રમણ ને પ્રદેશી રાજા સે એસા કહા (અત્થિ ણં મંતે !  
પણ્ણી ! કયાઈ અણ્ણંતપુવ્વે વા ધ્માવિષ્ણુવ્વે વા) હે પ્રદેશિન્ ! તુમ્હારે  
પાસ એસા લોહા હૈં કિ જિસે તુમને પહિલે કમ્મી અગ્નિ મેં તપાયા હો  
યા કિસી સે તપવાયા હો ? (હંતા અત્થિ) હાં મદન્ત ! હૈં (સે ણૂં પણ્ણી  
અણ્ણંતે સમાણે સવ્વે અગ્નિ પરિણ્ણં મવઈ) તો હે પ્રદેશિન્ મેં તુમસે એસા  
પૂછતા હું કિ વહ લોહા જવ અગ્નિમેં તપાયા જાતા હૈં તવ વહ  
સમ્પૂર્ણરૂપસે અગ્નિરૂપ સે પરિણત હો જાતા હૈં ન ? (હંતા ? મવઈ)  
પ્રદેશીને કહા હાં હો જાતા હૈં (અત્થિ ણં પણ્ણી ! તસસ  
અયસસ કેઈં છિદ્ધેઈ વા જેણં સે જોઈ બહિયાહિંતો અંતો અણુપ્પવિટ્ટે ?)

‘તણ્ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સુત્રાર્થ—(તણ્ણં) ત્યાર પછી (કેસીકુમારસમણે પણ્ણી રાયં એવં વયાસી)  
કેશીકુમાર શ્રમણે પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું—(અત્થિ ણં મંતે ! પણ્ણી !  
કયાઈ અણ્ણંતપુવ્વે વા ધ્માવિષ્ણુવ્વે વા) હે પ્રદેશિન્ ! તમારી પાસે એવું  
પણ્ણં લોખંડ છે. જેને પહેલાં ગમે ત્યારે અગ્નિમાં બિતું કર્યું કરાવ્યું હોય ? (હંતા  
અત્થિ) હાલુ ભદંત ! છે. (સે ણૂં પણ્ણી અણ્ણંતે સમાણે સવ્વે અગ્નિ  
પરિણ્ણં મવઈ ?) તો હે પ્રદેશિન્ ! હું તમને આમ પ્રશ્ન કરું છું કે તે લોખંડ  
ત્યારે અગ્નિ પર તપાવવામાં આવે છે. ત્યારે તે સંપૂર્ણપણે અગ્નિ રૂપમાં પરિણત  
થઈ જાય છે. (હંતા મવઈ) પ્રદેશીએ ઉત્તરમાં કહ્યું હા, ભદંત થઈ જાય છે.  
(અત્થિ ણં પણ્ણી ! તસસ અયસસ કેઈં છિદ્ધેઈ વા જેણં સે જોઈ બહિયાહિંતો  
અંતો અણુપ્પવિટ્ટે ?) તો હું હે પ્રદેશિન્ ! તે લોખંડમાં છિદ્ર હોય છે કે નથી



एवमेव प्रदेशिन्। जीवोऽपि अप्रतिहतगतिः पृथिवीं भित्त्वा शैलं भित्त्वा बाह्यात्  
अनुप्रविशति, तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! तथैव ४ ॥ सू० १३८ ॥

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

टीका-ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानम् एवम्-वक्ष्यमाणं  
वचनम् अवादीत् हे प्रदेशिन् ! त्वया कदाचित्-कास्मश्चित्काले अयो=लोहं  
ध्मात्पूर्वं पूर्वं ध्मात्तम्=अग्निना संयोजितम् ? वा अथवा ध्मापितपूर्वं=पूर्वं  
केनचित्पुरुषेण ध्मापितम् अस्ति ? इति प्रश्नः, प्रदेशीप्राह-हन्त अस्ति । केशी  
पृच्छति-हे प्रदेशिन् ! तद्अयः लोहं नूनं निश्चितम् ध्मातं सत् सर्वं अग्नि  
परिणतम्-अग्निस्वरूपतया परिणतं भवति ? प्रदेशीप्राह-हन्त भवति ! पुनः  
केशीपृच्छति हे प्रदेशिन् ! तस्य अयसः-लोहस्य, किञ्चित्-छिद्रमिति वा०  
छिद्रादिकम् अस्ति ? येन-कारणेन तत् ज्योतिः-अग्निः बाह्यात् बहिः-

तो क्या हे प्रदेशिन् ! उस लोहे में कोई छिद्र होता है कि जिससे होकर  
वह अग्नि बाहर से उस के भीतर घुस जाती है ? प्रदेशीने कहा-  
(जो इण्ठे समठ्ठे) हे भदन्त ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् उस लोहे  
में कोई भी छिद्रादिक नहीं है । (एवामेव पएसी ! जीवोऽपि अप्पडि-  
हयगई पुढविं भित्त्वा, सिलं भित्त्वा, बहियारिंतो अणुप्पविसइ, तं सदहा-  
हि णं तुमं पएसी तहेव) इसी तरह-से हे प्रदेशिन् ! जीव भी अप्रति-  
हतगतिवाला है अतः वह पृथिवी को शिला को भेदकर बहिःप्रदेश से  
भीतर में घुस जाता है इस कारण हे प्रदेशिन् ! तुम मेरे वचन पर विश्वास  
करो कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है । ४।

टीकार्थ स्पष्ट है. इस सूत्र का भावार्थ ऐसा है कि जिस प्रकार छिद्रा  
दिसे रहित लोहे के गोले में अग्नि बाहर से उसके प्रत्येक प्रदेश में

તે અગ્નિ બહારથી તેમાં પ્રવિષ્ટ થઇ જાય છે ? પ્રદેશી એ કહ્યું. (જો ઇણઠ્ઠે સમઠ્ઠે)  
હે ભદન્ત ! આ અર્થ સમર્થ નથી એટલે કે તે લોખંડમાં કોઈ પણ છિન્દ્ર વગેરે નથી.  
(એવામેવ પપ્પસી ! જીવોઽપિ અપ્પહિહયગઈ પુઢવિં ભિત્ત્વા બહિયારિંતો અણુપ્પવિસઈ, તં સદહા-  
હિ ણં તુમં પપ્પસી તહેવ) આ પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ એવ  
પણ અપ્રતિહત ગતિયુક્ત હોય છે એથી તે પૃથિવીને, શિલાને છદીને બહારના  
પ્રદેશથી અંદરના પ્રદેશમાં પેસી જાય છે. આ કારણથી હે પ્રદેશિન્ ! તમે  
મારી વાત પર વિશ્વાસ કરો કે એવ લીન્ન છે. અને શરીર લિન્ન છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

टीकार्थ-स्पष्ट ४ आ सूत्रेनो भावार्थ आ प्रमाणे छे के जेभ छिद्र वगैरेથી  
सहित लोખंडમાં અગ્નિ બહારથી તેના હરેકે હરેક પ્રદેશમાં પ્રવિષ્ટ થઇ જાય છે

प्रदेशात् अन्तः—अयसोऽभ्यन्तरप्रदेशो अनुप्रविष्टं स्यात् ? प्रदेशो कथयति नायमर्थः समर्थः नास्ति तत्र छिद्रादिकमित्यर्थः । केशीप्राह—हे प्रदेशिन् ! एव मेव—छिद्रादि विनाऽपि तज्ज्योतिषोऽयोऽभ्यन्तरेऽनुप्रवेशवदेव जीवोऽपि अप्रति-  
हतगतिः अकुण्ठितगतिः पृथिवीं भित्त्वा शिलां—प्रस्तरं भित्त्वा बाह्यात्—बहिः प्रदेशात् अन्तरनुप्रविशति, तत्—तस्मात् कारणात् हे प्रदेशिन् ! त्वं श्रद्धेहि मद्बचने विश्वसिहि तथैव पूर्वोक्तमेव ‘अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरम् नो तज्जीवः स-  
शरीरम्’ इति ॥ सू० १३८ ॥

मूलम्—तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी—अत्थि णं भंते ! एसा पण्णाओ उवमा इमेण पुण मे कारणेणं नो उवागच्छइ, अत्थि णं भंते ! से जहानामए केइपुरिसे तरुणे जाव निउणसिप्पोवगए पभू पंच कंडगं निसिरित्तए ! हंत पभू ! जइ णं भंते ! से चेव पुरिसे बाले जाव मंदविन्नाणे पभू होज्जा पंच कंडगं निसिरित्तए, तो णं अहं सदहेज्जा जहा—अन्नो जीवो तं चेव, जम्हा णं भंते ! से चेव पुरिसे बाले जाव मंदविन्नाणे णो पभू पंच कंडयं निसिरित्तए तम्हा सुप्पइट्ठियो मे पइण्णा जहा तं जीवो तं चेव ॥ सू० १३९ ॥

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशीकुमारश्रमणमेवमवादीत् अस्ति खलु

प्रविष्ट हो जाती है, और इस कारण वह अग्निमय बन जाता है. इसी प्रकार से उस लोहे की टंकी में भी छिद्रादिक के अभाव में भी बाहर से जीव प्रविष्ट हो जाते हैं क्यों कि जीव अकुण्ठित गतिवाला है. इसकी गति कहीं पर भी नहीं रुक सकती है ॥ सू० १३८ ॥

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी) तत्र प्रदेशी राजाने

अने आर्थी ते अग्निमय थछ जय छे. तेमज ते दोणअंउनां नणा (कोठी) मां छिद्र वगेरे न होवां छतांअे गहारथी एवो प्रविष्ट थछ जय छे. डेमके एन अप्रतिहल गतिवाणो छे. ओटवे के एवनी गनि कोछ पणु जग्ग्याओ शक्ती थक्काती नथी. तेनी गति अकुण्ठित छे. ॥ सू० १३८ ॥

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी). त्यादे

મદન્ત ! એવા પ્રજ્ઞાત ઉપમા અનેન પુનઃ પ્રે કારણેન નો ઉવાગચ્છતિ, અસ્તિ  
 સ્વલ્ભ મદન્ત ! સ યથાનામકઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ તરુણઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પો-  
 પગતઃ પ્રભુઃ । પઞ્ચ કાઢકં નિસ્રિષ્ટુમ્ ? હન્ત પ્રભુઃ ! યદિ સ્વલ્ભ મદન્ત ! સ  
 એવ પુરુષો બાલઃ યાવત્ મન્દવિજ્ઞાનઃ પ્રભુર્મવેત્ પઞ્ચકાઢકં નિસ્રિષ્ટુમ્, તદા  
 સ્વલ્ભ અહં શ્રદ્ધ્યાં યથા-અન્યો જીવઃ તદેવ, યસ્માત્ સ્વલ્ભ મદન્ત ! સ

કેશીકુમાર શ્રમણ સે એસા કહા (અત્થિ ણં મંતે ! એસા પળ્લાઓ ઉવમા) હે  
 મદન્ત ! યહ જો આપને ઉપમા દી હૈવહ કેવલ બુદ્ધિવિશેષ સે જન્ય હોને કે  
 કારણ વાસ્તવિક નહીં હૈ (इमेण पुण मे कारणेणं नो उवागच्छइ) क्योंकि जो  
 कारण मैं प्रदर्शित कर रहा हूँ उससे मेरे हृदय में जीव और शरीर का  
 भेद जमता नहीं है । (अत्थि णं मंते ! से जहा नामए केइ पुरिसे तरुणे  
 जाव निउणसिप्पोवगए पभू पंचकंडगं निसिरित्तए) वह कारण ऐसा है-हे  
 मदन्त ! जैसे कोई युवापुरुष हो यावत् वह निपुणशिल्पोपगत हो, तो वह  
 पांचवाणों को एक ही साथ पांच लक्ष्योंको वेधने के लिये छोड़ने में समर्थ  
 हो सकता है न ? (हंता पभू) केशीकुमार श्रमणने कहा--हां हो सकता  
 है । (जइ णं मंते ! से चेव पुरिसे बाले जाव मंदविन्नाणे पभू होज्जा पंच  
 कंडगं निसिरित्तए) अब यदि वही पुरुषबाल, यावत् मन्दविज्ञान वाला  
 अपनी अवव्यापन्न हुआ पांचकाण्डकको-पांचवाणों को छोड़ने के लिये  
 समर्थ हो जावे तो मैं आपके वचनों को श्रद्धा के विषयभूत बनाऊँ और  
 यह मानलूँ कि जीव भिन्न है और शरीर भिन्न है, जीव शरीर रूप नहीं

પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમારશ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું (અત્થિ ણં મંતે ! એસા પળ્લાઓ  
 ઉવમા) હે ભદ્રંત ! આ પ્રમાણે જે તમોએ ઉપમા આપી છે. તે માત્ર બુદ્ધિ(વિશેષ  
 જન્ય હોવાથી વાસ્તવિક નથી. (इमेण पुण मे कारणेणं नो उवागच्छइ) કેમકે  
 જે કારણ હું બતાવી રહ્યો છું તેથી મારા હૃદયમાં જીવ અને શરીરની ભિન્નતાની વાત  
 જામ હી નથી. (अत्थि णं मंते ! से जहानामए केइपुरिसे तरुणे जाव  
 निउणसिप्पोवगए पभू पंच कंडगं निसिरित्तए ते कारण आ प्रमाणे छ. हे  
 भदंत ! જેમ કોઈ યુવક હોય યાવત્ તે નિપુણશિલ્પોપગત હોય, તો તે પાંચ બાણોને  
 એકી સાથે પાંચ લક્ષ્યોનું વેધન કરવામાં સમર્થ થઈ શકેછે?(हंता पभू) કેશીકુમાર  
 શ્રમણે કહ્યું હાહ, થઈ શકે છે. (जइ णं मंते ! से चेव पुरिसे बाले जाव  
 मंदविन्नाणे पभू होज्जा पंच कंडगं निसिरित्तए) હવે જે તે યુવક બાળ, યાવત્  
 મન્દવિજ્ઞાનવાળો પોતાની અવસ્થાપન્ન થયેલ પાંચકાંડકોને-પાંચ બાણોને છોડવામાં  
 સમર્થ થઈ જાય તો હું તમારા વચનોને શ્રદ્ધા યોગ્ય માની શકું તેમ છું અને આ

एव पुरुषो बालः यावत् मन्दविज्ञानो नो प्रयुः पञ्चकाण्डकं नित्सङ्गम् तस्मात्  
सुप्रतिष्ठिता मे प्रतिज्ञा यथा-तज्जीवः तदेव ॥ सू० १३९ ॥

टीકાર્થ—‘તણં પણી રાયા’ इत्यादि ।

ततः—तदनन्तरं खलु प्रदेशी राजा केशिकुमारश्रमणम् एवम्—अनेन  
प्रकारेण अत्रादीत्—हे भदन्त! एषा—इयम् उपमा—सादृश्यम् प्रज्ञातः=बुद्धि-  
विशेषाद् अस्ति न तु वास्तविकी यतः अनेन—वक्ष्यमाणेन पुनः कारणेन  
जीवशरीरयोर्भेदो मे—मम हृदये नोपागच्छति—न संगच्छते न स्वीकार-  
योग्यतामर्हति । तदेव दर्शयति—हे भदन्त ! अस्ति—भवेत् खलु स यथा  
नामकः अनिर्दिष्टनामा कश्चित् पुरुषः कीदृशः ? इत्याह—तरुणः—युवा यावत्  
—यावत्पदेन—“युगवान् बलवान् अल्पातङ्कः स्थिरसंहननः स्थिराग्रहस्तः प्रति-

है, और शरीर जीवरूप नहीं है। अतः हे भदन्त ! जिस कारण से वह  
तरुणादि विशेषणों वाला पुरुष जब बाल यावत् मन्दविज्ञानवाला होता  
है, तब पांच वाणों को छोड़ने के लिये समर्थ नहीं होता है इस कारण  
से मेरी यह प्रतिज्ञा है कि जीव और शरीर एक है, जो जीव है, वही शरीर  
है और जो शरीर है वही जीव है सुप्रतिष्ठित है।

टीકાર્થ—बाद में प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा है  
भदन्त ! आपने जो अभी उपमा देकर जीव और शरीर की पृथक्ता  
प्रकट की है सो जब मैं अपनी इस बात का विचार करता हूँ तब यह  
उनकी पृथक्ता मेरे चित्त में नहीं जमती है, वह बात इस प्रकार  
से है—जैसे कोई एक तरुण पुरुष हो और यावत् वह निपुणशिल्पोपगत  
हो यहाँ यावत् पद से ‘युगवान् बलवान्. अल्पातङ्कः स्थिर संहननः स्थिरा-

વાત પર વિશ્વાસ કરી લઉં કે જીવ ભિન્ન છે અને શરીર ભિન્ન છે. જીવ શરીર  
રૂપ નથી અને શરીર જીવ રૂપ નથી. એથી હું ભદ્રંત ! જે કારણને લીધે તે તરુણ  
વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત યુવક જ્યારે બાળ યાવત મંદવિજ્ઞાનવાળો હોય છે, ત્યારે તે  
પાંચ બાણોને છોડવામાં સમર્થ હોતો નથી. આથી જ મારી જીવ અને શરીર એક છે.  
જે જીવ છે તેજ શરીર છે અને જે શરીર છે તે જ જીવ છે આ પ્રતિજ્ઞા સુપ્રતિષ્ઠિત છે.

टीकार्थ—ત્યાર પછી પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું છે  
ભદ્રંત ! તમોએ જે હમણા ઉપમા વડે જીવ શરીરની પૃથક્તા પ્રકટ કરી છે તે વિષે  
હું જ્યારે મારા મનમાં વિચાર કરું છું ત્યારે આ વાત મારા મનમાં ધરાવર ના પડી  
નથી. કેમકે જેમ કોઈ એક તરુણ પુરુષ થાય અને યાવત તે નિપુણ શિલ્પોગત થાય  
અહીં ‘યાવત’ પદથી ‘યુગવાન, બલવાન, અલ્પાતંકઃ, સ્થિરસંહનનઃ, સ્થિરા-

पूर्णपाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः घननिचितवृत्तवलितस्कन्धः चर्मैष्टकद्रुघण-  
मुष्टिकसमाहतगात्रः उरस्यवलसमन्वागतः तलयमलयुगल-  
बाहुः, लङ्घनप्लवनजवनप्रमर्दनसमर्थः लेकः, दक्षः, पृष्ठः, कुशलः, मेधावी इत्येतेषां पदानां  
वर्णनं, निपुणत्वोपगमः, एतद्व्याख्या सप्तमसूत्रतो बोध्या । एतादृशः  
पुरुषः पञ्चकाण्डकं चाणपञ्चकं युगपत् पञ्चलक्षवेधनाय निसृष्टं-प्रक्षेप्तुं-  
प्रभुः-समर्थो भवेत् ? इति प्रदेशिपश्चः केशीप्राह-हे राजन् ! हन्त ! प्रभुः  
पञ्चकाण्डकं प्रक्षेप्तुं स समर्थो भवेत् ? प्रदेशी कथयति हे भदन्त ! यदि चेत् खलु

ग्रहस्तः, प्रतिपूर्णपाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः, घननिचितवृत्तवलितस्कन्धः,  
चर्मैष्टकद्रुघणमुष्टिकसमाहतः गात्रः, उरस्यवलसमन्वागतः तलयमलयुगल-  
बाहुः, लङ्घनप्लवनजवनप्रमर्दनसमर्थः लेकः, दक्षः, पृष्ठः, कुशलः, मेधावी”  
इस पाठ का संग्रह हुआ है । इन पदों की व्याख्या सातवें सूत्रमें की  
जा चुकी है अतः वहीं से इसे देखना चाहिये. ऐसा वह पुरुष पांच  
वाणों को एक साथ पांचलक्ष्यों को वेधन करने के लिये हे भदन्त !  
छोड़ने में समर्थ हो सकता है न ? केशीकुमार श्रमणने तब कहा हे राजन् !  
ऐसा पूर्वोक्त विशेषणों वाला वह युवा पुरुष एक साथ पांचवाणों को  
छोड़ने में समर्थ हो सकता है परन्तु हे भदन्त ! जब वही पुरुष बाल  
यावत् मन्दविज्ञानवाला होता है तब पांच वाणों को एक साथ पांचलक्ष्यों  
को वेधन करने के लिये छोड़ने में समर्थ नहीं होता है. यदि वह ऐसा  
करने में समर्थ होता तो मैं आपकी इस बातको कि जीव भिन्न है  
और शरीर भिन्न है तथा जीव शरीररूप नहीं है शरीर जीवरूप नहीं

ग्रहस्तः, प्रतिपूर्णपाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः, घननिचितवृत्तवलितस्कन्धः,  
चर्मैष्टकद्रुघणमुष्टिकसमाहतगात्रः, उरस्यवलसमन्वागतः तलयमल-  
युगलबाहुः, लङ्घनप्लवनजवनप्रमर्दनसमर्थः, लेकः, दक्षः, पृष्ठः, कुशलः  
मेधावी” આ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. આ બધાં પદોની વ્યાખ્યા સાતમા સૂત્રમાં  
કરવામાં આવી છે. એથી જિજ્ઞાસુઓ ત્યાંથી બાણી લેવા પ્રયત્ન કરે. એવા તે યુવક  
ને પાંચ બાણોને એકી સાથે એકજ લક્ષ્યપર છોડીને હે ભદ્રંત શુ તે લક્ષ્યવે-  
ધનમાં સફળ થશે ? કેશીકુમાર શ્રમણે આ સાંભળીને કહ્યું કે રાજન્ એવો તે  
પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત તે યુવક એકી સાથે પાંચ બાણોને છોડવામાં સમર્થ થઈ  
શકશે. પણ હે ભદ્રંત ! જ્યારે તે યુવક બાળ યાવત્ મંદ વિજ્ઞાન સંપન્ન હોય છે.  
ત્યારે તે પાંચ બાણો વડે એકી સાથે પાંચ લક્ષ્યોત્તુ વેધન કરવામાં સફળ થશે  
નહિ. જો તે એવું કરી શકતો હોય તો હું તમારી જીવ ભિન્ન છે અને શરીર  
ભિન્ન છે તેમજ જીવ શરીર રૂપ નથી અને શરીર જીવરૂપ નથી,

स एव पुरुषः बालः—यावत् यावत्पदेन—‘अयुगवान्, अवलवान्, सातङ्कः अस्थिर-  
संहननः, अस्थिराग्रहस्तः अप्रतिपूर्णपाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः अधन  
निचितवृत्तवलितस्कन्धः, अचर्मैष्टकद्रुघणमुष्टिकसमाहृतगात्रः उरस्यबलाऽसम-  
न्वागतः अतलयमलयुगलबाहुः लङ्घनप्लवनजवनप्रमर्दनासमर्थः अच्छेकः अद-  
क्षः अपृष्ठः अकुशलः अमेधावी’ इत्येषां संग्रहो बोध्यः, एषामपि व्याख्या  
वैपरीत्येन सप्तमसूत्रतो बोध्या, मन्दविज्ञानः—अल्पकौशलः, एतादृशः स यदि  
पञ्चकाण्डकं निस्रष्टुं—प्रक्षेप्तुं प्रभुः—समर्थो भवेत् तदा खलु अहं श्रद्धायां—  
तव वचनं श्रद्धाविषयीकुर्याम्, यथा—अन्यो जीवः तदेव—पूर्वोक्तमेव—अन्यच्छ-  
रीरम् नो तज्जीवः स शरीरम्, इति, । हे भदन्त ! यस्मात् कारणात्  
खलु यस्तरुणादिविशेषणविशिष्टः स एव यदा बालः यावद् मन्द  
विज्ञानो भवेत् तदा न पञ्चकाण्डकं निस्रष्टुं प्रभुः—समर्थो भवति तस्मात्  
सुप्रतिष्ठिता—समुचिता मे प्रतिज्ञा यथा—तज्जीवः, तदेव—पूर्वोक्तमेव तच्छरीरम्  
नो अन्यो जीवः अन्यःछरीरम् इति ॥ सू० १३९ ॥

है श्रद्धा का विषय कर लेता “बालः यावत्” में यावत् पद से “अयु-  
गवान्, अवलवान्, सातङ्कः अस्थिरसंहननः, अस्थिराग्रहस्तः, अप्रतिपूर्ण-  
पाणिपादपृष्ठान्तरोरुपरिणतः, अधननिचितवृत्तवलितस्कन्धः, अचर्मैष्टकद्रुघण-  
मुष्टिकसमन्वागतगात्रः, उरस्यबलासमन्वागतः, अतलयमलयुगलबाहुः,  
लङ्घनप्लवनजवनप्रमर्दना समर्थः अच्छेकः, अदक्षः, अपृष्ठः, अकुशलः, अमेधावी”  
इनपदों का संग्रह हुआ है इसकी व्याख्या सातमें सूत्र से निषेधार्थपरक  
रूप में करनी चाहिये. तात्पर्य कहने का इस सूत्र का यही है कि उस युवा  
पुरुष का और बाल पुरुष का वही शरीर और वही जीव है उसमें कोई  
भिन्नता नहीं है, भिन्नता केवल उपकरणों में है क्योंकि जो बालपुरुष

आ बात पर विश्वास करी लेत. ‘बालः यावत्’ भां ‘यावत्’ पदथी ‘अयुगवान्,  
अवलवान्, सातङ्कः, अस्थिरसंहननः, अस्थिराग्रहस्तः, अप्रतिपूर्णपाणिपाद-  
पृष्ठान्तरोरुपरिणतः, अधननिचितवृत्तवलितस्कन्धः अचर्मैष्टकद्रुघणमुष्टिक-  
समन्वागतगात्रः, उरस्यबलासमन्वागतः, अतलयमलयुगलबाहुः, लङ्घन-  
प्लवनजवनप्रमर्दनासमर्थः, अच्छेकः अदक्षः, अपृष्ठः अकुशलः, अमेधावी  
“आ पढेनो स’अहु थयो छ. आ पढेनी व्याख्या सातमा सूत्रमांथी निषेधार्थक  
इपे करवी लेधये. मतलब आ प्रमाणे छे के ते युवा पुरुषनो तेमज आल पुरुषनो  
तेज एव छे. तेमां केधे सिन्नता नथी. सिन्नता तो छे इक्षत उपकरणेमां छे.



મૂલમ—તણ ણં કેસીકુમારસમણે પણસિં રાયં એવં વયાસી  
સે જહાનામણ કેહપુરિસે તરુણે જાવ નિઉણસિપ્પોવગણ ણવણં  
ધણુણા નવિયાણ જીવાણ નવણં ઇસુણા પમ્મ પંચકંડગ નિસિરિ-  
ત્તણ ? તા પમ્મ ! સો ચેવ ણં પુરિસે તરુણે જાવ નિઉણસિપ્પોવગણ  
કોરલ્લિણં ધણુણા કોરિલ્લિયાણ જીવાણ કોરિલ્લિણં ઇસુણા પમ્મ  
પંચકંડગં નિસિરિત્તણ ? ણો ઇણદ્દે સમદ્દે । કમ્મહા ? મંતે ! તસ્સ  
પુરિસસ્સ અપજ્જત્તાઈં ઉવગરણાઈં હવંતિ, એવામેવ પણસી !  
સો ચેવ પુરિસે બાલે જાવ સંદવિન્નાણે અપજ્જત્તોવગરણે, ણો પમ્મ પંચ-  
કંડયં નિસિરિત્તણ, તં સદ્દહાહિ ણં તુમં પણસી ! જહા—અન્નો જીવો  
તં ચેવ ૫ ॥ સૂ. ૧૪૦ ॥

જાવા—તતઃ સ્વલુ કેશીકુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત્  
સ યથાનામકઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ તરુણઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગતઃ નવકેન  
ધનુષા નવિકયા જીવયા નવકેન હ્રુણા પ્રમુઃ પઞ્ચકાણ્ડકં નિસ્રણ્ડમ્ ?  
યા વહી તો યુવા હુઆ હૈ. અતઃ ઉમ જીવ મેં ઓર ઉસકે શરીર મેં  
મિન્નતા કૈસે માની જા સકતી હૈ ॥ સૂ. ૧૩૯ ॥

‘તણ ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ ણં કેસીકુમારસમણે પણસિં રાયં એવં વયાસી) ઇસકે  
બાદ કેશીકુમારશ્રમણને (પણસિં રાયં એવં વયાસી) પ્રદેશી રાજા સે ઇસ  
પ્રકાર કહા (સે જહાનામણ કેહ પુરિસે તરુણે જાવ નિઉણસિપ્પોવગણ) હે  
મદન્ત ! જૈસે કોઈ યુવા પુરુષ હો ઓર વહ યાવત્ નિપુણ શિલ્પોપગત હો  
(ણવણં ધણુણા નવિયાણ જીવાણ નવણં ઇસુણા પમ્મ પંચકંડગં નિસિરિત્તણ)

કેમકે બાલ પુરુષ હોતો તેજ યુવા થયો છે. એથી તે છવમાં અને તેના શરીરમાં  
મિન્નતા કેમ કરીને માની શકાય. ॥ સૂ. ૧૩૯ ॥

‘તણ ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ ણં કેસીકુમારસમણે પણસિં રાયં એવં વયાસી) ત્યાર  
પછી કેશી કુમાર શ્રમણે (પણસિં રાયં એવં વયાસી) પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે  
કહ્યું. (સે જહાનામણ કેહ પુરિસે તરુણે જાવ નિઉણસિપ્પોવગણ) હે મદન્ત !  
એમ કોઈ યુવા પુરુષ હોય અને તે યાવત્ નિપુણ શિલ્પોપગત હોય, (ણવણં ધણુણા  
નવિયાણ જીવાણ નવણં ઇસુણા પમ્મ પંચકંડગં નિમિરિત્તણ) એવો તે



હન્ત ! પ્રભુઃ સ એવ સ્વલુ પુરુષઃ તરુગઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગતઃ જિર્ણેન ધનુષા જીર્ણયા જીવયા જીર્ણેન ઇષુળા પ્રભુઃ, પઠ્વ કાણ્ડકં નિસ્રલ્લુમ્ । નાયમર્થ સઃ મર્થઃ । કસ્માત્ ભદન્ત । તસ્ય પુરુષસ્ય અપર્યાપ્તાનિ ઉપકરણાનિ ભવન્તિ, એવમેવ પ્રદેશિન ! સ એવ પુરુષઃ બાલો યાવત્ મન્દવિજ્ઞાનઃ અપર્યાપ્તોપકરણઃ નો પ્રભુઃ પઠ્વકાણ્ડકં નિસ્રલ્લુમ્ તત્ શ્રદ્દેહિ સ્વલુ ત્વં પ્રદેશિન્ ! યથા અન્યો જીવસ્તદેવ ૫ ॥ સૂ. ૧૪૦ ॥

એસા વહ પુરુષ નવીન ધનુષ સે, નવીન પ્રત્યશ્ચા સે, નવીન વાળ સે પાંચ વાળોં કો એક સાથ પાંચ લક્ષ્યોં કા વેધન કરને લિયે છોડને મેં સમર્થ હૈ કયા ? (હંતા પ્રભુ) તવ પ્રદેશીને કહા--હાં, સમર્થ હોના હૈ (સો ચેવળં પુરિસે તરુળે જાવ નિઉળસિઃપોવગળ કોરિલ્લિયણં ધણુળા કોરિલ્લિય જીવાળ, કોરિલ્લિયણં ઇસુળા પમૂ પંચકંડગં નિસિરિત્તળ) પુનઃ કેશીને પૂછા-હે પ્રદેશિન્ ! યદિ વહી યુવા પુરુષ યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગત વના હુઆ જીર્ણ ધનુષ્ય સે, જીર્ણ પ્રત્યઞ્ચાસે જીર્ણ વાળ સે પાંચ વાળોં કો છોડને કે લિયે સમર્થ હો સકતા હૈ કયા ? પ્રદેશીને કહા--(ળો ઇળટ્ટે સમટ્ટે) હે ભદન્ત ! યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । કેશીને પૂછા--(કમ્હા) હે પ્રદેશિન્ ! ઇસમેં કયા કારણ હૈ કિ જિસસે યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । (મંતે ! તસ્સ પુરિસસ્સ અપજ્જત્તાઈં ઉવગરળોઈં હવંતિ) પ્રદેશી રાજાને કહા હે ભદન્ત ! ઉસ પુરુષકે ઉપકરણ અપર્યાપ્ત હૈં (એવામેવ પળસી ! સો ચેવ પુરિસે બાલે જાવ મંદવિન્નાળે અપજ્જત્તોવગરળે, ળો પમૂ પંચકંડયં નિસિરિત્તળ, તં સદ્દહાહિ ળં તુમં પળસી ! જહા-અન્નો જીવો તં ચેવ ૫)

પુરુષ શું નવીન ધનુષ વડે, નવીન બાણ વડે પાંચ બાણોને એકી સાથે પાંચ લક્ષ્યો ના વેધન માટે છોડવામાં સમર્થ હોય છે ? (હંતા પ્રભુ) ત્યારે પ્રદેશિન્ રાજાએ કહ્યું-હાં, સમર્થ હોય છે. (સો ચેવ ળં પુરિસે તરુળે જાવ નિઉળસિપ્પોવગળ કોરિલ્લિયણં ધણુળા કોરિલ્લિયળ જીવાળ, કોરિલ્લિયણં ઇસુળા પમૂ પંચકંડગં નિસિરિત્તળ) ફરી કેશીએ પ્રશ્ન કર્યો કે હે પ્રદેશિન્ ! જો તે યુવા પુરુષ યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગત થઈને છૂણું ધનુષથી, છૂણું પ્રત્યંચાથી, છૂણું બાણથી પાંચ બાણોને છોડવામાં સમર્થ થઈ શકે તેમ છે ? પ્રદેશીએ કહ્યું. (ળો ઇળટ્ટે સમટ્ટે) હે ભદંત ! આ અર્થ સમર્થ નથી. (મંતે ! તસ્સ પુરિસસ્સ અપજ્જત્તાઈં ઉવગરળાઈં હવંતિ) પ્રદેશી રાજાએ કહ્યું હે ભદંત ! તે પુરુષના ઉપકરણો પર્યાપ્તિ નથી. (એવામેવ પળસી ! સો ચેવ પુરિસે બાલે જાવ મંદવિન્નાળે અપજ્જત્તોવગરળે, ળો પમૂ પંચકંડયં નિસિરિત્તળ, તં સદ્દહાહિ ળં તુમં પળસી ! જહા-અન્નો જીવો તં ચેવ ૫) ત્યારે કેશીએ કહ્યું--કે આ પ્રમાણે જ હે પ્રદેશિન્ ! તે પુરુષ

‘તણં કેસીકુમારશ્રમણે’ इत्यादि ।

टीका-ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेक्षितं राजानम् एवमवादीत्-स यथानामकः कश्चित्-कोऽपि पुरुषः-तरुणः यावत्-यावत्पदेन-‘युगवान् बलवान् अल्पातङ्गः स्थिराग्रदस्तः प्रतिपूर्णपाणिपादपृष्ठान्तरोक्षपरिणतः घननिचितवृत्तवलितस्कन्धः चर्मैष्टकद्वयणमुष्टिकसमाहतगात्रः उरस्थचलसमन्वागतः तल्पमलयुगलबाहुः लङ्घनप्लानजवनप्रमर्दनमर्मथः छेकः दक्षः

તથા કેશીને કહા-હસી તરહ સે પ્રદેક્ષિત્ । વહી પુરુષ જવ વાલ યાવત્ મન્દવિજ્ઞાનવાલા હોતા હે તથા વહ અપર્યાપ્ત ઉપકરણવાલા હોતા હે અતઃ પાંચ વાળોં કો પ્રક્ષિપ્ત કરને કે લિયે સ્મર્થ નહીં હોતા હે । હસ કારણ હે પ્રદેક્ષિત ! તુમ શ્રદ્ધા કરો કિ જીવ અન્ય હે ઓર શરીર અન્ન હે જીવ શરીરરૂપ નહીં હે ઓર શરીર જીવરૂપ નહીં હે । ૫ ।

टीकार्थ-तव केशीकुमार श्रमणने प्रदेक्षी राजा से ऐसा कहा-जैसे अनिर्ज्ञात नामा कोई एक पुरुष हो, जो वह तरुण हो यावत्-युगवान् हो, बलवान हो, अल्प आतङ्गवाला हो, स्थिर अग्रहायवाला हो, पाणि, पाद, पृष्ठान्तर एवं उर ये सब जिसके प्रतिपूर्ण हो, और परिणत विवेकशील एवं वयस्क हो. कर्मे दोनों जिसके खूब भरे हुए हों गोल हों, शरीर जिसका चर्मैष्टक आदि से समाहत होने से विशेषरूप में पृष्ठ शारीरिक बल एवं मानसिक बल जिसका बड़ा चढ़ा हो, ताडवृक्ष के जैसे जिसके दोनों बाहू लम्बे हों, लांघने में, उछलने में, कूदने में दौड़ने

ન્યારે બાળ યાવત્ મંદ વિજ્ઞાનવાળો હોય છે ત્યારે તે અપર્યાપ્ત ઉપકરણવાળો હોય છે. એથી જ તે પાંચ બાણોને પ્રક્ષિપ્ત કરવામાં સમર્થ હોતો નથી. આથી હે પ્રદેક્ષિત ! તમે ભારી વાત પર વિશ્વાસ કરો કે શુભ લિન્ન છે અને શરીર લિન્ન છે. શુભ શરીરરૂપ નથી અને શરીર શુભરૂપ નથી. ૧૫

टीकार्थ:-त्यारे केशीकुमार श्रमणे प्रदेक्षी राजाने आ प्रमाणे इहं के-वेम केष्ठ अनिर्ज्ञातनामा केष्ठ एक पुरुष होय, जे तरुण होय यावत्-युगवान् होय, बलवान् होय, अल्पआतङ्गवाणो, स्थिर अग्रदस्तवाणो होय, पाणि (हाथ) पाद (पग) पृष्ठान्तर અને ઉર આ બધા જેના પ્રતિપૂર્ણ હોય અને પરિણત-વિવેક શુક્ત અને વયસ્ક હોય, બન્ને બલાઓ જેના પુષ્ટ હોય, ગોળ હોય, જેતું શરીર ચર્મૈષ્ટક વગેરેથી સમાહત હોવાથી વિશેષરૂપથી પુષ્ટ હોય, જેતું શરીર તેમજ મનની શક્તિ વધારે પરિપુષ્ટ થયેલી હોય. તાડવૃક્ષ જેવા જેના બન્ને હાથો લાંબા હોય, આળંગવામાં ઉછળવામાં, કૂદકાઓ

પ્રથ્ઠઃ કુશલઃ મેઘાવી' इत्येषां पदानां सग्रहः एषां व्याख्या सप्तमसूत्रे कृता । निपुणशिल्पोपगतः-सम्यग्ज्ञानसमन्वितः एतादृशः पुरुषः नवकेन -नूतनेन धनुषा, नविकया-नूतनया जीवया-धनुर्गुणेन चनुर्द्वरिकयेत्यर्थः नवकेन-नूतनेन इषुणा-बाणेन प्रभुः-समर्थः पञ्चकाण्डकं-बाणपञ्चकं युग-पत् पञ्चलक्ष्यवेधनाय निस्रष्टुं-पक्षेप्तुम् ? । प्रदेशीप्राह-हन्त ! प्रभुः समर्थः । केशी कथयति-यदि स एव खलु पुरुषस्तरुणः यावत् निपुणशिल्पोपगतः 'कोरिल्लएणं' इति देशी शब्दो जीर्णार्थकस्तेन जीर्णेन-द्युणस्त्वादितेन धनुषा-बाणेन जीर्णया-प्रत्यञ्चया धनुर्गुणेनेत्यर्थः जीर्णेन इषुणा-बाणेन पञ्चका-ण्डकं-काण्डकपञ्चकं निस्रष्टुं-पक्षेप्तुं प्रभुः-समर्थः स्यात् ? इति केशिमश्रुः, प्रदेशी-उत्तरयति-नायमर्थः समर्थः, केशी कारणं पृच्छति-कस्मात्कारणात्

आदि क्रिया में जो बराबर समर्थ हो, छेक हो, दक्ष हो प्रथ्ठ हो, कुशल हो मेघावी हो और निपुणशिल्पोपगत-सम्यग्ज्ञान समन्वित हो । इन युग-वान् आदि पदों की व्याख्या सातवें सूत्र में की गई है. सो वहीं से जान लेना चाहिये। ऐसा वह पुरुष नवीन धनुष से, नवीन प्रत्यञ्चा से-धनुषकी डोरीसे एवं नवीन बाण से हे प्रदेशिन् क्या बाण पंचक को युगपत् पांच लक्ष्यों का वेधन करने के लिये छोड़ सकता है ? तब प्रदेशीने कहा-हां, भदन्त ! छोड़ सकता है । पुनः केशीने उससे पूछा-यदि वही पुरुष जो कि तरुणादि पूर्वोक्त विशेषणोंवाला प्रकट किया गया है, कोरिल्ल-जीर्ण-द्युण स्वादित ऐसे धनुष से, जीवा-प्रत्यञ्चा से, तथा जीर्ण बाण से बाण पंचक को छोड़ने में समर्थ हो सकता है ? तब प्रदेशीने कहा-हे भदन्त ! ऐसी स्थिति में वह इस प्रकार से करने में समर्थ नहीं हो सकता है. इस

મારવામાં, દોડવામાં વગેરે ક્રિયાઓમાં જે બરાબર સમર્થ હોય, છેક હોય, દક્ષ હોય પ્રથ્ઠ હોય, કુશળ હોય, મેઘાવી હોય અને નિપુણ શિલ્પોપગત-સમ્યક્જ્ઞાનયુક્ત હોય આ યુગવાન્ વગેરે પદોની વ્યાખ્યા સાતમા સૂત્રમાં કરવામાં આવી છે. જિજ્ઞાસુઓએ ત્યાંથી બાણવા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ. એવો તે પુરુષ નવીન ધનુષથી, નવીન પ્રત્ય-ચાથી, ધનુષની દોરીથી અને નવીન બાણથી હે પ્રદેશિન્ ! શું બાણ પંચકને યુગપત્ પાંચ લક્ષ્યોના વેધન માટે છોડી શકશે ! ત્યારે પ્રદેશીએ કહ્યું-હાં ભદંત ! છોડી શકશે. ફરી કેશીએ તેને પ્રશ્ન કરતા કહ્યું-જો તેજ પુરુષ-કે જે તરુણ વગેરે પૂર્વો-ક્ત વિશેષણોવાળો છે, 'કોરિલ્લ'-જીર્ણ-ઉધેધ વડે બવાયેલ ધનુષથી 'જીવા'-પ્રત્ય-ચાથી તેમજ જીર્ણ બાણથી બાણ પંચકોને છોડવામાં સમર્થ થઈ શકે તેમ છે ? ત્યારે પ્રદેશીએ કહ્યું-હે ભદંત ! એવી પરિસ્થિતિમાં તે આ પ્રમાણે કરવામાં સમર્થ થઈ શકશે નહિ. આ પ્રમાણે તેના અસામર્થ્યનું કારણ શું હોઈ શકે !

સ્વલ્લ સોઽર્થો ન સમર્થઃ ? પ્રદેશો માહ-મદન્ત ! તસ્ય-પૂર્વોક્તપુરુષસ્ય ઉપ  
કરણાનિ-ધનુરાદિ સાધનાનિ અપર્યાપ્તાનિ જીર્ણત્વાદસમર્થાનિ ભવન્તિ,  
એવમેવ-ઉક્તપ્રકારેણૈવ હે પ્રદેશિન્ ! સ એવ પુરુષઃ બાલ યાવત-યાવ  
ત્પદેન અયુગવાનિત્યાદીમામનન્તરમૂત્રે સંગૃહીતાનાં પદાનાં સઙ્ગ્રહો બોધ્યઃ,  
તદર્થસ્તુ વૈપરીત્યેન સ્પષ્ટમૂત્રે પ્રતિપાદિત સ્તતોઽવસેયઃ । મન્દવિજ્ઞાનઃ-  
અલ્પવિજ્ઞાનયુક્તઃ અત એવ અપર્યાપ્તો કરણઃ-અપર્યાપ્તમ્-અસમર્થમ્-ઉપકરણમ્  
શરીરેન્દ્રિયબલબુદ્ધ્યાદિરૂપં સાધનં યસ્ય સ તથા, એતાદૃશઃપુરુષઃ પશ્ચકાઢકં  
નિસ્પષ્ટુ-પ્રક્ષેપ્તું નો પ્રમુઃ-સમર્થો ન ભવતિ, તત્-તસ્માત્ કારણાત્ હે  
પ્રદેશિન્ । ત્વં શ્રદ્ધેહિ યથા અન્યો જીવઃ તદેવ-પૂર્વોક્તમેવ અન્યત્ શરીરમ્  
નો તજ્જીવઃ સ શરીરમ્ ॥ સૂ૦ ૧૪૦॥

મૂલમ્—તદ્દર્શનં પદ્મસી રાયા કેસિકુમારસમણં એવં વયાસી-  
અત્થિ ણં મંતે ! એસા પપ્પણાઓ ઉવમા ઇમેણ પુણ કારણેણં નો

પ્રકાર કી ઉનકી અસમર્થતા કા ક્યા કારણ હૈ । તવ પ્રદેશીને ઉત્તર દિયા  
મદન્ત ! ઉસ પૂર્વોક્ત વિશેષણ સમ્પન્ન પુરુષકે ઉપકરણ-ધનુરાદિસાધન  
જીર્ણ હોને કે કારણ અપર્યાપ્ત-અસમર્થ હૈં । અબ પુનઃ કેશીશ્રમણ ઉસસે  
પૂછતે હૈં—હે પ્રદેશિન્ ! યદિ તરુણ પુરુષ યુગવાન્આદિ વિશેષણોં સે રહિત  
હૈ અર્થાત્ બાલ અયુગવાન્ આદિ વિશેષણોં સે નિશિષ્ટ હૈ ઓર શરીર,  
ઇન્દ્રિય, બલ, બુદ્ધિ આદિ રૂપ સાધન ઉસકે અપર્યાપ્ત હૈં, તો ક્યા વહ  
બાળપંચક કો છોડને કે લિયે સમર્થ હો સકતા હૈ? તવ પ્રદેશીને કહા-  
નહીં હો સકતા હૈ । તો હે પ્રદેશિન્ । ઇસસે તુમ્હેં યહી માનના ચાહિયે  
શરીર મિન્ન હૈ ઓર જીવ મિન્ન હૈ શરીર જીવરૂપ નહીં હૈ ઓર જીવ  
શરીરરૂપ નહીં હૈ ॥ સૂ૦ ૧૪૦ ॥

ત્યારે પ્રદેશીએ જવાબ આપતાં કહ્યું—હે ભદ્રંત ! તે પૂર્વોક્ત વિશેષણ યુક્ત  
પુરુષના ઉપકરણો—ધનુષ વગેરે સાધનો—જીર્ણ હોવાથી લક્ષ્યવેધનમાં અસમર્થ  
છે. હવે ફરી કેશીશ્રમણ તેને પ્રશ્ન કરે છે કે હે પ્રદેશિન્ ! જો તે  
તરુણ પુરુષ યુગવાન્ વગેરે વિશેષણોથી રહિત એટલે કે બાળ, અયુગવાન્ વગેરે  
વિશેષણોથી યુક્ત હોય અને શરીર, ઇન્દ્રિય, બળ, બુદ્ધિ વગેરે રૂપ સાધનો તેની  
પાસે અપર્યાપ્ત હોય તો શું તે પાંચ બાણો છોડીને લક્ષ્યવેધન કરી શકશે ? ત્યારે  
પ્રદેશીએ કહ્યું—કે નહિ, તો હે પ્રદેશિન્ ! એથી તમારે આ વાત માની લેવી જોઈએ  
કે શરીર ભિન્ન છે અને જીવ ભિન્ન છે, શરીર જીવરૂપ નથી અને જીવ શરીરરૂપ  
નથી. ॥ સૂ૦ ૧૪૦ ॥

उवागच्छइ अत्थि णं भंते ! से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे जाव  
निउणसिप्पोवगए पभू एगं महं अयभारगं वा तउयभारगं वा  
सीसगभारगं वा परिवहत्तए ? हंता पभू । से चेव णं भंते ! पुरिसे  
जुन्ने जराजज्जरियदेहे सिढिलवलिअतया विणट्ठुगत्ते दंडपरिग्गहियग-  
हत्थे पविरलपरिसडियदंतसेढी आउरे किसिए पिवासिए दुब्बले  
छुहापरिकिलत्ते नो पभू एगं महं अयभारगं वा जाव परिवहत्तए  
जइणं भंते ! सच्चेव पुरिसे जुन्ने जराजज्जरियदेहे जाव परिकिलत्ते  
पभू एगं महं अयभाहं वा जाव परिवहत्तए तो णं सदहेज्जा तहेव,  
जम्हा णं भंते ! से चेव पुरिसे जुन्ने जाव किलत्ते नो पभू एग-  
महं अयभारं वा जाव परिवहत्तए, तम्हा सुपइट्ठिया मे पइण्णा  
तहेव ॥ सू० १४१ ॥

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिकुमारश्रमणमेवमवादीत्—अस्ति  
खलु भदन्त ! एषा प्रज्ञात उपमा अनेन कारणेन नो उपागच्छति, अस्ति  
खलु भदन्त ! स यथानामकः कश्चित् पुरुषः तरुणः यावत् निपुणशिल्पो-

‘तएणं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं पएसी राया) तव प्रदेशी राजाने (केशिकुमारसमणं  
एवं वयासी) केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा (अत्थि णं भंते ! एसा  
पण्णाओ उवमा इमेण कारणेणं नो उवागच्छइ) हे भदन्त ! यह उपमा प्रज्ञा-  
सेजन्य है अतः वास्तविकी नहीं है, क्यों कि जो कारण मैं प्रदर्शित कर  
रहा हूँ उस कारण से मेरे हृदय में जीव और शरीर का भेद नहीं जम

‘तएणं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं पएसी राया) त्वारे प्रदेशी राजाने (केशिकुमारसमणं  
एवं वयासी) केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे डट्ठु—(अत्थि णं भंते ! एसा पण्णा-  
ओ उवमा इमेण पुण कारणेणं नो उवागच्छइ) हे भदन्त ! आ उपमा  
प्रज्ञाथी जन्य छ ओथी वास्तविक नथी. डेमके के कारण हुं जतावी रह्यो छुं तेथी.  
भारा हृदयमा एव अने शरीरनी बिन्नता जामनी गथी. (अत्थिणं भंते ! से जहा  
नामए केइ पुरिसे तरुणे जाव निउणसिप्पोवगए पभू एगं मं अयभारगं

પગતઃ પ્રભુઃ એકં મહાન્તમયોમારકં વા ત્રપુકભારકં વા શીશકભારકં વા પરિવોહુમ્ ? હન્ત પ્રભુઃ । સ એવ સ્વલુ ભદન્ત ! પુરુષઃ જીર્ણઃ જરાજર્જરિત-  
 દેહઃ શિથિલવલિતત્વચાવિનષ્ટગાત્રઃ દણ્ડપરિગૃહીતાગ્રહસ્તઃ પ્રવિરલપરિશ-  
 ઠિતદન્તશ્રેણિઃ આતુરઃ ક્રુશઃ પિપાસિતઃ દુર્બલઃ ક્ષુધાપરિવલાન્તઃ નો પ્રમુરેકં  
 પાતા હૈ (અત્યિળં મંતે ! સે જહાનામણ કેહ પુરિસે તરુણે જાવ નિઝણસિ  
 પ્પોવગણ પમૂણં મહં અયમારગં વા તડયમારગં વા સીસગમારગં વા  
 પરિવહિત્તણ) વહ કારણ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—જૈસે કોઈ એક પુરુષ હો, ઓર  
 વહ યુવા યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગત હો, અર્થાત્ સમ્યગ્જ્ઞાન સમ્પન્ન હો તો  
 એસા વહ પુરુષ વિશાલ લોહે કે ભાર કો. ત્રપુક કે ભાર કો શીશા કે  
 ભાર કો વહન કરને મેં સમર્થ હો સકતા હૈ ન ? તવ કેશીકુમારશ્રમણ  
 ને ડસસે (હંતા, પમૂ) હાં, પ્રદેશિન્ ! એસા વહ પુરુષ ડસ લોહે આદિ  
 કે વિશાલ ભાર કો વહન કરને મેં સમર્થ હો સકતા હૈ. (સે ચેવળં  
 મંતે ! પુરિસે જુન્ને જરાજર્જરિયદેહે સિથિલવલિતત્વચાવિનષ્ટગાત્રે દંડપરિગ-  
 હિયગ્ગહત્યે) અથ પ્રદેશી રાજાને કેશીકુમારશ્રમણ સે ફિર એસા પૂછા-  
 હૈ ભદન્ત ! વહી પુરુષ જવ વૃદ્ધાવસ્થા કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ ઓર જરા-  
 સે જર્જરિત શરીરવાલા હોને કે કારણ શક્તિ સે શિથિલ હો  
 જાતા હૈ, ત્વચા જિસકી ઝુરિયોં સે યુક્ત હો જાતી હૈં ઓર ઇસી સે  
 જિસકી શારીરિક શક્તિ પ્રતિહત હો ચુકી હોતી હૈ, તથા દક્ષિણ હાથ  
 મેં જો દણ્ડા લેકર ચલને લગતા હૈ (પવિરલ પરિસઙ્ગિયદંતસેઢી, આઝરે,

વા તડયમારગં વા સીસગમારગં વા પરિવહિત્તણ) તે કારણ આ પ્રમાણે છે. જેમ  
 કેઇ એક પુરુષ હોય અને તે યુવા યાવત્ નિપુણ શિલ્પોપગત હોય એટલે કે  
 સમ્યક્ જ્ઞાન યુક્ત હોય તો એવો તે પુરુષ વિશાળ લોખંડના ભારને ત્રપુકના ભારને  
 શીશાના ભારને વહન કરવામાં શું સમર્થ થઈ શકે છે ? ત્યારે કેશીકુમાર શ્રમણે તેને  
 (હંતા પમૂ) હાજી, પ્રદેશિન્ એવો તે પુરુષ તે લોખંડ વગેરેના વિશાળ ભારને  
 વહન કરવામાં સમર્થ થઈ શકે છે. (સે ચેવળં મંતે ! પુરિસે જુન્ને જરાજર્જરિય-  
 દેહે સિથિલવલિતત્વચાવિનષ્ટગાત્રે દંડપરિગહિયગ્ગહત્યે ) હવે કેશી કુમારશ્રમણે  
 પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન કર્યો કે હે ભદ્રંત ! તે જ પુરુષ જ્યારે ઘરડો થઈ  
 જાય છે અને વૃદ્ધાવસ્થાને લીધે જર્જરિત શરીરવાળો હોવાથી અશક્ત થઈ જાય છે,  
 આમડી જેની કરચલીઓથી યુક્ત થઈ જાય છે અને એથી જેની શારીરિક  
 શક્તિ પ્રતિહત થઈ જાય છે તેમજ જમણા હાથમાં જે લાકડી ઝાલીને ચાલવા લાગે છે.  
 (પવિરલપરિસઙ્ગિયદંતસેઢી, આઝરે, કિમ્બીણ, પિપાસિણ, દુર્બલે ક્ષુધા-  
 પરિકિલંતે નો પમૂણં મહં અયમારગં વા જાવ પરિવહિત્તણ) જેની દંત

મહાન્તમયોભારકં વા યાવત્ પરિવોહુમ્, યદિ સ્વલુ મદન્ત ! સ એવ પુરુષઃ  
જીર્ણઃ જરાજર્જરિતદેહઃ યાવત્ પરિક્લાન્તઃ પ્રમુઃ એકં મહાન્તમયોભારકં વા  
યાવત્ પરિવોહુમ્. તદા સ્વલુ શ્રદ્ધ્યાં તથૈવ, યસ્માત્ સ્વલુ મદન્ત ! સ  
એવ પુરુષઃ જીર્ણો યાવત્ ક્લાન્તઃ નો પ્રમુરેકં મહાન્તમયોભારં વા યાવત્  
પરિવોહું તસ્માત્ સુપ્રતિષ્ઠતા મે પ્રતિજ્ઞો તથૈવ ॥શ્લુ૦ ૧૪૧॥

કિસીએ, પિવાસિએ, દુબલે, છુહાકિલંતે પમ્મુ એગં મહં અયભારગં વા  
જાવ પરિવહિત્તએ) દાંતોં કી પક્તિ જિસકી વિરલ હો જાતી હૈ, શટિત  
હો જાતી હૈ, તથા કાસ, શ્વાસ આદિ સે જો સર્વદા પીડિત બના રહતા  
હૈ, ઓર હસીસે જો કૃશ એવં અશક્ત બન જોતા હૈ, ઉઠ કરકે પાની પીને  
તક મી શક્તિ જિસસે જાતી રહતી હૈ, જો બિલકુલ શક્તિ રહિત હો  
જાતા હૈ, મુશ્વ સે જો-પીડિત બન જાતા હૈ એસા વહ પુરુષ એક વિશાલ  
લોહે કે માર કો, ત્રપુક કે માર કો યા શીશા કે માર કો વહન કરને  
કે લિયે સમર્થ નહીં રહતા હૈ (જહ્ ણં મંતે ! સચ્ચેવ પુરિસે જુન્ને જરા-  
જજ્જરિયદેહે જાવ પરિકિલંતે પમ્મુ એગં મહં અયભારં વા જાવ પરિવહિત્તએ  
તો ણં સદ્દહેજ્જા તહેવ) યદિ હે મદન્ત ! વહી પુરુષ જીર્ણ હોને પર, જરા  
સે જર્જરિત દેહ હોને પર યાવત્ ક્ષુધા સે પરિક્લાન્ત હોને પર એક વિશાલ  
લોહમાર કો યાવત્ વહન કરને કે લિયે સમર્થ બના રહતાં તો મૈં આપકે હસ  
કથન પર કિ જીવ શરીર સે ભિન્ન હૈ ઓર શરીર જીવ સે ભિન્ન હૈ જીવ  
શરીરરુપ નહીં હૈ, શરીર જીવરુપ નહીં હૈ વિશ્વાસ કર લેતા (જમ્હા ણં

પંક્તિ વિરલ થઈ જાય છે, શટિત થઈ જાય છે, તેમજ કાસ, શ્વાસ વગેરેથી જે  
હંમેશા પીડિત રહે છે અને એથી જે કૃશ અને દુર્બલ થઈ જાય છે, ઉભા થઈને  
પાણી પીવાની પણ જેનામાં તાકાત હોતી નથી જે સાવ અશક્ત થઈ જાય છે, ભૂખથી  
જે પીડિત થઈ જાય છે એવો તે પુરુષ એક મોટા લોખંડના ભારને કે શિશાના  
ભારને વહન કરવામાં સમર્થ થઈ શકતો નથી. (જહ્ ણં મંતે ! સચ્ચેવ પુરિસે  
જુન્ને જરાજજ્જરિયદેહે જાવ પરિકિલંતે પમ્મુ એગં મહં અયભારં વા  
જાવ પરિવહિત્તએ તો ણં સદ્દહેજ્જા તહેવ) તો હે ભદ્રંત ! જે તે પુરુષ ઘરડો  
હોવા છતાં એ ઘડપણથી જર્જરિત શરીરવાળો હોવા છતાં એ યાવત ભૂખથી પરિ-  
ક્રાંત હોવાં છતાંએ એક ભારે લોખંડના ભારને યાવત વહન કરવામાં સમર્થ થઈ  
શકત તો હું તમારા એવ શરીરથી લિન્ન છે અને શરીર એવથી લિન્ન છે, એવ  
શરીર રૂપ નથી અને શરીર એવ રૂપ નથી આ કથન પર વિશ્વાસ કરી લેત.



ટીકા—“તથા પદસી હત્યાદિ—તતઃસ્વલ્પ પ્રદેશી રાજા કેશિકુમાર-  
શ્રમણસ્તુ એવમવાદીત—એવા—ઇયમ્ ઉપમા પ્રજ્ઞાતઃ અસ્તિ અનેન વક્ષ્યમાણેન  
પુનઃ કારણેન નો ઉપાગચ્છતિ—ન સંગચ્છતિ, તદેવાઽઽહ—એવં સ્વલ્પ હે  
મદન્ત ! સ્ત યથાનામકઃ કશ્ચિત્ પુરુષઃ તરુણઃ યાવત્—યાવત્પદેન—અનન્તર-  
સૂત્રે સંગૃહિતાનિ યુગવાન્ બલવાનિત્યાદીનિ પદાનિ સંગૃહીતવ્યાનિ, તદર્થથ  
સસમસૂત્રતો બોધ્યઃ, નિપુણશિલ્પોપગતઃ—સમ્યગ્વિજ્ઞાનસમ્પન્નઃ, एतादृशः પુરુષઃ  
एकं महान्तं—विशालम् अयोभारकम्—लोहभारं त्रयुक्तभारकं—धातुविशेषभारं  
वा शीशकभारकं वा परिवोढुं—नेतुं प्रभुः—समर्थः स्यात् ? इति प्रदेशिप्रश्नः  
केशीश्रमणः कथयति—हन्त !—हे राजन ! प्रभु—समर्थः स्यात् । हे भदन्त !

મંતે ! સે ચેવ પુરિસે જુન્ને જાવ કિલંતે નો પમૂ એમં મહં અયમારં વા  
જાવ પરિવહિત્તણ, તમ્હા સુપઈટ્ટિયા મે પઢણા તહેવ) જિસ કારણ સે હે  
મદન્ત ! વહી પુરુષ જીર્ણ યાવત્ હો જાને પર એક વિશાલ લોહમારકો  
યાવત વહન કરને કે લિયે સમર્થ નહોં હોતા હૈ—ઇસ કારણ સે મેરા યહ  
મન્તવ્ય જીવ ઓર શરીર કે એક હોને કા સુપ્રતિષ્ઠિત હૈ અર્થાત્ વહી  
જીવ ઓર વહી શરીર હૈ, જીવ ભિન્ન નહીં હૈ ઓર શરીર ભિન્ન નહીં  
હૈ એસા મેરા મન્તવ્ય સત્ય હૈ ।

ટીકાર્થ—ઇસ મૂલાર્થ કે જૈસા હી હૈ. ‘તરુણઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પો-  
પગતઃ’ મેં જો યહ યાવત્પદ આયા હૈ. ડસસે અનન્તર સૂત્ર મેં સંગૃહીત યુગ-  
વાન્ બલવાન્ હત્યાદિ પદ યહાં ગૃહીત હુણ હૈ. ઇન પદોં કા અર્થ સત્તમ  
સૂત્રકી ટીકા મેં લિખા જા ચુકા હૈ, અતઃ વહીં સે યહ જાનના ચાહિયે ‘અયમારગ’

(જમ્હાણં મંતે ! સે ચેવ પુરિસે જુન્ને જાવ કિલંતે નો પમૂ એમં મહં  
અયમારં વા જાવ પરિવહિત્તણ, તમ્હા સુપઈટ્ટિયા મે પઢણા તહેવ) જે કાર-  
ણથી હે ભદંત ! તેજ પુરુષ જીર્ણ (ઘરડો) યાવત્ થઈ જવાથી એક વિશાળ લોખં-  
ડના ભારને યાવત્ વહન કરવામાં સમર્થ થઈ શકતો નથી તે કારણથી જ જીવ  
અને શરીર એકજ છે એવી મારી ધારણા સુપ્રતિષ્ઠિત જ છે. એટલે કે જીવ અને  
શરીર બન્ને એકજ છે. જીવ ભિન્ન નથી અને શરીર ભિન્ન નથી આ મારી  
માન્યતા યોગ્યજ છે.

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો ટીકાર્થ મૂલાર્થ જેવો જ છે. ‘તરુણઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પો-  
પગતઃ’માં જે યાવત્ પદ આવેલ છે તેથી બીજી કોઈ જગ્યાએ સંગૃહીત યુગવાન્,  
બળવાન્ વગેરે પદો અહીં સંગૃહીત થયાં છે. આ પદોનો અર્થ સાતમા સૂત્રની  
ટીકામાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યો છે. એથી ત્યાંથી જ બાણવા પ્રયત્ન કરવો જોઈએ.

स एव भारवाहकः पुरुषो जीर्णः—वृद्धोऽस्यां प्राप्तः अत एव जराजर्जरितदेहः—  
 वृद्धावस्थामन्दशरीरशक्तिकः शिथिलवलितत्वचाविनष्टगात्रः—शिथिला अतएव  
 वलिता—वलिपुक्ता त्वचा—वर्म तथा विनष्टगात्रः—प्रतिहतशरीर-  
 सामर्थ्यः दण्डपरिग्रहीताग्रहस्त-अग्रहस्तेन-हस्ताग्रभागेन परिगृहीतः—  
 धारितो दण्डो येन तथा, प्रमिलपरिशदितदन्तश्रेणिः—प्रविरलो—अत्यन्ताल्पा-  
 शटिना च दन्तश्रेणिः—दन्तपर्द्धिः यस्य स तथा, आतुरः कासश्वा-  
 सादिपीडितः, कृशः—अशक्तः, पिपासितः उत्थाय जलं पातुमप्यसमर्थः,  
 दुर्बलः बलहीनः क्षुधापरिक्लान्तः—क्षुधापरिपीडितः, एतादृशः पुरुषः एकं  
 महान्तमयोभारं वा यावत्—‘यावत्’ पदेन—त्रपुकभारं वा शीशकभारं  
 वा परिवोहुं नो प्रभुः—समर्थो न भवति. पुनः प्रदेशी प्राह—भदन्त ! यदि  
 खलु स एव पुरुषो जीर्णः जराजर्जरितः यावत् क्षुधापरिक्लान्तः एतादृशः  
 पुरुषः एकं महान्तमयोभारं वा यावत् शीशकभारं वा परिवोहुं प्रभुः  
 स्यात् तदा खलु अहं श्रद्धयां तथैव—अन्यो जीवः अन्यच्छरीरम् नो  
 तज्जीवः स शरीरम्, इति । अथ पुनः प्रदेशी प्राह—हे भदन्त ! यस्मात्  
 कारणात् खलु स एव पुरुषः जीर्णः क्षुधापरिक्लान्तः एकं महान्तमयो-  
 भारं वा यावत् शीशकभारं वा’ इत्येतत्कारणात् परिवोहुं नो प्रभुः—समर्थो  
 न भवति, तस्मात् कारणात् मे—मम प्रतिज्ञा स्वीकारः, सुप्रतिष्ठिता—स्थिरा,  
 तथैव—तज्जीवः स शरीरम्, नो अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरमिति ॥सू १४१॥

मूलम्—तए णं केसीकुमारसमणे पर्णस रायं एवं वयासी-  
 से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगए णविचाए विहं-

‘वा जात्र परिवहितए’ में आये हुए यावत्पद से ‘तउग भारं वा’ सीसग  
 भारं वा इन पदों का संग्रह हुआ है। इस सूत्र का भावार्थ ऐसा है कि  
 युवादि विशेषणों वाला जो जीव है वही जीव अयुवादि विशेषणों वाला  
 भी है अतः वह वही जीव है और वही उसका शरीर है ये दोनों भिन्न  
 नहीं हैं। यही बात प्रदेशीराजाने इस सूत्र से प्रमाणित की है ॥सू. १४१॥

‘अयभारं वा जात्र परिवहितए’ भां आवेल यावत् पदथी ‘तउगभारं वा  
 सीसगभारं वा’ आ पदोने संग्रह थयो छे. आ सूत्रने तावार्थ आ प्रमाणे  
 छे के युवा वगेरथी युक्त विशेषणवाणे ने एव छे तेज एव अपुवा वगेरे विशे-  
 षण्णोथी पणु संपन्न छे. अर्थ ते तेज एव छे अने तेनुं शरीर पणु तेज छे  
 ओओ भन्ने जुदां जुदां नथी प्रदेशी राजाओ ओज वात आ सूत्रथी प्रमाणित  
 करी छे. ॥सू० १४१॥

गियाए णवएहिं सिकएहिं णवएहिं पच्छियपिंडएहिं पहु एगं महं  
अयभारं जाव परिवहित्तए ? हन्ता पभू । पएसी ? से चेव णं पुरिसे  
तरुणे जाव सिप्पोवगए जुन्नियाए दुव्वलियाए घुणक्खइयाए विहं-  
गियाए जुण्णएहिं दुव्वलएहिं घुणक्खइएहिं सिद्धिलतयापिण्णएहिं  
सिकएहिं जुण्णएहिं दुव्वलएहिं घुणक्खइएहिं पच्छियपिंडएहिं पभू  
एगं महं अयभारं वा जाव परिवहित्तए ? णो इणद्धे समद्धे । कम्हा-  
णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जुण्णाइं उव्वरणाइं भवंति । पएसी ? से  
चेव पुरिसे जुन्ने जाव लुहाकिलंते जुन्नोवगरणे नो पभू एगं महं  
अयभारं वा जाव परिवहित्तए, तं सदहाहि णं तुमं पएसी जहा-  
अन्नो जीवो अन्नं सरीरं ॥सू० १४२॥

छाया-ततःखलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्-स  
यथानामकः कश्चित् पुरुषः तरुणो यावत् शिल्पोपगतः नविकया विहङ्गिकया  
नवकाभ्यां शिक्यकाभ्यां नवकाभ्यां पक्षितपिटकाभ्यां प्रभुः एकं महान्त-  
मयोभारं यावत् परिवोदुम् ? हन्त ? प्रभुः प्रदेशिन ! स एव खलु पुरुषः

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एव वयासी) केशीकुमार  
श्रमणने प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—(से जहानामए केइ पुरिसे तरुणे  
जाव सिप्पोवगए णवियाए विहंगियाए णवएहिं सिकएहिं णवएहिं पच्छिय-  
पिंडएहिं पहु एगं महं अयभारं जाव परिवहित्तए ?) जैसे कोई एक पुरुष  
हो और वह तरुण यावत् शिल्पोपगत हो, ऐसा वह पुरुष नवीन विहंगिका

‘तएणं केसी कुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एव वयासी) त्थार  
यही केशीकुमारश्रमणे प्रदेशी राजने आ प्रमाणे उहुं—(से जहानामए केइ  
पुरिसे तरुणे जाव सिप्पोवगए णवियाए विहंगियाए णवएहिं सिकएहिं,  
णवएहिं पच्छियपिंडएहिं पहु एगं महं अयभारं जाव परिवहित्तए ?) नेम  
गमे ते-डेअ पुरुष डाय अने ते तरुण यावत् शिल्पोपगत डाय, ओवे। ते पुइय

તરુણા યાવત્ શિલ્પોપગતઃ જીર્ણયા દુર્બાલકયા ઘુળસ્વાદિતયા વિહઙ્ગિકયા  
જીર્ણકાભ્યાં દુર્બલકાભ્યાં ઘુળસ્વાદિતાભ્યાં શિથિલત્વચાપિનદ્ધકાભ્યાં શિક્વ  
કાભ્યાં જીર્ણકાભ્યાં દુર્બલિકાભ્યાં ઘુળસ્વાદિતાભ્યાં પક્ષિતપિટકાભ્યાં પ્રમુઃ  
એકં સહાન્તમયોમારં વા યાવત્ પરિવોહુમ્ ? નો અયમર્થઃ સમર્થઃ

સે ભારયષ્ટિકા સે (કાવડ સે), નવીન સિક્વકાઓ સે નવીન પક્ષિતપિટ-  
કાઓ સે એક વિશાલ લોહમાર કો યાવત્ ત્રપુમાર કો અથવા શીશક  
માર કો વહન કરને મેં સમર્થ હોતા હૈ ન? તવ પ્રદેશી રાજાને કહા-  
(હંતા, પમ્) હાં, ભદન્ત ! એસો વહ પુરુષ ઉસે વહન કરને મેં સમર્થ હોતા હૈ.  
(પણી ! સે ચેળં પુરિસે તરુણે જાવ સિપ્પોવગા દુબ્બલિયાણ ઘુળક્વ-  
હયાણ વિહંગિયાણ જુળ્ણાણિં દુબ્બલિણિં, ઘુળક્વહાણિં, સિદ્ધિલતયા પિળ-  
દ્ધાણિં, સિક્કાણિં દુબ્બલિણિં જુળ્ણેણિં ઘુળક્વહાણિં પચ્છિયપિંડાણિં પમ્  
એમં મહં અયમારં વા જાવ પરિવહિત્તાણ) હે પ્રદેશિન્ ! અચ મેં તુમ સે  
એસા પૂછતા હૂં કિ વહી તરુણપુરુષ જો યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગત હૈ જીર્ણ  
દુર્બલ, ઘુન સે સ્વાઈ હુઈ ભારયષ્ટિકા સે, તથા જીર્ણ, દુર્બલ ઓર ઘુન સે  
સ્વાઈ હુઈ તથા શિથિલ ત્વચા સે પિનદ્ધ હુઈ એસી શિક્વકાઓ સે, એવં  
દુર્બલિકા, ઘુળ સ્વાદિતએમો પક્ષિતપિટકાઓ સે એક વિશાલ લોહમાર કો  
અથવા ત્રપુમાર કો યા શીશક માર કો વહન કરને મેં સમર્થ હો  
સકતા હૈ ? પ્રદેશીને કહા-(જો હળદ્રે સમદ્રે) હે ભદન્ત ! યહ અર્થ સમર્થ

નવીન વિહંગિકાથી ભારયષ્ટિકાથી (કાવડથી) નવીન સિક્વકાથી નવીન પક્ષિતપિટકા-  
ઓથી એક વિશાળ લોખંડના ભારને યાવત્ ત્રપુભારને અથવા શીશક ભારને વહન  
કરવામાં શું સમર્થ થઈ શકે છે ? ત્યારે પ્રદેશી રાજાએ કહ્યું-(હંતા, પમ્) હાં 'હ,  
ભદંત ! એવો તે પુરુષ તેને વહન કરવામાં સમર્થ થઈ શકે છે. (પણી ! સે ચેવ  
ળં પુરિસે તરુણે જાવ સિપ્પોવગા, જુન્નિયાણ, દુબ્બલિયાણ ઘુળક્વહયાણ  
વિહંગિયાણ, જુળ્ણાણિં, દુબ્બલિણિં, ઘુળક્વહાણિં, સિદ્ધિલતયા પિળદ્ધાણિં,  
સિક્કાણિં જુળ્ણેણિં દુબ્બલિણિં ઘુળક્વહાણિં પચ્છિયપિંડાણિં પમ્  
મહં અયમારં વા જાવ પરિવહિત્તાણ) હે પ્રદેશિન્ ! હવે તમને હું આમ પ્રશ્ન  
કરું છું કે તે જ તરુણ પુરુષ જે યાવત્ નિપુણ શિલ્પોપગત છે. એણે હુળંળ,  
ઉધમ્ળ ખાદેલી ભારયષ્ટિકાથી (કાવડથી) તેમજ એણે, હુળંળ ઉધમ્ળવટ ખાદેલ તેમજ  
શિથિલ ત્વચાઓથી પિનદ્ધ થયેલ એવી શિક્વકાઓથી અને હુળંલિકા, ઉધમ્ળ ખાદેલ એવી  
પક્ષિતપિટકાઓથી એક મોટા લોખંડના ભારને અથવા ત્રપુભારને કે શીશકભારને વહન  
કરવામાં શું સમર્થ થઈ શકે છે ? પ્રદેશીએ કહ્યું (જો હળદ્રે સમદ્રે) હે ભદંત !

કસ્માત્ ? ભદન્ત ! તસ્ય પુરુષસ્ય જીર્ણાનિ ઉપકરણાનિ ભવન્તિ, પ્રદેશિન્ !  
સ એવ પુરુષઃ જીર્ણો યાવત્ ક્ષુધાપરિક્ષાન્તઃ જીર્ણોપકરણઃ નો પ્રભુઃ, નકં  
મહાન્તમયોભારં વા યાવત્ પરિવોદુમ્, તત્ શ્રદ્ધેદિ સ્વલ્પ ત્વં પ્રદેશિન્ !  
યથા-અન્યો જીવઃ અન્યત્ શરીરમ્ ૬ । ॥મૂ૦ ૧૪૨॥

નહીં હૈ-અર્થાત્ વહી યુવાદિ વિશેષણોં વાળા પુરુષ જીર્ણાદિ વિશેષણોંવાલી  
વિહક્તિકાદિ (કાવડ) દ્વારા વિશાલ લોહભાર કો વહન નહીં કર સકતા હૈ  
કેશીકુમારશ્રમણને પૂછા-(કમ્હા) વહ પેસા કિસ કારણ સે નહીં કર સકતા હૈ  
તબ પ્રદેશીને કહા-(મંતે ! તસ્સ પુરિસસ્મ જુળાઈં ઉવગરણાઈં ભવંતિ) હૈ  
ભદન્ત ! લોહ ભાર આદિ કો વહન કરને કે જો ઉસકે સાધન હૈ-તે જીર્ણ  
હૈ ! (પણ્સી સે ચેવ પુરિસે જુન્ને જાવ છુદ્ધાપરિકિલંતે જુન્નોવગરણે પમ્  
પમ્ મહં અયભારં વા જાવ પરિવહિત્તા-તં સદ્દહાદિ ણં તુમં પણ્સી અન્નો  
જીવો અન્નં સરીરં) પુનઃ કેશી ને પ્રદેશી સે પૂછા-હૈ પ્રદેશિન્ ! યદિ વહી  
પુરુષ જીર્ણ, વૃદ્ધ યાવત્ ૧૪૧વેં સૂત્ર મેં કથિતવિશેષણોંવાલા પમ્ ક્ષુધા  
પરિક્ષાન્ત હો જાતા હૈ વહ જીર્ણોપકરણ વાલા હોને સે-શરીર થલ વૃદ્ધિ  
આદિ ઉપકરણોં કી જીર્ણતાવાલા હોને સે-એક વિશાલ અયોભાર કો યાવત્  
શીશક ભાર કો વહન કરને મેં સમર્થ નહીં હોતા હૈ યુવાવસ્થા ઓર વૃદ્ધા-  
વસ્થા મેં જીવ કી સમાનતા હોને પર ભી ઉપકરણ કે અભાવ સે વૃદ્ધ  
ભાર કો વહન કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હોતા હૈ. ઇસ કારણ હૈ પ્રદેશિન્ !

આ અર્થ સમર્થ નથી. એટલે કે તેજ યુવા વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત પુરુષ જીર્ણ  
વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત વિહંગિક (કાવડ) વગેરે વડ વિશાળ લોખંડના ભારને વહન  
ન કરી શકે તેમ છે. કેશીકુમાર શ્રમણે કહ્યું. (કમ્હા) તે આમ શા કારણથી નહિ  
કરી શકે ? ત્યારે પ્રદેશીએ કહ્યું. (મંતે ! તસ્સ પુરિસસ્મ જુળાઈં ઉવગરણાઈં  
ભવંતિ) હૈ ભદન્ત ! લોખંડના ભાર વગેરેને વહન કરવાના બે સાધનો છે તે જીર્ણ છે.  
(પણ્સી સે ચેવ પુરિસે જુન્ને જાવ છુદ્ધાપરિકિલંતે જુન્નોવગરણે નો પમ્  
પમ્ મહં અયભારં વા જાવ પરિવહિત્તા-તં સદ્દહાદિ ણં તુમં પણ્સી અન્નો  
જીવો અન્નં સરીરં) કરી કેશીએ પ્રદેશીને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન કર્યો કે હૈ પ્રદેશિન્ !  
જો તે જ પુરુષ જીર્ણ વૃદ્ધ યાવત્ ૧૪૧ માં સૂત્રમાં આવેલ વિશેષણોથી સંપન્ન  
હોય ક્ષુધા પરિક્ષાન્ત થઈ બચ છે તો તે જીર્ણોપકરણવાળો હોવાથી-શરીર બળ વૃદ્ધિ  
વગેરે ઉપકરણો જીર્ણ હોવાથી એક વિશાળ લોખંડના ભારને યાવત્ શીશકભારને  
વહન કરવામાં સમર્થ થઈ શકે તેમ નથી. યુવાવસ્થામાં અને વૃદ્ધાવસ્થામાં જીવની  
સમાનતા હોવા છતાં એ ઉપકરણના અભાવે વૃદ્ધ ભારને વહન કરવામાં સમર્થ થઈ

ટીકા-“તદ્દેશ” કેસી કુમારસમણે” ઇત્યાદિ-તતઃ સ્વલુ કેસી કુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજામમ્, એવમવાદીત-સ યથાનામકઃ કશ્ચિત્-કોડ્પિ પુરુષઃ તરુણઃ યાવત્-નિપુણશિલ્પોપગતઃ નવિકયા-નૂતનયા વિહક્લિકયા-મારયષ્ટિકયા-શિક્યાત્રલમ્બનદ્વંડવિશેષરૂપયા નવકાભ્યાં-નવીનાભ્યાં શિક્યકાભ્યાં નવકાભ્યાં-નૂતનાભ્યાં પક્ષિતપિટકાભ્યાં-વંશવેત્રાદિનિર્મિતપાત્રવિશેષાભ્યામ્ એકં મહાન્તમયોમારં વા યાવત્ ત્રપુમારં વા શીશકમારં વા એતાદૃશમયોમારાદિકં પરિવોહું પ્રમુઃ-સમર્થઃ સ્યાત્ ? ઇતિ કેશિપ્રશ્નઃ, પ્રદેશી પ્રાહ-હન્ત ! પ્રમુઃ-સમર્થઃ સ્યાત્ ! કેસીકથયતિ-પ્રદેશિન્ ! સ એવ સ્વલુ પુરુષઃ તરુણઃ યાવત્ નિપુણશિલ્પોપગતઃ, એતાદૃશઃ પુરુષઃ જીર્ણયા દુર્બલિકયા-નિઃસત્ત્વયા ઘુણસ્વાદિતયા-કાષ્ટકીટમક્ષિતયા-વિહક્લિકયા-મારયષ્ટયા તથા-જીર્ણકાભ્યાં-દુર્બલિકાભ્યાં ઘુણસ્વાદિતાભ્યાં શિથિલત્વચ્ચાપિનદ્વકાભ્યાં-શિથિલદવરિકાચદ્વાભ્યાં શિક્યકાભ્યાં, તથા દુર્બલિકાભ્યાં ઘુણસ્વાદિતાભ્યાં પક્ષિતપિટકાભ્યામ્ એકં મહાન્તમયોમારં વા યાવત્ ત્રપુમારં વા શીશકમારં વા પરિવોહું પ્રમુઃ-સમર્થઃ સ્યાત્ ? । પ્રદેશી પ્રાહ-નો અયમર્થઃ-સમર્થઃ-પૂર્વોક્તસાધનૈર્મારો વોહું ન શક્યત ઇત્યર્થઃ । કેસી શ્રમણો હેતુ પૃચ્છતિ-કસ્માત્કારણાત્ ? । પ્રદેશી કથયતિ-હે ભદન્ત ! તસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય તરુણતાદિવિશિષ્ટસ્ય પુરુષસ્ય ઉપકરણાનિ જીર્ણાનિ ભવન્તિ સન્તિ, ઉપકરણાનાં જીર્ણત્વાદિકારણાન્નાયોમારાદિપરિવહનયોગ્યતા, ઇતિભાવઃ । કેસી

તુમ મેરે વચન મેં વિશ્વાસ કરો કિ જીવ અન્ય હૈ ઓર શરીર અન્ય હૈ, વહ જીવરૂપ નહીં હૈ ઓર ન જીવ શરીરરૂપ હૈ.

ટીકાર્થ--સ્પષ્ટ હૈ યહાં જો ‘વિહંગિયાએ, સિક્કાએહિં, પચ્છિયપિંડાએહિં’ યે શબ્દ આયે હૈ વે માર ઉઠાને કે અર્થ મેં આયે હૈ. વંશ, વેત્ર આદિકોં સે નિર્મિત પાત્ર વિશેષકા નામ પક્ષિતપિટક હૈ. તાત્પર્યં ઇસ સૂત્ર કા એસા

શકતો નથી. એથી હે પ્રદેશિન્ ! તમે મારી વાત પર વિશ્વાસ કરો કે એવ અન્ય છે, અને શરીર અન્ય છે, શરીર એવરૂપ નથી અને એવ શરીર રૂપ નથી.

ટીકાર્થ--સ્પષ્ટ ન છે. (‘વિહંગિયાએ, સિક્કાએહિં, પચ્છિયપિંડાએહિં’) એ શબ્દો આવેલ છે. તે માર વહન કરવા માટેના વિશેષ સાધનોના અર્થમાં પ્રયુક્ત કરવામાં આવ્યા છે. વંશ, વેત્ર વગેરેથી નિર્મિતપાત્ર વિશેષણું નામ પક્ષિતપિટક છે. આ સૂત્રનો સંક્ષેપમાં ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે સમર્થ પુરુષ જો ઉપકરણો



માહ-હે પ્રદેશિન્ ! સ એવ પુરુષો યદિ જીર્ણઃ-વૃદ્ધઃ યાવત્ ત્રિચત્વારિ-  
શદધિકૈકશતતમસૂત્રોક્ત વિશેષણવિશિષ્ટઃ, પુનઃ ક્ષુધાપરિક્ષલાન્તઃક્ષુધાગ્નિન્નઃ,  
પતદ્વશઃ પુરુષો, જીર્ણોપકરણઃ શરીરચલવુદ્ધયાદ્યુપકરણરહિતો ભવતિ તદા એકં  
મહાન્તમયોભારં વા યાવત્-શીશકભારં વા પરિવોદુન્ ન પ્રમુઃ-ન સમર્થો  
ભવતિ, તારુણ્યે વાર્ધક્યે ચ જીવસ્ય સમાનત્વેઽપિ ઉપકરણાભાવાન્ન વૃદ્ધો  
ભારં વોદુ સમર્થો ભવતીતિ ભાવઃ । તત્-તસ્માત્ કારણાત્ હે પ્રદેશિન્ !  
ત્વં શ્રદ્ધેહિ-મદ્વચને વિશ્વસિહિ-યથા અન્યો જીવઃ અન્યચ્છરીરમ્ નો  
તજ્જીવઃ સ શરીરમ્, હતિ ૬ । ॥મૂ० ૧૪૨॥

મૂલમ--તણ પાં સે પણસી કેસિકુમારસમણં એવં વયાસી-અત્થિ  
પાં ભંતે ! જાવ નો ઉવાગચ્છહ, એવં ચલુ ભંતે ! જાવ વિહરામિ,  
તણં મમ પગરગુત્તિયા જાવ ચોરં ઉવળેતિ, તણં અહં તં પુરિસં  
જીવંતગં ચેવ તુલેમિ, તુલેત્તા છવિચ્છેયં અકુવ્વમાણે જીવિયાઓ  
વવરોવેમિ મયં તુલેમિ ણોચેવ પાં તસ્સ પુરિસસ્સ જીવંતસ્સ વા તુલિય-  
સ્સ વા મુયસ્સ વા તુલિયસ્સ કેહ આણાત્તે વા નાણત્તે વા ઉમ્મત્તત્તે વા

હૈ કિ સમર્થ પુરુષ ઉપકરણોં કો વલવત્તા મેં લોહે આદિરૂપ ભાર કો ઉઠા  
સકતા હૈ. તથા વહી સમર્થ પુરુષ ઉપકરણોં કો અસમીચીનતા મેં લોહે  
આદિરૂપ ભાર કો નહીં ઉઠા સકતા હૈ, તથા વહી પુરુષ વૃદ્ધાવસ્થાપન્ન  
હોને પર મી અયોભાર કો નહીં ઉઠા સકતા હૈ. અતઃ ઇસસે ઘડી પ્રતીત  
હોતા હૈ કિ જીવ કી સમાનતા હોને પર મી ઉપકરણોં કી અસમાનતા મેં  
ભારવહન નહીં હોતા હૈ- ઇસસે ઘડિ માનનાં ચાહિયે કિ જીવ ભિન્ન  
હૈ ઓર શરીર ભિન્ન હૈ । ૬ ॥ મૂ ૧૪૨ ॥

સશક્ત હોય તો લોખંડ વગેરેના ભારને વહન કરી શકે છે. તથા તેજ સમર્થ પુરુષ  
જો ઉપકરણો અશક્ત અસમીચીન-હોય તો લોખંડ વગેરે રૂપ ભારને વહન કરી  
શકે તેમ નથી. તેમજ તેજ પુરુષ વૃદ્ધાવસ્થાપન્ન હોવાથી લોખંડના ભારને વહન  
કરી શકે તેમ નથી. એથી આ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે જીવની સમાનતા હોવા છતાં  
જો ઉપકરણો (સાધનો)ની અસમાનતાને લીધે ભારતું વહન કરી શકાય તેમ નથી.  
એથી આ વાત માની લેવી જોઈએ કે જીવ ભિન્ન છે અને શરીર ભિન્ન છે । ૬ ॥ ૧૪૨ ॥



तुच्छते वा गुरुयते वा लघुयते वा, जइ णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मुयस्स वा तुलियस्स होजा केइ नाणत्ते वा जाव लघुयते वा तो णं अहं सदहेजा तं चेव, जम्हा णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मुयस्स वा तुलियस्स नत्थि केइ नन्नत्ते वा जाव लघुयते वा तम्हा सुपइट्ठियो मे पइण्णा जहा तं जीवो तं चेव ॥सू० १४३ ॥

छाया-ततः खलु स प्रदेशी केशिकुमारश्रमणमेवमवादीत-अस्ति खलु भदन्त! यावत् नो उपागच्छति, एवं खलु भदन्त! यावद् विहरामि, ततः खलु मम नगरगुप्तिकाः यावत् चोरमुपनयन्ति, ततः खलु अहं तं पुरुषं जीवितकमेव तोलयामि तोलयित्वा छविच्छेदम् अकुर्वाणः जीविताद् व्यपरोप-

‘तए णं से पएसी इत्यादि ।

सूत्रार्थ--(तए णं से पएसी केशिकुमारसमणं एवं वयासी) इसके बाद उस प्रदेशीने केशिकुमारश्रमण से ऐसा कहा--(अत्थि णं भंते ! जाव नो उवागच्छइ) हे भदन्त ! यह उपमा बुद्धि जन्य है अतः वास्तविक नहीं है। मुझे इस वक्ष्यमाण कारण से जीव और शरीर का भेद प्रतीत नहीं होता है (एव खलु भंते ! जाव विहरामि) वह कारण इस प्रकार से है--एक दिन की बात है कि मैं गणनायक आदिकों के साथ बाह्य उपस्थानशाला में बैठा हुआ था। (तएणं मम नगरगुप्तिया जाव चोरं उवणेति) इतने में मेरे नगररक्षक साक्षियुक्त आदि विशेषण संपन्न किसी एक चोर को पकड़ कर ले आए (तए णं अहं तं पुरिसं जीवितगं चेव तुळेमि)।

‘तएणं से पएसी’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ--तए णं से पएसी केशिकुमारसमणं एवं वयासी) तब पक्षी ते प्रदेशी राजाके देशी कुमार श्रमणने आ प्रमाणे कथुं। (अत्थि णं भंते ! जाव नो उवागच्छइ) हे भदन्त ! आ उपमा बुद्धि जन्य छि ओथी वास्तविक नहीं। वक्ष्यमाण कारणथी एव अने शरीरनी सिन्नता भारा मनमां जमती नथी। (एवं खलु भंते ! जाव विहरामि) ते कारण आ प्रमाणे छि--ओक द्विसनी बात छि डे हुं गणनायक वगेरे नी साथे बाह्य उपस्थानशाला (जहारनी क्येरी)मां भेडा डतो। (तएणं मम नगरगुप्तिया जाव चोरं उवणेति) ते वणते भारा नगररक्षके साक्षियुक्त वगेरे विशेषणथी संपन्न केछ ओक चोरने पकडी लाव्या। (तएणं अहं तं पुरिसं

યામિ મૃતં તોલયામિ ને ચૈવ खलु तस्य पुरुषस्य जीवतो वा तोलितस्य मृत-  
 स्य वा तोलितस्य किञ्चित् नानात्वं वा उन्मात्रत्वं वा तुच्छत्वं वा गुरुत्वं  
 वा लघुत्वं वा, यदि खलु भदन्त ! तस्य पुरुषस्य जीवतो वा तोलितस्य  
 मृतस्य वा तोलितस्य भवेत् किञ्चित् नानात्वं वा यावत् लघुत्वं वा तदा  
 खलु अहं श्रद्धयां तदेव, यस्मात् खलु भदन्त ! तस्य पुरुषस्य जीवतो वा  
 उसे मैंने जीवित ही तोला (तुलेत्ता छविच्छेयं अकुण्वमाणे जीवियाओ  
 ववरोवेमि, मयं तुलेमि) तोल कर फिर मैंने उसे अंग भंग किये बिना  
 जीवन से रहित कर दिया और फिर मरे हुए उसे तोला (णो चैव णं  
 तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स केइ नाणत्ते  
 वा उम्मत्तत्ते वा तुच्छत्ते वा गुरुयत्ते वा लघुयत्ते वा) तब जीविततुले हुए  
 उसमें और मरे तुले हुए उसमें मुझे किसी भी तरह की न्यूनाधिकता  
 नहीं दिखाई दी. न उस में भार बढ़ा न वह उसका भार कम हुआ न उसमें गुरुता  
 आई न उसमें लघुता आई. (जइ णं भंते! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स  
 मयस्स वा तुलियस्स वा होज्जा केइ नाणत्ते वा जाव लघुयत्ते वा) हे भदन्त!  
 जीविततुले हुए और मरे तुले हुए उस पुरुष में यदि कोई न्यूनाधिकता  
 हो जाती यावत् लघुता हो जाती (तो णं अहं सदहेज्जा तं चैव) तो मैं श्रद्धा कर लेता  
 कि जीव अन्य है, और शरीर अन्य है वह जीव शरीर नहीं है. वह शरीर जीव नहीं है.

जीवितगं चैव तुलेमि) में अवितावस्थाभां ज तेतुं वणन कथुं. (तुलेत्ता छविच्छेयं  
 अकुण्वमाणे जीवियाओ ववरोवेमि, मयं तुलेमि) तोलीने पછી મેં તેને  
 અંગ ભંગ ક્યાં વગર જ જીવન રહિત બનાવી દીધો અને મર્યા પછી  
 ફરી તેતું મેં વળન કરાવ્યું. (ણો ચૈવ ણં તસ્સ પુરિસસ્સ જીવંતસ્સ વાં તુલિ-  
 યસ્સ મયસ્સ વા તુલિયસ્સ કેइ નાણત્તે વા ઉમ્મત્તત્તે વા તુચ્છત્તે વા  
 ગુરુયત્તે વા લઘુયત્તે વા) ત્યારે જીવતાં વળન કરાયેલા તેમાં અને મૃત્યુ પામ્યા  
 પછી વળન કરાયેલા તેમાં મને કોઈ પણ બાતની ન્યૂનાધિકતા લાગી નહીં, તેમાં ભાર  
 વધારે પણ થયો નહીં, અને તેમાંથી ભાર ઓછો પણ થયો નહીં.  
 તેમાં શુદ્ધતા આવી નથી તેમ તેમાં લઘુતા પણ આવી નથી.  
 (જइ णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स  
 वा होज्जा केइ नाणत्ते वा जाव लघुयत्ते वा) हे भदन्त ! जीवितवस्थाभां  
 કરેલા વળનમાં અને મૃતાવસ્થાવામાં કરેલા તે ચોરના વળનમાં જો કોઈ પણ બાતની  
 ન્યૂનાધિકતા થઈ બાત યાવત્ લઘુતા થઈ બાત. (તો ણં અહં સદહેજ્જા તં ચૈવ)

તોલિતસ્ય મૃતસ્ય વા તોલિતસ્ય નાસિ કિઞ્ચિત્ નાનાત્વં વા યાવત્ લઘુ  
કત્વં વા । તસ્માત્ સુપ્રતિષ્ઠિતા મે પ્રતિજ્ઞા યથા-તજ્જીવઃ તદેવ ॥મુ० ૧૪૩॥

ટીકા-‘તણે પં સે પણસી’ इत्यादि ततः तदनन्तरं खलु स प्रदेशी राजा केशी-  
कुमारश्रमणम्, एवमवादीत हे भदन्त! अस्ति खलु यावत् यात्पदेन ‘एषा प्रज्ञा-  
तउपमा अनेन पुनः वक्ष्यमाणेन कारणेन’ इत्येषां पदानां सङ्ग्रहः एतद्वि-वरणं पूर्वं  
तर (१४०) चत्वारिंशदधिकैशशततमसूत्रे कृतम्, नो उपाग  
च्छति-जीवशरीरयोः परस्परं भेदो मे-मम मनसि न संगच्छते । तदे

जम्हा णं भंते ! तस्स पुरिसस्स जीवंतस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स  
नत्थि केइ नन्नत्थे वा जाव लहुयस्सो वा, तम्हा सुपइड्डिया मे पइण्णा जहा-  
तं जीवो तं चेव) जिस कारण हे भदन्त ! जीते हुए तोले गये उस  
पुरुष में और मरे हुए तोले गये उसी पुरुष में जब कोई भिन्नता-  
न्यूनाधिकता यावत् लघुता में नहीं देखता हूं-उस कारण से मेरा यह  
मन्तव्य कि वही पूर्वोक्त जीव है और वही शरीर है, न अन्य जीव है,  
और न अन्य शरीर है सुस्थिर है ।

टीकार्थ--केशीकुमार श्रमण का जीव शरीर भिन्नता-विषयक कथन  
सुनकर प्रदेशी राजाने उनसे इस प्रकार कहा-हे भदन्त ! आपने जो यह  
उपमा जीव शरीर की भिन्नता प्रकट करने के लिये प्रकट की है वह  
केवल उपमामात्र है-बुद्धिजन्य होने से वास्तविक नहीं है. अतः जो बात

तो હું આ વાત પર શ્રદ્ધા કરી શકત કે જીવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે. તે જીવ શરીર  
નથી અને શરીર જીવ નથી. (જમ્હા ણં મંતે ! તસ્સ પુરિસસ્સ જીવં-  
તસ્સ વા તુલિયસ્સ મયસ્સ વા તુલિયસ્સ નત્થિ કેઈ નન્નત્થે વા જાવ  
લહુયસ્સો વા, તમ્હા સુપઈડ્ડિયા મે પઈણ્ણા જહા, તં જીવો તં ચેવ) જેથી હું  
ભદંત ! જીવીતાવસ્થામાં વળન કરાયેલ તે પુરુષમાં અને મૃતાવસ્થામાં વળન કરાયેલ  
તેજ પુરુષમાં બ્યારે કોઈ પણ જાતની ભિન્નતા-ન્યૂનતાધિકતા યાવત્ લઘુતા મારા  
ધ્યાનમાં આવતી નથી તેથી મારી એવી માન્યતા છે કે જે જીવ છે તેજ શરીર છે.  
જીવ અન્ય નથી તેમજ શરીર પણ અન્ય નથી.

ટીકાર્થ--કેશી કુમારશ્રમણનું જીવ શરીર ભિન્નતા સંબંધી કથન સાંભળીને  
પ્રદેશી રાજાએ તેમને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હું ભદંત ! તમે જીવ અને શરીરની  
ભિન્નતા સ્પષ્ટ કરવા માટે જે ઉપમા આપી છે તે માત્ર ઉપમા જ છે. તે બુદ્ધિ-

વાઽઽહ-एवं खलु हे भदन्त ! यावत्-यावत्पदेन 'वाह्यायामुपस्थानशाला  
यामनेकगणनायक-दण्डनायक-राजेश्वर-तलवर-माडम्बिक-कौटुम्बिकेभ्य  
श्रेष्ठि-सेनापति-सार्थवाह-मन्त्रि-महामन्त्रि गणक-दौवारिकामात्य-चेट  
पीठमर्दनगरनिगमदूतसन्धिपालैः सार्द्धं संपरिवृतः' इत्येषां पदानां सङ्गो  
बोधः, एषा व्याख्या पट्विंशदधिकशततमसूत्रे गता । विहरामि-विह्वामि,

मैं कह रहा हूं उससे इन दोनों की अभिन्नता ही प्रकट होती है, यह  
वात इस प्रकार से है-मैं एक दिन गणनायक आदिकों के साथ अपनी  
वाह्य उपस्थान शाला में बैठा हुआ था. नगर रक्षक एक चोर को पकड़-  
कर मेरे समक्ष लाये-मैंने उसे पहिले तो जीवितावस्था में तोला, बाद में  
उसे मार कर तोला. तोलने पर उसके भार में कुछ भी न्यूनाधिकता नहीं  
आई. अंतः इससे मैं इसी निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि उस चोर का वही  
जीव है और वही शरीर है. न जीव अन्य है आर न शरीर अन्य है। यहाँ  
'जाव नो उवागच्छइ' में जो यावत्पद आया है उससे 'एषा प्रज्ञात उपमा,  
अनेन पुनः वक्ष्यमाणकारणेन' इस पाठका संग्रह हुआ है। इनका विवरण  
१३८वें सूत्र में किया जा चुका है। 'जाव विहरामि' में आये हुए यावत्पद  
से 'वाह्यायामुपस्थानशालाया अनेक गणनायक-दण्डनायक, राजेश्वर, तलवर,  
माडम्बिकेभ्य-श्रेष्ठि-सेनापति-सार्थवाह-मन्त्रि-महामन्त्रि गणक-दौवारिका  
मात्य-चेट-पीठमर्दनगर-निगम-दूतसन्धिपालैः सार्द्धं संपरिवृतः' इस पाठका

अन्य હોવાથી અવાસ્તવિક જ છે. એથી જે વાત હું કહું છું તેથી એઓ જાનેની  
અભિન્નતા જ પ્રકટ થાય છે. એ વાત આ પ્રમાણે છે. હું એક દિવસ ગણનાયક  
વગેરેની સાથે મારી બાહ્ય ઉપસ્થાનશાળામાં બેઠો હતો ત્યાં નગરરક્ષકો એક ચોરને  
પકડીને મારી સામે લાવ્યા. મેં પહેલાં તેનું જીવતાં જ વજન કર્યું. ત્યાર પછી  
તેને મારીને પછી તેનું વજન કર્યું. તો તેના વજનમાં કોઈ પણ બદલાવ નથી.  
અધિકતા જણાઈ નહિ. એથી હું આ નિષ્કર્ષ પર આવ્યો છું કે તે ચોરનો જીવ છે  
શરીર છે. અને શરીર છે તેજ જીવ છે જીવ અન્ય નથી અને શરીર અન્ય નથી અહીં  
'જાવ નો ઉવાગચ્છઈ' માં જે યાવત્ પદ આવેલ છે તેથી (એષા પ્રજ્ઞાતઉપમા,  
અનેન પુનઃ વક્ષ્યમાણકારણેન' આ પાઠનો સંગ્રહ થયો છે. આનું સ્પષ્ટીકરણ  
૧૩૮ માં સૂત્ર કરવામાં આવ્યું છે. (વાહ્યાયામુપસ્થાનશાલાયાં અનેકગણ  
નાયક-દણ્ડનાયક, રાજેશ્વર, તલવર માડવિક, કૌટુમ્બિકેભ્ય, શ્રેષ્ઠિ-  
સેનાપતિ-સાર્થવાહ-મન્ત્રિ-મહામન્ત્રિ ગણક-દૌવારિકામાત્ય-ચેટ પીઠ મર્દ

ततः-तदा खलु मम नगरगुप्तिकाः-नगररक्षकाः ससाक्ष्यं-साक्षियुक्तं यथा  
तथा यावत्-सहोदादिविशेषणविशिष्टं चौरमुपयन्ति-मत्समीपे समान-  
यन्ति, ततः खलु अहं तं चौरं पुरुषं जीवितकमेव तोलयामि, तोलयित्वा  
छविच्छेदम्-अङ्गादिभङ्गम् अकुर्वाणः अकुर्वन्नेव जीविताद् व्यपरोपयामि-  
मारयामि, मारयित्वा पुनस्तं मृतं तोलयामि, नैव च खलु तस्य मारित  
चौरपुरुषस्य जीवतःसतः तोलितस्य वा-अथवा मृतस्य च तोलितस्य किञ्चित्-  
किमपि नानात्वं-न्यूनाधिकत्वं पश्यामि, नानात्वस्य रूपं दर्शयति-उन्मात्रत्वं-  
भाराधिक्यं, वा-अथवा, तुच्छत्वं-भाराल्पत्वं वा गुरुकत्वं-गुरुता वा, लघु-  
कत्वं-लघुता वा, यदि खलु हे भदन्त ! तस्य पुरुषस्य जीवतो वा तोलितस्य  
मृतस्य वा तोलितस्य किञ्चित् नानात्वं यावत् लघुकत्वं वा भवेत्, तदा  
खलु अहं श्रद्धयां तदेव-अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरम्, नो तज्जीवः स शरीरम्  
इति । हे भदन्त ! यस्मात् कारणात् खलु तस्य पुरुषस्य जीवतो वा  
तोलितस्य मृतस्य वा तोलितस्य नास्ति किञ्चिद् नानात्वं लघुकत्वं  
वा, तस्मात् मे सुप्रतिष्ठिता-सुस्थिरा प्रतिज्ञा यथा तज्जीवः, तदेव-पूर्वा-  
क्तमेव-तज्जीवः स शरीरम्, नो अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरम्, इति ॥सू० १४३॥

मूलम्--तए णं केसीकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-  
अत्थि णं पएसी ! तुमे कयाइ वत्थी धंतपुठ्वे वा धमावियपुठ्वे वा ?  
हंता अत्थि । अत्थि णं पएसी ! तस्स वत्थिस्स पुण्णस्स वा  
तुलियस्स अपुण्णस्स वा तुलियस्स केइ नाणत्ते वा जाव लघुयत्ते वा  
णोइणट्ठे समट्ठे एवामेव पएसी ! जीयस्स अगुरुलहुयत्तं पडुच्च जीवं  
तस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स नत्थि केइ नाणत्ते वा जाव  
लहुयत्ते वा, तं सदहाहि णं तुमं पएसी ! तं चेव ७ ॥ सू० १४४ ॥

संग्रह हुआ है इन पदों की व्याख्या १३५वें सूत्र में की जा चुकी है। 'जाव चौरं  
उवणेति' में ससाक्षी सहोदादि विशेषणोंका यावत् पदसे ग्रहण हुआ है ॥सू. १४३॥

-नगर-निगम दूतसंघिपालैः सार्धं संपरिवृत्तः" आ पाठेनो संग्रहं थये छ.  
आ पठेनी व्याख्या १३५ भां सूत्रभां क्त्वाभां आवी छ। 'जाव चौरं उवणेति'  
भां ससाक्षी-सहोदादि विशेषणानुं यावत् पदथी ग्रहणुं थयुं छ. ॥सू० १४३॥

छाया—ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्  
अस्ति खलु प्रदेशिन् ! तव कदाचिद् वस्तिः ध्मातपूर्वे ध्मापितपूर्वो वा ?  
हन्त अस्ति । अस्ति खलु प्रदेशिन् ! तस्य वस्तेः पूर्णस्य वा तोलितस्य  
अपूर्णस्य वा तोलितस्य किञ्चित् नानात्वं वा यावत् लघुकत्वं वा ? ।  
नायमर्थः समर्थः । एवमेव प्रदेशिन जीवस्यागुरुलघुकत्वं प्रतीत्य जीवतो

‘तए णं से केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ— तए णं से केसीकुमारसमणे पएस्सि रायं एवं वयासी)  
इसके बाद उन केशीकुमारश्रमणने प्रदेशी राजा से इस प्रकार कहा—  
(अत्थि णं पएसी ! तुमे कयाइ वत्थी धंतपुण्वे वा धमावियपुण्वे वा ?)  
हे प्रदेशिन् ! तुमने कभी भस्त्रिका को वायु से पूरित की है, या किसी  
से करवाई है ? (हन्ता अत्थि) तब प्रदेशीने कहा—हां, भदन्त ! की है और  
कराई है। (अत्थि णं पएसी ! तस्स वत्थिस्स पुण्णस्स वा तुलियस्स अपु-  
ण्णस्स वा तुलियस्स केइ नाणत्ते वा जाव लहुयत्ते वा) पुनः केशीकुमार-  
श्रमणने उससे कहा—हे प्रदेशिन् ! जब तुमने उस भस्त्रिका को वायु से  
पूरित करके तोला तब, और वायु से अपूरितावस्था में तोला तब उसमें तुम्हें  
कुछ न्यूनाधिकता यावत् लघुता दृष्टिगत हुई ? प्रदेशीने कहा—(णो इण्ठे  
समंठे) हे भदन्त ! यह अर्थ समर्थ नहीं है—अर्थात् उसमें न्यूनाधिकता यावत्  
लघुता कुछ भी दृष्टिगत नहीं हुई है (एवामेव पएसी जीवस्स अगुरुलहु-

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं केसीकुमारसमणे पएस्सि रायं एवं वयासी) त्थार  
पछी ते केशीकुमारश्रमणे प्रदेशी राजाने आ प्रभाण्ठे क्खुं—(अत्थि णं पएसी !  
तुमे कयाइ वत्थी धंतपुण्वे वा धमावियपुण्वे वा ?) हे प्रदेशिन् ! तमे केई  
पण्ण द्विसे लस्त्रिका (धमण्ठे) मां उवा लरी छे, के केईनी पासेथी ए रावडावी छे ?  
(हन्ता अत्थि) त्थारे प्रदेशी राजाने क्खुं, हां लदन्त ! उवा लरी छे अने लराव-  
डावी छे, (अत्थि णं पएसी ! तस्स वत्थिस्स पुण्णस्स वा तुलियस्स अपुण्णस्स  
वा तुलियस्स केइ नाणत्ते वा जाव लहुयत्ते वा) इरी केशीकुमारश्रमणे तेने  
क्खुं—हे प्रदेशिन् ! त्थारे तमे ते धमण्ठुं उवा लरीने वज्जन क्खुं अने पछी उवा  
भहार डाढीने तेनुं वज्जन क्खुं त्थारे तमने मां कंईक न्यूनाधिकता यावत् लघुता  
जण्णुं ? प्रदेशीने क्खुं (णो इण्ठे समंठे) हे लदन्त ! आ अर्थ समर्थ नथी-  
अट्ठे के न्यूनाधिकता यावत् लघुता कंई पण्ण जण्णुं नहि (एवामेव पएसी



वा तोलितस्य मृतस्य वा तोलितस्य नास्ति किञ्चित् नानात्वं वा यावत् लघुकत्वं वा, तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! तदेव ७।सू० १४४॥

टीका—“तए णं केसी कुमारसमणे” इत्यादि—ततः खलु केशीकुमार-  
श्रमणः प्रदेशिनं राजानम् एवमवादीत्—हे प्रदेशिन् ! तत् कदाचित्—अस्मिन्-  
श्रितकाले चस्मिन्—हस्मिन्—चर्नपुटरुमन्त्रिका ध्मानपूर्वः—पूर्वः ध्मातः—वायुभिः  
पूरितः, वा—अथवा ध्मापितपूर्वः—पूर्वकेनापि ध्मापितः—वायुभिः पूर्णः कारितः  
इति केशिप्रश्नः, तत्र प्रदेशी प्राह—हन्त ! अस्ति । पुनः केशी पृच्छति  
हे प्रदेशिन् ! तस्य वस्तेः पूर्णस्य वायुभृतस्य तोलितस्य, वा—अथवा अपू-  
र्णस्य—वायुभिरपूरितस्य वा तोलितस्य मृतः किञ्चित् किमपि नानात्वं यावत्  
लघुकत्वं वा अस्ति ? इति केशिप्रश्नः प्रदेशी प्राह—नायमर्थः समर्थः—  
नानात्वसद्भावरूपोऽर्थो न विद्यते । केशी कथयति—एवमेव हे प्रदेशिन् !  
जीवस्य अगुरुलघुकत्वं—गुरुलघुत्वगहितत्वं प्रतीत्य—आश्रित्य जीवतो वा  
तोलितस्य मृतस्य वा तोलितस्य नास्ति किञ्चित् नानात्वं वा यावत् लघु-  
कत्वं वा, तत् तस्मात् कारणात् हे प्रदेशिन् ! त्वं श्रद्धेहि मद्बचने श्रद्धां कुरु,  
तदेव—यथा—नो तज्जीवः स शरीरम्, अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरमिति, ।सू. १४४॥

यत्तं पडुच्च जीवंतस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स नत्थि केइ नाणंत्ते  
वा जाव लहुयत्ते वा, तं सद्दहाहि णं तुमं पएमी तं चेव ७) तो इसी प्रकार  
से हे प्रदेशिन् ! जीव के अगुरुलघुत्व रहितपने का प्रतीन करके जीवित  
अवस्था में तोले गये बाद में मृत अवस्था में तोले गये उस चोर के  
शरीर में कुछ भी नानात्व अथवा लघुत्व नहीं है । इस कारण हे प्रदेशिन् !  
तुम मेरे वचन में श्रद्धा करो कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है ।

टीकार्थ इसका स्पष्ट है ॥ सू० १४४ ॥

जीवस्स अगुरुलहुयत्तं पडुच्च जीवंतस्स वा तुलियस्स मयस्स वा तुलियस्स  
नत्थि केइ नाणंत्ते वा जाव लहुयत्ते वा, तं सद्दहाहि णं तुमं पएमी तं  
चेव ७) तो आ प्रमाणे हे प्रदेशिन् ! लुवना अगुरुलघुत्व शुण्णेन—शुद्धत्वलघुत्व  
रहितावस्थाने सामे राणीने लुवितावस्थाभां करायेला ते चोरना वज्जनभां अने भूता-  
वस्थाभां करायेला ते चोरना वज्जनभां केअ पणु जतनुं नानात्व के लघुत्व नहीं  
अथी हे प्रदेशिन् ! तमे मारी आ वात पर विश्वास करी दो के लुव अन्य छि  
अने शरीर अन्य छि आ सूत्रनो टीकार्थ स्पष्ट न छि ॥ १४४॥



મૂલમ્—તણ ણં પણસા રાયા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી  
—અત્થિ ણં મંતે! એસા જાવ નો ઉવાગચ્છઈ, એવં ચલ્લ મંતે! અહં  
અન્નયા જાવ ચોરં ઉવણેતિ, તણં અહં તં પુરિસં સવ્વઓ સમંતા  
સમભિલોએમિ, નો ચેવ ણં તત્થ જીવં પાસામિ, તણં અહં તં પુરિસં  
દુહા ફાલિયં કરેમિ કરિત્તો સવ્વઓ સમંતા સમભિલોએમિ, નો  
ચેવ ણં તત્થ જીવં પાસામિ, એવં તિહા ચડહા સંચેજ્જહા ફાલિયં  
કરેમિ, નો ચેવ ણં તત્થ જીવં પાસામિ, જઈ ણં મંતે! અહં તંસિ  
પુરિસંસિ દુહાવા તિહા વા ચડહા વા સંચેજ્જહા વા ફાલિયંસિ જીવં  
પાસેજ્જા, તો ણં અહં સદ્ધેજ્જા તં ચેવ, જમ્હા ણં મંતે! અહં તંસિ  
દુહા વા તિહા વા ચડહા વા સંચિજ્જહા વા ફાલિયંસિ જીવં ન પાસામિ  
તમ્હા સુપઈટ્ઠિયા મે પડ્ડણા, જહા-તં જીવોતં સરોરં તં ચેવ ।સૂ, ૧૪૫।

છાયા—તતઃ ચલ્લ પ્રદેશી રાજા કેશિનં કુમારશ્રમણમેવમવાદીત-  
અસ્તિ ચલ્લ મદન્ત! એસા યાવદ્ નો ઉવાગચ્છતિ, એવં ચલ્લ મદન્ત ।

‘તણ ણં પણસી રાયા’ इत्यादि ।

મત્રાર્થ—(તણ ણં પણસી રાયા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી) इसके  
बाद प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(अत्थि णं मंते ! एसा  
जाव नो उवागच्छई) हे भदन्त ! यह उपमा बुद्धिजन्य होने से वास्तविक नहीं  
है इस वक्ष्यमाण कारण से मुझे जीव और शरीर का भेद प्रतीत नहीं  
होता है, वह वक्ष्यमाण कारण (एवं मंते ! ) हे भदन्त ! इस प्रकार से है

‘तणं पणसी राया’ इत्यादि ।

સત્રાર્થ—(તણ ણં પણસી રાયા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી)  
ત્યાર પછી પ્રદેશી રાજાએ કેશીકુમાર શ્રમણને આ પ્રમાણે કહ્યું. (અત્થિ ણં મંતે !  
એસા જાવ નો ઉવાગચ્છઈ) હે ભદન્ત ! આ ઉપમા બુદ્ધિ પ્રેરિત હોવાથી વાસ્ત-  
વિક નથી. આ નિમ્ન કારણથી મારા મનમાં છવ અને શરીરની ભિન્નતાની વાત  
જામતી નથી. (એવં મંતે) હે ભદન્ત ! તે આ પ્રમાણે છે. (અહં અન્નયા જાવ

अहमन्यदा यावत् चोरमुपनयन्ति, ततः खलु अहं तं पुरुषं सर्वतः समन्तात्  
समभिलोके नैव खलु तत्र जीवं पश्यामि, ततः खलु अहं तं पुरुषं द्विधा स्फा-  
टितं करोमि, कृन्वा सर्वतः समन्तात् समभिलोके. न चैव खलु तत्र जीव  
पश्यामि, एवं त्रिधा चतुर्धा संख्येयथा स्फाटितं करोमि न चैव तत्र जीवं  
पश्यामि, यदि खलु भदन्त ! अहं तस्मिन् पुरुषे द्विधा वा त्रिधा वा चतुर्धा वा

(अहं अन्नया जाव चोर उवणेति) मैं एक दिन १३५वें सूत्र में कथित  
अनेक गणनायक आदिकों के साथ उपस्थानशाला में बैठा हुआ था वहां  
पर मेरे नगर रक्षक मुसकिया बन्धन से बांधकर एक चोर को लाया  
(तए णं अहं तं पुरिसं सव्वओ समंता समभिलोएमि) मैंने उस पुरुष को  
मस्तक से लेकर चरणपर्यन्त अच्छी तरह से देखा (नो चेव णं तत्थ जीवं  
पासामि) परन्तु मुझे वहां पर जीव देखने में नहीं आया (तए णं अहं  
तं पुरिसं दुहा फालियं करेमि) इसके बाद मैंने उस चोर के दो  
टुकड़े कर दिये. (करित्ता सव्वओ समंता समभिलोएमि) दो टुकड़े करने  
के बाद फिर मैंने उसका अच्छी तरह से सब ओर से निरीक्षण किया  
(नो चेव णं तत्थ जीवं पासामि) परन्तु फिर भी वहां पर मुझे जीव  
देखने में नहीं आया (एवं तिहा, चउहा, संखेज्जहा फालियं करेमि-नो चेव णं  
तत्थ जीवं पासामि) तदनन्तर मैंने उसके तीन टुकड़े किये, चार टुकड़े  
किये, यावत् संख्यात (सैंकडे) टुकड़े किये परन्तु फिर भी वहां मुझे जीव  
नहीं दिखा (जह णं भंते ! अहं तंसि पुरिसंसि दुहा वा तिहा वा चउहा

(चोरं उवणेति) हुं ओक द्विसे १३५ भा सूत्रमां कथित घण्टा गणु नायकेवगेहे-  
नी साथे भाह्य उपस्थान शाणानां जेठो हुतो. त्यां भासा नगररक्षके ओक चोरने  
मुश्केटाट भांधीने भारी साथे लाव्या. (तए णं अहं तं पुरिसं सव्वओ समंता  
समभिलोएमि) भें ते पुरुषने मस्तकथी भांडीने पग संधी सारी रीते ज्येथो.  
(नो चेव णं तत्थ जीवं पासामि) पणु भने तेमां एव देखाथो नही. (तए णं  
अहं तं पुरिसं दुहा फालियं करेमि) त्थार पछी भें ते चोर पुरुषना जे ककडा  
करी नाप्प्या. (करित्ता सव्वओ समंता समभिलोएमि) जे ककडाओ करीने पछी  
भें तेनु सारी रीते निरीक्षणु क्युं. (नो चेव णं तत्थ जीवं पासामि) पणु भने  
त्यां एव देखाथो नही. (एवं तिहा, चउहा, संखेज्जहा फालियं करेमि-नो  
चेव णं तत्थ जीवं पासामि) त्थार पछी भें तेना त्रणु ककडा क्यो, चार ककडा क्यो  
यावत् संख्यात (सैंकडे) ककडा क्यो पणु छतां ओ त्यां भने एव देखाथो नही.

સંખ્યેયથા વા સ્ફાટિતે જીવં પશ્યેયં, તદા સ્વલુ અહં શ્રદ્ધ્યાં તદેવ,  
યસ્માત્ સ્વલુ ભદન્ત ! અહં તસ્મિન્ દ્વિધા વા ત્રિધા વા ચતુર્થાં વા સંખ્યે-  
યથા વા સ્ફાટિતે જીવં ન પશ્યામિ, તસ્માત્ સુપ્રતિષ્ઠિતા મે પ્રતિજ્ઞા યથા-  
તજ્જીવઃ સ શરીરં તદેવ । ॥મૂ. ૧૪૫॥

ટીકા--‘તદ્ ગં પદસી રાયા’ ઇત્યાદિ-તતઃ સ્વલુ પ્રદેશી રાજા કેશિનં  
કુમારશ્રમણ્ય, એવમવાદીત-હે ભદન્ત ! અસ્તિ સ્વલુ એવા ઇયમ્ યાવત્-યાવ-  
ત્પદેન-‘પ્રજ્ઞાત ઉપમા, અનેન પુનઃ કારણેન’ ઇત્યેવાં પદાના સંગ્રહઃ, પ્રજ્ઞતઃ-  
બુદ્ધિવિશેષાદ્ ઉપમાઽસ્તિ, કિન્તુ અનેન વક્ષ્યમાણેન કારણેન ભવદુક્તો  
જીવશરીરભેદો નો ઉપાગચ્છતિ, -ન સંગચ્છતે । તત્કારણં દર્શયિતુમુપક-  
મતે-એવં સ્વલુ હે ભદન્ત ! એવં-વક્ષ્યમાણરીત્યા અહમ્ અન્યદા-અન્યમ્મિન  
કાલે યાવત્-યાવત્પદેન-વાહ્યાયામુપસ્થાનશાલાયાં ષટ્ત્રિંશદધિકૈકશતનમ-  
સૂત્રોક્તાનેકગણનાયકાદિપદાદારભ્ય ‘અવકોટકવન્ધનચઢે’ ઇતિ પર્યન્ત-  
પાઠોક્તવિશેષણવિશિષ્ટં ચોરમુપનયન્તિ, તતઃ સ્વલુ અહં તં પુરુષં સર્વતઃ-  
ઓપાદમસ્તકં, સમન્તાત્ સાક્ષોપાક્તં સમભિલોકે સમ્યગ્ આભિમુખ્યેન પશ્યા-  
મિ કિન્તુ તત્ર-તસ્મિન્-ચોરે જીવં નૈવ પશ્યામિ, તતઃ સ્વલુ અહં ત-ચોરં  
દ્વિધા-દ્વિચ્છંડં સ્ફાટિત-વિદારિતં કરોમિ કૃત્વા સર્વતઃ સમન્તાત્ સમભિચોકે,

વા સંસ્વેજ્જહા વા ફાલિયંસિ જીવં પાસેજ્ઞા તો ગં અહં સદ્દેજ્ઞા તં ચેવ)  
અતઃ યદિ ભદન્ત ! મુક્તે ઉસ પુરુષ કં દો, તોન ચાર, અથવા સંખ્યાન  
દુઠ્ઠે કરને પર ઉસકા જીવ દિલ્લના તો મૈં આપકે ઇસ કથન પર વિશ્વાસ  
કર લેતા કિ જીવ અન્ય હૈ ઓર શરીર અન્ય હૈ. જીવ શરીરરુપ નહીં  
હૈ, શરીર જીવરુપ નહીં હૈ (જમ્હા ગં ભંતે ! અહં તેસિં દુહા વા તિહા વા  
ચઢહા વા સંસ્વિજ્જહા વા ફાલિયંસિ જીવં ન પાસામિ-તમ્હા સુપદ્દિયા મે  
પડ્ઢના-જહા તં જીવો તં સરીરં તં ચેવ) જિસ કારણ સે હૈ ભદન્ત ! મૈંને

(જમ્હા ગં ભંતે ! અહં તેસિં પુરિસંસિ દુહા વા તિહા વા ચઢહા વા સંસ્વેજ્જહા વા  
ફાલિયંસિ જીવં પાસેજ્ઞા તો ગં અહં સદ્દેજ્ઞા તં ચેવ) એથી જો લદંત !  
મમે તે પુરુષના જે ત્રણ ત્યાર અથવા સંખ્યાત કકડાઓ કરવાથી તે નો એવ જોવામાં આવ્યો હોત  
તો હું તમારા આ કથન પર વિશ્વાસ કરી લેત કે એવ અન્ય છે. અને શરીર અન્ય છે. એવ  
શરીરરુપ નથી અને શરીર એવરુપ નથી. (જમ્હા ગં ભંતે ! અહં તેસિં દુહા વા  
તિહા વા ચઢહા વા સંસ્વિજ્જહા વા, ફાલિયંસિ જીવં ન પાસામિ-તમ્હા સુપદ્દિ-  
દિયા મે પડ્ઢના જહા તં જીવો તં સરીરં તં ચેવ) જે કારણથી હે લદંત ! મૈં

કિન્તુ તત્રા જીવં નૈવ સ્વલુ પશ્યામિ-અનેન પ્રકારેણ ત્રિધા-ત્રિચ્ચલ્લં સ્ફાટિતં, ચતુર્ધા-ચતુઃચ્ચલ્લં સ્ફાટિતં સંખ્યેયધા-સંખ્યાતચ્ચલ્લં સ્ફાટિતં કરોમિ, કિન્તુ તત્ર તસ્મિન્ દ્વિત્રચતુઃસંખ્યેયધા સ્ફાટિતે ચોરે જીવં નૈવ પશ્યામિ, હે ભદન્ત! યદિ સ્વલુ અહં તસ્મિન્-ચોરપુરુષે દ્વિધા વા ત્રિધા વા ચતુર્ધા વા સંખ્યેયધા વા સ્ફાટિતે જીવં પશ્યેયં તદા-જીવદર્શને સ્વલુ અહં શ્રદ્ધ્યાં ભવતોક્તે વિશ્વ-સ્યામ્ તદેવ-નો તજ્જીવઃ સ શરીરમ્ અન્યો જીવોઽન્યચ્ચરીરમ્, હિતિ, યસ્માત્ સ્વલુ હે ભદન્ત! અહં તસ્મિન્ ચોરે દ્વિધા વા ત્રિધા વા ચતુર્ધા વા સંખ્યે-યધા વા સ્ફાટિતે જીવં ન પશ્યામિ, તસ્માત્-જીવાદર્શનકારણાત્ મે-મમ પ્રતિજ્ઞા-સ્વીકારઃ, સુપતિષ્ઠિતા-સુસ્થિરા યથા--તજ્જીવઃ સ શરીરં તદેવ--નો અન્યો જીવોઽન્યચ્ચરીરમિતિ । ॥ મૂ. ૧૪૫ ॥

મૂ.૫-તણ ણં કેસિકુતારસનગે પણસિ રાયં એવં વયાસી-મૂઢતાણ ણં તુમં પણસી તાઓ કઢ્ઢહારાઓ, ! કે ણં ભંતે કઢ્ઢહારણ ? પણસી! સે જહાણામણ કેંડપુરિસો વણત્થી વણોવજીવી વણગવેસણયાણ જોડં ચ જોડંભાયણં ચ ગહાય કઢ્ઢાણં અડવિં અણપવિટ્ઠા, તણ ણં તે પુરિસા તીસે અગામિયાણ અડવીણ-કિંચિદેસં અણપત્તા સમાણા ણં પુરિસં એવં વયાસી-અમ્હે ણં દેવાણપ્પિયા! કઢ્ઢાણં અડવિં પવિસામો, એત્તો ણં તુમં જોડંભાયણાઓ જોડં ગહાય અમ્હ અસણં સાહેજ્ઞાસિ, અહ તં જોડંભાયણે જોડં વિજ્ઞવેજ્ઞા એત્તો ણં તુમં કઢ્ઢાઓ જોડં ગહાય

उसके दो तीन चार अथवा संख्यात डुकडे कर देने पर भी जीव नहीं देखा उस कारण से मेरा मन्तव्य कि जीव शरीररूप है और शरीर जीवरूप है. जीव भिन्न नहीं है, शरीर भिन्न नहीं है सुस्थिर है ।

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥ મૂ. ૧૪૫ ॥

તેનાં એ ત્રણ ચાર અથવા સંખ્યાત કડકાઓ, કયા પછી પણ એવ બોલે નહિ તે તે કારણથી મારી એવ શરીરરૂપ છે અને શરીર એવરૂપ છે, એવ ભિન્ન નથી અને શરીર ભિન્ન નથી એવી માન્યતા સુસ્થિર છે.

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ જ છે. ॥ મૂ. ૧૪૫ ॥

अम्हं असणं साहेजासित्ति कट्टु कट्टाणं अडविं अणुपविट्ठा । तए णं  
से पुरिसे तओ मुहुत्तंतराओ तेसिं पुरिसाणं असणं साहेमित्ति कट्टु  
जेणेव जोइभायणे तेणेव उवागच्छइ जोइभायणे जोइं विज्झायमेव  
पासइ, तएणं मे पुरिसे जेणेव से कट्टे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छिता  
तं कट्टुं सव्वओ समंता समभिलोएइ नो चेव णं तत्थ जोइं पासइ,  
तए णं से पुरिसे परियरं बंधइ फरसुं गिण्हइ न कट्टु दुहा फालियं  
करेइ सव्वओ समंता समभिलोएइ नो चेव णं तत्थ जोइं पासइ  
एवं जाव संखेज्जहा फालियं करेइ सव्वओ समंता समभिलोएइ  
नो चेव णं तत्थ जोइं पासइ, तए णं से पुरिसे तसि दुहा फालिए  
वा जाव संखेज्जहा फालिए वा जोइं अपासमाणे भंते तंते परितंते  
निव्विण्णे समाणे फरसुं एगते एडेइ, परियरं मुयइ एवं वयासी-  
अहो! मए तेसिं पुरिसाणं असणे नो साहिएत्ति कट्टु ओहयमण-  
सकप्पे चिता सोगसागरसंपविट्ठे करयंलपल्लंथमुहे अट्टज्झाणोवगए  
भमिगयदिट्ठिए झियायइ तए णं ते पुरिसा कट्टाइं छिंदति जेणेव से  
पुरिसे तेणेव उवागच्छंति, तं पुरिसं ओहमयणसंकप्प जाव झियायमाण  
पासंति एवं वयासी-किं णं तुमं देवाणुप्पिया! ओहयमणसंकप्पे जाव  
झियायसि? तए णं से पुरिसे एव वयासी-तुज्झं णं देवाणुप्पिया!  
कट्टा णं अडविं अणुपविसमाणा मम एवं वयासी-अम्हे णं देवाणु-  
प्पिया! कट्टाणं अडविं जाव अणुपविट्ठा, तए णं अहं तत्तो मुहुत्तंत-  
राओ तुज्झं असणं साहेमित्ति जेणेव जोइभायणे जाव झियामि, तए णं

तेसि पुरिसाणं एगे पुरिसे छेए दक्खे पत्तट्टे जाव उवएसलद्धे ते पुरिसे  
 एवं वयासी-गच्छह णं तुज्झे देवाण्णपिया ! पहाया कयबलिकम्मा  
 जाव हव्वमागच्छेह जा णं अहं असणं साहेमिच्छि कट्टु परिहरं बंधइ  
 फरसुं गिण्हइ सरं करेइ सरेण अरणिं महइ जोइं पाडेइ जोइं संघु-  
 वखेइ तेसिं पुरिसाणं अमणं साहेइ, तए णं ते पुरिसा पहाया कय-  
 बलिकम्मा जाव पोयच्छित्ता जेणेव से पुरिसे तेणेव उवागच्छन्ति,  
 तए णं से पुरिसे तेसिं पुरिसाणं सुहासणवरगयाणं तं विउलं अ-  
 सणं पाणं खाइमं साइमं उवणेइ। तए णं ते पुरिसा तं विउलं असणं  
 पाणं खाइमं माइमं आसाएमाणा वीसाएमाणा जाव विहरन्ति।  
 जिमियभुत्तुत्तरोगयावि य णं समाणा आयंता चोक्खा परमसुइभूया  
 तं पुरिसं एवं वयासी-अहो ! णं तुमं देवाण्णपिया जंडु मूढे अपं-  
 डिए णिव्विण्णणे अणुवएसलद्धे जे णं तुमं इच्छसि कट्टुसि दुहा  
 फालियंसि वा जाव जोइ पासित्तए, से एएणट्टेणं पएसी ! एवं बुच्चइ  
 मूढतराए णं तुमं पएसी ! ताओ कट्टुहाराओ ८ । सू० १४६ ।

छाया--ततः खलु केशिकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्—  
 मूढतरकः खलु त्वं प्रदेशिन् ! ततः काष्ठहारात्, कः खलु भदन्त ! काष्ठ

‘तए णं केसिकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केसिकुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी) इसके  
 बाद केशीकुमारश्रमणने प्रदेशी राजा से इस प्रकार कहा (मूढतराए णं  
 तुमं पएसी । ताओ कट्टुहाराओ) हे प्रदेशिन् ! तुम उस काष्ठहर से भी

‘तएणं केसिकुमारसमणं’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं केसिकुमारसमणं पएसिं रायं एवं वयासी) त्थार णाढ  
 देशीकुमारश्रमणे प्रदेशी राजाने आ प्रभाणे कल्लं (मूढतराए णं तुमं पएसी !  
 ताओ कट्टुहाराओ) हे प्रदेशिन् ! तमे मने चेला कण्ठरु करतां यणु वधारे



हारकः ! प्रदेशिन् ! ते यथानामहाः केचित् पुरुषाः वनार्थिनः वनोपजीविनः वनगवेषणया ज्योतिश्च ज्योतिर्भाजनं च गृहीत्वा काष्ठानामटवीमनुप-  
विष्टाः, ततः खलु ते पुरुषाः तस्याः अग्रामिकायाः यावत् किञ्चिद्देशम-  
नुगताः सन्तः एकं पुरुषमेवमवादिषुः—वयं खलु देवानुप्रिय ! काष्ठाना-  
मटवीं प्रविशामः, इतः खलु त्वं ज्योतिर्भाजनात् ज्योतिर्गृहीत्वाऽस्माकम-

मुझे अधिक मूर्ख प्रतीत होते हो (के णं भंते ! कट्टहरण) हे भदन्त !  
वह काष्ठहर कैसा था ? इस प्रकार जब प्रदेशीने कहा—तब (एएमी)  
केशीकुमारश्रमणने कहा—हे प्रदेशिन् ! सुनो (से जहा णामए केइ पुरिसो  
वणत्थी वणोवजीवी वणगवेषणयाए जोइं च जोइभायणं च गहाय कट्टाणं  
अडविं अनुपविट्ठा) कितनेन वनार्थी और वनोपजीवी काष्ठहारक पुरुष थे।  
वन की गवेषणा करते-र किसी एक अटवी में प्रविष्ट हो गये, साथ में  
उन्होंने अग्नि — रखने का आधारभूत पात्र ले रखा था. उस अटवी  
में इन्धन बहुत था. (तए णं ते पुरिसा तीसे अग्गमियाए अडवीए  
किंचि देसं अनुपत्ता समाणा) जब वे पुरुष उस ग्रामरहित अटवी में कुछ  
दूर तक पहुँच चुके, तब (एगं पुरिसं एवं वयासी) उन्होंने एक पुरुष  
से ऐसा कहा—(अम्हे णं देवानुप्पिया ! कट्टाणं अडविं पविसामो) हे देवानु-  
प्रिय ! हमलोग इस काष्ठप्रधान अटवी में आगे प्रविष्ट होते हैं (एत्तो-  
णं तुमं जोइभायणाओ जोइं गहाय अम्हं असणं साहेज्जासि) तबतक तुम

मूर्ख लागे छ. (के णं भंते ! कट्टहरण) हे भदन्त ते काष्ठहर केवो हतो ? आ  
प्रमाणे न्यारे प्रदेशी राज्ञे कहुं—त्यारे (एएसी ! ) केशीकुमारश्रमणे कहुं के छे  
प्रदेशिन् ! सांभणे (से जहानामए केइ पुरिसो वणत्थी वणोवजीवी वणग-  
वेषणयाए जोइं च जोइभायणं च गहाय कट्टाणं अडविं अनुपविट्ठा) : डेट्ठाक  
वनार्थी अने वनोपजीवी काष्ठहारक पुद्घो हता. तेणो वनेमां शोधतां शोधतां  
छेअ ओक अटवीमां प्रविष्ट थछ गया. तेमणे पोतानी साथे अग्नि तेमज्ज अग्निने  
भूक्षमां भाटे आधारभूत पात्र लछ राख्थां हता. ते अटवीमां लाकअओ पुक्कण  
प्रमाणुमां हता. (तए णं ते पुरिसा तीसे अग्गमियाए अडवीए किंचिदेसं  
अनुपत्ता समाणा) न्यारे ते गधाते ग्रामरहित निर्जन अटवीमां थोडी दूरगयां  
त्यारे (एगं पुरिसं एवं वयासी) तेमणे ओक पुरुषने आ प्रमाणे कहुं. (अम्हे  
ण देवानुप्पिया ! कट्टाणं अडविं पविसामो) हे देवानुप्रिय ! अमे अभा काष्ठ  
प्रधान अटवीमां वयु आगण प्रवेशीओ छीओ. (एत्तो णं तुमं जोइभायणाओ जोइं



शनं साधयेः इति कृत्वा काष्ठानामटवीमनुप्रविष्टाः, ततः खलु स पुरुषः  
ततो मुहुर्तान्तरात् तेषां पुरुषाणामशनं साधयामीति कृत्वा यत्रैव ज्योति-  
र्भाजनं तत्रैव उपागच्छति, ज्योतिर्भाजने ज्योतिर्विध्यात्मेव पश्यति, ततः  
खलु स पुरुषः यत्रैव तत् काष्ठं तत्रैव उपागच्छति, उपागम्य तत्

यहीं पर रह कर अग्नि के इस पात्र से अग्नि को लेकर हम लोगों के  
लिये भोजन तैयार करलो (अहं नं जोइ भायणे जोई विज्ज्ञवेत्त) यदि  
उस पात्र में अग्नि बुझ जावे (एत्तो णं तुमं कट्ठाओ जोइं गहाय अम्हं  
असणं साहेज्जासि ति कट्ठुं कट्ठाणं अडविं अणुपविट्ठा) तो देखो जो यह  
लकड़ी पड़ी है सो इसमें से अग्नि को उत्पन्न कर लेना और हम-  
लोगों के लिये भोजन बना लेना इस प्रकार कह कर वे उस इन्धन  
वाली अटवी में आगे प्रविष्ट हो गये (तएणं से पुरिसे तओ मुहुत्त-  
तराओ तेसिं पुरिसाणं असणं साहेमिच्चि कट्ठुं जेणेव जोइभायणे तेणेव  
उवागच्छइ) उनके चले जाने पर उस पुरुषने ऐसा विचार किया—कि  
चलो जल्दी से उन लोगों के लिये भोजन तैयार करलूँ—ऐसा विचार  
करके वह जहां पर वह अग्नि का पात्र रखा था वहां पर गया (जोइ-  
भायणे जोइं विज्ज्ञायमेव पासइ) वहां जाकर उसने उस ज्योतिपात्र में  
अग्नि को बुझा हुआ ही देखा. (तएणं से पुरिसे जेणेव से कट्ठे तेणेव

गहाय अम्हं असणं साहेज्जासि) त्यां सुधी तमे अहीं रहीने अग्निना आ  
पात्रमांथी अग्निने लछ अमारा भाटे लोअन तैयार करे. (अहं तं जोइभायणे  
जोई विज्ज्ञवेत्ता) ले आ पात्रमां अग्नि ओणवाध नय. (एत्तो णं तुमं कट्ठा-  
ओ जोइं गहाय अम्हं असणं साहेज्जासि ति कट्ठुं कट्ठाणं अडविं  
अणुपविट्ठा) तो लुओ, आ लाडुं पड्युं छि, तेमांथी अग्नि उत्पन्न करी लेने  
अने अमारा भाटे लोअन तैयार करने. आ प्रमाणे णधी विगत समअवीने तेओ  
ते पुंछण लाडवाणी अटवीमां आगण प्रविष्ट थछ गया. (तएणं से पुरिसे  
तओ मुहुत्ततराओ तेसिं पुरिसाणं साहेमिच्चि कट्ठुं जेणेव जोइभायणे  
तेणेव उवागच्छइ) तेओ णधा न्यारे त्यांथी अता रहा त्यारे तेणे आ प्रमाणे  
विचार करीं छे—साइं जल्दी तेओ णधा भाटे अमवानुं तैयार करी लठं. आम  
विचार करीने ते न्यां अग्नि पात्र छतुं त्यां गये. (जोइभायणे जोइं विज्ज्ञाय-  
मेव पासइ) त्यां अछने तेणे ते अग्निपात्रमां अग्निने ओणवाध गयेव न लेये.  
तएणं से पुरिसे जेणेव से कट्ठे तेणेव उवागच्छइ) तार पछी ते पुंछ

काष्ठं सर्वतः समन्तात् समभिलोकते, नो चैव खलु तत्र ज्योतिः पश्यति, ततः खलु स पुरुषः परिकरं बध्नाति, गृह्णाति, तत् काष्ठं द्विधा स्फाटितं करोति सर्वतः समन्तात् समभिलोकते नो चैव खलु तत्र ज्योतिः पश्यति, एवं यावत् संख्येयधा स्फाटितं करोति सर्वतः समन्तात् समभिलोकते नो चैव खलु तत्र ज्योतिः पश्यति, ततः खलु स पुरुषः तस्मिन् काष्ठे द्विधा स्फाटिते वा यावत् संख्येयधा स्फाटिते वा ज्योतिरपश्यन् श्रान्तः तान्तः परितान्तः निर्विण्णाः सप्त पर-

उवागच्छइ) इसके बाद वह पुरुष वहां गया जहां वह काष्ठ पड़ा हुआ था (उवागच्छित्ता तं कट्टं सव्वओ समंता समभिलोएइ) वहां जाकर के उसने उस काष्ठ को चारों ओर से अच्छी तरह से देखा (णो चैव णं जोइं पासइ) परन्तु उसमें उसे अग्नि दिखाई नहीं दी (तए णं से पुरिसे परियरं बंधइ) तब उस पुरुषने अपनी कमर बांधी (फरसुं गिण्हइ) कुल्लाड़ी उठाई और (तं कट्टं दुहा फालिहं करेइ) उस काष्ठ के दो टुकड़े कर दिये (सव्वओ समंता समभिलोएइ) फिर उसे चारों ओर से अच्छी तरह से उसने देखा (णो चैव णं तत्थ जोइं पासइ) परन्तु उसमें उसे अग्नि दिखाई नहीं दी (एवं जाव संखेज्जहा फालिहं करेइ) इसी प्रकार से फिर उसके यावत् संख्यात टुकड़े तक कर दिये (सव्वओ समंता समभिलोएइ) परन्तु सब तरफ से अच्छी तरह देखने पर भी (णो चैव णं तत्थ जोइं पासइ) उसे उनमें अग्नि दिखाई नहीं दी (तए णं से पुरिसे नांसि कट्टसि दुहा फालिए वा जाव संखेज्जहाफालिए वा जोइं अपास-

त्थां गये जथां पेखुं काष्ठं (लाङ्कुं) पडेखुं इत्तुं. (उवागच्छित्ता तं कट्टं सव्वओ समंता समभिलोएइ) त्यां जधने तेण्हे ते लाङ्काने आरे भाजुथी सारी रीते जेथुं (णो चैव णं जोइं पासइ) पण्ण तेमां तेने अग्नि देखाये नडि. (तए णं से पुरिसे परियरं बंधइ) त्यारे ते पुरुषे पोतानी डेडणांधी. (फरसुं गिण्हइ) कुल्लाड़ी उठायां लीधी अने (तं कट्टं दुहा फालिहं करेइ) ते लाङ्काना जे ककडा करी नाज्या. (सव्वओ समंता समभिलोएइ) पछी तेण्हे आरे तच्छथी तेने जेथुं. (णो चैव णं तत्थ जोइं पासइ) पण्ण तेमां तेने अग्नि जेवाभां आव्यो नडि. (एवं जाव संखेज्जहा फालिहं करेइ) आ प्रमाणे पछी तेण्हे तेना यावत् सेड्डो ककडाओ करी नाज्या. (सव्वओ समंता समभिलोएइ) पण्ण तेमने आरे तरक्ष सारी रीते जेवा छतांजे (णो चैव णं तत्थ जोइं पासइ) तेने तेमनाभां अग्नि देखाये नडि. (तए णं से पुरिसे तस्मिन् कट्टसि दुहा फालियं वा जाव संखेज्जहा फालिए

शुमेकान्ते एडति (मुठ्चति) परिकरं मुठ्चति एवमवादीत् अहो ! मया  
तेषां पुरुषाणामशनं नो साधितमिति अपहतमनःसंकल्पचिन्ताशोकसागरसं-  
प्रविष्टः करतलपर्यस्तमुखः आर्तध्यानोपगतः भूमिगतदृष्टिको धार्यात् ततः  
खलु ते पुरुषाः काष्ठानि छिन्दन्ति, यत्रैव स पुरुषः तत्रैवापागच्छन्ति,

माणे संते परितंते निविण्णे समाणे परसुं एगंते एडेइ) इसके बाद जब  
उम पुरुष को उस काष्ठ के दो टुकड़े यावन संख्यात टुकड़े करने पर  
भी जब अग्नि दिखाई नहीं दी, तब वह थक कर, क्लान्त होकर, परितान्त  
होकर विशेष दुःखित हुआ और उमने उम कुल्हाड़ी को किसी एकान्त स्थान  
में रख दिया (परियरं सुयइ) कमर का बंधन भी खोल दिया (एवं  
वयासी) उम प्रकार कहने लगा (अहो मए तेसिं पुरिसाणं असणे नो  
साहिणं त्तिक्कु ओ ह्यमणसंकप्पे चिन्तासोगसागरसंपाव्हि करतलपलत्थमुहे  
अट्टझाणोवगए भूमिगयदिट्ठीए झियाइ) अरे ! मैं उन पुरुषों के लिये  
भोजन तैयार नहीं कर सका अब क्या करूं ! इस प्रकार विचार कर वह  
बड़ा ही दुःखिन हुआ उमकी गमन मानसिक अभिलाषाएँ नष्ट हो गईं  
और वह चिन्ता, एवं शोक रूपी समुद्र में निमग्न हो गया. कपोल पर  
हथेली रख कर आर्तध्यान करने लगा दृष्टि उसकी नीचे जमीन की ओर  
हो गई - इस प्रकार वह चिन्ता में फँस गया (तएणं ते पुरिसा कट्ठाइं  
छिदंति) अब उन पुरुषों ने जब लकड़ियों को काटलिया - तब वे (जेणेव

वा जोइं अपासमाणे संते तंते निविण्णे समाणे परसुं एगंते एडेइ)  
त्यार पछी ज्यारे ते पुइंने ते काठना जे ! कडाओ यावत संध्यात कडाओ कथा  
पछी पछु ज्यारे अग्नि जेवामां आओ नहि, त्यारे ते थाडीने, क्लान्त थडने,  
परितान्त थडने विशेष दुःखित थये अने तेणे ते कुल्हाडीने कोठ ओकांत स्थाने भूडी  
दीधी. (परियरं सुयइ) कमरनुं बंधन पण जेटी नाथुं (एवं वयासी) पछी  
ते आ प्रमाणे कहेवा लाग्यो. (अहो मए तेसिं पुरिसाणं असणे नो साहिणं  
त्ति ककु ओ ह्यमणसंकप्पे चिन्तासोगसागरसंपाव्हि करतलपलत्थमुहे  
अट्टझाणोवगए भूमिगयदिट्ठीए झियाइ) अरे ! हुं ते भाणुसो भाटे लोअन  
जनावी शक्यो नहि. डवे शुं कइं ? आ प्रमाणे विचार करीने ते भूज ज दुःखी  
थयो. तेनी जधी मानसिक छिन्ताओ नष्ट थई गइ, अने ते चिन्ता अने शोकइपी  
समुद्रमां निमग्न थई गयो. कपाण पर डथेणी भूडीने ते आर्तध्यान करवा लाग्थो.  
तेनी नजर जमीन तरई नीचे थई गइ, आभ ते चिन्तामां डूबी गयो. (तएणं  
ते पुरिसा कट्ठाइं छिदंति) डवे ते भाणुसोओ लाकडाओ काफी दीधा त्यारे तेओ

तं पुरुषमपहतमनःसंकल्पं यावत् ध्यायन्तं पश्यन्ति, एवमवादिषुः—किं  
खलु त्वं देवानुप्रिय ! अपहतमनःसंकल्पः यावत् ध्यायसि ? ततः खलु  
स पुरुष एवमवादीत्—यूयं खलु देवानुप्रियाः ! काष्ठांनामटवीमनुप्रविशन्तः  
मम एवमवादिषुः—वयं खलु देवानुप्रिय ! काष्ठांनामटवीं यावत् अनुप्रविष्टाः

स पुरिसे तेणेव उवागच्छति) जहां वह पुरुष था, वहां पर आये तं  
पुरिसं ओहयमणसंकल्पं जाव झियायमाणं पासंति) वहां आकरके उन्होंने  
उस पुरुष को मानसिक अभिलाषाओं से रहित हुआ और शोक तथा  
चिन्तारूपी सागर में निमग्न हुआ, कपोल पर हथेली रख कर आर्तध्यान  
करता हुआ, एवं नीचे दृष्टि किये हुए देखा, देवकर फिर उन्होंने  
(एवं वयासी) उससे ऐसा कहा—(किं णं तुमं देवाणुप्पिया ! ओहयमणसंकल्पे  
जाव झियायसि) हे देवानुप्रिय ! तुम किस कारण से अपहतमनः संकल्प-  
वाले बने हुए हो और यावत् चिन्ता कर रहे हो (तए णं से पुरिसे एवं वयासी)  
तब उस पुरुषने उनसे ऐसा कहा—(तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! कट्ठाणं अडविं  
अणुपविसमाणा मम एवं वयासी) हे देवानुप्रियो ! आपलोग जब लकड़ी  
काटने के लिये अटवी में प्रविष्ट होने के लिये तैयार हुए थे—तब मुझसे  
ऐसा कहा था—(अम्हे णं देवाणुप्पिया ! कट्ठाणं अडविं जाव अणुपविट्ठा)  
हे देवानुप्रिय हम लोग लकड़ो काटने के लिये इस जंगल में आगे जाते

(जेणेव से पुरिसे तेणेव उवागच्छति) जहां ते पुरुष हुतो, त्यां गया. (तं  
पुरिसं ओहयमणसंकल्पं जाव झियायमाणं पासंति) त्यां जधने तेमणे ते  
पुरुषने मानसिक धृच्छाओ जेनी नष्ट पाभी छि ओवो अने शोक तेमज चिंता  
इपी समुद्रमां निमग्न थयेल कपोल पर हुथेणी भूकीने आर्तध्यान करतो अने नीची  
दृष्टि करेवो जेथो. जेधने पछी तेमणे (एवं वयासी) तेने आ प्रभाणे क्खुं—  
(किं णं तुमं देवाणुप्पिया ! ओहयमणसंकल्पे जाव झियायसि) हे देवानुप्रिय !  
तमे था कारण्थीअपडत मनःसंकल्प वाणा थय ग्या छि अने यावत् चिंता करी रह्या छि.  
(तए णं से पुरिसे एवं वयासी) त्यारे ते पुरुषे तेमने आ प्रभाणे क्खुं. (तुज्झे-  
णं देवाणुप्पिया ! कट्ठाणं अडविं अणुपविसमाणा मम एवं वयासी)  
हे देवानुप्रियो ! तमे सौ ज्यारे लाकडाओ कापवा भाटे अटवीमा प्रविष्ट थवा तैयार  
थया हुता त्यारे मने आ प्रभाणे क्खुं हुतुं—(अम्हे णं देवाणुप्पिया ! कट्ठाणं  
अडविं जाव अणुपविट्ठा) हे देवानुप्रिय ! अमे जधा लाकडाओ कापवा भाटे आ  
अटवीमां आगण जधये छीओ. तो तमे त्यां सुधी अग्नि पात्रमांथी अग्नि लधने

ततःखलु अहं ततो मुहुर्तान्तरात् युष्माकमशनं साधयामि' इति कृत्वा  
यन्त्रैव ज्योतिर्भाजनं यावत् ध्यायामि, ततः खलु तेषां पुरुषाणामेकः पुरुषः

हैं—सो तुम तब तक अग्नि के पात्र से अग्नि को लेकर हम लोगों के  
लिये भोजन बनाना. यदि उस पात्र में अग्नि बुझ जावे तो तुम इस  
काष्ठ से ज्योति-अग्नि को तैयार कर लेना और हम लोगों के लिये भोजन  
बनाना, इस प्रकार कह कर आपलोग अटवी में प्रविष्ट हो गये, (तएणं  
अहं ततो मुहुत्तान्तरात् तुज्झे अस्मणं साहेमि त्तिकट्टु जेणेव जोइभायणे  
जाव झियामि) इसके बाद मैंने ऐसा विचार किया कि चलो बहुत जल्दी  
आप लोगों के लिये भोजन बनादूँ—ऐसा विचार कर ज्यों ही मैं जहाँ  
वह ज्योति भाजन (अग्निपात्र) रखा था, वहाँ पर गया—तो क्या देखता हूँ कि  
उसमें अग्नि बुझी पड़ी है. फिर मैं जहाँ वह काष्ठथा—वहाँ पर गया. वहाँ  
जाकर मैंने उस काष्ठ को अच्छी तरह से सब ओर से देखा, परन्तु मुझे वहाँ  
अग्नि दिखाई नहीं दी, फिर मैंने अपनी कमर कसी और कुठार को  
लेकर उस काष्ठ के दो टुकड़े किये फिर मैंने उसे सब ओर से अच्छी  
तरह देखा परन्तु फिर भी मुझे वहाँ अग्नि के दर्शन नहीं हुए. इस तरह  
फिर मैंने उसके तीन चार यावत् सैंकड़ों तक टुकड़े कर डाले और  
उन सब को अच्छी तरह से चारों ओर से देखा, परन्तु वहाँ कहीं भी

अमारा भाटे लोअन तैयार करे. ते पात्रमां अग्नि ओणवाध जय तो तमे ते  
काष्ठमांथी अग्नि उत्पन्न करी लेजे. अने अमारा भाटे लोअन तैयार करजे. आम  
कडीने तमे गंधा अटवीमां प्रविष्ट थय गया हुता. (त एणं अहं ततो मुहुत्तान्-  
तराओ तुज्झे अस्मणं साहेमि त्तिकट्टु जेणेव जोइभायणे जाव झियामि)  
त्यार पछी में आ जतनो विचार कर्यो के आलो, गहु ज जलदी तमारा भाटे  
लोअन तैयार करी लउ. आम विचार करीने हुं ज्यारे अग्निपात्र जयां राख्युं  
हुतुं त्यां गयो तो तेमां भने अग्नि ओणवध गयेल देणायो. त्यार पछी हुं जयां  
लाकडुं हुतुं त्यां गयो. त्यां जधने में ते काष्ठने सारी रीते जेथुं, यारे तरक्ष जेथुं  
पणु भने तेमां अग्नि देणायो नहि. पछी में कम्मर गांधी अने कुडाडी लधने ते  
काष्ठ (लाकडा)ना जे ककडाओ कर्या. पछी ते ककडाओने यारे तरक्षथी सारी रीते  
जेथो भने तेमां पणु अग्नि देणायो नहि. आम में तेना त्रणुयार त संज्यात  
ककडाओ करी नाख्या गंधा ककडाओने यारे तरक्षथी सारी रीते जेथो पणु त्यां भने  
जरा पणु अग्नि देणायो नहि. त्यारे हुं थार्कने, तान्त, परितान्त थधने अने जेह

લોકઃ દક્ષઃ પ્રાપ્તાર્થઃ યાવત્ ઉપદેશલબ્ધઃ તાન્ પુરુષાન્ એવમવાદીત--  
ગચ્છતિ ચ્વલુ યુયં દેવાનુપ્રિયાઃ ! સ્નાતાઃ કૃતચલિકર્માણઃ યાવત્ શીવમા-  
ગચ્છતિ યાવત્ ચ્વલુ અહમશનં સાધયामीતિ કૃત્વા પરિકરં વંધનાતિ પરશુ

સુજ્ઞે અગ્નિ કા નામતક મી નહીં પાયા. તવ મૈને થકકર તાન્ત, પરિ-  
તાન્ત હોકર ઓર લેદ લિન્ન હોકર કુલ્હાડી કો એકાન્ત મેં એક ઓર  
રલ દિયા ઓર કમર કો લોલ દિયા-ફિર મૈને એમા તિચાર કિયા-મૈં  
અપહતમનઃ સંકલ્પલાલ વના હુઆ શોક એવં ચિન્તારૂપી સમુદ્ર મેં હુવા  
હું. કપોલ પર હથેલી રલકર લૈઠા હુઆ હું, આર્તધ્યાન કર રહી હું  
ઓર લજ્જા કો મારે જમીન કી ઓર દેલ્ રહા હું (તણં તેમિ પુરિ  
સાણં એમે પુરિસે લેણ દલ્લે, પત્તે જાવ ઉવણ્સલલ્લે તે પુરિસે એવં  
વયાસી) હસ કો લાદ ઁન પુરુષોં કો વોચ મેં એક પુરુષ એમા થા તો  
લોક-અવસર કા જ્ઞાતા થા, દક્ષ-કાર્યકુશલ થા, પ્રાપ્તાર્થ-અપની કુશલતા  
સે જિસને સાધ્યાર્થ-કો અધિગત કર લિયા થા, યાવત્ ગુરુપદેશ જિમને  
પ્રાપ્ત કિયા થા. ઁસને ઁન કાષ્ટહારક પુરુષોં સે એમા કહા-(ગચ્છતિ ણં  
તુજ્ઞે દેવાણુપ્રિયા ! જ્ઞાયા, કચલિકર્મમા જાવ હલ્લમાગચ્છેદ, જા ણં  
અહં અમણં માહેમિ ત્તિ કટુ પરિકરં વંધઈ) હે દેવાનુપ્રિયો ! આપ લોગ  
જાડ્યે, સ્નાન કીજિયે, લલિકર્મ-કાક આદિ કો અન્નાદ કા ભાગ દેને

ખિન્ન થઈને કુહાડીને એક તરફ મૂકી દીધી અને બાંધેલી કેડ ખોલી નાખી પછી  
મેં આ જાતનો વિચાર કર્યો. હું તે માણસો માટે લેજન બનાવી શક્યો નહિ.  
આ દેવી હુઃખ અને આશ્ચર્યની વાત છે. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને હું અપહત  
મનઃ સંકલ્પવાળો થઈને શોક અને ચિંતાક્રૂપી સમુદ્રમાં મગ્ન થઈને, કપોલ પર  
હથેલી મૂકીને બેઠો છું, અને આર્તધ્યાન કરી રહ્યો છું. શર્મથી ભારી નજર નીચી  
જમીન તરફ વળી ગઈ છે. (તણં તેમિ પુરિસાણં એમે પુરિસે લેણ દલ્લે,  
પત્તે જાવ ઉવણ્સલલ્લે તે પુરિસે એવં વયામી) ત્યાર પછી તે માણસોમાં એક માણસ  
એવો પણ હતો કે જે છેક યોગ્ય સમયને પિછાણનાર, દક્ષ-કાર્યકુશળ પ્રાપ્તાર્થ-  
પ્રાપ્તાની કુશળતાથી-જેણે સાધ્યાર્થ પ્રાપ્ત કરી લીધો છે, એવો યાવત્ ગુરુપદેશ જેણે  
પ્રાપ્ત કર્યો છે એવો હતો. તેણે કાષ્ટહારક માણસોને આ પ્રમાણે કહ્યું. (ગચ્છતિ ણં  
તુજ્ઞે દેવાણુપ્રિયા ! જ્ઞાયા, કચલિકર્મમા જાવ હલ્લમાગચ્છેદ, જા ણં અહં  
અમણં માહેમિ ત્તિ કટુ પરિકરં વંધઈ) હે દેવાનુપ્રિયો (તમેલોકો સ્નાન કરો,  
બલિકર્મ-કાગડા વગેરે આગ વગેરેનો ભાગ આપીને નિશ્ચિન્ત થઈ જાવ. યાવત્

गृह्णाति गृहीत्वा शरं कराति शरेण अरणिं मथ्नाति ज्योतिः पातयतिः ज्योतिः  
संधुक्षते तेषां पुरुषाणामशनं साधयति. ततः खलु ते पुरुषाः स्नाताः  
कृतबलिकर्माणः यावत् प्रायश्चित्ताः यत्रैव स पुरुषः तत्रैव उपागच्छन्ति, ततः  
खलु स पुरुषः तेषां पुरुषाणां सुखासनवरगतानां तद् विपुलमशनं पान खादिसं

रूप कार्य से निश्चिन्त हो जाइये, यावत् कौतुक मंगलरूप प्रायश्चित्त कर  
लीजिये और फिर जल्दी आजाइये तबतक मैं आपलोगों के लिये भोजन  
तैयार करता हूं। ऐसा कहकर उसने अपनी कमर कसी आग (फरसुं  
गिण्हइ) कुल्हाडी को उठाया (सरं करेइ, सरेण अरणिं महेइ) उससे  
पहिले उसने लडकी को इतना छीला कि जिससे वह वाण के जैसी  
शलाई के रूप में हो गई. फिर उससे उसने अरणिकाष्ठ का मंथन किया  
(जोइं पाडेइ) मंथन करने से अग्नि उसमें प्रकट हो गई (जोइं संधुक्खेइ)  
प्रकट हुई उस अग्नि को उसने पवन वगैरह आदि साधनों से विशेष  
चैतन्य किया. अर्थात् धोका (तेमिं पुरिसाणं असणं साहेइ) अग्नि के  
तैयार हो जाने पर फिर उसने उन सब पुरुषों का भोजन बना दिया (तएण  
ते पुरिसा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता जेणेव से पुरिसे तेणेव  
उवागच्छइ) इतने में वे पुरुष स्नान करके, बलिकर्म—काकआदि को अन्नादि का  
भाग दे करके यावत्—कौतुक मंगलरूप प्रायश्चित्त करके उस स्थान पर आये-

कौतुक मंगलरूप प्रायश्चित्त करी दो. अने पछी जल्दी अहीं उपास्थित थछ जाव.  
आटलाभां हुं तभारा भाटे लोअन तैयार कइं छु. आम कहीने तेणे पोतानी डेड  
भांधी अने (फरसुं गिण्हइ) कुल्हाडी हाथभां लीधी. (सरं करेइ सरेण अरणिं  
महेइ) तेणे सौ पडेलां लाकडाने ओवी रीते छेद्युं के ओथीते भाणु ओवी शलाका  
ओपुं थयुं पछी तेनाथी तेणे अरणि काष्ठनुं मंथन कयुं (जोइं पाडेइ) मंथन  
करवाथी तेभांथी अग्नि प्रकट थछ गयो. (जोइं संधुक्खेइ) प्रकट थयेल ते अग्निने  
पवन वगर साधनाथी तेने सविशेष प्रज्वलित कथी. (तेमिं पुरिसाणं असणं  
साहेइ) अग्नि ज्यारे प्रज्वलित थछ गयो त्यारे तेणे ते जधर दोका भाटे लोअन  
तैयार कयुं. (तएण ते पुरिसा ण्हाया कयबलिकम्मा जाव पायच्छित्ता जेणेव  
से पुरिसे तेणेव उवागच्छइ) आटलाभां ते जधर भाणुसे स्नान करीने, बलिकर्म—  
काकडा वगेरेने अन्न वगेरेनो लाग आपीने यावत् कौतुक मंगलरूप प्रायश्चित्त करीने  
ते जय्याओ आवी गया. जयां ते पुरुष डतो. तएण से पुरिसे तेमिं पुरिसाणं  
सुहासनवरगयाणं तं विउलं असणं पाणं खाइमं माइमं उवणेइ तएण ते पुरिसा



स्वादिसम् उपनयति, ततः खलु ते पुरुषाः तद् विपुलमशनं पानं स्वादिमं  
स्वादिसम् आस्वादयन्तो विस्वादयन्तो यावद् विहरन्त, जिमितभुक्तो, स-  
रागता अपि च खलु मन्तः आचान्ताः चोक्ष्वाः परमशुचिभृताः तं पुरुष-  
मेवमवादिपुः—अहो ! ! खलु त्वं देवानुपिय ! जडः मूढः अपण्डितः निर्विज्ञानः  
अनुपदेशलब्धः यः खलु त्वामच्छसि काण्डं द्विधा स्फाटिते वा यावत्

जहाँ कि वह पुरुष था. (तएण से पुरिसे तेमिं पुरिमाणं सुहासणवग्गया णं  
तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवणेइ, तएणं ते पुरिमा तं विउलं असणं  
पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा जाव विहरंति) वहाँ  
आकरके वे सबके सब पुरुष अपने-सुखासन पर बैठ गये. उनके बैठ  
जाने पर फिर उस पुरुष ने उस प्रचुर स्वाद्य आदि सामग्री को लाकर  
उनके समक्ष रख दिया और परोस दिया, उन सबने उस भोजन सामग्री  
चारों प्रकार के आहार को—उसका स्वाद जानने के लिये पहिले तो  
चखा रुचि से उसे खाया (जिमियभुत्तगरागया वि य णं समाणा आयंता  
चोक्खा परमसुहभूया तं पुरिसं एवं वयासी) खापीकर जब वे निश्चिन्त  
हो गये—तब वहाँ से उठे, और उठकर आचमन किया, आचमन—कुछा  
करने के बाद फिर उन्होंने अपने हाथ मुह आदि को अच्छे प्रकार  
से धोकर साफ किया. इस तरह परम शुचियुक्त होकर फिर उन्होंने  
उस पहिले पुरुष से ऐसा कहा—(अहो णं तुमं देवानुपिय ! जडं, मूढं,  
अपण्डिणं निविण्णाणे. अणुवएसलद्धे, जे णं तुमं इच्छसि कट्ठंसि दुहा  
तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा जाव  
विहरंति) त्यां जधने तेज्जो जधा पुइधो पोतपोताना स्थाने सुभासन पर भेसी  
गया. तेज्जो ज्यारे भेसी गया त्यारे ते पुइधे ते प्रचुर आद्य वगेरे सामंथीने लावीने  
तेभनी सामे भूई दीधी अने पीरसी दीधी. तेज्जो जधाजे ते लोअन सामंथीने  
त्यारे प्रक्षरना आहु(रने—तेना स्वादने जलुवा भाटे पडेलां तो तेने आअयो पछी  
भूण इथिपूर्वक तेने. जग्ग्या. (जिमियभुत्तगरागया वि य णं समाणा आयंता  
चोक्खा परमसुहभूया तं पुरिसं एवं वयासी) आअ—पीने ज्यारे तेज्जो निश्चिन्त  
थई गया त्यारे तेज्जो त्यांथी उला थया अने उला थधने आचमन—डोअणा—क्षरीने  
पछी तेभजे पोताना हाथ में वगेरेने सारी रीते धोअने स्वच्छ कर्या. आ प्रभाजे  
परम शुचियुक्त थधने पछी तेभजे ते पडेला पुरुषने आ प्रभाजे कहुं. (अहो णं  
तुमं देवानुपिय ! जडं ! मूढं अपण्डिणं निविण्णाणे, अणुवएसलद्धे, जे णं

ज्योतिर्द्रष्टुम्, तदेतेनार्थेन प्रदेशिन् ! एवमुच्यते मूढतरकः खलु त्वं प्रदेशिन् ! ततः काष्ठहारकात् । ॥ सू० १४६ ॥

टीका—‘तए णं केसिकुमारसमणे’ इत्यादि—ततः खलु केशिकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानमेवमवादीत्—हे प्रदेशिन् ! ततः—तस्मात् काष्ठहारात् पुरुषात् त्वं मूढतरकः—अतीव मूर्खः खलु प्रतिभासि ! तत्र प्रदेशी हेतुं पृच्छति—हे भदन्त ! कः खलु असौ काष्ठहारकः ? केशी प्राह—हे प्रदेशिन् !

फालियंसि वा जाव जोइं पासित्तए) हे देवानुप्रिय ! तुम जड़ हो, अग्नि को उत्पन्न करने के साधन से अनभिज्ञ हो, मूर्ख हो—विवेक रहित हो, अपण्डित हो—प्रतिभा से युक्त नहीं हो, निर्विज्ञान—कुशलता तुम में नहीं है, अनुपदेशलब्ध—तुम ने इस विषय में गुरु का उपदेश प्राप्त नहीं किया है, अर्थात् अशिक्षित हो, इसीलिये लकड़ी में अग्नि को पाने के लिये तुमने उसे फाड़ा है, दो टुकड़े किये हैं, तीन टुकड़े किये हैं, चार टुकड़े किये हैं. यावत् संख्यात टुकड़े किये हैं, फिर भी तुम उसमें अग्नि नहीं देख सके—अतः तुम सच्चेरूप में मूढत्वादि पूर्वोक्त विशेषणों से शून्य नहीं हो. (से एएणट्ठेणं पएसी ! एवं वुच्चइ मूढतराए णं तुमं पएसी ! ताओ कट्टहाराओ) इस प्रकार से मूढतरत्वसाधक दृष्टान्त का कथन कर उपसंहार करते हुए श्रव केशी प्रदेशी से कहते हैं—हे प्रदेशिन् ! तुम इस दृष्टान्तोक्त पुरुष की अपेक्षा भी अधिक मूर्ख हो जो तुम पुरुष के शरीर को छिन्न भिन्न करके उसके जीव को देखने के लिये अभिलाषी बने हो ।

एमं इच्छसि कट्टंसि दुहा फालियंसि वा जाव जोइं पासित्तए) हे देवानुप्रिय ! तमे जड़ हो, अग्नि उत्पन्न करवाना साधनथी अनभिज्ञ हो, मूर्ख हो, विवेक रहित हो, अपण्डित हो, प्रतिभा रहित हो, निर्विज्ञान—कुशलता रहित हो, अनुपदेशलब्ध—तमोअे आ गाणतमां गुडनो उपदेश प्राप्प कयो नथी, ओटवे के तमे आशिक्षित हो, ओथी ज लाकडीमांथी अग्नि भेणववा भाटे तमे तेना ककडा करी नाज्या छे. जे ककडा करी नाज्या छे. त्रणु ककडा करी नाज्या छे, चार ककडाओ करी नाज्या छे यावत् संख्यात ककडाओ करी नाज्या छे. छातां ओ तमने तेमां अग्नि हेभायो नहि. ओथी तमे जरेजरे मूढत्व वजेरे पूर्वोक्त विशेषणोथी रहित नथी. (से एएणट्ठेणं पएसी ! एवं वुच्चइ मूढतराए णं तुमं पएसी ! ताओ कट्टहाराओ) आ प्रमाणे मूढतरत्व साधक दृष्टान्त कडीने उपसंहार करतां केशी प्रदेशीने कहेवा लाज्या के हे प्रदेशिन् ! तमे आ दृष्टान्तमां आवेल पुग्ग करतां पणु वधादे मूर्ख छे. केमके तमे माणुसना शरीरना ककडा करीने तेमना एवने जेवा तत्पर थया छता,

ते यथानामकाः अनिर्दिष्टनामानः केचित् पुरुषाः वनार्थिनः-वनमेवार्थोऽ-  
 स्तेषामिति वनार्थिनः-वनप्रयोजनयुक्ताः वनोपजीविनः वनेन वन्यकाष्ठादिना  
 उपजीविनः जीवननिर्वाहकारिणः काष्ठहारका इत्यर्थः, वनगवेपण्या-वनजिज्ञा  
 सया ज्योतिः-अग्निं च ज्योतिर्भाजनम्-अग्निपात्रं च गृहीत्वा काष्ठानाम्-  
 हन्धनानाम् स्थानभूताम् अटवीम् अनुप्रविष्टाः, ततः-तदनन्तरम् ते पुरुषाः  
 तस्याः अग्रोमिकायाः-जनवसतिरहितायाः, अटव्याः किञ्चिद्देशं-स्वल्पदे-  
 शम् अनुप्राप्ताः-क्रमेण गताः सन्तः एकं पुरुषम् एवमवादिषुः-हे देवानुप्रिय !  
 वयं काष्ठानामटवीं प्रविशामः, इतः खलु त्वं ज्योतिर्भाजनात्-अग्निपात्रात्  
 ज्योतिः अग्निं गृहीत्वा अस्माकमशनं साधयेः-निष्पादयेः. अथ-भोजन-  
 निष्पादनसमये ज्योतिर्भाजने तत्-पूर्वतो रक्षितं ज्योतिः विध्यायेत्-  
 शास्येत् तदा इतः-एतस्मात् काष्ठात् खलु त्वं ज्योतिः-अग्निं गृहीत्वा  
 अस्माकमशनं साधयेः इति कृत्वा-इत्याज्ञाप्य ते काष्ठहारकाः काष्ठाना  
 मटवीमनुप्रविष्टाः, ततः-तेषां गमनानन्तरं खलु स पुरुषः ततः-मुहूर्ता-  
 न्तरात्-किञ्चित्कालानन्तरम् तेषां-वनं प्रविष्टानां पुरुषाणाम् अशनं साध-  
 यामीति कृत्वा-इत्यभिप्रेत्य यत्रैव-यस्मिन्नेव स्थाने ज्योतिर्भाजनमासीत्  
 तत्रैव-तस्मिन्नेव स्थाने उपागच्छति, परन्तु ज्योतिर्भाजने-अग्निपात्रं ज्योतिः-  
 अग्निम् विध्यातमेव-प्रशान्तमेव पश्यति, ततः खलु सः-अशननिष्पादनार्थी  
 पुरुषः यत्रैव तत् काष्ठं तत्रैव उपागच्छति. उपागत्य तत् काष्ठं सर्वतः  
 समन्तात् समभिलोकते नो चैव-नैव खलु तत्-काष्ठे ज्योतिः-वह्निं पश्यति.  
 ततः-तदनन्तरम् स पुरुषः परिकरं कटिन्धनं बध्नाति परशुं-क्रुडारं गृह्णाति तत्  
 काष्ठं द्विधा स्फाटितं-विदारितं करोति-सर्वतः समन्तात् समभिलोकते नो  
 चैव खलु तत्-काष्ठे ज्योतिः-वह्निं पश्यति, एवम्-अनेन प्रकारेण यावत्-  
 यावत्पदेन 'त्रिधा स्फाटितं चतुर्धा स्फाटितम्' इत्येषां पदानां सङ्ग्रहो  
 बोध्यः, संख्येयधा-संख्यातखण्डं स्फाटितं करोति. कृत्वा सर्वतः सम-  
 न्तात् समभिलोकते, नो चैव तत् ज्योतिः पश्यति, ततः-तदनन्तरम् खलु  
 स पुरुषः तस्मिन्-कृतकुठारप्रहारे काष्ठे द्विधा स्फटिते यावत् संख्येयधा-  
 संख्यातखण्डशः स्फाटिते वा ज्योतिः अपश्यन् श्रान्तः-श्रमं प्राप्तः, तान्तः  
 -बलान्तः, परितान्तः-विशेषतःबलान्तः, निर्विणः-खिन्नः सन् परशुं-कु-  
 ठारम् एकान्ते-रहसि एडति-देशीयोऽयमेडधातुर्मोचनार्थः, तेन 'मुञ्चति'  
 इत्यर्थः. मुक्त्वा परिकरं-कटिन्धनं मुञ्चति, मुक्त्वा एवमवादीत-अहो!!-

विस्मयोऽत्र यत् मया मन्दभागेन तेषां पुरुषाणामशनं-भोजनं नो साधि-  
तम्, इति कृत्वा-इति विचिन्त्य अपहतमनःसंकल्पः-नष्टमनोऽभिलाषः,  
चिन्ताशोकसागरसंप्रविष्टः-चिन्ताशोकपमुदनिमग्नः, करतलपर्यस्तमुखः-  
कातञ्जलिहितकालः, मुखशब्दस्य मुवावयवकपोलपरत्वात्, आर्तध्यानो-  
पगतः-आर्तध्यानयुक्तः, भूमिगनदृष्टिकः-पृथिवीतलनिरीक्षणतत्परः-अधो-  
मुखः, ध्यायति-चिन्तां करोति. तत इतश्च ते-अटवीमनुप्रविष्टाः पुरुषाः  
काष्ठानि छिन्दन्ति, छिन्त्वा यत्रैव सः अशननिष्पादनाथी पुरुषः तत्रैव उपा-  
गच्छन्ति, उपागत्य तं पुरुषम् अपहतमनःसंकल्पं यावत्-यावत्पदेन  
“चिन्ताशोकसागरसंप्रविष्टः, करतलपर्यस्तमुखः, आर्तध्यानोपगतः, भूमि-  
गतदृष्टिकम्” इत्येषां पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः, ध्यायन्तं-चिन्तां कुर्वन्तं

टीकार्थ स्पष्ट है-इस सूत्र का भावार्थ ऐसा है-कि जिस प्रकार  
प्रथम पुरुष को काष्ठ में अग्नि के दर्शन नहीं हुए और द्वितीय पुरुष  
को हो गये. उसी प्रकार तुम्हें भी उस चोर पुरुष के शरीर में छिन्नभिन्न  
करने पर भी उसको जीव के दर्शन नहीं हो सके एतावता यह कैसा  
कहा जा सकता है कि जीव दिखाई नहीं देने से जीव नाम का कोई  
स्वतंत्र पदार्थ नहीं है. इसलिये जीव और शरीर एक हैं ऐसी तुम अपनी मान्यता  
का परित्याग कर यह मानो कि जीव भिन्न है और शरीर भिन्न है. ये  
दोनों एक नहीं हैं. यहां सूत्र में जो ‘करतलपर्यस्तमुखः’ ऐसा पद आया  
है -उसमें मुखशब्द मुख के अवयवभूत कपोल अर्थ में आया है ‘अपहत-  
मनःसंकल्पं जाव’ में जो यह यावत् पद आया है-उससे ‘चिन्ताशोक-  
सागरसंप्रविष्टः, करतल पर्यस्तमुखः, आर्तध्यानोपगतः, एवं भूमिगनदृष्टिकः’

टीकार्थ आ सूत्रनो स्पष्ट न छे. आ सूत्रनो लावार्थ आ प्रमाणे छे के  
जेम पड़ेला भाणुसनें काष्ठमां अग्निना दर्शन थया नथी अने भीज भाणुसने थया  
तेमज ते चोर पुरुषना शरीरना ककडे ककडा करवा छतांअ तेना एवना  
दर्शन तमने थया नथी. अनाथी आ केवी रीते कडी शकाय के एव देखातो नथी.  
तेथी एव नामनेो केछि स्वतंत्र पदार्थ न नथी. अथी एव अने शरीर अेक न छे.  
अेवी तमारी जे मान्यता छे तेने तअे छोडी हो अने आ वात स्वीकारी लेके एव  
लिन्न छे अने शरीर लिन्न छे अेअो णन्ने अेक नथी. अडीं सूत्रमां जे ‘करतल-  
पर्यस्तमुखः’ आ जतनुं पद छे तेमां भुज शब्द भुजना अवयवभूत कपोल  
अर्थमां आवेल छे “अपहतमनः संकल्पं जाव”-मां जे यावत् पद आवेल छे,  
तेथी ‘चिन्ताशोकसागरसंप्रविष्टः करतलपर्यस्तमुखः आर्तध्यानोपगतः एवं

पश्यन्ति, दृष्ट्वा एवम् अनुपदं वक्ष्यमाणं वचनम्, अवादिषुः—किं—  
कारणं खलु ? हे देवानुमिय ! त्वम् अपहतमनःसंकल्पः यावत्—ध्याय-  
सि ?—चिन्तां करोषि ? ततः—तदनन्तरम् खलु स पुरुषः एवमवादीत—हे  
देवानुमियाः ! यूयं खलु काष्ठानामटवीमनुपविशन्तः मम एवमवादिष्ट—कथि  
तवन्तः, किमित्याह—हे देवानुमिय ! वयं खलु काष्ठानामटवीं यावत्—याव-  
त्पदेन “प्रविशामः, इतः खलु त्वं ज्योतिर्भाजनात् ज्योतिर्गृहीत्वाऽस्माकमशनं  
साधये, अथ तज्ज्योतिर्भाजने ज्योतिर्विध्यायेत् इतः खलु त्वं काष्ठात् ज्यो-  
तिर्गृहीत्वाऽस्माकमशनं साधयेरिति कृत्वा काष्ठानामटवीम्” इत्येषां  
पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः, अनुपविष्टाः, ततः—तदनन्तरं खलु अहं ततो—मुह-  
र्तान्तरात् युष्माकमशनं साधयामीति कृत्वा यत्रैव ज्योतिर्भाजनं यावत्—याव-  
त्पदेन “तत्रैव उपागच्छामि ज्योतिर्भाजने ज्योतिर्विध्यात्मेव पश्यामि, ततः  
खलु अहं यत्रैव तत् काष्ठं तत्रैव उपागच्छामि, उपागम्य तत् काष्ठं  
सर्वतः समन्तात् समभिलोके नो चैव तत्र ज्योतिः पश्यामि, ततः खलु अहं  
परिकरं वघ्नामि परशुं गृह्णामि तत् काष्ठं द्विधा स्फाटितं करोमि कृत्वा  
सर्वतः समन्तात् समभिलोके नो चैव तत्र ज्योतिः पश्यामि, एवं यावत्  
त्रिधा चतुर्धा संख्येयधा स्फाटितं करोमि सर्वतः समन्तात् समभिलोके नो  
चैव तत् ज्योतिः पश्यामि, तत् खलु अहं तस्मिन् काष्ठे द्विधा स्फाटिते  
वा यावत् त्रिधा चतुर्धा संख्येयधा वा स्फाटिते ज्योतिरपश्यन् श्रान्तः  
तान्तः परितान्तः निर्विण्णः सन् परश्वमेकान्ते (एडामिदे०) मुञ्चामि मुक्त्वा

इन पदों का ग्रहण हुआ है। ‘काष्ठानामटवीं यावत्’ में आये हुए यावत्पद से  
‘प्रविशामः, इतः खलु त्वं ज्योतिर्भाजनात् ज्योतिर्गृहीत्वाऽस्माकमशनं साधये,  
अथ तज्ज्योतिर्भाजने ज्योतिर्विध्यायेत्—इतः खलु त्वं काष्ठात् ज्योतिर्गृहीत्वा  
अस्माकमशनं साधयेरिति कृत्वा काष्ठानामटवीम्’ इस पाठ का संग्रह हुआ  
है। ‘एवं यावत् संख्येयधा’ में आये हुए यावत्पद से त्रिधा स्फाटितं,  
चतुर्धा स्फाटितम्’ इन पदों का संग्रह हुआ है। ‘एडति’ यह शब्द देशीय

‘भूमिगत दृष्टिक’ आ पदोक्तं ग्रहणं यथु छि. ‘काष्ठानामटवीं यावत्’ भां आवेद  
यावत् पदं यथी ‘प्रविशामः, इतः खलु त्वं ज्योतिर्भाजनात् ज्योतिर्गृहीत्वाऽस्माक-  
मशनं साधये, अथ तज्ज्योतिर्भाजने ज्योतिर्विध्यायेत्—इतः खलु त्वं  
काष्ठात् ज्योतिर्गृहीत्वा अस्माकमशनं साधयेरिति कृत्वा काष्ठानामटवीं’  
आ पाठो सः ग्रहं यथो छि. ‘एवं यावत् संख्येयधा’ भां आवेद यावत् पदं यथी  
‘त्रिधा स्फाटितं चतुर्धा स्फाटितं’ आ पदोक्तं सः ग्रहं यथो छि. ‘एडति’ आ

परिकरं मुञ्चामि एवमवादिषम्-अहो !! मया तेषां पुरुषाणामशनं नो साधितमिति कृत्वा अपहतमनः संकल्पः चिन्ताशोकसागरसंपविष्टः करतलपर्यस्तमुखः आर्तध्यानोपगतो भूमिगतदृष्टिकः” इत्येषां सङ्ग्रहो बोध्यः, एषां व्याख्याऽस्मिन्नेवं सूत्रे पूर्वं कृता, ध्यायामि-चिन्तां करोमि, ततः-तदनन्तरं तेषां पुरुषाणां मध्याद् एकः कोऽपि पुरुषः लेकः-अवसरंजः, दक्षः-कार्यकुशलः, प्राप्तार्थः-निजकौशलेनाधिगतसाध्यरूपार्थः, यावत्-यावत्पदेन-“बुद्धः, कुशलः, महामतिः विनीतः विज्ञानप्राप्तः” इत्येषां पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः, एषां व्याख्या पूर्वं गता, तथा उपदेशलब्धः-प्राप्तगुरूपदेशः, शिक्षित इति यावत्, एतादृश एकः पुरुषः तान्-काष्ठहारकान् पुरुषान् एवमवादीत्-हे देवानुप्रियाः ! यूयं गच्छत खलु स्नाताः-कृतस्नानाः कृतबलिकर्माणिः-कृतचायमादिनिमित्तान्नदानाः, यावत्-प्रायश्चित्ताः-यावत्पदेन-कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः” इत्येतत्पदसङ्ग्रहो बोध्यः, एतादृशाः सन्तः शीघ्रमागच्छत, कियतां कालेन ? इति जिज्ञासायामाह-यावत्-यावत्कालेन खलु अहम् अशनं-भोजनं साधयामि-नष्पादयामि. इति कृत्वा-इत्युक्त्वा परिकरं चघ्नाति-कटिबन्धनं करोति, परशु-कुठारं गृह्णाति, गृहीत्वा शरं-बाणसदृशं प्रतनुकाष्ठं करोति तेन शरेण-तनूकृतकाष्ठेन अरणि-काष्ठ विशेषं मथ्नाति-संघर्षति, ज्योतिः-अग्निं पातयति-निष्काशयति, पातयित्वा जयातिः-बहिः संघुक्षते-संदीपयति, संदीप्य तेषां पुरुषाणामशनं साधयति, ततः-अशननिष्पादनानन्तरम् खलु ते पुरुषाःस्नाताः कृतबलिकर्माणिः यावत् प्रायश्चित्ताः-कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः सन्तः यत्रैव स पुरुष आसीत् तत्रैव उपागच्छन्ति, ततः खलु स पुरुषः तेषां पुरुषाणाम्, सुखासनचरगतानां-

है. इसमें एड् धातु मोचन अर्थ में है। ‘अहो’ शब्द विस्मयार्थक है। ‘पत्तद्वे जाव’ में जो यावत्पद आया है-उससे यहां ‘बुद्धः, कुशलः, महामतिः, विनीतः, विज्ञानप्राप्तः’ इन पदों का संग्रह हुआ है। इन पदों की व्याख्या पहिले की जा चुकी है। ‘कयवलिकम्मा जाव’ में आये हुए यावत् पद से ‘कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः’ इस पद का संग्रह हुआ है। ‘दुहा फालियंसि

शब्द देशीय छे. आभां “एड् धातु ‘मोचन’ अर्थभां छे. ‘अहो’ शब्द विस्मयार्थक छे. ‘पत्तद्वे जाव’ भां जे यावत्पद आवेल छे. तेथी अही ‘बुद्धः, कुशलः, महामतिः विनीतः, विज्ञानप्राप्तः,’ आ पदोनो संग्रह थये छे. आ पदोनी व्याख्या पहिलो करवाभां आवी छे. ‘कयवलिकम्मा जाव’ भां आवेल यावत् पदथी ‘कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः’ आ पदोनो संग्रह थये छे. ‘दुहा फालियंसि



सुखदोत्तमासनोपविष्टानाम्, सताम् पुरतः तत्-माधितं, विपुलं-पुष्कलम्, अशनं पानं खादिमं स्वादिमम् उपनयति-पविशेयति, ततः खलु ते पुरुषाः तद्विपुलमशनं पानं खादिमं स्वादिमम् आस्वादयन्तः-सामान्यतः स्वादयन्तः, विस्वादयन्तः-विशेषेण स्वादयन्तः, यावत्-यावत्पदेन-“परिभाजयन्तः परिभुञ्जाना’ इत्यनयोःपदयोः सङ्गो बोध्यः, तत्र परिभाजयन्तः-परितो वष्टयन्तः, परिभुञ्जानाः-परित-आतृप्ति भुञ्जाना, विहरन्ति-तिष्ठन्ति । जिमितभुक्तोत्तरागताः-जिमितं-चतुर्विधमशनं तस्यः शुद्धं-भोजनं तदुत्तरं-तदनन्तरं कालम् आगता-प्राप्ताः अपि च मन्तः आचान्ता-कृताऽऽचमनाः, चोक्षाः सामान्यतः शुद्धाः, परमशुचिभूताः-गण्डूषादिभिर्विशेषतः शुद्धाः तम् पुरुषम्, एवम्-अनुपदं वक्ष्यमाणं वक्ष्यम अवादिषुः-अहो ! ! देवानुमिय ! त्वं खलु जडः जडसदृशः-विशिष्टचेतनारहितत्वात्, मूढः-मूर्खः, अपण्डितः-सदसद्विवेकविकलत्वात्, निर्विज्ञानः-कौशलरहितः, अनुपदेशलब्धः-अप्राप्त-गुरुरूपदेशः-अशिक्षितश्चासि, यस्त्वम् खलु द्विधा स्फाटिते काष्ठे यावत् त्रिधा चतुर्धा संख्येयथा वा स्फाटिते काष्ठे ज्योतिः वह्निं द्रष्टुमिच्छसि, इति मूढतरत्नसाधकदृष्टान्तमुक्त्वोपसंहरति-हे प्रदेशिन् तदेतेन-अनन्तरोत्तेन अर्थेन-दृष्टान्तरूपेण, एवम्-इत्थम् उच्यते-वक्ष्यते यद् हे प्रदेशिन् ! तस्मात् अपाचकात् काष्ठहारात् मूढतरः-अतिमूर्खः असि ॥ सू० १४६॥

मूलम्--तए णं पएसी राया केसिकुमारसमणं एवं वयासी-  
जुत्तए णं भंते ! अइदक्खाणं बुद्धाणं कुसलाणं महामई णं विण-  
याणं विण्णाणपत्ताणं उवएसलद्धाणं अहं इमीसाए महइ महालयाए  
परिसाए मज्जे उच्चावएहिं आउसेहिं आउसित्तए, उच्चावयाहिं  
उद्धसणाहिं उद्धंसित्तए, एव उच्चावयाहिं निब्भञ्जणाहिं निब्भ-  
लित्तए, उच्चावयाहिं निच्छोडणाहिं निच्छोडित्तए ? ॥सू० १४७॥

वा जाव’ में यावत् पद से ‘त्रिधा, चतुर्धा, संख्येयथा वा स्फाटिते काष्ठे’  
इन पदों का संग्रह हुआ है ॥ सू. १४६ ॥

वा जाव’ मां आवेक्ष यावत् पदथी ‘त्रिधा, चतुर्धा, संख्येयथा वा स्फाटिते काष्ठे’  
आ पदेनो संग्रह थयो छि. ॥सू० १४६॥



छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिकुमारश्रमणमेवमवादीत—युक्तः खलु भदन्त ! युत्मावम् अतिच्छेकानां दक्षाणां बुद्धानां कुशलानां महामतीनां विनीतानां विज्ञानप्राप्तानाम् उपदेशलब्धानाम् अहम् अस्याः महाति महालयाः परिषो मध्ये उच्चावचैः आक्रोशैः अक्रोष्टुम्, उच्चावचाभिरुद्धर्षणाभिरुद्धर्षयितुम्, उच्चावचाभिर्निर्भर्त्सनाभिर्निर्भर्त्सयितुम्, उच्चावचाभिर्निच्छोटनाभिर्निच्छोटयितुम् ? । सू० १४७॥

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तए णं पएसी राया केशिकुमारसमणं एवं वयासी) इमके बाद प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(जुत्तएणं भंते ! अइदक्खाणं बुद्धाणं कुसलाणं महामईणं विणीयाणं, विण्णाणपत्ताणं, उवएसलद्धाणं) हे भदन्त ! अतिच्छेक-अवसरज्ञ, दक्ष-चतुर, बुद्ध-तत्त्वज्ञ, कुशल-कर्तव्या-कर्तव्य निर्णायक, महामति औत्पत्तिको आदिबुद्धियों से युक्त, विनीत-शिष्ट, विज्ञानप्राप्त-सत् असत् के विवेक से संपन्न, एवं उपदेशलब्ध-गुरु के उपदेश को प्राप्त करने वाले ऐसे आपके लिये (अहं इमी साए महइमहालियाए परिसाए मज्जे) मुझ से इस अतिविशाल परिषदा के बीच में (उच्चावएहिं आउसेहिं आउसित्तए, उच्चावयाहिं उद्धंसणाहिं उद्धंसित्तए) उच्चावच-नाना प्रकार के कठिनवचनरूप आक्रोशों से संलाप करना नानाप्रकार की अनादर सूचक वचनरूप उद्धर्षणाओं से मुझे उद्धर्षित करना, (एवं उच्चावयाहिं निवमंछणाहिं निवमंछित्तए, उच्चावयाहिं

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—तएणं पएसी राया केशिकुमारसमणं एवं वयासी) त्थार पछी प्रदेशी राजाने केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे क्खुं—(जुत्तएणं भंते ! अइदक्खाणं बुद्धाणं कुसलाणं महामईणं विणीयाणं, विण्णाणपत्ताणं, उवएसलद्धाणं) हे भदन्त ! अतिच्छेक-अवसरज्ञ, दक्ष-चतुर, बुद्ध-तत्त्वज्ञ, कुशल-कर्तव्याकर्तव्य निर्णायक, महामति-औत्पत्तिकी वगेरे बुद्धीशाली युक्त, विनीत-शिष्ट, विज्ञान प्राप्त-सत् असत्तना विवेकशी युक्त अने उपदेशलब्ध-गुरुना उपदेशने प्राप्त करनार ओवा तभारा वडे (अहं इमी साए महइमहालियाए परिसाए मज्जे) भारी साथे आ अतिविशाल परिषदानी वच्चे (उच्चावएहिं आउसेहिं आउसित्तए, उच्चावयाहिं उद्धंसणाहिं उद्धंसित्तए) उच्चावच-अनेक जतना क्रोध वचनरूप आ-क्रोशोशी संलाप करवुं-अनेक प्रकारना अपमान सूचक वचनरूप उद्धर्षणाओशी उद्धर्षित करवुं

टीका—“तए णं पएसी” इत्यादि—ततः खलु म प्रदेशी राजा केशि-  
कुमारश्रमणमेवमवादीत्—हे भदन्त ! अतिच्छेकानाम्—अवसरज्ञानं, दक्षाणाम्—  
चतुराणां, बुद्धानाम्—तत्त्वज्ञानं, कुशलानाम्—कर्तव्यावर्तन्यनिर्णायकानां,  
महामनीनाम्—औत्पत्तिक्यादिवुद्धियुक्तानां विनीतानाम्—शिष्टानां, विज्ञानप्राप्ता-  
नाम्—सदसद्विवेकसम्पन्नानाम्, उपदेशलब्धानां प्राप्तगुरूपदेशानाम्, युष्माकम्  
अस्याः उपस्थितायाः, महाति महालयायाः अतिविशालायाः परिषदः सभाया मध्ये  
उच्चावचैः—नानाविधैः, ओक्रोशैः—कठिनवचनरूपैः, आक्रोष्टुम्—संलपितुम्,  
उच्चावचाभिः—नानाविधाभिः उद्घर्षणाभिः—अनादर मृचकवचनलक्षणाभिः,  
उद्घर्षयितुम्—वक्तुम्, उच्चावचाभिः—नानाविधाभिः, निर्भर्त्सनाभिः—अवहे-  
लनाभिः, निर्भर्त्सयितुम् अवहेलितुम्—उच्चावचाभिः—नानाप्रकाराभिः निश्छोटना-  
भिः—नीरसवचनावलीभिः, निश्छोटयितुम्—संभाषितुम्, अहं किं युक्तकः ?—  
युक्तोऽस्मि—योग्योऽस्मि ? सभासमक्षमेतादृग्वचनरूपो व्यवहारो मत्कृते  
भवादृशानां महापुरुषाणां नोचित इति भाः ॥ सू० १४७ ॥

मूलम्—तए णं केसी कुमारसमणे पएसिं राय एवं वयासी-  
जाणासि णं तुमं पएसी ! कइ परिसाओ पणत्ताओ ? । जाणामि  
चत्तारि परिसाओ पणत्ताओ, तं जहा—खत्तियपरिसा १, गाहावइ-  
परिसा २, माहणपरिसा ३, इसिपरिसा ४ । जाणासि णं तुमं पएसी !  
एयासि चउण्हं परिसाणं कस्स का दं डणीई पणत्ता ? हंता !!  
जाग । म—जे णं खत्तियपरिसाए अवस्ज्झइ से णं हत्थच्छिण्णए वा

निश्छोडणाहिं निच्छोडित्तए) नाना प्रकार की अवहेलनारूप निर्भर्त्सनाओं  
द्वारा मेरी निर्भर्त्सना काना तथा नानाप्रकार की नीरसवचनरूप निश्छोटनाओं  
द्वारा मुझ से बोलना क्या योग्य है ? अर्थात् आप जैसे महापुरुषों को सभा  
के समक्ष ऐसा वचनरूप व्यवहार मेरे साथ करना उचित नहीं है।

टीकार्थ—स्पष्ट है ॥ सू० १४७ ॥

(एवं उच्चावयाहिं निवमंछणाहिं निवमंछित्तए, उच्चावयाहिं निच्छोडणाहिं निच्छो-  
डित्तए) अनेक प्रकारना अवहेलनाइय निर्भर्त्सनाओवडे मारी लत्सना करवी तेमज्ज अनेक  
प्रकारनी नीरसवचनइय निश्छोटनाओ वडे मने गमे तेम जोलवुं शु योग्य छे ?  
ओटवे डे तभारा जेवा महापुइषोने सलानी वच्चे आ जतना वय्थेनोतुं उच्चारथु  
उचित नहिं डडेवाय. टीकार्थ स्पष्ट ज छे ॥ सू० १४७ ॥

પાયચ્છિળ્ળણ વા સીસચ્છિળ્ળણ વા સૂલાઈણ વા એગાહચ્ચે કૂડા-  
હચ્ચે જીવિયાઓ વવરોવિજ્જઈ ? । જે ણં ગાહાવહપરિસાણ અવરજ્જઈ  
સે ણં તણ વા વેદેણ વા પલાલેણં વા વેદિત્તા અગણિકાણં ઝામિ-  
જ્જઈ ૨ । જે ણં માહણપરિસાણ અવરજ્જઈ સે ણં અણિટ્ટાહિં અકં-  
તાહિ જાવ અમણામાહિં વગ્ગૂહિં ઉવાલંભિત્તા કુંડિયાલંછણ વા  
સુણગલંછણ વા કીરઈ, નિવિસણ વા આણવિજ્જઈ ૩ । જે ણં  
ઈસિપરિસાણ અવરજ્જઈ સે ણં ણાઈઅણિટ્ટાહિં જાવ ણાઈ અમણા-  
માહિં વગ્ગૂહિં ઉવાલબ્ભઈ ૪ । એવં ચ તાવ પણ્ણી ! તુમં જાણાસિ  
તહાવિ ણં તુમં મમં વાસં વામેણં, દંડં દડેણં, પઢિકૂલં પઢિકૂલેણં,  
પઢિલોમં પઢિલોમેણં. વિવજ્જાસં વિવજ્જાસેણં વટ્ટસિ ? ॥સૂ. ૧૪૮॥

છાયા—તત્ત્વઃ સ્વલુ કેશી કુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમેવમવાદીત-  
જાનામિ સ્વલુ ત્વં પ્રદેશિન્ ! પતિપરિષદઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? । જાનામિ ચતસ્રઃ પરિ-  
ષદઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, તત્ત્વથા—ક્ષત્રિયપરિષત્ ૧, ગાથાપતિપરિષત્ ૨, બ્રાહ્મણપરિષત્

‘તણ ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ ણં) હસકે બાદ (કેસી કુમારસમણે) કેશીકુમારશ્ર-  
મણને (પણ્ણી રાયં એવં વચ્ચામો) પ્રદેશી રાજા સે એસા કહા—(જાણાસિ ણં  
તુમં પણ્ણી ! કહ પરિસાઓ પણ્ણત્તાઓ ? ) હે પ્રદેશિન્ ! તુમ જાનતે હો-  
કિતની પરિષદાઈ કહો ગઈ હૈં ? પ્રદેશોને કહા—(જાણામિ ચત્તારિ પરિસાઓ  
પણ્ણત્તાઓ) હાં ભદન્ત ! જાનતા હું—ચાર પરિષદા કહી ગઈ હૈં. (તં જહા—

‘તણ ણં કેસીકુમારસમણે’ इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(તણ ણં) ત્યાર પછી (કેસી કુમારસમણે) કેશી કુમાર શ્રમણે  
(પણ્ણી રાયં એવં વચ્ચાસી) પ્રદેશી રાજાને આ પ્રમાણે કહ્યું. (જાણાસિ ણં તુમં  
પણ્ણી ! કહ પરિસાઓ પણ્ણત્તાઓ ? ) હે પ્રદેશિન્ ! તમે જાણો છે કે પરિષદા-  
ઓ કેટલી કહેવાય છે ? પ્રદેશીએ કહ્યું. (જાણામિ ચત્તારિ પરિસાઓ પણ્ણત્તાઓ)  
હા છ, ભદન્ત ! હું જાણું છું કે ચાર જાતની પરિષદાઓ કહેવામાં આવી છે.  
(તં જહા, સ્વત્તિયપરિસા ૧, ગાહાવહપરિસા ૨, માહણપરિસા ૩, ઈસિ-  
પરિસા ૪) જે આ પ્રમાણે છે—ક્ષત્રિય પરિષદા, ૧ ગાથાપતિ પરિષદા ૨, બ્રાહ્મણ

૩, ઋષિપરિષદ ૪। જાનાસિ સ્વલુ ત્વં પ્રદેશિન્ ! એતાસાં ચતસ્રણાં પરિષદાં (મધ્યે) કસ્ય કા દણ્ડનીતિઃ પ્રજ્ઞસાઃ ? હન્ત ! ! જાનામિ-યઃ સ્વલુ ક્ષત્રિય-પરિષદિ અપરાધ્યતિ સ સ્વલુ હસ્તચ્છિન્નકો વા પાદચ્છિન્નકો વા શીર્ષ-ચ્છિન્નકો વા શૂલાયિતો વા એકાહત્યં કૂટાહત્યં જીવિતાદ વ્યપરોપ્યતે ? । યઃ સ્વલુ ગાથાપતિપરિષદિ અપરાધ્યતિ સ સ્વલુ સ્વચા વા વેષ્ટેન વા પલા-લેન વા વેષ્ટયિત્વા અગ્નિકાયેન ધમાપ્યતે ૨ । યઃ સ્વલુ બ્રાહ્મણપરિષદિ

સ્વત્તિયપરિસા ૧ ગાદાવદ્દપરિસા ૨, માહ્ણપરિસા ૩, હસિપરિસા ૪) જો કે પ્રકાર સે હૈ. ક્ષત્રિયપરિષદા ૧, ગાથાપતિપરિષદા ૨, બ્રાહ્મણપરિષદા ૩, ઋષિપરિષદા ૪, (જાનાસિ ણં તુમં પર્ણસી ! એયાસિ ચત્વરં પરિસાણં કસ્મ કા દંડનીઈ પળ્લતા) હે પ્રદેશિન્ ! તુમ જાનતે હો-કેન ચાર પરિષદાઓં કે વીચ મેં કિસ અપરાધી કે લિયે કિસ પ્રકાર દણ્ડનીતિ કહી ગઈ હૈ ? (હંતા, જાનામિ-જે ણં સ્વત્તિયપરિસાએ અવરજ્ઞહ સે ણં હસ્તચ્છિન્નણ વા પાદચ્છિન્નણ વા, શીર્ષચ્છિન્નણ વા શૂલાઈ વા એકાહત્ત્વે, કૂટાહત્ત્વે જીવિયાઓ વવરો-વિજ્ઞહ) હાં જાનતાહ-ક્ષત્રિયપરિષદામેં-ક્ષત્રિય વર્ગ જો કાઈ ક્ષત્રીય અપને વર્ગ મેં જિસ કિસી કા બી અપરાધ કરતા હૈ ઉસકા યા તો હાથ કાટ દિયા જાતા હૈ, અથવા પગ કાટ દિયા જાતા હૈ, યા શિર કાટ દિયા જાતા હૈ, યા શૂલી પર ઉસે ચઢા દિયા જાતા હૈ, યા ઉસે એક હી ઘાવ સે યા પર્વત ઉપર સે ગિરા દેને સે પ્રાણરહિત કર દિયા જાતા હૈ. (જે ણં ગાદાવદ્દપરિ-સાએ અવરજ્ઞહ-સે ણં તર્ણ વા વેદેણ વા પલાલેણ વા વેદિત્તા અગ્નિકાએ ણં જામિજ્ઞહ ૨) ગાથાપતિ પરિષદા મેં-ગૃહપતિવર્ગ મેં-જો કોઈ ગાથાપતિ-જિસ કિસી ક પરિષદા ૩, અને ઋષિ પરિષદા ૪, (જાનાસિ ણં તુમં પર્ણસી ! એયાસિ ચત્વરં પરિસાણં કસ્મ કા દંડનીઈ પળ્લતા) હે પ્રદેશિન્ ! તમે જાણો છો કે આ ચાર પરિષદાઓમાં કઈ જાતની દંડનીતિ કહેવામાં આવી છે ? (હંતા, જાનામિ-જે ણં સ્વત્તિયપરિસાએ અવરજ્ઞહ સે ણં હસ્તચ્છિન્નણ વા પાદચ્છિન્નણ વા શીર્ષચ્છિન્નણ વા શૂલાઈવા, એકાહત્ત્વે કૂટાહત્ત્વે જીવિયાઓ વવરોવિજ્ઞહ) હાં, જાણું છું. ક્ષત્રિય પરિષદામાં ક્ષત્રિયવર્ગમાં જો કોઈ ક્ષત્રિય પોતાની જાતમાં કે પરજાતિમાં ગમે તેનો અપરાધ (ગુને) કરે છે તો તેનો કાં તો હાથ કાપી નાખવા માં આવે છે, અથવા પગ કાપી નાખવામાં આવે છે, કે માથું કાપી નાખવામાં આવે છે કે તેને એક જ ઘામાં મારી નાખવામાં આવે છે કે પર્વત પરથી તેને ધડેલીને પ્રાણરહિત કરી નાખવામાં આવે છે. (જે ણં ગાદાવદ્દ પરિસાએ અવરજ્ઞહ-સે ણં તર્ણ વા, વેદેણ વા, પલાલેણ વા વેદિત્તા અગ્નિકાએ ણં જામિજ્ઞહ ૨)

અપરાધ્યતિ સ સ્વલુ અનિષ્ટાભિઃ અકાન્તાભિઃ યાવત્ અમનોઽમાભિઃ વાગ્મિઃ  
ઉપાલભ્ય કુણ્ડિલાઠ્છનકો વા શુન્વલાઠ્છનકો વા ક્રિયતે, નિર્વિષયો વા  
આજ્ઞાપ્યતે ૩ । યઃ સ્વલુ ઋષિપરિષદિ અપરાધ્યતિ સ સ્વલુ નાત્યનિષ્ટાભિઃ  
યાવત્-નાત્યમનઆમાભિઃ વાગ્મિઃ ઉપાલભ્યતે ૪ । એવં ચ તાવત્ પ્રદેશિન !

મી અપરાધ કરતા હૈ, વહ વૃક્ષાદિ કી છાલ સે અથવા તૃણાદિનિર્મિત રસી  
સે, યા પલાલ સે પરિવેષ્ટિત કિયા જાકર અગ્નિ સે જલા દિયા જાતા હૈ-  
(જે જાં માહણપરિસાએ અવરજ્જહ, સે જાં અણિટ્ટયાહિં અકંતાહિં જાવ અમણા-  
માહિં વગ્ગૂહિં ઉવાલંભિત્તા કુંડિયાલંછણે વા સુણગલંછણે વા કીરહ,  
નિવ્વિસાએ વા આણવિજ્જહ) બ્રાહ્મણ પરિષદા મેં જો બ્રાહ્મણ જિસ કિસી કા  
મી અપરાધ કરતા હૈ, વહ અનિષ્ટ-સામાન્યરૂપ સે અનભિલપિત, અકાન્ત-  
વિશેષરૂપ સે અનભિલપિત-અપ્રિય-પ્રમવર્જિત, અમનોજ્ઞ અસુન્દર એવં અમન  
આમ-મનઃ પ્રતિકૂલ એસી વાગિયોં સે ઉપાલંભ યુક્ત કિયા જાતા હૈ,  
તથા તમ્મલોહે કે તક્રુયે દ્રાગ કમણ્ડલુ કે જૈસે આકાર વાલે લાંછન સે  
લલાટ મેં ચિહ્નિત કિયા જાતા હૈ, અથવા કુન્ને કે પગ કે જૈસે આકારવાલે  
ચિહ્ન સે લાંછિત કિયા જાતા હૈ, અથવા દેશ સે બાહર નિકાલ દિયા જાતા હૈ.  
તુમ હમારે દેશ સે નિકલ જાઓ એસી આજ્ઞા ઉસકે લિયે દી જાતી હૈ ૩.  
(જે જાં હિસિપરિસાએ અવરજ્જહ સે જાં જાહ અણિટ્ટયાહિં જાવ જાહ અમણામાહિં  
વગ્ગૂહિં ઉવાલંભહ ૪) તથા જો ઋષિ પરિષદા મેં-ઋષિવર્ગ મેં-ઋષિ

ગાથાપતિ પરિષદામાં-ગૃહપતિ વર્ગમાં જે કોઈ ગાથાપતિ ગમે તેનો અપરાધ કરે  
તો તે વૃક્ષ વગેરેની છાલથી અથવા તૃણ વગેરેથી નિર્મિત દોરી કે પલાલથી પરિ-  
વેષ્ટિત કરાઈને અગ્નિવડે સળગાવવામાં આવે છે. (જે જાં માહણપરિસાએ અવર-  
જ્જહ, સે જાં અણિટ્ટયાહિં અકંતાહિં જાવ અમણામાહિં વગ્ગૂહિં ઉવાલંભિત્તા કુંડિયા  
લંછણે વા સુણગલંછણે વા કીરહ નિવ્વિસાએ વા આણવિજ્જહ) બ્રાહ્મણ પરિ-  
ષદામાં જે બ્રાહ્મણ ગમે તેનો અપરાધ કરે છે તો તે અનિષ્ટ-સામાન્ય રૂપથી અન-  
ભિલપિત, અકાન્ત-વિશેષરૂપથી અનભિલપિત, યાવત્ અપ્રિય-પ્રેમવર્જિત, અમનોજ્ઞ-  
અસુન્દર અને અમન આમ મનઃપ્રતિકૂલ એવી વાણીઓથી ઉપાલંભયુક્ત કરવામાં  
આવે છે તેમજ તત્તથયેલ લોખંડના સળિયા વડે કમંડલું જેવા આકારથી યુક્ત  
ચિહ્નથી લલાટમાં ચિહ્નિત કરવામાં આવે છે. અથવા ફૂતરાના પગ જેવા આકારવાળા  
ચિહ્નથી લાંછિત કરવામાં આવે છે. અથવા દેશ બહાર કરવામાં આવે છે. તમે અમારા  
દેશથી જતા રહો. એવી આજ્ઞા તેને આપવામાં આવે છે. ૩, (જે જાં હિસિપરિસાએ  
અવરજ્જહ સે જાં જાહ અણિટ્ટયાહિં જાવ જાહ અમણામાહિં વગ્ગૂહિં ઉવાલંભહ ૪)

ત્વં જાનાસિ તથાપિ સ્વલુ ત્વં માં શામવામેન, દણ્ડદણ્ડેન. પ્રતિકૂલપ્રતિ-  
કૂલેન, પ્રતિલોમ પ્રતિલોમેન, વિપર્યાસવિપર્યાસેન વર્તસે ॥ મૃ. ૧૪૮॥

ટીકા—“તથા” કેમી” દિગ્દશાદિ—તતઃ તદનન્તરં સ્વલુ કેશી કુમાર-  
શ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમ્ એવં—વક્ષ્યમાણપ્રકારં વચનમ્ અવાદીત્—કથિત  
વાન—હે પ્રદેશિન ! ત્વં જાનાસિ કિં પરિવદઃ—વર્ગાઃ કતિ—કતિસંસ્થાકાઃ  
પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? । પ્રદેશી રાજા પ્રાહ—જાનામિ—પરિવદશ્ચત્સ્રઃ—ચતુઃ સંસ્થાકાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ,  
તથા—તા યથા—ક્ષત્રિયપરિવદ ૧, ગાથાપતિપરિવદ ૨, બ્રહ્મણપરિવદ ૩,  
ઋષિપરિવદ ૪ । કેશી કુમારશ્રમણઃ પૃચ્છતિ—હે પ્રદેશિન ! જાનામિ સ્વલુ

જિસ કિસી કા બી અપરાધ કરતા હૈ વહ ન અતિ અનિષ્ટ, યાવત્—ન  
અતિ અકાંત, ન અતિ અપ્રિય, ન અતિ અમનોહ આર ન અતિ અમન  
આમ એસી વાણિયો દ્વારા ઉપાલંભયુક્ત ક્રિયા જાતા હૈ. (એવં તાવ પપસી !  
તુમં જાણાસિ—તદા વિ ણં તુમં મમં વામં વામેણં. દંડં દંડેણં, પઢિકૂલં  
પઢિકૂલેણં, પઢિલોમં પઢિલોમેણં, વિવજ્ઞાસં વિવજ્ઞાસેણં વદસિ) હે પ્રદેશિન  
તુમ હસ પૂર્વોક્ત પ્રકારવાલી નીતિ કો—દણ્ડ નીતિ કો—નિશ્ચય સે જાનતે  
હો, ફિર બી તુમ મેરે પ્રતિવામવામરૂપ સે અર્થ વિરુદ્ધવ્યવહાર સે, દણ્ડ  
દણ્ડરૂપ સે—દણ્ડવત્ સ્તબ્ધરૂપ વ્યવહાર સે—અતિ અહંકાર-યુક્ત વ્યવહાર  
સે, પ્રતિકૂલ પ્રતિકૂલરૂપ સે અર્થ વિપક્ષી ભૂત વ્યવહાર સે, પ્રતિલોમપ્રતિ-  
લોમ સે—અતિવિપરીતરૂપ વ્યવહાર સે ઓર વિપર્યાસ વિપર્યાસ સે—સર્વથા  
વિરુદ્ધરૂપ વ્યવહાર સે પ્રવૃત્ત હો રહે હો ।

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ હૈ ॥૧૪૮॥

તેમજ જે ઋષિ પરિવદામાં—ઋષિવર્ગમાં કોઇ પણ ઋષિ અપરાધ કરે છે તે ન અતિ  
અનિષ્ટ યાવત્ ન અતિ એકાંત ન અતિ અમનોહ અને ન અતિ અમન આમ એવી  
વાણીઓ બડે ઉપાલંભયુક્ત કરવામાં આવે છે. (એવં તાવ પપસી ! તુમં જાણાસિ  
—તદા વિ ણં તુમં મમં વામં વામેણં દંડં દંડેણં પઢિકૂલં, પઢિકૂલેણં,  
પઢિલોમં પઢિલોમેણં, વિવજ્ઞાસં વિવજ્ઞાસેણં વદસિ) હે પ્રદેશિન ! તમે  
આ પૂર્વોક્ત નીતિને—દંડનીતિને—સારી રીતે બાણી છો, છતાં એ તમે મારા પ્રતિ વામ  
વામરૂપથી—અતિ વિરુદ્ધ વ્યવહારથી, દણ્ડ દણ્ડરૂપથી—દણ્ડવત્ સ્તબ્ધરૂપ વ્યવહારથી  
અતિ અહંકારયુક્ત વ્યવહારથી, પ્રતિકૂલ, પ્રતિકૂલરૂપથી અતિ વિપક્ષી વ્યવહારથી  
પ્રતિલોમ પ્રતિલોમથી—અતિ વિપરીતરૂપ વ્યવહારથી અને વિપર્યાસથી સર્વથા વિરુદ્ધરૂપ  
વ્યવહારથી પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છો. ટીકાર્થ સ્પષ્ટ જ છે. ॥ મૃ. ૧૪૮ ॥



त्वं ? एतासां चतसृणां प रषदां मध्ये कस्य अपराधिनः का-किप्रकारा  
दण्डनीतिः-दण्डविधानरूपा . ज्ञप्तः-कथिता ? । प्रदेशी प्राह-हन्त ! जानामि  
तदेवाह-क्षत्रियपरिषदि-क्षत्रियवर्गे यः खलु कश्चिद् क्षत्रियः स्ववर्गे परवर्गे-  
वा-स्य कस्यापि, अपराध्यति-अपराधं करोति स खलु हस्तच्छिन्नकः-  
छिन्नहस्तः क्रियते, वा-अथवा पादच्छिन्नकः, अथवा शीर्षाच्छिन्नकः, वा  
अथवा शूलाघितः-शूलारोपितः वा-अथवा एकाहत्यम्-एकाघातेन, कूटाहत्य-  
पर्वतपातेन जीवितात-प्राणेभ्यः व्यपरोप्यते-पृथक् क्रियते १। गाथापतिपरिषदि  
गृहपतिवर्गे यः खलु कश्चिद् गाथापति रस्य कस्यापि अपराध्यति स खलु  
त्वचा-वृक्षादिच्छलिना वा अथवा वेष्टेन-तृणादिनिर्मितरज्ज्वा, वा अथवा  
पलालेन-प्रसिद्धेन वेष्टयित्वा-पण्विष्टय अग्निकायेन-अग्निना ध्माप्यते-ज्वा-  
ल्यते २। ब्राह्मणपरिषदि-ब्राह्मणवर्गे यः खलु कश्चिद् ब्राह्मणो यस्य कस्यापि  
अपराध्यति स खलु अनिष्टाभिः-सामान्यनोऽनभिलषिताभिः अक्रान्ताभिः  
विशेषनोऽनभिलषिताभिः, यावच्छब्देन-“अप्रियाभिः-प्रेमवर्जिताभिः-असु-  
न्दरीभिः” इति संग्राह्यम्, अमनोऽमाभिः मनप्रतिकूलाभिः वाग्भिः-  
वाणीभिः उपालभ्य उपालम्भं दत्त्वा कुण्डिकालाञ्छनकः-कुण्डिका-कमण्डलुः  
तदाकारकं लाञ्छनकं-तप्तशलाकया ललाटे चिह्नं यस्य स तथाभूतः, वा  
अथवा शुनकलाञ्छनकः-ललाटे शुनकपदाकारकं चिह्नं यस्य स तथाभूतः  
क्रियते, वा-अथवा निर्णयः-निर्वासितो यथा भवेत्तथा आज्ञाप्यते-‘त्वम्-  
स्मादेशान्निर्गच्छ’ इत्याज्ञा तस्मै दीयते इति भावः । ३। ऋषपरिषदि-  
ऋषिवर्गे यः खलु कश्चिद् ऋषिरस्य कस्यापि अपराध्यति स खलु नात्य  
निष्टाभिः यावत्-यावच्छब्देन-नात्यक्रान्ताभिः नात्यप्रियाभिः, नात्यमन-  
ज्ञाभिः” इति संग्राह्यम्, नान्यमनोऽमाभिः वाग्भिः-वाणीभिः उपलभ्यते-  
तस्मै उपालम्भो दीयते इति भावः ४। केशी कुमारश्रमणः कथयति-हे  
प्रदेशिन एवं-पूर्वोक्तप्रकारां दण्डनीतिं तावत्-निश्चयेन त्वं जानासि तथापि  
त्वं मां प्रति वामवामेन-अतिशयवामेन-अतिविरुद्धेन व्यवहारेण, एवं दण्ड-  
दण्डेन-अतिदण्डरूपेण-दण्डवत्स्तब्धरूपेण-अत्यहं रयुक्तेनेत्यर्थः . प्रतिकूलं  
प्रतिकूलेन-अप्रतिकूलेन-विपक्षीभूतेनेत्यर्थः प्रतिलोमप्रतिलोमेन-अतिप्रतिलो-  
मेन-अतिविपरीतेनेत्यर्थः विपर्यासविपर्यासेन अतिविपर्यासेन-सर्वथा विरु-  
द्धेनेत्यर्थः, एतादृशेन व्यवहारेण वर्तसे ॥सू० १४८॥



मूलम्—तए णं पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी—  
 एवं खलु अहं देवानुप्पिएहिं पढमिल्लिएणं चेव वागरणेणं संलत्ते  
 तए णं मम इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था—जहा  
 जहा णं एयस्स पुरिसस्स वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं  
 वट्टिस्सामि तहा तहा णं अहं नाणं च नाणोवलंभं च चरणं च  
 चरणोवलंभं च दंसणं च दंसणोवलंभं च जीवं च जीवोवलंभं च  
 उवलभिस्सामि, त एएणं अहं कारणेणं देवानुप्पियाणं वामं वामेणं  
 जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिए ॥सू० १४९॥

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणमेवमवादीत्  
 एवं खलु अहं देवानुप्रियैः प्राथमिकेनैव व्याकरणेन संलपितः तदा खलु  
 मम अपमेः रूप आध्यात्मिकः यावत् संकल्पः समुदपद्यत, यथा यथा खलु

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (पएसी राया) प्रदेशी राजाने केशि-  
 कुमारसमणं एवं वयासी) केशी कुमारश्रमण से ऐसा कहा—(एवं खलु  
 अहं देवानुप्पिएहिं पढमिल्लिएणं चेव वागरणेणं संलत्ते) हे भदन्त ! आप  
 देवानुप्रिय के द्वारा मैं सर्व प्रथम बोला गया हूं अर्थात्—आप देवानु-  
 प्रिय ! मुझ से सब से पहिले बोलें हैं—आप के साथ मेरी यह सब से  
 प्रथम भेट है, इसके पहिले हमारा आपका कोई मिलन नहीं हुआ है  
 (तए णं मम इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था) अतः जब

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) त्थारपणी (पएसी राया) प्रदेशी राजाने (केशिं कुमार  
 समणं एवं वयासी) केशीकुमार श्रमणने आ प्रभाणे कहुं—(एवं खलु अहं  
 देवानुप्पिएहिं पढमिल्लिएणं चेव वागरणेणं संलत्ते) हे भदन्त ! आप देवा-  
 नुप्रियवडे हूं साथी पहिलां बोलाये छुं ओटवे डे आप देवानुप्रिय ! भारी साथे  
 सोथी पहिलां बोल्या छि. आपनी साथे आ भारी पहिली मुलाकात छे. ओना पहिलां  
 आपनी भारी साथे भेट नहोती थछ. (तए णं मम इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव  
 संकप्पे समुप्पज्जित्था) ओथी न्यारे तमे भारी साथे सर्व प्रथम आ प्रभाणे

एतस्य पुरुषस्य वामवामेन यात् विपर्यासविपर्यासेन वर्तिष्ये तथा तथ  
खलु अहं ज्ञानं च ज्ञानोपालम्भं च चरणं च चरणोपालम्भं च दर्शनं च  
दर्शनोपालम्भं च जीवं च जीवोपालम्भं च उपलप्स्ये, तत् एतेनाहं का-  
णेन देवानुप्रियाणां वामवामेन यावद् विपर्यासविपर्यासेन वर्तितः ॥सू०१४९॥

टीका—‘त ए णं एसी’ इत्यादि—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिनं  
कुमारश्रमणमेवमवादीत्—एवं खलु अहं देवानुप्रियैः—भवद्भिः प्राथमिकेनैव—  
व्याकरणेन—संलापेन, संलपिनः—संभाषितः, तदा खलु मम अयमेन्द्रपः—

आप मुझ से सर्व प्रथम इस प्रकार से बोलेतो मेरे मन में यह इस  
प्रकार का यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ कि (जहां २ णं एयस्स पुरिसस्स  
वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिस्सामि, तहां २ णं अहं  
नाणं च नाणोवलंभं च चरणोलंभं च, दंसणं च दंसणोवलंभं च जीवं च  
जीवोवलंभं च उवलंभिस्सामि) मैं जैसा इस पुरुष के साथ वाम वामरूप से  
यावत्—दण्ड दण्डरूप से, प्रतिकूल प्रतिकूलरूप से प्रतिलोम प्रतिलोमरूप  
से एवं विपर्यास विपर्यासरूप से व्यवहार करूंगा, वैसा वैसा २ मैं ज्ञान  
को—पदार्थ ज्ञान को ज्ञानोपालम्भको—ज्ञान की प्राप्ति को, चारित्र को, चारि-  
त्रके लाभ को, तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सम्यक्तत्व को, दर्शनलाभ को जीव के  
स्वरूप को, और जीव के स्वरूपकी प्राप्ति को पा जाऊंगा (तं एएणं  
अहं कारणेणं देवानुप्रियाणं वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिए)  
अतः इसी कारण से आप देवानुप्रिय के साथ मैं अतिविरुद्धरूपव्यवहार  
से यावत् सर्वथा विरुद्धरूप व्यवहार से प्रवर्तित हुआ हूं।

भोदया ते भारा मनभां आ ज्ञातनी यावत् संकल्प उत्पन्न थयो के (जहां २ णं एयस्स  
पुरिसस्स वामं वामेणं जाव विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिस्सामि, तहां २  
णं अहं नाणं च नाणोवलंभं च चरणं च चरणोवलंभं च, दंसणं च दंसणो-  
वलंभं च जीवं च, जीवोवलंभं च उवलंभिस्सामि) हुं जेम जेम आ पुश्वनी  
सोथे वाम वामइयथी यावत्—दंडं उइयथी, प्रतिकूलप्रतिकूलइयथी, प्रतिलोम प्रतिलोम-  
इयथी अने विपर्यास विपर्यासइयथी व्यवहार करीश—आयस्स करीश तेम तेम हु  
ज्ञानने, पदार्थ ज्ञानने, ज्ञानोपालम्भने ज्ञानप्राप्तिने चारित्रने, चारित्र लाभने,  
तत्त्वार्थ श्रद्धानइय सम्यक्तत्वेने, दर्शनलाभने, ज्ञानना स्वइयने अने ज्ञानना स्वइयनी  
प्राप्तिने भेजवीश, (तं एएणं अहं कारणेणं देवानुप्रियाणं वामं वामेणं जाव  
विवच्चासं विवच्चासेणं वट्टिए) खेटला भाटे आप देवानुप्रियनी साथे भे अति  
विरुद्धइय व्यवहारथी यावत् सर्वथा विरुद्धइय व्यवहारथी प्रवर्तित थयो छुं.

વક્ષ્યમાણપ્રવારકઃ, આધ્યાત્મિકઃ—આત્મગતો વિચારઃ યાવત્—યાવચ્છવ્દેન—  
 ચિન્તિતઃ, કલ્પિતઃ, પ્રાર્થિતઃ, મનોગતઃ' इति संग्रहम्। मंकलः—विचारः  
 समुदपद्यत—संजातः, तदेवाह—यथा यथा खलु अहम् एतस्य पुरुषस्य वाम-  
 वामेन—अतिविरुद्धेन व्यवहारेण यावत्—यावच्छव्ददेन—दण्डदण्डेनः प्रतिकूल-  
 प्रतिकूलेनः प्रतिशामपत्तिलोमेन' इति संग्रहम्, विपर्यासं—विपर्यामेन' एषा-  
 मर्थोऽव्यवहेतुपूर्वमुत्रे गतः, वर्तिष्ये तथा तथा खलु अहं ज्ञानं च—पदार्थ-  
 ज्ञानं च ज्ञानोपालम्भं—ज्ञानप्राप्तिं च च—पुनः चरणं—चारित्रं चरणोपालम्भं  
 चारित्रलाभं च—पुनः दर्शनं—स्वार्थश्रद्धान्तां सम्पत्त्वं दर्शनोपालम्भं—  
 दर्शनलाभं च—पुन—जीवो—जीवस्वरूपं—जीवोपालम्भं—जीवस्वरूपः  
 प्राप्तिम् उपलप्स्ये—प्राप्स्यामिः तद् एतेन खलु कारणेन अहं देवानु-  
 प्रीयतां ममीषे वा न मामेन—अतिविरुद्धेन व्यवहारेण यावत् विपर्यासविपर्या-  
 सेन—सर्वथाविरुद्धेन व्यवहारेण वर्तितः—अहं वामवामादिकं व्यवहार  
 वर्तितवानिति भावः । ॥ सू० १४९ ॥

મૂલમ્—તણ ણં કેસીકુમારસમણે પણસિ રાયં એવં વયાસી-  
 જાણાસિ ણં ! કહ વવહારગા પળ્ણત્તા ? હંતા ! ! જાણામિ ચત્તારિ  
 વવહારગા પળ્ણત્તા, ત જહા—દેહ નામેગે ણો સળ્ણવેહ ૧, સળ્ણવેહ  
 નામેગે નો દેહ ૨ । એગે દેહ વિ સળ્ણવેહવિ ૩ । એગે ણો દેહ ણો

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. આ મુત્ર કા ભાવાર્થ એસા છે કિ પ્રદેશી રાજાને  
 કેસી કુમાર શ્રમણ સે અપને દ્વારા કિયે ગયે પ્રતિકૂલ વ્યવહાર કે પ્રતિ  
 એસા કહા છે મદન્ત ! આપ કી ઓર હમારી યહ પ્રથમ મેટ છે. હમમે  
 જો આપને મુદ્ધસે સંભાષણ કિયા—ઉસસે મૈને યહ નિષ્કર્ષ નિકાલા  
 કિ મૈ इनके प्रति जैसा २ टेडा चल्ंगा—विरुद्ध व्यवहार करूंगा—वैसा २  
 मुझे इनसे ज्ञान आदि प्राप्त होगा अतः मैने आपके साथ इस प्रकार का  
 व्यवहार किया है ॥ सू० १४९॥

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ જ છે. આ સૂત્રનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે કે પ્રદેશી રાજાએ  
 કેસીકુમાર શ્રમણને પોતાના વડે આચરેલ પ્રતિકૂલ વ્યવહારને લઈને આ પ્રમાણે  
 કહ્યું છે કે હું ભદ્રંત ! આપની અને મારી આ પહેલી ભેટ છે. આમાં જે આપશ્રીએ  
 મારી સાથે સંભાષણ કર્યું તેથી મને નિષ્કર્ષરૂપે આ ભાતની પ્રતીતિ થઈ કે હું  
 તમારા પ્રતિ જેમ જેમ વિરુદ્ધ બોલીશ તેમ તેમ મને તમારાથી જ્ઞાન વગેરેની પ્રાપ્તિ  
 થશે. આ કારણથી જ મેં આપની સાથે આ ભાતનું આચરણ કર્યું છે. ॥સૂ૦૧૪૯॥

सण्णवेइ ४ । जाणासि णं तुमं पएसी ? एएसिं चउण्ह पुरिसाणं  
के ववहारी के अववहारी ? ! हंता ! ! जाणामि तत्थ णं जे से पुरिसे  
देइ णो सण्णवेइ सेणं पुरिसे ववहारी, तत्थ णं जे से पुरिसे  
णो देइ सण्णवेइ से णं पुरिसे ववहारी २, तत्थ णं जे से पुरिसे  
देइ वि सण्णवेइ वि से पुरिसे ववहारी ३, तत्थ णं जे से पुरिसे  
णो देइ णो सण्णवेइ से णं अववहारी ४ । एवामेव तुमंपि ववहारी,  
णो चेव णं तुमं पएसी ! अववहारी ॥सू० १५०॥

छाया—ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिराजमेवमवादीत—जा-  
नासि खलु त्वं प्रदेशिन् ! कति व्यवहारकाः प्रज्ञप्ताः ? । हन्त ! ! जानामि—  
चत्वारो व्यवहारकाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ददाति नामैकः नो संज्ञापयति १,  
संज्ञापयति नामैको नो ददाति २, एको ददाति अपि संज्ञायति अपि ३,

‘तए णं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (केसी कुमारसमणे) केशीकुमारश्रमणने  
(पएसिं रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—(जाणासि णं तुमं  
पएसी ! कइ व्यवहारगा पणत्ता ?) हे प्रदेशिन् ! व्यवहार कितने होते हैं,  
क्या तुम इस बात को जानते हो ? (हंता, जाणामि) हां, भदंत ! जानता  
हुं (चत्वारि व्यवहारगा पणत्ता) व्यवहार चार कहे गये हैं । (तं जहा—देइ,  
नामेगे, णो सण्णवेइ ? सण्णवेइ नामेगे णो देइ २, एगे देइ वि, सण्णवेइ

‘तएणं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) त्थार पछी (केसीकुमारसमणे) केशी कुमार श्रमणे  
(पएसिं रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजने आ प्रमाणे कहुं—(जाणासि णं तुमं  
पएसी ! कइ व्यवहारगा पणत्ता ?) हे प्रदेशिन् ! तुं तमे जाणो छी के व्यवहार  
केटली जतना होय छी ? (हंता, जाणामि) हां, भदंत ! जाणुं छुं (चत्वारि वव-  
हारगा पणत्ता) व्यवहार चार कहेवाय छी (तं जहा देइ नामेगे, णो सण्ण-  
वेइ १, सण्णवेइ नामेगे णो देइ २, एगे देइ वि, सण्णवेइ वि ३, एगे

एकः नो ददाति नो संज्ञापयति ४ । जानासि खलु त्वं प्रदेशिन् ? एतेषां चतुर्णां पुरुषाणां को व्यवहारी ? कोऽव्यवहारी ? हन्त !! जानामि । तत्र खलु यः स पुरुषो ददाति नो संज्ञापयति स खलु पुरुषो व्यवहारी । तत्र खलु यः स पुरुषो नो ददाति संज्ञापयति स खलु पुरुषो व्यवहारी । तत्र खलु यः स पुरुषो ददात्यपि संज्ञापयत्यपि स पुरुषो व्यवहारी । तत्र खलु

वि ३, एमे णो देइ णो सण्णवेइ ४, जो इस प्रकार से हैं—एक कोइ पुरुष किसी वस्तु को किसी के लिये देता तो है, पर उसके साथ वह मिष्ट भाषण द्वारा अच्छा संतोषप्रद व्यवहार नहीं करता है १, एक पुरुष मिष्ट भाषण द्वारा दूसरे के प्रति संतोषप्रद व्यवहार तो करता है, परन्तु देता कुछ भी नहीं है २, एक पुरुष देता भी है और लेने वाले के प्रति मिष्टवचनद्वारा संतोषप्रद व्यवहार भी करता है ३, एक पुरुष ऐसा होता है जो न देता है और न मिष्टवचन द्वारा संतोषप्रद व्यवहार ही करता है ४, (जानासि णं तुमं पएसी ! एएसिं चउण्हं पुरिसाणं के व्यवहारी के अव्यवहारी ?) केशी ने प्रदेशी से पूछा—हे प्रदेशिन् ! तुम जानते हो इन चार व्यवहारी पुरुषों के बीच में कौन व्यवहारी है और कौन अव्यवहारी है ? तब प्रदेशीने केशिकुमार श्रमण से कहा—(हन्ता, जानामि—तत्थ णं जे से पुरिसे देइ णो सण्णवेइ से णं पुरिसे व्यवहारी ?) हां, जानता हूं, इनमें जो पुरुष देता है और सम्यग् आलाप से संतोष उत्पन्न नहीं कराता है वह पुरुष व्यवहारी कहा जाता है (तत्थ णं जे से पुरिसो णो

णो देइ णो सण्णवेइ ४) जे आ प्रमाणे छे, ओक भाणुस कोइ पणु वस्तु कोइने आपे तो छे पणु तेनी साथे ते मिष्ट संभाषणवडे अच्छे, संतोषप्रद व्यवहार करतो नथी ? ओक भाणुस मिष्ट भाषणवडे नीलनी साथे संतोषप्रद व्यवहार तो करे छे पणु आपतो कंठ नथी २, ओक भाणुस आपे पणु छे अने देनार भाणुसने मिष्ट वचनो वडे संतोष पणु आपे छे, ३, ओक भाणुस ओवो पणु होय छे के जे कंठ पणु आपतो नथी अने मिष्ट वचनोथी संतोषजनक व्यवहार पणु करतो नथी (जानासि तुमं पएसी ! एएसिं चउण्हं पुरिसाणं के व्यवहारी के के अव्यवहारी ?) केशीने प्रदेशीने प्रश्न कयो के हे प्रदेशिन् ! तमे नालो छे के आ आर व्यवहारी छे ? त्यारे प्रदेशीने कहुं (हन्ता, जानामि, तत्थ णं जे से पुरिसे देइ णो सण्णवेइ से णं पुरिसे व्यवहारी ?) हां, नालो छुं आमां जे भाणुस आपे छे अने सारा वचनोथी संतोष आपतो नथी ते पुरुष व्यवहारी कहे नाय छे, (तत्थ णं जे से पुरिसे णो देइ सण्णवेइ से णं पुरिसे व्यवहारी, २)

यः स पुरुषो नो ददाति नो संज्ञापयति स खलु अव्यवहारी । एवमेव  
त्वंमपि व्यवहारी; नो चैव खलु त्वं प्रदेशिन् ! अव्यवहारी ॥सू० १५०॥

टीका—“तए णं केसीकुमारसमणे” इत्यादि—ततः—अनन्तरोक्त-  
पकारेण वर्त्तनानन्तरं खलु केशी कुमारश्रमणः प्रदेशिराजम् एवमवादीत-

देहः सणवेइ से णं पुरिसे ववहारी२) तथा जो पुरुष देता नहीं है किन्तु  
सम्यक् आलाप से संतोष उत्पन्न करता है वह पुरुष व्यवहारी है।  
(तत्थ णं जे से पुरिसे देइ वि, सणवेइ वि, से पुरिसे ववहारी३) तथा जो  
पुरुष देता भी है और सम्यक् आलाप द्वारा संतोष भी उत्पन्न कराता  
है वह पुरुष व्यवहारी है। (तत्थ णं जे से पुरिसे णो देइ णो सणवेइ से  
पुरिसे से णं अववहारी) तथा जो पुरुष न देता है और न सम्यक् संभा-  
षण द्वारा संतोष उत्पन्न करता है वह पुरुष अव्यवहारी है। (एवामेव  
तुमं पि ववहारी णो चेव णं तुमं पएसी ! अववहारी) इसी तरह से अर्थात्  
भङ्गत्रयोक्त पुरुष, के बीच में एक भंग विशेष की तरह है प्रदेशिन् !  
तुम भी व्यवहारी हो, चतुर्थ भङ्गोक्त पुरुष की तरह तुम अव्यवहारी नहीं  
हो—तात्पर्य कहने का यह है कि यद्यपि हे प्रदेशिन् ! तुमने सम्यक् आलाप  
द्वारा संतुष्ट कर मुझसे व्यवहार नहीं किया है—फिर भी मेरे विषय में भक्ति  
और बहुमान तो किया ही है—अतः तुम आद्यभङ्गोक्त पुरुष की तरह  
व्यवहारी ही हो—अव्यवहारी नहीं हो।

तेमज्जे जे पुइष आवतो नथी पणु सारा संलापणुथी संतोष उत्पन्न करे छे ते  
व्यवहारी छे. (तत्थ णं जे से पुरिसे देइ, वि, सणवेइ वि, से पुरिसे ववहारी३)  
तेमज्जे जे पुइष अ.पे पणु छे अने सम्यक् आलापवडे संतोष पणु उत्पन्न करे  
छे ते पुइष व्यवहारी छे. (तत्थ णं जे से पुरिसे णो देइ णो सणवेइ से पुरिसे णं  
अववहारी) तेमज्जे जे पुइष आपतो नथी तेमज्जे सम्यक् आलाप पणु करतो नथी  
अएटवेइ सारा संलापणुथी संतोष उत्पन्न करतो नथी ते पुरुष अव्यवहारी छे.  
(एवामेव तुमं पि ववहारी णो चेव णं तुमं पएसी ! अववहारी) आ प्रमाणे  
छे प्रदेशिन् तमे पणु व्यवहारी छे.

अतुर्थ भंगमां कहा मुण्ण तमे अव्यवहारी नथी. तात्पर्य आ प्रमाणे छे के छे  
प्रदेशिन् ! तमोअे सम्यक् आलापइय सारे व्यवहार भारी साथे कर्यो नथी छतांअे  
भारा विषयमां लडित अने गहुमान तो तमे कर्या छे. अथी तमे आद्यलंगोक्त पुइष-  
नी जेमे व्यवहारी न छे. अव्यवहारी नथी.



हे प्रदेशिन त्वं जानासि खलु यत् कति-कियन्तो व्यवहारकाः-व्यव-  
हाराः-प्रवृत्तयः प्रज्ञप्ताः ?” इति प्रश्नानन्तरं प्रदेशी प्राह-हन्त ! जानामि,  
तत्र ज्ञायमानविषयं प्रकाशयति-चत्वारः-चतुः संख्यकाः व्यवहाराः प्रज्ञप्ताः,  
तद्यथा-एकः-कश्चित् पुरुषः ददाति-किञ्चित् वस्तु कस्मैचित् समर्पयति  
किन्तु न संज्ञापयति-सम्यग्आलापेन संतोषं नोत्पादयति १ । एकः संज्ञा-  
पयति किन्तु नो ददाति २ । एको ददात्यपि संज्ञापयत्यपि ३ । एको नो  
ददाति नो संज्ञापयति ४ । इति चत्वारो भङ्गाः । तत्र केशी प्रदेशिनं पृच्छ-  
ति-हे प्रदेशिन ! त्वं जानासि खलु एतेषां चतुर्णां पुरुषाणां दान-तद-  
संज्ञापन १-संज्ञापनाऽदान २-दानसंज्ञापनोभय ३-तदुभयराहित्यरूप ४  
वृत्तिसम्पन्नानां मध्ये कः पुरुषो व्यवहारी ? इति जानासि ? इति प्रश्ने  
प्रदेशी प्राह-हन्त ! जानामि-तदेव दर्शयति “तत्थ ण” इत्यादिना-तत्र-  
भङ्गचतुष्टये खलु यः सः-प्रथमभङ्गोक्तः पुरुषः ‘ददाति नो संज्ञापयति’ सः-  
दान-तदसंज्ञापनसम्पन्नः खलु पुरुषः व्यवहारी कथ्यते १ । एवं तत्र खलु  
यः सः-द्वितीयभङ्गोक्तः, ‘नो ददाति नो संज्ञापयति’-संज्ञापनाऽदानसम्प-

टीकार्थ-जब केशिकुमारश्रमणने प्रदेशी राजा से ऐसा पूछा कि हे  
प्रदेशिन ! तुम जानते हो कि व्यवहार कितने प्रकार का होता है ? इस  
प्रकार से पूछने का कारण यह हुआ कि प्रदेशी राजाने १४९वें सूत्र में  
अपने द्वारा कृतव्यवहार के विषय में सफाई उपस्थित की है. केशीकु-  
मारश्रमण के प्रश्न को सुनकर उसने कहा हां, भदन्त ! जानता हूं व्यव-  
हार चार प्रकार का होता है. एक व्यवहार में देनेवाला पुरुष किसी के  
लिये कोई वस्तु देता है, परन्तु अपने सम्यक् आलाप से-वातचीत से  
वह उसके लिये संतोष उत्पन्न नहीं कराता है, दूसरे व्यवहार में देनेवाला

टीकार्थ-न्याये केशी कुमार श्रमणने प्रदेशी राजाने आ प्रमाणे प्रश्न क्यो के  
हे प्रदेशिन ! तमे ज्ञाणे छे के व्यवहार केटला प्रकारने होय छे ? आ प्रमाणे के  
प्रश्न करवाभां आव्यो छे तेनु कारण ओ छे के प्रदेशी राजाने १४९ भा सूत्रभां  
के जतनुं आव्यरण क्युं छे तेना संबंधभां सपष्टीकरण करवाभां आव्युं छे. केशी  
कुमार श्रमणना प्रश्नने सांलणीने तेणे कहुं हां लहत ! ज्ञाणुं छुं, व्यवहार चार  
प्रकारने होय छे. प्रथम व्यवहारभां दानकर्ता पुरुष कोछना भाटे कोछ वस्तु आपे  
छे, यणु पोताना सम्यक् आलापथी-सारी भीठी वातचीतथी ते सामेना भाणुसने  
संतोष आपतो नथी द्वितीय व्यवहारभां दानकर्ता पुइय पोतानी भीठी वाणीथी भीजने



ન્નઃ સઃ સ્વલ્લુ પુરુષો વ્યવહારી ૨, એવં તત્ર યઃ સઃ તૃતીયમ્જ્ઞોક્તઃ પુરુષઃ  
દદાત્યપિ સંજ્ઞાપયત્યપિ' સઃ-દાન-તત્સંજ્ઞાપનસમ્પન્નઃ પુરુષો વ્યવહારી ૩ ।

પુરુષ અપની મિષ્ટ ભાષણરૂપ પ્રવૃત્તિ સે દૂસરે કો સંતોષ તો ઉત્પન્ન કરા  
દેતા હૈ, પરન્તુ અપની વસ્તુ ઉસે દેતા નહીં હૈ. તૃતીય વ્યવહાર મેં દેને-  
વાલા અપની વસ્તુ દે મી દેતા હૈ ઓર અપની મિષ્ટ ભાષણરૂપ પ્રવૃત્તિ સે  
ઉસે સંતોષ મી ઉત્પન્ન કરદેતા હૈ, ચતુર્થ વ્યવહાર મેં-કોઈ દેતા મી  
નહીં હૈ ઓર સંતોષ મી ઉત્પન્ન નહીં કરાતા હૈ. હસ પ્રકાર યે ચાર મંજ્ઞ  
હૈ. હન મેં કેશીકુમારશ્રમણ પ્રદેશી રાજા સે પૂછતે હૈ-હે પ્રદેશિન્ ! તુમ  
જાનતે હો કિ હન ચાર-દાન-તદસંજ્ઞાપન, સંજ્ઞાપન દાને સંજ્ઞાપન ઉભય  
એવં તદુભય રહિતરૂપ વૃત્તિસંપન્ન પુરુષોં કે મધ્ય મેં કૌન પુરુષ વ્યવહારી  
હૈ ? તથ પ્રદેશીને કહા હાં, મદન્ત ! જાનતા હું, હસ મંજ્ઞચતુષ્ટય મેં જો  
પ્રથમ મંજ્ઞોક્ત પુરુષ હૈ-દેતા તો હૈ મિષ્ટભાષણ દ્વારા સંતોષ ઉત્પન્ન નહીં  
કરાતા હૈ-વહ દાન તદસંજ્ઞાપન સમ્પન્ન પુરુષ વ્યવહારી કહા જાતા હૈ  
અર્થાત્ જો 'દદાતિ નો સંજ્ઞાપયતિ' હસ મંગવાલા હૈ વહ વ્યવહારી હૈ હસી  
તરહ જો દ્વિતીયમંજ્ઞ મેં કહા ગયા હૈ સંજ્ઞાપયતિ, નો દદાતિ' વહ સંજ્ઞાપના  
અદાન સંપન્નપુરુષ વ્યવહારી હૈ. હસી પ્રકાર જો તૃતીય મંગ મેં કહા ગયા  
હૈ 'દદાત્યપિ' સંજ્ઞાપયત્યપિ' એસા વહ દાન તત્સંજ્ઞાસમ્પન્ન પુરુષ વ્યવહારી

સંતોષ આપી દે છે પણ પોતાની વસ્તુ સામેવાળા માણસને આપતો નથી. તૃતીય  
વ્યવહારમાં દાનકર્તા પોતાની વસ્તુ આપી પણ દે છે અને પોતાની મધુર ભાષણરૂપ  
પ્રવૃત્તિથી તે સામેના માણસને સંતુષ્ટ પણ કરી દે છે. ચતુર્થ વ્યવહારમાં તે કોઈ  
પણ વસ્તુ યાચકને આપતો પણ નથી અને મધુર સંલાપથી સામેના માણસને સંતુષ્ટ  
પણ કરતો નથી. આ પ્રમાણે આ ચાર ભાગ છે. એના સંબંધમાં કેશી કુમારશ્રમણ  
પ્રદેશી રાજાને પ્રશ્ન કરે છે કે હે પ્રદેશિન્ ! તમે જાણો છો કે આ ચાર-દાન તદ-  
સંજ્ઞાપન, સંજ્ઞાપન, દાને સંજ્ઞાપન ઉભય અને તદુભય રહિતરૂપ વૃત્તિ સંપન્ન પુરુ-  
ષોમાં કોણ વ્યવહારી છે ? ત્યારે પ્રદેશીએ કહ્યું-હાં ભદ્રંત ! જાણું છું. આ ભાગ  
ચતુષ્ટયમાં જે પ્રથમ ભાગોક્ત પુરુષ છે-તે આપે તો છે પણ મિષ્ટ ભાષણકે સંતોષ  
ઉત્પન્ન કરતો નથી તે દાન તદસંજ્ઞાપન સમ્પન્ન પુરુષ વ્યવહારી કહેવાય છે. એટલે  
કે જે 'દદાતિ નો સંજ્ઞાપયતિ' આ ભાગવાળો છે તે વ્યવહારી છે આ પ્રમાણે  
જે દ્વિતીય ભાગ કહેલ છે 'સંજ્ઞાપયતિ, નો દદાતિ' તે સંજ્ઞાપના અદાન સંપન્ન  
પુરુષ વ્યવહારી છે. આ પ્રમાણે જે તૃતીય ભાગમાં કહેલ છે-'દદાત્યપિ સંજ્ઞાપ-  
યત્યપિ' એવો તે દાન તત્સંજ્ઞાપના સમ્પન્ન પુરુષ વ્યવહારી છે. પણ જે ચતુર્થ

તત્ર સ્વલુ યઃ સઃ-ચતુર્થમ્જોક્તઃ પુરુષઃ 'નો દદાતિ નો સંજ્ઞાપયતિ' સઃ-  
 આદાનાસંજ્ઞાપનોભયસંપન્નઃ પુરુષઃ ઉભયવિધવ્યવહારરહિતતયા અવ્ય-  
 વહારી । એવમેવ-મદ્ગત્યોક્તપુરુષા ણાં મધ્યે એકમજ્ઞોક્તવિશેષવદેવ હે પ્રદેશિન્ !  
 ત્વં સ્વલુ અવ્યવહારી ચતુર્થમ્જોક્તપુરુષવત્ નો ચૈવ-નૈવાસિ । યદ્યપિ ત્વં  
 સમ્યક્ક્રમાંલાપેન માં સંતોષ્ય ન વર્તસે, તથાપિ મમ વિષયે ભક્તિ-વહુમાન  
 ચ કરોપિ અતસ્ત્વસાઘમજ્ઞોક્તપુરુષવત્ વ્યવહાર્યેવ નત્વવ્યવહારીતિ ભાવઃ ॥મુ. ૧૫૦॥

મૂલમ--તણ ણે પણસી રાયા કેસિકુમારસમણં એવં વયાસી  
 -તુભ્મે ણં મંતે ! અહચ્છેયા દક્ષ્યા જાવ ઉવણસલહ્હા સમત્થા ણં  
 મંતે ! મમં કરયલંસિ વા આમલયં જીવં સરીરાઓ અભિનિવટ્ટિત્તા  
 ણં ઉવદંસિત્તણ ?

તેણં કાલેણં તેણં સમણં પણસિસ્સ રણ્ણો અદૂરસામંતે વાઉ-  
 યાણ સંવુત્તે, તણવણસ્સહ્કાણ એયહ વેયહ ચલહ, ફંદહ ઘટ્ટહ ઉદી-  
 રહ તં તં ભાવં પરિણમહ, તણ ણં કેસીકુમારસમણે પણસિં રાયં  
 એવં વયાસી-પાસસિ ણં તુમં પણસિરાયા ! એયં તણવણસ્સહં એયંતં

હે. પરન્તુ જો ચતુર્થ મંગોક્તપુરુષ હૈ 'નો દદાતિ નો સંજ્ઞાપયતિ' વહ  
 આદાન અસંજ્ઞાપનારૂપ ઉભયવૃત્તિ સંપન્ન પુરુષ ઉભયવિધવ્યવહાર રહિત હોને  
 કે કારણે અવ્યવહારી હૈ । ઈસી તરહ સે હે પ્રદેશિન્ ! ઈન ત્રીન મંગો  
 મેં કહે ગયે પુરુષોં કે વીચમેં એકમજ્ઞોક્ત પુરુષ વિશેષ કી તરહ તુમ  
 મી હો. ચતુર્થ મજ્ઞોક્ત પુરુષ કી તરહ અવ્યવહારી નહીં હો. યદ્યપિ તુમને  
 સમ્યક્ આલાપ દ્વારા મુઝે સંતોષ ઉત્પન્ન કરાકર પ્રવૃત્તિરૂપ વ્યવહાર નહીં  
 ક્રિયા હૈ ફિર મી મેરે વિષય મેં ભક્તિ ઓર વહુમાન તો ક્રિયા હી હૈ, ઈસલિયે તુમ  
 આઘમજ્ઞોક્ત પુરુષ કી તરહ વ્યવહારી હી હો, અવ્યવહારી નહીં હો ॥મુ. ૧૫૦॥

લંગોક્ત પુરુષ છે. 'નો દદાતિ નો સંજ્ઞાપયતિ' તે આદાન અસંજ્ઞાપના રૂપ  
 ઉભયવૃત્તિ સંપન્ન પુરુષ ઉભયવિધ વ્યવહાર રહિત હોવાથી અવ્યવહારી છે. આ  
 પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ ! આ ત્રણ લંગોગાં કહેલ પુરુષોમાં પ્રથમ લંગોક્ત પુરુષ વિશે-  
 પની જેમ તમે પણ છો. ચતુર્થ લંગોક્ત પુરુષની જેમ તમે અવ્યવહારી નથી. તમે  
 સમ્યક્ આલાપદ્વારા મને સંતોષ આપીને પ્રવૃત્તિરૂપ વ્યવહાર કર્યો નથી છતાંએ  
 મારા વિષયમાં ભક્તિ અને બહુમાન તો તમારો કર્યો જ છે. એથી તમે આઘ  
 લંગોક્ત પુરુષની જેમ વ્યવહારી જ છો, અવ્યવહારી નથી. ॥મુ. ૧૫૦॥

जाव तं तं भोवं परिणमंतं? हंता!! पासामि। जाणासि णं तुमं पएसी! एयं तणवणस्सइं कायं। क देवो चालेइ असुरो वा चालेइ णागो चालेइ किंनरो वा चालेइ किंपुरिसो वा चालेइ महोरगो वा चालेइ गंधवो वा चालेइ? हंता जाणामि—णो देवो चालेइ जाव णो गंधवो चालेइ। वाउकाए चालेइ पाससि णं तुमं पएसी! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स सकम्मस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स स सरीरस्स रूवं?। णो इणट्ठे समट्ठे। जइ णं तुमं पएसिराया! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव स सरीरस्स रूवं न पाससि तं कहं णं पएसी! तव कस्यलं सि वा आमलगं जीव उवदंसिस्सामि?। एव खल्ल पएसी! दसट्ठाणाइं छउमत्थे मणुस्से सब्बभावेणं न जाणइं न पासइं, तं जहा—धम्मत्थिकायं १, अधम्मत्थिकायं २, आगासत्थिकायं ३, जीवं असरीरवच्चं ४, परमाणुपोग्गलं ५, सद्धं ६, गंधं ७, वायं अयं जिणे भविस्सइं वा णो भविस्सइं ९, अयं सब्बदुक्खाणं अंतं करिस्सइं वा नो वा करिस्सइं १०। एयाणि चेव उप्पन्ननाणदंसणधरे अरहा जिणे केवलीं सब्बभावेणं जाणइं पासइं, तं जहा धम्मत्थिकायं जाव नो वा करिस्सइं, तं सदहाहि णं तुम पएसो! जहा अन्नो जीवो तं चेव?। सू१५१।

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिकुमारश्रमणसेवमवादीत्—यूयं खलु भदन्त! अतिच्छेकाः दक्षाः यावत् उपदेशलब्धाः समर्थाः खलु भदन्त!

‘तएणं पएसी राया’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (पएसी राया) प्रदेशीने (केशिकुमार-समणं एवं वयासी) केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—(तुम्हे णं भंते! अइच्छेया

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि।

(सूत्रार्थ—(तए णं) त्पार पधी (पएसी राया) प्रदेशी राजने (केशिकुमार समणं एवं वयासी) केशी कुमार श्रमण ने आ. प्रमाणे क्खु—(तुम्हे णं भंते!

मम करतले वा आमलकं जीवं शरीराद् अभिनिवर्त्य खलु उपदर्शयितुम्?।  
तस्मिन् काले तस्मिन् समये प्रदेशिनो राज्ञः अदूरसामन्ते वायुकायः  
संवृत्तः, तृणवनस्पतिकायः एजते व्यजते चलति स्पन्दते घट्टते उदीर्ते तं तं  
भावं परिणमते । ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिराजमेवमवादीत्-पश्यसि

दक्खा जाव उवएसलद्धा समत्था णं भंते ! ममं करयलंसि वा आम-  
लकं जीवं शरीराओ अभिनिवट्टित्ता णं उवदंसित्तए) हे भदन्त ! आप  
अवसर के ज्ञान में अतिनिपुण हैं दक्ष हैं-कार्य के सम्पादन में कुशल  
हैं, यावत् उपदेशलब्ध हैं-गुरु के उपदेश को प्राप्त किये हुए हैं. इसलिये  
हे भदन्त ! शरीर से जीव को निकाल कर क्या आप हस्ततल में स्थित  
आंखों की तरह उसे मुझे दिखा सकते हैं ? (तेणं कालेण तेणं समएणं पए-  
सिस्स रण्णो अदूरसामन्ते वाउयाए संवुत्ते) उस काल और उस समय  
में प्रदेशी राजा के नजदीक-न अतिदूर और न अतिपास स्थान पर  
वायुकायप्रवृत्त हुआ (तणवणस्सइकाए एयइ, वेयइ, चलेइ, फंदइ, घट्टइ,  
उदीरइ, तं नं भावं परिणमइ) इससे तृणवनस्पतिकाय सामान्यतः एवं  
विशेषतः कंपित होने लगा, इधर से उधर रुकने लगा. परस्पर मेंसंघर्षित होने  
लगा एवं कोईर जमीन ऊपर ही रुक गया. इस तरह वह तृणवनस्पति-  
काय एजनादिरूप भिन्न प्रकार के व्यापार में परिणत हो गया (तए णं

अइच्छेया दक्खा जाव उवएसलद्धा समत्था णं भंते ! ममं करयलंसि  
वा आमलकं जीवं शरीराओ अभिनिवट्टित्ता णं उवदंसित्तए) हे भदन्त ! आप  
अवसरने सरस रीते जाणुवामां अति निपुण छी, कार्यना संपादनमां कुशल छी,  
यावत् उपदेश लब्ध छी, शुद्धना उपदेशने प्राप्त करैल छी. ओथी न हे भदन्त !  
शरीरमांथी छवने णहार कडाडीने शुं तने हस्तामलक्खं भने अतावी शकै छी ?  
(ते णं कालेण तेणं समएणं पएसिस्स रण्णो अदूरसामन्ते वाउयाए संवुत्ते)  
ते काले अने ते समये प्रदेशी राजनी पासो न अति दूर अने न अति पासोना  
स्थान पर वायुकाय प्रवृत्त थयो. (तणवणस्सइकाए एयइ, वेयइ, चलइ, फंदइ,  
घट्टइ, उदीरइ, तं तं भावं परिणमइ) ओनाथी तृणवनस्पतिकाय सामान्यतः  
अने विशेषतः कंपित थवा भांड्यो. आभथी तेम नभवा भांड्यो, परस्पर संघर्षित  
थवा भांड्यो, अने कोठक जमीन पर न नमी गयो. आ प्रभाणु ते तृण वनस्पति  
काय ओजनादिरूप सिन्न सिन्न अतना व्यापारमां परिणुत थई गयो. (तए णं

खलु त्वं प्रदेशिराज ! एतं तृणवनस्पतिकायम् एजमानं यावत् तं तं भावं  
परिणममानम् ! हन्त ! पश्यामि । जानासि खलु त्वं प्रदेशिन् ! एतं  
तृणवनस्पतिकायं किं देवश्चालयति असुरो वा चालयति नागो वा चालयति  
किन्नरो वा चालयति किंपुरुषो वा चायति महोरगो वा चालयति गन्धर्वो  
वा चालयति ! हन्त ! जानामि-नो देवश्चालयति जाव नो गन्धर्वश्चालयति

केशीकुमारसमणे पएसिरायं एवं वयासी-पाससि णं तुमं पएसी राया !  
एयं तणवणस्सइं एयंतं जाव तंतं भावं परिणमंतं) तव केशीकुमारश्र-  
मणने प्रदेशी राजा से इस प्रकार कहा-हे प्रदेशिन् ! तुम इस तृणवनस्पति-  
काय को सामान्य विशेषरूप से कंपित होते हुए यावत् एजनादिरूप भिन्नर-  
प्रकार के व्यापार में परिणत होते हुए देख रहे होन ? तब प्रदेशी राजाने कहा  
(हंता, पासामि) हां, भदन्त ! देख रहा हूं (जाणासि णं तुमं पएसी ! एयं तणव-  
णस्सइं कायं किं देवो चालेइ, असुरो वा चालेइ, नागो वा चालेइ, किन्नरो वा  
चालेइ, किंपुरिसो वा चालेइ, महोरगो वा चालेइ, गंधर्वो वा चालेइ)  
तब केशीकुमारश्रमणने उससे कहा हे प्रदेशिन् ! तुम जानते हो कि इस-  
तृणवनस्पतिकाय को कौन चलाता है ? क्या देव चलाता है, या नाग  
चलाता है या किन्नर चलाता है, या किंपुरुष चलाता है, या महोरग  
चलाता है या गंधर्व चलाता है ? प्रदेशीने कहा-(हंता, जानामि) हां,  
भदन्त ! जानता हूं (णो देवो चालेइ जाव णो गंधर्वो चालेइ वाउकाए

केशी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-पाससि णं तुमं पएसि राया !  
एयं तणवणस्सइं एयंतं जाव तंतं भावं परिणमंति) त्वारे केशी कुमार श्रमणे  
प्रदेशी राजाने आ भ्रमाणे कहुं के हे प्रदेशिन् ! तमे आ तृणवनस्पतिकायने सामा-  
न्य विशेषरूपी कंपित यतां यावत् येजनादिरूप भिन्न प्रकारना व्यापारमां परि-  
णत भुत्थो छे ? त्वारे प्रदेशी राजाने कहुं (हंता पासामि) हां भदंत ! नेछ रह्यो छुं  
(जाणासि णं तुमं पएसी ! एयं तणवणस्सइं कायं किं देवो चालेइ, असुरो  
वा चालेइ, नागो वा चालेइ, किन्नरो वा चालेइ, किंपुरिसो वा चालेइ,  
महोरगो वा चालेइ, गंधर्वो वा चालेइ) त्वारे केशीकुमार श्रमणे तेने कहुं के  
हे प्रदेशिन् ! तमे जाणो छे के आ तृणवनस्पतिकायने केणु यत्तावे छे ? शुं देव  
यत्तावे छे ? के असुर यत्तावे छे ? के नाग यत्तावे छे ? के किन्नर यत्तावे छे ?  
के किंपुरुष यत्तावे छे, के गंधर्व यत्तावे छे ? प्रदेशी राजाने कहुं-(हंता, जानामि)  
हां भदंत ! जाणुं छुं. (णो देवो चालेइ, जाव णो गंधर्वो चालेइ, वाउकाए

वायुकायः चालयति । पश्यसि खलु त्वं प्रदेशिन् ! एतस्य वायुकायस्य सरूपिणः सकर्मणः सरागस्य समोहस्य सवेदस्य सलेश्यस्य रूपम् ! नायमर्थः समर्थः । यदि खलु त्वं प्रदेशिराज एतस्य वायुकायस्य सरूपिणो यावत् सशरीरस्य रूपं न पश्यसि तत् कथं खलु प्रदेशिन् ! तत्र करतले इव आमलकं जीवमुपदर्शयिष्यामि ! । एवं खलु प्रदेशिन् ! दश स्थानानि छद्मस्थो मनुष्यः सर्वभावेन न जानाति, न पश्यति, तद्यथा—धर्मास्तिकायम्<sup>१</sup>, अधर्मास्तिकायम्<sup>२</sup>, आकाश-

चालेइ) इसे न देव चलाता है, यावत् न गंधर्व चलाता है । (पाससि णं तुमं पएसि ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स ससरीरस्स रूपं) केशीकुमारश्रमणने तव उससे कहा—हे प्रदेशिन् ! तुम इस सरूपी, सकर्मा, सराग, समोह, सवेद, सलेश्य, सशरीर वायुकाय के रूप को देखते हो ? (णो इणट्ठे समट्ठे) तव प्रदेशीने कहा—हे भदन्त ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् वायुकाय के रूप को मैं नहीं देखता हूं तव उससे केशीकुमारश्रमणने कहा—(जइ णं तुमं पएसि राया ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव ससरीरस्स रूपं न पाससि तं कहं णं पएसी ! तव करयलंसि वा आमलगं जीवं उवदंसिस्सामि) हे प्रदेशिराजन् ! जब तुम इस सरूपी यावत् सशरीर वायुकाय के रूप को नहीं देख पा रहे हो—तो फिर मैं हे प्रदेशिन् ! कैसे तुम्हें करतलस्थित आंवले की तरह जीव दिखा सकता हूं । (एवं खलु पएसी ! दसट्ठाणं छउमत्थे मणुस्से

चालेइ) आने न देव चलावे छे, यावत् न गंधर्व चलावे छे, वायुकाय चलावे छे, (पाससि णं तुमं पएसि ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स सकम्मस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स ससरीरस्स रूपं) केशीकुमार श्रमणे त्थारे तेने क्खुं—हे प्रदेशिन् ! तमे आ सइपी, सकर्मा, सराग, समोह, सवेद, सवेश्य, सशरीर, वायुकायना इयने जुओ छे ? (णो इणट्ठे समट्ठे) त्थारे प्रदेशीओ क्खुं—हे भदन्त ! आ अर्थ समर्थ नथी, ओटले हे वायुकायना इयने हुं जेतो नथी, त्थार पछी इरी केशी कुमार श्रमणे तेने क्खुं, (जइ णं तुमं पएसि राया ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव ससरीरस्स रूपं न पाससि तं कहं णं पएसी ! तव करयलंसि वा आमलगं जीवं उवदंसिस्सामि) हे प्रदेशिराजन् ! त्थारे तमे आ सइपी यावत् सशरीर वायुकायना इयने जेछ शक्ता नथी तो पछी हे प्रदेशिन् हुं देवी रीते तमने करतल स्थित आमलानी जेम छवने देखाडी शक्छुं छुं, (एवं खलु पएसी ! दसट्ठाणां छउमत्थे मणुस्से सर्वभावेणं न जाणइ न पासइ) डेभडे हे प्रदेशिन् ! छद्मस्थ जेव आ दश स्थानोने



स्तिकायं३, जीवमशरीरवद्धं४ परमाणुपुद्गलं५, शब्दं६, गन्धं७, वातम्८, अयं जिने भविष्यति वा नो भविष्यति९, अयं सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति वा नो वा करिष्यति१०। एतानि चैव उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः अर्हन् जिनः केवली सर्वभावेन जानाति पश्यति, तद्यथा-धर्मास्तिकायं यावत् नो वा करिष्यति, तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! यथा-अन्यो जीवः तदेव९ ॥ सू० १५१॥

सर्वभावेणं न जाणइ, न पासइ) क्यों कि हे प्रदेशिन् ! छद्मस्थ जीव इन इन दश स्थानों को सर्वभाव से नहीं जानता है और नहीं देखता है (तं जहा) वे दशस्थान इस प्रकार से हैं (धम्मत्थिकायं१, अधम्मत्थिकायं२, आगासत्थिकायं३, जीवं असरीरवद्धं४, परमाणुपुद्गलं५, सद्दं६, गंधं७, वायं८ अयं जिणे भविस्सइ वा णो भविस्सइ९, अयं सर्वदुःखाणं अंतो करिस्सइ नो वा करिस्सइ१०) धर्मास्तिकायं१, अधर्मास्तिकायं२, आकाशास्तिकायं३, अशरीर वद्ध जीव४, परमाणुपुद्गलं५, शब्दं६, गंधं७, वातं८ यह जिन होगा, या नहीं होगा९, और यह समस्त दुखों का अन्त करेगा या नहीं करेगा१० (एयाणि चैव उत्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सर्वभावेणं जाणइ पासइ) इन्हें तो उत्पन्न ज्ञान दर्शन धारी अर्हन्त जिन केवली सर्वभाव से जानते हैं। (तं जहा धम्मत्थिकायं जाव नो वा करिस्सइ-तं सद्वहाहि णं तुमं पएसी ! जहा अन्नो जीवो तं चैव) अतः जंव अर्हन्त जिन केवली धर्मास्तिकायादि१० स्थानों को जानते देखते हैं-

सर्वभावथी जाणुतो नथी अने जेतो नथी. (तं जहा) ते दशस्थानो आ प्रमाणे छे (धम्मत्थिकायं १, अधम्मत्थिकायं २, आगासत्थिकायं ३, जीवं असरीरवद्धं ४, परमाणुपुद्गलं ५, सद्दं ६ गंधं ७, वायं ८, अयं जिणे भविस्सइ वा णो भविस्सइ ९, अयं सर्वदुःखाणं अंतो करिस्सइ १०.) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, अशरीर वद्ध जीव ४, परमाणु पुद्गल ५, शब्द ६, गंध ७, वात ८. आ जिन थसे के नडि थसे. ९. अने आ समस्त दुःखोना अन्त करसे के नडि करसे. १०. (एयाणि चैव उत्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सर्वभावेणं जाणइ पासइ) એમને તો ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શનધારી અહીં ત જિન કેવલી સર્વભાવથી જાણે છે અને જુવે છે. (તં જહા ધમ્મત્થિકાયં જાવ નો વા કરિસ્સઈ તં સદ્વહાહિ ણં તુમં પએસી ! જહા અન્નો જીવો તં ચૈવ) એથી જ્યારે અહીં ત જિન કેવલી ધર્માસ્તિકાય વગેરે ૧૦ સ્થાનો ને જાણે છે જુવે છે અને છદ્મસ્થ એમને જાણુતા નથી તેમજ જ્ઞેતા પણ નથી. તો હે પ્રદેશિન્ ! તમે શ્રદ્ધા કરો કે જીવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે. ઇત્યાદિ.



वायुकायः चालयति । पश्यसि खलु त्वं प्रदेशिन् ! एतस्य वायुकायस्य सरूपिणः सकर्मणः सरागस्य समोहस्य सवेदस्य सलेश्यस्य रूपम् ! नायमर्थः समर्थः । यदि खलु त्वं प्रदेशिराज एतस्य वायुकायस्य सरूपिणो यावत् सशरीरस्य रूपं न पश्यसि तत् कथं खलु प्रदेशिन् ! तव करतले इव आमलकं जीवमुपदर्शयिष्यामि ! । एवं खलु प्रदेशिन् ! दश स्थानानि छद्मस्थो मनुष्यः सर्वभावेन न जानाति, न पश्यति, तद्यथा—धर्मास्तिकायम् १, अधर्मास्तिकायम् २, आकाश-

चालेइ) इसे न देव चलाता है, यावत् न गंधर्व चलाता है । (पाससि णं तुमं पएसि ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स ससरीरस्स ख्वं) केशीकुमारश्रमणने तव उससे कहा—हे प्रदेशिन् ! तुम इस सरूपी, सकर्मा, सराग, समोह, सवेद, सलेश्य, सशरीर वायुकाय के रूप को देखते हो ? (णो इणट्ठे समट्ठे) तव प्रदेशीने कहा—हे भदन्त ! यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् वायुकाय के रूप को मैं नहीं देखता हूँ तव उससे केशीकुमारश्रमणने कहा—(जइ णं तुमं पएसि राया ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव ससरीरस्स ख्वं न पाससि तं कहं णं पएसी ! तव करयलंसि वा आमलगं जीवं उवदंसिस्सामि) हे प्रदेशिराजन् ! जब तुम इस सरूपी यावत् सशरीर वायुकाय के रूप को नहीं देख पा रहे हो—तो फिर मैं हे प्रदेशिन् ! कैसे तुम्हें करतलस्थित आवले की तरह जीव दिखा सकता हूँ । (एवं खलु पएसी ! दसट्ठाणं छउमत्थे मणुस्से

चालेइ) आने न देव चलावे छे, यावत् न गंधर्व चलावे छे. वायुकाय चलावे छे. (पाससि णं तुमं पएसि ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स सकम्मस्स सरागस्स समोहस्स सवेयस्स सलेसस्स ससरीरस्स ख्वं) केशीकुमार श्रमण्णे त्वारे तेने क्खुं—हे, प्रदेशिन् ! तमे आ सइपी, सकर्मा, सराग, समोह, सवेद, सलेश्य, सशरीर, वायुकायना इपने जुओ छे ? (णो इणट्ठे समट्ठे) त्वारे प्रदेशीओ क्खुं—हे भदन्त ! आ अर्थ समर्थ नथी. ओट्ठे के वायुकायना इपने हुं नेतो नथी. त्वार पछी इरी केशी कुमार श्रमण्णे तेने क्खुं. (जइ णं तुमं पएसि राया ! एयस्स वाउकायस्स सरूविस्स जाव ससरीरस्स ख्वं न पाससि तं कहं णं पएसी ! तव करयलंसि वा आमलगं जीवं उवदंसिस्सामि) हे प्रदेशिराजन् ! त्वारे तमे आ सइपी यावत् सशरीर वायुकायना इपने नेध शक्ता नथी तो पछी हे प्रदेशिन् हुं देवी रीते तमने करतल स्थित आभणानी नेम जुवने देणाडी शक्छुं. (एवं खलु पएसी ! दसट्ठाणां छउमत्थे मणुस्से सर्वभावेण न जाणइ न पासइ) केमके हे प्रदेशिन् ! छद्मस्थ एव आ दश स्थानाने

स्तिकायं३, जीवमशरीरवद्धं४ परमाणुपुद्गलं५, शब्दं६, गन्धं७, वातम्८, अयं जिनो भविष्यति वा नो भविष्यति९, अयं सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति वा नो वा करिष्यति१०। एतानि चैव उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः अर्हन् जिनः केवली सर्वभावेन जानाति पश्यति, तद्यथा-धर्मास्तिकायं यावत् नो वा करिष्यति, तत् श्रद्धेहि खलु त्वं प्रदेशिन् ! यथा-अन्यो जीवः तदेव९ ॥ सू० १५१॥

सर्वभावेणं न जाणइ, न पासइ) क्यों कि हे प्रदेशिन् ! छद्मस्थ जीव इन इन दश स्थानों को सर्वभाव से नहीं जानता है और नहीं देखता है (तं जहा) वे दशस्थान इस प्रकार से हैं (धम्मत्थिकायं१, अधम्मत्थिकायं२, आगासत्थिकायं३, जीव अशरीरवद्धं४, परमाणुपुद्गलं५, शब्दं६, गंधं७, वायं८ अयं जिणे भविस्सइ वा णो भविस्सइ९, अयं सर्वदुःखाणं अंतो करिस्सइ नो वा करिस्सइ१०) धर्मास्तिकाय१, अधर्मास्तिकाय२, आकाशास्तिकाय३, अशरीर वद्ध जीव४, परमाणुपुद्गल५, शब्द६, गंध७, वात८ यह जिन होगा, या नहीं होगा९, और यह समस्त दुखों का अन्त करेगा या नहीं करेगा१० (एयाणि चैव उत्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सर्वभावेणं जाणइ पासइ) इन्हे तो उत्पन्न ज्ञान दर्शन धारी अर्हन्त जिन केवली सर्वभाव से जानते हैं। (तं जहा धम्मत्थिकायं जाव नो वा करिस्सइ-तं सदद्वाहि णं तुमं पएसी! जहा अन्नो जीवो तं चैव) अतः जब अर्हन्त जिन केवली धर्मास्तिकायादि१० स्थानों को जानते देखते हैं-

सर्वभावथी जाणुतो नथी अने जेतो नथी. (तं जहा) ते दशस्थानो आ प्रमाणे छे (धम्मत्थिकायं १, अधम्मत्थिकायं २, आगासत्थिकायं ३, जीव अशरीरवद्धं ४, परमाणुपुद्गलं ५, शब्दं ६, गंधं ७, वायं ८, अयं जिणे भविस्सइ वा णो भविस्सइ ९, अयं सर्वदुःखाणं अंतो करिस्सइ १०.) धर्मास्तिकाय १, अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, अशरीर वद्ध जीव ४, परमाणु पुद्गल ५, शब्द ६, गंध ७, वात ८. आ जिन थरो के नहि थरो. ९. अने आ समस्त दुःखोतो अन्त करे के नहि करे. १०. (एयाणि चैव उत्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली सर्वभावेणं जाणइ पासइ) એમને તો ઉત્પન્ન જ્ઞાન દર્શનધારી અહીં ત જિન કેવલી સર્વભાવથી જાણે છે અને જુવે છે. (તં જહા ધમ્મત્થિકાયં જાવ નો વા કરિસ્સઈ તં સદ્દવાહિ ણં તુમં પએસી! જહા અન્નો જીવો તં ચૈવ) એથી જ્યારે અહીં ત જિન કેવલી ધર્માસ્તિકાય વગેરે ૧૦ સ્થાનો ને જાણે છે જુવે છે અને છદ્મસ્થ એમને જાણુતા નથી તેમજ જોતા પણ નથી. તો હે પ્રદેશિન્ ! તમે શ્રદ્ધા કરો કે જીવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે. ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘તए णं पएसी राया’ इत्यादि—ततः खलु प्रदेशी राजा केशि-  
कुमारश्रमणम् एवमवादीत्—हे भदन्त ! यूयं खलु अतिच्छेकाः—अवसरज्ञा-  
नातिनिपुणाः, दक्षा—कार्यसम्पादनकुशलाः, यावत्—यावत्पदेन ‘प्राप्तार्थाः बुद्धाः  
कुशलाः महामतयः विनीताः विज्ञानप्राप्ताः’ इत्येषां पदानां संग्रहः एषां  
व्याख्या पूर्वं गता । उपदेशलब्धाः—प्राप्तगुरूपदेशाः, अतो हे भदन्त यूयं  
शरीरात् जीवमभिवर्त्य—निष्काश्य करतले—हरतले स्थितम् आमलक-  
मिव मम उपदर्शयितुं समर्थाः—शक्ताः ।

और छद्मस्थ इन्हें जानता देखता नहीं है तो हे प्रदेशिन् ! तुम श्रद्धा  
करो कि जीव अत्य है और शरीर अन्य है. इत्यादि ।

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે—‘દુઃખા જાવ ઉપસલદ્ધા’ મેં જો યાવત્ પદ આયા  
હૈં ‘ઉસસે યહાં ‘પ્રાપ્તાર્થાઃ, બુદ્ધાઃ, કુશલાઃ, મહામતયઃ, વિનીતાઃ, વિજ્ઞાન-  
પ્રાપ્તાઃ’ इन पदों का संग्रह हुआ है, इन पदों की व्याख्या पहिले की जा  
चुकी है। उस काल और उस समय में का तात्पर्य है जब प्रदेशी राजाने  
केशीकुमारश्रमण से शरीर से निकालकर जीव को हस्तामलकवत् दिखाने  
की घान कही तब । ‘एयंतं जाव तं तं’ में जो यावत् पद आया है उससे  
यहां ‘व्येजमानं, चलन्तं, स्पन्दमानं, घट्टमानम्’ इन पदों का संग्रह हुआ है ।  
इन पदोंकी व्याख्या इसी सूत्र में पहिले की जा चुकी है. इन पदों में वायुकाय एके-  
न्द्रिय जीव है—अतः वह रूप युक्त है, कर्मसहित है, रागसहित है, मोहसहित  
है, नपुंसकवेद सहित है, औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण इस चार

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ જ છે. ‘દુઃખા જાવ ઉપસલદ્ધા’ માં જે યાવત્ પદ આવેલ  
છે તેથી અહીં ‘પ્રાપ્તાર્થાઃ, બુદ્ધાઃ, કુશલાઃ, મહામતયઃ, વિનીતાઃ, વિજ્ઞાન-  
પ્રાપ્તાઃ, આ પદોનો સંગ્રહ થયો છે. આ પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં કરવામાં આવી  
છે. તે કાળે અને તે સમયે જે કહેવામાં આવ્યું છે તેની સ્પષ્ટતા આ પ્રમાણે છે કે  
જ્યારે પ્રદેશી રાજાએ કેશી કુમાર શ્રમણને શરીરમાંથી બહાર કાઢીને છવને હસ્તા-  
મલકવત્ બતાવવાની વાત કહી ત્યારે (एयंतं जाव तं तं) માં જે યાવત્ પદ છે  
તેથી અહીં “व्येजमानं, चलन्तं, स्पन्दमानं, घट्टमानम्” આ પદોનો સંગ્રહ  
થયો છે. આ પદોની વ્યાખ્યા આ જ સૂત્રમાં પહેલાં કરવામાં આવી છે. આ પદોમાં  
પ્રત્યયકૃત જ વિશેષતા છે. ધાત્વર્થ કૃત વિશેષતા નથી વાયુકાય એકેન્દ્રિય છવ છે.  
એથી તે રૂપયુક્ત છવ છે. કર્મસહિત છે, રાગસહિત છે, મોહસહિત છે, નપુંસક  
વેદ સહિત છે, ઔદારિક, વૈક્રિય, તૈજસ અને કાર્મણ આ ચાર શરીરવાળો છે. કૃષ્ણ

તસ્મિન્ કાલે-કેશિકુમારશ્રમણં પ્રતિ જીવસ્ય શરીરાન્નિष्કાશનપૂ-  
ર્વક કરાઽઽમલકવદુપદર્શનપાર્થનાકાલે તસ્મિન્ સમયે-અવસરે પ્રદેશિનો  
રાજઃ અદૂરસામન્તે નાતિદૂરે-નાતિસમીપે વાયુકાયઃ સંવૃત્તઃ-પ્રવૃત્તોઽમવન્ત્,  
તેન તૃણવનસ્પતિકાયઃ એજતે-સામાન્યતઃ કમ્પતે, તતો વ્યેજતે-વિશેષતઃ  
કમ્પતે, ચલતિ-ચપલી ભવતિ, સ્પન્દતે-ઈષચ્ચલતિ, ઘટ્ટતે-પરસ્પરં સંઘર્ષ  
પ્રાપ્નોતિ, ઉદીર્તે-ઉત્કમ્પતે એવં તં તં ભાવમ્-એજનાદિરૂપં વ્યાપારં પરિણ  
મતે-પ્રાપ્નોતિ, તતઃ-વાયુકાયસંવર્તનવશાત્ તૃણવનસ્પતિકાયસ્યૈજનાદિભાવો-  
પગમનાનન્તરમ્ સ્વલુ કેશી કુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિરાજસૈવમવાદીત-હે પ્રદેશિરાજ!  
ત્વં પશ્યસિ-ચક્ષુર્ગોચરં કરોષિ સ્વલુ એતસ્મ-ઇમમ્ તૃણવનસ્પતિમ્, એજમાનં  
યાવત્-યાવત્પદેન-‘વ્યેજમાનં ચલન્તં સ્પન્દમાનં ઘટ્ટમાનમ્ ઉદીરાણમ્’ હત્યેપાં  
પદાનાં સર્જ્જિહો બોધ્યઃ એપાં વ્યાખ્યાઽત્રૈવ સૂત્રે પૂર્વ કૃતા, તત્ર પ્રત્યયકૃતો  
વિશેષઃ, ધાત્વર્થસ્ત્વવિશેષ એવ દ્રષ્ટવ્યઃ । તં તં ભાવં પરિણમમાનમ્. ? । હતિ  
કેશિપ્રશ્ને પ્રદેશી પ્રાહ-હન્ત ! પશ્યામિ । પુનઃ કેશી કુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિરાજં  
પૃચ્છતિ-હે પ્રદેશિન ! ત્વં સ્વલુ જાનાસિ એતં વનસ્પતિકાયં કિં દેવશ્ચાલયતિ?  
કિં વો અસુરશ્ચાલયતિ ? કિં વા નાગઃ-નાગદેવશ્ચાલયતિ ! કિં વા કિન્નરઃ-  
તદાન્વદેવવિશેષશ્ચાલયતિ ! કિં વા કિંપુરુષશ્ચાલયતિ ! કિં વા મહોરગઃ-  
વ્યન્તરવિશેષો દેવશ્ચાલયતિ । કિં વા ગન્ધર્વશ્ચાલયતિ ! । પ્રદેશી પ્રાહ-હન્ત!!  
જાનામિ-નો દેવશ્ચાલયતિ, યાવત્-નો ગન્ધર્વશ્ચાલયતિ, તર્હિ કશ્ચાલયતિ !  
હતિ જિજ્ઞાસાયામહ-વાયુકાયશ્ચાલતિ । કેશી પૃચ્છતિ-હે પ્રદેશિન્ ! ત્વમે-  
તસ્ય સ્વકીયેઽદૂરસામન્તે સંપ્રવૃત્તસ્ય વાયુકાયસ્ય રૂપં પશ્યસિ, તસ્ય કીદૃશ-  
સ્યેત્યત્રાઽઽહ-સરૂપિણઃ-રૂપયુક્તસ્ય સ્વકર્મણઃ-કર્મસહિતસ્ય સરાગસ્ય-રાગસ-  
હિતસ્ય સમોહસ્ય-મોહસહિતસ્ય સવેદસ્ય-નપુંસક વેદસમ્પન્નસ્ય સ્લેશ્યસ્ય-  
કૃષ્ણનીલકાપોતલેશ્યાત્રયયુક્તસ્ય સશરીસ્ય-ઔદારિકૈવૈક્રિયતૈજસકાર્મણ  
શરીરચતુષ્ટયયુક્તસ્ય એતાદૃશસ્ય વાયુકાયસ્ય રૂપં કિં પશ્યસિ । હતિ પૂર્વે-  
ણાન્વયઃ । હતિ પ્રશ્ને પ્રદેશી પ્રાહ-નાયમર્થઃ સમર્થઃ-તાદૃશસ્ય વાયુકાયસ્ય  
દર્શનરૂપોઽર્થઃ ન સમર્થઃ- ન તસ્ય રૂપં પશ્યામીતિ ભાવઃ । કેશીકુમાર-

શરીરોવાલા હૈ. કૃષ્ણ, નીલ, એવં કાપોત ઇન ત્રીન લેશ્યાઓવાલા હૈ યહી  
વાત સરૂપી આદિ વિશેષણો દ્વારા વાયુકાય મેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ । અવ-  
શિષ્ટ સૂત્રસ્ય પદોં કા અર્થ સ્પષ્ટ હૈ ॥ સૂ. ૧૫૧ ॥

નીલ, અને કાપોત આ ત્રણ લેશ્યાઓવાળો છે. એ જ વાત સરૂપી વગેરે વિશેષણો  
વડે વાયુકાયમાં પ્રકટ દેશમાં આવી છે. બાકી રહેલા પદોનો અર્થ સ્પષ્ટ જ છે ॥૧૫૧॥

श्रमणो वायुकास्याशक्यदर्शनत्वे प्रदेशिनमाह—हे प्रदेशिराज ! यदि त्वं खलु एतस्य वायुकायस्य स्वरूपिणः यावत्—सशरीरस्य रूपं न पश्यसि तत्—तदा कथं—केन प्रकारेण खलु करतले आमलकं वा—इव जीवं तव उपदर्शयिष्यामि? वायुकायस्य तव जीवस्य च समानरूपत्वादेकस्या शक्यदर्शनत्वेऽपरस्यापि अशक्यदर्शनत्वात् । वक्ष्यमाणच्छद्मस्थमनुष्यस्य जीवादस्थानानां सर्वभावेन ज्ञानदर्शनाऽयोग्यत्वात् कथं चक्षुर्गोचरं कारयिष्यामीति भावः । तदेव दर्शयति—हे प्रदेशिन ! एवम् वक्ष्यमाणप्रकारेण खलु छद्मस्थो मनुष्यः दशस्थानानि वक्ष्यमाणानि धर्मास्तिकायादीनि सर्वभावेन सम्पूर्णतया न जानाति,—न पश्यति । कानि तानीत्याह तद्यथा—धर्मास्तिकायम् १, अधर्मास्तिकायम् २, आकाशास्तिकायम् ३, जीवशरीरवद्धम्—शरीरतोऽसंस्पृष्टम् ४, परमाणुपुग्दलम् ५, शब्दम् ६, गन्धम् ७, वात—वायुम् ८, अयं जिनो भविष्यति वा—अथवा नो—न भविष्यतीति? ९, अयं सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति वा नो करिष्यतीति? १० । एतानि दशस्थानानि उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः अहं न जिनः केवली एव सर्वभावेन—साकल्येन जानाति तथा पश्यति, तद्यथा—धर्मास्तिकायं यावत्—नो वा करिष्यति तत्तस्मात्कारणात् हे प्रदेशिन ! त्वं श्रद्धेहि, यथा—अन्यो जीवः तदेवपूर्वोक्तमेव—अन्यच्छरीरम्, नो तज्जीवःस्स शरीरम् इति ॥ सू० १५१ ॥

मूलम्—तए णं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी से नूर्णं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे ? हंता पएसी हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे । से णूर्णं भंते ! हत्थिउ कुंथू अप्पकम्मतराए चेव अप्पकिरियतराए चेव अप्पासवतराए चेव एवं अप्पाहारनीहारउस्सासनीसासङ्गिह्यतराए अप्पजुइयतराए चेव, एवं कुंथुओ हत्थी महाकम्मतराए चेव महाकिरियतराए चेव जाव ? , महज्जुइयतराए चेव । हंत ? हत्थीओ कुंथू अप्पकम्मतराए चेव कुंथुओ वा हत्थी महाकम्मतराए चेव महाकिरियतराए चेव तं चेव । कम्हा णं भंते ! हत्थिस्स कुंथुस्स य समे चेव जीवे ? पएसी से जहाणामए-कूडागारसाला सिया जाव निवायगंभीरा, अह णं केइ पुरिसे जोइं च

पदीबं च गहाय तं कूडागारसालं अंतो२ अणुपविसइ, तीसे कूडा-  
गारसालाए सव्वओ समंता घणनिचियनिरंतराइं णिच्छिड्डाइं दुवा-  
रवयणाइं पिहेइ, तीसे कूडागारसालाए बहुमज्झदेसभाए तं पईवं  
पलीवेज्जा, तए णं से पईवे तं कूडागारसालं अंतो२ ओभासइ उज्जो  
वेइ तावइ पभासइ, णो चेव णं बाहिं। अह णं से पुरिसे तं पईवं  
इड्डुरएणं पिहेज्जा, तए णं से पईवे तं इड्डुरयं अंतो२ ओभासेइ४,  
णो चेव णं इड्डुरगस्स बाहिं णो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं। एवं  
गोकिलिंजेणं, पच्छियपिडएणं गंडमणियाए, आढएणं, अच्चाढएणं,  
पत्थएणं, अद्धपत्थएणं, कुलवेणं चाउब्भाइयाए, अट्टभाइयाए, सोल-  
सियाए, बत्तीसियाए, चउसट्ठियाए, दीवचंपएण, तए णं से पईवे  
दीवचंपगस्स अंतो२ ओभासेइ४, नो चेव णं दीवचंपगस्स बाहिं नो  
चेव णं चउसट्ठियं नो चेव णं चउसट्ठियाए बाहिं, णो चेव णं कूडा-  
गारसालं णो चेव णं कूडागारसालाए बाहिं, एवामेव पएसी ! जीवे  
वि जं जारिसयं पुव्वकम्मनिबद्धं बोदिं णिव्वत्तेइ तं असंखेज्जेहिं  
जीवपएसेहिं सचित्तं करेइ खुड्डियं वा महालियं वा, तं सदहाहि  
णं तुमं पएसी ! जहा—अण्णो जीवो तं चेव णं १०॥ सू. १५२ ॥

छाया—ततः खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणमेवमवादीत्—  
स नूनं भदन्त ! हस्तिनः कुन्थोः वा सम एव जीवः ?-हन्त ! ! प्रदेशिन् !

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तए णं) इसके बाद (ते पएसी राया केशिं कुमारसमणं  
एवं वयासी) उस प्रदेशी राजाने (केशिं कुमारसमणं एवं वयासी) केशी-

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तए णं) त्थार पद्धी (ते पएसी राया केशिं कुमारसमणं एवं  
वयासी) ते प्रदेशी राजाने केशी कुमार श्रमणने आ प्रमाणे, ३६. (से नूनं



હસ્તિનથ કુન્થોશ્ચ સમ એવ જીવઃ। અથ નૂનં મદન્ત ! હસ્તિનઃ કુન્થુઃ અલ્પ-  
કર્મતર એવ અલ્પક્રિયતર એવ અલ્પાસ્રવતર એવ, એવમ્ અલ્પાહારનીહારો-  
ચ્છ્વાસનિઃ શ્વાસઋદ્ધિકતરઃ અલ્પધૃતિકતર એવ, એવં ચ કુન્થુતઃ હસ્તી  
મહાકર્મતર એવ મહાક્રિયતર એવ યાવત્ મહાધૃતિકતરએવ ? હન્ત ! પ્રદેશિન !

કુમારશ્રમણ સે એસા કહા-(સે ણૂણં મંતે ! હત્થિસ્સ ય કુંથુસ્સ ય સમે  
ચેવ જીવે) હે મદન્ત ! હાથીં કા જીવ ઔર કુંથુ કા જીવ વયા તુલ્યપ-  
રિમાણ વાલા હૈ યા ન્યૂનાધિકપરિમાણવાલા હૈ ? તવ કેશીકુમારશ્રમણ  
ને ડસસે કહા-(હંતા, પણ્સી ! હત્થિસ્સ ય કુંથુસ્સ ય સમે ચેવ જીવે)  
હાં પ્રદેશિન ! હાથીં કા ઔર કુંથુકા જીવ તુલ્યપરિમાણવાલા હૈ, ન્યૂના-  
ધિક પરિમાણવાલા નહીં હૈ । (સે ણૂણં મંતે ! હત્થીઽ કુંથૂ અપ્પકમ્મતરાણ  
ચેવ, અપ્પકિરિયતરાણ ચેવ, અપ્પાસવતરાણ ચેવ) હે મદન્ત ! હસ્તીં કી  
અપેક્ષા કુન્થુ વયા અલ્પકર્મવાલા હીં હોતા હૈ ? અત્યલ્પ કાયાકાદિ ક્રિયા  
વાલા હીં હોતા હૈ ? અત્યલ્પ આસ્રવ વાલા હીં હોતા હૈ ? (એવં અપ્પાહાર-  
નીહારડસાસનીસાસઈઠ્ઠિયતરાણ, અપ્પજુડયતરાણ ચેવ ) અલ્પતર આહાર-  
વાલા હીં હોતા હૈ ? અલ્પતર નીહાર વાલા હીં હોતા હૈ ? અલ્પતર ઉચ્છ્વાસ  
નિશ્વાસ વાલા હીં હોતા હૈ ? અલ્પતર ઋદ્ધિવાલા હીં હોતા હૈ ? અલ્પતર  
ધૃતિ શરોર કી કાન્તિ વાલા હીં હોતા હૈ । (એવં કુંથુઓ હત્થીં મહાકમ્મ-  
તરાણ ચેવ, મહાકિરિયતરાણ ચેવ જાવ મહજ્જુડયતરાણ ચેવ) ઇસી પ્રકાર સે

મંતે ! હત્થિસ્સ ય કુંથુસ્સ ય સમે ચેવ જીવે) હે મદન્ત ! હાથીનો એવ  
કુંથુનો એવ શું તુલ્ય પરિણામ વાળો છે કે ન્યૂનાધિક પરિમાણવાળો છે ? ત્યારે કેશી  
કુમાર શ્રમણે તેને કહ્યું-(હંતા, પણ્સો ! હત્થિસ્સ ય કુંથુસ્સ ય સમે ચેવ  
જીવે) હાં પ્રદેશિન ! હાથીનો અને કુંથુનો એવ તુલ્ય પરિણામવાળો છે, ન્યૂના-  
ધિક પરિણામવાળો નથી. (સે ણૂણં મંતે ! હત્થિઽ કુંથૂ અપ્પકમ્મતરાણ ચેવ,  
અપ્પકિરિયતરાણ ચેવ, અપ્પાસવતરાણ ચેવ) હે મદન્ત ! હાથીની અપે-  
ક્ષાએ શું કુંથુ અલ્પકર્મવાળું જ હોય છે ? અત્યલ્પકાયાક વગેરે ક્રિયાવાળું હોય  
છે ? અત્યલ્પ આસ્રવયુક્ત હોય છે ! ( એવં અપ્પાહારનીહારડસાસનીસાસ-  
ઈઠ્ઠિયતરાણ, અપ્પજુડયતરાણ ચેવ ) અલ્પતર આહારવાળું જ હોય છે ! અલ્પ-  
તર નીહારવાળું જ હોય છે ! અલ્પતર ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ યુક્ત હોય છે ! (એવં  
કુંથુઓ હત્થીં મહાકમ્મતરાણચેવ, મહાકિરિયતરાણ ચેવ જાવ મહજ્જુ  
ડયતરાણ ચેવ) આ પ્રમાણે કુંથુની અપેક્ષાએ શું હાથી મહાકર્મતર હોય છે,



हस्तिंतः कुन्थुश्च अल्पकर्मतर एव, कुन्थुतो वा हस्ती महाकर्मतर एव तदेव ।  
कस्मात् खलु भदन्त ! हस्तिनश्च कुन्थोश्च सम एव जीवः । प्रदेशिन् ! तद्  
यथानामकं कूटाऽऽकारशाला स्यात्, यावत् निर्वातगम्भीरा, अथ खलु कश्चित्  
पुरुषः ज्योतिर्वा प्रदीपं वा गृहीत्वा तां कूटाऽऽकारशालाम् अन्तरन्तरनुप्र-

कुन्थु की अपेक्षा हाथी क्या महाकर्मतर ही होता है, महाक्रियातर ही होता है?  
यावत् महाधृतितर ही होता है ? इस प्रदेशी के प्रश्न के उत्तर में केशी-  
कुमारश्रमणने कहा—(हंत, पएसी ! हत्थिओ कुंथू अप्प कम्मतराए चेव,  
कुंथुओ वा हत्थी महाकम्मतराए चेव महाकिरियतराए चेव—तं चेव) हां,  
प्रदेशिन ! ऐसी ही बात है—हाथी से कुन्थु अल्पतर कर्मवाला ही होता है,  
इत्यादि इसी प्रकार कुन्थु की अपेक्षा से हाथी महाकर्मतरवाला ही होता  
है, महाक्रियावाला ही होता है इत्यादि । (कम्हा णं भंते ! हत्थिस्स य  
कुंथुस्स य समे चेव जीवे) अब प्रदेशी इस प्रकार पूछता है कि—हे  
भदन्त ! आपने जो हाथी और कुन्थु के जीव को समानपरिमाणवाला कहा  
है सो इसका क्या कारण है ? केशीकुमारश्रमणने उससे कहा—(पएसी !  
से जहा नामए कूडागारसाला सिया जाव निवायगंभीरा) हे प्रदेशिन् !  
जैसे एक कूटाकारवाली पर्वत के शिखर के आकार जैसी शाला हो और यावत्  
वह निर्वात—वायुप्रवेश रहित होने के कारण गंभीर हो. (कहं णं केइ पुरिसं  
जोई पदीवं च गहाय तं कूडागारसालं अंतो २ अणुपविसइ) अब कोई

महाक्रियातर होय छे ? यावत् महाधृतितर न होय छे ? प्रदेशीना आ प्रश्नना  
उत्तरमां केशी कुमार श्रमणे कहुं— (हंता पएसी ! हत्थीओ कुंथू अप्प कम्म-  
तराए चेव, कुंथुओ वा हत्थी महाकम्मतराए चेव महाकिरियतराए चेव  
तंचेव) हां, प्रदेशिन ! बात यैवी न छे. हाथी करतां कुंथु अल्पतर कर्मकर्ता होय  
छे. वगेरे. आ प्रमाणे कुन्थु करतां हाथी महाकर्म कर्ता होय छे, महाक्रिया युक्त  
होय छे. वगेरे. (कम्हाणं भंते ! हत्थिस्स य कुंथुस्स य समे चेव जीवे) अब  
प्रदेशी आ प्रमाणे प्रश्न करेछे के हे भदन्त ! तमे नै हाथी अने कुंथुना एवने समान  
परिणामवाणो कह्यो छे तो यैतुं शुं कारण छे ? केशी कुमार श्रमणे तेने कहुं—  
(पएसी ! से जहानामए कूडागारसाला सिया जाव निवायगंभीरा)  
हे प्रदेशिन ! नैम के कोछ ओके कूटाकारवाणी—पर्वतना शिखरनी आकृति नैवी-  
शाणा होय अने यावत् ते निर्वात—वायु प्रवेश रहित होवाथी गंभीर होय, (अहं  
णं केइ पुरिसे जोइ च पइवं च गहाय तं कूडागारसालं अंतो २ अणु-

વિશતિ; તસ્યાઃ કૂટાકારશાલાયાઃ સર્વતઃ સમન્તાત્ ઘનનિચિતનિરન્તરાણિ નિશ્ચિદ્રાણિ દ્વારવદનાનિ પિદધાતિ, તસ્યાઃ કૂટાકારશાલાયાઃ વહુમધ્ય-  
દેશભાગે તં પ્રદીપં પ્રદીપયેત્, તતઃ સ્વલ્પ સ્વ પ્રદીપઃ તાં કૂટાકારશા-  
લામ્ અન્તરન્તઃ અવભાસયતિ ઉદ્ધોતયતિ તાપયતિ પ્રભાસયતિ, નો ચૈવ  
સ્વલ્પ વહિઃ અથ સ્વલ્પ સ્વ પુરુષઃ તં પ્રદીપમ્ ઇન્દ્રકેણ પિદધ્યાત્, તતઃ સ્વલ્પ

પુરુષ અગ્નિ ઓર દીપક કો લેકર ઉમ કૂટાકારશાલ કો ખીતર ઘુસકર  
વિલકુલ ઠીક મધ્યભાગ મેં જાકર સ્વહા હો જાતા હૈ (તીસે કૂટાકારશાલા સન્વઓ  
સમંતા ઘનનિચિતનિરંતરાહં નિશ્ચિદ્રાણં દ્વારવયણાઈં પિદેઈ) ફિર વહ  
ઉસ કૂટાકારશાલા કો ચારોં ઓર કો સ્વ દરવાજોં કો ઇસ તરહ સે બન્દ  
કર દેતા હૈં કિ જિસસે ઉનકે આપસ મેં કિવાંડ ઇસ પ્રકાર સે સટ જાતે  
હૈં કિ ઉનમેં જરાસા ખી છિદ્ર નહીં રહને પાતા હૈ. ઇસ તરહ સે દરવાજોં  
કો અચ્છી તરહ સે બન્દ કર (તીસે કૂટાકારશાલા વહુમઝ્ઝદેસમાઈં તં  
પર્દેવં પલીવેજ્ઞા) ફિર વહ ઉસ કૂટાકારશાલા કો વહુમધ્ય દેશભાગ મેં ઉસ  
પ્રદીપ કો પ્રજ્વલિત કરતા હૈ. (તણં સે પર્દેવે તં કૂટાકારશાલં અંતોર ઓમા  
સહ) ઇસ તરહ વહ દીપક ઉસ કૂટાકારશાલા કો પૂરે ભાગકો હી પ્રકાશિત  
કરતા હૈ (ઉજ્જોવેઈ, તાવઈ પ્રભાવઈ) ઉદ્ધોતિત કરતા હૈ, તાપિત કરતા  
હૈ એવં ઘટપટાદિ પદાર્થોં કો દિશ્વાને સે ઉસે પ્રભાસિત કરતા હૈ (નો-  
ચૈવ નં વાહિં) ઉસ કૂટાકારશાલા કો વાહિરી ભાગ કો વહ ન પ્રકાશિત કરતા  
હૈ, ન ઉદ્ધોતિત કરતા હૈ, ન તાપિત કરતા હૈ ઓર ન ઘટપટાદિકોં કો

પરિસાઈં હવે કોઈ પુરુષ અગ્નિ તેમજ દીપક લઈને તે કૂટાકારશાળાની અંદર પ્રવિષ્ટ  
થઈને એકદમ તેના મધ્યભાગમાં જઈને ઉભો થઈ બેઠો છે. (તીસે કૂટાકારશાલા સન્વઓ  
સમંતા ઘનનિચિતનિરંતરાઈં નિશ્ચિદ્રાણં દ્વારવયણાઈં પિદેઈ)  
પછી તે માણસ તે કૂટાકારશાળાના ચારે તરફના બધા દ્વારોને એવી રીતે બંધ  
કરી દે છે તેના પરસ્પર એકદમ બંધ થયેલા કમાડોમાંથી નાનું સરખું પાણુ કાણું  
રહેતું નથી. (તીસે કૂટાકારશાલા વહુમઝ્ઝદેસમાઈં તં પર્દેવં પલીવેજ્ઞા)  
પછી તે માણસ તે કૂટાકારશાળાના વહુમધ્ય દેશભાગમાં તે દીપકને પેટાવે છે.  
(તણં સે પર્દેવે તં કૂટાકારશાલં અંતોર ઓમાસહ) આ પ્રમાણે તે  
દીપક તે કૂટાકારશાળાના અંદરના ભાગને જ પ્રકાશિત કરે છે, (ઉજ્જોવેઈ, તાવઈ  
પ્રભાવઈ) ઉદ્ધોતિત કરે છે, તાપિત કરે છે, અને ઘટપટ વગેરે પદાર્થોને બતાવીને  
તેમને પ્રતિભાસિત કરે છે (નો ચૈવ નં વાહિં) તે કૂટાકારશાળાના બહારના  
ભાગને તે પ્રકાશિત કરતો નથી, ઉદ્ધોતિત કરતો નથી, સંતાપિત કરતો નથી અને

स प्रदीपः तद् इडुरकम् अन्तरन्तः अवभासयति४, नो चेव खलु इडुरकस्य बहिः,  
नो चेव खलु कूटाऽऽकारशालायाः बहिः। एवं गोकिलिञ्जेन. पक्षिपिट-  
केन, गण्डमणिकया. आढकेन, अर्धाढकेन, प्रस्थकेन, अर्धप्रस्थकेन, कुडवेन,  
अर्द्धकुडवेन, चतुर्भागिकया, अष्टभागिकया, षोडशिकया, द्वात्रिंशत्कया,

दिखाने से उसे प्रभासित करता है। (अहं णं से पुरिसे तं पईवं इडुरएणं  
पिहेज्जा, तएणं से पईवे तं इडुरयं अंतो २ ओभासेइ ४) यदि वह पुरुष  
उस दीपक को किसी बड़े ढकन से ढंक देता है—तो वह दीपक उस  
बड़े ढकन के भीतरी भाग को ही प्रकाशित करता है यावत् उसे प्रभासित  
करता है (णो चेव णं इडुरगस्स बहिं णो चेव णं कूडागारसालाए बहिं)  
उस बड़े ढकन के बाहिरी भाग को एवं कूटाकारशाला के बाह्यदेश को  
प्रकाशित यावत् प्रभासित नहीं करता है। (एवं गोकिलिञ्जेणं, पच्छि-  
पिंडएणं, गण्डमणियाए, आढएणं, अर्द्धाढएणं, पत्थएणं, अर्द्धपत्थएणं  
कुलवेणं, वाउब्भाइयाए, अट्ठभाइयाए, सोलसियाए) इसी तरह उस दीप  
को गोकिलिञ्ज से—गाय को खाना जिसमें रखा जाता है ऐसी कुण्डिका  
से, तथा पक्षी के आकरवाले वंशशलाका निर्मित पात्र विशेष से, गण्ड-  
मणिका से—धान्य नापनिका से, आढक से, अर्धाढक से, प्रस्थक से,  
अर्धप्रस्थक से, कुडवसे, अर्धकुडव से, न सब देश विशेष में प्रसिद्ध  
धान्यमापक पात्र विशेषों से ढक देता है तथा चतुर्भागिका से, अष्टभागिका

धटपट वगेरे पदार्थोनि जतावीने तेमने प्रतिलापित पणु करतो नथी. (अहं णं से  
पुरिसे तं पईवं इडुरएणं पिहेज्जा, तए णं से पईवे तं इडुरयं अंतो २  
ओभासेइ ४) डवे जे ते पुरुष ते दीपकने मोटा ढांकणुथी ढांकी दे तो ते दीपक  
ते मोटा ढांकणुना अंदरना लागने ज प्रकाशित करे छे, यावत् तेने प्रतिलासित करे  
छे. (णो चेव णं इडुरगस्स बहिं णो चेव णं कूडागारसालाए बहिं)  
ते मोटा ढांकणुना जहारना लागने तेमज ते कूटाकारशालाना बाह्य प्रदेशने प्रकाशित  
यावत् तेने प्रतिलासित करतो नथी. (एवं गोकिलिञ्जेणं पच्छिपिंडएणं, गण्ड-  
मणियाए, आढएणं, अर्द्धाढएणं, पत्थएणं, अर्द्धपत्थएणं, कुलवेण, वाउ-  
ब्भाइयाए, अट्ठभाइयाए, सोलसियाए) आ प्रमाणे ते माणुस ते दीपकने गोकि-  
लिंजथी—गायने जेमां णाणु भूकवामां आवे छे. जेवी कुंडीथी, तेमज पक्षीना  
आकरवाणा वंश शलाकानिर्मित पात्र विशेषथी, गण्ड मणिकाथी—धान्य मापनिकाथी,  
आढकथी, अर्द्धाढकथी, प्रस्थकथी, अर्धप्रस्थकथी, कुडवथी, अर्धकुडवथी, आ जधां देश  
विदेशमां प्रसिद्ध धान्यमापक पात्र विशेषोथी तेने ढांकी दे छे तेमज चतुर्भागिकाथी,

ચતુષ્પટ્ટયા, દીપચમ્પકેન, તતઃ સ્વલુ સ પ્રદીપઃ દીપચમ્પકસ્ય અન્તરન્તઃ  
અવભાસયતિ૪, નો ચૈવ સ્વલુ દીપચમ્પકસ્ય વહિઃ નો ચૈવ સ્વલુ ચતુષ્પટ્ટિકા,  
નો ચૈવ સ્વલુ ચતુષ્પટ્ટિકાયા વહિઃ, નો ચૈવ સ્વલુ કૂટાઽઽકારશાલાં, નો  
ચૈવ સ્વલુ કૂટાઽઽકારશાલાયા વહિઃ, એવમેવ પ્રદેશિન્ ! જીવોઽપિ યાં યાદૃર્શી  
પૂર્વકર્મ નિવદ્ધાં વોન્દિ નિર્વર્તયતિ તામસંસ્થયેઘૈર્જીવપ્રદેશૈઃ સચિન્તાં કરોતિ ક્ષુદ્રિકાં વા  
મહતીં વા, તત્ શ્રદ્ધેહિ સ્વલુત્વં પ્રદેશિન્ ! યથા-અન્યો જીવઃ તદેવ સ્વલુ ૧૦ । મૃ. ૧૫૨ ।

સે, પોડશભાગિકા સે इन सब चतुर्भागिका से चतुष्पष्टिकापर्यन्त के  
मगधदेशप्रसिद्ध रसमापक पात्रविशेषों से ढक देता है तथा दीप के ढँकने  
से ढँक देता है (तए णं से पर्ईवे दीवचंगस्स अंतो २ ओमासेइ) तो  
वह प्रदीप जिन २ से ढंका गया है उन्हीं २ के भीतरी को ही प्रका-  
शित करता है, उनके बाहिरी भाग को नहीं इसी तरह से वह दीपच-  
म्पक के ही भीतरी भाग को प्रकाशित करता है, (णो चेव णं दीवचं-  
गस्स चाहिं नो चेव णं चउसट्टियं, नो चेव णं चउसट्टियाए चाहिं, णो  
चेव णं कूडागारसालं, कूडागारसालाए चाहिं) दीपचम्पक के बाहिरी  
भाग को नहीं—या दीपक के बाहिर के प्रदेश को नहीं, चतुष्पष्टिका  
को नहीं, चतुष्पष्टिका के बाहिर के प्रदेश को नहीं, कूटाकारशाला को,  
और कूटाकारशाला के बाहर के प्रदेश को नहीं प्रकाशित करता है  
(एवामेव पएसी ! जीवे वि जे जारिसयं पुव्वकम्मनिवद्धं वौदि णिव्वत्तेइ)

અષ્ટ ભાગીકાથી, પોડશ ભાગીકાથી (ચત્તીસિયાए, ચउસट्टियाए, दीवचंपणं)  
અત્તીસિકાથી, ચતુષ્પષ્ટિકાથી, આ બધી ચતુર્ભાગિકાથી ચતુષ્પષ્ટિકા પર્યન્તના મગધ  
દેશ પ્રસિદ્ધ રસમાપક પાત્રવૃષ્ટેષોથી ઢાંકી દે છે તેમજ દીપચંપકથી—દીપકના ઢાંક-  
ણાથી ઢાંકી દે છે. (તए णं से पर्ईवे दीवचंपगस्स अंतो २ ओमासेइ)  
તો તે પ્રદીપ જે જે વસ્તુથી ઢાંકવામાં આવ્યો છે તે તે વસ્તુના અંદરના ભાગને  
જ પ્રકાશિત કરે છે. તેમના બહારના ભાગને પ્રકાશિત કરતો નથી. આ પ્રમાણે તે  
દીપચંપકના અંદરના ભાગને જ પ્રકાશિત કરે છે. (णो चेव णं दीवचंपगस्स  
चाहिं, नो चेव णं चउसट्टियं, नो चेव णं चउसट्टियाए चाहिं, णो चेव  
णं कूडागारसालं, णो चेव णं कूडागारसालाए चाहिं) દીપચંપકના  
બહારના ભાગને નહીં, કે દીપક ચંપકના બહારના પ્રદેશને નહીં, ચતુષ્પષ્ટિકાને નહીં,  
ચતુષ્પષ્ટિકાના બહારના પ્રદેશને નહીં, કૂટાકાર શાળાને નહીં, અને કૂટાકારશાળાના  
બહારના પ્રદેશને પ્રકાશિત કરતો નથી. એવામેવ—પણી ! જીવે વિ જે જારિ-  
સયં પુવ્વકમ્મનિવદ્ધં વૌદિં ણિવ્વત્તોइ) આ પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ એવ પણ પૂર્વ-

ટીકા—‘તए णं से पएसी राया’ इत्यादि—ततः खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणम् एवमवादीत्—हे भदन्त ! स शरीराद्भिन्नः जीवः नूनं—निश्चयेन हस्तिनः कुन्थोः—त्रीन्द्रियक्षुद्रप्राणिविशेषस्य च समः—तुल्यपरिमाण एव न न्यूनाधिकपरिमाणः इति प्रश्नः । केशी प्राह—भन्त ! हे प्रदेशिन !

इसी तरह से हे प्रदेशिन ! जीव भी पूर्वभवोपार्जित कर्मद्वारा निबद्ध जैसे शरीर को उत्पन्न—प्राप्त करता है (तं असंखेज्जेहिं जीवपएसेहिं सचित्तं करेइ खुड्डियं वा महालियं वा) चाहे वह छोटा हो या बड़ा उसे अपने असंख्यात प्रदेशों से सचित्त—जीव युक्त कर लिया करता है. (तं सदहाहि णं तुमं पएसी ! जहा अण्णो जीवो तं चेव णं १०) इसलिये हे प्रदेशिन ! तुम इस बात पर विश्वास करो कि जीव अन्य है और शरीर अन्य है इत्यादि।

टीकार्थ—इस मूलार्थ के ही अनुरूप है—परन्तु जो विशेषता है—वह इस प्रकार से है—कुन्थु वह तीन इन्द्रियों वाला—ते इन्द्रिय जीव है. और हाथी पांच इन्द्रियों वाला—पंचेन्द्रिय जीव है. जबकेशीकुमार श्रमणने १५१वें सूत्र में प्रदेशी से ऐसा कहा कि वायुकायिक जीव में और तुम्हारे जीव में समानता है—तो प्रदेशी के चित्त में ऐसी आशंका का उठना स्वभाविक ही है कि कुन्थु के जीव में और हाथी के जीव में समानता है या असमानता है ? इसीलिये उसने ऐसा प्रश्न पूछा है. इसके समाधान में केशीने उससे ऐसा कहा कि हे प्रदेशिन ! जीव में—चाहे वह

ભવોપાર્જિત કર્મદ્વારા નિબદ્ધ શરીરને ઉત્પન્ન—પ્રાપ્ત કરે છે. (તં અસંખેજ્જેહિં જીવપપસેહિં સચિત્તં કરેइ खुड्डियं वा महालियं वा) પછી ભલે તે પછી નાનું હોય કે મોટું—લઘુ હોય કે મહાન તેને પોતાના અસંખ્યાત પ્રદેશોથી સચિત્ત જીવયુક્ત કરી લે છે. (તં सदहाहि णं तुमं पएसी ! जहा अण्णोजीवो तं चेव णं १०) એટલા માટે હે પ્રદેશિન ! તમે મારી આ વાત પર વિશ્વાસ કરો કે જીવ અન્ય છે અને શરીર અન્ય છે. વગેરે !

ટીકાર્થ—આ સૂત્રનો ટીકાર્થ મૂલાર્થ પ્રમાણે જ છે. પણ સવિશેષ સ્પષ્ટતા આ પ્રમાણે છે—કુન્થુ—એ ત્રણ ઇન્દ્રિયો યુક્ત—તે ઇન્દ્રિય જીવ છે. અને હાથી પાંચ ઇન્દ્રિયો યુક્ત પચ્ચેન્દ્રિય જીવ છે. જ્યારે કેશી કુમાર શ્રમણે ૧૫૧ માં સૂત્રમાં પ્રદેશીને આ પ્રમાણે કહ્યું કે વાયુકાયિક જીવમાં અને તમારા જીવમાં સમાનતા છે તો પ્રદેશીને ચિત્તમાં એવી આશંકા ઉદ્ભવે કે કુન્થુના જીવમાં અને હાથીના જીવમાં સમાનતા છે કે અસમાનતા ? એ વાત સ્વાભાવિક છે. એટલા માટે જ તેણે આ બોલતો પ્રશ્ન કર્યો છે. એના સમાધાનમાં કેશીએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું કે હે પ્રદેશિન !

હસ્તિનઃ કુન્થોશ્ચ જીવઃ સમ એવ । પ્રદેશી કથયતિ-હે ભદન્ત ! તત્ર-હસ્તિ-  
 કુન્થ્યોર્મધ્યે હસ્તિતઃ-હસ્તિનમપેક્ષ્ય, અત્ર લ્યલ્લોપે કર્મણિ પઠ્વમી કુન્થુઃ  
 નૂનં-નિશ્ચયેનાલ્પકર્મતરઃ-અત્યલ્પાઽઽયુરાદિરૂપકર્મવાન્ એવ, અલ્પક્રિયતરઃ-  
 અત્યલ્પકાર્યિકાદિક્રિયાવાન્ એવ, અલ્પાસ્રવતરઃ-અન્યલ્પપ્રાણાતિપાતાદિરૂપા  
 સ્રવવાન્ એવ, એવમ્-અનેન પ્રકારેણ અલ્પાઽઽહારનીહારોચ્છૈાસનિઃશ્વાસકૃદ્ધિ  
 કતરઃ અલ્પદ્યુતિકતરઃ અલ્પશબ્દસ્ય સર્વત્ર સમ્બન્ધાત્ અલ્પોહારતર એવ અલ્પ-  
 નીહારતર એવ અલ્પોચ્છૈાસતર એવ અલ્પકૃદ્ધિકતર એવ, અત્ર કૃદ્ધિઃ પરિ-  
 વારાદિરૂપા ગ્રાહ્યા, અલ્પદ્યુતિકતર એવેત્યર્થઃ, દ્યુતિશ્ચ-શરીરકાન્તિરૂપા ।  
 એવં-યથા-હસ્તિનમપેક્ષ્ય કુન્થુર્લ્પતરકર્મત્વાદિવિશિષ્ટ ઉક્તસ્તથા, કુન્થુતઃ-  
 કુન્થુમપેક્ષ્ય હસ્તી-મહાકર્મતરઃ-અધિકાયુરાદિકરૂપકર્મવાન્, એવ, મહાક્રિ-  
 યતર યાવ યાવત્-યાવત્પદેન-મહાસ્રવતર એવ મહાનીહારતર એવ મહોચ્છૈા-  
 સાર એવ મહદ્ધિકતર એવ મહાદ્યુતિકતર એવ' इत्येषां सङ्ग्रहो बोध्यः । इति  
 प्रश्ने केशी प्राह-हन्त ! प्रदेशिन् ! हस्तिनः कुन्थुरल्पकर्मतर एव क्कुन्थुतो  
 वा हस्ती महाकर्मतर एव, तदेव-पूर्वोक्तमेव-कुन्थुपक्षे अल्पक्रियतर एव  
 अल्पास्रवतरः हस्तिपक्षे-महाक्रियतर एव महास्रवतर एवेत्यादि बोध्यम् । इति  
 हस्ति-कुन्थोः परस्परं कर्मादिभेदं श्रुत्वा प्रदेशी तयोर्जीवसाम्ये कारणं  
 पृच्छति-‘कस्मात् खलु भदन्त ! इत्यादि-हे भदन्त ! कस्मात् कारणात् खलु  
 हस्तिनः कुन्थोश्च जीवः सम एव ?, केशी प्राह-हे प्रदेशिन् ! तद् यथाना-  
 मकं-यथादृष्टान्तम् कूटाऽऽकारंशाला-पर्वतशिखराकारा स्यात्, यावत्-याव-  
 त्पदेन द्विधातो लिप्ता गुप्ता गुप्तद्वारेति पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः, निर्वात-

કુન્થુ કા હો જાહે, હાથી કા હો સઘ મેં સમાનતા હૈ. એક જીવ મેં અસં-  
 રૂપ્યાત પ્રદેશ હોતે હૈ. इन प्रदेशों की अपेक्षा सघ समान है. कोई भी  
 जीव ऐसा नहीं है कि जिसमें इन प्रदेशों की समानता न हो. पूर्वो-  
 पार्जित शरीर नाम कर्म आदि के द्वारा जिस जीव को जैसा शरीर प्राप्त  
 होता है वह जीव उसमें अपने प्रदेशों को संकोच विस्तारवाला बना लेता है.

જીવમાં-પછી ભલે તે કુન્થુ નો હોય કે હાથીનો સમાનતા છે. એક જીવમાં અસં-  
 રૂપ્યાત પ્રદેશો હોય છે. આ પ્રદેશોની અપેક્ષાએ આપણે વિચાર કરીએ તો બધા  
 જીવો સમાન જ છે. કોઈ પણ જીવો નથી કે જેમાં આ પ્રદેશોની સમાનતા હોય  
 નહિ. પૂર્વોપાર્જિત શરીર નામકર્મ વગેરે વડે જે જીવને જેવું શરીર પ્રાપ્ત થાય છે  
 તે જીવ તેમાં પોતાના પ્રદેશોને સંકોચ વિસ્તારયુક્ત બતાવી લે છે, દાખલા તરીકે



गम्भीरा, अथ खलु कोऽपि पुरुषः 'ज्योतिः-अग्निं च दीपं च गृहीत्वा तां-कूटाकारशालाम्, अन्तरतः-अत्यन्ताभ्यन्तरे अनुप्रविशति। तस्याः कूटाकारशालायाः सर्वतः-सर्वदिक्षु, समन्तात्-सर्वविदिक्षु घननिचितनिरन्तराणि-घन-निविडं यथा स्यात्तथा निचितानि-संघातितानि निरन्तराणि-अन्तररहितानि तानि तथा, अस्य 'द्वारवदनानी'-त्यनेन सम्बन्धः, पुनः-निश्छिद्राणि छिद्ररहितानि द्वारवदनानि-द्वारमुखानि, पिदधाति-आच्छादयति, तस्याः-कूटाऽऽकाटशालायाः बहुमध्यदेशभागे-अत्यन्तमध्यप्रदेशे तं प्रदीपं प्रदीपयेत्-प्रज्वालयेत्, ततः खलु स प्रदीपः तां कूटाकारशालाम् अन्तरन्तः-सर्वान्तर्भागे-सर्वान्तर्भागावच्छेदेनेति भावः। अवभासयति-प्रकाशयति, उद्द्योतयति-उत्कर्षेण प्रकाशयति, तापयति-संतप्तां करोति प्रभासयति-घटपटादि दर्शनया प्रकर्षेण प्रकाशमानां करोति, किन्तु बहिः-कूटाकारशालाया बहिर्भागं नो चैव-नैव अवभासयति उद्द्योतयति तापयति प्रभासयति। अथ खलु स पुरुषः तं प्रदीपम् इडुरकेण-महापिटकेन-श्रावरणविशेषेण पिदध्यात्-आच्छादयेच्चेत्, ततः खलु सः-पिहितः प्रदीपः तत्-प्रदीपपिधानभूतम् इडुरकम् अन्तः आभ्यन्तरावच्छेदेन अवभासयति किन्तु इडुरकस्य बहिः-बहिःप्रदेशं नो चैव-नैव खलु अवभासयति तथा कूटाकारशालायाः बहिः नो चैव अवभासयति, एवम्-अनेन प्रकारेण गोकिलिजेन-गोकिलिजं-गवां भक्ष्यस्थापनकुण्डिका, तेन, तथा पक्षिपिटकेन-पक्षिपिटकं-पक्ष्याकारो वंशशिलाकानिर्मितपात्रविशेषः, तेन, तथा गण्डमाणिकाया-गण्डमाणिका-धान्यमापनिका, तथा, आढकेन, अर्धाढकेन, प्रस्थकेन, अर्धप्रस्थकेन, कुडवेन, अर्धकुडवेन, आढकादारभ्यार्धकुडवपर्यन्तानि धान्यमापकानि देशविशेषप्रसिद्धानि पात्रविशेषाणि तैः प्रदीपं पिदध्यादिति पूर्वेण सम्बन्धः, तथा चतुर्भागिकया, अष्टभागिकया षोडशिकया द्वात्रिंशत्कया चतुष्पष्टिकया-चतुर्भागिकादि चतुष्पष्टिकापर्यन्ता मगधदेशप्रसिद्धा एव रसमापकपात्रविशेषास्तैः प्रदीपं पिदध्यादिति पूर्वेणान्वयः, एवं-दीपचम्पकेन-दीपपिधानेन प्रदीपं पिदध्यादिति पूर्वेणान्वयः, ततः खलु सः-पिहितः प्रदीपः दीप-

जैसे दीप का एक कोडे (एक घर) में रख दिया जावे तो वह उस कोडे भर को जहां तक उसका प्रकाश फैल सकता है प्रकाशित करता है और उसी दीपक को यदि मिट्टी के छोटे वर्तन के अन्दर बन्द कर रख दिया

दीपकने ओह घरमां भूकवामां आवे तो ते संपूर्ण घरने जथां सुधी तेना प्रकाश जथं शके त्यां सुधी प्रकाशित करे छे अने तेज दीपकने जे माटीना नाना वासणुनी अंदर भूकवामां आवे तो ते तेना अंदरना लागने जे प्रकाशित करे छे वगेरे वगेरे,



चम्पकस्य अन्तः-मध्यभागम् अवभासयति उद्द्योतयति तापयति प्रभासयति नो  
 चैव खलु दीपचम्पकस्य वहिः, नो चैव खलु चतुष्टिकां नो चैव खलु  
 चतुष्पष्टिकाया वहिः, एवं दीपचम्पकाच्छादितो दीपः, नो चैव खलु द्वात्रिं-  
 शिकां, नो चैव खलु द्वात्रिंशिकायाः वहिः, इत्यादि पश्चादानुपूर्वक्रमेण यावत्  
 नो चैव कूटाकारशालाम्, नो चैव कूटाकारशालाया वहिः अवभासयति उद्-  
 द्योतयति तापयति प्रभासयति' इति योजना कार्या एवमेव-प्रदीपदृष्टान्तानु-  
 सारेणैव हे प्रदेशिन् ! जीवोऽपि यां कांचित्-यादृशीं-पूर्वकर्मनिबद्धां-पूर्व-  
 भवोपार्जितकर्मनिबद्धां बोन्दि-तनुं निर्वर्तयति-उत्पादयति तां बोन्दिम्  
 असंख्येयै असंख्यातैः जीवप्रदेशैः सचित्ता-जीवयुक्तां करोति-सम्पादयति,  
 तां बोन्दि कीदृशीम् ! इति जिज्ञासायामाह क्षुद्रिकाम्-अतिलघ्वीम्, महतीं  
 -विशालाम् वा सचितां करोति' इति पूर्वेणान्वयः । तत्-तस्मात्-दीपदृष्टा-  
 न्तेन जीवस्य पूर्वभवकृतकर्मनिबद्धातिलघुमहाशरीरानुप्रवेशनकारणात् हे  
 प्रदेशिन् ! त्वं श्रद्धेहि-मद्वचने श्रद्धां कुरु, यथा-अन्यो जीवः तदेव-पूर्वोक्त-  
 मेव अन्यच्छरीरम् नो तज्जीवः स शरीरम्, इति । ॥ सू० १५२ ॥

મૂલમ--તણે પાસી રાયા કેસિં કુમારસમણં એવં વયાસી-એવં  
 खलु भंते ! मम अज्जगस्स एसा सन्नो जाव समोसरणं जहातज्जीवो  
 तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं । तयाणंतरं च णं मम  
 पिउणो वि एसा सण्णा जाव समोसरणं । तयाणंतरं च णं मम

जाता है तो वह उसके भीतरी भाग को ही प्रकाशित करता है. आदि  
 तो जिस प्रकार से दीपक के प्रकाश में संकोच विस्तार करने का स्वभाव  
 है. उसी प्रकार से जीव में भी अपने प्रदेशों को संकोच विस्तार करने  
 का स्वभाव है. यही सब विषय इस सूत्र में स्पष्ट किया गया है. 'हत्थीउ  
 कुंथू' इसका अर्थ है हस्ती की अपेक्षा करके । ऋद्धि शब्द से यहां  
 परिचारादिरूप ऋद्धि गृहीत हुई हैं ॥ सू० १५२ ॥

તે. જેમ દીપકના પ્રકાશમાં સંકોચ વિસ્તાર કરવાનો સ્વભાવ છે તેમજ જીવમાં પણ  
 પોતાના પ્રદેશોને સંકુચિત કે વિસ્તૃત કરવાનો સ્વભાવ છે. આ બધી વાતો આ  
 સૂત્રમાં સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. 'હત્થી ઉ કુંથૂ' એનો અર્થ 'હાથીની અપેક્ષાએ'  
 એવો છે. ઋદ્ધિ શબ્દથી આહી પરિવારાદિપ ઋદ્ધિયુ ગ્રહણ થયું છે. ॥સૂ० ૧૫૨॥

वि एसा सण्णा जाव समोसरणं, त नो खलु अह बहुपुरिस-  
परंपरागयं कुलनिस्सियं दिट्ठिं छंडेस्सामि ॥ सू० १५३ ॥

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणम्—एवमवादीत् एव  
खलु भदन्त ! मम आर्यकस्य एषा संज्ञा यावत् समवसरणं यथा—तज्जीवस्तच्छ-  
रीरम्, नो अन्यो जीवोऽन्यच्छरीरम्, तदनन्तरं च खलु मम पितुरपि एषा संज्ञा  
यावत् समवसरणम् । तदनन्तरं ममापि एषा संज्ञा यावत् समवसरणम्, तत् नो  
खलु अहं बहुपुरुषपरम्परागतां कुलनिश्चितां दृष्टिं मोक्षामि ॥ सू० १५३ ॥

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (पएसी राया) प्रदेशी राजाने (केसिं कुमार-  
समणं एवं वयासी) केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा (एवं खलु भन्ते ! मम अज्जगस्स  
एसा सन्ना जाव समोसरणं जहा तज्जीवो तं सरीरं, नो अन्नो जीवो अन्नं सरीरं)  
हे भदन्त मेरे आर्यक—पितामह की यह संज्ञा थी, यावत् समवसरण था—कि  
वही जीव है वही शरीर है—जीव शरीर से भिन्न नहीं है शरीर जीव से भिन्न  
नहीं है (तयाणंतरं च णं मम पिउणो वि एसा सण्णा जाव समोसरणं,) उनके बाद मेरे  
पिताकी भी ऐसी ही संज्ञा यावत् ऐसा ही समवसरण रहा, (तयाणंतरं  
च णं मम वि एसा सण्णा जाव समोसरणं तं नो खलु बहुपुरिसपरंपरागयं  
कुलनिस्सियं दिट्ठिं छंडेस्सामि) बाद में मेरी भी यही संज्ञा यावत् ऐसा ही  
समवसरण है—अतः अनेक पुरुष परम्परा से चली आई हुई इस कुलाधीनमान्यता  
को नहीं छोड़ूंगा, इसलिये जीव और शरीर एक ही है भिन्न २ नहीं है ।

‘तए णं पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) त्थारणाद (पएसी राया) प्रदेशी राजाने (केसिं कुमार-  
समणं एवं वयासी) केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे कथं—(एवं खलु भन्ते !  
मम अज्जगस्स एसा सन्ना जाव समोसरणं जहा तज्जीवो तं सरीरं, नो  
अन्नो जीवो अन्नं सरीरं) हे भदन्त ! मेरा आर्यक—पितामहनी आ संज्ञा  
हती यावत् समवसरण हतुं के तेज एव छे, तेज शरीर छे, एव शरीर करतां  
भिन्न नथी. (तयाणंतरं च णं मम पिउणो वि एसा सण्णा जाव समोसरणं)  
त्थार पछी मेरा पितानी पणु ओवी ज संज्ञा यावत् ओवुं ज समवसाणु रह्युं.  
(तयाणंतरं च णं मम वि एसा सण्णा जाव समोसरणं तं नो खलु बहुपुरिस-  
परंपरागयं कुलनिस्सियं दिट्ठिं छंडेस्सामि) त्थार पछी मेरी पणु ओवी ज संज्ञा  
यावत् समवसरण छे. ओटला भाटे अनेक पुरुष परंपराथी आदी आवती आ कुला-  
धीन मान्यता ने हुं त्यएथ नही ओथी एव अने शरीर ओकज छे भिन्नभिन्न नथी.

ટીકા—‘તણ્ઁ પણ્સી રાયા’ ઇત્યાદિ તતઃ સ્વલુ પ્રદેશી રાજા કેશિનં કુમારશ્રમણમ્, એવમવાદીત્—એવં સ્વલુ હે ભદન્ત ! મમ આર્યકસ્ય—પિતા-મહસ્ય ણ્ણા સંજ્ઞા યાવત્—યાવત્પદેન ણ્ણા પ્રતિજ્ઞા ણ્ણા દૃષ્ટિઃ ણ્ણા હેતુઃ ણ્ણ ઉપદેશઃ ણ્ણઃ સંકલ્પઃ ણ્ણા તુલા એતદ્ માનમ્ એતત્ પ્રમાણમ્” ઇત્યેષાં પદાનાં સંગ્રહો વૌઘ્યઃ સમવસરણમાસીત્ । ણ્ણાં વ્યાખ્યા—એકત્રિંશદધિકૈકશતતમસૂત્રતો વિજ્ઞેયા । યથા—તજ્જીવઃ તચ્છરીરમ્ નો અન્યો જીવોઽન્યચ્છરીરમ્, ઇતિ મમ પિતામહસ્ય મન્તવ્ય-માસીત્ । તદનન્તરં ચ સ્વલુ મમ પિતુરપિ ણ્ણા—અનન્તરોક્તા સંજ્ઞા યાવત્ સમવ-સરણમાસીત્ । તદનન્તરં ચ સ્વલુ મમાપિ ણ્ણા સંજ્ઞા યાવત્ સમવસરણમસ્તિ, તત્—તસ્માઃ કારણાત્ સ્વલુ અહં બહુપુરુષપરમ્પરાગતાં—પિતામહાદિપરમ્પરાસમાગતાં કુલનિશ્રિતાં કુલનિશ્રયા સમાગતાં દૃષ્ટિમ્ નો મોક્ષ્યામિ—ન ત્યક્ષ્યામિ—અપિ તુ તજ્જીવઃ સ શરીરં નો અન્યો જીવોઽન્યચ્છરીરમિતિ મતમેવ સ્વીકરિષ્યામિ ॥ સૂ. ૧૫૩ ॥

મૂલમ્—તણ્ઁ પં કેસી કુમારસમણે પણ્સિ રાયં એવં વયાસી—માં પં તુમં પણ્સી ! પચ્છાણુતાવિણ્ ભવેજ્ઞાસિ, જહા વ સે પુરિસે અયહારણ્ । કે પં મંતે ! સે અયહારણ્ ? । પણ્સી ! મે જહાણામણ્ કેઈ પુરિમા અત્થત્થિયા અત્થગવેસિયા અત્થલુહ્ધયા અત્થકંઘિયા અત્થપિવાસિયા અત્થગવેસણયાણ્ વિઝલં પણિયમંડમાયાણ્ સુવહું મત્તપાણ પત્થયણં ગહાય ણ્ણં મહે અગામિયં છિન્નાવાયં દીહમદ્ધં અડ઼િ અણુપવિટ્ઠા ।

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ છે—‘સન્ના જાવ સમોસરણં’ મેં જો યહ યાવત્ પદ આયા છે તે સે યહાં—‘ણ્ણા પ્રતિજ્ઞા ણ્ણા દૃષ્ટિઃ ણ્ણા રુચિઃ, ણ્ણ હેતુઃ, ણ્ણઃ ઉપદેશઃ, ણ્ણઃ સંકલ્પઃ, ણ્ણા તુલા, એતદ્ માનમ્ એતત્ પ્રમાણ’ ) ઇન પદોં કા સંગ્રહ હુઆ છે. ઇન સવ પદોં કી વ્યાખ્યા તથા ‘સમવસરણ’ ઇસ પદ કી વ્યાખ્યા ૧૩૦ વેં સૂત્ર મેં કી જા ચુકી છે. અતઃ મેં જીવ શરીર કી અભિન્નતા કો હી સ્વીકાર કરુંગા, ભિન્નતા કો નહીં ॥ સૂ. ૧૫૩ ॥

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ જ છે. ‘સન્ના જાવ સમોસરણં’ માં જે યાવત્ પદ છે તેથી અહીં ‘ણ્ણા પ્રતિજ્ઞા ણ્ણા દૃષ્ટિઃ ણ્ણ ઉપદેશઃ ણ્ણઃ સંકલ્પઃ ણ્ણા તુલા, એતત્ માનમ્ એતદ્ પ્રમાણમ્” આ પદોનો સંગ્રહ થયો છે. આ સર્વ પદોની વ્યા-ખ્યા ૧૩૦ માં સૂત્રમાં કરવામાં આવી છે. એથી હું જીવ તેમજ શરીરની અભિન્નતાને જ સ્વીકારીશ ભિન્નતાને નહિ. ॥ સૂ. ૧૫૩ ॥

तए णं ते पुरिसा तीसे अगामियाए अडवीए जाव कंचिदेसं अणुपत्ता  
समाणा एगं महं अयागरं पासंति, असणं सब्बओ समंता आइण्णं  
वित्थिणं सच्छडं उवच्छडं फुडं अणुगाढं पासंति, पासित्ता हट्ठा तुट्ठा  
जाव हियया अन्नमन्नं सदावेत्ति, एव वयासी-एस णं देवाणुप्पिया !  
अयागरे इट्ठे कंते जाव मणामे, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं  
अयभारगं बंधित्तएत्ति कट्ठु अन्नमन्नस्स एयमट्ठु पडिसुणेंति, अय-  
भारं बंधंति अहाणुपुव्वीए संपत्थिया । तए णं से पुरिसा अगामि-  
याए जाव अडवीए किंचिदेसं अणुपत्ता समाणा एगं महं तउआगरं  
पासंति, तउएणं सब्बओ समंता आइण्णं तं चेव जाव सदावेत्ता एवं  
वयासी-एस णं देवाणुप्पिया ! तउआगरे इट्ठे जाव मणामे, अप्पेणं  
चेव तउएणं सुबहुं अए लब्भइ, तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पिया  
अयभारगं छड्ढेत्ता तउयभारगं बंधित्तएत्तिकट्ठु अन्नमन्नस्स अंतिए  
एयमट्ठु पडिसुणेंति अयभारं छड्ढेत्ति तउयभारं बंधंति । तत्थ  
एगे पुरिसे णो संचाएइ अयभारं छड्ढेत्तए तउयभारं बंधित्तए, तए  
णं ते पुरिसा तं पुरिसं एवं वयासी-एस णं देवाणुप्पिया ! तउ-  
आगरे जाव सुबहुं अए लब्भइ, तं छड्ढेहि, णं देवाणुप्पिया ! अय-  
भारगं, तउयभारगं बंधाहि । तए णं से पुरिसे एवं वयासी-दूरा-  
हडे मए देवाणुप्पिया ! अए, चिराहडे मए देवाणुप्पिया ! अए,  
अइगाढबंधणवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए, असिढिलबंधणवद्धे मए  
देवाणुप्पिया ! अए, धणियबंधणवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए णो  
संचाएमि अयभारगं छड्ढेत्ता तउयभारगं बंधित्तए । तए णं ते

पुरिसा तं पुरिसं जाहे णो संचायंति बहूहिं आधवणाहि य पणव-  
 णाहि य परूवणाहि य अधवित्तए वा पणवित्तए वा परूवित्तए वा  
 तथा अहाणुपुठ्ठीए संपत्थिया ! एवं तंवागरं रुप्पागरं, सुवण्णागरं  
 रयणागरं, वड्डागरं । तए णं ते पुरिसा जेणेव सया जणवया जेणेव  
 साइं साइं नगराइं तेणेव उवागच्छंति, वयरविक्रिणणं करे ति, सुबहु  
 दासीदासगोमहिसगवेलगं गिण्हंति, अट्टतलमूसिय पासायवडिंसगे,  
 कारावेति, ण्हाया कयवलिकम्मा कायकोउयमंगलपायच्छित्ता उप्पि  
 पासायवरगया फुट्टमाणेहिं मुडंगमत्थएहिं बत्तीसइवद्धएहिं नाडएहिं  
 वरतरुणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणा उवगिज्जमाणा उवलालिज्ज-  
 माणा इट्ठे सदफरिसरसरूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्च-  
 णुभवमाणां विहरंति । तए णं से पुरिसे अयभारेण जेणेव सए  
 नयरे तेणेव उवागच्छइ, अयभारगं गहाय अयविक्रिणणं करेइ  
 तंसि अप्पमोहंसि निट्ठियंसि खीणपरिव्वए ते पुरिसे उप्पि पासाय-  
 वरगए जाव विहरमाणे पासइ, पासित्ता एव वयासी-अहो ! णं  
 अहं अधण्णो अपुन्नो अकयत्थो अकयलक्खणो हिरिसिरिवज्जिओ  
 हीणपुण्णचाउइंसे दुरंतपंतलक्खणे । जइ णं अहं मित्ताण वा णाईण,  
 वा नियगाण वा वयणं सुणेंतओ तो णं अहंपि एवं चेव उप्पि  
 पासायवरगए जाव विहरेंतओ । से तेणट्ठेणं पएसी ! एवं वुच्चइ-  
 मा तुमं पएसी ! पच्छाणुताविए भविज्जासि, जहा व से पुरिसे  
 अयभारए ॥ सू० १५४ ॥

छाया—ततः खलु केशी कुमारश्रमणः प्रदेशिं राजानमेवमवादी न मा खलु त्वं प्रदेशिन् ! पश्चादनुतापिको भवेः, यथा वा स पुरोऽयोहारकः । कः खलु भदन्त ! सोऽयो-  
हारकः ? । प्रदेशिन् ! ते यथा नामकाः केचिः पुरुषा अर्थार्थिकाः अर्थगवेपकाः  
अर्थलुब्धकाः अर्थकांक्षिनः अर्थपिपासिताः अर्थगवेषणायै विपुलं पणितभा ड-  
मादाय सुबहुभक्तपानपथ्यदनं गृहीत्वा एकां महतीम् अग्रामिकां छिन्नाऽऽपातां  
दीर्घाध्वान् अटवीमनुप्रविष्टाः । ततः खलु ते पुरुषाः तस्याः अग्रामिकाया याव ।

‘तए ण केशीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तएण) इसके बाद (केशीकुमारसमणे) केशीकुमार श्रमणने (पएसि-  
रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजा से ऐसा कहा (माणं तुमं पएसी ! पच्छाणुता-  
विए भवेज्जासि—जहा व से पुरिसे अप्पहारए) हे प्रदेशिन् ! तुम पश्चात्तापयुक्त  
मत बनो जैसा कि वह अयोहारक—लोहवणिक—पश्चात्तापयुक्त बना,

अब प्रदेशी उससे परिचय को जानने के अभिप्राय से पूछता है (के णं  
मंते ! से अयहारए) हे भदन्त ! वह अयोहारक कौन था ? इस पर  
केशीकुमारश्रमण कहते हैं—(पएसी ! से जहाणामए केई पुरिसा अत्थत्थिया  
अत्थगवेसिया अत्थलुब्धया, अत्थकंखिया, अत्थपिवासिया, अत्थगवेसणयाए विउलं  
पणियभंडमायाए सुबहुं भत्तपाणपत्थयणं गहाय एगं महं अग्गामियं छिन्नावायं  
दीहमद्वं अडविं अणुपविट्ठा) हे प्रदेशिन् । अनिर्दिष्ट नामवाले कितनेक पुरुष जो  
कि धन के अर्थी थे, धन के गवेपक थे, धन के लोलुप थे, धनकी कांक्षा  
से युक्त थे, धनकी प्यासवाले थे, धनकी गवेषणा के लिये विपुल क्रयाणक-

‘तए णं केशीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सुत्रार्थ—(तए णं) त्थार पछी (केशीकुमारसमणे) देशी कुमारश्रमणे  
(पएसि रायं एवं वयासी) प्रदेशी राजाने आ प्रभाणे कह्यु. (मा णं तुमं पएसी !  
पच्छाणुताविए भवेज्जासि—जहाव से पुरिसे अयमारए) हे प्रदेशिन् ! तमे  
पेसा अयोहारक—लोह वणिक्—नी नेम, पश्चात्ताप न करो. हवे प्रदेशी तेना संजधमां  
अधी विगत जाणुवा भाटे आ प्रभाणे पूछे छे—(किं णं मंते ! से अयहारए) हे  
भदन्त ते अयोहारक दोषउने वेपारी कोणु हुतो ? तेना जवाअमां देशी  
कुमार श्रमण कह्ये छे—(पएसी ! से जहाणामए केई पुरिसा अत्थत्थिया अत्थ-  
गवेसिया अत्थलुब्धया, अत्थकंखिया, अत्थपिवासया, अत्थगवेसणयाए विउलं  
पणियभंडमायाए सुबहुं भत्तपाणपत्थयणं गहाय एगं महं अग्गामियं  
छिन्नावायं दीहमद्वं अडाव अणुपविट्ठा) हे प्रदेशिन् ! अनिर्दिष्ट नामवाला  
केटवाक पुश्चो के नेओ धनाथी हुता, धनना गवेपक हुता, धननां लोलुप हुता

अटव्याः कंचित् देशमनुप्राप्ताः सन्तः एकं महान्तम् अयआकारं पश्यन्ति, अयसा सर्वतः समन्ताद् आकीर्णं विस्तीर्णं सच्छटम् उपच्छटं स्फुटम् अनुगाढं पश्यन्ति, दृष्ट्वा हृष्टाःतुष्टाः यावत् हृदयाः अन्योऽन्यं शब्दयन्ति, एवमवादिषुः—एष खलु देवानुप्रियाः ! अयआकरः इष्टः कान्तः यावत् मनआमः, तन् श्रेयः खलु देवानुप्रियाः

वस्तु समूह को लेकर तथा साथ में पर्याप्त अशनपानरूप पाथेयलेकर एक विशाल अटवी में जो वसति से रहित थी, हिंसक जंतुओं के भय से मनुष्यों का गमनागमनरूप संचार जिसमें विलकुल नहीं था और दीर्घमार्गयुक्त थी जा पहुँचे (तएणं से पुरिसा तीसे अग्गमियाए अडवीए कंचिदेसं अणुप्पत्ता समाणा एगं महं अयागारं पासंति) इसके बाद वे पुरुष जब उस अग्रामिका, छिन्नापात-युक्ता एवं दीर्घाध्वावाली अटवी के और आगेके प्रदेश में आ चुके तब उन्होंने वहाँ पर एक लोहे की खान को देखा (अएणं सच्चओ समंता आइण्णं सच्छडं उवच्छडं फुडं अणुगाढं पासंति) यह खान सब तरफ से लोहेसे आकीर्ण बनी हुई थी. स्पष्टरूप में नहीं थी बहुत विस्तारवली थी समीचीन छटा—चाक-चिक्क्यावाली थी. छटायुक्त थी. स्पष्टरूप में नहीं थी. (पासित्ता हट्टुट्टा जाव हियया अन्नमन्नं सदावेत्ति) इस लोहे की खान देखकर वे बहुत अधिक हृष्ट एवं तुष्ट यावत् हृदयवाले हुए और फिर उन्होंने आपस में एक दूसरे को बुलाया (एवं वयासी) बुलाकर ऐसा कहा (एस णं देवानुप्पिया ! अयागारे इट्ठे कंते,

धननी कांक्षाथी युक्त होता, धननी तरसवाणा होता, धननी गवेषणा भाटे विपुल कथाश्रुत वस्तु समूहने लधने तेमज्ज साथे पर्याप्त अशनपानरूप पाथेय लधने ओक विशाल अटवीमां—के जे ओकदम निर्जन होती, हिंसक जंतुओंका लयथी भाषुसोनी अवरज्जवर जेमां सदंतर गंध होती अने दीर्घ मार्ग युक्त होती-जध पड़ोन्थ्या. (त एणं ते पुरिसा तीसे अग्गमियाए अडवीए कंचिदेसं अणुप्पत्ता समाणा एगं महं अयागारं पासंति) त्थार पछी ते भाषुसोने अग्रामिका, छिन्नापात युक्त अने दीर्घाध्वावाणी अटवीनी अंदर भूष आगण जाता रह्या त्थां तेमज्जे दोभंडनी मोटी भाषु जेध. (अएणं सच्चओ समंता आइण्णं वित्थिण्णं सच्छडं उवच्छडं फुडं अणुगाढं पासंति) आ भाषु योभेर दोभंडथी आशीर्षु होती. गहु ज विस्तार युक्त होती. समीचीन छटा ओटले के आकचिक्य वाणी होती, छटायुक्त होती. स्पष्टरूपथी देणाती होती—अने ओक पुंज रूपमां होती. छिन्नलिन्न रूपमां न होती. (पासित्ता हट्टुट्टा जाव हियया अन्नमन्नं सदावेत्ति) ते दोभंडनी भाषुने जेधने गहुज वधारे इष्टतुष्ट यावत् हृदयवाणा थया अने पछी तेमज्जे परस्पर ओकधीनने जोलाव्या. (एवं वयासी) जोलावीने आ प्रभाषु कहुं. (एस ण देवानुप्पिया ! अयागारे इट्ठे, कंते, जाव मणामे)



अस्माकम् अयोभारकं बद्धम्, इति कृत्वा अन्योऽन्यस्य एतमर्थं प्रतिशृण्वन्ति, "अयो-  
भारं बध्नन्ति, यथाऽनुपूर्विं प्रस्थिताः । ततः खलु ते पुरुषाः अग्रामिकाः यावत् अटव्याः  
किञ्चिद्देशम् अनुप्राप्ताः सन्तः एकं महान्तं त्रयाकरं पश्यन्ति, त्रपुणा सर्वतः  
समन्तात् आकीर्णं तदेव यावत् शब्दयित्वा एवमवादिषुः—एष खलु देवानुप्रियाः !  
त्रयाकरः इष्टः यावत् मनओमः, अल्पेनैव त्रपुणा सुबहु अयो लभ्यते, तत्र श्रेयः

जाव मणामे] हे देवानुप्रियो ! यह लोहे की खान इष्ट है, यावत् मनोज्ञ है (तं सेयं खलु  
देवानुप्रिया । अहं अयभारकं बध्निष्ये त्ति कर्तुं अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडि-सुणेंति) अतः  
उचित है कि हम लोग इस लोहे के भार यहां से ले लेवे इस प्रकार विचार  
करके उन्होंने आपसके इस विचार को निश्चय का रूप दे दिया (अयभारं  
बध्नेति) और लोहे को वहां से ले लिया (अहाणुपुव्विए संपत्थिया) और लेकर  
वहां से क्रमशः चल दिया (तएणं से पुरिसा अगामियाए जाव  
अडवीए कंचिदेस अणुपत्ता समाणा एगं महं तउआगरं पासंति) इसके बाद  
वे चलते २ जव और अधिक आगे निकल गये तब उन्होंने उस अग्रामिक  
आदि विशेषणवाली अटवी में एक बहुत बड़ी त्रपु-रांगा की खान को देखा (तएणं  
सव्वओ समंता आइण्णं तं चेव जाव सदावेत्ता एवं वयासी) संतुष्ट यावत् हृदय वाले  
हुए बाद में उन्होंने आपस में एक दूसरे को बुलाया बुलाकर ऐसा कहा—  
(एस णं देवानुप्रिया ! तउआगारे इट्ठे जाव मणामे] हे देवानुप्रिया ! यह रांगा

ते दोष उनी णाणु छोट छे, कांत यावत् मनोज्ञ छे. (तं सेयं खलु देवानु-  
प्रिया ! अहं अयभारकं बध्निष्ये त्ति कर्तुं अन्नमन्नस्स एयमट्ठं पडिसुणेंति)  
येथी अमारा माटे आ वात गरणर छे के अमे गधा आ दोष उनी लारने अहीथी  
लछि जछिअ. आ प्रमाणे विचार करीने तेमणे परस्पर करेले आ विचारने निश्चय-  
त्मकइय आये. (अयभारं बध्नेति) अने दोष उने त्यांथी लछि लीधु. (अहाणु-  
पुव्विए संपत्थिया) अने लछिने त्यांथी क्रमशः आगण आलता थया. (तएणं से  
पुरिसा अगामियाए जाव अडवीए कंचिदेस अणुपत्ता समाणा एगं महं  
तउआगरं पासंति) त्थार पछी तेओ जतां जतां ज्यारे भूण हर नीकणी गया  
त्थारे तेमणे अग्रामिका वगेरे विशेषणोथी युक्त अटवीमां ओक बहुत विशाल त्रपु-  
रांगा (कथीरनी णाणुने जेछ. (त एणं सव्वओ समंता आइण्णं तं चेव-  
जाव सदावेत्ता एवं वयासी) ते रांगानी णाणु ओमेर रांगाथी आकीर्ण रही, यावत्  
ओक पुंज इपमां छती. आ णाणुने जेछिने तेओ सर्वे भूणज हुष्ट अने संतुष्ट  
यावत् हृदयवाण थया. त्थार पछी तेमणे ओक भीलने गोलाव्या अने गोलावीने  
आ प्रमाणे कछुं—(एस णं देवानुप्रिया ! तउआगारे इट्ठे जाव मणामे) हे देवा-

खलु देवानुप्रियाः ! अस्माकम् अयोभारकं मुक्त्वा त्रपुकभारकं वद्धुम्, इतिकृत्वा अन्योऽन्यस्य अन्तिके एतमर्थं प्रतिशृण्वान्त, अयोभारं मुञ्चन्ति, त्रपुकभारं वद्धन्ति ! तत्र खलु एकः पुरुषो नो शक्नोति अयोभारं मोक्तुम् त्रपुकभारं वद्धुम् । ततः खलु ते पुरुषाः तं पुरुषमेवमवादिषुः—एष खलु देवानुप्रिय ! त्रपुकाकरः यावत् सुबहुअयो लभ्यते, तद् मुञ्च खलु देवानुप्रिय ! अयोभारकम्, त्रपुकभारकं वधान । ततः स पुरुषः एवमवादीत्—दूराऽऽहृतं मया देवानुप्रियाः ! अयः, चिराऽऽहृतं मया

खान इष्ट यावत् मन आम-अर्तिहर होने से मनः गम्य है [अपे णं चेव त-उएण सुवहुं अए लब्भइ] थोड़े से ही रांगा से बहुत अधिक लोहा हमें मिल सकता है (तं सेयं खलु अम्हं देवाणुप्पि ! ! अयभारगं छुट्तेत्ता तउयभारगं वंधित्तए त्ति कट्ठु अन्नमन्नस्स अंतिए एयमट्ठं पडिसुणेति) अतः हमारी भलाई अब इसी में है कि हम इस लोहे के भार को छोड़कर इस रांगा को यहां से बांध ले, इस प्रकार का विचार करके उन्होंने आपस के इस कृत विचार को निश्चय का स्थान दे दिया. (अयभारं छुट्तेति, तउयभारं वंधेति) और लोहेके भार को छोड़कर रांगा के भार को बांध लिया (तत्थ ण एगे पुरिसे णो संचाएइ, अयभारं छुट्तेत्तए, तउयभारं वंधित्तए) परन्तु इनमें एक पुरुष ऐसा भी था—जो लोहे के भार को छोड़ने में और रांगा के भार को ग्रहण करने में बांधने में असर्थथा, अर्थात् वह ऐसा करना नहीं चाहता था. (तएणं ते पुरिसा

તુપ્રિથો ! આ રાંગાની ખાણ ઇષ્ટ યાવત્ મન આમ-અર્તિહર હોવા બદલ મનગમ્ય છે. (અપે ણં ચેવ તઉણં સુવહું અએ લબ્ભઇ) થોડા રાંગાથી અમને ઘણું લોખંડ મળી શકે છે. (તં સેયં સ્વલુ અમ્હં દેવાણુપ્પિયા ! અયભારગં, છુટેત્તા તઉય-ભારગં વંધિત્તએ ત્તિ કટ્ઠુ અન્નમન્નસ્સ અંતિએ એયમટ્ઠં પડિસુણેતિ) એવી અમારા માટે એ જ સાફ છે કે અમે લોખંડના ભારને ત્યજીને આ રાંગાને અડીથી ખાંધી લઇએ. આ પ્રમાણે વિચાર કરીને તેમણે પરસ્પર કૃત આ વિચારને નિશ્ચયાત્મકરૂપે આપી દીધું. (અયભારં છુટેતિ, તઉયભારં વંધંતિ) અને લોખંડના ભારને મૂકીને તાંખાના ભારને સાથે લઇ લીધો. (તત્થ ણં એગે પુરિસે ણો સંચાએइ, અયભારં છુટેત્તએ, તઉએ ભારં વંધિત્તએ) પણ તેખધામાં એક માણસ એવો પણ હતો કે જે લોખંડના ભારને ત્યજીને રાંગાને ગ્રહણ કરવાની વાતને ઉચિત માનતો ન હતો. (તએણં તે પુરિસા તં પુરિસં એવં વયાસી) ત્યારે તે પુરુષોએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું—(એસ ણં દેવાણુપ્પિયા ! તઉઆગરે જાવ સુવહું અએ લબ્ભઇ) હે દેવાનુપ્રિય ! આ રાંગાની ખાણ છે, ઇષ્ટ કાંત વગેરે વિશેષણોથી યુક્ત છે. થોડા રાંગાથી પણ આપણે ઘણું લોખંડ મેળવી શકીએ તેમ છીએ. (તં એ એ ણં દેવાણુપ્પિયા !

देवानुप्रियाः ! अयः, अतिगाढबन्धनवद्धं मया देवानुप्रियाः ! अयः, अशिथिल-  
बन्धनवद्धं मया देवानुप्रियाः ! अयः, अत्यन्तगाढबन्धनवद्धं देवानुप्रियाः ! अयः,  
नो शक्नोमि अयोभारकं त्यक्त्वा त्रपुकभारकं बद्धुम् । ततः खलु ते पुरुषाः तं

तं पुरिसं एवं वयासी) तव उन पुरुषोने उस पुरुष से ऐसा कहा—(एस णं  
देवाणुप्पिया ! तउ आगरे जाव सुवहुं अए लब्भइ) हे देवानुप्रिय ! यह रांगे की  
खान है, इष्ट कान्त आदि विशेषणोंवाली है, थोड़े से रांगा से ही बहुत अधिक  
लोहा प्राप्त किया जा सकता है । (तं छड्ढेहि णं देवाणुप्पिया ! अयभारगं,  
तउयभारगं बंधाहि) इसलिये ! तुम हे देवानुप्रिय ! इस लोहे के भार को छोड़  
दो और रांगा के भार को बांध लो—लेलो (तएणं से पुरिसे एवं वयासी) तव  
उस पुरुषने ऐसा कहा (दूराहडे मए देवाणुप्पिया ! अए, चिराहडे मए, देवा-  
णुप्पिया ! अए अइगाढबन्धनवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए, असिढिलबन्धनवद्धे  
मए देवाणुप्पिया ! अए, धणियबन्धनवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए, णो संचाएमि  
अयभारगं छड्ढेत्ता तउयभारगं बन्धित्तए) हे देवानुप्रियो ! इसलोहके भारको मैं  
बहुत दूर से लाया हूँ, बहुत समय से इसे लादे हुए हूँ, हे देवानुप्रियो !  
मैंने इसे बहुत ही गाढ बन्धन से बांधा है अर्थात् बहुत अधिक कसकर बांधा  
हुआ है, अशिथिल बन्धन से—अब खुल सके ऐसे बन्धन से नहीं बांधा है  
किन्तु हे देवानुप्रियो ! मैंने इस लोहे को ग्रचुर बन्धन से बांधा है, अतः अब  
मैं अयोभार को छोड़कर त्रपुक भारको ग्रहण करने के लिये समर्थ नहीं हूँ  
अर्थात् लोहे के भार को छोड़ कर रांगा के भार को नहीं लूँ । (तएणं ते

अयभारगं, तउयभारगं बंधाहि) ओटला भाटे तमे हे देवानुप्रियो ! आ लोअ'उना  
भारने भूझी हो आने रांगाना भारने आंधी हो, (त एणं से पुरिसे एवं वयासी)  
त्यारे ते पुरिसे आ प्रमाणे कह्युं—(दूराहडे मए देवाणुप्पिया ! अए, चिराहडे मए,  
देवाणुप्पिया ! अए गाढबन्धनवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए, धणिअ-  
बन्धनवद्धे मए देवाणुप्पिया ! अए, णो संचाएमि अयभारगं छड्ढेत्ता तउय-  
भारगं बन्धित्तए) हे देवानुप्रियो ! आ लोअ'उना भारने हुं णहुं न हूरथी लाओये  
छुं, धणु सभयथी मे आने उपाडी राण्यो छ हे देवानुप्रियो ! आने मे सभत  
गाढ अंधन आंध्यो छ ओटले के मे आने कसीने आंध्यो छ, हुवे जोली शक्य  
ओवा अंधनथी आंध्यो नथी यणु हे देवानुप्रियो ! मे आ लोअ'उना भारने प्रचुर  
अंधनथी आंध्यो छ, ओटला भाटे हुवे हुं आ लोअ'उना भारने त्यल्लने त्रपुकभारने  
अडणु करवामां समर्थ नथी, ओटले के लोअ'उना भारने भूझीने रांगाना भारने हुवे  
हुं उपाडीथ नही, (तएणं ते पुरिसा तं पुरिसं जाहे णो संचाएन्ति वहुह

पुरुषं यदा नो शक्नुवन्ति बहुभिः आख्यापनाभिश्च प्रज्ञापनाभिश्च प्ररूपणाभिश्च आख्यापयितुं वा प्रज्ञापयितुं वा प्ररूपयितुं वा तदा यथाऽऽनुपूर्विं संप्रस्थिताः। एवं ताम्राऽऽकरं रूप्याऽऽकरं सुवर्णाऽऽकरं वज्राऽऽकरं। ततः खलु ते पुरुषाः यत्रैव स्वानि स्वानि नगराणि तत्रैव उपागच्छन्ति, वज्रविक्रयणं कुर्वन्ति, सुवहु

पुरिसा तं पुरिसं जाहे णो संचायन्ति वहूहिं आधवणाहि य, पणवणाहि य, परुवणाहि य, आधवित्तए वा पणवित्तए वा परुवित्तए वा तथा अहाणुपुच्चीए संपत्थिया) तव उन पुरुषों ने जब कि उसे अनेक दृष्टान्तरूप आख्यापनाओं द्वारा, हेयोपादेय-प्रतिबोधक प्रज्ञापनाओं द्वारा, तथा यथार्थ स्वरूपनिरूपक प्ररूपणाओं द्वारा समझाया परन्तु वह नहीं समझा, वहां से आगे क्रमशः प्रयाण करना प्रारंभ कर दिया. (एवं तंवागरं, रूप्यागरं, सुवर्णागरं, वज्रागरं) ज्यों २ वे आगे चले उन्होंने वैसे २ ताम्र की खान को, रूप्य की खान को सुवर्ण की खान को, रत्न की खान को और हीरे की खान को देखा (तएणं ते पुरिसा जेणेव सया जणवया जेणेव साइं साइं नगराइं तेणेव उवागच्छन्ति) वहां २ से अल्प मूल्य की उन २ ताम्रादिरूप वस्तुओं का परित्याग करते हुए और लोह भारग्रहण करने में ही आदर बुद्धिवाले बने हुए उस पुरुष को उन २ वस्तुओं के भरने के विषय में समझाने पर भी उसकी हठाग्राहिता को छुड़वाने में असमर्थ बने हुए वे सब पुरुष जहां अपने २ जनपद-देश थे और उनमें जहां २ अपने २ नगर थे वहां पर वज्रमणियों को लिये हुए आये (वज्रविक्रिण्णं करेति) वहां

आध.णाहि य पणवणाहि य, परुणाहि य आधवित्तए वा पणवित्तए वा परुवित्तए वा, तथा अहाणुपुच्चीए संपत्थिया) त्थार पछी ते पुइपोये धणुं दष्टांत इप आख्यापनाओ द्वारा, हेयोपादेय प्रतिबोधक प्रज्ञापनाओ द्वारा, तेमज यथार्थ स्वरूप निरूपक प्ररूपणओ द्वारा समझाओ, पणु ते मान्यो नहि, त्यांथी अधाओओ डमशः आलवा मांडयुं. (एवं तंवागरं, रूप्यागरं, सुवर्णागरं, रत्नागरं, वज्रागरं) जेम जेम तेओ आगण वधता गया तेम तेम तेमणे तांगानी आणोने, आंहीनी आणोने, सुवर्णुनी आणोने, रत्ननी आणोने अने हीराओनी आणोने जेम. (तए णं ते पुरिसा जेणेव सया जणवया जेणेव साइं साइं नगराइं तेणेव उवागच्छन्ति) त्यांथी अल्पमूल्यनी ते ताम्रादि वस्तुओने भूमीने अने ढोडलार अडणु करवामां ज प्रवृत्त थयेदा ते माणुअने तेओओ मूल्यवान् वस्तुओने देवा माटे आग्रह कर्यो छतांओ तेना डमआडिताने छिडाववामां अंते निष्पृण गया. अने आभ तेओ अधा ज्यां पोतपोताने जनपद-देश डतो अने तेमां पणु ज्यां पोतपोताहुं नगर डतुं त्यां वज्रमणुओ वगेरे लछ पडोन्थी गया. (वज्रविक्रिण्णं करेति)

दासीदासगोमहि-गवेलकं गृह्णन्ति, अष्टतलोच्छ्रितप्रासादावतंसकान् कारयन्ति, स्नाताः कृतबलिकर्मणिः कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्ताः उपरिप्रासादवरगताः स्फुटदम्भि-  
मृदङ्गमस्तकैः द्वात्रिंशद्वद्वकैर्नाटकैर्वरतरुणीसंप्रयुक्तैरुपनर्त्यमाना उपगीयमानाः उपलाल्य-  
मानाः इष्टान् शब्द-स्पर्श-रसरूपगन्धान् पञ्चविधान् मानुषकान् कामभोगान् प्रत्यनुभवन्ती

आकरके उन्होंने वज्रमणियों का विक्रय किया. (सुबहुदासीदासगोमहिस-  
गवेलकं गिण्हेति) और उसे प्राप्त द्रव्य से अनेक दासी, दास, गो महिष तथा  
गवेलको को खरीदा अर्थात् इनका संग्रह किया (अष्टतलमूसियपासायवर्डि-  
सगे कारावेति) और आठ खण्डों से सुशोभित ऊंचे २ श्रेष्ठ प्रासादों का  
निर्माण कराया (प्रायाकयवलिकम्मा, कयकोउयमंगलपायच्छित्ता) स्नान करके बलि-  
कर्म—वायसादिको अन्नादि का भाग देने रूप बलिकर्म करके एवं कौतुक, मंगलरूप  
प्रायश्चित्त करके वे उन (उप्पि पासायवरगया) प्रासादों के ऊपर ही रहते (फुट्टमाणेहिं,  
मुङ्गमत्थएहिं, वत्तीसइवद्वएहिं नाडएहिं, वरतरुणी संपउत्तेहिं) और वहीं रहकर  
वे अतिवेग से ताड़ित किये गये मृदङ्गा के निनादों से तथा सुन्दर २ तरुणियों  
द्वारा अभिनीत किये गये वत्तीस प्रकार के नाटकों से (उवणच्चिज्जमाणा) उप-  
नर्त्यमान (उवगिज्जमाणा, उवलालिज्जमाणा) उपगीयमान और उपलाल्यमान होते  
हुए (इट्टे सदफरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणा विह-  
रन्ति) इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप, गंध इन पांच प्रकार के मनुष्यसंबन्धी काम-  
भोगों को भोगते २ आनन्दपूर्वक अपना समय व्यतीत करने लगे (तएणं से

त्यां पडोन्हीने तेमणे वज्रमणिओनुं वेयाणु ःकथं (सुबहुदासीदासगोमहिस-  
गवेलकं गिण्हेति) अने जे द्रव्य मज्जुं तेनाथी धण्णा दासी. दास, गो, महिष  
तेमज गवेलकोनी खरीदी करी. अटले के ओमनो संग्रह करी. (अष्टतलमूसिय-  
पासायवर्डिसगे कारावेति) अने आठ भाणाओथी सुशोभित ओन्हा ओन्हा श्रेष्ठ  
प्रासादोनुं निर्माण कराव्युं. (प्राया कयवलिकम्मा, कयकोउयमंगलपायच्छित्ता)  
स्नान करीने, बलिकर्म-कागडा वगेरेने अन्न वगेरेने लाग आपीने अने कौतुक मंगल  
इय प्रायश्चित्त करीने तेओ ते (उप्पि पासायवरगया) प्रासादोनी उपर ज  
रहेवा लाय्या. (फुट्टमाणेहिं, मुङ्गमत्थएहिं, वत्तीसइवद्वएहिं नाडएहिं, वर  
तरुणी संपउत्तेहिं) अने त्यांज रहीने तेओ अतिवेगथी प्रताड़ित करेला मृदङ्गोना  
निनादोथी तेमज सुंदर सुंदर तडणु खीओ द्वारा अभिनीत करायेल अत्तीस प्रकारना  
नाटकोथी (उवणच्चिज्जमाणा) उपनर्त्यमान (उवगिज्जमाणा, उवलालिज्जमाणा)  
उपगीयमान अने उपलाल्यमान थता (इट्टे सद फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे  
माणुस्सए कामभोगे पच्चणुभवमाणा विहरन्ति) इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप,  
गंध आ पांच प्रकारना मनुष्य संबन्धी कामभोगोना उपभोग करता आनन्दपूर्वक

विहरन्ति । ततः खलु स पुरुषः अयोभारेण यत्रैव स्वं नगरं तत्रैव उवागच्छन्ति, अयोभारकं गृहीत्वाः योविक्रयणं करोति, तस्मिन् अल्पमूल्यनिष्ठिते क्षीण-परिव्ययः तान् पुरुषान् उपरि प्रासादवरगतान् यावद् विहरतः पश्यति, दृष्ट्वा

पुरिसे अयभारेण जेणेव सए नयरे तेणेव उवागच्छइ) अव वह पहिला पुरुष कि जिसने हित वचनों की अवहेलना की और लाह के भार को ही अच्छा समझा उस लोहभार के साथ ही अपने नगर में आया (अयभारगं गहाय अय-विक्रिणणं करेइ) वहां आकारके उसने उस लोहे के भार को लेकर बेचना प्रारंभ किया (तंसि अप्पमोल्लंसि, निट्ठियंसि, हीणपरिव्वए ते पुरिसे उप्पिं पासाय-वरगए जाव विहरमाणे पासइ) जब वह पूरा विक्रि चुका—तो उससे जो उसे द्रव्य प्राप्त हुआ, वह बहुत थोड़ा सा प्राप्त हुआ—क्यों कि वह लोह उसका अल्पमूल्य में विक्रा अतः उससे प्राप्त द्रव्य आहार वस्त्र आदि के लाने में ही समाप्त हो गया। इस तरह क्षीणपरिव्ययवाले बने हुए उस पुरुष ने उन वज्र-विक्रयी पुरुषों को जो कि अपने २ रम्य प्रासादों में रहकर यावत्—अतिवेग से ताडित (वजाते) हुए मृदङ्गों के निनादों से एवं ३२ प्रकार के सुन्दर २ तरुण युवतियों द्वारा अभिनीत किये गये नाटकों से उपनर्त्यमान थे और उपलब्धमान थे—एवं इष्ट शब्द-स्पर्श रस, रूप, गंध, इनपांचप्रकार के मनुष्य-भव संबंधी कामभोगों को भोगते हुए आनन्द के साथ अपना समय व्यतीत

पोतानो समय पसार करवा लाया. (तए णं से पुरिसे अयभारेण जेणेव सए नयरे तेणेव उवागच्छइ) उवे ते पेवो लोण'उना भारवाणो माणुस के जेणे भीण लोडोना हित वचनो सांलण्णा नडि अने लोण'उना भारने उत्तम मान्यो हुतो— नगरमां आण्यो. (अयभारगं गहाय अयविक्रिणणं करेइ) त्यां आवीने तेणे ते लोण'उना भारने लधने वेयाणु प्रारंभ क्युं (तंसि अप्पमोल्लंसि निट्ठियंसि हीणपरिव्वए ते पुरिसे उप्पिं पासायवरगए जाव विहरमाणे पासइ) न्यारे ते लोण'उना भार वेयाणु गयो त्यारे तेनाथी जे द्रव्य मण्यु हुतुं ने अत्यल्प हुतुं केमडे ते लोण'उ अल्प मूल्यमां ज वेयाणु हुतुं. तेनाथी जे अल्पधन प्राप्त थयुं हुतुं. ते तो आहार वस्त्र वगेरेनी भरीहीमां ज पइं थयुं गयुं हुतुं. आ प्रमाणे ते क्षीण पण्तिपवाणा ते पुइषा ते वज्र विक्रयी पुइषोने के जेयो पोत-पोताना रम्य प्रासादोमां रहीने यावत् अतिवेगशी प्रताडित थयेव मृदङ्गोना निनादोथी अने उर प्रकारना सुंदर सुंदर तरुण स्त्रीयो द्वारा अलिनीत करायेला नाटकोथी उप-नर्त्यमान हुता, उपगीयमान हुता, अने उपलब्धमान हुता अने छुट; शब्द, स्पर्श रस, रूप, गंध, आ पांच जतना मनुष्य सब संबंधी काम लोकोनी उपभोग करतक आनंदपूर्वक पोतानो समय पसार करी रह्या हुता जेयां. (पासित्ता—एवं वयासी



एवमवादीत्-अहो !! खलु अहम् अधन्यः अपुण्यः अकृतार्थः अकृतलक्षणः हीनपुण्य-  
वर्जितः हीनपुण्यचातुर्दशो दुरन्तप्रान्तलक्षणः । यदि खलु अहं मित्राणां वा ज्ञातीनां  
वा निजकानां वा वचनम् अश्रोण्यं तदा खलु अहमपि एवमेव उपरि प्रासादवर-  
गतः यावद् व्यहरिष्यम् । तत् तेनार्थेन प्रदेशिन् ! एवमुच्यते-मा त्वं ! प्रदेशिन् !  
पश्चादनुतापितो भवेः, यथा वा स पुरुषोऽयोहारकः । ॥ सू० १५४ ॥

कर रहे थे देखा(पासित्ता एवं वयासी-अहोणं अहं अधन्नो, अपुन्नो, अकयत्था,  
अकयलक्खणो हिरिसिरिवज्जिओ हीणपुण्णचाउद्दसे दुरंतपंतलक्खणे) तो देखकर  
इस प्रकार विचार किया-अरे ! मैं कितना अधन्य हूं, पुण्यहीन हूं, अकृतार्थ  
हूं, शुभलक्षण रहित हूं, लज्जा लक्ष्मी दोनों से वर्जित हूं, हीनपुण्यचातुर्दश हूं  
अर्थात् हीनपुण्यवाला हूँ ! सी लिये कृष्णपक्ष की चतुर्दशी में जन्मा हूँ, दुरन्त  
प्रान्तलक्षणवाला हूँ-दुष्टावसानवाले अमनोज्ञ लक्षणों से युक्त हूँ (जइ णं अहं मित्राण  
वा णाईण वा णियगाण वा वयणं सुणेंतओ तो णं अहं पि एवं चेव उप्पि  
पासायवरगए जाव विहरेंतओ) यदि मैं साथ गये हुए मित्रों के, अथवा पितृ-  
व्यादि ज्ञातिजनों के वा अपने हितैषियों के वचनों को मान लेता, तो मैं भी  
इन्हीं साथ के आये हुए वज्रविक्रेता पुरुषों की तरह ही प्रासादों में रहता  
हुआ विविध सुख सम्पन्न बनकर अपने समय को आनन्दपूर्वक व्यतीत करता  
(से तेणेट्ठेणं पएसी ! एवं वुच्चइ, मा तुमं पएसी ! पच्छाणुताविए भविज्जासि,  
जहा व से पुरिसे अयमारए) इसी कारण हे प्रदेशिन् ! मैंने ऐसा कहा है कि

अहो णं अहं अधन्नो, अपुन्नो अकयत्थो, अकयलक्खणो हिरिसिरिव-  
ज्जिओ हीणपुण्णचाउद्दसे दुरंतपंतलक्खणे) तेमने नेधने आ प्रभाण्णे विचार  
करो के अरे ! हं डेट्ठो अलागियो छुं, अधन्य छुं, पुण्यहीन छुं, अकृतार्थ  
छुं शुभलक्षण रहित छुं, लज्जा लक्ष्मी नन्नेथी वर्जित छुं हीनपुण्यचातुर्दश  
छुं, अट्ठे के हीन पुण्यवाणो छुं, अथी न कृष्ण पक्षनी चतुर्दशीना द्विसे नन्म  
पाये छुं, दुरंत प्रान्त लक्षणवाणो छु, दुष्टावसाववाणा अमनोज्ञ लक्षणोथी युक्त छुं,  
(जइणं अहं मित्राण वा णाईण वा णियगाण वा वयणं सुणेंतओ तो णं अहं  
पि एवं चेव उप्पि पासायवरगए जाव विहरेंतओ) ने छुं साथवाणा मित्रेना  
के पितृव्यादि ज्ञातिजनाना के पोताना हितेच्छुओना वयनो मानी देतो तो छुं  
छुं पणु भारी साथे आवेल वज्रविक्रेता पुरुषोनी नेम न प्रासादोभां रहिने विविध  
सुख सम्पन्न गनीने पोताना समयने आनंद पूर्वक पसार करत. (से सेणट्ठेणं  
पएसी ! एवं वुच्चइ, मा तुमं पएसी ! पच्छाणुताविए भविज्जासि, जहाव से  
पुरिसे अयमारए) अथी न छे प्रदेशिन् ! मे आ प्रणेमाइछुं छे के नेम अथो-



ટીકા—“તે નં કેસીકુમારસમણે” इत्यादि—ततः खलु केशीकुमार-  
श्रमणः प्रदेशिराजम् एवमवादीत्—हे प्रदेशिन् ! त्वं खलु पश्चादनुतापिकः—पश्चात्ता-  
पयुक्तो मा भवेः, यथा—येन प्रकारेण सः—वक्ष्यमाणः अयोहारकः—लोहवणिक  
पश्चादनुतापिकोऽभूत् ।, प्रदेशी तत्परिचयं पृच्छति—कः खलु हे भदन्त ! सः  
अयोहारकः ? इति प्रश्नः । केशीकुमारश्रमण आह—ते ययानामकाः—अनिर्दिष्ट-  
नामानः केचित् पुरुषाः अर्थार्थिकाः—धनार्थिनः, अर्थगवेपिका—धनान्वेषिणः,  
अर्थलुब्धकाः—धनलोलुपाः अर्थकाङ्क्षिताः—धनकाङ्क्षायुक्ताः, अर्थपिपासिताः—धन-  
पिपासायुक्ताः, अर्थगवेपणाय—धनगवेपणार्थं विपुलं पणितमाण्डं—क्रयाणकवस्तुजातम्  
आदाय तथा—सुबहु—पर्याप्तं भक्तपानपश्यादनम् अशनपानरूपं पाथेयं गृहीत्वा एकां

જેસા, યહ અયોહારક પુરુષ પશ્ચાત્તાપયુક્ત હુઆ છે—इसी प्रकारसे तुम्हें न होना  
पड़े—अतःतुम मेरे कहे हुए पर श्रद्धा करो और मानो किजीव और शरीर मिन्न  
है इत्यादि ।

ટીકાર્થ—इसी मूलार्थ के जैसा है—परन्तु जहाँ पर विशेषता है—वह इस  
प्रकार से है “हट्टतुट्टा जाव हियया” में जो यावत् पद आया है, उससे—  
“चित्तानन्दिताः, परमसौमनस्यिताः, हर्षवशविसर्पद्” इन पदों का संग्रह हुआ  
है. इन पदों की व्याख्या पूर्वोक्त जैसी ही है. “इट्टे, कंते जाव” में जो यह  
यावत्-पद आया है—उससे यहाँ पर “प्रियः, मनोज्ञः” मन आमः” इन पदोंका  
ग्रहण हुआ है. इष्ट शब्द का अर्थ—मनोरथ को पूरा करनेवाला है. कान्त शब्द  
का अर्थ—सहायकारी होने से अमिलवर्णीय है, प्रिय शब्द का अर्थ—उपकारक  
होने से प्रेम का उत्पादक है, तथा—मनोज्ञ शब्द का अर्थ—हितकारी होने से  
मनोहर ऐसा है और मन आम शब्द का अर्थ आर्तिहर होने से मनोगम्य ऐसा

હાનક પુરુષ પશ્ચાત્તાપ-યુક્ત થયો છે—तेम तमारी पणु स्थिति धाय नडि, ओथी  
तमे भारी वात पर श्रद्धा राखो અને મારી વાત માની લો કે છુવ અને શરીર  
સિન્ન સિન્ન છે. ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—આ મૂલાર્થ

વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે.

“હટ્ટતુટ્ટા જાવ હિયયા”

‘चित्तानन्दिताः, परमसौ-

मनस्यिताः हर्षवशविसर्पद्’ આ પદોનો સંગ્રહ થયો છે. આ પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં  
મુજબ જ છે. “इट्टे, कंते जाव” માં જે યાવત્ પદ છે તેથી અહીં ‘प्रियः,  
मनोज्ञः, मनः आमः’ આ પદોનું ગ્રહણ થયું છે. ઇષ્ટ શબ્દનો અર્થ મનોરથ ને  
પૂરનાર છે. કાંત શબ્દનો અર્થ સહાયકારી હોવાથી અમિલવર્ણીય છે, પ્રિય શબ્દનો  
અર્થ—હિતકારી હોવાથી પ્રેમનો ઉત્પાદક છે, તથા મનોજ્ઞ શબ્દનો અર્થ—હિતકારી  
હોવાથી મનોહર એવો થાય છે. મનઃ આમ શબ્દનો અર્થ આર્તિહર હોવાથી મનો-

महतीं—विशालाम् अग्रामिकाम्—वसतिरहितां, छिन्नाऽऽपाताया—छिन्न—हिंसकजन्तु-  
भयेनोपहतः आपात-मनुष्याणां गमनागमनं यत्र ताम् दीर्घाध्वां—दीर्घमार्गाम्, अट-  
वीं—अनुप्रविष्टाः । ततः खलु ते पुरुषाः तस्याः अग्रामिकायाः यावत् छिन्ना-  
ऽऽपातायाः दीर्घाध्वाया अटव्याः कञ्चिद्देशम्—अटवीविभागम्, अनुप्राप्ताः सन्तः  
तत्र एकम् अयआकरं—लोहखनिम्, पश्यन्ति—दृष्टवन्तः, तमाकरम् अयसा—लोहेन  
सर्वत्र—सर्वदिक्षु, समन्ता—सर्वविदिक्षु आकीर्णं—व्याप्तं, विस्तीर्णं—विस्तारप्राप्तम्, सच्छटम्—  
सती—समीचीना छटा—चाक्रचिक्कं यत्र तम्, उपच्छटं—छटायुक्तम्, स्फुटं—प्रकटम्,  
अनुगाढं—पुञ्जरूपं पश्यति—दृष्टवन्तः, दृष्ट्वा हृष्टतुष्ट यावत्—यावत्पदेन “चित्तान-  
न्दिताः, परमसौमनस्यिताः, हर्षवशविसर्पद्” इत्येवं सङ्गो बोध्यः, हर्षवशविस-  
र्पद्” इत्यस्य “हृदया” इत्यनेन योगाद् “हर्षवशविसर्पद्दयाः” इति, एत-  
द्व्याख्या प्राग्वत्, एतादृशाः सन्तः अन्योऽन्यं—परस्परं, शब्दयन्ति—आश्लिष्यन्ति,  
शब्दयित्वा एवमत्रादिषुः—उक्तवन्तः—हे देवानुप्रियाः ! एषः—अयं खलु अयआकरः—  
लोहाऽऽकरः इष्टः कान्तः यावत् यावत्पदेन—“प्रियः, मनोज्ञः मनआम” इति  
पदानां संग्रहः, तत्र इष्टः—मनोरथपूरकः, कान्तः सहायकारित्वादभिलाषीयः, प्रियः—  
उपकारिकत्वेन प्रेमोत्पादकः, मनोज्ञः—हितकारित्वान्मनोहरः, मनआमः—आर्तिहर-  
त्वान्मनोगम्यः, अस्ति तत्र—तस्मात् कारणान् हे देवानुप्रियाः । अस्माकम् अयो-  
भारं—लोहभारं वधं ग्रहीतुं श्रेयः—प्रशस्तम्, इतिकृत्वा—इति निश्चित्य अन्योऽन्यस्य—  
परस्परस्य एतम्—अयोभारग्रहणरूपम् अर्थम्—प्रतिशृण्वन्ति—कर्तव्यतया स्वीकुर्वन्ति  
प्रतिश्रुत्य अयोभारं—लोहभारं वधन्ति, वद्ध्वा यथानुपूर्वि—यथाक्रमं संग्रस्थिताः—अग्रे  
गन्तुं प्रवृत्ताः । ततः खलु ते पुरुषाः अग्रामिकायाः यावत्—“छिन्नाऽऽपातायाः  
दीर्घाध्वायाः अटव्याः किञ्चिद्देशं—किञ्चिद्देशप्रदेशम् अनुप्राप्ताः सन्तः एकं महान्तं  
त्रपाकरं—त्रपु—धातुविशेषस्तस्याऽऽकरं, पश्यन्ति—दृष्टवन्तः तम् त्रपुकेण सर्वतः  
समन्ताद् आकीर्णं तदेव—पूर्वोक्तमेव “विस्तीर्णं, सच्छटम्, उपच्छटं स्फुटं गाढं  
पश्यन्ति, दृष्ट्वा हृष्टतुष्टाः, चित्तानन्दिताः, परमसौमनस्यिताः, हर्षवशविसर्पद्दयाः,

हैं। ‘अग्रामियाए जाव’ में जाये हुए इस यावत्पद से “छिन्नापाताया” दीर्घा-  
ध्वायाः” इन पदों का संग्रह हुआ है. “तं चेव” इस पाठ से “विस्तीर्णः  
सच्छटम् उपच्छटं स्फुटं गाढं पश्यन्तिः दृष्ट्वाहृष्टतुष्टाः, चित्तानन्दिताः, परम-  
सौमनस्यिताः, हर्षवशविसर्पद्दयाः अन्योन्यं शब्दयन्ति” इस पाठ का यहां ग्रहण

गम्य ऋषेः शाय छे. ‘अग्रामियाए, जाव’ मां आवेल आ यावत् पठथी छिन्ना-  
पातायाः, दीर्घाध्वायाः, आ पहेने संग्रह थये छे. ‘तंचेव’ आ पाठथी ‘विस्तीर्णं  
सच्छटम्, उपच्छटम्, स्फुटं, गाढं पश्यन्ति, दृष्ट्वा हृष्टतुष्टाः, चित्तानन्दिताः,  
परमसौमनस्यिताः, हर्षवशविसर्पद्दयाः अन्योन्यं शब्दयन्ति” आ पाठ थडथु

अन्योऽन्यं शब्दयन्ति, शब्दयित्वा, एवम अवादिषुः-हे देवानुप्रियाः ! एष खलु  
 त्रयाकरः यावत्-यावत्पदेन “इष्टः, कान्तः, प्रियः, मनोज्ञः” संग्राह्यम् मनआमः.  
 अल्पेनैव त्रपुकेण सुबहु-अतिप्रचुरम् अयः-लोहं लभ्यते-प्राप्यते, तत्-तस्मात्  
 कारणात् हे देवानुप्रियाः ! अयोभारं मुक्त्वा-विहाय त्रपुकभारं बद्धुं श्रेयः. इति  
 कृत्वा अन्योऽन्यस्य अन्तिके-सर्मापि एतम्-त्रपुभारग्रहणरूपम् अर्थम् प्रतिगृह्यन्ति  
 कर्तव्यतया स्वीकुर्वन्ति, प्रत्युत्तम् अयोभारं मुञ्चन्ति-त्यजन्ति त्रपुकभारं वध्नन्ति  
 -गृह्णन्ति, तत्र-त्रपुभारग्रहणविषये खलु एकः-कश्चित् पुरुषः अयोभारं मोक्तुं-  
 त्यक्तुं नो शक्नोति, तथा-त्रपुकभारं बद्धुं-ग्रहीतुं नो शक्नोति, ततः खलु ते  
 पुरुषाः तम्-लोहभारवन्तं पुरुषम् एवमवादिषुः-हे देवानुप्रिय ! एष खलु त्रया-  
 करः, यावत्-यावत्पदेन-“इष्टः, कान्तः, प्रियः, मनोज्ञः, मनआमः, अल्पेनैव  
 त्रपुकेण” इत्येषां सङ्ग्रहो बोध्यः, सुबहु-अतिप्रचुरम् अयः-लोहः, लभ्यते तत्-  
 तस्मात् कारणात् हे देवानुप्रिय ! अयोभारकं-लोहभारं मुञ्च-त्यज तथा, त्रपु-  
 कभारकं वधान-गृहाण, ततः खलु सः-लोहभारवाहकः पुरुषः एवमवादी-हे  
 देवानुप्रियाः-मया अयः-लोहः दूराऽऽहृतं-दूरा-दूरप्रदेशाद् आहृतम्-आनीतम्,  
 हे देवानुप्रियाः ! मया अयः-चिराऽऽहृतम्-चिराद्-बहुकालाद् आहृतम्-उद्धम्, हे  
 देवानुप्रियाः ! मया अयः अतिगाढ-बन्धनबद्धम्-अत्यन्तदृढबन्धनेन बद्धम् अत एव  
 हे देवानुप्रियाः ! मया अयः अशिथिलबन्धनबद्धम्-अशिथिलबन्धनेन दृढबन्धनेन  
 बद्धम् हे देवानुप्रियाः ! मया अयः प्रचुरबन्धनबद्धम्-“घणिय” इति प्रचुरार्थो  
 देशीयः शब्दः, अतोऽहम् अयोभारं त्यक्त्वा त्रपुकभारकं बद्धुं-ग्रहीतुं नो चैव  
 शक्नोमि । ततः खलु ते पुरुषाः तम्-लोहभारवाहकं पुरुषं यदा बहुभिः-बहूभिः  
 आख्यापनाभिः-दृष्टान्तरूपाभिः” च पुनः प्रज्ञापनाभिः हेयोपादेयप्रतिबोधिकाभिश्च

क्रिया गया है । “इष्टे जाव मणामे” में आये हुए यावत्पद से “इष्टः, कान्तः,  
 प्रियः, मनोज्ञः” इन पदों का संग्रह हुआ है ! “तउ आगरे जाव” पद से भी  
 इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मन आम” इन पदों का संग्रह किया गया है ।  
 “घणीय” यह शब्द देशीय है और प्रचुर अर्थ का वाचक है ॥ १५४ ॥

थये। छ. “इष्टे जाव मणामे” भां आवेल यावत् पदथी ‘इष्टः, कान्तः, प्रियः, मनोज्ञः  
 आ पदोनो’ सङ्ग्रह थये। छ. ‘तउआगरे जाव’ पदथी पणु ‘इष्ट, कान्त, प्रिय,  
 मनोज्ञ, मन आम’ आ पदोनो’ अङ्गु थयुं छे. ‘घणिय’ आ शब्द देशीय छे अने  
 प्रचुर अर्थनो वाचक छे. ॥सं. १५४॥

प्ररूपणाभिः—यथार्थस्वरूपनिरूपिकाभिश्च आख्यापयितुं वा प्रज्ञापयितुं वा प्ररूपयितुं वा नो शक्नुवन्ति—समर्था नाभवन्, तदा यथानुपूर्वि—यथाक्रमम्, संप्रस्थिताः—ततोऽग्रे प्रयाताः । एवम्—अनेन प्रकारेण ताम्राऽऽकरं, रूप्याऽऽकरं, सुवर्णाऽऽकरं, रत्नाऽऽकरं, वज्राऽऽकरं, हीरकखनि पश्यन्ति इत्यादि लोहवज्राकरदर्शनवदेव सर्ववर्णन बोध्यम् । ततः—लोहभारग्रहणकृताऽऽदरदुर्बुद्धिपुरुषस्यानेकवथा प्रबोधकवाक्यप्रपञ्चैः प्रबोधनाः सामर्थ्यानन्तरं खलु ते अल्पमूल्यकपूर्वपूर्ववस्तुपरित्यागपूर्वकबहुमूल्योत्तरोत्तरवस्तुग्रहणवद्वाऽऽदरतया गृहीतवज्रमणिभाराः पुरुषाः यत्रैव स्वाः—स्वकीयाः जनपदाः—देशाः, यत्रैव स्वानि स्वानि—निजानि निजानि नगराणि तत्रैव उपागच्छन्ति । वज्रविक्रयणं—वज्रमणिविक्रयं कुर्वन्ति—कृतवन्तः । तद्विक्रयेण लब्धबहुद्रव्यैः सुबहुदासीदासगोमहिषगवेलकं—सुबहु—अतिप्रचुरं यद्दासी—दास—गो महिष—गवेलकः—तत्र दासी—दास—गो—महिषाः प्रसिद्धाः, गवेलकाः—मेषाश्चेत्येषां समाहारस्तथा, तत् गृह्णाति, अष्टतलोच्छ्रित प्रासादावन्तंसकान्—अष्टौ तलानि यत्र ते अष्टतलाः—अष्टभूमिकाः, ते च ते उच्छ्रिताः—उन्नताः गगनचुम्बिनः प्रासादावन्तंसकाः—श्रेष्ठप्रासादास्तान् कारयन्ति, तत्र च स्नाताः कृतस्नानाः, कृतबलिचर्मणः—कृतवायसादिनिमित्तान्नविभागाः, कृतकौतुलमङ्गलप्राश्चित्ताः दुःस्वप्नादिफलविधाताय धृतदध्यक्षताश्रयाः सन्तः उपरि—ऊर्ध्वं प्रासादवरगताः—मनोहर प्रासादस्थिताः विहरन्तीत्युत्तरेणान्वयः, किं कुर्वन्तो विहरन्तीत्याह—स्फुटद्भिः—अतिरमसा स्फालनात् स्फुटद्भिरिव, मृदङ्गमस्तकैः मृदङ्गमुखपटैः, द्वात्रिंशद्भ्यैः—द्वात्रिंशत्प्रकारगचना युक्तैः नाटकैः, तै कीदृशैः ? इत्यत्राऽऽह—वर्तुरुणीसंग्रयुक्तैः—विशिष्टस्त्रीसम्पादितैः, उपनर्त्यमानाः, नृत्यं दृश्यमानाः, उपगीयमानाः गानं श्राव्यमाणाः, उपलाल्यमानाः विलास्यमानाः, इष्टान् अभिलषितान्, शब्दस्पर्शस्वरूपगन्धान्, पञ्चविधान् मानुष्यकान् कामभोगान् प्रत्यनुभवतो विहरन्ति तिष्ठन्ति । ततः खलु इतश्च सः—अवहेलितहितवचनो लोहभारवाहकः पुरुषः अयोभारेण सह यत्रैव स्वनिजं नगरं, तत्रैव उपागच्छति, उपागत्य तत्र अयोभारकं गृहीत्वा अयोविक्रयणं करोति । तस्मिन्—लोहविक्रयलब्धे, अल्पमूल्ये—स्वल्पद्रव्ये आहारवस्त्राद्यानयनेन निष्ठिते—समाप्ते सति स लोहवणिक्ः पुरुषः क्षीणपरिव्ययः—क्षीणः—मन्दः परिव्ययः—परितो व्ययः—द्रव्योपयोगो यस्य तथाभूतः, तान्—वज्रविक्रयिणपुरुषान् उपरि—ऊर्ध्वभागे, प्रासादवरगतान्—रम्यप्रासादस्थितान् यावद् विहरमाणान् स्फुटद्भिर्मृदङ्गमस्तकैः द्वात्रिंशद्भ्यैः नाटकैः वर्तुरुणीसंग्रयुक्तैः उपनर्त्यमानान् उपगीयमानान् उपलाल्यमानान् इष्टान् शब्द—स्पर्श—रस—रूप—गन्धान् पञ्चविधान् मानु-

प्यकान कामभोगान् प्रत्यनुभवन्तो विहरमाणान् पश्यन्ति । दृष्ट्वा एवम्-अनुपदं  
वक्ष्यमाणं वचनम् अवादीत्-अहो ! वित्तमयः खलु अहम् अधन्यः-धन्यो न, अपुण्यः-  
पुण्यहीनः, अकृतार्थः अकृतेष्टसिद्धिकः, अकृतलक्षणः-शुभलक्षणहीनः, हीश्रीवर्जितः-  
लज्जालक्ष्मीहीनः, हीनपुण्यचातुर्दशः-हीनपुण्यः-क्षीणपुण्यः, अत एव चातुर्दशः-  
कृष्णचातुर्दश्यां जातः, दुरन्तमान्त लक्षणः-दुरन्त-दुष्टासानम् अत एव प्रान्तम्  
अमनोज्ञं लक्षणं यस्य स तथा-कुलक्षणयुक्तः, अहमस्मि । यदि-चेत् खलु  
अहं मित्राणां-सहगतानां वा-अथवा ज्ञातीनां-पितृव्यादीनां वा निजकानां-  
हितैषिणां वा वचनम् अश्रोत्र्यं-श्रवणपथमानेयम् तदा-तर्हि खलु अहमपि एव-  
मेव-मत्सहागतवज्रमणिविक्रिपुरुषवदेव, उभरि-ऊर्ध्वभागे, प्रासादवरगतः-सुन्दर-  
प्रासादस्थितः वज्रमणिविक्रयिसदृशो भूत्वा यावद् बहुरिप्यम्-अस्थास्यम् विविध-  
सुखसम्पन्नोऽभविष्यम् । तत्-तमाद्वेतोः, तेन-अनन्तरोक्तेन अर्थेन-लोहवणिगूरूपेण  
दृष्टान्तेन, हे प्रदेशिन् ! एवम्-इत्थम्, उच्यते-कथ्यते यत् हे प्रदेशिन् ! त्वं  
पश्चादनुतापिको मा भवेः, यथा-येन प्रकारेण सः-अन्तरोक्तः, अयोहारकः पश्चा-  
दनुतापिकोऽभूत् । ॥सू० १५४॥

मूलम्-तए णं से पएसी राया संबुद्धे केसिकुमारसमणं वंदइ  
जाव एवं वयासी-णो खलु भंते ! अहं पच्छाणुताविए भविस्सामि  
जहा चेव से पुरिमे अयभारए । त इच्छाम गं देवाणुप्पियाणं  
अंतिए केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए । अहासुहं देवाणुप्पिया !  
मा पडिवंधं करेह । धम्मकहा, जहा चित्तस्स तहेव जाव गिहिधम्मं  
पडिवज्जइ, जेणेव सेयविया नयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए । १५५॥

छाया-ततः खलु स प्रदेशी राजा संबुद्धः केसिकुमारश्रमणं वन्दते यावत्  
एवमवादीत्-नो खलु भदन्त ! अहं पश्चादनुतापिको भविष्यामि यथैव स पुरुषो

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ- (तएणं से पएसी राया संबुद्धे) इस तरह से बहुत समझाने  
पर वह प्रदेशी राजा बोध को प्राप्त हो गया (केसिकुमारसमणं जाव वंदइ

‘तए णं से पएसी राया’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ- (तएणं से पएसी राया संबुद्धे) आ प्रमाणों पाहु न समझववाथी  
ते प्रदेशी राजने बोध प्राप्त थयो ! (केसि कुमारसमणं जाव वंदइ एवं वयासी) पछी-तेछे

अयोहारकः । तदिच्छामि खलु देवानुप्रियाणामन्तिके केवलप्रज्ञप्तं धर्मं निशमयितुम् । यथासुखं देवानुप्रियाः ! मा प्रतिबन्धं कुरुत धर्मकथा, यथा चित्रस्थ तथैव यावत् गृहिधर्मं प्रतिपद्यते, तत्रैव श्वेतांशिका नगरी तत्रैव प्राधारयद् गमनाय ॥ सू० १५५ ॥

एवं वयासी) फिर उसने वंदना की यावत् केशिकुमारश्रमण से ऐसा कहा-(णो खलु भंते । अहं पच्छाणुताविए भविस्सामि, जहा चेव से पुरिसे अयहारए) हे भदंत ! मैं उस अयोहारक-लोहवणिक पुरुष की तरह पश्चादनुतापित नहीं होऊंगा (तं इच्छामि णं देवानुप्रियाणं अंतिए केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) अतः मैं आप देवानुप्रिय से केवलप्रज्ञप्त धर्म सुनने का अभिलाषी हो रहा हूँ (अहा सुहं देवानुप्रिया ! मा पडिवंघं करेह) तब केशीकुमारश्रमण ने उससे कहा-हे देवानुप्रिय ! आप को जिससे सुख उपजे ऐसा करो परन्तु इस विषय में विलम्ब करना उचित नहीं है । (धम्म कहा) प्रदेशी राजा को तब केशीकुमारश्रमण ने मुनिधर्म और गृहस्थधर्म का उपदेश दिया, (जहा चित्तस्स तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ) यहाँ वह धर्मकथा १११वें सूत्र में जैसी कही गई है वैसी जाननी चाहिये, तब प्रदेशी राजाने द्वादशविधरूप गृहीधर्म स्वीकार कर लिया (जेणेव सेयंविद्या णयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार गृहिधर्म धारणकर वह प्रदेशी राजा जहाँ श्वेतांशिका नगरी थी उस ओर चल दिया-

केशी कुमारश्रमण ने वंदना करी यावत् केशिकुमार श्रमण ने आ प्रभाणु कल्लुं-(णो खलु भंते ! अहं पच्छाणुताविए भविस्सामि, जहा चेव से पुरिसे अयहारए) हे भदंत ! हुं ते अयोहारक लोहवणिक पुरुषणी जेम पश्चादनुतापिक थयथ नडि. (तं इच्छामि णं देवानुप्रियाणं अंतिए केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्तए) अथी हुं आप देवानुप्रिय पासैथी केवलि प्रज्ञप्त धर्मने सांलणवानी अलिलाषा राभुं छुं. (अहासुहं देवानुप्रिया ! मा पडिवंघं करेह) त्थारे केशीकुमार श्रमणु तेने कल्लुं हे देवानुप्रिय ! तमने जेमां आनंद थाय तेम करे. पणु आ विषयमां विदंथ उचित नथी. (धम्मकहा) प्रदेशी राजने त्थारे केशी कुमार श्रमणु मुनिधर्म अने गृहस्थधर्मने उपदेश आये. (जहा चित्तस्स तहेव गिहिधम्मं पडिवज्जइ) अही ते धर्मकथा १११ मा सूत्र प्रभाणु कल्लेवामां आवी छे. त्थारे प्रदेशी राजने द्वादश विधरूप गृहीधर्मने स्वीकार कथी. (जेणेव सेयंविद्या णयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए) आ प्रभाणु गृहीधर्म धारणु करीने ते प्रदेशी राज ज्थां श्वेतांशिका नगरी डुती ते तरइ रवाना थय गथे.



ટીકા—“તए णं से पएसी राया” इत्यादि—ततः खलु स प्रदेशी राजा संबुद्धः बोधं प्राप्तः, सन् केशिकुमारश्रमणम् वन्दते—स्तौति, यावत्—यावत्पदेन ‘नमस्यति सत्करोति सम्मानयति कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यं पर्युपास्ते’ इत्येषां पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः । एषां व्याख्या गता । वन्दनाद्यनन्तरम् एवमवादीत्—हे भदन्त ! अहं खलु पश्चादनुतापिको नो भविष्यामि, यथा येन प्रकारेण सः—अनन्तरोक्तः अथोहारकः—लोहवणिकः, पुरुषः पश्चादनुतापिकोऽभवत्, तत् तस्मात् कारणाद् अहं खलु देवानुप्रियाणां भवताम् अन्तिके पार्श्वे केवलं प्रज्ञप्तं, धर्मं भवसागरनिमज्जत्प्राणिगणोद्धरणधुरीणं श्रुतचरित्रलक्षणं निशमयितुं श्रोतुम्, इच्छामि अमिलपाभि । केशी प्राऽऽह—हे देवानुप्रिय ! यथासुखं यथा-तुभ्यं रोचते तथा कुरु इति भावः, किन्तु प्रतिबन्धं विलम्बं मा कुरु । धर्मकथा अनगारागारधर्मकथा. यथा चित्रस्य द्वादशधिकैकशततमसूत्रप्रोक्ता. तथैव तद् नुसारिण्येव विज्ञेया । ततः प्रदेशी गृहिधर्मं द्वादशविधं प्रतिपद्यते स्वीकरोति, प्रतिपद्य स यत्रैव श्वेतांघ्रिका नगरी तत्रैव गमनाय प्राधारयत् मनसि निश्चितवान् । ॥सू० १५५॥

मूलम्—तए णं केशी कुमारसमणे पएसिं रायं एवं वयासी-जाणासि णं तुमं पएसी ! कइ आयरिया पन्नत्ता ?, हंता जाणामि,

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ છે “વંદહ જાવ એવં વયાસી” મેં જો-યાવત્પદ આયા છે. એસે—“નમસ્યતિ-સત્કરોતિ-સમ્માનયતિ-કલ્યાણં મંગ્ગલં દૈવતં-ચૈત્યં-પર્યુપાસ્તે” આ પદોં કા સંગ્રહ હુવા છે, તાત્પર્ય-કહને કા યહ છે કિ-જવ પ્રદેશી રાજા બોધ કો પ્રાપ્ત હો ગયા. તવ એસને કેશી કુમાર શ્રમણની સ્તુતિ કરી, એને નમસ્કાર કિયા એનકા સત્કાર ફિયા સન્માન કિયા ઓર-કલ્યાણરૂપ મંગ્ગલરૂપ એવં-દેવસ્વરૂપ એન ચૈત્ય જ્ઞાન પ્રદાતા ગુરુદેવ કી એસને પર્યુપાસના કરી, ફિર એસને ભવસાગર મેં ડૂબતે હુવે પ્રાણિયોં કા ઉદ્ધાર કરને મેં સમર્થ એસે શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મ કો સુનેને કી એપની અમિલાષા પ્રકટ કરી ॥ સૂ. ૧૫૫ ॥

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ છે. ‘વંદહ જાવ એવં વયાસી’ માં જે યાવત્ પદ આવેલ છે. તેથી ‘નમસ્યતિ-સત્કરોતિ-સમ્માનયતિ-કલ્યાણં-મંગ્ગલં-દૈવતં-ચૈત્યં-પર્યુપાસ્તે’ આ પદોના સંગ્રહ થયો છે. તાત્પર્ય આમ છે કે જ્યારે પ્રદેશી રાજાને બોધ પ્રાપ્ત થઈ ગયો. ત્યારે તેણે કેશી કુમાર શ્રમણની સ્તુતિ કરી. તેમને નમસ્કાર કર્યો, તેમને સત્કાર કર્યો, સન્માન કર્યો અને કલ્યાણરૂપ, મંગલરૂપ અને દેવસ્વરૂપ તે ચૈત્યજ્ઞાન પ્રદાતા ગુરુદેવની તેમણે પર્યુપાસના કરી. ત્યાર પછી તેમણે ભવસાગરમાં ડૂબતા પ્રાણીઓના ઉદ્ધારમાં સમર્થ એવા શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મને સાંભળવાની પોતાની ઇચ્છા પ્રકટ કરી. ॥સૂ. ૧૫૫॥



तओ आयरिआ पणत्ता, तं जहा-कलायरिए१, सिप्पायरिए२,  
धम्मायरिए३ । जाणासि णं तुमं पएसी ! तेसिं तिण्हं आयरियाणं  
कस्स का विणयपडिवत्ती पउंजियव्वा ? । हंता ! जाणामि, कला-  
यरियस्स िप्पायरियस्स उवलेवणं संमज्जणं वा करेज्जा, पुरओ  
पुप्फाणि वा आणवेज्जा मंडावेज्जा भोयावेज्जा वा विउल जीवियारिहं  
पीइदाणं दलएज्जा पुत्ताणुपुत्तियं वित्तिं कप्पेज्जा२ जत्थेव धम्मायरियं  
पासिज्जा तत्थेव वंदेज्जा णमंसेज्जा सक्कारेज्जा सम्माणेज्जा कल्लाणं मंगलं  
देवयं चेइयं पज्जुवासेज्जा फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं  
पडिलाभेज्जा पाडिहारिणं पीढफलगसिज्जासंथारणं उवनि  
मंते३ । एवं जाणासि तहावि णं तुमं मम वामं वामेणं जाव वट्ठि-  
त्ता ममं एयमट्ठं अक्खामित्ता जेणेव सेयविया णयरी तेणेव पहा-  
रत्थ गमणाए ॥ सू० १५६ ॥

छाया-ततः खलु केशीकुमारश्रमणः प्रदेशिनं राजानम् एवम् अवादीन्-  
जानासि खलु त्वं प्रदेशिन् ! कति आचार्याः प्रज्ञप्ताः १, हन्त ! जानामि त्रय

“तएणं केसी कुमारसमणे” इत्यादि ।

सूत्रार्थ-“तएण” इसके बाद “केसी कुमारसमणे” केशीकुमारश्रमणने  
“पएसि” रायं एवं वयासी” प्रदेशी राजा से ऐसा कहा “जाणासि णं तुमं  
पएसी ? कइ आयरिया पणत्ता-” हे प्रदेशिन्-! तुम जानते हो कितने  
आचार्य कहे गये हैं-? प्रदेशीने कहा-“हंता ? जाणामि-तओ आ रिया

‘तएणं केसीकुमारसमणे’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ-‘तएणं’ त्थार पछी ‘केसी कुमारसमणे’ केशी कुमार श्रमणे ‘पएसि  
रायं एवं वयासी’ प्रदेशी राजाने आ प्रभाणे कहुं ‘जाणासि णं तुमं पएसी ! कइ  
आयरिया पणत्ता’ हे प्रदेशिन् तमे न्हाणे छे के आचार्यों केटला प्रकारना कहे-  
वाय छे ? प्रदेशीने कहुं-‘हंता ? जाणामि-तओ आयरिया पणत्ता’ छे लदंत

આચાર્યાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તદ્યથા-કલાઽઽચાર્યઃ ૧, શિલ્પાઽઽચાર્યઃ ૨, ધર્માઽઽચાર્યઃ ૩ । જાનાસિ સ્વલુ ત્વં પ્રદેશિન્ ! તેષાં ત્ર ણામાચાર્યાણાં કસ્ય કા વિનયપ્રસિપત્તિઃ પ્રયોક્તવ્યા ? હન્ત ! જનામિ-કલાઽઽચાર્યસ્ય શિલ્પાઽઽચાર્યસ્ય ઉપલેપનં સંમાર્જનં વા કુર્યાત્, પુરતઃ પુષ્પાણિ વા આનયેત્ માર્જયેત્ માંડયેત્ ભોજયેત્ વા વિપુલં જીવિતાર્હં પ્રીતિદાનં દદ્યાત્ પૌત્રાનુપુત્રિવીં વૃત્તં કર્ત્વદેત્ ૨ । યત્રૈવ ધર્માઽચાર્યં પચ્યેત્

પણત્તા-” હાં ભદન્ત-! જાનતા હું-ત્રીન આચાર્ય કહે ગયે હૈં । “તં જહા-કલાયરિય-સિપ્પાયરિય-ધમ્માયરિય” જો ઇસ પ્રકાર સે હૈં-કલાચાર્ય-૧ શિલ્પાચાર્ય-૨ ઓર ત્રીસરા ધર્માચાર્ય । “જાનામિ ણ તુમં પણસી-” તેસિં તિણ્હં આચરિયાણં કસસ કા વિણયપહિવત્તી પંડજિયવ્વા-” હે પ્રદેશિન્-! તુમ જાનતે હો, ઇન ત્રીન આચાર્યોં મેં કિસ આચાર્યકા કૈસા વિનય પ્રકાર કરને કો કહા ગયા હૈ-! પ્રદેશીને કહા-”હંતા ? જાણામિ હાં ભદન્ત ૩ જાનતા હું કલાયરિયસસ સિપ્પાયરિયસસઃ ઉવલેવણં સમજ્જણ વા કરેજ્જા પુરઓ પુષ્પાણિ વા આણવેજ્જા મંડાવેજ્જા ભોયાવિજ્જા વા વિહલં જીવિયારિહં પીઠ્ઠદાણં દલણ્ણજ્જા પુત્તાણુપુત્તિયં વિત્તિં કપ્પેજ્જા-” કલાચાર્ય ઓર-શિલ્પાચાર્ય કે શરીર મેં તેલ વા મદન કરના, ઉન્હેં સ્નાન કરાના, તથા-ઉન્હે સમક્ષ પુષ્પોં ના લા ર ભેટકે રૂપ મેં રખના, પુષ્પમાલા આદિસે ઉન્હેં અલંકૃત કરના ભોજન કરાના ઉન્હી આજીવિકા કે યોગ્ય સહર્ષ પ્રીતિદાન દેના વસ્ત્રાદિ પ્રદાન કરના. એવં-પુત્ર

જાણું છું-ત્રણ આચાર્યો કહેવાય છે. “તં જહા-કલાયરિય સિપ્પાયરિય ધમ્માયરિય” તે આ પ્રમાણે છે-કલાચાર્ય, ૧ શિલ્પાચાર્ય ૨ અને ધર્માચાર્ય ૩, “જાનાસિ ણ તુમં પણસી તેસિં તિણ્હં આચરિયાણ કસસ કા વિણયપહિવત્તી પંડજિયવ્વા” હે પ્રદેશિન્ તમે જાણો છો કે આ ત્રણ આચાર્યોમાં કયા આચાર્યને કઈ જાતને વિનય પ્રકાર કરવા કહેવામાં આવ્યો છે. ૧, પ્રદેશીએ કહ્યું-“હંતા ? જાણામિ” હાં, ભદન્ત ? જાણું છું. “કલાયરિયસસ સિપ્પાયરિયસસ ઉવલેવણ સમજ્જણ વા કરેજ્જા પુરઓ પુષ્પાણિ વા આણવેજ્જા મંડાવેજ્જા ભોયાવેજ્જા વા વિહલં જીવિયારિહં પીઠ્ઠદાણં દલણ્ણજ્જા પુત્તાણુપુત્તિયં વિત્તિં કપ્પેજ્જા” કલાચાર્ય અને શિલ્પાચાર્યના શરીરમાં તેલની માલીશ કરવી, તેમને સ્નાન કરાવવું તેમજ તેમની સામે પુષ્પોની ભેટ મૂકવી, પુષ્પમાળા વગેરેથી તેમને અલંકૃત કરવા ભોજન કરાવવું, તેમની આજીવિકા માટે યોગ્ય સહર્ષ પ્રીતિદાન આપવું અને પુત્ર-પૌત્ર વગેરેના ભરણુ-પોષણુ યોગ્ય આજીવિકાની વ્યવસ્થા

तत्रैव वन्देत नमस्येत सत्कुर्वात् सम्मानयेत् कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यं पशुपा-  
सीत, प्रासुकैषणीयेन अशन पान खादिमस्वादिमेन प्रतिलम्भयेत्, प्रातिहारिकेण  
पीठफलकशय्यासंस्तारकेण उपनिमन्त्रयेत्, एवं च तावत् त्वं प्रदेशिन ! एवं जानासि  
तथापि खलु त्वं मम वामं वामेन यावद् वर्तित्वा मम एतमर्थम् अक्षामित्वा  
यत्रैव श्वेतविका नगरी तत्रैव प्राधारयत् गमनाय । ॥ सू० १५६ ॥

पौत्रादि के निर्वाह योग्य आजीविका लगा देना. इस प्रकार से यह कलाचार्य  
७२ —प्रकार की बलाओं को सिखानेवालों की, और—शिल्पाचार्य विज्ञान  
सिखानेवालों का विनयप्रतिपत्ति है। “जत्थेव धम्मायरिय पासिज्जा, तत्थेव  
वन्देज्जा, णमंसेज्जा, सक्कारेज्जा, सम्माणेज्जा, कल्लाणं—मंगलं—देवयं चेइयं पज्जुवासे  
ज्जा—’ तथा—धर्माचार्य की विनय प्रतिपत्ति इस प्रकारसे है—जहाँ पर भी  
धर्माचार्य को देखलिया जावे, वहीं पर उनकी वन्दना करना, नमस्कार करना,  
सत्कार करना, सम्मान करना. कल्याण—मङ्गल—देवस्वरूप उन चैत्य ज्ञानदायक की  
पर्युपासना करना, तथा—“फासुएसणिज्जेणं असण—पाण—खाइम—साइमेणं पडि-  
लाभेज्जा, पाडिहारिणं पीठ—फलक—सिज्जा संथारणं उवनिमंतेज्जा—” प्रासुक  
एषणीय अशन पान खादिम स्वादिम रूप चारां प्रभारके आहार से उन्हें प्रति  
लाभित करना, पाडिहारिपीठफलक शय्या संस्तारक को ग्रहण करने के लिये  
उनसे प्रार्थना करना—३ इस प्रकारकी यह धर्माचार्य की विनयप्रतिपत्ति है—  
“एवं ताव तुमं पएसी—? एवं ज्ञाणासि तहाविणं तुमं ममं वामं वामेण

करवी. आ प्रभाणु आ कलाचार्य के ७२ प्रकारनी कलाओतुं शिक्षणु आपे छे  
अने शिल्पाचार्य—विज्ञानतुं शिक्षणु आपनारनी विनयप्रतिपत्ति “जत्थेव धम्माय-  
रियं पासिज्जा, तत्थेव वन्देज्जा, णमंसेज्जा सक्कारेज्जा, सम्माणेज्जा, कल्लाणं  
मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासेज्जा” तेमण धर्माचार्यनी विनयप्रतिपत्ति आ  
प्रभाणु छे—ज्यां धर्माचार्य देणाय के तरतण त्यां तेमने वन्दन करवा, नमस्कार करवा  
सत्कार करवा, सम्मान करवुं, कल्याण—मंगल देवस्वरूप ते ज्ञानदायकनी पर्युपासना  
करवी तेमण “फासुएसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं पडिलाभेज्जा,  
पाडिहारिणं पीठफलकसिज्जा संथारणं उवनिमंतेज्जा” प्रासुक एषणीय अशन-  
पान आदिम स्वादिम रूप चार प्रभारके आहारथी तेमने प्रतिलाभित करवा, सम-  
र्षणीय पीठफलक, शय्यासंस्तार ने श्रेष्ठ करवा भाटे तेमने विनंती करवी उ, आ  
जतनी आ धर्माचार्यनी विनय-प्रतिपत्ति छे—“एवं ताव तुमं पएसी? एवं जा-  
णासि तहाविणं तुमं ममं वामं वामेणं जाव वट्ठित्ता मम एवमद्वं अक्खामित्ता जेणेव  
सेयविया णयरी तेणेव पहारेत्थं गमणाए” छे प्रदेशिन ! ज्यारे तमे आ प्रभाणु

ટીકા—“તળ ણં કેસીકુમારસમણે” ઇત્યાદિ—તતઃ સ્વલુ કેશાકુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિનં રાજાનમ્ એવમવાદીત્—હે પ્રદેશિન્ ! ત્વં જાનાસિ યત્ કતિ—કિયન્ત આચાર્યાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? । ઇતિ પ્રશ્ને પ્રદેશા ગ્રાહ્યન્ત ! જાનામિ, યત્ ત્રયઃ—ત્રિસં-સ્થાનાઃ આચાર્યાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા—કલાઽઽચાર્યઃ—દ્વાસપ્તતિ પ્રકારકલાશિક્ષકઃ ? , શિલ્પાઽઽચાર્યઃ—વિજ્ઞાનશિક્ષકઃ ૨, ધર્માઽઽચાર્યઃ—ધર્મોપદેશકઃ ૩ । પુનઃ કેસી પૃચ્છતિ—હે પ્રદેશિન્ ! ત્વં જાનાસિ સ્વલુ યત્ તેષામ્—અનન્તરોક્તાનાં ત્રયાણામા-ચાર્યાણાં મધ્યે કસ્યાઽઽચાર્યસ્ય કા—કીદૃશા ? વિનયપ્રતિપત્તિઃ—વિનયપ્રકારઃ પ્રયોક્તવ્યા કર્તવ્યા ? । હન્ત ! જાનામિ, તત્ર કલાઽઽચાર્યસ્ય શિલ્પાઽઽચાર્યસ્ય ચ ઉપલેપનં તૈલાભ્યઙ્ગઃ, તથા—સંમજ્જનં—સ્નપનં કુર્યાત્—સ્નપયે દિત્યર્થઃ, તથા પુરતઃ—તયોગ્રે, પુષ્પાણિ વા સમાનયેત્, મણ્ડયેત્—પુષ્પમાલ્યાદિનાઽલઙ્કુર્યાત્, ભોજયેત્—ભોજનં કારયેત્, વિપુલં—બહુ જીવિતાર્હં—જીવનયોગ્યં પ્રીતિદાનં—સહર્ષ વસ્ત્રાદિદાનં દદ્યાત્, તથા પુત્રાનુપૌત્રિકીં—પુત્રપૌત્રાદિ નિર્વાહયોગ્યાં વૃત્તિં જીવિકાં કલ્પ-યેત્—સમ્પાદયેત્ ૨ । ઇતિ કલાઽઽચાર્ય—શિલ્પાઽઽચાર્યયોર્વિનયપ્રતિપત્તિમુક્ત્વા ધર્માઽઽચાર્યસ્ય તાં કથયિતું પ્રક્રમતે—યત્રૈવ—યસ્મિન્નેવ સ્થલે ધર્માઽઽચાર્ય પશ્યેત્

જાવ વઢિત્તા મમ ઇયમઠં અસ્વામિત્તા જેણેવ સેયવિયા ણયરી તેણેવ પહારેત્થં ગમણા—” હે પ્રદેશિન્ ૩ જવ તુમ્મં ઇસ પ્રકાર સે વિનયપ્રતિપત્તિ કાં જાનતે હો તવ મી તુમને મેરે પ્રતિ પ્રતિકૂલરૂપ વ્યવહાર સે યાવત્ પ્રવૃત્તિ કરકે ઉસ પ્રતિકૂલ વ્યવહાર જનિત અપેરાધ કો ક્ષમા કરાયે વિના જહાંશ્વેતવિકા નગરીથી વહીં પર જાનેમા નિશ્ચય કિયા ॥ સૂ. ૧૫૬ ॥

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ હૈ, “કલ્લાણં—મંગલં—દેવયં—ચેદ્યં પઙ્ગુવાસેઽજ્ઞા—” ઇન પદોં કી વ્યાખ્યા ચતુર્થ સૂત્રમેં કી જા ચુકી હૈ । “વામં વામેણં—” ઇસ યાવત્ પદસે— “દણ્ડ દણ્ડેન—પ્રતિકૂલ પ્રતિકૂલેન—પ્રતિલોમ પ્રતિલોમેન—વિપર્યાસં વિપર્યાસેન” ઇન પદોં કા સંગ્રહ હુવા હૈ, ઇન્ પદોં કી વ્યાખ્યા પીછે કી જા ચુકી હૈ. ॥ સૂ. ૧૫૬ ॥

વિનય પ્રતિપત્તિ ને જાણો છો છતાં એ તમે એ મારા પ્રત્યે પ્રતિકૂલ રૂપ વ્યવ-હારથી યાવત્ પ્રવૃત્તિ કરીને પ્રતિકૂલ વ્યવહાર જનિત અપરાધને ક્ષમા કરાવ્યા વગર જ્યાં શ્વેતાંબિકા નગરી છે ત્યાં જવાનો તમે નિશ્ચય કર્યો. ॥ સૂ. ૧૫૬ ॥

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ છે. “કલ્લાણ મંગલં દેવયં ચેદ્યં પઙ્ગુવાસેઽજ્ઞા” આ પદોની વ્યાખ્યા એથા સૂત્રમાં આવી છે. “વામં વામેણ” માં આવેલ યાવત્ પદથી “દણ્ડ દણ્ડેન પ્રતિકૂલપ્રતિકૂલેન પ્રતિલોમ પ્રતિલોમેન વિપર્યાસં વિપર્યાસેન” આ પદોનો સંગ્રહ થયો છે. આ પદોની વ્યાખ્યા પહેલાં કરવામાં આવી છે. ॥ ૧૫૬ ॥

तत्रैव-तस्मिन्नेव स्थले वन्देत् नमस्येत् सत्कुर्यात् सन्मानयेत् कल्याणं मङ्गलं दैवतं चैत्यं पर्युपासीत” एतेषां व्याख्या चतुर्थसूत्रतो बोध्या, तथा तं धर्माचार्यं प्रासुकै पणीयेन-अचित्तकल्पनीयेन अशन-पान-खादिम-खादिमेन-अशनादि चतुर्विधधाहारेण प्रतिलभ्येत्-चतुर्विधाहार तस्मै दद्यादिति भावः, तथा तं प्रातिहारिकेण-पुनः समर्पणीयेन पीठफलकशय्यासंस्तारकेण उपनिमन्त्रयेत्-तद्ग्रहणे प्रार्थयेत् ३ । एवं तावत् प्रथमं प्रदेशिन् ! त मेवम्-अनन्तरोक्तप्रकारां विनयरूपां प्रतिपत्तिं जानासि, तथाऽपि खलु त्वं मम वामवामेन-प्रतिकूलतरेण व्यवहारेण यावत्-यावत्पदेन “दण्डदण्डेन, प्रतिकूलप्रतिकूलेन, प्रतिलोम-प्रतिलोमेन विपर्यासविपर्यासेन” इत्येषां पदानां सङ्ग्रहो बोध्यः, व्याख्याऽपि तत्रैव विलोकनीया, वर्तित्वा-उक्तव्यवहारेण युक्तो भूत्वा मम एत-मया सह प्रतिकूलव्यवहारजनितम् अर्थम्-अपराधम् अक्षामयित्वा यत्रैव श्वेतांविका नगरी तत्रैव गमनाय प्राधारयत्-निश्चयं कृतवान् । ॥ सू० १५६ ॥

मूलम्—तए णं से पएसी राया केसि कुमारससणं एवं वयासी एवं खलु भंते ! मम एयारूवे अज्झतिथए जाव समुप्पज्जित्था-एवं खलु अहं देवाणुप्पियाणं वामं वामेणं जाव वट्ठिए तं सेयं खलु मे कल्लं पाउप्पभाए रयणीए फुल्लुप्पलकमलकोमलुम्मिलिय-म्मि अहापंडुरे पभाए रत्तासोगकिंसुय-सुयमुह-गुं जद्ध-रागसरिसे कमलागरनलिणिसंडबोहए उट्ठियम्मि सूरुं सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे देवाणुप्पिए वंदि-त्तए नमंसित्तए एयमट्ठं भुज्जो भुज्जो सम्मं विणएणं खामित्तएत्ति कट्ठुं जामेव दिसिं पाउब्भूए तामेव दिसिं पडिगए ।

तए णं से पएसी राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते हट्ठुट्ठु जाव हियए जहेव कूणिए । तहेव निग्गच्छइ, अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे पंचविहेणं अभिगमेणं वंदइ नमं-सइ, एयमट्ठं भुज्जो भुज्जो सम्मं विणएणं खामेइ ॥ सू० १५७ ॥

छाया—ततः खलु स प्रदेशी राजा केशिनं कुमारश्रमणमेवमवादीत्—ए।  
खलु भदन्त ! मम एतद्रूपः आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत—एवं खलु अहं देवा-  
नुप्रियाणां वामवामेन यावत् वर्तितः, तत् श्रेयः खलु मे कलं प्रादुष्प्रभातायां  
रजन्यां फुल्लोत्पलकमलकोमलोन्मीलिते अयाऽऽपाण्डुरे प्रभाते रक्ताशोक-किंशुक-  
शुक्लमुख-गुजार्द्ररागसदृशे कमलाकरनलिनीपण्ड-त्रोधके उत्थिते स्ररे सहस्ररश्मौ  
दिनकरे तेजसा ज्वलति अन्तःपुरपरिवारैः सार्द्धं संपरिवृतो देवानुप्रियान् वन्दि-

मूलार्थ—“तएणं से पएसी राया—” इत्यादि

“तएणं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी—” ३५९

इसके बाद—प्रदेशी राजाने केशी कुमारसमण से सा कहा—“एवं खलु भंते !—  
मम एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था” हे भदन्त—३ मुझे ऐसा  
आध्यात्मिक यावत् संकल्प उत्पन्न हुआ. “एवं खलु अहं देवानुप्रियाणं वामं  
वामेणं जाव वट्टिए, तं सेयं खलु मे कलं पाउप्पभायाए रयणाए फुल्लुत्पलकमल-  
कोमलुम्मिलियम्मि अहा पांडुरे प्रभायाए रक्ता सा। सिं सुय—सुयमुह गुंजद्वराग-  
सरिसे, कमलागरनलिणिसंडवोहए—” मैंने आप देवानुप्रिय के साथ प्रति-  
कूल रूप से यावत् व्यवहार किया है, अतः—मुझे यही श्रेयस्कर है कि—मैं  
कल जब रजनी प्रभातयुक्त हो जावेगी, अर्थात्—रात्रि समाप्त हो जावेगी.  
और कमल तथा—हरिणविशेषके नेत्र ये दोनों विकसित हो जावेगे, अर्थात्  
कमल जब खिल जावेगा. और—हरिणविशेष की आंखें शयन करलेने के बाद  
खुल जावेगी. तथा—प्रभातका रङ्ग जब पीत धवल हो जावेगा. रक्ताशोक-किंशुक-

‘तएणं से पएसी राया’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—‘तएणं से पएसी राया केसिं कुमारसमणं एवं वयासी ॥१५७॥  
त्यार पछी प्रदेशी राजाने केशीकुमार श्रमणने आ प्रमाणे कहुं ‘एव खलु भंते !  
मम एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था’ हे भदन्त ! येवे आध्यात्मिक  
यावत् संकल्प उत्पन्न थये. “एवं खलु अहं देवानुप्रियाणं वामं वामेणं जाव  
वट्टिए तं सेयं खलु मे कलं पाउप्पभाया ए रयणीए फुल्लुत्पलकमलकोम-  
लुम्मिलियम्मि अहापांडुरे प्रभाए रक्ताशोककिंसुयसुयमुहगुंजद्वरागसरिसे  
कमलागार नलिणिसंडवोह ए” में आप देवानुप्रियनी साथे प्रतिकूलरूपसे यावत्  
व्यवहार कर्यो छे. तेथी भारा भाटे येव वात श्रयस्कर छे के हुं आवती कावे  
ज्यारे रात्रि प्रभात युक्त थछ जशे, ओटवे के रात्रि पूरी थछ जशे, अने कमल  
तथा हरिण विशेषनी नेत्रा विकसित थछ जशे, ओटवे के कमल ज्यारे विकसित  
थछ जशे, अने हरिण विशेषनी आंखो निद्रा त्याग कर्या पाद उघड़ी जशे तेभज  
प्रभातने रंग ज्यारे पीत धवल (पीणो अने सङ्केह) थछ जशे, रक्ताशोक, किंशुक



त्वा नमस्यित्वा एतमर्थं भूयो भूयः सय्यन् चिनयेन क्षामयितुम्, इति कृत्वा यामेव दिशं प्रादुर्भूतः, तामेव दिशं प्रतिगतः ।

ततःखलु स प्रदेशी राजा कल्यं प्रादुष्प्रभातायां रजन्यां यावत् तेजसा जलति दृष्टुष्ट यावद् हृदयः न्यैव कूणिकः तथैव निर्गच्छति अन्तःपुरपरि-

पलाश-शुकमुख एवं—गुञ्जा-स्त्री के अघस्तन का अर्धभाग जैसा लाल. तथा—सरो-  
वरों में कमलिनी कुल का विकाशक, “उद्विगमि सूर्ये सहस्सरस्सिमि दिणयरे  
तेयसा जलंते—” ऐसा सहस्रकिरणोंवाला एवं—दिनकर्ता सूर्य जब अपने तेज  
से प्रज्वलित होता हुआ आकाश में उदित हो जावेगा, तब—“अंते उर परियाल-  
सद्धिं संपरिवुडे देवाणुप्पिए वंदित्तए नमंसित्तए एयमट्ठं भुज्जो—२ सम्मं विण-  
एणं—स्वामित्तए त्ति कट्ठुं जामेव दिंसिं पाउब्भूए. तामेव दिंसिं पडिगए” मैं  
अन्तःपुर परिवार से युक्त होकर आप देवानुग्रिय की वन्दना—नमस्कार और—  
पूर्वोक्त अपराध रूप अर्थ को विनय के साथ प्रशस्त नम्र भावसे बार—२ क्षमापना  
के लिये आऊंगा. इस प्रकार केशी स्वामी से निवेदन कर वह जिस दिशा से  
आया था—उसी दिशा की ओर चला गया. “तएणं से पणसी राया कल्लं पाउप्प-  
भायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते—” इसके बाद दूसरे दिन जब रजनी रात्री  
प्रभातप्राय—समाप्त हो चुकी और—१ भात हो गया यावत् सूर्य अपने तेज से देदीप्यमान  
हो उठा—तब वह—“हट्ठ तुट्ठ जाव हियए जहेव कूणिए तहेव निग्गच्छइ—” दृष्ट-  
तुष्ट यावत् हृदयवाला होकर कूणिक नरेश की तरह अपने स्थान से निकला

पलाश, शुकमुख अने गुञ्जना नीचेना अर्धा भाग जेवो लाल तेमज सरोवरोभां कमलिनी कुलने  
वीनाशक ‘उद्विगमि सूर्ये सहस्सरस्सिमि दिणयरे तेयसा जलंते’ जेवा सहस्र  
कीरणोवाणो अने हीनकर्ता सूर्य ज्यारे पोताना तेजथी प्रज्वलीत थतो आकाशभां  
उदय पावसे, त्यारे अंतेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे देवाणुप्पिए वंदित्तए नमं  
सित्तए एयमट्ठं भुज्जो २ सम्मं विणएणं स्वामित्तए त्ति कट्ठुं जामेव दिंसिं  
पाउब्भूए तामेव दिंसिं पडिगए” त्यारे अंतःपुर परिवारनी साथे आप देवानु-  
ग्रियने वंदन अने नमस्कार करवा भाटे अने पूर्वोक्त अपराधइय अर्थने सविनय  
प्रशस्त नम्र भावथी बारवार क्षमापना भाटे आवीश. आ प्रभाते केशीकुमारने  
विनंती करीने ते जे दिशा तरइथी आये. उतो तेज दिशा तरइ जतो रह्यो.  
“तएणं से पणसी राया कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव तेयसा जलंते”  
त्यारथथी पीण हिवसे ज्यारे रात्रि पूरी थछ अने प्रभात थयुं यावत् सूर्य पोताना  
तेजथी प्रकाशित थछ गये. त्यारे ते “हट्ठ तुट्ठ जाव हियए जहेव कूणिए तहेव  
निग्गच्छइ” इष्ट तुष्ट यावत् हृदयवाणो थछने कुणिक राजनी जेभ पोताना स्थानथी



वारैः सार्द्धं संपरिवृतः पञ्चविधेन अभिगमेन वन्दते नमस्यति, एतमर्थं भूयोभूयः  
सम्यग् विनयेन क्षामयति ॥ सू० १५७ ॥

टीका—“तएणं पणसी राया” इत्यादि—ततः खलु म प्रदेशी राजा केशिनं  
कुमारश्रमणम्, एवमवादात्—हे भदन्त ! एां खलु मम एतद्रूपः—अनुपदं वक्ष्यमाण-  
स्वरूपः आध्यात्मिकः—आत्मगतः क्षमापनारूपोर्थोर्कुं इव, यावत्-यावत्पदेन “चि-  
न्तितः, कल्पितः, प्रार्थितः, मनोगतः, संकल्पः” इत्येषां पदानां सङ्गो हो बोध्यः, तत्र  
“अन्तेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे पंचविहेणं अभिगमेणं वंदइ-नमंसइ—” निकल  
ते ही वह अन्तःपुर परिवार से परिवेष्टित हो गया. इस तरह से प्रदेशी राजाने  
पांच प्रकारके अभिगम से केशीकुमार श्रमण की वन्दनाकी-उनकी स्तुति की.  
“एयमइं भुज्जो भुज्जो-सम्मं विणणं खामेइ—” स्तुति नमस्कार करके फिर उसने  
अपने प्रतिकूल आचरण से जनित अपराध की वार-२ अच्छी तरह से विनम्र  
भावसे युक्त हो कर क्षमा कराई, अर्थात्-क्षमा मांगी—

टीकार्थ—प्रदेशी राजाने केशीकुमारश्रमण से इस प्रकार कहा-हे भदन्त !  
अब मुझे इस प्रकार का यह आध्यात्मिक विचार उत्पन्न हुआ. कि-मैं अपने  
प्रतिकूल आचरण से जनित अपराध की आप से वार-वार क्षमा करावे, यह विचार  
आत्मगत होने से पहले तो अर्कुर की तरह उत्पन्न हुआ. अतः—उसे आध्या-  
त्मिक रूपसे प्रकट किया गया है. बाद में यावत् पदसे चिन्तितः-कल्पितः—  
प्रार्थितः-मनोगतः इन विशेषणों वाला हुआ है कि—यह विचार स्मरणरूप बन  
नीकण्यो. “अन्तेउरपरियालसद्धिं संपरिवुडे पंचविहेणं अभिगमेणं वंदइ-  
नमंसइ” नीकणतां ज ते पोताना अन्तःपुर परिवारथी वीटणाछ गयो. आ  
प्रमाणे तैयार थयेला प्रदेशी राजाये केशी कुमारश्रमणुनी पासे जधने पांच प्रकारना  
अभिगमथी केशी कुमारश्रमणुनी वन्दना करी-तेमनी स्तुति करी, नमस्कार कर्या.  
“एयमइं भुज्जो २. सम्मं विणणं खामेइ” स्तुति तेमज्ज नमस्कार करीने पछी  
तेणे पोताना प्रतिकूल आचरणथी थयेल अपराधनी वारंवार सारी रीते विनम्र  
भावथी युक्त थधने क्षमा मांगी.

टीकार्थ—प्रदेशी राजाये केशीकुमारश्रमणुने आ प्रमाणे कछुं—हे भदन्त ! हुवे  
मने आ जतने आध्यात्मिक विचार उत्पन्न थये छे के हुं-मारा प्रतिकूल आचर-  
णथी थयेल. अपराध गदल आपथी पासेथी वारंवार क्षमा मांशुं. आ विचार  
आत्मगत होवाथी पछेलां तो अर्कुरनी जेम उत्पन्न थये. जेथी तेने आध्यात्मिक  
इधे प्रकट करवाभां आये छे. तयार पछी यावत् पदथी “चिन्तितः, कल्पितः,  
प्रार्थितः मनोगतः”, आ विशेषणथी युक्त थये छे, विचारने जे चिन्तित पदथी

ચિન્તિત:-પુનઃ પુનઃ સ્મરણરૂપો વિચારો દ્વિપત્રિત ઇવ, તતઃ કલ્પિતઃ સ એવ  
વ્યવસ્થાયુક્તઃ 'ક્ષામયેગમ્' इति परिणये विचारः पल्लवित इव, स एव प्रार्थितः-  
इष्टरूपेण स्वीकृतः पुष्पित इव, मनोगतः स हि दृढरूपेण निश्चयः "इत्यमेव  
मया कर्तव्यम्" इति विचारः फलित इव समुदपद्यत-समुत्पन्नः-एवं खलु अहं  
देवानुप्रियाणां-भवतां वामवामेन यावत्-यावत्पदेन "दण्डदण्डेन प्रतिकूलप्रति-  
कूलेन प्रल्लोम प्रतिलोमेन विपर्यय-विपर्यय-सि" इत्येषां सङ्गो हो बोध्यः, एषां  
व्याख्या पूर्व गता, वर्तितः-प्रवृत्तः तत्-तस्मात्कारणात् मे मम श्रे : -प्रशस्तं यत्

गया. अर्थात्-मुझे अपने अपराध की आपसे क्षमा कराना है. ऐसी स्मृति मुझे  
बार-बार आने लगी. इसलिये-यह विचार द्विपत्रित अङ्कुर की तरह प्रथम अव-  
स्था की अपेक्षा कुछ विशेष पुष्ट होने से चिन्तित प्रकट किया गया है। तथा  
वही विचार जब व्यवस्थायुक्त हो गया. कि मुझे अवश्य ही इस रूपसे क्षमा  
कराना है तो द्वितीय अवस्थाकी अपेक्षा और-अधिक पुष्ट हो जाने के कारण  
यह पल्लवित हुवे अङ्कुर की तरह कल्पित पद से विशेषित किया गया है.  
तथा जब वही विचार इष्ट रूप से स्वीकृत कर लिया गया. तो वह पुष्पित हुवे  
अङ्कुर की तरह हो गया. और जब वही विचार मनमें दृढ रूपसे निश्चय की  
स्थिति में परिणत हो गया के ऐसा ही मुझे करना है. तो फलित हुवे  
अङ्कुर की तरह वह हो गया. क्या विचार उत्पन्न हुआ इसी बात को वह अब  
प्रकट करता है कि हे भदन्त-! मैंने आप देवानुप्रिय के साथ बहुत अधिक  
प्रतिकूलरूपसे. यावत् दण्ड दण्डरूपसे. अतिशय प्रतिकूलरूपसे व्यवहार किया है.

विशेषित કરવામાં આવ્યો છે. તેનું કારણ આ છે કે તે વિચાર સ્મરણરૂપ થઈ ગયો  
હતો. એટલે કે મને મારા અપરાધની આપશ્રીના પાસેથી ક્ષમા કરાવવી છે, એવી સ્મૃતિ  
વારંવાર આવવા લાગી, એથી આ વિચાર દ્વિ પત્રિત અંકુરની જેમ પ્રથમ અવસ્થા  
કરતાં કંઈક વિશેષ પુષ્ટ હોવાથી ચિન્તિત રૂપમાં પ્રકટ કરવામાં આવ્યો છે. તથા તેજ  
વિચાર જ્યારે વ્યવસ્થાયુક્ત થઈ ગયો-કે મારે ચોક્કસ આવિને ક્ષમા ચાચના કરવી  
છે તો દ્વિતીય અવસ્થા કરતાં વધારે તે વિચાર પુષ્ટ થઈ જવાથી એ પલ્લવિત થયેલા  
અંકુરની જેમ કલ્પિત પદથી વિશેષિત કરવામાં આવ્યો છે. તેમજ જ્યારે તે જ  
વિચાર ઈષ્ટ રૂપથી સ્વીકૃત થઈ ગયો તો તે પુષ્પિત થયેલ અંકુરની જેમ થઈ ગયો  
અને જ્યારે તે વિચાર મનમાં દૃઢરૂપથી નિશ્ચયની સ્થિતિમાં પરિણત થઈ ગયો કે  
એવું જ મારે કરવું છે તો ફલિત થયેલ અંકુરની જેમ તે થઈ ગયો. શો વિચાર  
ઉત્પન્ન થયો? એજ વાતને હવે સ્પષ્ટ કરતાં કહે છે કે-હે ભદ્રંત! મેં આપ દેવા-  
નુપ્રિયની સાથે બહુજ પ્રતીકૂળ રૂપથી યાવત્ દંડ દંડ રૂપથી-અતિશય પ્રતીકૂળરૂપથી  
અતિશય પ્રતિલોભરૂપથી અને અતિશય વિપરીત રૂપથી વ્યવહાર કર્યો છે, એથી મારા

કલ્પ-શ્વઃ પ્રાદુષ્પ્રમાતાયં પ્રકાશપ્રકાશિતાયામ્, રજન્યાં રાત્રૌ ફુલ્લોત્પલકમલકોમ-  
લોન્મીલિતે-ફુલ્લં વિકસિતં યદ્ ઉત્પલં-કમલં, તચ્ચ કમલં ચ હરિણવિશેષથેનિ  
ફુલ્લોત્પલકમલૌ, તયોર્યત્ કોમલં મૃદુ ઊન્મીલનં તત્ર ફુલ્લોત્પલપત્રાણાં વિકસનં  
હરિણનયનયોઃ શનનન્તરં પુટમોચનમ્ ચ યસ્મિન્ તત્ર ફુલ્લોત્પલકમલકોમલો-  
ન્મીલિતં તસ્મિન્, અથ પ્રમાતાનન્તરમ્ આ-સમન્તાત્ પાણ્ડુરે પીતધવલે પ્રમાતં  
પ્રાતઃકાલે રક્તાશોકકિંશુક શુકમુખ ગુજાર્દ્રરાગસદૃશે તત્ર રક્તાંશોકઃ રક્તવર્ણો-  
શોકઃ, કિંશુકઃ પલાશઃ, શુકમુખં, ગુજાર્દ્રરાગઃ ગુજાયાઅધસ્તનાર્દ્રમ્ય રાગઃ, એતં  
રક્તવર્ણઃ સદૃશે તુલ્યે, અસ્ય “સૂરે” ઇતિ પરેણ સમ્બન્ધઃ, એતમેતન્નાનામપિ,  
કમ્લાકરનલિનીપણ્ડવોદકે સરોવરગતકમલિનીકુલવિકાશકે સૂરે સૂર્યે ઉત્થિતે

इसलिये मेरा कल्याण अब इसी मे है कि मैं दूसरे दिन जबकि रात्रि प्रभात के  
रूप में परिणत हो जावे. अर्थात्-प्रातःकाल हा जाय. और इसमें कमल उत्पल  
एवं हरिण विशेष की आंखें निद्राविगम के बाद प्रफुल्लित हो जाय कमल  
विकसित हो जाय. एवं-हरिणों के नेत्र अच्छी तरह से खुल जाय तथा वह  
प्रभात समन्तात पीत धवल प्रकाशवाला हो जावे, एवं-सहस्रकिरणों से सम्पन्न  
तथा दिवसविधायक सूर्य जो कि कमलाकर सरोवर में नलिनी कुलकावोधक-वि-  
काश करनेवाला होता है जब रक्ताशोक कशुक शुकमुख और गुजार्ध गुञ्जा के सदृश  
उदित हो जावे तथा-उसका प्रकाश अच्छी तरह से फैल जावे तब मैं अन्तःपुर  
परिजनों से परिवृत्त होकर आप देवानुप्रिय, की वन्दना के लिये नमस्कार के  
लिये आज और-अपने पूर्वोक्त अपराधरूप अर्थकी आपसे वार २ विनम्र भाव  
युक्त हो कर क्षमा मांगू, इस प्रकार से वह प्रदेशी राजा केशीश्रमणकुमार के प्रति  
निवेदन कर अपने स्थान पर गया. । दूसरे दिन जब पूर्वोक्तरूप से प्रमान

માટે હવે એજ શ્રોયસ્કર છે કે હું આવતી કાલે જ્યારે રાત્રે પ્રભાતમાં પરિણત થઈ  
જાય એટલે કે સવાર થઈ જાય, કમળ ઉત્પલ અને હરિણ વિશેષેની આંખો નિદ્રા  
રહિત થઈને પ્રફુલ્લિત થઈ જાય. કમળો વિકસિત થઈ જાય અને હરિણોના નેત્રો  
સારી રીતે ઉઘડી જાય તથા પ્રભાત સમન્તાત્ પીતધવલ પ્રકાશયુક્ત થઈ જાય  
અને સહસ્ર કિરણોથી સંપન્ન તેમજ દિવસ વિધાયક સૂર્ય કે જે કમ્લાકર સરોવર  
માં નલિની કુલને વિકસિત કરનાર છે. રક્તાશોક, કિંશુક, શુક મુખ અને ગુજાર્ધની  
સદૃશ તે ઉદિત થઈ જાય તેમજ તેનો પ્રકાશ સારી રીતે પ્રસરી જાય, ત્યારે હું  
અંતઃપુર પરિજનોથી પરિવૃત્ત થઈને આપ દેવાનુપ્રિયને વંદન તેમજ નમસ્કાર કરવા  
માટે અહીં આવું. અને પૂર્વોક્ત અપરાધ બદલ આપશ્રી પાસેથી વિનમ્ર થઈને વારંવાર  
ક્ષમા યાચના કરું. આ પ્રમાણે તે પ્રદેશી રાજા કૈશીકુમારશ્રમણને વિનંતી કરીને સ્વસ્થાને  
ગયો. બીજા દિવસે જ્યારે પૂર્વોક્તરૂપથી પ્રભાત પૂર્ણરૂપે વિકસિત થઈ ગયું ત્યારે તે

उदिते सति, पुनः कीदृशे तस्मिन् ? सहस्ररश्मौ-किरणसहस्रसम्पन्ने दिनकरे-  
दिवसंकरणशीले तेजसा-दीप्त्या ज्वलति-देदीप्यमाने सति, अन्तःपुरपरिवारैः  
राज्ञीपरिवारैः संपरिवृतः-युक्तः सन् अहं देवानुप्रियान् वन्दितुं नमस्यितुम्,  
एतमर्थं-पूर्वोक्तापराधरूपमथ भूयोभूयः-पुनः पुनः सम्यग् विनयेन-प्रशस्तनम्रभावेन  
क्षामयितुम् । इति कृत्वा-केशिस्वामिने इति निवेद्य यामेव दिशं समाश्रित्य प्रादुर्भूतः  
तामेव दिशं प्रतिगतः ।

ततः खलु स प्रदेशी राजा कल्य-श्वः प्रादुष्प्रभाताद्यो रजन्यां यावत्-  
यावत्पदेन अनन्तरप्रोक्तोऽरितनपदानां फुल्लोत्पलादीनां सङ्गो हो बोध्यः, तदर्थश्च  
तत्रैव ज्ञेयः । तेजसा ज्वलति हृष्टतुष्ट यावत्-यावत्पदेन चित्तानन्दितः, परम-  
सौम स्यतः, हर्षवशं विसर्पद्भृदः, इत्येतत्पदसङ्गो हो बोध्यः । यथा-येन प्रकारेण  
कूणिकः-तन्नामा श्रेणिकराजपुत्र औपपातिकसूत्रे वर्णितो निर्गतः, तथैव-तेनैव  
प्रकारेण निर्गच्छति-स्वभवनान्निःसरति, तन्निर्गमनवर्णनमौपपातिकसूत्रतो  
बोध्यमिति तात्पर्यम् । निर्गत्य अन्तःपुरपरिवारैः संपरिवृतः-वेष्टितः पञ्चविधेन-  
पञ्चप्रकारेण सूचितानां द्रव्याणां व्युत्सर्जनेन ?, अचित्तानां द्रव्याणामव्युत्सर्जनेन,

काल का सूर्य उदित हो गया। तब वह हृष्टतुष्ट यावत् चित्तानन्दित हुआ। परमसौम-  
यिन हुआ हर्षवश विसर्पत् हृदयवाला (पद्म आनन्दयुक्त हुआ) औपपातिकसूत्र में वर्णित  
श्रेणिक राजपुत्र कूणिक नरेशकी तरह अपने भवन से निकला। कूणिक नरेश के निक-  
लने का वर्णन औपपातिक सूत्र में किया गया है । निकलते ही वह अन्तःपुर परि-  
वार जनों से परिवेष्टित कर लिया गया। और पांच प्रकार के अभिगम से  
युक्त हो कर वह प्रदेशी राजा केशीकुमारश्रमणकी वन्दना आदि करने के  
लिये चल दिया। वहां पहुंचकर उसने उनका वन्दना की नमस्कार किया। और  
सुकृत तिकूल आचरणजनित अपराधों की बड़े विनम्रभावयुक्त होकर क्षमा  
मांगी। पांच प्रकारके अभिगम इस प्रकारसे ? सचित्तद्रव्योंका परित्यागकर

हृष्ट तुष्ट यावत् चित्तानन्दित थयो, परमसौमनास्मित थयो, हर्ष विसर्पत् हृदयवाणो  
थयो। औपपातिकसूत्रमां वर्णित श्रेणिक राजपुत्र कूणिक नरेशना जेम पोताना लवनथी  
ते नीकण्यो। कूणिक नरेशना नीकणवानुं वर्णन औपपातिक सूत्रमां करवामां आण्युं  
छे। गहल नीकणतां ज ते अन्तःपुर परिवार जनोथी वीटणाछ गयो-घेराछ गयो अने  
पांच प्रकारना अभिगमथी युक्त थधने ते प्रदेशी राजा केशी कुमारश्रमणनी वंदना  
वगेरे करवामां भाटे नीकणी पड्यो। त्यां पछोन्थीने तेणे तेमने वंदन अने नमस्कार  
क्या अने स्वकृत प्रतिकूल आचरणुं जनित अपराधो गहल तेणे विनम्रभाव युक्त  
थधने क्षमा मांगी। पांच प्रकारना अभिगमो आ प्रमाणे छे । १, सचित्त द्रव्योने

एकशाटिकोत्तरासङ्गकरणेन३, चक्षुःस्पर्शे अञ्जलिकरणेन४, मनस एकत्वकरणेन५, चेत्येवंरूपेण अभिगमेन-विनयविधिविशेषेण, वन्दते-स्तौति. नमस्यति-नमस्करोति वन्दित्वा नमस्यित्वा च एतमर्थ-प्रतिकूलाचरणजनिताशोधरूपं भूयोभूयः-वार-वारम् सम्यग् विनयेन-प्रशस्ततरविनम्रभावेन क्षामयति-क्षमां कारयति । ॥सू.१५७॥

मूलम्—तए णं केसी कुमारसमणे पएसिस्स रण्णो सूरिकं-तप्पमुहाणं देवीणं तीसे य महइमहालयाए परिसाए चाउज्जामं धम्मं परिकहेइ । तए णं से पएसो राया धम्मं सोच्चा निसम्म उट्ठाए उइ केसिकुमारसमणं वंदइ नमंसइ जेणेव सेयविया नयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ॥ सू० १५८ ॥

छाया—ततः खलु केशी कुमारश्रमणः प्रदेशिनो राज्ञः सूर्यकान्ता-प्रमुखानां देवीनां तस्यां च महाऽतिमहालयायां परिषदि चातुर्याय धर्मं परिकथयति । ततः खलु स प्रदेशी राजा धर्मं श्रुत्वा निशम्य उत्थया उत्तिष्ठति केशिकुमारश्रमणं वन्दते नमस्यति यत्रैव श्वेतविका नगरी तत्रैव प्राधारयद् गमनाय ॥सू.१५८॥

देना, ण अ चेत्त द्रव्यां का पदित्याग नहीं करना, २ एक शाटिका उत्तरा-यङ्ग करना-विना सीये वत्तसे उत्तरासङ्ग करना, है-देखने ही हाथ जोड़ लेना, और-५. मनकी एकाग्रता करना. ॥सू. १५७॥

सूत्र-“तए णं केसीकुमारसमणे-” इत्यादि-॥१५८॥

मूलार्थ-“तएण” इसकेवाद “केसीकुमारसमणे” केशीकुमारश्रमणने “पएसिस्स रण्णोसूरिकंतप्पमुहाणं देवीणं तीसेय. महइ महालयाए परिसाए-” प्रदेशी राजा के समक्ष एवं उसकी सूर्यकान्ता आदि प्रमुख रावियां के समक्ष उस विशाल परिषदा में “चाउज्जामं धम्मं” अहिंसा-सत्य-अस्तेय, एवं-अपरिग्रह रूप चातुर्याय धर्मका उपदेय दिया. “तएणं से पएसो राया धम्मं सोच्चा

परित्याग करवो, २, अधिक द्रव्योनो परित्याग नहि करवो, ३ ओक शाटिका उत्तरासङ्ग करवो, ४ वगर सीवेला वस्त्रोथो उत्तरासङ्ग करवो. नेतानी साथे ज हाथ नेडी देवा अने ५, मननी ओकाग्रता करवी ॥ सू. १५७ ॥

सूत्रार्थ-“तए णं केसीकुमारसमणे इत्यादि”

मूलार्थ-“त एण” त्थार पछी “केसी कुमारसमणे” केशी कुमार श्रमणे “पएसिस्स रण्णो सूरिकंप्प मुहाणं देवीणं तीसेय महइ महाकयाए परिसाए” प्रदेशी राजनी साथे तेमज तेनी सूर्यकान्ता वगेरे प्रमुख राणीओनी साथे ते विशाण परिषदां “चाउज्जामं धम्मं” अहिंसा, सत्य, अस्तेय अने अपरिग्रह रूप चातुर्याय धर्मनो उपदेश आये. “तएणं से पएसो राया धम्मं सोच्चा निसम्म

टीका—“तए णं केशिकुमारसमणे” इत्यादि—ततः खलु केशिकुमार-  
श्रमणः प्रदेशिनो राज्ञः सूर्यकान्ता प्रमुखानां देवीनां तस्यां तत्र स्थितायां च  
महाऽतिमहालयायाम् अतिबृहत्याम्, परिषदि चातुर्यामम्—अहिंसा-सत्या-ऽस्त्येया-  
ऽपरिग्रहैर्विभक्तचतुर्मात्रतरुणं धर्मं परिकथयति—प्ररूपयति । उपलक्षणाद् द्वादश-  
विधं गृहिधर्मं परिकथयति ततः खलु स प्रदेशी राजा धर्मम् अनगारागारधर्मं श्रुत्वा  
सामान्तः श्रवणगोचरं कृत्वा निशम्य—विशेषतो हृद्यवधार्य उत्थया—उत्थान-  
प्रयासेन उत्तिष्ठति, उत्थाय केशिकुमारश्रमणं वन्दते—स्तौति, नमस्यति—नम-  
स्करोति, वन्दित्वा नमस्यित्वा च यत्रैव श्वेतांबिका नगरी तत्रैव गमनाय  
पाधारयत्—निश्चितवान् । ॥सू. १५८ ॥

मूलम्—तएणं केसी कुमारसमणे पएसिराय एवं वयासी—सा  
णं तुमं पएसी ! पुब्बि रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भवि-  
ज्जासि, जहा से वणसंडेइ वा णट्ठसालाइ वा इक्खुवाडएइ वा  
खलवाडएइ वा । कहं णं भंते ! वणसंडे पुब्बि रमणिज्जे भवि-  
त्ता पच्छा अरमणिज्जे भवइ ? पएसी ! जहा णं वणसंडे पत्तिए

निसम्म उट्ठाए उट्ठेइ—” इसके बाद प्रदेशी राजा धर्म सुन कर और उसे हृदय में  
धारण कर अपने आप वहां से उठा—“केसीकुमारसमणं वंदइ नमंसइ—” उठ कर  
उसने केशीकुमार श्रमण की वन्दना की उन्हें नमस्कार किया. “जेणेव सेयंविया  
नयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए—” वन्दना-नमस्कार कर फिर वह अपनी नगरी  
की ओर चल दिया । टीकार्थ—स्पष्ट है—केशीकुमारश्रमणने चातुर्याम धर्म के उपदेश  
और—साथ-साथ १२ प्रकाररूप गृहस्थ धर्म का भी उपदेश दिया. ऐसा कथन  
उपलक्षण से जान लेना चाहिये ॥ सू. १५८ ॥

उट्ठाए उट्ठेइ” त्थार पछी प्रदेशी राजा धर्म सांभलीने अने तेने हृदयमां धारण  
करीने पोतानी भेणे ज त्थांथी उलो थये. “केसीकुमारसमणं वंदइ नमंसइ  
उलो थधने तेणे केशी कुमारश्रमणनी वंदना करी तेभने नमस्कार कया. “जेणेव  
सेयविया नयरी तेत्रैव पहात्रेथ गमणाए” वंदना तेभज नमस्कार करीने पछी  
ते पोतानी नगरी तरइ रवाना थध गये.

टीकार्थ—स्पष्ट छेकेशीकुमारश्रमणे चातुर्याम धर्मने उपदेश अने तेनी साथे  
साथे १२ प्रकाररूप गृहिधर्मने पण उपदेश आये उतो, जेवुं कथन उपलक्षणथी  
जाणी लेवुं नेधये. ॥ सू. १५८ ॥



पुष्पिणं फलिणं हरिणं हरियगरेरिज्जमाणे सिरीणं अईव उवसोभेमाणे  
 चिट्ठइ, तथा णं वणसंडे रमणिज्जे भवइ, जया णं वणसंडे नो  
 पत्तिणं नो पुष्पिणं नो फलिणं नो हरिणं नो हरियगरेरिज्जमाणे णो  
 सिरीणं अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ जया णं जुन्ने झडे परिसडिय-  
 पंडुपत्ते सुक्कसुक्खे इव मिलायमाणे चिट्ठइ तथा णं वणसंडे अर-  
 मणिज्जे भवइ १। जया णं णट्ठसाला वि गिज्जइ वाइज्जइ नच्चि-  
 ज्जइ हासज्जइ रमिज्जइ तथा णं णट्ठसाला रमणिज्जा भवइ, जया णं  
 नट्ठसाला णो गिज्जइ जाव णो रमिज्जइ, तथा णं णट्ठसाला अरमणि-  
 ज्जा भवइ २। जया णं इक्खुवाडे छिज्जइ भिज्जइ पीलिज्जइ खज्जइ  
 पिज्जइ दिज्जइ तथा णं इक्खुवाडे रमणिज्जे भवइ, जया णं इक्खु-  
 वाडे णो छिज्जइ जाव तथा इक्खुवाडे अरमणिज्जे भवइ ३,  
 जया णं खलवाडे उच्छुब्भइ मलिज्जइ खज्जइ दिज्जइ तथा णं  
 खलवाडे रमणिज्जे भवइ, जया णं खलवाडे नो उच्छुब्भइ जाव  
 अरमणिज्जे भवइ ४। से तेणट्ठेणं पएसी! एवं वुच्चइ मा णं तुम  
 पएसी! पुंवि रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविज्जासि  
 जहा वणसंडेइ वा जाव खलवाडेइ वा ॥ सू० १५९ ॥

छाया—ततः खलु केशिकुमारश्रमणः प्रदेशिराजमेवमवादीत्—मा खलु त्वं  
 प्रदेशिन्! पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चाद् अरमणीयो भवेः, यथा स वनषण्ड इति

“तए णं केशीकुमारसमणे—” इत्यादि—॥ सू. १५९ ॥

मूलार्थ—“तए णं—” इसके बाद “केशी कुमारसमणे—” केशी कुमारश्रमणने  
 पएसीं रायं एवं वयासी—” प्रदेशी राजा से ऐसा कहा—“मा णं तुमं पएसी?

सुत्रार्थ—“तए णं केशीकुमारसमणे” इत्यादि ॥ सू. १५९ ॥

भूतार्थ—“तएण” त्थार पछी “केशीकुमारसमणे” केशी कुमार श्रमणे “पएसी  
 रायं एवं वयासी” प्रदेशी राजाने आ प्रभावे उहुं—“मा णं तुमं पएसी! पुंवि



વા નાટ્યશાલા इति वा इक्षुवाटकम् इति वा खलवाटकम् इति वा कथं खलु  
भदन्त ! वनषण्डः पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चाद् अरमणीयो भवति ? । प्रदेशिन् !  
यथा खलु वनषण्डः । पत्रितः पुष्पितः फलितः हरितः हरितकराराज्यमानः श्रिया  
अतीव उपशोभमानः तिष्ठति, तदा खलु वनषण्डो रमणीयो भवति, यदा खलु

પુષ્પિ રમણીય ભવિત્તા પચ્છા-અરમણિજ્જે ભવિજ્જાસિ-” હે પ્રદેશિન્-! તુમ  
પહેલે રમણીય હોફર વાદ મેં અરમણીય મત વનના. અર્થાત્-ધાર્મિક હોફર  
અધાર્મિક મત વન જાના “જહા સે વણસંડેઝવા-ળટ્ટસાલાઝવા-ઇક્ષુવાડણવા-  
ખલવાડણવા-” જૈસે પૂર્વ મેં રમણીય હોફર વનષણ્ડ અરમણીય વન જાતા  
હૈ, અથવા નાટ્યશાલા, યા ઇક્ષુ પીડન સ્થાન યા-ખલવાટક પૂર્વ મેં રમણીય હોફર  
અરમણીય વનજાતે હૈ. અવ પ્રદેશી પૂછતા :હૈ-“કહં ણં મંતે ? વણસંડે પુષ્પિ  
રમણિજ્જે ભવિત્તા પચ્છા અરમણિજ્જે ભવઈ-” હે ભદન્ત ? વનષણ્ડ પૂર્વ મેં રમ-  
ણીય હોફર વાદ મેં અરમણીય કિસ પ્રવાર સે હો જાતા હૈ-૩ “ઉત્તર મેં પ્રભુ  
કહતે હૈ-“પણસી જહા ણં વણસંડે પત્તિય-પુષ્પિય-ફલિય હરિયગરેરિજ્જમાણે સિરીય  
અંઈવ ઉવસોમેમાણે-તયાણં વણસંડે રમણિજ્જે ભવઈ-” હૈ પ્રદેશિન્ ? વનષણ્ડ  
જવ પત્રાં સે યુક્ત હોતા હૈ-પુષ્પ સમ્પન્ન હોતા હૈ-ફલિત ફલાં સે સહિત હોતા  
હૈ, હરિયાલી સે યુક્ત હોતા હૈ. હરે હરે પત્તે આદિ સે અતિશય સુહાવના  
હોતા હૈ તવ વનષણ્ડ અપની શાભાસે સુશોભિત હોતા હુવા રમણીય હોતા હૈ,

રમણીય ભવિત્તા પચ્છા અરમણિજ્જે ભવિજ્જાસિ” હે પ્રદેશિન્ ! તમે પહેલાં રમ-  
ણીય થઈને પછી અરમણીય બનશો નહિ, એટલે કે ધાર્મિક થઈને અધાર્મિક બનશો  
નહિ, “જહા સે વણસંડેઝવા ણટ્ટસરલાઝવા ઇક્ષુવાડણવા ખલ ગાડણવા” જેમ પહેલાં  
રમણીય થઈને વનખંડ પછી અરમણીય થઈ જાય છે. અથવા નાટ્યશાળા કે ઇક્ષુ-  
પીડનસ્થાન કે ઇક્ષનાટક પહેલા રમણીય થઈને પછી અરમણીય થઈ જાય છે. હવે  
પ્રદેશી પ્રશ્ન કરે છે-“કહં મંતે ! વણસંડે પુષ્પિ રમણિજ્જે ભવિત્તા પચ્છા  
અરમણિજ્જે ભવઈ” હે ભદન્ત ! વનખંડ પહેલા રમણીય થઈને પછી અરમણીય કઈ  
રીતે થઈ જાય છે ૩, ઉત્તરમાં કહે છે “પણસી જહાણં વણસંડે પત્તિય પુષ્પિય  
ફલિય હરિય હરિયગરેરિજ્જમાણે સિરીય અંઈવ ઉવસોમેમાણે તયાણ વણ-  
સંડે રમણિજ્જે ભવઈ” હે પ્રદેશિન્ વનખંડ જ્યારે પત્રોથી યુક્ત હોય છે, પુષ્પ  
સંપન્ન હોય છે, ફળ યુક્ત હોય છે. હરીતિમાથી યુક્ત હોય છે તેમજ લીલા પાંદ-  
ડાઓ વગેરેથી આ અતિશય સોહામણો હોય છે, ત્યારે તે વનખંડ પોતાની શોભાથી  
સુશોભિત થતો રમણીય હોય છે. એટલે કે આ પ્રમાણે વનખંડ રમણીય કહેવાય છે.

વનપણ્ડા નો પત્રિતો નો પુષ્પિતો નો ફલિતો નો હરિતઃ નો હરિતઃ-રાજ્યમાના નો શ્રિયા અતીવ ઉપશોભમાનઃ તિષ્ઠતિ, યદા સ્વલુ જીર્ણઃ શન્નઃ પરિશટિત પાણ્ડુપત્રઃ શુષ્કવૃક્ષ ઇવ સ્લાયન તિષ્ઠતિ તદા સ્વલુ વનપણ્ડા નો સ્વલુ રમણીયો ભવતિ ।

યદા સ્વલુ નાટ્યશાલાઽપિ ગીયતે વાદ્યતે નર્ત્યતે હસ્યતે રમ્યતે તદા સ્વલુ નાટ્યશાલા રમણીયા ભવતિ, યદા સ્વલુ નાટ્યશાલા નો ગીયતે યાવત્ નો રમ્યતે તદા સ્વલુ નાટ્યશાલા અરમણીયા ભવતિ ।

અર્થાત્-ઇસ પ્રકાર સે વનપણ્ડ રમણીય કહા જાતા હૈ. જયાળં વળસંડે નો પત્તિ-નો પુષ્પિ-નો ફલિ-નો હરિ-નો હરિયગરેરિજ્જમાણે, ણો સિરી-અર્ધ ઉવ સોમમાણે ચિટ્ઠ-પરન્તુ-જવ વહી વનપણ્ડ પત્રિત (પત્રવાલા) નહીં રહતા હૈ. પુષ્પિત (પુષ્પવાલા) નહીં રહતા હૈ-ફલિત નહીં રહતા હૈ-હરા નહીં રહતા હૈ, એવં-હરે-૨ પત્તાં આદિસે અતિશય સુહાવના નહીં રહતા હૈ, તવ અપની શોભા સે રહિત હો જાતા હૈ, તથા-“જયાળં જુન્ને ફડે પહિસહિયપંડુપત્તે સુક્કરુક્ષે ઇવ મિલાયમાણે ચિટ્ઠ-” જવ વહી વન જીર્ણ પત્રાદિકોં સે રહિત હો જાતા હૈ, પત્તે આદિ સવ જવ ફર જાતે હૈ, વિકૃત પાણ્ડુવર્ણવાલે પત્ર જવ ઉસમેં હો જાતે હૈ, તથા-શુષ્ક વૃક્ષ કી તરહ જવ વહ સ્લાન હો જાતા હૈ. “તયાળ વળસંડે અરમણિજ્જે ભવઈ-” તવ વહ વનપણ્ડ અરમણીય વન જાતા હૈ-? “જયાળં પંડુસાલા વિગિજ્જ-વાહજ્જ-નચ્ચિજ્જ-હસિજ્જ-રમિજ્જ-તયાળં પંડુસાલા રમણિજ્જા ભવઈ-” ઇસી તરહસે-હે પ્રદેશિન્ ? જવ તક નાટ્ય શાલા માનયુક્ત હોતી રહતી હૈ, વાદિત્રોં કી ધ્વનિ સે વાચાલિત હોતી હૈ,

“જયાળં વળસંડે નો પત્તિ-ન’ પુષ્પિ-નો ફલિ-નો હરિ-નો હરિયગરેરિજ્જમાણે, ણો સિરી-અર્ધ ઉવસોમમાણે ચિટ્ઠ-” પણ તેજ વનપંડ જ્યારે પત્રિત રહેતો નથી, પુષ્પિત રહેતો નથી, ફલિત રહેતો નથી, લીલા રહેતો નથી અને લીલા લીલા પાંદડાઓ વગેરેથી અતિશય શોભાયમાન રહેતો નથી ત્યારે તે પોતાની શોભાથી રહિત થઈ જાય છે તથા “જયાળં જુન્ને ફડે પહિસહિયપંડુપત્તે સુક્કરુક્ષે ઇવ મિલાયમાણે ચિટ્ઠ-” જ્યારે તે વન છાંયુપત્રાદિકોથી શુદ્ધ થઈ જાય છે, પાંદડાઓ વગેરે બધા ખરી પડે છે, તેમાં પાંદડાઓ વિકૃત તેમજ પાંડુવર્ણવાળા થઈ જાય છે તેમજ શુષ્ક વૃક્ષની જેમ જ્યારે તે સ્લાન થઈ જાય છે. “તયાળ વળસંડે અરમણિજ્જે ભવઈ” ત્યારે તે વનપંડ અમરણીય થઈ જાય છે. “જયાળં પંડુસાલા વિગિજ્જ-વાહજ્જ-નચ્ચિજ્જ-હસિજ્જ-રમિજ્જ-તયાળં પંડુસાલા રમણિજ્જા ભવઈ” આ પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્, જ્યાં નાટ્યશાળામાં સંગીત ચાલતું રહે છે, તેમાં વાદિત્રો વાગતા રહે છે, તેમાં નાચ થતું રહે છે, પાત્રોના હાસ્યથી જ્યાં સુધી તે સુખાસ્ત થતી રહે છે અને વિવધ

યદા સ્વલુ ઇક્ષુવાટકં છિદ્યતે મિદ્યતે પીડયતે સ્વાદ્યસે પીયતે દીયતે તદા સ્વલુ ઇક્ષુવાટકં રમણીયં ભવતિ, યદા સ્વલુ ઇક્ષુવાટકં નો છિદ્યતે યાવત્ તદા ઇક્ષુવાટકમ્ અરમણીયં ભવતિ ।

યદા સ્વલુ સ્વલવાટકમ્ અવક્ષિપ્યતે મદ્યતે ઉદ્ઘાત્યતે સ્વાદ્યતે દીયતે તદા સ્વલુ સ્વલવાટકં રમણીયં ભવતિ તત્ તેનાર્થેન પ્રદેશિન્ ! એવમુચ્યતે મા સ્વલુ ત્વ

અસમેં નાંચ હોતા રહતા હૈ. પાત્રોં કી હસી સે જવ તક વહ સ્વિલ સ્વિલાતી રહતી હૈ, એવં વિવિધ પ્રકાર કી ક્રીડાઓં કી ક્રીડાસ્થલા બની રહતી હૈ. તવ તક વહ નાટ્યશાલા સુહાવની લગતી હૈ. “જયાણં ણટ્ટસાલા ણા ગિજ્જહ, જાવ-  
ણો રમિજ્જહ, તયાણં ણટ્ટસાલા અરમણિજ્જા ભવહ-૨” ઔર-જવ વહ નાટ્ય-  
શાલા ગીતોં સે રહિત હો જાતી હૈ, વાદિત્રોં કી તુમુલ ધ્વનિ સે વિહીન  
હો જાતી હૈ. યાવત્-વિવિધ પ્રકાર કી ક્રીડાઓં સે વહ શૂન્ય હો જાતી હૈ,  
તવ વહી નાટ્યશાલા અરમણીક હો જાતી હૈ-૨ । “જયાણં ઇક્ષુવાહે છિજ્જહ-  
મિજ્જહ-પીલિજ્જહ-સ્વજ્જહ-પિજ્જહ-દિજ્જહ, તયાણં ઇક્ષુવાહે રમણિજ્જે ભવહ,  
જયાણં ઇક્ષુવાહે ણો-છિજ્જહ-જાવ તયા ઇક્ષુવાહે અરમણિજ્જે ભવહ-૩” ઈસી  
તરહ જવ તક હે પ્રદેશિન્ ? ઇક્ષુ-સેલડી ક્ષેત્રમેં ઇક્ષુ કટતે રહતે હૈં પતે આદિ  
અસમેં દૂર કિયે જાતે રહતે હૈં અન્હેં યન્નદ્વારા પીડિત કર અનકા રસ નિકાલા  
જાતા રહતા હૈ વના દુવા ગુડ વહાં ચખા જાતા રહતા હૈ લોગ વહાં નિકાલે  
દુવે રસ કો પીતે રહતે હૈં, તથા-મિલને જુલને વાલોં કો ઇક્ષુ દિયા જાતા  
રહતા હૈ. તવ તક તો-વહ ઇક્ષુવાટ રમણીય બના રહતા હૈ ઔર જવ તક ઇક્ષુ-

પ્રકારની ક્રીડાઓની તે ક્રીડા સ્થલી રહે છે. ત્યાં સુધી તે નાટ્યશાળા સોહામણી લાગે છે  
“જયાણં ણટ્ટસાલા ણો ગિજ્જહ, જાવ ણો રમિજ્જહ તયાણં ણટ્ટસાલા અરમણિ-  
જ્જા ભવહ ૨” અને જ્યારે નાટ્યશાળા ગીતરહીત થઈ જાય છે, વાદિત્રોની તુમુલ  
તુમુલ ધ્વનિ રહિત થઈ જાય છે યાવત વિવિધ પ્રકારની ક્રીડાઓથી શૂન્ય થઈ જાય  
છે, ત્યારે તે જ નાટ્યશાળા અરમણીક થઈ જાય છે. ૨ “જયાણં ઇક્ષુવાહે છિ  
જ્જહ મિજ્જહ, પીલિજ્જહ સ્વજ્જહ પિજ્જહ, દિજ્જહ, તયાણ ઇક્ષુવાહે રમણિજ્જે ભવહ,  
જયાણં ઇક્ષુવાહે ણો છિજ્જહ જાવ તયા ઇક્ષુવાહે અરમણિજ્જે ભવહ ૩” આ  
પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ ! જ્યાં સુધી ઇક્ષુ શેરડીના ખેતરમાં શેરડી કપાતી રહે છે, પાંદ-  
ડાઓ વગેરેની સાફસૂફી થતી રહે છે, ચંત્રમાં નાખીને તેમાંથી રસ નીકળતો રહે છે,  
તૈયાર થયેલ ગોળ ત્યાં લોકો વડે ચખાતો રહે છે, ત્યાંથી પસાર થતા લોકો શેરડી-  
માંથી નીકળેલો રસ પીતા રહે છે, તથા મળવા માટે આવનારાઓને શેરડી અપાતી  
રહે છે ત્યાંસુધી તો તે ઇક્ષુવાટ રમણીય રહે છે અને જ્યારે તે ઇક્ષુવાટમાં પૂર્વોક્ત

પ્રદેશિન્ ! પૂર્વં રમણીયો ભૂત્વા પશ્ચાદ્ અરમણીયી ભવેઃ યથા વનપ્પંડ ઇતિ વા યાવત્ સ્વલવાટમ્ ઇતિ વા ॥૪૯॥

ટીકા—“તદ્દેશિન્ કેસી કુમારસમણે” ઇત્યાદિ—તતઃ સ્વલુ કેસી કુમારશ્રમણઃ પ્રદેશિરાતમ્ એવમવાદીત—મા સ્વલુ પ્રદેશિન્ ! ત્વં પૂર્વમ્—આદૌ રમણીયઃ—ધાર્મિકો ભૂત્વા પશ્ચાદ્ અરમણીયઃ—અધાર્મિકો મા ભવેઃ, યથા—યેન પ્રકારેણ વનપ્પંડ ઇતિ વા નાટ્યશાલા—નાટ્યભવનમ્ ઇતિ વા ઇક્ષુવાટકમ્—ઇક્ષુપીલનસ્થાનમ્

વાટમેં યે પૂર્વોક્ત સર્વ કામ વન્દ કર દિયે જાતે હૈં,—અર્થાત—ઇન કાર્યોં સે વહ રહિતં વન જાતા હૈ, તવ વહી ઇક્ષુવાટ અરમણીય લગને લગતા હૈ “જયાણં સ્વલવાટે ઉચ્છુભ્મઇ—મલિજ્જઇ ઉઢિજ્જઇ સ્વજ્જઇ—દિજ્જઇ, તયાણ સ્વલવાટે રમણિજ્જે ભવઇ, જયાણં સ્વલવાટે ણો ઉચ્છુભ્મઇ, જાવ—અરમણિજ્જે ભવઇ ૪’ ઇસી પ્રકાર સે હે પ્રદેશિન્—? સ્વલિહાન જવતક ધાન્ય કે ઢેર લગે રહતે હૈં. દાય કળ મર્દન હોતી રહતી હૈ, ઉડાવની હોતી રહતી હૈ, વહીં પર ઉસકી રક્ષાર્થ રક્ષક કે નિમિત્ત લાયા હુવા ભોજન સ્વાયા જા રહ હૈ. દૂસરોં કી વહીં પર જવ તક અનાજ વગેરે દિયા જાતા રહતા હૈ. તવતક તો વહ સ્વલિહાન રમણીય લગતા રહતા હૈ, ઓર—જવ યહ સર્વ કામ હોના ઉમમેં વન્દ હો જાતા હૈ તવ વહ અરમણીય લગને લગતા હૈ—૪ “સે તેણદ્દેણં પણસી—? એવં વુચ્છઇ—મા ણં તુમં પણ—સી? પુલ્લિ સ્મણિજ્જે ભવિત્તા પચ્છા—અરણિજ્જે ભવિજ્જાસિ જહા વણસંડે વા જાવ સ્વલવાટેહ વા—” ઇસી લિયે હે પ્રદેશિન્—? મૈને એસા કહા હૈ કિ—તુમ પહેલે રમણીય હોકર અરમણીય મત વન જાવો, જૈસે—કિ વનપ્પંડ યાવત્ સ્વલવાટ હો જતે હૈ—

બધી ક્રિયાઓ બંધ થઇ જાય છે ત્યારે તે ઇક્ષુવાટ અરમણીય લાગવા માંડે છે. “જયાણં સ્વલવાટે ઉચ્છુભ્મઇ—મલિજ્જઇ, ઉઢિજ્જઇ, સ્વજ્જઇ, દિજ્જઇ, તયાણ સ્વલવાટે રમણિજ્જે ભવઇ, જયાણં સ્વલવાટે ણો ઉચ્છુભ્મઇ, જાવ—અરમણિજ્જે ભવઇ ૪’ આ પ્રમાણે હે પ્રદેશિન્ ! બળામાં જ્યાં સુધી ધાન્યના ઢગલાઓ રહે છે, કણસલાં ગુંદીને અનાજ કઢાતું રહે છે, અનાજ ઉપણાતું રહે છે, ત્યાંના રજેવાળ માટે ત્યાં પહોંચાડેલું લોજન જમાતું રહે છે, બીજાઓને ત્યાં જ્યાં લગી અનાજ વગેરે અપાતાં રહે છે ત્યાં સુધી તે બળું રમણીય લાગે છે. અને જ્યારે આ બધું કામ બંધ થઇ જાય છે, ત્યારે તે અરમણીય લાગવા માંડે છે. ૪ “સે તેણદ્દેણં પણસી ! એવં વુચ્છઇ—મા ણં તુમં પણસી ! પુલ્લ સ્મણિજ્જે ભવિત્તા પચ્છા—અરમણિજ્જે ભવિજ્જાસિ જહા વણસંડેહ વા જાવ સ્વલવાટેહ વા” એટલા માટે હે પ્રદેશિન્ ! મેં આમ કહ્યું છે કે તમે પહેલાં રમણીય થઇને પછી અરમણીય બનશો નહિ. જેવી રીતે વનપ્પંડ યાવત્ બળું થઇ જાય છે.

इति वा खलवाटकम् इति वा पूर्वं रमणीयं भूत्वा पश्चादरमणीयं भवतीति ! तत्र प्रदेशी पृच्छति—हे भदन्त ! कथं—केन प्रकारेण वनषण्डः पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चादरमणीयो भवति ? । एवं नाट्यशालेक्षुवाट—खलवाटविषयेऽपि प्रश्नयोजना कर्तव्या । तत्र क्रमेण तेषां रमणीयत्वारमणीयत्वे प्रदर्शयितुं केशी प्राह—‘पएसी’ इत्यादि—हे प्रदेशिन ! यथा वनषण्डः पत्रितः—पत्रसम्पन्नः, पुष्पितः—पुष्पसम्पन्नः फलितः—फलसम्पन्नः, हरितः—हरितत्वसम्पन्नः हरितकराराज्यमानः—हरितवर्णं पत्रपल्लवादिभिरतिशयेन शोभमानः, अतएव श्रिया—शोभया, अतीव—अत्यन्तम् उपशोभमानः—शोभां प्राप्नुवन् यदा तिष्ठति—वर्तते, तदा—तस्मिन् काले च स वनषण्डो नो पत्रितः नो पुष्पितः नो फलितः नो हरितः नो हरितकराराज्यमानः अतएव नो श्रियाऽतीवोपशोभमानो भवति, यदा च जीर्णः—जीर्णपत्र पल्लवादियुक्तः शन्नः—प्रपतितपत्रादिकः, अत्र शब्दो झडादेशः, परिशदितपाण्डुपत्रः—विकृतपाण्डुवर्णपत्रयुक्तः शुष्कवृक्ष इव म्लायन्—म्लानतां गच्छन् सन् तिष्ठते, तदा खलु वनषण्डो नो रमणीयो भवति ? । प्रदेशी पृच्छति—हे भदन्त ! नाट्यशाला कथं रमणीया भूत्वा चारमणीया भवति ? केशी प्राह—हे प्रदेशिन ! यदा खलु नाट्यशालाऽपि गीयते—गानयुक्ता भवति वाद्यते—वाद्यवादनयुक्ता भवति नृत्यते—नृत्ययुक्ता भवति, हस्यते—हास्ययुक्ता भवति, रम्यते—क्रीडनयुक्ता भवति, तदा खलु सा रमणीया भवति, यदा खलु नो गीयते—यावत् नो वाद्यते ना नृत्यते नो हस्यते नो रम्यते, तदा खलु सा अरमणीया भवति २ ।

अश्लेषुवाटविषयकप्रश्ने केशी प्राह—हे प्रदेशिन ! यदा खलु इक्षुवाटम् इक्षुक्षेत्रे इक्षुः छिद्यते—द्विधा क्रियते, भिद्यते—विदार्यते, पीड्यते—यन्त्रेण रसो निःसार्यते, खाद्यते—गुडादिकम्, पीयते—रसः, दीयते—इक्ष्वादिकं, तदा खलु इक्षुवाटं रमणीयं भवति । यदा खलु इक्षुवाटं नो छिद्यते यावत् नो पीड्यते नो खाद्यते नो पीयते नो दीयते, तदा इक्षुवाटम् अरमणीयं भवति । ३ ।

टीकार्थ—स्पष्ट है, “झडे” यहाँपर शब्द के स्थान में झड आदेश हुआ है. संस्कृत में इस की छाया “शन्नः” ऐसी होती है । केशीने—इस सूत्र द्वारा प्रदेशी राजा को पहिले रमणीय होकर अरमणीय बन जाने वाले वनषण्ड आदि-चार को दृष्टान्तरूप में रखकर यह समझाया है कि—तुम ऐसे मत बन जाना. ॥१५९॥

टीकार्थ—स्पष्ट है. ‘झड’ अर्थात् ‘शब्द’ना स्थाने ‘झड’ आदेश थये छे. संस्कृत भां ओनी छाया ‘शन्न’ छेय छे. केशीओ आ सूत्र वडे प्रदेशी राजाने पड़ेलां रमणीय थछने पछी अरमणीय थछ जनारां वनषण्ड वगेरेने दृष्टान्त रूपभां आपीने आ समझववाभां आय्यु छे के तमे ओवा थशे नडि. ॥सू. १५९॥

अथ खलवाटविषयग्रन्थे केशी ग्राह-हे प्रदेशिन ! तदा खलु खलवाटं  
सस्यकणमर्दनपरिष्करणस्थानम् तत्र धान्यम्-अवक्षिप्यते-पुञ्जीक्रियते, मर्द्यते-बली-  
वर्दीदिभिः, उड्ढायते-पचने पूते, खाद्यते, दीयते तदा खलु खलवाटं रमणीयं  
भवति । तदा खलु नो अवक्षिप्यते यावत् नो मर्द्यते नो उड्ढायते, नो खाद्यते  
नो दीयते तदा अरमणीयं भवति ४ । तत् हे प्रदेशिन ! तेन-वनपण्डादि  
दृष्टान्तरूपेण अर्थेन एवम् उच्यते-कथ्यते-यत् हे प्रदेशिन ! त्वं पूर्वं रमणीयो  
भूत्वा पश्चादरमणीयो ना भवेः, यथा वनपण्ड इति वा यावत्-नाट शालेति वा  
इक्षुवाटम् इति वा खलवाटम् इति वा ॥मृ. १५९॥

मूलम्--तए णं पएसी केसिं कुमारसमणं एवं वयासी-णो  
खलु भंते ! अहं पुट्ठिव रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणीज्जे भवि-  
स्सामि जहा वणसंडेइ वा जाव खलवाडेइ वा, अहं सेयविशा  
नयरीपमुक्खाइं सत्त ग्रामसहस्ताइं चत्तारि भागे करिस्सामि, एगं  
भागं बलवाहनस्स दलइस्सामि, एगं भागं कुट्ठागारे लुभिसिन्नामि,  
एगं भागं अंतेउरस्स दलइस्सामि, एगेणं भागेणं महइमहालयं  
कूडागारसालं करिस्सामि, तत्थ णं बहूहिं पुरिसेहिं दिन्नभइभत्त-  
वेयणेहिं विउलं असणं पाणं खाइमं उवक्खडावेत्ता बहूणं समण-  
माहणभिव्खुयागं पंथियवहियाणं परिभाएमाणे बहूहिं सीलव्वयगुण-  
व्वयवेरमणव्वयपच्चक्खणपोसहोववामेहिं अप्पाणं भावेमाणे वि-  
हरिस्सामित्ति कट्ठुं जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।  
॥ सू० १६० ॥

छाया--ततः खलु प्रदेशी केशिनं कुमारश्चमणम् एवमवादीत्-नो खलु  
भदन्त ! अहं पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चादरमणीयो भविष्यामि, यथा वनपण्ड  
इति वा यावत् खलवाटमिति वा, अहं खलु श्वेतविकानगरी प्रमुखानि सप्त  
ग्रामसहस्राणि चतुरो भागान् करिष्यामि, एकं भागं बलवाहनस्य दास्यामि, एकं  
भागं कोष्ठागारे क्षेप्यामि, एकं भागमन्तःपुराय दास्यामि, एकेन भागेन महा-  
जतिमहालयां कूटाऽऽकारशालां करिष्यामि, तत्र खलु बहुभिः पुरुषैः दत्तभृतिभक्त-



“तए णं पएसी के-सिं” इत्यादि ॥१६० सूत्रा॥

सूत्रार्थ—‘तएणं’ इसके बाद ‘पएसी’ प्रदेशी राजाने—“केसिं कुमारसमणं एवं वयासी—” केशीकुमारश्रमण से ऐसा कहा—“णो खलु भन्ते? अहं पुब्बि रमणिज्जे भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविस्सामि जहा वणसंडेइ वा जाव-खलवाडेइ वा—” हे भदन्त! मैं पहले रमणीय होकर अब वनषण्ड, अथवा यावत् खलवाट सेलडीका खेत की तरह अरमणीय नहीं बनूंगा. “अहं सेयंविया नयरी पमुक्खाइं सत्त गामसहस्साइं चत्तारिभागे करिस्सामि—” मैं श्वेतांबिका नगरी प्रमुख सातहजार ग्रामों को चार विभागों में विभक्त करूंगा. “एकं भागं बलवाहणस्स दलइस्सामि—” इन में से एक भाग तो बल-और वाहन के लिये दूंगा. “एगे भागे कुट्टागारे छुमिस्सामि—” दूसरा भाग कूटागार में प्रजापालन के लिये रखूंगा. “एगं भागं अंतेउरस्स दलइस्सामि—” एक भाग को तीसरेको मैं अन्तःपुर रक्षा के लिये दूंगा. “एगेणं-भागेणं महइमहालयं कूडागारसालं करिस्सामि—” एक भाग से चौथे से मैं एक बहूत ही विशाल कूटागारशाला बनवाऊंगा—“तत्थ णं वहुहिं पुरिसेहिं दिन्नभइभत्तवेयणेहिं विउल असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेत्ता वहुणं समण-मारहण-भिकखुयाणं पंथिय पहियाणं परिभाएमाणे—” उसमें जनेक पुरुषों को सवेतनिक रूपमें रखूंगा.

“तए णं पएसी केसिं ” इत्यादि ॥१६०॥

सूत्रार्थ—‘तए णं’ त्थार पछी ‘पएसी’ प्रदेशी राजाने ‘केसिं कुमारसमणं एवं वयासी’ केशी कुमार श्रमणने आ प्रमाणे कलुं. “णो खलु भन्ते! अहं पुब्बि रमणिज्ज भवित्ता पच्छा अरमणिज्जे भविस्सामि जहा वणसंडेइ वा जाव खलवाडेइ वा” हे भदन्त! हुं पहले रमणीय थछने हुवे वनषण्ड के यावत् भणानी जेभ अरमणीय थछथ नहिं. “अहं सेयंविया नयरी पमुक्खाइं सत्तगामसह-स्साइं चत्तारि भागे करिस्सामि” हुं श्वेतविका नगरी प्रमुख सात हजार गाओने चार भागोभां विभाजित करीथ, “एकं भागं बलवाहणस्स दलइस्सामि” आभांथी जेक भाग बल (सेना) अने वाहन भाटे आपीथ. “एगे भागे कुट्टागारे छुमिस्सामि” थीने भाग कूटागारभां प्रज पालन भाटे बुद्धे राणीथ. “एगं भागं अंतेउरस्स दलइस्सामि” त्रीन जेक भागने हुं अन्तःपुरनी रक्षा भाटे आपीथ. “एगेणं भागेणं महइमहालयं कूडागारसालं करिस्सामि” चौथा जेक भागथी हुं जेक विशाल कूटागार शाला बनावडावीथ. “तत्थ णं वहुहिं पुरिसेहिं दिन्नभइभत्त-वेयणेहिं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेत्ता वहुणं समणमारहण-भिकखुयाणं पंथियपहियाणं परिभाएमाणे” तेभां धण्ण पुरुषोने हुं पगार आपीने नीभीथ. तेजो त्यांज जभशे. ते भाणुसो पासेथी हुं विपुल मात्राभां अशन-पान-



વેતનૈઃ વિપુલમ્ અશનં પાનં સ્વાદિમં સ્વાદિમમ્ ઉપસ્કાર્યં વહુભ્યઃ શ્રમણ વ્રાહ્મણ-  
મિશ્નુકેભ્યઃ પથિકપ્રાધુણેભ્યઃ પરિભાજયન્ વહુભિઃ શીલવ્રતગુણવ્રતવિરમણવ્રત-  
પ્રત્યાખ્યાનપૌષ્ઠોપવાસૈઃ આત્માનં ભાવયમાનો વિહરિષ્યામિ, इति कृत्वा यामेव  
दिशं प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः ॥सू. १६०॥

टीका—“तए णं पएसी” इत्यादि—ततः खलु प्रदेशी राजा केशिनं  
कुमारश्रमणम् एवमवादीत्—हे भदन्त ! अहं पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चादरमणीयो  
नो भविष्यामि यथा—येन प्रकारेण वनपण्ड इति वा यावत् नाट्यशालेति वा इक्षु-  
वाटमिति वा खलवाटमिति वा, वनपण्डादिवत् पूर्वं रमणीयो भूत्वा पश्चादर-  
मणीयो नो भविष्यामीति, तदेव स्पष्टयति अहं खलु श्वेतां विकानगरी प्रमुखानि  
सप्त ग्रामसहस्राणि-सप्त सहस्रपरिमितग्रामान् चतुर्णे भागान्-चतुर्धा विभक्तान्

वही वे भोजन करेंगे, उनसे मैं विपुल मात्रा में अशन-पान-स्वादिम-स्वादिम रूप चारों  
प्रकारके आहार को तैयार कराऊंगा फिर—अनेक श्रमण माहण मिश्रुकों के लिये.  
तथा पथिकरूप प्राधूर्णिकों के (अतिथिविशेष) लिये उस आहार को देता  
हुवा, एवं—‘वहूहिं शीलव्ययगुणव्यवेरमणव्ययपच्चक्खाण पोसहोववासेहिं अप्पाणं  
भावेमाणे विहरिस्सामि त्ति कड्डु जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए—’  
अनेकशीलव्रतों से गुणव्रतों से प्रत्याख्यान और-पौषधोपवासों से आत्मा को मैं वासित  
करता हूँ. इस प्रकार कह कर वह प्रदेशी राजा जिस दिशा से आया था-  
उसी दिशा को चला गया.

टीकार्थ—स्पष्ट है प्रदेशी राजाने जो इस सूत्र द्वारा अपना अभिप्राय  
प्रकटित किया है वह में वनपण्डादि कों की तरह पूर्वमें रमणीय होकर अरम-  
णीय नहीं होने की पुष्टि के निमित्त प्रगट किया है इसी बात की पुष्टि अपने  
सात हजार ग्रामों को चार विभागों में विभक्त करने की है. इसमें एक-२

આદિમ-સ્વાદીમરૂપ ચારે પ્રકારના આહારો તૈયાર કરાવડાવીશ. પછી ઘણા શ્રમણ  
માહણ મિશ્નુકો માટે તેમજ પથિકરૂપ પ્રાધૂર્ણિકોને તે આહાર આપતો. એવં વહૂહિં  
સીલવ્યયગુણવ્યવેરમણવ્યયપચ્ચક્ખાણપોસહોવવાસેહિં અપ્પાણં ભાવેમાણે  
વિહરિસ્સામિ ત્તિ કડ્ડુ જામેવ દિસં પાઉબ્ભૂએ તામેવ દિસં પડિગએ” ઘણા શીલ-  
વ્રતેથી ગુણવ્રતોથી, પ્રત્યાખ્યાન અને પૌષધોપવાસોથી આત્માને હું વાસિત કરતો  
રહીશ. આ પ્રમાણે કહીને પ્રદેશી રાજા જે દિશા તરફથી આવ્યો હતો તે દિશા-  
એથી જ જતો રહ્યો.

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ જ છે. પ્રદેશી રાજાએ આ સૂત્રવડે જે પોતાને અભિપ્રાય પ્રકટ  
કર્યો છે તે વનપંડ જેમ પહેલાં રમણીય થઈને પછી અરમણીય થઈ જાય છે તેમ  
તે થશે નહિ એ વાતને સ્પષ્ટ કરવામાં આવી છે. પોતાના સાત હજાર ગામોને ચાર  
ભાગોમાં જે રાજાએ વિભાજિત કર્યા છે તે પણ એ વાતને જ પુષ્ટ કરે છે એમાં

करिष्यामि, तत्र भागान् इत्यत्र 'भज्यन्त इति भागाः' इति कर्मव्युत्पत्तिर्विध्या, भावव्युत्पत्त्या तु कर्मणि षष्ठ्यापत्तिः स्यात् । तेषु चतुर्षु भागेषु एकं भागं पादोनसहस्रद्वयरूपं बलवाहनाय-तत्र बलाय-सैन्याय-वाहनाय-हस्त्यश्वाद्यर्थं दास्यामि १, एकं-द्वितीयं भागं कोष्ठागारे-प्रजापालनाय कोशे क्षेप्यामि २, मूले क्षिपे श्लुभादेशः, एकं-तृतीयं भागम् अन्तः पुराय-अन्तःपुररक्षणाय दास्यामि ३, चतुर्थेन भागेन महातिमहालयाम्-अतिमहतीं-परमविशालाम्, कूटाऽऽकारशालां करिष्यामि, तत्र कूटाऽऽकारशालायां बहुभिः-बहुसंख्यैः पुरुषैः, कीदृशैः ? दत्त-भृतिभक्तवेतनैः-दत्ताः भृतयो-जीविकाः, भक्तानि-आहाराः, वेतनानि-मासिक वृत्तयश्च येभ्यस्ते दत्तभृतिभक्तवेतनास्तैः पुरुषैरिति सम्बन्धः, विपुलं-प्रचुरम् अशनं पानं खादिमं स्वादिमम्' इति चतुर्विधाऽऽहारम् उपस्कार्य-सम्पादय बहुभ्यः श्रमण-ब्राह्मणभिक्षुकेभ्यः, तथा-पथिकप्राघुणेभ्यः-पथिकरूपाः प्राघुणाः पथिकप्राघुणाः, न तु सम्बन्धमाश्रित्य प्राघुणाः, तेभ्यः, परिभाजयन्-ददत्, बहुभिः शीलव्रत-गुणव्रत-विरमणव्रत-प्रत्याख्यान-पोषधोपवासैः आत्मानं भावयमानो विहरिष्यामि, इति कृत्वा-इति कथयित्वा यामेव दिशं समाश्रित्य प्रादुर्भूतः तामेव दिशं प्रतिगतः । ॥सू० १६०॥

भाग में पाते दो-दो हजार ग्राम आते हैं । सैन्यका नाम-बल, और हस्ती अश्व आदिका नाम वाहन है । प्रजाओं की अच्छी तरह से पालन हो इस अभिप्राय से उसने एक भाग कोश-भण्डार में रखदिया "छुमिस्सामि" की संस्कृत छाया "क्षेप्यामि" है क्षिप् को प्राकृत में छुभादेश हुआ है. भृति शब्द का अर्थ जीविका. भक्त शब्द का अर्थ आहार एवं-वेतन शब्द का अर्थ पगार है । पथिक प्रघूर्ण से पथिकरूप से प्राघुण लिये गये हैं नकि-सम्बन्ध को आश्रित करके प्राघूर्ण लिये गये हैं ॥सू० १६०॥

दरेके दरेक बिलागमां पोण्ण जे-जे हजार ग्राम छे. सैन्यतुं नाम जल अने छाथी धोडा वगेरेतुं नाम वाहन छे. प्रजातुं सारी रीते पालन थछ शके तेटला भाटे तेण्णे ओक लाग कोश-भंडारमां भूकथे छे. "छुमिस्सामि" नी संस्कृत छाया "क्षेप्यामि" छे. क्षिप् ने प्राकृतमां छुभादेश थये छे. भृति शब्दने अर्थ जीविका लकत शब्दने अर्थ आहार अने वेतन शब्दने अर्थ पगार छे. पथिक प्राघूर्ण- (अतिथिइय भडेमान)थी पथिकइयथी प्राघूर्ण (भडेमान) देवामां आव्यां छे. संबंधने आश्रित करीने प्राघूर्ण देवामां आव्यां नथी. ॥सू. १६०॥

मूलम्—तए णं से पएसी राया कल्लं जाव तेयसा जलंते सेयावि पामोकखाइं सत्त गामसहस्साइं चत्तारि भाए कीरइ, एगं भागं वल-वाहणस्स दलयइ जाव कूडागारसालं करेइ, तत्थ णं वहू हिं पुरिसे हिं जाव उवक्खडावेत्ता वहूणं समण० जाव परिभाएमाणे विहरइ ।

तए णं से पएसी राया समणोवासए जाए अभिगयजीवा-जीवे जाव विहरइ, जप्पभिइं च णं पएसी राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च रट्टुं च वलं च वाहणं च कोसं च कोट्टा-गारं च पुरं च अंतेउरं च जणवयं च अणाढायमाणे यावि विहरइ । ॥ सू० १६१ ॥

छाया—ततः खलु स प्रदेशी राजा कल्यं यावत् तेजसा ज्वलति श्वेतां-विकाप्रमुखानि सप्त ग्रामसहस्राणि चतुरो भागान् करोति, एकं भागं वलवाहनाय ददाति यावत् कूटाऽऽकारशालां करोति, तत्र खलु बहुभिः पुरुषैः यावत् उप-स्कार्यं बहुभ्यः श्रमण० यावत् परिभाजयन् विहरति ।

“तए णं पएसी राया—” इत्यादि ।

सूत्रार्थ—“तएणं” इसके बाद “पएसी” राया “कल्लं” प्रदेशी राजाने दूसरे ही दिन “जाव तेयसा जलंते—” यावत् तेजसे सूर्य प्रकाशित होजाने पर “सेयंविआ पामोकखाइं सत्तगामसहस्साइं चत्तारि भाए कीरइ—” श्वेतांविका प्रमुख सातहजार ग्रामों को चार विभागों में विभाजित कर दिया. “एगे भागे वलवाहणस्स दलयइ” इनमें एक भाग वलवाहन के लिये वितरण करदिया. “जाव-कूडागार सालं करेइ—” यावत् चतुर्भाग कूटागारशाला को बनवाने के निमित्त दे दिया. “तत्थ णं वहूहिं पुरिसे हिं जाव-उवक्खडावेत्ता वहूणं समण० जाव परिभाए माणे विहरइ—” जब

“तएणं पएसी राया” इत्यादि

सूत्रार्थ—“तएणं” त्थार णाद्ध (पएसी राया कल्लं) प्रदेशी राजाने जीन्हा दिवसे जाव तेयसा जलं ते’ यावत् तेजसी न्यारे सूर्य प्रकाशित थछ गये। त्थारे “सेयंविआ पामोकखाइं सत्तगामसहस्साइं चत्तारि भाए कीरइ” श्वेतांभिका प्रमुख सात हजार गांभाने चार भागोभां वळेथी नाज्या. “एगे भागे वलवाहण स्स दलयइ” आभां अेक भाग-वल-वाहन भाटे आंथे. “जाव कूडागाःसालं करेइ” यावत् थोथे भाग कूटागारशालां बनाववा भाटे आंथे. “तत्थ वहूहिं पुरिसेहिं जाव उवक्खडावेत्ता वहूणं समण० जाव परिभाएमाणे विहरइ”

ततः खलु स प्रदेशी राजा श्रमणोपासको जातः अभिगत-जीवाजीवः यावद् विहरति, यत्प्रभृति च खलु प्रदेशी राजा श्रमणोपासको जातः, तत्प्रभृति च खलु राज्यं च राष्ट्रं च बलं च वाहनं च कोशं च कोष्ठागारं च अन्तःपुरं च जनपदं च अनाद्रि-माणश्चापि विहरति । ॥सू० १६१॥

टीका—“तए णं से पएसी” इत्यादि-ततः खलु स प्रदेशी राजा कल्पं यावत् एकोनपट्यधिकैकशततम १५९ सूत्रोक्तपाठानुसारेण सूर्ये तेजसा-दीप्त्या ज्वलति-काशमाने सति श्वेतांगिकाप्रमुखानि सप्त ग्रामसहस्राणि-ग्रामाणां सप्त कूटागार शाला वनकर तैयार हो गई तब उसमें उसने अनेक पुरुषों द्वारा यावत् चारों प्रकार का अशन-आहार निष्पन्न कराकर उससे अनेक श्रमणादि जनोंको प्रतिलाभित करता था याने देता था “तएणं से पएसी गया समणोवासए जाए अभि-गयजीवाजीवे जाव विहरइ—” इसके बाद वह प्रदेशी राजा श्रमणोपासक हो गया. जीव तरा और-अजीव तत्त्व के स्वरूप का भलीभांति से ज्ञाता बन गया. इत्यादि. जप्पमिइं च णं पएसी राया समणोवासए जाए तप्पमियं च णं रज्जं च रट्ठं च बलं च वाहणं च-कोसं च-कोष्ठागारं च-पुरं च अंतोउरं च जणवयं च अणा-ढायमाणे यावि विहरइ—” अब वह प्रदेशी राजा जिस दिन से श्रमणोपासक बना. उसी दिन से अपने राज्य के प्रति. राष्ट्र के प्रति बल के प्रति. वाहन के प्रति, कोष के प्रति, कोष्ठागार के प्रति अंतःपुर के प्रति और जनपद के प्रति उपेक्षाभाव धावण कर लिया. इस सूत्र का टीकार्थ—स्पष्ट है. यहां यावत्पद से—“कल्लं जाव” के इस यावत् पदसे १५९ वें सूत्र है जो पाठ इसके विषय में

न्याये कूटागारशाला तैयार थछ गछ त्यारे तेमां तेणु धण्णा पुइधो वडे यावत् त्यारे जातने। अशन आहु रणनाव । ०या अने तेनाथी धण्णा श्रमणु वगेरेने प्रतिलाभित कर्था. “तए णं से पएसी राया समणोवासए जाव अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ” त्यार पछी ते प्रदेशी राजा श्रमणोपासक थछ गयो. ज्वलत्त्व अने अज्वलत्त्वना स्वइपने। सारी रीते ज्ञाता थछ गयो वगेर. “जप्पमिइं च णं पएसी राया समणो-वासए जाए तप्पमियं च णं रज्जं च रट्ठं च, बलं च वाहणं च, कोसं च, कोष्ठागारं च, पुरं अंतोउरं च, जणवयं च अणाढायमाणे यावि विहरइ” डवे ते प्रदेशी राजाये जे द्विसथी श्रमणोपासक थयो, तेज द्विसथी पोताना राजय तरइ, राष्ट्र तरइ, सेना तरइ, वाहन तरइ, लंडार (कोष) तरइ कोष्ठागार प्रति, अंतःपुर प्रति अने जनपद प्रति उपेक्षा लाव धारणु करी लीधो.

टीकार्थ-आ सूत्रने स्पष्ट न छे. अड्ठी यावत् पदथी “कल्लं जाव” ना आ यावत् पदथी १५८ मा सूत्रमां जे पाठ अना विषे गृहीत थयो छे त जाणुवो.

સહસ્રાણિ ચતુરો ભાગાન્—ચતુર્ધા વિભક્ત.નિ કરોતિ, કૃત્વા તેષુ ચતુર્ણુ ભાગેષુ  
 એક-પ્રથમ ભાગ વલંવાહનાય દદાતિ, દ્વિપૃથ્વિકશતતમમ્સૂત્રોક્તાનુસારેણ કૂટા-  
 ઽઽકારશાલાં કરોતિ । તત્ર સ્વલુ વહુભિઃ પુરુષૈઃ યાવત્ ઉપસ્કાર્ય વહુભ્યઃ શ્રમણ-  
 યાવત્ દ્વિપૃથ્વિકૈકશતતમમ્સૂત્રોક્તાનુસારેણ શ્રમણત્રાહ્વણમિદુકેભ્યઃ પથિક-  
 પ્રાધુણેભ્યઃ પરિભાજયન્ વિહરતિ ।

તતઃ સ્વલુ સ પ્રદેશી રાજા શ્રમણોપાસકઃ—શ્રાવકો જાતઃ કીદશઃ ?  
 ઇત્યાહ—અભિગતજીવાજીવઃ ચતુર્દશોત્તરશતતમમ્સૂત્રોક્તવિશેષણવિશિષ્ટો ભૂત્વા વિહ-  
 રતિ । યત્પ્રભૃતિ ચ—યદિનાદારમ્ય સ્વલુ પ્રદેશી રાજા શ્રમણોપાસકો જાતઃ,  
 તત્પ્રભૃતિ—તદિનાદારમ્ય ચ સ્વલુ રાજ્યં—રાષ્ટ્રં, વલં, વાહનં, કોશં, કોષ્ટાગામ્  
 પુરમ્ જનપદં ચ અનાદ્રિયમાણઃ—ઉપેક્ષમાણઃ ચાપિ વિહરતિ ॥સૂ. ૧૬૧॥

મૂલમ્—તણ ણં તીસે સૂરિયકંતાણ દેવીણ ઇમેયારુવે અજ્ઞ-  
 તિણે જાવ સમુપ્પજિત્થા—જપ્પમિહં ચ ણં પણ્ણી રાયા સમણો-  
 વાસણે જાણે તપ્પમિહં ચ ણં રજ્જં ચ રટ્ટં ચ જાવ અંતે ઊરં ચ મમં  
 ચ જણવયં ચ અણાઢાયમાણે વિહરહ, તં સેયં સ્વલુ મે પણ્ણિરાયં  
 કેણવિ સત્થપ્પઓગેણ વા અગ્ગિપ્પઓગેણ વા સંતપ્પઓગેણ વા વિસ-  
 પ્પઓગેણ વા ઉદ્ધવેત્તા સૂરિયકંતં કુમારં રજ્જ ઠવિત્તા સયમેવ રજ્જ-  
 સિરિં કારેમાણીણ પાલેમાણીણ વિહરિત્તણ્ણિ કદ્દું એવં સંપેહેહ, સંપે-  
 હિત્તા સૂરિયકંતં કુમારં સદ્ધાવેહ સદ્ધાવિત્તા એવં વયાસી—જપ્પમિહં  
 ચ ણં પણ્ણી રાયા સમણોવાસણે જાણે તપ્પમિહં ચ ણં રજ્જં ચ જાવ  
 અંતેઊરં ચ જણવય ચ માણુસ્સણ ચ કામભોગે અણાઢાયમાણે વિહ-

કહા ગયા હૈ વહ ગૃહીત કિયા ગયા હૈ “જાવ કૂડાગારસાલં—” મેં આગત  
 યાવત્ પદ સે ૧૬૨ સૂત્ર મેં જો પાઠ કહા ગયા હૈ વહ યહાં ગૃહીત કિયા  
 ગયા હૈ । ઇસી તરહ સે “પુરિસેહિં જાવ—” મેં આગત યાવત્ પદ સે મી ૩૬૨  
 યેં સૂત્ર મેં કથિત ઇસ વિષય કા પાઠ ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ ॥૧૬૧॥

‘જાવ કૂડાગારસાલં’ માં આવેલ યાવત્ પદથી ૧૬૨ માં સૂત્રમાં જે પાઠ છે  
 તેનું અહીં કરવામાં આવ્યું છે. આ પ્રમાણે “પુરિસેહિં જાવ” માં આવેલ યાવત્  
 પદથી ૧૬૨માં સૂત્રમાં કથિત આ વિષે ના પાઠનું અહીં થયું છે. ॥૧૬૧॥

रइ तं सेय खलु तव पुत्ता ! पएसिं रायं केणइ सत्थप्पओगे<sup>१</sup>  
 वा जाव उद्वित्ता सयमेव रज्जसिंरिं कारेमाणस्स पालेमाणस्स  
 विहरित्ताए । तए णं सूरियकंते कुमारे सूरियकंताए देवीए एवं  
 वुत्ते समाणे सूरियकताए देवीए एयमठ्ठं णो आढाइ णो परियाणाइ  
 तुसिणीए संचिट्ठइ, तए णं तीए सूरियकंताए देवीए इमेयारूवे  
 अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—मा णं सूरियकंते कुमारे पएसिस्स  
 रण्णो रहस्सभेयं करिस्सइत्ति कट्हु पएसिस्स रण्णो छिद्दाणि य  
 मम्मणि य रहस्साणिय य विवराणिय अंतराणि य पडिजागरमाणी  
 पडिजागरमाणी विहरइ ॥ सू० १६३॥

छाया—ततः खलु तस्याः सूर्यकान्ताया देव्याः अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः  
 यावत् समुदपद्यत—यत्प्रभृति च खलु प्रदेशी राजा श्रमणोपासको जातस्तत्प्रभृति  
 च खलु राष्ट्रियं च राष्ट्रं च यावत् अन्तःपुरं च मां च जनपदं च अनाद्रियमाणो  
 विहरति, तच्छ्रेयः खलु मे प्रदेशिनं राजानं केनापि शस्त्रप्रयोगेण वा अग्निप्रयो-

“तएणं तीसे सूरियकंताए देवीए” इत्यादि ॥

मूलार्थ—“तए णं—” इसके बाद “तीसे सूरियकंताए देवीए—” उस  
 सूर्यकान्ता देवी को “इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—” यह इस  
 प्रकार का आध्यात्मिक यावत् विचार उत्पन्न हुआ—“जप्पभिइं च णं पएसि राया  
 समणोवासए जाए—” जिस दिन से प्रदेशी राजा श्रमणोपासक हुवे हैं “तप्प-  
 भियं च णं रज्जं च—” उसी दिन से उन्होंने राज्य के प्रति, राष्ट्र के प्रति,  
 यावत् अन्तःपुर के प्रति, तथा—मेरे प्रति, और-जनपद देश के प्रति उपेक्षा

“तएणं तीसे सूरियकंताए देवीए” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तए णं” त्थार पछी “तीसे सूरियकंताए देवीए” ते सूर्यकान्ता  
 देवीने “इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था” आ जातने आध्यात्मिक यावत्  
 विचार उत्पन्न थये. “जप्पभियं च णं पएसि राया समणोवासए जाए” ने हिवस  
 थी प्रदेशी राजा श्रमणोपासक थया छे, “तप्पभियं च णं रज्जं च” ते न हिवस  
 तेमले राज्य प्रति, राष्ट्रना प्रति, यावत् अंतपुर प्रति तेमले भारा प्रति अने  
 जनपद-देशना प्रति उपेक्षा धारण करी लीधी छे. “तं सेयं खलु मे पएसि रायं

गेण वा मन्त्रप्रयोगेण वा विप्रयोगेण वा उपद्रूत्य सूर्यकान्तं कुमारं राज्ये स्थापयित्वा स्वयमेव राज्यश्रियं कारयन्त्याः पालयन्त्या विहर्तुम्, इतिकृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य सूर्यकान्तं कुमारं शब्दयति, शब्दयित्वा एवमवादीत्—यत्प्रभृति च खलु प्रदेशी राजा श्रमणोपासको जातः, तत्प्रभृति च खलु राज्यं च यावत् अन्तःपुरं च खलु जनपदं च मानुष्यकांश्च कामभोगान् अनाद्रियमाणो विहरति धारण कर स्वखा है “तं सेयं खलु मे पएसिं रायं केणवि सत्थप्पओगेण वा—अग्गिप्पओगेण वा—मंतप्पओगेण वा—विसप्पओगेण वा—उद्देत्ता सूरियकंतं कुमारं रज्जे ठवित्ता—” अतः—अब मुझे यही उचित है कि मैं प्रदेशी राजा को किसी अस्त्र के प्रयोग से अथवा—अग्नि के प्रयोग से. मारकर सूर्यकान्त पुत्र को राज्य में स्थापित करके “सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणीए पालेमाणीए विहरित्तए त्ति कड्डु एवं संपेहेइ—” अपने आप स्वयं ही राज्य लक्ष्मी का भोग करती हुई, उसका पालन करती हुई, आनन्द से रहूँ—? इस प्रकार का उसने विचार किया—“संपेहित्ता-सूरियकंतं कुमारं सदावेइ—” ऐसा विचार करके फिर उसने अपने सूर्यकान्त पुत्रको बुलाया. “सदावित्ता एवं वयासी—” बुलाकर उससे ऐसा कहा—“जप्पभिइं च णं पएसिं राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च जाव अंतेउरं च जणवयं च मणुस्सए च कामभोगे अणाढायमाणे विहरइ—जिस दिन से प्रदेशी राजा श्रमणोपासक बने हैं उस दिन से उन्होंने राय की ओर—यावत् अन्तःपुर की ओर-और जनपद की ओर, एवं—मनुष्य भव-

केण वि सत्थप्पओगेण वा अग्गिप्पओगेण वा—मंतप्पओगेण वा विसप्पओगेण वा उद्देत्ता सूरियकंतं कुमारं रज्जे ठवित्ता” अथी भारा भारे हुवे अण्ठथिन छे डे हुं प्रदेशी राजाने कोछ शस्त्रना प्रयोगथी डे अग्निना प्रयोगथी डे मंत्रना प्रयोगथी डे विषना प्रयोगथी भारी नाणीने सूर्यकांत पुत्रने राज्यपालने ऐसाडीने ‘सयमेव रज्जसिरिं कारेमाणीए पालेमाणीए विहरित्तइ त्ति कड्डु एवं संपेहेइ’ पोतेअ राज्य लक्ष्मीने उपलोग करीने तेतुं रक्षण करतां आनंदपूर्वक समय पसार इइं. आ प्रमाणे तेले विचार करीं. “संपेहित्ता सूरियकंतं कुमारं सदावेइ” आ जतने विचार करीने पछी तेले पोताना सूर्यकांत पुत्रने बोलाव्यो. “सदावित्ता एवं वयासी” बोलावीने तेने आ प्रमाणे कहु. “जप्पभिइं च णं पएसिं राया समणोवासए जाए तप्पभिइं च णं रज्जं च जाव अंतेउरं च जणवयं च मणुस्सए च कामभोगे अणाढायमाणे विहरइ” अ द्विसथी प्रदेशी राजा श्रमणोपासक थया छे ते द्विसथी तेमले राज्य तरइ यावत् अंतःपुर तरइ जनपद तरइ, मनुष्यसब संगंधी कामलोगो तरइ ध्यान आपवुं अध करुं छे.



तच्छ्रेयः खलु तव पुत्र ! प्रदेशिनं राजानं केनापि शस्त्रप्रयोगेण वा यावत् उप-  
 ईत्य स्वयमेव राज्यश्रिय कारयतः पालयतो विहर्तुम् । ततः खलु सूर्यकान्तः  
 कुमारः सूर्यकान्तया देव्या एवमुक्तः सन् सूर्यकान्ताया देव्या एतमर्थं नो आद्रि-  
 यते नो परिजानाति तूष्णीकः संतीष्ठते । ततः खलु तस्याः सूर्यकान्तायाः  
 देव्या अयमेतद्रूप आध्यात्मिकः यावत् समुदपद्यत—मा खलु सूर्यकान्तः कुमारः

सम्बन्धी कामभोग की ओर लक्ष्य देना वन्द करदिया है, अर्थात्—इन सब  
 बातों को अब वे आदर की दृष्टि से नहीं देखते हैं “तं सेयं खलु वि  
 पुत्ता ? एसिं रायं केणइ सत्थप्पओगेणं वा जाव उद्दवित्ता सयमेव रज्जसिरीं  
 कारेमाणस्स पालेमाणस्स विहरित्ताए—” अतः—हे पुत्र—अब यही योग्य है कि  
 तुम प्रदेशी राजा को किसी भी शस्त्र के प्रयोग से अथवा अग्निप्रयोग से—यावत्  
 विषय के प्रयोग से मारकर स्वयं राज्यश्री का भोग करो उसका पालन करो  
 ‘तएणं सूरियकंते कुमारे सूरियकंताए देवीए एवं वुत्ते समाणे सूरियकंताए देवीए  
 एयमट्ठं णो आढाइ, णो परियाणाइ तुसिणीए संचिट्ठइ—” इस प्रकार सूर्य  
 कान्ता देवी द्वारा कहे गये सूर्यकान्तकुमारने उसकी इस बात को आदर  
 की दृष्टि से नहीं देखा. और—न तो उसकी उसने अनुमोदना ही की, किन्तु  
 इस बात को सुनकर वह केवल चुपचाप ही रहा—“तएणं तीए सूरियकंताए  
 इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—” इसके बाद उस सूर्यकान्ता देवी  
 को इस प्रकार का यह आध्यात्मिक यावत् संकल्प-विचार उत्पन्न हुआ—“मा णं

એટલે કે તેઓ હવે આ બધી વસ્તુઓને આદરની દ્રષ્ટિએ જોતા નથી. “તં સેયં  
 खलु वि पुत्ता ? एसिं रायं केणइ सत्थप्पओगेणं वा जाव उद्दवित्ता सय-  
 मेव रज्जसिरीं कारेमाणस्स पालेमाणस्स विहरित्ताए” એથી કે પુત્ર ! હવે એજ  
 ઉચિત જણાય છે કે તમે પ્રદેશી રાજાને કોઈ પણ શસ્ત્રના પ્રયોગથી કે યાવત્ વિષ  
 પ્રયોગથી મારી નાખો અને પોતે રાજ્યલક્ષ્મીને ઉપલોગ કરો, તેનું રક્ષણ કરો.  
 “तएणं सूरियकंते कुमारे सूरियकंताए देवीए एवंवुत्ते समाणे सूरिय-  
 कंताए देवीए एयमट्ठं णो आढाइ, णो परियाणाइ, तुसिणीए संचिट्ठइ”  
 આ પ્રમાણે સૂર્યકાન્તા દેવી વડે કહેવાયેલ સૂર્યકાંત કુમારે તેની વાત પ્રત્યે આદર  
 બતાવ્યો નહિ અને તેની વાતની તેણે અનુમોદના પણ કરી નહિ પણ તે તેની  
 સામે મૂંગો થઈને ઉભો જ રહ્યો. “तए णं तीए सूरियकंताए इमेयारूवे  
 अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था” ત્યાર પછી તે સૂર્યકાંતા દેવીને આ બાતનો  
 આધ્યાત્મિક યાવત્ સંકલ્પ-વિચાર ઉત્પન્ન થયો કે “માણં સૂરિયકંતે કુમારે-

प्रदेशिनो राज्ञः इमं रहस्यभेदं करिष्यति, इति कृत्वा प्रदेशिनो राज्ञः छिद्राणि च मर्माणि च रहस्यानि च विवराणि च अन्तराणि च प्रतिजाग्रती प्रतिजाग्रती विहरति ॥ सू० १६२ ॥

टीका—“तए णं तीसे” इत्यादि—ततः खलु तस्याः सूर्यकान्ताया देव्या प्रदेशिराजस्य पट्टराज्या अयमेतद्रूपः—वक्ष्यमाणप्रकारकः आध्यात्मिकः—आत्मगतो विचारः यावत्—यावत्पदेन “चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः” इति संग्राह्यम्, अर्थस्तु पूर्वसूत्रे गतः, समुदपद्यत—संजातः, तदेव दर्शयति—ग्रन्थ-भूते—तदीनादारभ्य च खलु प्रदेशी राजा श्रमणोपासकः—श्रावको जानः, तत्प्रभृति तदीनादारभ्य च खलु : राज्यं—स्वाम्यमात्म—सुदृत्—कोप—राष्ट्र—दुर्ग-स्वरियकंते—कुमारे पणसि स रण्णो रहस्यभेयं करिस्सइ त्ति कटु पणसिस्स रण्णो छिद्राणिय-मम्मणिय-रहस्साणिय-विवराणिय—अंतराणिय पडिजागरमाणी पडिजागर-माणी विहरइ—” सूर्यकान्तकुमार प्रदेशी राजा के पास, अर्थात्—प्रदेशी राजा से मेरी इस मन्त्रणा को प्रकाशित न करदे ? अतः—वह इस विचार से प्रदेशी राजा के छिद्रों को, दोषों को, मर्मों को, कुकृत्त्यरूप लक्षणों को रहस्यों को एकान्तस्थान में सेवित निषिद्ध आचरणों को, विवरों को, निर्जनस्थानों को, और—अवकाश लक्षणरूप अन्तरों को बड़ी सावधानी के साथ बार-बार देखने लगी—अर्थात्—न सब पर वह कड़ी दृष्टि रखने लगी ॥

टीकार्थ—स्पष्ट है. “अज्झत्थिए जाव” में आगत इस यावत् पदसे—चिन्तित कल्पित प्रार्थित मनोगत संकल्प, इन पदों का संग्रह हुवा है। इन विचार के विशेषणों का अर्थ पहले प्रकट किया जा चुका है। “गज्जं च जाव अंतेउरं च—” में आगत यावत् पद से—“वलं वाहनं कोपं कोष्ठागारं

पणसि स रण्णो रहस्यभेयं करिस्सइ त्ति कटु पणसि स रण्णो छिद्राणिय मम्म-णिय रहसाणिय, विवराणिय अंतराणिय पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ” सूर्यकान्त कुमार प्रदेशी राज्यनी पास—ओटवे के प्रदेशी राजने भारी आ वात कही दे नहि ओथी ते प्रदेशी राजना छिद्रोने, दोषोने, मर्मोने, कुकृत्त्यरूप लक्षणोने, रहस्योने, ओकान्त स्थानमां सेवित निषिद्ध आचरणोने, विवरोने, निर्जन स्थानोने अने अवकाश लक्षणरूप अन्तरोंने ओहुण सावधानीपूर्वक बार-बार जेवा लागी. ओटवे के मन्थी दहिलवाले पर दृष्टि राखवा मंडी.

टीकार्थ—स्पष्ट है. “अज्झत्थिए जाव” मां आवेला यावत् पहथी “चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः” आ पदोने संग्रह थये छे, आ पदोने अर्थ पहिले स्पष्ट करवा मां आव्यो छे. “गज्जं च जाव अंतेउरं च” मां आवेला यावत् पहथी

बलरूपेण सप्ताङ्गम् राष्ट्रं—देशं यावत्—यावच्छब्देन ‘बलं—नैन्यं, वाहनं—स्थादि-  
कम्, कोपं—रत्नादिभाण्डागारम्, ‘कोष्ठागारं—वा यथापनगृहम्, पुरं—नगरम्’  
इति संग्राह्यम्, अन्तःपुरम्—अन्तःपुरस्थपरिवारम् च पुनः मां च—तथा  
जनपदं—विजितदेशं च अनाद्रियमाणः—तच्चिन्तामकुर्वाणा विहरति—तिष्ठति, तत्  
तर्हि मे—मम श्रेय—समीचीन खलु प्रदेशिनं राजनं केनापि शस्त्रयोगेण—लज्जा-  
दिप्रयोगेण, वा—अथवा, अग्निप्रयोगेण—अग्निना दाहनरूपेण,—मन्त्रप्रयोगेण—मन्त्र-  
जापरूपेण, वा—अथवा, विषप्रयोगेण—विषप्रदानरूपेण, उपद्रुत्य—मारयि वा सूर्यकान्तं  
सूर्यकान्तनामकं, कुमारं—मम पुत्रं राज्यं स्थापयित्वा सन्निवेश्य स्वयमेव—अहं स्वयं  
राज्यश्रियं—राज्यलक्ष्मीं कारन्त्याः—बलवाहनादिभिः सन्धयन्त्याः, पालयन्त्याः—  
रक्षयन्त्याः विहर्तुं—स्थातुम् । इतिकृत्वा—इति वितर्क्य एव—पूर्वोक्तानु-  
सारेण संप्रेक्षते—निर्धारयति, निर्धार्य सूर्यकान्तं, कुमारं शब्दयति आह्वयति,  
शब्दयित्वा एवमवादीत—यं प्रभृति च खलु प्रदेशी राजा श्रमणोपासको जात-

पुर—’ इति पदों का संग्रह हुवा है । अन्तःपुर शब्द से अन्तःपुरस्थ परिवार  
का ग्रहण किया गया है । तथा—जनपद से विजित देश लिया गया है, इस  
सूत्र का भावार्थ ऐसा है कि—जब सूर्यकान्ता देवीने यह ज्ञान लिया कि प्रदेशी  
राजा श्रमणोपासक बन चुका है, और—अपने बल—वाहन आदि की संभाल  
करने आदि की ओर उसका जैसा ध्यान होना चाहिये अब वैसा नहीं रहा  
है, और न वह मेरी भी अब कुछ चाहना करता है, तब उसके मनमें इस  
को दूर करने के लिये ऐसा विचार उठाकि—जैसे भी बने, चाहे—अग्नि-  
प्रयोग से हो, या शस्त्रादि से हो, अवश्य ही इस प्रदेशी राजा को विनाश  
कर देना चाहिये, तथा—सके स्थान पर सूर्यकान्त पुत्र को स्थापित कर  
देना चाहिये, इसी में अब भलाई है । ऐसा विचार कर उसने पुत्र को बुलाया

“बलं वाहनं कोपं कोष्ठागारं पुरं” आ. पंढरानां स ग्रहं यथोक्तं अन्तःपुरं शब्दं  
अन्तःपुरस्थ परिवारं ग्रहणं यथुं छे. तेभ्यः जनपदं विजितं (स्थितं) देशं अर्थ  
लेवामां आण्ये छे. आ. सूत्रने भावार्थ आ. प्रमाणे छे के न्याये सूर्यकान्ता देवीने  
आ. वात नष्टी लीधी के प्रदेशी राजा श्रमणोपासक थय गये छे अने पोताना बल-  
वाहन वगैरेनी संभाल राखतो नथी अने भारी तरङ्ग पण तेनुं ध्यान नथी ल्यारि  
तेना मनमां ते डांगने हर करवाने विचार छित्पन्न थये के अमेनां ते बीजे अग्नि-  
प्रयोगथी, के शस्त्रादि प्रयोगथी आ. राजने भारी नाअये नोछये तथा तेनी आदी  
थेडेली न्यायपर सूर्यकान्त पुत्रने गादीये जेसाउवे नोछये. आमां न डवे राजयती  
बलाछ छे, आम विचार करीने तेले पुत्रने जालाये. अने पोताना आ. नक्षत्रा

स्तत्कृति च खलु राज्यं च यावत् अन्तःपुरं च जनपदं च तथा मानुष्यकान्-  
 मनुष्यसम्बन्धिनः कामभोगान्-अनाद्रियमाणः-अनादरदृष्ट्या पश्यन् विहरति,  
 तच्छ्रेयः खलु तव हे पुत्र ! प्रदेशिनं राजानं केनापि शस्त्रप्रयोगेण वा यावत्  
 अग्न्यादिप्रयोगेण वा उपद्रुत्य-मारयित्वा स्वयमेव राज्यश्रियं कारयतः पालतो  
 विहर्तुम् । ततः खलु स सूर्यकान्तः कुमारः सूर्यकान्ताया देव्याः स्वमातुः एत-  
 मर्थं नो आद्रियते-कामपि स्वीकृतिचेष्टां न दर्शयति, नो परिजानाति-नानु-  
 मोदयति । तर्हि किं करोति ? इत्याह-तूष्णीकः-किञ्चिदप्यवदन्नेव स तिष्ठते ।  
 ततः खलु तस्याः सूर्यकान्तायाः देव्या अयमेतद्रूपः वक्ष्यमाणप्रकारकः आध्या-  
 त्मिकः-आमगतो विचारः यावत् चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संक-  
 ल्पः समुदपद्यत-समुत्पन्नः, तदेवाऽऽह-सूर्यकान्तः खलु कुमारः प्रदेशिनो राज्ञः  
 समीपे इमं मत्कथितं रहस्यभेदं-गुप्तमन्त्रणाप्रकाशनं मा करिष्यति-मा कुर्यात्,  
 इति कृत्वा-इति विचार्य प्रदेशिनो राज्ञः छिद्राणि-द्रूपणानि, मर्माणि-कुक्ष्य-  
 लक्षणानि, एकान्तस्थानसेवितनिषिद्धाचरणानि, विवराणि-निर्जनस्थानरूपाणि,  
 अन्तराणि-अकाशलक्षणानि प्रतिजाग्रती प्रतिजाग्रती-अन्वेषयन्ती २ विहरति-  
 तिष्ठति ॥सू० १६२॥

मूलम्-तए णं सा सूरियकंता देवी अन्नया कयाइं पएसिस्स  
 रण्णो अंतरं जाणइ असण-पाण-खाइम-साइम-सव्ववत्थगंधमल्ला-  
 लंकारेसु विसप्पओगं पउजइ । पएसिस्स रण्णो ण्हायस्स जाव  
 सुहासणवरगयस्स ते विससंजुत्ते असण-पाण-खाइम-साइम-सव्व-  
 वत्थगंधमल्लांकारे निसिरेइ । तए णं तस्स पएसिस्स रण्णो तं  
 विससंजुत्तं असणं-पाणं-खाइमं-साइमं आहारेमाणस्स समाणस्स

और-अपने इस प्रकार के विचारों को उसे सुनाया, पर उस विचार को पुत्रने  
 अच्छा नहीं समझा. तब-सूर्यकान्ता के हृदय को उस विचारने आलोडित करदिया  
 की-कहीं ऐसा न हो कि मेरे इस विचार को सूर्यकान्त, प्रदेशी राजा से प्रकट  
 कर दे, अतः-वह प्रदेशी राजा के छिद्रादिकों को देखने की ताकमें रहनेलगी.॥३६२

विचारो तेनी साभे स्पष्ट कयां. पथु पुत्रे आ वातने सारी भानी. नहि त्यारे सूर्य-  
 कान्ताना मनमां आ नतने विचार थये के भारी आ वात ये प्रदेशी राजा साभे  
 प्रकट करी देखे तो शुं थये ? ओइला भाटे ते डवे प्रदेशी राजाना छिद्रो वगेरे  
 नेवा लागी. ॥सू. १६२॥

सरीरंसि वेयणा पाउव्भूया उज्जला विउला पगाढो कक्कसा कडुया  
फरुसा निहुँरा चंडा तिब्वा दुक्खा दुग्गा दुरहियासा पित्तज्जरपरिगय-  
सरीरे दाहवक्कते यावि विहरइ ॥ सू० १६३ ॥

छाया—ततः खलु सा सूर्यकान्ता देवी अन्यदा कदाचित् प्रदेशिनो राज्ञः  
अन्तरं जानाति अशन-पान-खादिम-स्वादिम- सर्ववस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेषु विष  
प्रयोगं प्रयुनक्ति, प्रदेशिने राज्ञे स्नाताय यावत् सुखासनवरगताय तान् विषसंयुक्तान्  
अशन-पान-खादिम-स्वादिम-सर्ववस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारान् निसृजति । ततः खलु तस्य

“तएणं सूरियकंतादेवी” इत्यादि—

मूलार्थ—‘तएणं’ इसके बाद ‘सूरियकंतादेवी’ सूर्यकान्तादेवीने ‘अन्नया-  
कयाइ” किसी एकदिन ‘पएसिस्स रण्णो’ प्रदेशी राजाके ‘अंतरं जाणइ’ षष्ठ-  
पारणा के अवसररूप अन्तर को जान लिया और असण-पाणखाइम-साइम  
सर्ववस्त्रगन्धमल्लालंकारेसु विसप्पओगं पउंजइ—” अशन-पान खाद्यरूप आहारों  
में, तथा-वस्त्र-गन्ध-माला अलङ्कारों में विष का संप्रयोग करदिया. पएसिस्स  
रण्णो ण्ह ए जाव सुहासणवरगयस्स ते विससंजुत्ते असण पाण खाइमसाइमसव्व-  
वत्थगंधमल्लालंकारे निसिरेइ—” प्रदेशी राजा जब स्नान करके यावत् सुखदरूप  
श्रेष्ठ आसनपर आसीन था. तब उसके लिये उसने-उन विषसंप्रयुक्त अशन  
पान-खाद्य-स्वाद्यरूप आहार को परोसा. तथा-पहिरने के लिये वस्त्र-गन्ध-माला.  
एवं-अलङ्कारों को दिया. ‘तए णं तस्स पएसिस्स रण्णो ते विससंजुत्ते असण-

“तए णं सूरियकंता देवी” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तएणं” त्थार पछी “सूरियकंता देवी” सूर्यकंता देवीअ-  
“अन्नया कयाइ” केअ अेक दिवसे “पएसिस्स रण्णो” प्रदेशी राजाने “अंतरं जाणइ”  
षष्ठ पारणाने अवसर इय अंतर (तक) जान्णी लीधो अने “असणपाणखाइम-  
साइमसव्ववत्थगंधमल्लालंकारेसु विसप्पओगं पउंजइ” अशन, पान, आद्य  
अने स्वाद्यइय आहारिमां तेमज वस्त्र गन्ध माला अलंकारिमां विष संप्रयोग करी दीधो.  
“पएसिस्स रण्णो ण्हायस्स जाव सुहासणवरगयस्स ते विससंजुत्ते असणपाण-  
खाइमसाइमसव्ववत्थगंधमल्लालंकारे निसिरेइ” प्रदेशी राजा न्यारे स्नान  
करीने यावत् सुखइय श्रेष्ठ आसन पर आसीन हुता त्थारे तेमना भाटे तेण्णे ते  
विषसंप्रयुक्त अशन, पान, आद्य, स्वाद्यइय आहार पीरय्थुं, तेमज पडेरवा भाटे  
वस्त्र-गन्ध-माणा अने अलंकारे आध्यां. “तए णं तस्स पएसिस्स रण्णो ते विस-

प्रदेशिनो राज्ञः तद्विषसंयुक्तम् अशनं पानं खादिसं स्वादिमम् आहरतः सतः  
शरीरे वेदना प्रादुर्भूता-उज्ज्वला विपुला प्रगाढा कर्कशा कटुका परुषा निष्ठुरा  
चण्डा तीव्रा दुःखा दुर्गा दुर्ध्यासा पित्तज्वरपरिगतशरीरो दाहव्युत्क्रान्तश्चापि  
विहरति ॥ सू० १६३ ॥

पाणं-खादिसं-सादिसं-आहारेम-णस्स समाणस्स सरीरंसि वेयणा पाउम्भू-ता, उज्जला-  
विउला-पगाढा-ककसा-कडुया-परुसा-निष्ठुरा-चंडा-तिव्वा दुवस्त्रा दुग्गा-दु-  
हियासा-पित्तज्जरपरिग-सरीरे-दाह-कंते यावि विहाइ—” इसके बाद उस  
प्रदेशी राजा के शरीर में उस विषसंयुक्त अहार के काने से वेदना उत्पन्न  
हो गई । यह वेदना उज्ज्वल थी दुःखदाई होने से सुख लेश से रहित थी-विपु-  
ल थी, सकल शरीर में व्याप्त होने से विस्तीर्ण थी, अतृप्त-प्रगाढ थी, कर्कश-  
कठोर थी । जैसे-कर्कश पाण का संघर्ष शरीर की सन्धियों को तंड देता  
है, उसी प्रकार इसे कर्कश कहा गया है, अप्रीति जनक होने से यह कटुक  
थी, मन में अति रुक्षता की जनक होने से दुर्मेघ थी, चण्ड-गौद्र थी तीव्र-  
तीक्ष्ण थी, दुःखद स्वरूप होने से दुःख थी, चिकित्सा से भी दुर्गम्य होने  
के कारणे दुर्गम्य, दुस्सह होने से दुर्ध्याप थी । इस प्रकार की वेदना उत्पन्न  
होने के कारण वह राजा पित्तजार से अक्रान्त शरीर वाला हो गया, और सम-  
स्त शरीर में उसको दाह पडने लगी । टीकाथ-स्पष्ट है-॥१६३॥

संयुक्तं अणं पाणं खादिसं सादिसं आहाग्माणस्स समाणस्स सरिरंसि वेयणा पाउम्भू-ता  
उज्जला विउला पगाढा ककसा-डुया-परुसा-निष्ठुरा-चंडा तिवा-दुवस्त्रा-  
दुग्गा-दुहियासा-वित्तज्जरपरिग-सरीरे दाहव-कंते यावि विहाइ—” त्सार-  
पक्षी ते प्रदेशी राजाना शरीरमां ते विष संयुक्त आहार करवाथी वेदना उत्पन्न  
थई गई, आ वेदना उज्ज्वल होती, दुःखद होवाथी सुग रक्षित होती, विपुल होती,  
समस्त शरीरमां व्याप्त होवाथी विस्तीर्ण होती, प्रगाढ होती; कर्कश-  
कठोर होती जेम कठोर पथ्थरनी रंगड शरीरना संधि लाओने तोडी नाये छे, तेम  
ते वेदना पणु आत्म प्रदेशोने तोडती होती, ओथी ज ओने कर्कश कडेवामां आवी  
छे, अप्रीतिजनक होवाथी ओ कटुक होती, मनमां अति रुक्षताजनक होवाथी पड़प  
होती, २ निष्ठुर होती, अशक्य होती, यंड रौद्र तीव्र तीक्ष्ण होती, दुःखद स्वदुःख  
होवाथी दुःखद होती, चिकित्साथी पणु दुर्गम्य होती ओथी ते दुर्ग होती, दुस्सह  
होवाथी दुर्ध्यास होती, आ नतनी वेदना उत्पन्न थई होवाथी ते राजा पित्तज्वर-  
क्रान्त-शरीरवाणे थई गयो, अने तेना आप्पा शरीरमां गणतरा थवा भांडी,  
टीकाथ-स्पष्ट ज छे, ॥ सू० १६३ ॥



टीका—“तए णं सा” इत्यादि—ततः खलु सा सूर्यकान्ता देवी अन्धदा कदाचित्—कमिंश्चित् काले प्रदेशिनो राज्ञः अंतरम्—अवकाशं—षष्ठपारणावसर-मित्त्वर्थः, जानाति, अशन-पान-खादिम-सर्ववस्त्र-गन्ध-माल्यालङ्कारेषु—अशनादिसर्व-वस्तुषु विषप्रयोगं—विषसंयोगं, प्रयुनक्ति—करोति एवं कृत्वा स्नाताय—कृतस्ना-नाय, यावत्—सुखासनवरगताय—सुखदरूपश्रेष्ठासनोपविष्टाय प्रदेशिने राज्ञे तान् विषमंयुक्तान् अशनपान-खादिम स्वादिम-सर्ववस्त्र-गन्ध-माल्या-लङ्कारान् निसृ-जति-ददाति । ततः तदन्तरं खलु तस्य प्रदेशिनो राज्ञः तं विषसंयुक्तम् अशन-पान-खादिम स्वादिममिति चतुर्विधाऽऽहारम् आहरतः गृह्णतः संतः शरीरे वेदना प्रादुर्भूता—समुपपन्ना, सा कीदृशी ? इ याह—उज्ज्वला—दुःखदतया, उग्रा सुस्त्रलेश-रहितेत्यर्थः, विपुला-सकलशरी वशापकृताद् विस्तीर्णा, अतएव, प्रगाढा-अतिश-यिता, कर्कशा कठोरा, यथा कर्कशपापाणसंघर्षः शरीरसन्धींस्त्रोटयति तथैवात्म प्रदेशांस्त्रोटयन्ती या वेदना जायते साः कर्कशेत्युच्यते, कटुका—अप्रीतिजनिका, परुषा मनोऽतीव रुक्षत्वोत्पादिका निष्ठुरा—अशक्याप्रतीकारत्वेन दुर्मेघा, अत एव चण्डा-रौद्रा, तीव्रा—तीक्ष्णा दुःखा-दुःस्वदस्वरूपा, दुर्गा—चिकित्सादुर्गम्या, दुर-ध्यासा—दुःसहा, एवम्भूता वेदना समुद्भूता, तेन कारणेन स राजा पित्तज्वर परिगतशरीरः—पित्तज्वरेण परिगतम्—आक्रान्तं शरीरं यस्य स तथा, अत एव दाहव्युत्क्रान्तः—दाहव्याप्तः सन् चापि विह्वलति—तिष्ठति । ॥ सू० १६३ ॥

मूलम्—तए णं से पएसी राया सूरियकंताए देवीए अच्चाणं संपलद्धं जाणिन्ता सूरियकंताए देवीए मणसावि अप्पदुस्समाणे जे-णेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, पोसहसालं पमज्जेइ, उच्चार-पासवणभूमिं पडिलेहेइ दब्भसंथारगं संथरेइ, दब्भसंथारगं दुरुहइ, पुरत्थाभिमुहे संपालयंकनिसुन्ने करयलपरिगहियं मिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्टु एवं वयासी—नमोत्थुणं अरहंताणं जाव संप-त्ताणं नमोत्थुणं केसिस्स कुमारसमणस्स मम धम्मायरियस्स धम्मो-वदेसगस्स वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए, पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं-त्तिकट्टु वंदइ नमसइ, पुण्विपि णं मए केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए थूलपाणाइवाए पच्चक्खाए जाव थूल-



परिग्गहे पच्चक्खाए तं इयाणिं पि णं तस्मेव भगवओ अंतिए सव्वं  
पाणाइवायं पच्चक्खामि जाव सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि सव्वं  
कोहं जाव मिच्छादंसणसहे पच्चक्खामि अकरणिज्जं जोगं पच्च-  
क्खामि, सव्वं असणं० चउव्विहंपि आहारं जावजीवाए पच्च-  
क्खामि, जंपि य मे सरीरं इट्ठं जाव फुसंतुत्ति एवंपि य णं चरि-  
मेहिं उसासनीसासेहिं वोसिरामि-त्ति कट्ठू आलोइयपडिक्कंते सभा-  
हिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सेहम्मे कप्पे सूरियाभे विमाणे  
उववायसभाए देवत्ताए उववन्ने । ॥सू० १६४॥

इति पएसिरायस्स वण्णणं समत्तं ।

छाया—ततः खलु प्रदेशी राजा सूर्यकान्ताया देव्या आत्मानं संप्रलब्धं ज्ञात्वा  
सूर्यकान्ताया देव्या मनसाऽपि अप्रद्विषन् यत्रैव पोषधशाला तत्रैव उपागच्छति  
पोषधशालां प्रमार्जयति, उच्चारप्रसवणभूमिं प्रतिलेखयति, दर्भसंस्तारकं सं-  
तृणति, दर्भसंस्तारकम् दूरोहति पौरस्त्याभिमुखः संपल्यंङ्कनिषण्णः करत्तलपरिगृहीतं

“तए णं से पएसी राया” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तए णं-” इसके बाद “से पएसी राया-” वह प्रदेशी राजा  
“सूरियकंताए-देवीए अत्ताणं संपलद्धं, जाणित्ता-” सूर्यकान्ता देवी की यह  
उत्पात (करामत) है इस प्रकार जान कर भी—“सूरियकंताए देवीए मणसा  
वि अप्पदुस्समाणे जेणेव पोसहसाल तेणेव उवागच्छइ-” उस सूर्यकान्ता देवी  
के प्रति मनसे भी द्वेषभाव नहीं करता हुआ जहां पौषधशाला थी वहां पर  
गया—“पोसहसाल पमज्जेइ-” वहां जा करके उसने पौषधशाला की प्रमार्ज की  
“उच्चारपासवणभूमि पडिलेहेइ-” उच्चार-प्रसवण भूमि की प्रतिलेखना

“तए णं से पएसी राया” इत्यादि

मूलार्थ—‘तएणं’ त्थार पछी ‘से पएसी राया’ ते प्रदेशी राजा ‘सूरियकंताए  
देवीए अत्ताणं संपलद्धं जाणित्ता’ सूर्यकान्ता देवीके आ जणु कयुं छे आभ  
जणुवा छतांके “सूरियकंताए देवीए मणसा वि अप्पदुस्समाणे जेणेव पोसह-  
साला तेणेव उवागच्छइ” ते सूर्य कान्ता देवी प्रत्ये मनथी पणु द्वेषभाव न करतां  
न्यां पौषधशाला छती त्यां गये. (पोसहसालं पमज्जेइ) त्यां जणने तेणे पौषध-  
शालानी प्रमार्जना करी. “उच्चारपासवण भूमि पडिलेहेइ” उच्चार-प्रसवण भूमिनी

शिर आवर्तं मस्तके अञ्जलिं कृत्वा एवमवादीत्-नमोऽतु खलु अर्हद्भ्यः यावत् संप्राप्तेभ्यः नमोऽतु खलु केशिने कुमारश्रमणाय सम धर्माऽऽचार्याय धर्मोपदेश-  
त्राय, वन्दे खलु भगवन्तं तत्रगतम् इहगतः, पश्यतु मां भगवान् तत्रगतः इह-  
गतम् इति कृत्वा वन्दते नमस्यन्ति, पूर्वमपि खलु मया केशिनः कुमारश्रमण-  
न्यायान्तिके शूलपाणादिपातः प्रत्याख्यातः यावत् शूलपरिग्रहः प्रत्याख्यातः,

की-“द्वभसंथारगं संथरेइ-” और फिर दर्भ का संथारा बिछाया  
“द्वभसंथारगं दुरुहइ-” उसे बिछा कर वह उस पर बैठ गया. “पुर-  
स्थाभिमुहे संपलियंनिसन्ने-” वहां आरूढ़ होकर वह पूर्व दिशा की ओर  
मुह करके पर्यङ्कासन से बैठ गया. “करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अञ्जलिं कहुँ एवं वत्तासी-” और दोनों हाथों की अंजली बनाकर एवं-उसे मस्तक  
पर घुमाकर इस प्रकार से कहने लगा. “नमो थुणं अरहंताणं जाव संपत्ताणं;  
नमो थुणं केसिस्स कुमारसमणस्स सम धम्मायरिस्स धम्मोवदेसगस्स-” अर्हन्त  
भगवन्तों के लिये नमस्कार हो, मेरे धर्मोपदेशक धर्माचार्य केशीकुमार श्रमण  
के लिये नमस्कार हो, “वंदामि णं भगवन्तं तथ यं इहगए-” यहां रहा हुवा  
मैं वहां पर रहे हुवे भगवान् को वन्दना करता हूं, “-पासउ मे भगवं  
तत्थगए इहगयं ति कहुँ वंदइ. नमंसइ-” वहां पर रहे हुवे वे भगवान् यहां  
रहे हुवे मुझे देखें-इस प्रकार कह कर उस प्रदेशी राजाने उनकी वन्दना की  
नमस्कार किया. “पुव्वि पि णं मए केसिस्स कुमारसमणस्स अंतिए शूल-  
पाणाइवाए पच्चवखाए, जाव शूलपरिग्गहे पच्चवखाए ” पहलेभी मैंने केशी

प्रतिवेचना करी. “द्वभसंथारगं संथरेइ” अने पछी दर्भ-तु आसन त्यां पाथथुं.  
“द्वभसंथारगं दुरुहइ” तेने पाथरीने ते तंना पर उल्लो थध गथे. “पुरस्था-  
भिमुहे संपलियंनिसन्ने” त्यां आइठ थधने ते पूर्व दिशा तरइ मुण करीने  
पर्यंकासनथी गेली गथे. “करयलपरिग्गहियं सिरसावत्तं मत्थए अञ्जलिं कहुँ एवं  
वत्तासी” अने गन्ने हाथोनी अञ्जलि बनावीने अने तेने मस्तक पर शेरवी ते  
आ प्रमाणे कहेवा लाग्यो. “नमोथुणं अरहंता णं जाव संपत्ताणं नमोथुणं  
केसि-स कुमारसमणस्स सम धम्मायरिस्स धम्मोवदेसगस्स” अर्हंत भग-  
वन्तने भारा नमस्कार छे, भारा धर्मोपदेशक धर्माचार्य केशीकुमार श्रमणने भारा  
नमस्कार छे. “वंदामि णं भगवन्तं तत्थगयं इहगए” अर्ही रहीने हुं त्यां वर्तमान  
भगवानने वंदन करे छुं. “पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयं ति कहुँ वंदइ,  
नमंसइ” त्यां रहेतां भगवान भने अर्ही लुग्ये. आ प्रमाणे कहीने ते प्रदेशी  
राजाने तेभने वंदन कर्या, नमस्कार कर्या. “पुव्वि पि णं मए केसिस्स कुमारसम-  
णस्स अंतिए शूलपाणाइवाए पच्चवखाए, जाव शूल परिग्गहे पच्चवखाए”

तद् इदानीमपि खलु तस्यैव भगवतः अन्तिके सर्वं प्राणातिपातं प्रत्याख्यामि यावत् सर्वं परिग्रहम् प्रत्याख्यामि, सर्वं क्रोधं यावत् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि अकरणीयं योगं प्रत्याख्यामि, सर्वम् अशनं० चतुर्विधमपि आहारं यावज्जीवं प्रत्याख्यामि, यदपि च मे शरीरम् इष्टं यावत् स्पृशन्तु इति एतदपि च खलु चरमैः उच्छ्वासनिःश्वासैः व्युत्सृज्यामि, इति कृत्वा आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधि-

कुमारश्रमण के पास स्थूल प्राणातिपातका यावत् स्थूल परिग्रह का प्रत्याख्यान किया है—‘तं इयाणि पि णं तस्सेव भगवओ अंतिए सच्चं पाणाइवायं पच्चक्खामि—’ अब भी मैं उन्ही भगवान् के पास उसी सब प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता हूँ, “जाव सच्चं परिग्रहं पच्चक्खामि—” यावत् समस्त परिग्रह का प्रत्याख्यान करता हूँ। सच्चं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि—” समस्त क्रोध का प्रत्याख्यान करता हूँ, यावत् मिथ्यादर्शन शल्य का प्रत्याख्यान करता हूँ। “अकरणीजं जोगे पच्चक्खामि—” अकरणीय योग (अशुभ योगका) का प्रत्याख्यान करता हूँ, “सच्चं असणं० चउच्चिहं वि आहारं जाव ज्जीवाए पच्चक्खामि—” अशन-पान आतिरूपचारों प्रकार के आहार का यावज्जीव त्याग करता हूँ “जं पिय मे सरीरं इद्धं जाव फुसंतु त्ति एवं पिय णं चरिमेहिं उसासनीसासेहिं वोसिरामि त्ति कहुं—” मैंने पहले जिस इष्टादि विशेषण विशिष्ट शरीर की रक्षा की इस अभिप्राय से कि—इसे शीत उष्ण आदि परिग्रह तथा-सर्पादिकृत उपसर्ग आदिकी बाधा न पहुँचाये—जब मैं उसी शरीर का अन्तिम उच्छ्वास-निश्वासों तक परिया। करता हूँ, इस प्रकार विचार करके—“आलो-

पडेलां पणु मे” केशीकुमारश्रमणुनी पासे स्थूल प्राणातिपातनुं यावत् स्थूल परिग्रहनुं प्रत्याख्यान कइं छुं “तं इयाणि पि णं तस्सेव भगवओ अंतिए सच्चं पाणाइवायं पच्चक्खामि” उवे पणु हुं ते ज भगवाननी पासे तेज समस्त प्राणातिपातनुं प्रत्याख्यान कइं छुं. “जाव सच्चं परिग्रहं पच्चक्खामि” यावत् समस्त परिग्रहनुं प्रत्याख्यान कइं छुं. “सच्चं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि” समस्त क्रोधनुं प्रत्याख्यान कइं छुं यावत् मिथ्यादर्शन शल्यनुं प्रत्याख्यान कइं छुं. “अकरणीजं जोगे पच्चक्खामि” अकरणीय योगनुं प्रत्याख्यान कइं छुं. “सच्चं असणं० चउच्चिहं वि आहारं जावज्जीवाए पच्चक्खामि” अशन-पान वगेरे रूप चार प्रकारना आहारनो यावत् छुवन त्याग कइं छुं “जं पिय मे सरीरं इद्धं जाव फुसंतु त्ति एवं पिय णं चरिमेहिं उसासनीसासेहिं वोसिरामि त्ति कहुं” मे पडेलां जे छष्ट वगेरे विशेषण विशिष्ट शरीरनी रक्षा करी ते आ प्रयोजनथी छे आने शीतउष्ण वगेरे परीषडे तथा सर्पादिकृत उपसर्ग वगेरे बाधा पडेलां न छे. उवे हुं ते ज शरीरनो अन्तिम उच्छ्वास निःश्वासो सुधी परित्याग कइं छुं. आ

प्राप्तः कालमासे कालं कृत्वा सौधर्मे कल्पे सूर्याभे विमाने उपपातसभायां  
देवतया उपपन्नः ॥ सू० १६४ ॥

इति प्रदेशिराजस्य वर्णनं समाप्तम् ।

टीका—“तए णं से पएसी” इत्यादि—ततःखलु स प्रदेशी राजा सूर्य-  
कान्ताया देव्या-स्वराज्या आत्मानं-स्वं संप्रलब्धं—विषप्रदानेन वञ्चितं सूर्यकान्तया  
मा णार्थं महाविषं दत्तमिति ज्ञात्वा सूर्यकान्ताया देव्या मनसाऽपि—मनोमात्रे-  
णापि अप्रद्विषन्—द्वेषमकुर्वन् यत्रैव पौषधशाला तत्रैवोपागच्छति, पौषधशालां प्रमा-  
र्जयति, उच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति, दर्भसं-तारकं संस्तृणाति दर्भसंस्तारकं  
दूरोहति—अधिरोहति दर्भसंस्तारकोपर्युपविशतीत्यर्थः, पौरस्त्याभिमुखः—पूर्वदिगभि-

इ. पडिकंते समाहिस्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे सूरियाभे  
विमाणे उववाय भाए देवत्ताए उववन्ने—” उसने पहले गुरु को सम्मुख करके  
जिन अतिचारों का प्रत्याख्यान किया था अब उ हैं पुनः अकरण विषय से  
अतिक्रान्त करके, अर्थात्—आलोचनापूर्वक मिथ्यादुष्कृत देकरके चित्त की  
समाधि प्राप्त करता हूँ. और—इसी स्थिति में वह कालमास में काल करके  
सूर्याभविमान में उपपात सभा में देव पर्याय से उत्पन्न हो गया. ॥

टीकार्थ—प्रदेशी राजाने जब जाना कि—मेरी रानी सूर्यकान्ताने ही मुझे  
मारने के लिये विष प्रदान कर इस स्थिति पर पहुँचाने का निमित्त उपस्थित  
किया है तो वह इस हालत में भी उसके प्रति द्वेषभाव से रहित बना रह-  
कर जहाँ पौषधशाला थी वहाँ पर चला गया, वहाँ जाकर उसने पौषध-  
शाला की प्रमार्जना की उच्चार प्रस्रवण भूमि की प्रतिलेखना की. और—दर्भ  
का संस्तारक बिछाया. बिछाकर फिर वह उसपर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके

प्रमाणे विचार कराने ‘आलोइयपडिकंते समाहिस्ते कालमासे कालं किच्चा  
सोहम्मे कप्पे सूरियाभे विमाणे उववायसभाए देवत्ताए उववन्ने’ तेल्ले पडैलां  
शुइनी सामे जे अतिचारानुं प्रत्याख्यान कर्तुं हुतुं हुवे तेभने करी अकरण विषयथी  
अतिकांत करीने—अष्टवै के ‘आलोचनापूर्वक मिथ्या दुष्कृत आपीने चित्तनी समाधि  
प्राप्त करे छुं.’ अने आवी स्थितिमां ते कालमासमां काल करीने सूर्याभविमानमां  
उपपात सभामां देव पर्यायथी जन्म पाभ्यो.

टीकार्थ—प्रदेशी राजाने ज्यारे आ वात जाण्णी के भारी राणी सूर्यकान्ताअेज  
भने मारवा भाटे विष आण्थुं छे अने भारी आ दशा करी छे. तो ते परिस्थिति  
मां पणु सूर्यकान्ता प्रत्ये अद्वेषलावथी व्यवहार करीने जयां पौषधशाला हुती त्यां  
पथ्यो. त्यां जधने तेल्ले पौषधशालानी प्रमार्जना करी. उच्चारप्रस्रवण भूमिनी प्रति  
लेखना करी अने दर्भसंस्तारक पाथयौ त्यारधछी ते तेनी उपर पूर्व दिशा तरङ्ग

મુખ્ય: સપત્યદ્વિપિણ:-પર્યઙ્કાસનેન સમુપવિષ્ટ: રાત્ર કરતલપરિગૃહીતં શિરઆવર્ત  
મતકેઽન્જલિ કૃત્વા એવમવાદીત્-નમોઽસ્તુ સ્વલુ અર્હદ્વય: યાવત્ સંપ્રાપ્તેશ્વય: ।  
અત્ર યાવત્ શ્વં ન નમોઽસ્ત્યુ ણં” પાઠ: સર્વો-પિ વાચ્ય: । તથા નમોઽ તુ સ્વલુ  
કેશિને કુમારશ્રમણાય મમ ધર્માચાર્યાય ધર્મોપદેશકાય, વન્તે સ્વલુ ભગવન્તં તત્ર  
ગતમ્ ઇહ ગત:-અત્ર રિથિતોઽહમ્, પશ્યતુ મે-નમ મામિત્યર્થ:, ભગવાન્ કેશિ-  
કુમારશ્રમણસ્તત્રગત ઇહગતમ્, ઇતિ કૃત્વા વદતે નમ યતિ, કથયતિ-ધર્મદપિ સ્વલુ  
મયા કેશિન: કુમારશ્રમણ ય અન્તિવે-સર્મીયે શ્ચૂલપ્રાણાતિપાત: પ્રત્યાખ્યાન: ?  
યાવત્-યાવચ્છેદેન “સ્થૂલમૃપાવાદ: પ્રત્યાખ્યાત:૨ શ્ચૂલાદત્તાઽઽદાનં પ્રત્યાખ્યાતમ્  
૩, ઇતિ સંગ્રાહ્યમ, સ્થૂલપરિગ્રહ: પ્રત્યાખ્યાત:૪, તદ્ ઇદાનીમપિ સ્વલુ તસ્યૈવ-

પર્યઙ્કાસને સે વૈથ ગા. દોનોં હાથો ધો જોડા-ઔર-આવર્તકર ઇ પ્રા. વહને  
લગા. અર્હન્તોં ધો નમસ્કાર હોં. યહાં-યાવત્ શ્વદ સે “નમોઽસ્ત્યુ ણં” પાઠ  
પૂરા ઉસને પઢા રહ મણ લેના ચાહિયે । ઇવ પ્રમા. વહતે વહતે ઉડને  
એલા મી વહા ફિ-મુઝે ધર્મ વા ઉપદેશ દેને વાલે જો મેરે ધર્માચાર્ય કેશી  
કુમારશ્રમણ હૈં-ઉઠેં મી મેરા નમસ્કાર હો, વે યપિ-હાં પર મેરે પાસ  
વર્તમાન મેં નહીં હૈં અતઃ જહાં પર મી વે વિરાજમાન હોં મેં  
યહાં રહા હુવા ઉઠેં નમસ્કાર કરતા હું. વહાં રહે હુવે વે મ વાન્  
કેશીકુમા શ્રમણ યહાં રહે હુવે મુઝે દેસે ઇ પ્રા. વહસ્કર ઉસ મેં ન કો  
વંદના ધી-નમસ્કાર િયા, વન્દના-નમસ્કાર કર ફિ વહ ઇસ પ્રકાર સે  
વહને લગા-મેને પહેલે મી કેશીકુમા શ્રમણ કે સમીય શ્ચૂલ પ્રાણાતિપાત ા  
પ્રત્યાખ્યાન કિયા હૈં-યાવત્ સ્થૂલ મૃપાવાદ વા પ્રત્યાખ્યાન કિયા હૈ. સ્થૂલ  
અદત્તાદાન વા પ્રત્યાખ્યાન કિયા હૈ. ઔ-શ્ચૂલ પરિગ્રહ વા પ્રત્યાખ્યાન કિયા

મુખ્ય કરીને પર્યઙ્કાસનની મુદ્રામાં બેસી ગયા ત્યાર બાદ તેણે બન્ને હાથોની અંજલિ  
બનાવી અને તેને મસ્તક પર ફેરવીને આ પ્રમાણે કહેવા લાગ્યો. અહીં તોને નમસ્કાર  
છે, અહીં યાવત્ પદ્ધતી “નમોઽસ્ત્યુ ણં” પૂરાપાઠ તે બોલ્યો એ વાત સમજવી જોઈએ.  
આ પ્રમાણે કહેતાં કહેતાં તેણે આ પ્રમાણે કહ્યું કે મને ધર્મોપદેશ આપનાર મારા  
ધર્માચાર્ય કેશીકુમાર શ્રમણને મારા નમસ્કાર છે. તેઓ અહીં હાથો વદ્યમાન  
નથી છતાંએ તેઓશ્રી જ્યાં વિરાજતા હોય હું અહીં રહીને તેમને નમસ્કાર કરું  
છું. ત્યાં રહેતા તે ભગવાન્ કેશીકુમારશ્રમણ અહીં રહેલા મને જુવે. આ પ્રમાણે  
કહીને તેણે તેમને વંદન કરી નમસ્કાર કર્યા. વંદન તેમજ નમસ્કાર કરીને તે આમ  
કહેવા લાગ્યો કે મેં પહેલાં પણ કેશીકુમારશ્રમણની પાસે સ્થૂલ પ્રાણાતિપાતનું પ્રત્યા-  
ખ્યાન કર્યું છે. યાવત સ્થૂલ મૃપાવાદનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યું છે, સ્થૂલ અદાત્તાદાનનું  
પ્રત્યાખ્યાન કર્યું છે અને સ્થૂલ પરિગ્રહનું પ્રત્યાખ્યાન કર્યું છે. હવે હું તેજ કેશી

भगव :- केशिकुमारश्रमणयैव अन्तिके तदाज्ञावर्तित्वेन तस्मिन् भगव तं विद्यमाने सति समीपे इव समीपे सम्प्रति सर्व प्राणातिपातं प्रत्याख्यामि यावत्-यावच्छब्देन सर्वं मृषावादं प्रत्याख्यामि, सर्वमदत्तादानं प्रत्याख्यामि, इति संग्राह्यम्, सर्व परिग्रहं प्रत्याख्यामि तथा क्रोधं यावत् यावच्छब्देन-मानं-मायां लोभं रागं द्वेषं कलहमभ्याख्यान पैशून्य परपरिवादं रत्यरती माया-मृषा 'इति संग्राह्यम्, मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि, सर्वम् अशनमिति-अशन खाद्यं स्वाद्यं चतुर्विध-माहारं यावज्जीवं-प्राणधारणपर्यन्तं प्रत्याख्यामि यदपि च मे शरीरम् इष्टं यावत् पृष्ठ-तु अत्र यावच्छब्देन का तत्वादिविशेषणविशिष्टं शरीरं शीतोष्णादयः परीपहाः सर्पादिकृता उपर्गाः कर्कशकठोरादयः स्पर्शाश्च मा रपृष्ठ-तु इत्यन्तं संग्रा-

है. अब मैं उसी केशिकुमारश्रमण के पास उनकी आज्ञा के वशवर्ती होने के कारण उन्हें अपने समीप रहा हुआ जैसा मानकर समस्त प्राणातिपात का प्रत्याख्यान करता हूँ. समस्त मृषावाद का प्रत्याख्यान करता हूँ और समस्त अदत्तादान का प्रत्याख्यान करता हूँ और समस्त परिग्रह का प्रत्याख्यान करता हूँ. तथा क्रोधो यावत् मान माया लोभका राग-द्वेष, कलह का प्रत्याख्यान पैशून्य परिवाद अरति माया मृषा का, एवं-मिथ्यादर्शनशल्य का प्रत्याख्यान करता हूँ। तथा-समस्त अशनका पानका खाद्यका स्वाद्यका, यावज्जीव-प्राणधारण पर्यन्त परित्याग करता हूँ, तथा-कात्-त्वादे विशेषणों से युक्त जिस शरीर की मैंने शीतोष्ण आदिपरीपहों से सर्पादिकृत उपसर्गों से एवं-कर्कश कठोर आदि स्पर्शों से ये सब इसे स्पर्श न करें इस ख्याल से रक्षा की इसका भी मैं अब अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक यावज्जीव तक परित्याग करता हूँ। तात्पर्य इसका इस प्रकार से है-मैंने इस शरीर

कुमारश्रमणनी पास तेमनी आज्ञाने वश होवाने लीधे तेजो भारी पास ज छे अम भानीने समस्त प्राणुचिततनुं प्रत्याख्यान करे छुं. समस्त मृषावादनुं प्रत्याख्यान करे छुं. समस्त अदत्तादाननुं प्रत्याख्यान करे छे अने समस्त परिग्रहनुं प्रत्याख्यान करे छुं. तेमज क्रोधनुं यावत् मान माया लोभ राग द्वेष कलहनुं प्रत्याख्यान करे छे. पैशून्य परिवाद अरति माया मृषा अने मिथ्यादर्शनशल्यनुं प्रत्याख्यान करे छे. तेमज समस्त अशननुं पाननुं, खाद्यनुं, स्वाद्यनुं, यावत् जवन प्राणु धारणु पर्यन्त विसर्जन करे छे. तेमज कान्त भयादि विशेषणोथी युक्त जे शरीरनी मे शीतोष्ण वगेरे परीपहोथी सर्पादिकृत उपसर्गोथी अने कर्कश कठोर वगेरे स्पर्शोथी-‘ओजो आ शरीरने स्पर्श नहि जे छे अछे रक्षा करी’ आने पण्डु हुं जे अन्तिम श्वासोच्छ्वास सुधी परित्याग करे छे. तात्पर्य आ प्रमाणे छे

ह्यम्, तथाहि—कांतं, प्रियं मनोज्ञं, मनआमं, धैर्यं-धैर्यस्वरूपं वैश्वसिकं विश्वास-  
योग्यं, संमतम्, अनुमतं बहुमतं, भाण्डकरण्डकममानं, रत्नकरण्डकभूतमिदं शरीरं  
मा खलु शीतं मा खलु उष्णं, मा खलु क्षुधा मा खलु पिपासा, मा खलु  
व्यालाः-सर्पाः, मा खलु चोराः, मा खलु दंशाः, मा खलु मशकाः, मा खलु  
वातिकः-वातसम्बन्धी रोगातङ्काः एवं पैत्तिकः श्लैष्मिकः सान्निपातिकः इत्यादि  
का विविधा रोगातङ्काः, तत्र रोगाः-ज्वरादयः, आतङ्काः-सद्योघातिशूलादयः,  
तथा परीषदाः-क्षुधादयः, उपसर्गाः-सर्पादिकृता उपद्रवाः, स्पर्शाः-कर्कशकठोरा  
दयः. मा स्पृशन्तु-मे शरीरे मा संलग्ना भवतु इति-इति बुद्ध्या संरक्षितम्  
एतदपि च खलु शरीरं चरमैः-अन्तिमैः उच्छ्वासानिःश्वासैः व्युत्सृजामि-त्यजामि,

को कान्त प्रिय-मनोज्ञ मन आम धैर्यस्वरूप विश्वासयोग्य, संमत-अनुमान, तथा-बहु-  
मत माना एवं-रत्न रखने के पिटारे के जैसा बहुमूल्य माना। अतः-इस की  
तरह से मैंने संभाल रखी इसे शीत से बाधा न हो जावे, उष्णसे संताप न  
हो जावे, क्षुधा से कष्ट न हो जावे. पिपासासे यह आकुलित न हो जावे.  
सर्पादि कृत उपद्रवों से यह पीड़ित न हो जावे.  
चोरों द्वारा इसे आपत्ति में पडना न पड़े, दंश-मशक इसे काट न लेवे.  
वात सम्बन्धी रोगातङ्को-ज्वरादि रोगों सद्योघाति शूलादिकों से यह दुःखित  
न हो जावे पैत्तिक-श्लैष्मिक-सान्निपातिक रोगातङ्क इसे मलिन न करदे  
कर्कश-कठोर आदि स्पर्श करके इसके सौन्दर्य का अपहरण न करे, इस प्रकार  
से मैंने इसकी हरतरह के खूब रक्षाकीथी, परन्तु-अब मैं ऐसे प्रिय इस  
शरीर के साथ अपना सम्बन्ध जीवन के अन्तिमक्षण तक यावज्जीव तक बिच्छेद

के मे' आ शरीरने कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मन आम, धैर्यस्वरूप, विश्वास योग्य,  
संमत-अनुत्तम तेमज्ज बहुमत जाइये आने रत्न भूकवानी पेटीनी जेम बहु भूदय-  
वान मान्युं ओथी ज् आनी मे' जधी रीते संभाण राणी. आने ठंडीथी पीडा न  
थाय, उष्णताथी संताप न थाय, क्षुधाथी कष्ट न थाय, तरसथी  
व्याकुल न थाय सर्पादिकृत उपद्रवाथी आ पीडित न थाय चोरा  
पडे आ आक्षतमां न इ'साई पडे, दंश-मशक आने कष्ट न आपे वात  
संज'धी रोगातङ्का-ज्वरादि रोगो, सद्योघाति शूलादिकोथी आ शरीर दुःखित न थाय,  
पैत्तिक श्लैष्मिक, सान्निपातिक रोगातङ्क आ शरीरने मलिन न करे, कर्कश कठोर  
वगेरेना स्पर्शथी ओना सौन्दर्यनुं अपहरणुं न करे अ. प्रभाणु मे' जधी रीते आ  
शरीरनी भूम रक्षा करी छती. पणु डवे हुं आ ओवा प्रिय शरीरनी साथे पोताने।  
संज'ध लुवनना अन्तिम क्षण सुधी छोडी दड' छुं. आम विचार करीने ते प्रहेशी



इति कृत्वा—इत्यालोच्य स प्रदेशी राजा आलोचितप्रतिक्रान्तः—आलोचिताः—पूर्व  
गुरुमभिमुखीकृत्य प्रकाशिताः अतिचाः। ते पश्चात् प्रतिक्रांताः—पुनरुक्लविषयी-  
कृता येनासौ तथा—आलोचनापूर्वकप्रदत्तमिथ्यादुष्कृत इत्यर्थः समाधि-प्राप्तचित्त  
समाधिकः सन् कालमासे—कालावसरे कालं कृत्वा—मृत्युं प्राप्य सूर्याभे विमाने  
उपपातसभायां देवतया—देव वेन उत्पन्नः—उत्पन्नः । ॥सू० १६४॥

इति प्रदेशिराजस्य वर्णनं माप्तम् ॥

अथ प्रदेशिराजजीवस्य सूर्याभदेव याऽऽगामिभववर्णनमाह—

मूलम्—तए णं सूरियाभेदेवे अहुणोववन्नमए चेव समाणे पंच-  
विहाए पज्जत्तीए पज्जत्तिभावं गच्छइ, तं जहा—आहारपज्जत्तीए सरीर-  
पज्जत्तीए इंदियपज्जत्तीए आणपाणपज्जत्तीए भासमणपज्जत्तीए, त  
एवं खलु भो ! सूरियाभेणं देवेणं दिव्वा देविड्ढी दिव्वा देवजुई  
दिव्वे देवाणुभावे लद्धे पत्ते अभिसमन्नागए । ॥सू० १६५॥

छाया—ततः खलु स सूर्याभे देवः अधुन पपन्नक एव सन् पञ्चविधया पर्याप्ति  
भावं गच्छति, तद्यथा आहारपर्याप्त्या१, शरीरपर्याप्त्या२, इन्द्रियपर्याप्त्या३, आन-

कर्ता हूँ, इस तरह विचार कर वह प्रदेशी राजा आलोचित प्रतिक्रान्त होकर  
समाधि में तल्लीन हो गया, और—काल मास में मरण प्राप्त कर सूर्याभविमान  
में—उपपात सभा में देव पर्याप्त से उत्पन्न हो गया, ॥सू० १६४॥

( प्रदेशी राजा वर्णनसमाप्त. )

“प्रदेशी राजा के जीव-सूर्याभदेव के आगामी भवका वर्णन

“तए णं से सूरियाभे देवे अहुणोववन्नमए—” इत्यादि

मूलार्थ—“तए णं सूरियाभे देवे—” इसकेबाद तत्काल उत्पन्न हुआ ही  
वह सूर्याभदेव पांच प्रकार की पर्याप्तियों से पर्याप्त हो गया, “तं जहा—आहार

राज आलोचित प्रतिक्रान्त थछने समाधिभां तल्लीन थछ गये अने काल मासभां  
मरण पाभीने सूर्याभविमानभां उपपात सभां । देव पर्याप्तथी उत्पन्न थये। ॥सू. १६४॥

प्रदेशी राजासुं वर्णन समाप्त.

“प्रदेशी राजाना जिव—सूर्याभदेवसुं आगामी भवसुं वर्णन.”

“तएणं से सूरियाभे देवे अहुणोववन्नमए” इत्यादि.

मूलार्थ—“तएणं सूरियाभे देवे” त्थार पछी उत्पन्न थतां ज ते सूर्याभदेव  
पांच प्रकारनी पर्याप्तिओथी थुक्त थछ गये। “तं जहा—आहारपज्जत्तीए, सरीर

પ્રાણપર્યાપ્ત્યાઃ, શ્વાપાનનઃપર્યાપ્ત્યાઃ, તદ્ એવં સ્વલુ મો ? સૂર્યામેન દેવેન  
દિવ્યા દેવર્દ્ધિઃ, દિવ્યા દેવદ્યુતિઃ. દિવ્યો દેવાનુભાવઃ લઘ્વઃ પ્રાપ્તઃ અભિસ-  
મન્વાગતઃ ॥ સૂ. ૧૬૫॥

ટીકા—“તદ્ એવં સૂર્યામે દેવે” इत्यादि—ततः स्वलु स सूर्याभो देवः  
अधुनोपपन्नक एव—तत्कालोत्पन्नक एव सन् पञ्चविधया पर्याप्त्या पर्याप्तिभाव  
गच्छति. पर्याप्तिपञ्चकरूपार्थः पूर्वं व्यशीतिमसूत्रे गतः । एवम् अनेन कारणेन  
प्रदेशिराजभवं आसि. कभावपूर्वकश्रावकधर्मापराधनरूपेण आलोचितप्रतिलोचि-  
त्वसमाधिमरणादिरूपेण च कारणेन भो—हे गौतम ! सूर्यामदेवेन इयं दिव्या  
देवर्द्धिः—विमानादिरूपा. दिव्या देवद्युतिः—शरीराभरणादिकान्तिः, दिव्यो देवा  
नुभावः—देवप्रभावः, लघ्वः—उपार्जितः, प्राप्तः—स्वाधीनभूतः, अभिसमन्वागतः—  
भोग्यत्वेन सम् गमिमुख्यमागतः ॥सू० १६५॥

પજ્જત્તીએ, સરીરપજ્જત્તીએ. ઇંદિ પજ્જત્તીએ, આળ- ણપજ્જત્તીએ, માસમળપજ્જ-  
ત્તીએ—” વે પાંચ પર્યાપ્તિ । इस प्र-ार से हैं—आहारपर्याप्ति-शरीरपर्याप्त-इन्द्र-  
पर्याप्ति-श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति और-भाषा मनःपर्याप्ति, “तं एवं स्वलु मो-?  
सूरियाभेणं देवेणं दिव्या देवर्द्धी-दिव्या देवजुई-दिव्वे दे । णुभावे-लद्धे पत्ते अभि-  
समन्नागए—” इस तरह से इस सूर्यामदेवने प्रदेशी राजा के भवमें अन्तिम  
भवपूर्वक श्रावक धर्म की आराधना की थी. फिर-आलोचिन प्रतिक्रान्त  
होकर यह समाधि प्राप्त हुवा था. इन्ही सब कारणों से इसने सूर्यामदेव के  
पर्याय में यहदिव्यदेवर्द्धि-विमानादि-दिव्य देवद्युत-शरीराभरणादि कान्ति औ  
दिव्यदेवानुभाव-देवप्रभाव उपार्जित किया है प्राप्त किया है, अने अधीन किया है.  
और उसे योग्यरूप होने के कारण अच्छी तरह से उसे भोगा है—

ટીકાર્થ—स्पष्ट है. पांच प्रकार की पर्याप्तियों का स्वरूप पहिले ८३-वे  
सूत्रमें प्रगट किया गया है ॥सू० १६५॥

પજ્જત્તીએ. ઇંદિયપજ્જત્તીએ, આગણ પજ્જત્તીએ, માસમળપજ્જત્તીએ” તે પાંચ  
પર્યાપ્તિઓ આ પ્રમાણે છે—આહાર પર્યાપ્તિ, શરીર પર્યાપ્તિ, ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ, શ્વાસો-  
ચ્છવાસ પર્યાપ્તિ અને ભાષા મનઃ પર્યાપ્તિ “તં એવં સ્વલુ મો ! સૂરિયામે ણં દેવેણં  
દિવ્યા દેવર્દ્ધી—દિવ્યા દેવજુઈ—દિવ્વે દેવાણુભાવે લદ્ધે પત્તે અભિ સમ નાગએ” આ પ્રમાણે  
તે સૂર્યામદેવે પ્રદેશી રાજાના ભવમાં આસ્તિક ક્ષાવપૂર્વક શ્રાવક ધર્મની આરાધના  
કરી હતી અને પછી આલોચિત પ્રતિકાંત થઇને તે સમાધિ પ્રાપ્ત થયો હતો. આ  
બધા કારણોથી તેણે સૂર્યામદેવના પર્યાયમાં દિવ્ય દેવર્દ્ધિ વિમાનાદિ દિવ્યદેવદ્યુતિ  
શરીરાભરણાદિ કાંતિ અને દિવ્ય દેવાનુભાવ દેવપ્રભાવ ઉપાર્જિત કર્યા છે, મેળવ્યાં  
છે. સ્વાધીન બનાવ્યાં છે. અને તેને ભોગ્યરૂપ હોવાથી સારી રીતે તેનો ઉપભોગ કર્યો છે.  
ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. પાંચ પ્રકારની પર્યાપ્તિઓનું સ્વરૂપ પહેલા ૮૩ માં સૂત્રમાં  
પ્રકટ કરવામાં આવ્યું છે. ॥૧૬૫॥

मूलम्—सूरियाभस्स णं भंते ! देवस्स केवइयं कालं ठिई पणत्ता ? गोयमा ! चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । से णं भंते ! सूरियाभे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिहिइ ? कहिं उव्वज्जिहिइ ? गोयमा ! महाविदेहे वासे जाणि इमाणि कुलाणि भवन्ति तं जहा—अह्हाइं दित्ताइं विउलाइं वित्थिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाइं बहुधणवहुजायरूवरययाइं आओगपओगसंपउत्ताइं विच्छड्डियपउरभत्तपाणाइं बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूयाइं बहुजणस्स अपरिभूयाइ, तत्थ अन्नयरम्मि कुलम्मि पुत्तत्ताए पच्चायाइस्सइ ॥ सू० १६६ ॥

छाया—सूर्याभस्य खलु भदन्त ! देवस्य कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ? गौतम ! चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । स खलु भदन्त ! सूर्याभो देवः तस्माद्देवलोकाद् आयुःक्षयेण भवक्षयेण स्थितिक्षयेण अनन्तरं चयं त्यक्त्वा कुत्र

सूरियाभस्स णं भंते-? देवस्स केवइयं कालं ठिई पणत्ता—” इत्यादि

मूलार्थ—प्रश्न—“सूरियाभस्स णं भंते-? देवस्स केवइयं कालं ठिई पणत्ता—” हे भदन्त-? सूर्याभदेव की स्थिति कितनी कही गई है—३ उत्तर—“गोयमा-? चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता—” हे गौतम-? चार पल्योपम की सूर्याभदेव की स्थिति कही गई है । प्रश्न—“से णं भंते-? सूर्याभे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिहिइ कहिं उव्वज्जिहिइ—” हे भदन्त-? वह सूर्याभ देव उस देवलोकसे आयु क्षय-

“सूरियाभस्स णं भंते ! देवस्स केवइयं कालं ठिई पणत्ता” इत्यादि.

मूलार्थ—प्रश्न “सूरियाभस णं भंते ! देवस्स केवइयं कालं ठिई पणत्ता” हे भदन्त ! सूर्याभदेवनी स्थिति डेटली डहेवामां आवी छे ? उत्तर—“गोयमा ? चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पणत्ता—” हे गौतम ! सूर्याभदेवनी स्थिति आरपटये पम डेटली डहेवामां आवी छे प्रश्न—“से णं भंते ! सूरियाभे देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गमिहिइ कहिं उव्वज्जिहिइ—” हे भदन्त ! ते सूर्याभदेव ते देवलोकात् आयुक्षय-भवक्षय

ગમિષ્યન્તિ ? કુત્રોત્પત્સ્યતે ? મહાવિદેહ વર્ષે યાનિ ઇમાનિ કુલાનિ ભવન્તિ. તથા-આદ્યાનિ દીપ્તાનિ વિપુલાનિ વિસ્તીર્ણવિપુલભવનશનાસનયાનવાહનાનિ बहुधन-बहुजातरूपरजतानि आयोगप्रयोगसंयुक्तानि चिच्छिदितप्रचुरभक्तपानानि बहुदासीदासगोमहिषगवेलकप्रभूतानि बहुजनस्य अपरिभूतानि. तत्र अन्यमस्मिन् कुले पुत्रनया यास्यति ॥ सू० १६६ ॥

મંક્ષય, એવં-થિતિક્ષય કે વાદ અનન્તર દેવ શરીર કો છોડકર ક્યાં જાવે ગા-૩ ક્યાં ઉત્પન્ન હોવેગા-૩ ઉત્તર-“ગોયમા-? મહાવિદેહે વાસે જાણિ ઇમાણિ કુલાણિ ભવન્તિ, તં જહા-અદ્દાઈ દિત્તાઈ વિઝલાઈ વિત્થિન્નવિઝલમદ્રણસયણાસણજાણવાહણાઈ बहुधनबहुजातरूपरजतानि रययाइ-” હૈ ગૌતમ-? મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જો યે કુલ હૈં, કિ જો-આદ્ય હૈં-દીપ્ત હૈં-વિપુલ હૈં, વિસ્તીર્ણ-વિપુલ ભવનવાલે હૈં વિસ્તીર્ણ વિપુલશયનાસનવાલે હૈં વિસ્તીર્ણ વિપુલ યાન-વાહનવાલે હૈં, बहुधनवाले हैं बहुतरावरूपवाले हैं बहुरजतवाले हैं ‘आ-ओगप्रयोगसंपउत्ताइ चिच्छिदियपरभक्तपानां बहु दासीदास गो महिष गवेलगप्पभूयाइ’, बहुजनस्स अपरिभूयाइ-” આ ઓગ પ્રયોગ જિન સે વ્યાપૃત હંતં રહતે હૈં, દીનજનોં કે લિયે ત્યાં સે પ્રચુ માત્રા મેં ભક્તપાન પ્રાપ્ત હોના હૈં, જિન કે પાસે દાસી-દાસ અનેક સંખ્યા મેં સેવા કરને કે લિયે ઉપસ્થિત રહતા હૈં, પ્રચુ માત્રા મેં જ્યાં ગો-મહિષ, એવં-અજા મેષ અદિ પશુ કાયમ વને રહતે હૈં, તથા-કોઈમી જન જિનકા તિસ્કા નહીં કર સકના હૈં, “तत्थ अन्नयरंसि कुलम्मि पुत्ताए पच्चायाइस्सइ-” ઉન કુલાં મેં સે કિસી એક કુલ મેં પુત્રરૂપ સે ઉત્પન્ન હોગા. ॥

અને તિતિક્ષય પછી દેવ શરીરને ત્યજીને ક્યાં જશે ? ક્યાં ઉત્પન્ન થશે ? ઉત્તર-“ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે જાણિ ઇમાણિ કુલાણિ ભવન્તિ, તં જહા-અદ્દાઈ દિત્તાઈ વિઝલાઈ વિત્થિન્ન વિઝલમદ્રણસયણાસણજાણવાહણાઈ बहुधनबहुजातरूपरजतानि रययाइ-” હૈ ગૌતમ ! મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં જે કુલો છે-જે આદ્ય છે, દીપ્ત છે, વિપુલ છે, વિસ્તીર્ણ લવનોવાળા છે, વિસ્તીર્ણ વિપુલ શયનાસનવાળાઓ છે, વિસ્તીર્ણ વિપુલ યાન-વાહન વાળાઓ છે, बहुधन संपन्न છે, बहुतरावरूपवाળા છે, बहुरजतवाળા છે. “आओगप्रयोगसंपउत्ताइ चिच्छिदियपरभक्तपानां बहु दासीदासगो महिषगवेलगप्पभूयाइ, बहुजनस्स अपरिभूयाइ” તેમનાથી આયોગ પ્રયોગ વ્યાપૃત થતો રહે છે, દીનજનો માટે જ્યાંથી પ્રચુર માત્રામાં ભક્ત-પાન પ્રાપ્ત થતાં રહે છે, જેમની પાસે દાસીદાસ ઘણી સંખ્યામાં સેવા-ચાકરી કરવા ઉપસ્થિત રહે છે, જ્યાં પુષ્કળ માત્રામાં ગાય મહિષ અને અન્ય, મેષ વગેરે પશુઓ વિદ્યમાન રહે છે, તેમજ કાંઈ પણ માણસ જેમનો અનાદર કરી શકતો નથી. “तत्थ अन्नयरंसि कुलम्मि पुत्ताए पच्चायाइस्सइ” તે કુલોમાંથી તે કોઈ પણ એક કુલમાં પુત્રરૂપે ઉત્પન્ન થશે.

टीका—“सूर्याभस्स णं” इत्यादि—गौतमस्वामी पृच्छति—हे भदन्त ! सूर्याभस्य खलु देवस्य कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ? । भगवानाह—हे गौतम ! सूर्याभस्य देवस्य सौधर्मदेवल्लोके चत्वारि पल्लोपमानि—चतुःपल्लोपमपरिमिता स्थितिः प्रज्ञप्ता । गौतमस्वामी प्राह—हे भदन्त ! स खलु सूर्याभो देवस्तस्माद् देवलोकात् आयुःक्षयेण—देवसम्बन्ध्यायुः कर्मदलिकनिर्जरणेन, भवक्षयेण—देवभगवत्यादिकर्मनिर्जरणेन स्थिति क्षयेण—सौधर्मे कल्पे सूर्याभे विमाने देवानां या दशसागरोपमस्थितिः प्रोक्ता तत्क्षयेण, अनन्तरं—त पश्चात् चयं—देवशरीरं त्यक्त्वा कुत्र गमिष्यति ? कुत्रोत्पत्स्यते ? भगवानाह—हे गौतम ! स सूर्याभदेवजीवः सौधर्मदेवलोकाच्च्युत्वा महाविदेहे वर्षे यानि इमानि-वक्ष्यमाणानि कुलानि भवन्ति, तद्यथा तान्येव दर्शयति आढ्यानि-समृद्धानि, दीप्तानि-प्रशंसनीयानि वादुज्ज्व-

टीकार्थ—गौतम स्वामीने प्रभु से ऐसा पूछा है कि हे भदन्त-? सूर्याभदेव की कितने काल की स्थिति कही गई है—३ इसके उत्तर में प्रभुने उन से वह—गौतम-? सूर्याभदेवकी चार पल्लोपम की स्थिति सौधर्म देवलोक में कही गई है। उसके बाद गौतमने पुनः प्रभु से ऐसा पूछा है कि हे भदन्त-? जब सूर्याभदेव के देव सम्बन्धी आयुर्कर्म के दलिकों की निर्जरा हो जावेगी, देव भस्वरूप गत्यादि कर्म की निर्जरा हो जावेगी, तथा स्थितिक्षय-सौधर्म कल्प में सूर्याभविमान में कितनेक देवों की चार पल्लोपम की स्थिति कहा गई है, उनमें—सूर्याभदेव की भी चार पल्लोपम की स्थिति वह भी जब क्षपित हो जावेगी तब वह देव शरीर से चक्कर कहाँ जावेगा—३ कहाँ उत्पन्न होगा—३ इसके उत्तर में प्रभुने कहा—हे गौतम ! सूर्याभदेव जीव सौधर्म देवलोक से चक्कर महाविदेह क्षेत्र में जो ये कुल हैं कि जो—आढ्य—समृद्ध हैं, दीप्त

टीकार्थ—गौतम स्वामीने प्रभुने आगतने प्रश्न किये के हे भदन्त ! सूर्याभदेवनी स्थिति केटला कालनी कहेवाय छे ? जेना उत्तरमां प्रभुने कहुं—गौतम ! सौधर्म देवलोकमां सूर्याभदेवनी स्थिति चार पल्लोपम जेटली कहेवामां आवी छे. त्थारपछी गौतमे इरी प्रभुने प्रश्न किये के हे भदन्त ! ज्यारे सूर्याभदेवना देव संघधी आयुर्कर्मना दलिकोनी निर्जरा थछ जशे. लवक्षय—देवलवक्षय गत्यादि कर्मनी निर्जरा थछ जशे, तेमज स्थितिक्षय सौधर्म कल्पमां सूर्याभविमानमां केटलाक देवानी चारपल्लोपम जेटली स्थितिमां कहेवाय छे, तेमां सूर्याभदेवनी पणु चारपल्लोपम जेटली स्थिति कहेवाय छे ते पणु ज्यारे क्षपीत थछ जशे, त्थारे ते देव शरीर त्यज्जने क्थां जशे ? क्थां उत्पन्न थशे ? जेना जवाणमां प्रभुने कहुं हे गौतम ! सूर्याभदेवना एवं सौ धर्म देव लोकथी यवीने महाविदेह क्षेत्रमां जे कुलो आढ्य—समृद्ध छे,

લાનિ, વિપુલાનિ પરિવાદિના વિશાલાનિ, તથા વિસ્તીર્ણવિપુલભવનશયનાઽઽસન-  
યાનવાહનાનિ, તત્ર વિસ્તીર્ણાનિ-ક્ષેત્રેણ મહાન્તિ, વિપુલાનિ-સંખ્યયા પ્રચુરાણિ  
ભવનાનિ-ગૃહાણિ શયનાનિ-શયનીયાનિ, આસનાનિ-પીઠફલકાદીનિ, યાનાનિ-સ્થ-  
શકટાદીનિ, વાહનાનિ ગજાશ્વાદીનિ યેષુ (કુલેષુ) તાનિ, તથા વહુધનવહુજાત  
રૂપરજતાનિ-તત્ર-વહૂનિ-પ્રચુરાણિ ધનનાનિ-ગરિમ ધરિમ-મેય-પરિચ્છેદ્યરૂપાણિ,  
વહૂનિ-પ્રચુરાણિ જાતરૂપાણિ-સુવર્ણાનિ રજતાનિ-રૂપ્પાણિ યેષુ તાનિ, તથા-  
આયોગપ્રયોગસંપ્રયુક્તાનિ, તત્ર આયોગસ્ય-અર્થલાભ ય પ્રયોગાઃ ઉપાયાઃ, સંયુક્તા-  
વ્યાપૃતા યૈ સ્તાનિ, તથા-વિચ્છર્દિતપ્રચુરભક્તપાનાનિ વિચ્છર્દિતનિ-ઉદારબુદ્ધયા  
વહુપાચનેનાવશિષ્ટાનિ, અથવા-વિચ્છર્દિતાનિ-ત્યક્તાનિ દીનેભ્યો દત્તાનિ પ્રચુરાણિ  
વહૂનિ ભક્તપાનાનિ-યૈસ્તાનિ, તથા-વહુદાસીદાસગોમહિષગવેલકપ્રભૂતિ-તત્ર  
વહવો દાસી-દાસાઃ પ્રસિદ્ધાઃ, પ્રભૂતાઃ-પ્રચુરાઃ ગોમહિષગવેલકાઃ-તત્ર ગો-  
મહિષઃ પ્રસિદ્ધાઃ ગવેલકા-અજા મેપાશ્ચ યેષાં તાનિ, તથા-વહુજનસ્ય અપરિભૂ-  
તાનિ-અપરિભવનીયાનિ એનાદૃશાનિ યાનિ કુલાનિ સન્તિ તત્ર-તેષાં કુલેષુ મધ્યે

પ્રશંસનીય હોને સે ઉજ્જ્વલ હૈં, વિપુલ-પરિવાર આદિ જનાં કી અપેક્ષા વિશાલ  
હૈં. ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા વિસ્તીર્ણ, એવ સંખ્યા કી અપેક્ષા પ્રચુર ગૃહો વાલે હૈં,  
વિસ્તીર્ણ વિપુલ શયન શય્યા-એવં-આસનો વાલે હૈં, પીઠ-ફલક દિવાલે હૈં, સ્થ-  
શકટ-આદિરૂપ યાનો વાલે હૈં-એવં-ગજ અશ્વાદિરૂપ વાહનો વાલે હૈં, તથા-પ્રચુર  
ગરિમ ધરિમ મેય પરિચ્છેદ્યરૂપ ધનવાલે હૈં, પ્રચુર જાતરૂપ-સુવર્ણવાલે હૈં, પ્રચુર  
રજત-ચાન્દીવાલે હૈં, તથા-અર્થ કે લાભરૂપ પ્રયોગ જિનસે વ્યાપૃત હુવે હૈં. ઉદાર  
બુદ્ધિ સે જિનમેં વહુતસા અન્ન પાન વનવાયા જાતા હૈં, ઓર—સ્નાને કે વાદ  
અવશિષ્ટ વચ્ચતા હૈં. અર્થાત્-દીનોં કો દેને કે લિયે જિનમેં પ્રચુર અન્ન-પાન  
તૈયાર કિયા જાતા હૈં, જિસ મેં વહુત દાસી-દાસ હૈં, વહુતહી ગો-મહિષ-ઔર

દીપ્ત-પ્રશંસનીય હોવાથી ઉજ્જ્વળ છે, વિપુલ-પરિવાર વગેરેના લોકોની દૃષ્ટિએ વિશાળ  
છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ વિસ્તીર્ણ છે, સંખ્યાની દૃષ્ટિએ પ્રચુર થઈવાળા છે, વિસ્તીર્ણ  
વિપુલ શયન શય્યા અને આસનો વાળા છે, પીઠ ફલક વગેરેવાળા છે, ગજ અશ્વ  
વગેરે રૂપ વાહનો વાળા છે, તેમજ પ્રચુર ગરિમ ધરિમ મેય પરિચ્છેદ્યરૂપ ધનવાળા  
છે, પ્રચુર જાતરૂપ-સુવર્ણવાળા છે, પ્રચુર રજત-ચાંદીવાળા છે, તથા અર્થલાભરૂપ  
પ્રયોગ જેમનાથી વ્યાપૃત થયેલ છે, ઉદાર બુદ્ધિથી જેઓ પુષ્કળ અન્નપાન બનાવ-  
ડાવે છે અને જમ્યા પછી પણ ત્યાં અવશિષ્ટ રહે છે એટલે કે ગરજોને  
આપવા માટે જેઓ પ્રચુર અન્નપાન તૈયાર કરાવડાવે છે જેમની પાસે ઘણાં દાસી

અન્યતમસ્મિન્—કસ્મિંશ્ચિદેકસ્મિન્ કુલે પુત્રનયા—પુત્રત્વેન પુત્રો ભૂત્વેત્યર્થઃ પ્રત્યા  
યાચ્યતિ પ્રત્યાગમિષ્યતિ પુનર્માનુષ્યભવે જન્મ ગ્રહીણ્યતીત્યર્થઃ ॥સૂ૦ ૧૬૬॥

મૂલમ્—તદ્દર્શનં તંસિ દારગંસિ ગઘ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ  
અમ્માપિઊણં ધમ્મે દઢા પઢ્ડણા ભવિસ્સઈ। તદ્દર્શનં તસ્સ દારગસ્સ  
માયાં નવણ્ઠ માસાણં વહુપહિપુણ્ણાણં અદ્ધટ્ટમાણં રાહંદિયાણં વિઙ્  
કંતાણં સુકુમાલપાણિયાયં અહીણપહિપુણ્ણપંચિદિયસરીરં લઘ્વ-  
ણવંજણગુણોવચેયં માણ્ણમાણપ્પમાણપહિપુણ્ણસુજાયસુવવંગસુદરંગં  
સસિસોમ્માકારં કતં દિયદંસણ સુરૂપં દારય પયાહિસ ॥સૂ૦ ૧૬૭॥

છાયા—તતઃ સ્વલુ તસ્મિન્ દારકે ગર્ભગતે એવ સતિ અમ્માપિત્રોઃ ધર્મે  
દઢો પ્રતિજ્ઞા ભવિષ્યતીત્યર્થઃ તતઃ સ્વલુ તસ્ય દારકસ્ય માતા નવસુ માસેષુ વહુપ્રતિ-  
પૂર્ણેષુ અર્ધાષ્ટમેષુ રાત્રિન્દિવેષુ વ્યતિક્રાતેષુ સુકુમાલપાણિપાદમ્ અહીનપ્રતિપૂર્ણ-

ગવેલક અજા-મેષ હૈં, એવં-જો અનેક જનોં દ્વારા મી અપરિભૂત હૈં એસે કુલોં  
મેં સે કિસી એક કુલ મેં પુત્રરૂપ સે-ઉ-પ-ન હોગા. ॥સૂ૦ ૧૬૬॥

“તદ્દર્શનં તંસિ દારગંસિ ગઘ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ” इत्यादि

મૂલાર્થ—“તદ્દર્શનં તંસિ દારગંસિ ગઘ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ-” જવ વહ  
દારક ગર્ભ મેં આવેગા-તવ્વ ઇસ કો ગર્ભ મેં આતે હી-“અમ્માપિઊણં ધમ્મે દઢા  
પઢ્ડણા ભવિસ્સઈ-” માતા-પિતાકો-ધર્મ મેં દઢ પ્રતિજ્ઞા હોગી “તદ્દર્શનં તસ્સ  
દારગંસિ માયા નવણ્ઠ માસાણં વહુપહિપુણ્ણાણં અદ્ધટ્ટમાણં રાહંદિયાણં વિઙ્-  
કંતાણં સુકુમાલપાણિયાયં-” નૌ માસ સાઢે સાત દિન જવ પૂરા હો જાવેમે  
તવ્વ ઉસ દારક કી માતા સુકુમાર હાથ-પગ વાલે-“અહીણપહિપુણ્ણપંચિદિય-

દાસો છે, ધણી ગાયો તેમજ મહિપ, ગવેલક અજા, મેષ છે અને જે ઘણા માણસો  
વડે પણ અપરિભૂત છે એવાં કુલોમાંથી તે કોઈ એક કુલમાં પુત્રરૂપે જન્મ પામશે. ॥સૂ૦ ૧૬૬॥

“તદ્દર્શનં તંસિ દારગંસિ ગઘ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ” इत्यादि।

મૂલાર્થ—“તદ્દર્શનં તંસિ દારગંસિ ગઘ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ” જ્યારે તે  
દારક ગર્ભમાં આવશે-ત્યારે તેને ગર્ભમાં આવતાં જ “અમ્માપિઊણં ધમ્મે દઢા  
પઢ્ડણા ભવિસ્સઈ” માતાપિતાને ધર્મમાં દઢ પ્રતિજ્ઞા થશે. “તદ્દર્શનં તસ્સ દારગ-  
ંસિ માયા નવણ્ઠ માસાણં વહુપહિપુણ્ણાણં અદ્ધટ્ટમાણં રાહંદિયાણં વિઙ્કંતાણં  
સુકુમાલપાણિયાયં” નવ માસ અને સાઢે સાત દિવસો જ્યારે પૂરા થઈ જશે  
ત્યારે તે દારકની માતા સુકુમાર હાથપગવાળા “અહીણપહિપુણ્ણપંચિદિય સરીરં”



પચ્ચેન્દ્રિયશરીરં લક્ષણવ્યજ્જનગુણોપપેતં માનોન્માનપ્રમાણપ્રતિપૂર્ણં સુજાતસર્વાઙ્ગ  
સુન્દરાઙ્ગં શશિસૌમ્યાઽઽકારં કાન્તં પ્રિયદર્શનં સુરૂપં દારકં પ્રજનિપ્પત્તે ॥૪૦ ૧૬૭॥

ટીકા—“તए णं तंसि दारगंसि” इत्यादि-व्याख्या निगदसिद्धा । ४. १६७।

મૂલમ્—તए णं तस्स दारगस्स अस्सो-पियरो पढमे दिवसे  
ठिइवडियं करेहिंति, तइयदिवसे चंदसूरदंसावणियं करिस्सन्ति, छट्टे  
दिवसे जागरियं जागरिस्सन्ति, एक्कारसमे दिवसे धीइकंते मंपत्ते  
वारसाहे दिवसे णिवित्ते असुइजायकम्मकरणे चोक्खे लमज्जिओव-  
लित्ते विउलं असणपाणग्वाइमसाइमं उवक्खडाविस्सन्ति, मित्त-  
णाइणियगसयणसंवंधिपरिजणं आमंतेत्ता तओ पच्छा पहाया  
कयवलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता सुद्धप्पावेसाइं संगळाइं  
वत्थाइं पवरपरिहिया अप्पमहग्धाभरणालंक्रियसरीरा भोयणमंडवंसि  
सुहासणवरगया तेणं मित्तणाइणियगसयणसंवंधिपरिजणं सद्धि  
विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परि-  
भुंजेमाणा परिभाएमाणा एवं चेव णं विहरिस्सन्ति, जिमियभुत्तत्त-

સરીરં-” અહીન પરિપૂર્ણ પાંચોં ઈન્દ્રિયોં સે યુક્ત શરીર-”લક્ષણવંજન  
ગુણોવવેયં, માણુમાણપ્પમાણપહિપુણ્ણસુજાયસવ્વંગસુન્દરંગં સસિસોમાકાર-  
કંતં પિયદંસણં સુરૂપં દારયં પયાહિસિ-” લક્ષણવ્યજ્જન ગુણોં વાલે, માનોન્માન  
પ્રમાણ પ્રતિપૂર્ણ સુજાત સર્વાઙ્ગ સુન્દર શરીર-”વાલે, ચન્દ્રમા કે જેસે સૌમ્ય આગર-  
વાલે, કાન્ત-પ્રિયદર્શનયુક્ત, એવં-સુરૂપ સમ્પન્ન એસે, પુત્ર કો જન્મ દેગી.  
ટીકાર્થ-સ્પષ્ટ છે. ॥૪૦ ૧૬૭॥

અહીન પરિપૂર્ણ પાંચે ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત શરીર વાળા “લક્ષણવંજનગુણોવવેયં,  
માણુમાણપ્પમાણપહિપુણ્ણસુજાયસવ્વંગસુન્દરંગં સસિસોમાકારં કંતં  
પિયદંસણં સુરૂપં દારયં પયાહિસિ” લક્ષણ વ્યજ્જન ગુણોવાળા, માનોન્માન  
પ્રમાણ પ્રતિપૂર્ણ સુજાત સર્વાંગ સુન્દર શરીરવાળા ચન્દ્ર જેવા સૌમ્ય આકારવાળા,  
કાન્ત-પ્રિયદર્શન યુક્ત અને સુરૂપ સંપન્ન એવા પુત્રને જન્મ આપશે.  
ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. ॥૪૦ ૧૬૭॥

राग्यावि य णं समाणा आयंता चोवखा परमसुइभूयात मित्तणाइ-  
णियगसयणसंवधिपरिजणं विउलेणं वत्थगंधमह्वालंकारेणं सक्का-  
रिस्संति, सम्माणिस्संति, तस्सेव मित्तणाइ णियगसयणसंवधिपरि-  
जणस्स पुरओ एवं वइस्संति-जम्हा णं देवाणुप्पिया ! अम्हं इमं  
सि दारगंसि गवभगयंसि धम्ममे दढा पइण्णा जाया तं होउ णं  
अम्हं एस दारए दढपइण्णे णामेणं । तए णं तस्स  
दारगस्स अम्मा पियरो नामधेज्ज करिस्संति-दढपइ-  
ण्णेति । तए णं तस्स अम्मापियरो अणुपुब्बेण ठिइवडियं च १,  
चंदसूरियदंसणावणियं च २, धम्मजागरियं च ३, नामधिज्जकरणं  
च ४, परंगमणं च ५, पचंकमणं च ६, पच्चक्खाणयं च ७, जेमं-  
णगं च ८, परिविद्धावणगं च ९, पजं पावणगं च १०, कन्नवेहणं  
च ११, सवच्छरपाडलेहणेगं च १२ चूडादयायणं च १३, उवणयणं  
च १४, अन्नाणि व वहूणि गवभाहाण जम्मणाइयाइं कोउयाइं  
महया इड्डिसक्कारसमुदएणं करिस्संति ॥ सू० १६८ ॥

छाया—ततः खलु तस्य दारकस्य अम्मापितरौ प्रथमे दिवसे स्थिति-  
पतितां करिष्यतः, तृतीयदिवसे चन्द्रसूर्यदर्शनीयां करिष्यतः, षष्ठे दिवसे

‘तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो—’ इत्यादि

मूलार्थ—“तएणं—” इसके बाद “तस्स दारगस्स—” उस दारकके, “अम्मापियरो—”  
मातापिता—“षष्ठे दिवसे—” प्रथम दिवस “ठिइवडिय—” कुलपरम्परा से  
आगत पुत्र जन्मोत्सव रूप क्रिया—“करेहिंति—” करेगे-तइयदिवसे “तृतीय  
दिवस—“चंदसूर दंसणावणियं करिस्संति—” चन्द्रदर्शनरूप एवं—सूर्यदर्शनरूपक्रिया

“तए णं तस्स दारगस्स अम्मापियरो” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तए णं” त्वा२ पछी “तस्स दारगास” ते दाशकना “अम्मापियरो”  
मातापिता “षष्ठे दिवसे” प्रथम दिवसे “ठिइवडिय” कुल परंपरागत पुत्र-  
जन्मोत्सव रूप विधिओ “करेहिंति” करेओ. “तइयदिवसे” त्रीन दिवसे “चंदसूर  
दंसणावणियं करिस्संति” चन्द्रदर्शन रूप अने सूर्यदर्शनरूप क्रियाओ ३ ७

જાગરિકાં જાગરિણ્યતઃ, એકાદશે દિવસે વ તિક્રાન્તે, સંપ્રાપ્તે દ્વાદશાહે દિવસં, નિવૃત્તે અશુચિજાતકર્મકરણે ચોક્ષે સંમાર્જિતોપલિપ્તે (ગૃહે) વિપુલમ્ અશનપાન-  
સ્વાદ્યસ્વાદ્યમ્ ઉપસ્કારયિષ્યતઃ, મિત્રજ્ઞાતિનિજકસ્વજન મ્વન્ધિપરિજનમ્ આમન્વ્ય

જો ફિ-પુત્ર જન્મોત્સવ પર કી જાતી હૈ-કરેંગે, “છઠ્ઠે દિવસે જાગરિયં જાગરિ-  
સંતિ-” છઠ્ઠે દિન રાત્રિ જાગરણરૂપ ક્રિયા કરેંગે। “એકારસમે દિવસે વીઙ્કસે સંપત્તે વારસાહે દિવસે ણિવિત્તે અસુહ જાયકર્મકરણે-” ધ્યાનરૂપ  
દિન જવ વ્યતીત હો જાવેગા. ઓર-૧૨-વાં દિન જવ પ્રારમ્ભ હોગા તવ ઉસ  
દિન જન્મ સમ્બન્ધી અશુચિતા કી નિવૃત્તિ હો ચુકને કે વાદ-“ચોક્ષે સમજ્જિ  
ઓવલિત્તે વિઝલ અસણ પાણ સ્વાહમ્ સાહમ્ ઉવક્સલ્લાવિસ્સંતિ-” ગૃહ કો શુદ્ધિ  
ક્રિયા કરેંગે। પહેલે ઉસ વે સમ્માર્જની-બુહારી સે કૂડા-કચરા નિકાલ કર  
સાફ કરેંગે ઓર-ફિર ઉસે ગોમય-આદિ સે લીપે-પોતે કરેંગે। ઇસ પ્રકાર  
શુદ્ધિક્રિયા હો જાને પર ફિર વે અશન-પાન-સ્વાદ્ય, એવં-સ્વાદ્યરૂપ ચાર પ્રકાર  
કે આહાર કો પકાવેંગે-“મિત્તણાહ્ણિયગસયણસંવંધિપરિજનં આમંતેત્તા,  
તઓ પચ્છા પ્હાયા કયવલિકમ્મા કયકોડયમંગલપાયચ્છિત્તા-” ઇસકે વાદ  
વે મિત્રજનોં કો-જ્ઞાતિ કે જનોં કો-માતાપિતા આદિકોં કો, અપને પુત્રાદિકોં  
કો, પિતૃવ્યાદિક સ્વજનોં કો સ્વશ્વશુર-પુત્રશ્વશુર આદિકોં દાસી-દાસ આદિમ્પ  
પરિજનોં કો આમન્વિત કરેંગે, ફિર-સ્નાનકર વલિકર્મ-કાક આદિ કો અન

પુત્ર જન્મોત્સવ સમયે કરવામાં આવે છે કરશે, “છઠ્ઠે દિવસે જાગરિયં જાગરિ-  
સંતિ” છઠ્ઠા દિવસે રાત્રિ જાગરણ કરશે. “એકારસમે દિવસે વીઙ્કસે સંપત્તે  
વાર હે દિવસે ણિવિત્તે અસુહ જાયકર્મ કરણે” ચારમે દિવસ જ્યારે પૂરે થશે  
અને ચારમે દિવસ પ્રારંભ થશે ત્યારે તે દિવસે જન્મ સંબંધી અશુચિતાની નિવૃત્તિ  
થઈ જશે તે પછી “ચોક્ષે સમજ્જિઓવલિત્તે વિઝલઅસણપાણસ્વાહમ્  
સાહમ્ ઉવક્સલ્લા વિસ્સંતિ” ઘરને શુદ્ધ કરવાનાં કાર્યો કરશે. પહેલાં તેઓ  
સમ્માર્જની-સાવરણી-થી કચરો સાફ કરશે અને પછી તેને ગોમય વગેરેથી લીપીને  
સ્વચ્છ બનાવશે. આ પ્રમાણે શુદ્ધિ ક્રિયા થઈ જવા બાદ પછી તે અશન, પાન,  
ખાદ્ય અને સ્વાદ્યરૂપ ચાર પ્રકારના આહારોને બનાવરાવશે. મિત્તણાહ્ણિયગ સયણ  
સંવંધિ પરિજન આમંતેત્તા, તઓ પચ્છા પ્હાયા કયવલિકમ્મા કય કોડય મંગલ  
પાયચ્છિત્તા” ત્યાર પછી તેઓ મિત્રજનોંને જ્ઞાતિજનોંને, માતાપિતા વગેરેને, પોતાના  
પુત્રાદિકોંને, પિતૃવ્યાદિક સ્વજનોંને, સ્વશુર-પુત્ર-શ્વશુર વગેરેને, દાસી દાસ વગેરે  
પરિજનોંને આમન્વિત કરશે. પછી સ્નાન કરીને બલિકર્મ-કાગડા વગેરે પક્ષીઓને  
અન્ન વગેરેનો, લાગ આપશે. કૌતુક મંગલ પ્રાયાશ્ચિત્ત કરશે. સુદ્ધપ્પાવેસાઈ

તતઃ પશ્ચાત્ સ્નાતૌ કૃતવલિકર્માણૌ કૃતકૌતુકમઙ્ગલપ્રાયશ્ચિત્તૌ શુદ્ધપ્રવેશ્યાનિ  
માઙ્ગલ્યાનિ વસ્ત્રાણિ પ્રવરપરિહિતૌ અલ્પમહાઘામરણાલંકૃતશરીરૌ ભોજનમંડપે  
સુખાસનવત્ ગતૌ તેન મિત્રજ્ઞાતિનિજકસ્વજનસમ્બન્ધિપરિજનેન સાર્થં વિપુલમ્  
અશનં પાનં સ્વાદ્યં સ્વાદ્યમ્ આસ્વાદયન્તૌ વિસ્વાદયન્તૌ પરિમુજ્જાનૌ પરિભાજયન્તૌ  
एवमेव खलु विहरिष्यतः । जिमितभुक्तोत्तरागतावपि च खलु सन्तौ आचान्तौ  
चोक्षौ परमशुचिभूतौ तं मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनं विपुलेन वस्त्र-  
गन्धमाल्याલङ्कारेण सत्કરिष्यतः सम्मानयिष्यतः, तस्यैव मित्रज्ञातिनिजकस्वजन-

આદિકા ભાગ કરેગે કૌતુક-મઙ્ગલપ્રાયશ્ચિત્ત કરેગે-“સુદ્ધપ્પાવેસાઈ” મંગલ્લાઈ  
વત્થાઈ પવરપરિહિયા અપ્પમહઘામરણાલંકરિયસરીરા ભોયણમંડવસિ-” ફિર  
શુદ્ધ માઙ્ગલિકવસ્ત્રોં કો જો કિ-રાજસભા મેં જાનેકે લિયે પહિરને યોગ્ય હોતે  
હૈં ઉન્હેં પહિરેંગે, વાદ મેં અલ્પ વજનવાલે-ઔર-વિશેષ મૂલ્યવાલે એસે અલ-  
ડકારોં કો ધારણ કરેગે, ઇસ તરહ સવ પ્રકારસે સજઘજકર, ફિર-ભોજનમંડપ  
મેં-ભોજનશાલા મેં-“સુહાસણવરગયા-” અપને-અપને શ્રેષ્ઠ આસન પર વેઠ કર-  
“તેણં મિત્તણાઈણિયગસયણસંવંધિપરિજણેણં સદ્ધિ વિઝલં અવણં પાણં સ્વાઈમં  
સાઈમં આસાએમાણા વિસાએમાણા પરિમુજેમાણા પરિભાએ માણા એવં ચેવ ણં વિહ-  
રિસ્સંતિ-” ઉન મિત્ર જ્ઞાતિ નિજક સ્વજન સમ્બન્ધિજન એવં-પરિજન કે સાથ  
હસ વિપુલ અશન-પાન સ્વાદ્ય, એદં-સ્વાદ્યરૂપ ચતુર્વિધ આહાર કા પહેલે આસ્વાદન  
કરેગે-ફિર વિશેષ આસ્વાદન કરેગે, ઉસે સુચિપૂર્વક સ્વાયેગે, એક દૂસરે કો  
દેગે-“જિમિયમ્બુત્તરાગયા” ત્રિ ય ણં સમાણા આયંતા ચોક્કા, પરમસુહમ્બૂયા  
તં મિત્તણાઈણિયગસયણસંવંધિપરિજણં વિઝલેણં વત્થગંધમલ્લાલંકારેણં સક્કારિસ્સંતિ,

મંગલ્લાઈ વત્થાઈ પવરપરિહિયા અપ્પમહઘામરણાલંકરિયસરીરા ભોયણમંડવસિ”  
પછી રાજ્યસભામાં જવા માટે પહેરવા યોગ્ય શુદ્ધ માંગલિક વસ્ત્રો ધારણ કરશે.  
ત્યાર બાદ અલ્પભારવાળાં અને વિશેષ શ્રીમતી એવાં અલંકારો ધારણ કરશે. આ  
પ્રમાણે સર્વ રીતે સુસજ્જ થઈને પછી તેઓ ભોજન મંડપમાં-ભોજનશાળામાં-  
“સુહાસણવરગયા” પોતપોતાના શ્રેષ્ઠ આસનો પર બેસીને “તે ણં મિત્તણાઈ ણિયગ-  
સયણસંવંધિપરિજણેણં સદ્ધિ વિઝલં અવણં પાણં સ્વાઈમં સાઈમં આસાએમાણા  
વિસાએમાણા પરિમુજેમાણા પરિભાએમાણા એવં ચેવ ણં વિહરિસ્સંતિ” તે મિત્ર,  
જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન સંબંધિજનો અને પરિજનોની સાથે તે વિપુલ અશન પાન  
બાદ અને સ્વાદ્યરૂપ ચતુર્વિધ આહારનો પહેલો આસ્વાદન કરશે પછી વિશેષ આ-  
સ્વાદન કરશે. તેને સુહૃદ્યપૂર્ણ થઈને જમશે. પરસ્પર એક બીજાઓને આપશે.  
જિમિયમ્બુત્તરાગયા ત્રિ ય ણં સમાણા આયંતા ચોક્કા, પરમસુહમ્બૂયા તં મિત્તણાઈ-  
ણિયગસયણસંવંધિ પરિજણં વિઝલેણં વત્થગંધમલ્લાલંકારેણં સક્કારિસ્સંતિ,

સ્વન્ધિપરિજનસ્ય પુરત્ત એવં વદિપ્યતઃ—યરમાત્ સ્વલુ દેવાનુપ્રિયાઃ ! આવયોઃ અમિન્ દારકે ગર્ભગતે એવં સતિ ધર્મે દદા પ્રતિજ્ઞા જાતા તદ્ ભવતુ સ્વલુ આવયોઃ એપ દારકો દદપ્રતિજ્ઞો નામના । તતઃ સ્વલુ તસ્ય દારકસ્ય અમ્વા-પિતરૌ નામધેયં કરિણ્યતઃ દદપ્રતિજ્ઞા ઇતિ । તતઃ સ્વલુ તસ્ય અમ્વાપિતરૌ અનુ-પૂર્વેણ સ્થિતિપતિતાં ચ ૧, ચંદ્રસૂર્યદર્શનિકાં ચ ૨, ધર્મજાગરિકાં ચ ૩, નામ

સંમાણિસ્સંતિ—” મોજન કર ચુકને કે અનન્તર ફિર વે અપને-અપને ઉપવેશન (વેઠને કે) સ્થાનપર વેઠ કર શુદ્ધ જલ સે આચમન કર ચોસે હોંગે, ઇસ તરહ પરમશુચિભૂત હુવે વે—મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક સ્વજન, સમ્વન્ધિ પરિજનોં કો વિપુલ વગ્ન ગન્ધ માલ્ય અલંકારોં સે સત્કૃત કરેંગે । એવં—માનપૂર્વક ઉનકા આદર કરેંગે—“ત સેવ મિત્તણાણિયગસયણસંવંધિપરિજણસ પુરઓ એવં વહ્સસંતિ—” ફિર વે-અહીં મિત્ર-જ્ઞાત-નિજક-સ્વજન-સમ્વન્ધી પરિજનોં કે સમક્ષ ઇસ પ્રકાર કહેંગે—“જમ્હાણ દેવાણુપ્પિયા ? અમ્હં ઇમંસિ દારગંસિ ગવ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ ધમ્મે દદા પઢ્ઢણા જાયા—” હે દેવાનુપ્રિયોં ? જિસ કારણ સે ઇસ દારક કે ગર્ભ મેં આતે હી હમ લોગોં કી ધર્મ મેં દદ પ્રતિજ્ઞા હુધી, “તે હોઝણ અમ્હં એસ દારણ દદપઢ્ઢણે ણામેણ—” ઇમ કારણ યહ હમારા દારક દદપ્રતિજ્ઞા ઇસ નામવાલા હો—“તણં તસ્સ દારગંસ અમ્મા પિયરો નામધેજ્જં કરિસ્સંતિ દદપઢ્ઢણોત્તિ—” ઇસ તરહ ઉમ દારક કે માતાપિતા ઉસકા દદ પ્રતિજ્ઞા એસા નામ કરેંગે । “તણં તસ્સ અમ્માપિયરો અણુપુવ્વેણ ટિઙ્ગહિયં ચ-૧ ચંદસુરિયદંસણાવણિયં ચ

સંમાણિસ્સંતિ” લોજન યાદ તેઓ પોતપોતાના ઉપવેશન સ્થાનપર બેસીને શુદ્ધ જળથી આચમન કરીને પવિત્ર થશે. આ પ્રમાણે પરમશુચિભૂત થયેલા તે મિત્ર, જ્ઞાતિ, નિજક, સ્વજન, સંબંધી પરિજનોને વિપુલ વસ્ત્ર, ગંધ, માલ્ય અલંકારોથી સત્કૃત કરશે. અને સન્માનપૂર્વક તેમનો આદર કરશે “તસ્સેવ મિત્તણાણિયગ સયણસંવંધિપરિજણસ પુરઓ એવં વહ્સસંતિ” યહી તેઓ તે મિત્ર-જ્ઞાતિ નિજક સ્વજન-સંબંધી પરિજનોની સામે આ પ્રમાણે કહેશે—“જમ્હાણં દેવાણુપ્પિયા ! અમ્હં ઇમંસિ દારગંસિ ગવ્મગયંસિ ચેવ સમાણંસિ ધમ્મે દદા પઢ્ઢણા જાયા.” હે દેવાનુપ્રિયો ! આ દારક જ્યારથી અમારા ગર્ભમાં આવ્યો છે ત્યારપછી અમારી મનમાં ધર્મ પ્રત્યે દદ પ્રતિજ્ઞા બની છે. “તં હોઝણં અમ્હં એસ દારણ દદ-પઢ્ઢણે ણામેણ” આથી અમારો આ દારક દદ પ્રતિજ્ઞા આ નામવાળો થાય. “તણં તસ્સ દારગંસ અમ્માપિયરો નામધેજ્જં કરિસ્સંતિ દદપઢ્ઢણોત્તિ” આ પ્રમાણે તે દારકના માતાપિતા તેનું દદપ્રતિજ્ઞા એવું નામ રાખશે. “તણં તસ્સ અમ્મા-પિયરો અણુપુવ્વેણ ટિઙ્ગહિયં ચ ૧ ચંદસુરિયદંસણાવણિયં ચ ૨ ધમ્મજાગરિયં

धेयकरणं च ४, परगमनं च (पर्यङ्गनं च) ५ प्रचङ्क्रमणकं च ६ प्रत्याख्यानकं च ७ जेमनकं च ८ प्रतिवर्धापनकं च ९ प्रजल्पनकं च १० कर्णवेधनं च ११ संवत्सरप्रतिलेखनकं १२ चूडापनयनं च १३ उपनयनं च १४ अन्नानि च बहूनि गर्भाधानजन्मादिकानि कौतुकानि महता ऋद्धिसत्कारसमुदयेन करिष्यतः ॥ सू० १६८ ॥

टीका—“तए णं तस्स” इत्यादि-ततः खलु तस्य दारकस्य अम्बापितरौ प्रथमे दिवसे-जन्मदिने स्थितिपतितां-स्थित्या-कुलमयादिषा पतिता-समागता

—२ धम्मजागरियं च—३ नामधिज्जकरणं च—४ परंगमणं च—५ पंचकमणं च—६ पच्चक्खाणयं च—७ जेमणं च—८ पडिवद्धावणं च—९ पजंपावणं च—१० कन्नवेहणं च—११ संवच्छरपडिलेहणं च—१२” क्रमशः—जब वे स्थितिपतिज्ञ —१चंद्रसूर्यदर्शन—२. धर्मजागरण—३ नामकरण—४ इन उत्सवों को करचुकेगे— तब इनके बाद—परमगमन ५ प्रचङ्क्रमण—६ प्रत्याख्यान—७ अन्नप्राशन—८ प्रतिवर्धापन—९ प्रजल्पनक—१० कर्णवेधन—११ संवत्सर प्रतिलेखनक—१२ “चूडा-वणयणं—१३ उवणयणं च—१४ अन्नाणिय बहूणि गम्भाहाणजम्मणाइयाइं कोउगाइं महया इहिं सत्कारसमुदणं करिस्संति—” चूडापनयन, और—१४ उपनयन इन अवशिष्ट उत्सवों को करेंगे. तथा—इनके अतिरिक्त और भी बहुत से गर्भाधानादि सम्बन्धी अपनी ऋद्धि के अनुरूप सत्कार करने आदिरूप से करेंगे—

टीकार्थ—उस दारक के बालक मातापिता प्रथम जन्मदिवस के समय कुल मर्यादासे चली आई पुत्रजन्मोत्सव क्रिया करेंगे, इसी के निमित्त तीसरे दिन वे

च ३ नामधिज्जकरणं च ४, परंगमणं च ५, पंचकमणं च ६, पच्चक्खाणयं च ७, जेमणं च ८, पडिवद्धावणं च ९, पजंपावणं च १०, कन्नवेहणं च ११, संवच्छरपडिलेहणं च १२,” अनुक्रमेण यथारे तेणो स्थिति प्रतिज्ञा १ चन्द्र-सूर्यदर्शन २, धर्मजागरण ३, नामकरण ४, आ उत्सवो उन्नी देशे त्थारणाए परगमन ५, प्रचङ्क्रमण ६, प्रत्याख्यान ७, अन्न प्राशन ८, प्रतिवर्धापन ९, प्रजल्पनक १० कर्णवेधन ११, संवत्सर प्रतिलेखनक १२, “चूडावणयणं १३, उवणयणं च १४, अन्नाणिय बहूणि गम्भाहाण जम्मणाइयाइं कोउगाइं महया इहिं सत्कारसमुदणं करिस्संति” चूडापनयन आने १४ उपनयन आ अवशिष्ट उत्सवो उन्नी देशे तेमन्नी पणु धणा गर्भाधान सगधी सत्कार करवाइय करी पोतानी ऋद्धि अनुसार करेशे.

टीकार्थः—ते दारकना मातापिता जन्मने पडेले दिवसे कुलपरंपरागत पुत्र जन्मोत्सव क्रियाओ करेशे. ओ निमित्तो ज त्रीन् दिवसे तेणो चन्द्र-सूर्यदर्शन करेशे.



પુત્રજન્મેત્સવરૂપા ક્રિયા, તાં કરિષ્યતઃ, તૃતીયદિવસે ચન્દ્રસૂર્યદર્શનિકાં—ચન્દ્ર-  
દર્શન-સૂર્યદર્શનરૂપાં પુત્રજ-મોત્સવવિશેષલક્ષણાં પ્રક્રિયાં કરિષ્યતઃ, પષ્ટે દિવસે  
જાગરિકા રાત્રિજાગરણરૂપાં ક્રિયાં જાગરિષ્યતઃ—કરિષ્યતઃ, એકાદશે દિવસે વ્ય-  
તિદ્રાગ્નતે—વ્યતીતે સપ્રાપ્તે—સમાગતે દ્વાદશાહે—દ્વાદશમ્ અહો યસ્મિન્ તત્તસ્મિન્  
તાદૃશે દિવસે દ્વાદશાહે દિવસે इत्यर्थः, અશુચિજાતકર્મકરણે—અશુચીતાં—જન્મા-  
શૌચવતાં કુટુમ્બિતાં જાનકર્મણઃ—નવજાતશિશુસમ્બન્ધિસંસ્કારસ્ય કરણં—વિધાનં,  
તસ્મિન્ નિવૃત્તે સમાપ્તે સતિ જન્માશૌચનિવર્તનનિવર્તનમિત્યર્થઃ, ત્રોક્ષે—સ્વચ્છ, સંમા-  
ર્જિતોપલિપ્તે—સંમાર્જિતે—માર્જન્યા કચવરાપનયનેન સંશોધિતે ઉપલિપ્તે—ગોમયો-  
દિના ઘૃતલેપે ગૃહે, ત્રિપુલં—પ્રચુરમ્ અશનપાનસ્વાદ્યમ્ ઉપસ્કારયિષ્યતઃ—પાચ-  
યિષ્યતઃ મિત્ર-જ્ઞાતિ-નિજક-સ્વજન-સમ્બન્ધિ-પરિજનં—તત્ર મિત્રાણિ—સુહૃદઃ, જ્ઞાતયઃ—  
માતાપિતાભ્રાત્રાદયઃ, નિજકાઃ—સ્વકીયાઃ પુત્રાદયઃ, સ્વજનાઃ—પિતૃવ્ય-ાદયઃ સમ્બ-  
ન્ધિનઃ—સ્વશ્વશુરપુત્રશ્વશુરાદયઃ, પરિજનો-દાસી-દાસાદિઃ, એતેષાં સમાહારે તત્  
આમન્ય, તતઃ પશ્ચાત્ સનાતૌ-કૃતસ્નાનાં કૃતચલિકર્મણૌ—કાકાદિભ્યઃ કૃતાં-

ચન્દ્ર-સૂર્ય દર્શનરૂપ ક્રિયા કરેંગે । અર્થાત્—નવ જાત શિશુ કો ચન્દ્ર-સૂર્યકા  
દર્શન કરાવેંગે— । જવ ગ્યારહવાં દિન વ્યતીત હો જાવેગાં, ઓર-૧૨ વારહવાં  
દિન પ્રારમ્ભ હો જાવેગા. તથા વે જાતકર્મ ક્રિયા કરેંગે, ઇસ ક્રિયા મેં—નવ  
જાત શિશુ કે ઉત્પન્ન હો જાને સે અશુચિતા કુટુમ્બ કે લોંગોં મેં માની જાતી  
હે, અર્થાત્ જન્મ સમ્બન્ધી અશુચિતા ઇસ દિન સમાપ્ત હો જાતી હૈ, ઘર વગેરે  
હ કી લિપાઈ- પોતાઈ કી જાતી હૈ. વસ્ત્રોં કો ધુલવાકર સ્વચ્છ કરાયા જાતા  
હે । ઇસ તરહ અશુચિ વ્યપરોપણ કરકે ફિર ને અશન આદિરૂપચારોં પ્રકાર કે  
આહાર કો વનવાવેંગે. ઓર-અપને મિત્ર-સુહૃદ્જનોં કો માતા-પિતા-ભાઈ આદિરૂપ  
જ્ઞાતિજનોં કો, પુત્રાદિરૂપ નિજજનોં કો, પિતૃવ્ય-આદિરૂપ-સ્વજનોં કો, અપને-  
શ્વશુર ઇવં-પુત્ર શ્વશુર આદિ સમ્બન્ધિજનોં કો, ઇવં-દાસીદાસ આદિ પરિચારક

એટલે કે નવજાત શિશુને ચન્દ્ર-સૂર્યના દર્શન કરાવશે. જ્યારે અગિયારમો દિવસ  
પૂરો થશે અને બારમો દિવસ આરંભ થશે ત્યારે તેઓ જાતકર્મ વિધિ કરશે. આ  
વિધિમાં નવજાત શિશુના જન્મથી કુટુમ્બના લોકોમાં જે અશુચિતા મનાય છે તેને  
સાફ-સફાઈ વગેરે કરીને દૂર કરવામાં આવે છે. એટલે કે જન્મ સંબંધી અશુચિતા  
આ દિવસે મટી જાય છે. ઘર વગેરે લીપવામાં આવે છે. વસ્ત્રો ધોવાડાવી સ્વચ્છ  
કરવામાં આવે છે. આ પ્રમાણે અશુચિ વ્યપરોપણ કરીને પછી તેઓ અશન-પાન  
વગેરે રૂપ ચાર પ્રકારના આહારો બનાવડાવશે અને પોતાના મિત્ર સુહૃદ્ જન, માતા  
પિતા, ભાઈ વગેરે રૂપ જ્ઞાતિજનોને, પુત્રાદિરૂપ નિજજનોને, પિતૃવ્ય વગેરે રૂપ સ્વ-  
જનોને, પોતાના શ્વશુર અને પુત્ર શ્વશુર વગેરે સંબંધીજનોને અને દાસીદાસ વગેરે



त्रभागौ कृतकौतुकमङ्गल-प्रायश्चित्तौ—कृतानि रम्पादितानि कौतुकानि—मपीति-  
लकादीनि मङ्गलानि-मङ्गलकराणि दुःस्वप्नादिकलनिवारणार्थं सर्पपदध्यक्षतादीनि  
तान्येव प्रायश्चित्तानि अवश्यकरणीयत्वात् ग्राम्यः तौ तथा, शुद्धप्रवेश्यानि-शुद्धानि  
पवित्राणि स्वच्छानि च प्रवेश्यानि राजसभाप्रवेशयोग्यानि, मङ्गल्यानि-मङ्गल-  
जनकानि वस्त्राणि प्रवरपरिहितौ-सुप्तृतया रथारीति धारितवन्तौ, अल्पमहार्घ-  
भरणालङ्कृतशरीरौ-तत्र अल्पानि-स्तोकभाराणि महार्वाणि-महामूल्यानि आभराणिनि-  
भूषणानि, तैः अलङ्कृतं-भूषितं शरीरं ययोस्तौ तथा, भोजनमण्डपे-भोजनशालायां,  
सुखासनवरगतौ-निजनिजश्रेष्ठासने सुखरूपेण समुपविष्टौ सन्तौ तेन मित्र  
ज्ञातिनिजक-वन्धनपरिवन्धिनेन सार्धं विपुलम् अशनं पानं खाद्यं स्वाद्यम्  
आस्वादयन्तौ, परिशुजानौ-रुचिपूर्वकं भुजानौ, परिभाजयन्तौ—अन्येभ्यः प्रयच्छन्तौ.  
एवमेव-अनयैव रीत्या खलु विहरिष्यतः-स्थायितः । जिमितशुक्तोत्तरांगतावपि-जिमितौ  
शुक्तवन्तौ शुक्तोत्तरं-भोजनोत्तरकालम् आगतौ-निजनिजोपवेशनं थाने समागतौ

परि-नों को जीमने के लिये आमन्त्रित करेंगे । फिर-नान से, काकआदि  
वों के लिये-कृतान्न विभागसे मपीतिलकादिकरूप कौतुकों से, मङ्गलकर  
दुःस्वप्न आदि अवाञ्छनीय फल की निवृत्ति के लिये सरसों-दधि-अक्षतरूप प्राय-  
श्चित्त से निपटकर राजसभा में प्रवेश के समय पहनने योग्य स्वच्छ-पवित्र  
माङ्गलिकवस्त्रों को अच्छी तरह पहनकर, एवं-अल्पभारवाले अमोल अलङ्कारों  
से शरीर को सुशोभित करनेके बाद भोजनशालामें आवेंगे, और-वहांपर अपने योग्य  
स्थापित श्रेष्ठ आसनपर बैठकर आमन्त्रित होकर आये हुवे उन मित्र-ज्ञाति-निजक  
स्वजन-संवन्धीजन के साथ रुचिपूर्वक भोजन करेंगे, एक दूसरे के लिये  
मनोविनोद करते हुवे भोजन करलेने की क्रिया समाप्त हो जावेगी, तब वे  
हाथ मुख धोकर अपने स्थानपर आकर विराजमान हो जावेगे, वहां शुद्धोदक

परिजनेने जमवा भाटे आमन्त्रित करशे. पछी स्नानथी, डागडा वगेरेने अन्नलाग  
आपवाथी मपीतिलक वगेरेइय कौतुकेधी भंगल करीने दुःस्वप्न वगेरे अवाञ्छनीय  
इणनी निवृत्ति भाटे-सरसव, दधि, अक्षतरूप प्रायश्चित्तथी निवृत्त थधने राजसभाभां  
जवा योग्य वस्त्रो सारी रीते पछेरीने अने अल्पभारयुक्त गहुं डीमती अलङ्कारेथी  
शरीरने सुशोभित करीने पछी ते भोजनशालाभां जशे, अने त्यां पोताने योग्य  
स्थापित श्रेष्ठ आसने पर भेसीने आमन्त्रित भडेमाने-मित्र-ज्ञाति-निजक स्वजन-  
संवन्धीजन अने परिजनानी साथे रुचिपूर्वक जमशे. मनोविनोद करतां ओकथीजने  
पीरसावशे. आ प्रमाणे आनंदपूर्वक जमवातुं काम पुइं थछ जशे. तयार पछी तेओ  
हाथ, मुण धोछने पोतपोताना स्थानपर आवीने विराजमान थछ जशे. त्यां शुद्धोद-

सन्तौ आचान्तौ-शुद्धोदकयोगेन कृताऽऽचमनौ चोक्षौ-लेपसिक्थाद्यपनयनेन स्वच्छौ, अत एव परमशुचिभूतौ अतीव पवित्रौ, तं मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनं विपुलेन प्रचुरेण, वस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेण-उत्र वस्त्राणि-क्षौ मक-कार्पासिक-दुकूलरूपाणि; गन्धाः-पुष्पनिर्यासामोदपरिमलरूपाणि सुगन्धद्रव्याणि, माल्यानि-पुष्पमालाः, अलङ्काराणि-कटककुण्डलाद्याभरणानि तेषां समाहारः, तेन सत्करिष्यतः-तत्प्रदानेन सत्कारं करिष्यतः, सम्मान यष्यतः-मानपूर्वकमादरिष्येते, ततः तस्यैव मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धिपरिजनस्य पुरतः-अग्रे, एवं-वक्ष्यमाणप्रकारेण वदिष्यतः-कथयितः, तदेवाह-हे देवानुप्रियाः ! मित्रादयः ! यस्मात् खलु कारणात् अस्मिन् नवजाते दारके शिशौ गर्भगते एवसति-गर्भगते सति आवयोः धर्मे-जिनप्ररूपिते धर्मे प्रतिज्ञा-मतिः दृढा-निश्चला जाता, तद्-यस्मात् कारणात् आवयोः एष दारको नाम्ना दृढप्रतिज्ञो भवतु । ततः-तदन्तरं खलु तस्य दृढप्रतिज्ञं य दारकस्य अम्बा पितरौ अनुपूर्वेण-अनुक्रमेण स्थितिपतितां१, चन्द्र-

से आचमन कर परमशुचि बने हुवे वे अपने मित्रजनों का, ज्ञातिजनों का, निजकजनों का, स्वजनों का, सम्बन्धिजनों का, और-परिजनों का विपुल-प्रचुर वस्त्रसे, रेशमी-एवं-सूतीवस्त्रोंसे गन्धसे, पुष्परस के आमोद परिमल से, पुष्पमालाओं से, कटककुण्डल आदिरूप अलङ्कारों से सत्कारकरेंगे एवं मान-पूर्वक उनका आदर करेंगे । फिर वे-उन्हीं मित्र-ज्ञाति-निजक-स्वजन-सम्बन्धी परिजनों के समक्ष ऐसा कहेंगे-हे देवानुप्रिय ? मित्रादिको ? जिस कारण से यह दारक जब गर्भ में आया था तब से हमलोगों की धर्ममें-जिन प्ररूपित मार्ग में मैं 'दृढ-निश्चल हो गई थी, इस कारण हमलोगों का यह-पुत्र नाम से 'दृढप्रतिज्ञ हो' ऐसा कहकर वे ल उसका 'दृढ प्रतिज्ञ-' नाम रखेंगे उस दृढप्रतिज्ञ वालक के मातापिता क्रमशः-स्थिति पतिता-१ चन्द्र-सूर्य

दृढी आचमन करीने परमशुचि थयेला तेथो पोताना मित्रजनो, निजकजनो, स्वजनो, सम्बन्धीजनो, परिजनो, विपुल-प्रचुर वस्त्रो, रेशमी, सूती वस्त्रो, पुष्परसना आमोद परिमलथी, पुष्पमालाथी, कटक कुण्डल आदि-अलङ्कारो अलङ्कार करीने. अने सम्मानपूर्वक तेमना आदर करीने. पछी तेथो पोताना मित्र, ज्ञाति, निजक, स्वजन, सम्बन्धी परिजनानी. सामे आ प्रमाणे कहेशे हे हे देवानुप्रियो ! मित्रवरो ! व्याख्या आ दारक गर्भमां आयेछे त्यार्थी अमारी धर्ममां-जिन प्ररूपित मार्गमां-मति दृढ निश्चल थई गई छे. आथी अमारो आ पुत्र दृढ प्रतिज्ञ नामथी सम्बोधित थाय. आम् कहीने ते लोक 'दृढप्रतिज्ञ' ओ प्रमाणे तेहुं नाम राखीने. ते दृढ प्रतिज्ञदायकना मातापिता अनुक्रमे स्थिति पतिता १, चन्द्रसूर्य दर्शनका २,

सूर्यदर्शनिकां२, धर्मजागरिकां३, नामधेयकरणं४, 'परंगमणं' इत्यस्य परगमनं पर्यङ्गनं चेतिच्छाया, तत्र परगमनं-वगृहाद् बहिर्गमनम्, पर्यङ्गनम्-अङ्गुलिग्रहणपूर्वकं भवनाङ्गणे आमणं ५, प्रचन्द्रमणं-स्वतोभ्रमणम् ६, प्रत्याख्यानकम्-आरोग्याद्यर्थं व्रतादिवरणम् ७, जेमनकम्-अन्नप्राशनम्८, प्रतिवर्धापनकम्-आशीर्वाददायकेभ्यो द्रव्यादिदानम्९ प्रजल्पनकं-'माता, पिता' इत्यादिशब्दपाठनम्१०, कर्णवेधनम्११, संवत्सरप्रतिलेखनकम्-जन्मदिनोत्सवम्१२, चूडापनयनं-मुण्डनोत्सवम्१३, उपनयनम्-अध्ययनार्थं कलाचार्यसमीपे नयनम्१४, एताश्चतुर्दशोत्सवान् करिष्यतः अन्यानि च बहूनि गर्भाधानजन्मादिवानि गर्भाधानादिसम्बन्धीनि कौतुकानि-उत्सवजातानि सहता ऋद्धिस्तकारसमुदायेन-ऋद्धिः वस्त्रसुवर्णादिसम्पत् त.।। सत्कारः-जनस्तकारकरणं, तस्य समुदायः-समूहः, तेन करिष्यतः ।।सू०१६८।

मूलम्--तए पां से दढपइण्णे दारगे पंचधाईपरिक्खित्ते, तं जहो खीरधारईए१, मज्जणधाईए२, सडणधाईए३, अकधाईए४, किला-

दर्शनिका-२ धर्म जागरिका-३ नामकरण-४ परंगमण-५ परगृहगमन-अने घरसे बाहर निकलने रूप परगमन, अथवा-अङ्गुलिग्रहणपूर्वक भवनाङ्गणमें फिरने रूप पर्यङ्गमन, प्रचन्द्रमण-स्वतःभ्रमण-६ प्रत्याख्यान-आरोग्य आदिके लिये व्रतादिकरण-७ जेमनक-अन्नप्राशन-८ प्रतिवर्धापनक-आशीर्वाददाय.ों के लिये द्रव्यादि देना-९ प्रजल्पनक-मातापिता-इत्यादि शब्दों का उच्चारण करानां-१० कर्णवेधन-११ संवत्सर प्रतिलेखनक-जन्म दिनोत्सव-वर्षगांठ, १२ चूडा पनयन-मुण्डनोत्सव-१३ और-उपनयन, अध्ययनार्थ कलाचार्य के पास ले जाना १४ इन चौदह प्रकारके उत्सवों को, तथा-इनसेभिन्न और भी अनेक गर्भाधानादि सम्बन्धी कौतुकों को-उत्सवों को, ऋद्धिस्तकार समुदायसे करेंगे. ।।सू०१६८।

धर्मजागरिका ३, नामकरण ४, परंगमण ५, परगमन-पर्यङ्गमन-प्रोताना धरथी पीला धेर जवुं ते परगमन; अथवा अङ्गुलि ग्रहणपूर्वक भवनाङ्गणमां ज इवुं ते पर्यङ्गमन, प्रचन्द्रमण-स्वतःभ्रमण ६, प्रत्याख्यान आरोग्य वणेरे भाटे व्रतादिकरण ७, जेमनक अन्नप्राशन ८, प्रतिवर्धापनक आशीर्वाद आपनाराओने द्रव्य वणेरे आपवुं ९; प्रजल्पनक-मातापिता वणेरे शब्दोत्तु उच्चारण करवुं १०, कर्णवेधन ११, संवत्सर प्रतिलेखनक जन्म दिनोत्सव-वर्षगांठ, चूडापनयन, मुण्डनोत्सव १३ अने उपनयन अध्ययन कलाचार्य पासे लध जवुं ते १४, आ चौद प्रकारना उत्सवोने तेमज्ज ओमनाथी सिन्न पीला पणु धणु गर्भाधान संगंधी कौतुकोने उत्सवोने ऋद्धिस्तकार समुदायपूर्वक करेशे. ।।सू० १६८।।

वणधाईए५, अन्नाहि य बहूहि खुजाहि चिलाइयाहि वामणियाहि१,  
 वडभियाहि२, वडवरिहि३, वाउसियाहि४, जोण्हियाहि५, पल्हवियाहि  
 ६, ईसिणियाहि७, वासिणियाहि८, लासियाहि९, लउसियाहि १०,  
 दविडीहि११, सिंहलीहि१२, आरवीहि १३, पक्कणीहि १४, वहलीहि  
 १५, मुरुंडीहि १६, सव्वरीहि१७, पारसीहि१८, णाणादेसीहि विदे-  
 सपरिमंडियाहि सदेसनेवत्थगहियवेसाहि इंगियचित्तिपत्थियविया-  
 णियाहि निउणकुसलाहि विणीयाहि चेडियाचक्कवालतरुणीवंदपरि-  
 यालपरिवुडे वरिसधरकंचुइज्जमहत्तरगवंदपरिखित्ते हत्थाओ हत्थ  
 साहरिज्जमाणे २ अंकाओ अंकं परिभुजमाणे २ उवनच्चिज्जमाणे २  
 उवगाइज्जमाणे २ उवलालिज्जमाणे २ उवगूहिज्जमाणे २ अवयासिज्ज-  
 माणे २ परिचंदिज्जमाणे २ परिचुविज्जमाणे २ रस्मेषु मणिकुट्टिमत्तलेसु  
 परांगज्जमाणे २ गिरिकंदरमल्लीणेविव चंपगवरपायवे निव्वोधाचंसि  
 सुहसुहेणं वरिवट्टिस्सइ ॥ सू० १६९॥

छायाः—ततः खलु स दृढप्रतिज्ञो दारकः पञ्चधात्रिभिः परिक्षिप्तः, तद्यथा—  
 क्षीरधात्र्या१, मज्जनधात्र्या२, मण्डनधात्र्या ३, अङ्कधात्र्या४ क्रीडनधात्र्या ५.

“तए णं से दढपइण्णे दागे—इत्यादि—

मूलार्थ—“तए णं—” इसके बाद—“से दढपइण्णे—” दृढप्रतिज्ञ वालक—  
 “पंचधाई परिखित्ते—” इन पांच धायमाताओं से युक्त—“तं जहा—क्षीरधाइए—मज्ज-  
 णधाइए—मंडणधाइए—अंकधाइए—किलावणधाइए—” जैसे—क्षीरधायमाता से,  
 दूध पिलानेवाली उप माता से, मज्जनधायमाता से, स्नान करानेवाली उप

“तए णं से दढपइण्णे दागे” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तए णं” त्थार पछी “से दढपइण्णे” ते दृढप्रतिज्ञ आणक “पंच  
 धाई परिखित्ते” आ पांच धाय माताओथी “तं जहा—क्षीरधाइए—मज्जणधाइए—  
 मंडणधाइए—अंकधाइए, किलावणधाइए” जेभडे क्षीरधाय माताथी धवडावनार  
 उपमाताथी, मज्जनधाय माताथी, स्नान करानार उपमाताथी, मंडनधायमाताथी,

अन्यामिथ बहुभिः कुब्जाभिश्चिला तिकाभिः वामनिकाभिः १, वटमिकाभिः २, वर्वरीभिः ३, वकुशिकाभिः ४, यौनिकाभिः ५, पल्हविकाभिः ६, इसिनिकाभिः ७, वासिनिकाभिः ८ लासिकाभिः ९, लाकुशिकाभिः १० द्राविडीभिः ११, सिंहलीभिः १२, आरवीभिः १३, पक्कणीभिः १४, वहलीभिः १५, मुरुण्डीभिः १६, शवरीभिः १७, पारसीभिः १८, नानादेशीयाभिः विदेश-परिमण्डिताभिः स्वदेशनेपथ्यगृहीतवेपाभिः इङ्गितचिन्तितप्रार्थित विज्ञाधिकारिभिः

माता से, मण्डन धाय माता से—मपीतिलक आदि द्वारा मण्डन 'अलङ्कृत' करानेवाली उपमाता से अङ्गधात्री माता से—उत्सङ्ग—गोद में लेकर खिलाने वाली—उप-माता से, द्रीडनधात्री माता से—विविध प्रकार की क्रीडाएं करानेवाली उपमाता से. इन पांच प्रकार की धात्रियों से युक्त हुवा—“अन्नाहिय बहूहिं खुज्जाहिं चिलाइयाहिं वामणयाहिं वडभियाहिं वव्वराहिं वाउसयाहिं जोण्हियाहिं पल्ह-वियाहिं ईसिणियाहिं वासिणियाहिं लासियाहिं—” तथा—इन से अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार की वक्रपृष्ठवाली—एवं अनार्यदेशोत्पन्न ठुमकी—हूव-शरीरवाली—१ वटमिका—२ हीन एकपार्श्व भागवाली वर्वरा—३ वर्वदेशोत्पन्ना वकुशिका—४ यौनिका—५ पल्हविका—६—ईसिनिका—७ वासिनिका—८ लासिका—९ “लउसियाहिं” लाकुशिका १० “दविडीहिं—” द्राविडी—११ “सिंहलीहिं आर-वीहिं—पक्कणीहिं—वहलीहिं—मुरुण्डीहिं—सव्वरीहिं—” पारसीहिं सिंहली—१३ आरवी, पक्कणी—१४ वहली—१५ मुरुण्डी—१६ शर्वरा—१७ पारसी—१८ ‘णाणादेसीहिं—’ अपने—अपने नामानुरूप देशों में उत्पन्न हुयी—तथा—“विदेसपरिमंडियाहिं—”

मपीतिलक वजरे द्वारा मण्डन करानेवाली उपमाताथी, अङ्गधात्री माताथी, उत्सङ्ग जोणाभां जेसाडीने रमाडनार उपमाताथी युक्त थयेलो “अन्नाहिय बहूहिं खुज्जा हिं चिलाइयाहिं वामणियाहिं वडभियाहिं वव्वराहिं वाउसियाहिं जोण्हियाहिं पल्हवियाहिं ईसिणियाहिं वासिणियाहिं लासियाहिं” तेमण्णी १० पण्ण अनेक प्रकारनी वक्रपृष्ठवाणी अने अनार्यदेशोत्पन्न ठीगाणी १; वटमिका २, हीन अने पार्श्वभागवाणी, गण्ण ३ गण्ण देशोत्पन्ना, वकुशिका ४ यौनिका ५, पल्हविका ६, इसिनिका ७, वासिनिका ८, लासिका ९. “लउसियाहिं” लाकुशिका १०, “दविडीहिं” द्राविडी ११, “सिंहलीहिं आरवीहिं” सिंहली १३. आरवी १४. वहली १५. मुरुण्डीहिं सव्वरीहिं पारसीहिं” सिङ्गिली १३. आरवी १४. वहली १५. मुरुण्डी १६. शर्वरा १७. पारसी १८. “णाणादेसीहिं” पोतपोताना— देशोभां उत्पन्न थयेली. तथा “विदेसपरिमंडियाहिं” विदेशी वेशभूषाभां सुसज्ज “सदेस-नेवत्थगहियवेसाहिं, इगियचित्तिपत्थियवियाणियाहिं, निउणकुसलाहिं,

निपुणकुशलाभिः विनीताभिः चेटिकाचक्रवालतरुणीवृन्दपरिवार—परिवृतः वर्ष-  
धकञ्चुकिमहत्तकवृन्दपरिक्षिप्तः हस्ताद् हस्तं संहियमाणाः २ अङ्गाद् अङ्गं  
परिभोज्यमानः २ उपनृत्यमानः २ उपगीयमानः २ पलाल्यमानः २ उपगूह्यमानः  
२ श्लिष्यमाणः २ परिवन्द्यमानः २ परिचुम्ब्यमानः २ रम्भेषु मणिकुट्टिमतलेषु  
पर्यङ्ग्यमाणः २ गिरिकन्दरालीन इव चम्पकवरपादपः निर्व्याघाते सुखसुखेन  
परिवर्धिष्यते ॥ सू० १६९ ॥

विदेश के वेष से सजी हुयी, 'सदेसनेवन्थगहियवेसाहिं, इंगिय  
चितियपथियविधानियाहिं निउणकुसलाहिं, विणीयाहिं—' और अपने देश  
में वस्त्राभूषणों को जिस तरह से पहिना जाता है, उस तरह से वेष को  
धारण करनेवाली, तथा—इङ्गित—चिन्तित—प्रार्थित को अच्छी तरह से समझ  
लेने वाली, नारियों के बीच कुशल, विनय सम्पन्न, स्त्रियों से, तथा—“चेडिया  
चक्कवालतरुणीवन्दपरियालपरिपुडे, वरिसधरकंचुइज्जमहत्तरगवन्दपरिविख-  
त्ते—” और भी दासियों के समूह से एवं युवतियों के समूह से परिवेष्टित  
हुवा, तथा—वर्षाघर, कञ्चुकी, और महत्तरक इन के समूह से परिवेष्टित हुवा,  
एवम्—“हत्थाओ हत्थं साहरिज्जमाणे-२ उपलालिज्जमाणे-२ उवगूहिज्जमाणे-२  
अवयासिज्जमाणे-परियंदिज्जमाणे २ परिचुंविज्जमाणे-२ रम्भेसु मणिकुट्टिमतलेसु  
परंगिज्जमाणे २” एक हाथ से दूसरे हाथों में बारंवार जाता हुवा, एक  
गोदी से दूसरी गोदी में बारंवार नृत्य क्रिया दिखाने से संतुष्ट किया गया.  
बारंवार-मधुर वचनादि द्वारा लाड लडाया गया, बारंवार-२ दृष्टि दोष को दूर  
करने के लिये वस्त्रादिकोंद्वारा ढांका गया, बारंवार हृदय से लगाकर आलि-

विणीयाहिं' अने पोतपोताना देशमां वस्त्राभूषणो जे रीते पहिराय छ ते रीते  
वेषधारण करनारी तथा उंगित चिन्तित अने प्रार्थित ने सारी रीते नानुनारी. स्त्री  
वर्गमां कुशल. विनय सम्पन्न. स्त्रीओथी तेभज 'चेडियाचक्कवालतरुणीवन्द-  
परियालपरिपुडे, वरिसधरकंचुइज्जमहत्तरगवन्दपरिविखत्ते' ओल पण दासी-  
ओना समूहथी अने युवतीओना समूहथी परिवेष्टित थयेले. भज वर्षाघर कंचुकी  
अने महत्तरक ओभना समूहथी परिवेष्टित थयेले अने “हत्थाओ हत्थं साहरि-  
ज्जमाणे २ उपलालिज्जमाणे २, उवगूहिज्जमाणे २, अवयासिज्जमाणे २, परि-  
यंदिज्जमाणे २ परिचुंविज्जमाणे २, रम्भेसु मणिकुट्टिमतलेसु परंगिज्जमाणे २”  
ओक हाथथी ओन हाथमां बारंवार जेतो ओकना ओणामांथी ओनना ओणामां  
बारंवार लछ जवातो, बारंवार नृत्य क्रिया अतावीने संतुष्ट करायेले, बारंवार मधुर  
वचनो वडे लाड करीने, बारंवार दृष्टि दोषने दूर करवा भाटे वस्त्रादिओथी ढांकेले,



टीका:—“तए णं से दृढपङ्णो” इत्यादि—ततः खलु स दृढप्रतिज्ञो दारकः पञ्चधात्रीभिः—बालस्य स्तन्यपानादिकारिकाभिः पञ्चभिर्धात्रीभिः रिक्षितः—परिवृतः, मूले “पञ्चधाईपरिविस्त्रत्ते” इत्यत्र ‘पञ्चधाई’ इति लुप्ततृतीयान्तं पदं, तेन ‘पञ्चधात्रीभिः’ इतिच्छाया, तद्यथा—क्षीरधात्र्या—स्तन्यपायिकया १, मज्जनधात्र्या—स्नपनकारिकया २, मण्डनधात्र्या—मपीतिलकादिभिर्मण्डनकारिकया ३, अङ्गधात्र्या उत्सङ्गस्थापिकया ४, क्रीडनधात्र्या—क्रीडनकारिकया ५।

एवं प्रकाराभिः पञ्चभिर्धात्रीभिः परिवृतः—युक्तः। तथा—अन्याभिः—एतदतिरिक्ताभिरपि बहुभिः—बहुप्रकाराभिः, कुञ्जाभिः—वक्रपृष्ठाभिः, चिलातिभिः—अनार्यदेशोत्पन्नाभिः, काभिः ? इत्याह—वामनिकाभिः—ह्रस्वकायाभिः १, वटमिकाभिः—मडहकोष्ठाभिः—हीनैकपार्श्वभागाभिरित्यर्थः २, वर्वरीभिः—वर्वादेशोद्भवाभिः ३, बकुशिकाभिः ४, यौनिकाभिः ५, पल्हविकाभिः ६, इसिनिकाभिः ७, वासिनिकाभिः ८, लासिकाभिः ९, लकुशिकाभिः १०, द्राविडीभिः ११, सिंहिलीभिः १२, आरवीभिः १३, पक्कीभिः १४, बहलीभिः १५, मुरुण्डीभिः १६, शवरीभिः १७, पारसीभिः १८, एवमेताभिः तत्तन्नामानुरूपनानादेशीयाभिः—अनेकदेशोद्भवाभिः विदेशपरिमण्डित-

इन किया गया. “चिरकाल तक जीवित रहो—” इस तरह के शुभाशीर्वादों से वधाया गया, बारबार चुम्बन किया गया—“रंमेसु मणिकुट्टिमतलेसु परंगिज्जमाणे-२ गिरिकंदरमल्लीणे विव चंपगवरपायवे निव्वाधायंसि, सुहं सुहेणं परिविद्धिस्सइ—” तथा रम्य—रमणीय मणिकुट्टिमतलों में रत्न जडित-अङ्गणों में बार-२ चलता हुआ. गिरिगुहा में स्थित चंपकवृक्ष की तरह निराबाध स्थान में सुखपूर्वक वृद्धि को प्राप्त करेगा.

टीकार्थ—मूलार्थ जैसा ही है, परन्तु फिर भी जो विशेषता है वह ऐसी है—“पञ्चधाई परिविस्त्रत्ते—” यहां—पञ्चधाई. पद लुप्त तृतीयाविभक्ति वाला है, अतः—इसकी छाया—पञ्च धात्रीभिः ऐसी करनी चाहिये। “विदेशपरिमण्डित-

बारं बार हृदयने आंपीने आदिगन करेवो “धणुं एवे” आ नतना शुभाशीर्वादोथी वधामल्ली आपेवो बारं बार युंजित करेवो, “रंमेसु मणिकुट्टिमतलेसु परंगिज्जमाणे २ गिरिकंदरमल्लीणे विव चंपगवरपायवे निव्वाधायंसि सुहंसुहेणं परिविद्धिस्सइ” तेभं रम्य-रमणीय मणिकुट्टिमतलोभां, रत्नजडित आंगणुओभां बार बार आलने, गिरिगुहाभां स्थित चंपक वृक्षनी नेम सुखपूर्वक मोटो थतो गये।  
टीकार्थः—मूलार्थ प्रमाणे न छ. पणु छतांओ ने विशेषता न्णाय छ ते आ प्रमाणे छ. “पञ्चधाई परिविस्त्रत्ते” अही “पञ्चधाई” पद लुप्ततृतीया विभक्तियुक्त छ. ओथी “पञ्चधात्रीभिः” ओवी छाया करवी नेधओ. “विदेशपरिमण्डिताभिः”



તાભિઃ-વિદેશ इति विदेशवेपः, तेन परिमण्डिताभिः विभूषिताभिः, स्वदेश-  
 नेष्यगृहीतवेपाभिः-स्वदेशे निजदेशे यन्नेष्यवस्त्राऽऽभूषणानां परिधानादिरचना  
 तद्वद् गृहीतो वेपो याभिस्तात्तथा, ताभिः. इजितचिन्तितप्रार्थितविज्ञायिकाभिः  
 तत्र इजितं निपुणमतिगम्यं अभिप्रायरूपं प्रवृत्तिनिवृत्तिस्वचक्रमीपद्भूशिरःकम्पादिकं,  
 चिन्तितं-हृदयगतं, प्रार्थितम्-अभिलपितं च विजानन्ति यास्तात्तथा ताभिः, निपुण-  
 कुशलाभिः-निपुणानां चतुरनारीणां मध्ये याः कुशलाः-दक्षस्ताभिः, विनीताभिः-विनय-  
 सम्पन्नाभिः परिक्षिप्त' इति पूर्वेण सम्बन्धः । पुनश्च चेष्टिकाचक्रवालतरुणीवृन्द-  
 परिवारपरिवृतः-चेष्टिकाचक्रवालः दासीममूहः, तरुणीवृन्दं युवति मूहः, तस्य  
 परिवारेण परिवृतः परिवेष्टितः, पुन वर्षधरकञ्चुकिमहत्तरकवृन्दपरिक्षिप्तः, तत्र  
 वर्षधराः अन्तःपुरकार्यकारिणो नपुंसकाः, कञ्चुकिनः अन्तःपुरप्रयोजननिवेदकाः  
 अन्तःपुरप्रतीहारिणा वा, महत्तरकाः अन्तःपुरकार्यचिन्तकाः, तेषां वृन्देन-समूहेन  
 परिक्षिप्तः परिवृतः स ह ताद् हस्तम् एकं हस्ताद् अन्यहस्तं संहियमाण २=वारं  
 वारं नीयमानः अत्र विप्सायां द्वित्वम्, एवमग्रेऽपि, एवम् अङ्गाद् अङ्गम् एकरया  
 उत्सङ्गाद् अन्यया उत्सङ्गं परिभोज्यमानः-पाल्यमानः, उपनृत्यमानः, नर्तन  
 दर्शनेन परितोष्यमाणः, उपगीयमानः गानं श्राव्यमानः, उपलाल्यमानः ललित  
 मधुरवचनादिना लाल्यमानः उपगूह्यमानः दृष्टिदोषादिनिवारणार्थं वस्त्रादिभिरा-  
 ञ्जमानः, श्लिष्यमाणः हृदयसंलग्नेन आलिङ्ग्यमानः परिवन्ध्यमानः "चिरं  
 जीव्याद्" इत्याद्याशीर्वचनैः स्तूयमानः, परचुम्ब्यमानः, परिचुम्ब्यमानः, रम्येषु

તાભિઃ" મેં જોં વિદેશ શબ્દ આયા હૈ વહ "વિદેશ વેપ અર્થ" મેં હૈ, ઇજિત વહ  
 ચેષ્ટા વિશેષ હૈ જો નિપુણમતિદ્વારા હી જાના જાતા હૈ, યહ પ્રવૃત્તિ નિવૃત્તિ  
 કા સૂચક હોતા હૈ, તથા ઇસ મેં થોડે સે રૂપમેં શિરઃકમ્પાના દ કિયા જાતા  
 હૈ. | હૃદયજ્ઞાન અભિપ્રાય કા નામ ચિન્તિત હૈ, તથા-અભિલપિત કા નામ-  
 પ્રાર્થિત હૈ. | અન્તઃપુર મેં જો કાર્ય કરને કે લિયે નિયુક્ત કિયે જાતે હૈ, એવં  
 જો નપુંસક હોતે હૈ-ઇનકા નામ વર્ષધર હૈ. | અન્તઃપુર સમ્બન્ધી પ્રયોજનોં કા  
 નિવેદક હોતે હૈ, અથવા-અન્તઃપુર મેં જો પ્રતિહારકાં કામ કરતે હૈ વે-કજ્જુકી

માં જે વિદેશ શબ્દ આવેલ છે તે 'વિદેશ વેપ' અર્થમાં વપરાયેલ છે. ઇજિત-તે  
 તે ચેષ્ટા વિશેષ છે. જે નિપુણમતિ વડે જે જાણી શકાય છે. આ પ્રવૃત્તિન  
 સૂચક હોય છે. તથા એમાં ધીમેધીમે શિરઃકમ્પનાદિ કરવામાં આવે છે. હૃદયજ્ઞાન  
 અભિપ્રાય ને ચિન્તિત કહે છે. તથા અભિલપિતને પ્રાર્થિત કહે છે. અન્તઃપુરમાં જે  
 કામ કરે છે અને જે નપુંસક હોય છે તે વર્ષધર છે. અન્તઃપુર સંબન્ધી પ્રયોજનો  
 નો જે નિવેદક હોય છે, અથવા અન્તઃપુરમાં જે પ્રતિહારકાં કામ કરે છે તે કજ્જુકી

रमणियेषु मणिकुट्टीमनलेषु रत्नजटिताङ्गणेषु पथङ्गमाणः २=पुनः पुनश्चङ्कभ्यमाणः,  
सन् गिरीः न्दगालीनः गिरिगुहास्थितः चम्पवचर इव श्रेष्ठ चम्पकवृक्ष इव  
नीर्व्याधाते नीरावाये स्थाने सुखपूर्वकं पविर्धिष्यते वृद्धिं प्राप्नोति ॥सू० १६९॥

मूलम्—तए णं तं दढपइणं दारगं अम्मापियरो साइरेण अट्ट-  
वासजायगं जाणित्ता सोभणांस तिहिकरणणक्खत्तमुहुत्तंसि ण्हायं  
कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलवाचिच्छत्तं सव्वालंकारविभूसियं करेत्ता  
महया इहिं रुक्कास्समुदणं कलायरियस्स उवणेहिति । तए णं से  
कलायरिए तं दढपणं दारगं लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउण-  
स्यपज्जवसाणाओ वावत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य गंथओ  
यकरणओ य सिक्खावेहिइ य, सेहावेहिइ य तं जेहा—लेहं १ गणियं २  
रुवं ३ न दृ ४ गीय ५ वाइयं ६ सरगयं ७ पुक्खरगयं ८ समतालं ९ जूयं  
१० जणवायं ११ पासग १२ अट्टा यं १३ पोरेवच्चं १४ दगमड्डियं  
१५ अन्नविहिं १६ पाणविहिं १७ वत्थविहिं १८ विलेक्खणविहिं १९  
सयणविहिं २० अज्जं २१ पहेलिय २२ मागहिय २३ णिहाइय २४  
गाहं २५ भीइय २६ सिलोगं २७ हिरणजुत्तिं २८ सुवणजुत्तिं २९  
आभरणविहिं ३० तरुणीपडिकम्मं ३१ इत्थिलक्खणं ३२ पुरिसल-  
क्खणं ३३ हयलक्खणं ३४ गयलक्खणं ३५ कुण्डलक्खणं ३६ छत्त-  
लक्खणं ३७ चक्रलक्खणं ३८ डलक्खणं ३९ असिलक्खणं ४०  
मणिलक्खणं ४१ कागणिलक्खणं ४२ वत्थुविज्जं ४३ णगरमाणं ४४

कहलाते हैं, अतः-पुर में क्या क्या कार्य होता है, इत्यादिका चिन्तन करने  
वाले होते हैं. वे-महत्तरक हैं ॥ सू० १६९ ॥

कडेवाय छे. अतः-पुरमां शुं शुं काम थवानुं छे, तेनी विचारणां करनास महत्तरक  
कडेवाय छे. ॥ सू० १६९ ॥

खंधावारमाणं ४५ चारं ४६ पांडेचारं ४७ बृह ४८ चक्रवृहं ४९  
गरुलवृहं ५० सगडवृहं ५१ जुद्धं ५२ नियुद्धं ५३ जुद्धजुद्धं ५४  
अट्टिजुद्धं ५५ मुट्टिजुद्धं ५६ बाहुजुद्धं ५७ लयाजुद्धं ५८ ईसत्थ  
५९ छरूपवाय ६० धणुवेयं ६१ हिरण्णपागं ६२ सुवण्णपागं ६३  
मणिपागं ६४ धाउपागं ६५ सुत्तखेडं ६६ वद्धखेडं ६७ णालियाखेडं  
६८ पत्तच्छेज्जं ६९ कडगज्जेज्जं ७० सजीवनिज्जीवं ७१ सउणमयं  
७२ इति । ॥सू० १७० ॥

छाया—ततः खलु तं ददप्रतिज्ञं दाकम् अम्मापितरो सातिरेगएवर्षजातकं  
ज्ञात्वा शोभने तिथिरुणनक्षत्रमुहूर्ते स्नातं कृतवलिकर्माणं कृतकौतुकमंगलप्राय-  
श्चित्तं सर्वालङ्कारविभूषितं कृत्वा महया ऋद्धिसत्कारसमुदयेन कलाचार्यस्य उप-

“तए ण तं ददपइण्णं” इत्यादि

मूलार्थ—“तए णं” इसके बाद—“ददपइण्णं—” दद प्रतिज्ञ “दारगं” दारक  
वालक को—“अम्मापियरो” मातापिता “साइरेगअट्टवासजायगं जाणित्ता—”  
आठ वर्ष से कुछ अधिक का हुवा जानकर—“सोभणंसि तिहिरुणनक्षत्र-  
मुहुत्तंसि ण्हायं” शोभनतिथि नक्षत्र मुहूर्त में उसे स्नान कराकर—“कयवलिकम्मं  
कयकोउयमंगलपायच्छित्तं, सव्वालंकारविभूसियं करेत्ता—” उससे बलिकर्म  
काकआदि को अन्नादि का भाग देकर, कौतुकमङ्गलरूप प्रायश्चित्तका कर,  
एवं—उसे समस्त अलङ्कारों से विभूषितकर—“महया ई ऋद्धिसत्कारसमुदएणं कला-  
यरियस्स उवणेहिंति—” अपनी विशाल ऋद्धि के अनुरूप सत्कारपूर्वक कला-

“तए ण तं ददपइण्णं” इत्यादि ।

मूलार्थ—‘तए णं’ त्थार पछी ‘ददपइण्णं’ ददप्रतिज्ञ ‘दारगं’ दारक-आणकने  
‘अम्मा पियरो’ मातापिताओओ ‘साइरेगअट्टवासजायगं जाणित्ता’ आठ वर्ष  
करता थोडा मोटो थयेल आणीने ‘सोभणंसि तिहिरुणनक्षत्रमुहुत्तंसि ण्हायं’  
शोभनतिथि नक्षत्र मुहूर्तमां तेने स्नान करावशे, ‘कयवलिकम्मं, कयकोउयमंगल-  
पायच्छित्तं, सव्वालंकारविभूसियं करेत्ता’ तेना वडे बलिकर्म—काकडा वगेरेने  
अन्न वगेरेने भाग अपावडावीने, कौतुक मंगलरूप प्रायश्चित्त करावीने अने तेने  
समस्त अलंकारोथी विभूषित करीने ‘महया ई ऋद्धिसत्कारसमुदएणं कलायरियस्स  
उवणेहिंति’ पोतानी बिशाण ऋद्धिना अनुदय सत्कारपूर्वक कलाचार्यनी पासो भोडलशे,

नेप : । तः खल स कलाऽऽचाः तं ददप्रतिज्ञं दृगकं लेखादिका गणि-  
प्रधानाः शकुनरुतपर्यवसानाः द्वासप्ततिं कलाः सूत्रतश्च अर्थतश्च कणतश्च शिक्ष-  
यिष्यति च साधयिष्यति च, तद्यथा—लेखं १, गणितं २ रूपं ३, नाट्यं ४,  
गीतं ५, वादितं ६, स्वरगतं ७, पुष्करगतं ८, समतालं ९, द्यूतं १०, जनवादं  
११, पाशकम् १२, अष्टापदं १३, पौरकृत्यं १४, दकमृत्तिकाम् १५, अन्न-  
विधिं १६, पानविधिं १७, वस्त्रविधिं १८, विलेपनविधिं १९, शयनविधिम्  
२०, आर्यां २१, प्रहेलिकां २२, मागधिकां २३, निद्रायिकां २४, गाथां २५,

चार्य के पास भेजेगे। “तएण से कलायए तं ददपइण्णं दारग लेहाइयाओ  
गणियण्णहाणाओ सउणरुग्गज्जवसाणाओ वावत्तरि कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य  
गंथओ य करणओ य सिक्खावेहि इय सेहावेहि इय—” वह कलाचार्य उस  
ददप्रतिज्ञ दा क को लेखादिक गणित प्रधान कलासे लेकर शकुनरु। तद  
की ७२ कलाओं को सूत्र-अर्थ और—दुभय, एवं-करणस्य सिक्खावेंगा, एवं  
इन्हें सिद्ध भी करावेगा, “तं जहा—लेहं १ गणितं २ रूपं ३ नट्टं ४ गीयं-  
५ वाययं—६ सरगयं—७ पुक्खरगयं—८ समतालं—९—” वे वहत्त कला इस प्रकार  
से हैं लेखन—१ गणित—२ रूप—३ नाट्य—४ गीत—५ वादित—६ स्वरगत—७  
पुष्करगत—८ समताल—९ “जूयं—” द्यूत—१० “जणवायं—” जनवाद—११  
“पासगं” पायक—“अट्ठावयं—” अष्टापद—“पोरेकच्चं—” पौरकृत्य—“दगमट्ठियं—”  
दकमृत्तिका—“अन्नविहिं” अन्नविधि-पाणविहिं पानविधि-‘वत्थविहिं’ वस्त्रविधि  
‘विलेपणविहिं’ विलेपनविधि-‘सयणविहिं’ शयनविधि-‘अज्जं’ आर्या-‘पहेलिसं’-  
प्रहेलिका-‘मागहियं’- मागधिका-‘णिदाइयं’- निद्रायिका-‘गाहं’ गाथा-‘गीइयं’-

‘तएण से कलायए तं ददपइण्णं दागं लेहाइयाओ गणियण्णहाणाओ सउण-  
रुग्गज्जवसाणाओ वावत्तरि कलाओ सुत्तओय अत्थओय गंथओय करणओय  
सिक्खावेहिइय सेहावेहिइय’ ते कलाचार्य ते ददप्रतिज्ञदारकने क्षेत्रादिक गणित  
प्रधान कलाओं की मांडीने शकुनरुत सुधीनी ७२ कलाओंने सूत्र अर्थ अने तदुभय अने  
करणरूपथी शीघ्रवशे अने अभने सिद्धिपणु करावशे तं जहा लेहं १, गणियं  
२, रूपं ३, नट्टं ४ गीयं ५, वाइयं ६, सरगयं ७, पुक्खरगयं ८, समतालं ९,  
ते ७२ कलाओं आ प्रमाणे छे-लेखन १, गणित २, रूप ३, नाट्य ४, गीत ५,  
वादित ६, स्वरगत ७, पुष्करगत ८, समताल ९, ‘जूयं’ द्यूत १०- ‘जणवायं’  
जनवाद ११, ‘पासगं’ पायक, ‘अट्ठावयं’ अष्टापद ‘पोरेकच्चं’ पौरकृत्य ‘दगमट्ठियं’  
दकमृत्तिका, ‘अन्नविहिं’ अन्नविधि, ‘पाणविहिं’ पानविधि ‘वत्थविहिं’ वस्त्रविधि,  
‘विलेपणविहिं’ विलेपनविधि, ‘सयणविहिं’ शयनविधि, ‘अज्जं’ आर्या, ‘पहेलियं’  
प्रहेलिका, ‘मागहियं’ मागधिका, ‘णिदाइयं’ निद्रायिका, ‘गाहं’ गाथा, गीइयं गीतिका,

गीतिकां २६, श्लोकं २७, हिरण्ययुक्तिं २८, सुवर्णयुक्तिम् २९, आभरणविधिं ३०, तरुणीप्रतिकर्म ३१, स्त्रीलक्षणं ३२, पुरुषलक्षणं ३३, हयलक्षणं ३४, गजलक्षणं ३५, कुकुटलक्षणं ३६, छत्रलक्षणं ३७, चक्रलक्षणं ३८, दण्डलक्षम् ३९, असिलक्षणं ४०, मणिलक्षणं ४१ काकिणीलक्षणं ४२, वास्तुविद्या ४३, नगरमानं ४४, स्कन्धावारमानं ४५, चारं ४६, प्रतिचारं ४७ व्यूहं ४८, चक्रव्यूहं ४९, गरुडव्यूहं ५०, शकटव्यूहं ५१, युद्धं ५२ नियुद्धं ५३ युद्धयुद्धम् ५४, अस्थियुद्धं ५५ मुष्टियुद्धं ५६ बाहुयुद्धं ५७ लतायुद्धम् ५८, इष्वस्त्रं ५९, त्सरुप्रवादं ६० धनुर्वेदं ६१ हिरण्यपाकं ६२ सुवर्णपाकं ६३ मणिपाकं ६४,

गीतिया-‘सिलोगं-’ श्लोक-‘हिरण्यजुत्ति-’ हिरण्ययुक्ति-‘सुवर्णजुत्ति’ सुवर्णयुक्ति ‘आभरणविहि-’ आभरणविधि-‘तरुणीपडिकम्म-’ तरुणीप्रतिकर्म-‘इत्थिलवखणं-’ स्त्रीलक्षण-‘पुरिसलवखणं’ पुरुषलक्षण ‘हयलवखणं’ हयलक्षण-‘गयलवखणं-’ गजलक्षण ‘कुकुडलवखणं-’ कुकुटलक्षण-‘छत्रलवखणं-’ छत्रलक्षण-‘चक्रलवखणं’ चक्रलक्षण-‘दण्डलवखणं-’ दण्डलक्षण ‘असिलवखणं-’ असिलक्षण-‘मणिलवखणं’ मणिलक्षण-‘कागणिलवखणं-’ काकिणीलक्षण-‘वधुज्जं-’ वास्तुविद्या-‘नगरमाणं-’ नगरमानं-‘स्वधावारमाणं-’ स्कन्धावारमान-‘चारं-पडिचारं-व्यूहं-चक्रव्यूहं’ चारं-प्रतिचारं-व्यूह-चक्रव्यूह, ‘गरुडव्यूहं-सगडव्यूहं-जुद्धं-निजुद्धं-जुद्धजुद्धं-अट्टिजुद्धं-मुट्टिजुद्धं-बाहुजुद्धं-लयाजुद्धं-इसत्थे-छरुपवायं-’ गरुडव्यूह-युद्ध-नियुद्ध-युद्धयुद्ध-अस्थियुद्ध-मुष्टियुद्ध-बाहुयुद्ध-लतायुद्ध-इष्वस्त्र-त्सरुप्रवाद, धनुर्वेद-हिरण्यपाकं-सुवर्णपाकं-मणिपाकं-धाउपाकं-सुत्तखेडं-वट्टखेडं-जालियाखेडं-पत्तच्छेज्जं-’ धनुर्वेद-हिरण्यपाक-

‘सिलोगं’ श्लोक, ‘हिरण्यजुत्ति’ हिरण्ययुक्ति, ‘सुवर्णजुत्ति’ सुवर्णयुक्ति, आभरण-विधि’ आभरणविधि, ‘तरुणीपडिकम्म’ तरुणी प्रतिकर्म ‘इत्थिलवखणं’ स्त्रीलक्षण ‘पुरिसलवखणं’ पुरुषलक्षण, ‘हयलवखणं’ हयलक्षण, ‘गयलवखणं’ गजलक्षण, ‘कुकुडलवखणं’ कुकुटलक्षण, ‘छत्रलवखणं’ छत्रलक्षण, ‘चक्रलवखणं’ चक्रलक्षण, ‘दण्डलवखणं’ दण्डलक्षण, ‘असिलवखणं’ असिलक्षण, ‘मणिलवखणं’ मणिलक्षण, ‘कागणिलवखणं’ काकिणीलक्षण, ‘वधुज्जं’ वास्तुविद्या, ‘नगरमाणं’ नगरमान, ‘स्वधावारमाणं’ स्कन्धावारमान, ‘चारं पडिचारं व्यूहं चक्रव्यूहं’ चार-प्रतिचार-व्यूह-चक्रव्यूह, ‘गरुडव्यूहं-सगडव्यूहं-जुद्धं-निजुद्धं-जुद्धजुद्धं-अट्टिजुद्धं-मुट्टिजुद्धं-बाहुजुद्धं-लयाजुद्धं-इसत्थे-छरुपवायं’ गरुड व्यूह, शकट व्यूह, युद्ध, नियुद्ध, युद्ध-युद्ध, अस्थियुद्ध, मुष्टियुद्ध, बाहुयुद्ध, लतायुद्ध, इष्वस्त्र, पञ्च प्रवाद, ‘धनुर्वेद-हिरण्यपाकं-सुवर्णपाकं-मणिपाकं-धाउपाकं-सुत्तखेडं-वट्टखेडं-जालियाखेडं-पत्तच्छेज्जं’ धनुर्वेद, हिरण्यपाक, सुवर्णपाक, मणिपाक, स्त्रयेण वत

धातुपाकं ६५ सूत्रखेलं ६६ वर्तखेलं ६७ नालिकाखेलं ६८ पत्रच्छेद्य ६९,  
कटकच्छेद्यं ७० सजीवनिर्जीवं ७१ शकुनरुतम् ७२, इति ॥ सू० १७० ॥

टीका—‘तए णं तं दढपइण्णं’ इत्यादि—ततः खलु तं  
दढप्रतिज्ञं दारकम् अस्या-पितरौ-तन्माता-पितरौ, सातिरेकाष्टवर्षं जातकं-  
संजातकिञ्चिदधिःकाष्टवर्षकं ज्ञा-वा-परिभाव्य शोभने तिथिकरण-  
नक्षत्रमुहूर्ते—तिथिश्च करणं च नक्षत्रं च मुहूर्तं चेत्येतेषां समाहारः तिथिकरण-  
नक्षत्रमुहूर्तं, तत्र शोभनशब्दस्य सर्वत्र सम्यन्थात् शोभनायां तिथौ—नन्दा जया  
पूर्णारूपायां, शोभने करणे—स्थिरसंज्ञके, शोभने नक्षत्रे—विद्याऽध्ययनयोग्ये ज्ञान-  
वृद्धिकारके मृगशीर्षाऽऽर्द्राऽपुष्यः-अश्लेषा-मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद,  
हस्त-चित्रा-रूपे नक्षत्रदशकेऽन्यतमे-शोभने मुहूर्ते-शुभायां वेलायां स्नातं—कृत  
स्नानं, कृतवलिकर्माणं—काकादिभ्यः कृतान्नभागं, कृतकौतुकमङ्गलप्रायश्चित्तं—कृता-  
नि—म्पादितानि कौतुकानि—मपीतिलकादीनि मङ्गलानि—मङ्गलविधायकानि दध्य-  
क्षतादीनि नान्येव प्रायश्चित्तानि—दुःस्वप्नादि विघातार्थमवश्यकरणीयत्वात् प्रा-

सुवर्णपाक-मणिपाक-धातुपाक-सूत्रखेल वर्तखेल—नालिकाखेल—पत्रच्छेद्य. ‘कडग  
च्छेज्जं-सजीवनिर्जीवं—सउणरुयं—७२-त्ति-’ कटकच्छेद्य सजीवनिर्जीवं-और शकुनरुत. ७२।

टीकार्थ—जब दढप्रतिज्ञ दारक आठ वर्ष से अधिक वय का हो  
जावेगा—तब उसके मातापिता उसे शुभ तिथि में—नन्दा—जया—पूर्णारूप तिथि  
में, शुभकरण में—स्थिरनामके शुभकरण में, तथा—विद्याध्ययनयोग्य—ज्ञानवृद्धिकारक  
मृगशीर्षा—आर्द्रा—पुष्य-अश्लेषा-मूल-फाल्गुनी-पूर्वाषाढा-पूर्वाभाद्रपद-हस्त-और चित्रा  
रूप नक्षत्र दशकमें, और शुभवेलामें कलाचार्य के पास ले जावेगे।  
इसके पहले वे उस बालक को स्नान करावेगे, वायस—काक आदिकों को देने  
के लिये उससे अन्न का विभाग कराकर वितरित करावेगे. वह मपी तिलक  
आदि रूप कौतुक को तथा—दुःस्वप्न आदिरूप अमंगल के विघातक—होने से  
अवश्य करणीय ऐसे दध्यक्षतादिरूप प्रायश्चित्तको करेगा. और फिर वह समस्त

जे. नासिका जे. पत्रच्छेद्य. “कडगच्छेज्जं सजी. निर्जीवं सउणरुयं ७२ ति  
कटकच्छेद्य. सजीवनिर्जीवं अने शकुन इति ७२.

टीकार्थः—ज्यारे दढप्रतिज्ञदारक आठ वर्ष करतां मोटो थछ जशे त्यारे तेना  
मातापिता तेने शुभतिथिमां नन्दा जया पूर्णारूप तिथिमां, शुभकरणमां, स्थिर नामना  
शुभकरणमां, तथा विद्याध्ययन योग्य ज्ञानवृद्धिकारक मृगशीर्षा-आर्द्रा पुष्य अश्लेषा  
मूल-पूर्वाफाल्गुनी-पूर्वाषाढा पूर्वाभाद्रपद हस्त अने चित्रा ओ नक्षत्रदशकमां अने  
शुभवेलामां कलाचार्यनी पास ले जावे जशे. अने पहिलां तेओ ते जाणकने  
स्नान करावशे, वायस वगेरेने आपवा मोटे तेनी पासथी अन्नविलाग करावीने  
वितरित करशे. ते मपीतिलक वगेरे इय कौतुकने तेमज दुःस्वप्न वगेरे इय अमं-  
गलना विघातक होवाथी अवश्यकरणीय ओवा दध्यक्षतादि इय प्रायश्चित्तने करशे अने



શ્વિત્તરૂપાણિ યેન સ તમ્, સર્વાલક્ષ્ણરવિભૂષિતં—પરિધૃતકટકકુણ્ડલાદ્યાભરણમ્  
 સર્વે-સમસ્તાઃ હસ્તચ-ળકુણ્ઠાદિયમસ્તાવયવયોગ્યા અલક્ષ્ણારાઃ—વસ્ત્રાભરણરૂપાઃ  
 તૈઃ વિભૂષિતં-સજ્જિતં પરિહિતશુદ્ધપ્રવેશ્યવસ્ત્રં પરિધૃતકટકકુણ્ડલાદ્યાભરણં ચ,  
 એતાદૃશં સુસજ્જિતં દૃઢપ્રતિજ્ઞં દારકં કૃત્વા મહતા ઋદ્ધિસત્કારસમુદયેન-ઋદ્ધિઃ  
 વસ્ત્રસુવર્ણાદિસમ્પત્ તથા સત્કારઃ-સત્કારયુક્તઃ સમુદયઃ—સમાગતજનસમુદાયો યત્ર  
 સ તેગ-મહોત્સવપૂર્વકમિત્યર્થઃ કલાચાર્યસ્ય—કલાશિક્ષકસ્ય સમીપે ઉપનેપ્યતઃ । તતઃ  
 સ્વલુ સ કલાઽઽચાર્યઃ તં દૃઢપ્રતિજ્ઞં દારકં લેખાદિકાઃ ગણિતપ્રધાનાઃ શકુનસ્ત  
 પર્યવમાનાઃ દ્વાસપ્તતિ કલાઃ સૂત્રતઃ—મૂલતઃ અર્થતઃ—અર્થોપદર્શનતઃ, ગ્રન્થતઃ—  
 ગ્રન્થરૂપેણ તાસાં લેખનતઃ કરણતઃ—પ્રયોગતથ શિક્ષાયિપ્યતે—અધ્યાપયિષ્યતિ  
 સાધયિષ્યતિ માધ્યાઃ કારયિષ્યતિશ્ચ । તદ્વથા—તાઃ કલા યથા—લેખમ્ લેખઃ-અક્ષર-  
 વિન્યાસઃ તદ્વિપયા કલાવિજ્ઞાનં લેખવોચ્યતે તં લેખમ્-લેખવિજ્ઞાનમ્ કલા-

અલક્ષ્ણારોં સે કટક-કુણ્ડલાદિરૂપ આભરણોં સે અપને કો સુસજ્જિત કરેગા. તત્  
 પશ્વાત્—વહ સમા મેં પ્રવેશ યોગ્ય શુદ્ધ વસ્ત્રોં કો ધારણ કરેગા. ઇસ પ્રકાર સે સુસજ્જિત હુવે  
 ઉસ દૃઢપ્રતિજ્ઞ કુમાર કો વે માતાપિતા અપની ઋદ્ધિ કે અનુસાર વસ્ત્ર સુવર્ણાદિ  
 સમ્પત્તિ કે અનુરૂપ સમાગત જન—સમુદાય કે સાથ સત્કારપૂર્વક—મહોત્સવ પૂર્વક  
 ઉસે કલાચાર્ય કે પાસ લે જાવેંગે । તત્ત્ર વહ—કલાશિક્ષક ઉસ દૃઢપ્રતિજ્ઞ દારક  
 કો ગણિતપ્રધાન લેખાદિક કલાઓં કો શકુનિસ્તાન્ત (પક્ષિકે શકુન  
 દેરવને તકકી) કલાતક યથાવત્ સિખાવેગા. યે સત્ર વલાઈ ૭૨-હોતી હૈ ।  
 સૂત્ર સે તથા અર્થોપદર્શન સે, એવં તદુભય સે—અર્થાત્ સૂત્ર ઓર અર્થ દોનોં  
 પ્રકાર સે ઓર—પ્રયોગરૂપ સે વહ ઇન સત્ર કલાઓં કે । ઉસે પઠાવેગા.  
 પઠાકર વહ ઇન કલાઓં મેં ક્રિયાત્મકરૂપ સે ઉસે નિપુણ મી કરદેગા. । ઉન  
 ૭૨ કલાઓં કે નામ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—લેખ અક્ષરવિન્યાસ, ઇસ વિષય કા

પછી તે સમસ્ત અલંકારોથી કટક કુંડલાદિ રૂપ આભરણોથી પોતાના શરીરને સુસ-  
 જ્જિત કરશે. ત્યાર પછી તે શુદ્ધ વસ્ત્રો ધારણ કરશે. આ પ્રમાણે સુરાજ્જિત થયેલા  
 તે દૃઢપ્રતિજ્ઞ કુમારને તેના માતાપિતા પોતાની ઋદ્ધિ સુબળ વસ્ત્રસુવર્ણ વગેરે  
 સંપત્તિના અનુરૂપ આવેલ જનસમુદાયની સાથે સત્કારપૂર્વક, મહોત્સવપૂર્વક તેને કલા-  
 ચાર્ય પાસે લઈ જશે. ત્યારે તે કલાશિક્ષક તે દૃઢપ્રતિજ્ઞદારકને ગણિત પ્રધાન લેખા-  
 દિક કલાઓથી શકુનિસ્તાન્ત સુધીની સમસ્ત કલાઓને યથાવત શીખવાડશે. આ બધી  
 કલાઓ ૭૨ છે સૂત્રરૂપે, અર્થોપદર્શનરૂપે, ગ્રન્થરૂપે અને પ્રયોગરૂપે તે કલાચાર્ય તેને  
 સમસ્ત કલાઓનો અભ્યાસ કરાવશે. અભ્યાસ કરાવીને તે તેને ક્રિયાત્મક રૂપમાં પણ  
 નિપુણ બનાવશે. તે ૭૨ કલાઓના નામ આ પ્રમાણે છે. લેખ—અક્ષરવિન્યાસ આ  
 વિષયનું જે વિજ્ઞાન હોય છે તે પણ ‘લેખ’ જ છે આ ‘લેખ’માં અક્ષર વગેરે લખ-



ऽऽचार्यः शिक्षयिष्यतीति सम्बन्धः एवमग्रेऽपि संयोजना कर्तव्या । लेखो लिपि विषयभेदाद् द्विविधः तत्र लिपिः ब्रा-ह्म्यादिभेदेनाष्टादशविधा. सा च समवायाङ्गसूत्रगताऽष्टादशसमवायोक्ता बोध्या । अथवा लाटादिदेशभेदतोऽनेकविधा भवति । पुनश्च बलकलकाष्ठदन्तलोहताम्ररजतपाषाणाद्याधारेषु लेखनोत्किरणस्यूत-व्यूतच्छिन्नभिन्नदग्धसंक्रान्तितोऽक्षरविन्यासरूपा लिपिरनेकविधा भवति । विषय-माश्रित्य स्वामिभृत्यपितापुत्रकलत्रपतिगुरुशिष्यशत्रुमित्रादिविषया कार्यं स्थौल्य-नैपम्यपि चैव कृत्वपदच्छेदादिभेदभिन्ना चानेकविधा भवति १. गणितम्-पट्टिकादि प्रसिद्धमेकद्वयादि संकलनगुणभागादिरूपम् २. रूपम् लेप्यशिला-सुवर्णरजतमणिवस्त्रचित्रादिलक्षणम् ३ । नाट्यम्-साभिनयनिरभिनयभेदभिन्नं

જો વિજ્ઞાન હો જાતા હૈ વહ મી લેખ હી હૈ, ઇસ લેખ મેં અક્ષરોં કી લિખને મેં નિપુણ હો જાના યહ-લેખકલા હૈ, યહ લેખ-લિપિ, એવં-વિષય ભેદસે દો પ્રકાર કા હૈ. ઇનમેં-બ્રાહ્મી આદિ કે ભેદ સે લિપિ ૧૮-પ્રકાર કી હૈ. યહ-વિષય “સમવાયાજ્ઞસૂત્ર” મેં ૧૮-વેં સમવાન મેં કહા ગયા હૈ । અથવા-લાટાદિ કે ભેદ સે લિપિ અનેક પ્રકાર મી હોતી હૈ, પુનઃ-બલકલ-કાષ્ઠદન્ત-લોહ-તામ્ર-રજત-પાષાણ-આદિ આધારોં કે ઉપર અક્ષરોં કા લિખના, ઉન પર અક્ષરોં કા ટાંકી આદિ સે અઙ્કિત-(ઉકેરના) ઇત્યાદિરૂપ સે અક્ષરવિન્યાસ-રૂપ લિપિ અનેક પ્રકાર કી હૈ । વિષય કી અપેક્ષા મી સ્વામી-મૃત્ય-પિતા-પુત્ર-કલત્ર-પતિ-ગુરુ-શિષ્ય-શત્રુ ઔર-મિત્રાદિ કો વિશય કરને વાલી જો લિપિ હૈ વહમી કૃશતા સ્થૂલતા આદિરૂપ સે વિન્યાસ કી અપેક્ષા અનેક પ્રકાર હોતી હૈ ૧ । ગણિતરૂપ કલા ગુણા-ભાગ, વીજગણિત-રેસ્વાગણિત આદિ હોતી હૈ ૨ । રૂપ-કલા-લેખ્ય, શિલા, સુવર્ણ, રજત-આદિ કે ઉપર ચિત્ર કો ઉતારનેરૂપ યા-

વામાં કુશળતા મેળવવી તે લેખકલા છે. આ લેખ-લિપિ અને વિષયલેખથી બે પ્રકારનો છે. આમાં બ્રાહ્મી વગેરેના લેખથી ૧૮ પ્રકારની લિપિ છે. આ વિષય ‘સમવાયાજ્ઞ’ સૂત્રમાં ૧૮ માં સમવાયમાં આવેલ છે. અથવા લાટાદિના લેખથી લિપિના ઘણા પ્રકારો છે. અને વલ્કલ, કાષ્ઠ, દંત, લોહ, તામ્ર, રજત, પાષાણ વગેરે આધારો પર અક્ષરો લખવાં, તેમની ઉપર ટાંકણથી ટાંકણ વગેરે રૂપમાં અક્ષર વિન્યાસ લિપિ ઘણા પ્રકારની છે. વિષયની અપેક્ષાએ પણ સ્વામી, ભૂત્ય, પિતા, પુત્ર, કલત્ર, પતિ, ગુરુ, શિષ્ય, શત્રુ અને મિત્ર વગેરેને વિશય કરનારી બે લિપિ છે તે પણ કૃશતા સ્થૂલતા વગેરે રૂપથી વિન્યાસની અપેક્ષાએ અનેક પ્રકારની હોય છે ૧, ગણિતકલા ગુણા-ભાગ-બીજ ગણિત; રેખા ગણિત વગેરે પ્રકારની હોય છે. ૨, રૂપકલા-લેખ્ય, શિલા, સુવર્ણ, રજત, વગર વગેરેની ઉપર ચિત્રને ઉતારવા રૂપક લેખન રૂપ હોય છે. ૩ નાટ્યકલા અભિનય સહિત, વગર

નર્તનમ્ ૪ । ગીતમ્—ગન્ધર્વકલાજ્ઞાનવિજ્ઞાનરૂપમ્ ૫ । વાદિતમ્—તતવિતતાદિ  
 ભેદભિન્નં વાદ્યમ્ ૬ । સ્વરાતમ્—પદ્મજઞ્ઞપમાદિસ્વરજ્ઞાનમ્ ૭ । પુષ્કરગતમ્—મૃદ-  
 જમુરજાદિભેદયુક્તં વિજ્ઞાનમ્ । અસ્ય વાદ્યાન્તર્ગતત્વેऽપિ યત્પૃથક્થનં તત્ પરમ-  
 સજ્જીતાજ્ઞત્વશ્ચાપનાર્થમ્ ૮ । સમતાલમ્—તમઃ-અન્યુનાધિકમાત્રઃ તાલઃ-ગીતાદિ-  
 માનકાલો યત્ર તત્ સમતાલવિજ્ઞાનમિત્યર્થઃ ૯ । દ્યૂતમ્—પ્રગ્નિદ્ધમ્ ૧૦ । જન  
 વાદ—દ્યૂતવિશેષઃ ૧૧ । પાશામ્—પાશૈઃ खेलनरूपं द्यूतम् ૧૨ । અષ્ટાપદમ્—સારિ  
 ફલદ્યૂતમેવ ૧૩ । પૌરકૃત્યમ્—પુરાય કૃતિઃ—નિર્માણં તદ્વિપયં વિજ્ઞાનં પૌરકૃત્ય-  
 પુરનિર્માણં લેત્યર્થઃ । તત્ અત્ર ત્રિવિધઃ પાઠ ઉપચર્યતે તયાહિ-પૌરેકચ્ચ 'પૌરેવચ્ચં'  
 'પૌરેકચ્ચં' ઇતિ । પ્રત્યેકસ્ય છાયાપિ તદનુસારેણૈવ ભવતિ—'પૌરેકૃત્યમ્' પૌરપત્યમ્  
 'પુરકાવ્યમ્' ઇતિ । તત્ર પૌરેકચ્ચ' ઇત્યસ્ય વ્યાખ્યાઽત્ર કૃતા 'પૌરેવચ્ચં' પૌરપત્યમ્—  
 નગરરક્ષકકલા, 'પૌરેકચ્ચં' પુરકાવ્યમ્—પુરતઃપુરતઃ કાવ્યરૂપવાણી નિસ્મારણં  
 શીઘ્રકવિત્વમિત્યર્થઃ । ૧૧૪ । દકમૃત્તિકમ્—ઉદયસંયુક્તમૃત્તિકા વિવેકદ્રવ્યપ્રયોગ-

લિખને રૂપ હોતી હૈ. ૩ । નાટ્યકલા-અભિનયસહિત, વિના અભિનય કે ભેદ સે  
 દો પ્રકાર કી હોતી હૈ ૪ । ગીતકલા—ગાને આદિ મેં નિપુણતા પ્રાપ્ત કરનેરૂપ  
 હોતી હૈ. ૫ । વાદિત્રકલા—તત, વિતત આદિરૂપ વાદિત્રોં કે વજાને રૂપ હોતી હૈ ૬ ।  
 સ્વરકલા—પદ્મ, ઋષમ—આદિ કે જ્ઞાન કરાનેરૂપ હોતી હૈ ૭ । પુષ્કરગતકલા—મૃદજ,  
 મુરજ આદિ કે વજાનેરૂપ હોતી હૈ । યદાપિ—યહ કલા વાદિત્રકલા મેં અન્તર્ભૂત હો  
 જાતી હૈ, ફિર મી—इसे जो स्वतन्त्ररूप से अलग कला कही गई है सो-यह सज्जीतकला-  
 મેં ઉસકા ઉત્કૃષ્ટ અજ્ઞ હૈ. ઇમ વાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે કહા ગયા હૈ ૮ ।  
 ગીતાદિકોં કા માન કાલ જહાં હોતા હૈ, ઉસકા નામ તાલ હૈ, ઇસ તાલ  
 કા જો વિજ્ઞાન હૈ વહ સમતાલ વિજ્ઞાન હૈ ૯ । જૂઆ खेलने की चतुराई का नाम  
 દ્યૂતકલા હૈ ૧૦ । જનવાદ-यह भी एक प्रकार का विशेष जूआ है, ૧૧ । પાશોં સે દ્યૂત  
 खेलने की विशेष निपुणता का नाम पाशकला है. ૧૨ । સારિફલ દ્યૂતરૂપ અષ્ટા-  
 પદ કલા હોતી હૈ ૧૩ । નગર કે નિર્માણ કરને કી કલા કા નામ પૌરકૃત્યકલા-

અભિનય આમ ઁ પ્રકારની હોય છે. ગીતકલા-સંગીત વગેરેમાં નિપુણતા પ્રાપ્ત  
 કરવી તે છે ૫. વાદિત્રકલા તત, વિતત વગેરે વાદિત્રોને વગાડવા તે છે ૬. સ્વરકલા-પદ્મ,  
 ઋષભ વગેરેનું જ્ઞાન મેળવવું તે છે ૭. પુષ્કરગત કલા-મૃદંગ, મુરજ વગાડવા તે છે,  
 જો કે આ કલા વાદિત્રકલાની અન્તર્ભૂત થઈ જાય છે પણ છતાંએ આને એ સ્વતંત્ર  
 રૂપમાં જુદી કલા ગણી છે તેનું કારણ આ છે કે આ કલાનું સંગીત કલામાં અતીવ  
 મહત્વપૂર્ણ સ્થાન છે ૮. ગીત વગેરેનો જે માનકાલ હોય છે તેનું નામ તાલ છે, આ  
 તાલનું જે વિજ્ઞાન છે તે સમતાલ વિજ્ઞાન છે ૯. જુગાર રમવાની કુશળતાનું નામ દ્યૂત-  
 કલા છે ૧૦. જનવાદ પણ એક જાતનો વિશેષ જુગાર છે ૧૧. પાસાઓથી જુગાર રમવામાં  
 વિશેષ નિપુણતા મેળવવાનું નામ 'પાશકલા' છે ૧૨. સારિકલ દ્યૂતરૂપ અષ્ટાપદકલા  
 હોય છે ૧૩. નગરની નિર્માણકલા પૌરકૃત્યકલા છે ૧૪, ઉદક (પાણી)માં મળેલી માટીને જે

पूर्विका तप्यकरणकलाऽप्युपचाराद् दकमृत्तिका ताम् १५ । अन्नविधिम्—अन्न  
पाककलाम् १६ । पानविधि—जलोत्पादनकलां तत्संशोधनकलां वा १७ । वस्त्र-  
विधिम्—वस्त्रोत्पादनकलां तद्धारणकलां वा १८ । विलेपनविधि—शरीरोपरिचन्दना-  
दिलेपकलां यन्नकर्दमादिलेप परिज्ञानम् १९ । शयनविधिम् शयन-शय्या पल्यङ्गादि.  
तद्विषया कला ताम् २० । आर्याम्—मात्राच्छन्दो विशेषनिर्माणकलाम् २१ ।  
ग्रहेलिकाम्—गूढाशयपद्यरूपाम् २२ । मागधिकाम्—भाषाच्छन्दोविशेषाम् २३ ।

है. १४। उदक में मिली हुई मिट्टी को दूर करनेवाले द्रव्य का ज्ञान होना, और-  
उसका सम्बन्ध कराकर पानी और मिट्टी को दूर कर देना यह—दकमृत्तिका  
कला है जैसे—निर्मली—फिटकिडी डाककर गन्दे पानी को निर्मल करदिया  
जाता है. १५। भोजन बनाने की चतुराई का नाम अन्नविधि कला है, १६। भूमि का  
देखकर यहां जल निकलेगा इस प्रकारके विज्ञान का नाम पानविधि कला है. १७।  
वस्त्रों का निर्माण करने की चतुराई का नाम, या—वस्त्रों को सुन्दर ढंग से  
पहनने की चतुराई का नाम वस्त्रविधि कला है. १८। शरीर के ऊपर चन्दनादि  
का लेप करने की चतुराई का नाम—विलेपनविधि है, १९। पल्यङ्ग आदि विषयक  
ज्ञान होना—अर्थात् इस प्रकारका पल्यङ्ग शुभ होता है—इस प्रकार का पल्यङ्ग  
शुभ नहीं होता है, ऐसा ज्ञान होना इसका नाम—शयनविधि कला है २०।  
मात्रावाले छन्दों का निर्माण करना. यह—आर्या कला हैं, २१। गूढ आशयवाले  
पद्यों की निर्माणकला ग्रहेलिका कला है. २२। भाषाछन्द विशेष का नाम—मागधिका  
है, इसके निर्माण की चतुराई का नाम मागधिकाकला है, २३। निद्रा आने की विद्या

द्रव्यथी जुही पाडी शक्य तेनुं ज्ञान थवुं अने तेने। संशोध करवीने पाणी अने  
भाटीने जुहा जुहा करवा आ दकमृत्तिका कला छे. जेमके निर्मली-फिटकिडी नाभीने  
गंदा पाणीने साफ करवांमां आवे छे १५. भोजन तयार करवानी कुशणतानुं नाम अन्न-  
विधि कला छे १६ जमीनने जेधने अहीथी पाणी नीकणशे आ जतना विज्ञाननुं नाम  
'पानविधि कला' छे. १७ वस्त्रोना निर्माणुनी कुशणतानुं नाम अथवा तो वस्त्रोने सुंदर  
ढंगथी पहिरवानी कणानुं नाम वस्त्रविधि कला छे. १८ शरीरनी उपर चन्दन वगेरेने लेप  
करवानी कुशणतानुं नाम विलेपनविधि छे. १९ पल्यङ्गादि विषयकज्ञान थवुं अटवे छे  
आ जतने पल्यङ्ग शुभ होय छे, आ जतने पल्यङ्ग शुभ नथी होतो आवुं ज्ञान  
थवुं, आनुं नाम शयनविधि कला छे. २० मात्रावाणा छंदोनुं निर्माणु करवुं ते आर्याकला छे. २१  
गूढ आशययुक्त पद्योनी निर्माणकला 'ग्रहेलिका-कला' छे. २२ भाषाछन्द विशेषनुं नाम  
मागधिका छे. अनी निर्माणु कुशणता मागधिका कला छे. २३ निद्रा आववानी विद्यानुं

નિદ્રાયિકામ્—અવસ્થાપની વિદ્યારૂપાં કલામ્ ૨૪ । ગાથાગીતિકા ચેતિ કલાદ્વય-  
માર્યામેદરૂપામ્ ૨૫ ૨૬ । શ્લોકમ્—શ્લોકરચનાકલામ્ કવિત્વકલામિત્યર્થઃ ૨૭ ।  
હિરણ્યયુક્તિમ્—હિરણ્યસ્ય—રજતસ્ય યુક્તિઃ—નિર્માણવિધિન્તામ્ ૨૮ । સુવર્ણ  
યુક્તિમ્—સુવર્ણસ્ય યુક્તિઃ—નિર્માણવિધિસ્તામ્ ૨૯ । આભરણવિધિમ્—  
ભૂષણનિર્માણકલામ્ ૩૦ । તરુણીપરિકર્મ—સ્ત્રીર્ણાં વર્ણાદિવૃદ્ધિરૂપામ્ ૩૧ । સ્ત્રી-  
લક્ષણમ્, પુરુષલક્ષણમ્, એતન્દયં સામુદ્રિકશાસ્ત્રપ્રસિદ્ધં વિજ્ઞાનમ્ ૩૨—૩૩ । હ્ય-  
ગજ-કુકુટ-છત્ર-ચક્ર-દણ્ડાનાં પ્રસિદ્ધાનાં સમાનાં તત્તલ્લક્ષણજ્ઞાનકલાઃ ૩૪—૪૦ ।  
મણિલક્ષણમ્—રત્નાદિ—પરીક્ષણમ્ ૪૧ । કાકિણીલક્ષણમ્—કાકિણી—ચક્રવર્તિનો

કા જ્ઞાન હોના ઉસકા નામ—નિદ્રાયિકા કલા હૈ, ઇસ કલાવાલા દૂસરે કો  
ઇસ કલા કે પ્રભાવ સે નિદ્રા મેં મગ્ન કર દેતા હૈ ૨૪ । ગાથા-ઔર ગીતિકા  
યે દોનોં કલોઈ આર્યા કા હી મેદરૂપ હોતી હૈ, ૨૫-૨૬ શ્લોકરચના કરને કી  
ચતુરાઈ કા નામ—શ્લોકકલા હૈ, ઇસકા દૂસરા નામ—કવિત્વકલા મી હૈ ૨૭ । હિરણ્ય  
યુક્તિ—ચાન્દી બનાને કી કલા ૨૮ સુવર્ણયુક્તિ—સોના બનાને કી કલા ૨૯ ભૂષણોં કે  
નિર્માણ કી વિધિ કા જાનના. આભરણવિધિ કલા હૈ. ૩૦ । સ્ત્રીયોં કે વર્ણાદિક મેં  
વિધાન કા જાનના. તરુણીપરિકર્મકલા હૈ. ૩૧ । સ્ત્રીયોં કે શુભાઽશુભ લક્ષણોં કો  
જાનના. સ્ત્રીલક્ષણકલા હૈ. ૩૨ । પુરુષલક્ષણોં કા જાનના યહ પુરુષ લક્ષણકલા-  
હૈ. ૩૩ । દોનોં કલોઈ સામુદ્રિકશાસ્ત્ર સે સમ્બન્ધિત હૈ । ઘોડા—હાથી—કુકુટ—છત્ર—  
ચક્ર-દણ્ડ અસિ (તલવાર) ઇન સાતોં કે શુભાઽશુભ લક્ષણોં કો જાનના ઇસ  
નામ ઉસ ઉસ નામ કી કલા હૈ ૩૪—૪૦ । રત્નાદિકોં કી પરીક્ષા કરના ઇસકા નામ  
મણિલક્ષણ કલા હૈ. ૪૧ । કાકિની કલા મેં—ચક્રવર્તી કે રત્ન વિશેષ કી પરીક્ષા

જ્ઞાન થવું તે 'નિદ્રાયિકા' કલા છે. આ કલાને બાબુનારને ખીબને આ કલાના પ્રભાવ-  
થી નિદ્રામગ્ન કરે છે ૨૪. ગાથા અને ગીતિકા આ બંને કલાઓ આર્યાનાજ ભેદરૂપમાં  
છે. ૨૫-૨૬. શ્લોક રચનામાં કુશળતાનું નામ શ્લોક કલા છે. આનું ખીબું નામ  
કવિત્વકલા પણ છે ૨૭ હિરણ્ય યુક્તિ—ચાંદી બનાવવાની કલા, ૨૮ સુવર્ણને યુક્તિ—સોનું  
બનાવવાની કલા ૨૯ આભરણવિધિ—આભૂષણોને બનાવવાની વિધીને બાબુવી  
તે આભરણવિધિ કલા છે ૩૦. સ્ત્રીઓના વર્ણાદિકમાં વૃદ્ધિવિધાન બાબુવું તે  
તરુણી પરિકર્મકલા છે ૩૧. સ્ત્રીઓના શુભાશુભ લક્ષણો બાબુવાં તે સ્ત્રીલક્ષણ કલા છે ૩૨. પુરુષ  
લક્ષણો બાબુવા એ પુરુષ લક્ષણ કલા છે ૩૩. એ બંને કલાઓ સામુદ્રિકશાસ્ત્રની સાથે  
સંબંધ રાખે છે. ઘોડા—હાથી—કુકુટ—છત્ર—ચક્ર—દંડ—આસિ—(તરવાર) એ સહિતના શુભા-  
શુભ લક્ષણો બાબુવા તેના નામો તે તે કલા વિશિષ્ટ સમજવા ૩૪-૪૦ રત્નાદિકોની પરીક્ષા તે  
મણિલક્ષણ કલા છે ૪૧. કાકિણી કલામાં—ચક્રવર્તીના રત્નવિશેષની પરીક્ષા તેના લક્ષણોના

रत्नविशेषस्तस्य लक्षणम् ४२ । वास्तुविद्या—गृहभूमेर्गुणदोषज्ञानरूपाम् ४३ ।  
नगरमानम्—नगरस्य दशयोजनाऽऽयाम-नवयोजनव्यासादि-प्रमाणज्ञानम् ४४ ।  
स्कन्धाधारमानम्—सेनानिवेशप्रमाणज्ञानम् ४५ । चारम्—चारो—ज्योतिश्चारः, तद्वि-  
ज्ञानम् ४६ । प्रतिचारम्—प्रतिचरणं प्रतिचारः—रोगिणः प्रतीकारकरणं, तद्विषयक-  
ज्ञानम् ४७ । व्यूहम्—सामान्यतः सैन्यरचनं, तद्विषयज्ञानम् ४८ । चक्रव्यूहम्—चक्रा-  
ऽऽकृतिकसैन्यरचनाम् ४९ । गरुडव्यूहम्—गरुडाऽऽकृतिकसैन्यरचनाम् ५० । शकट-  
व्यूहम्—शकटाऽऽकृतिकसैन्यरचनाम् ५१ । युद्धम्—युद्धकलाम् ५२ । नियुद्धम्—  
मल्लयुद्धकरणकलाम् ५३ । युद्धयुद्धम्—खड्गादिप्रक्षेपणपूर्वकमहायुद्धकलाम् ५४ ।  
अस्थियुद्धम्—अस्थिभिः—कूर्परादिभिः प्रहरणं, तत्कलाम् । यद्वा 'दृष्टियुद्धम्' इति

करने के लक्षणों के जानना ४२ । गृहभूमि के गुण दोषों का ज्ञान होना  
इसका नाम वास्तु विद्या कला है, ४३ नगरकी दशयोजन लम्बाई और नौ योजन  
चौड़ाई आदि प्रमाण का ज्ञान होना यह नगरमान कला है ४४ । सेनानिवेश  
के प्रमाण का होना—स्कन्धावार मानकला है ४५ । नक्षत्रादिक ज्योतिष्कों की  
चाल का ज्ञान होना चारककला है, ४६ । रोगों के प्रतिकार करने के उपायों का  
ज्ञान होना प्रतिचारकला है, ४७ । सामान्यरूप में सैन्यरचना का ज्ञान होना, यह  
व्यूह कला है, ४८ । चक्राकाररूप में सैन्य की रचना करना चक्रव्यूहकला है, ४९ ।  
गरुड के आकार में सैन्य की रचना करना यह गरुड व्यूहकला है, ५० । शकट  
के रूप में सैन्य की रचना करने का ज्ञान होना यह शकटव्यूहकला है ५१ । युद्ध  
करने का ज्ञान होना यह युद्धकला है, ५२ । मल्लयुद्ध करने का ज्ञान होता यह  
मल्लयुद्ध या नियुद्धकला है ५३ । तलवार आदि चलाते हुवे घमासान युद्ध करना  
यह युद्धयुद्धकला है, ५४ । अस्थि—टोहनी आदि से प्रहार करने की चतुर्बाई का

आधारे करवाभां आवे छि ४२ गृहभूमिना गुणदोषानुं ज्ञानं ययुं ते वास्तुविद्याकला छि. ४३  
नगरमानी दश योजन लम्बाई अने नवयोजन पहोणाछ विगेरे प्रमाणानुं ज्ञानं ययुं ते  
'नगरमान कला' छि. ४४ सेनानिवेशना प्रमाणानुं ज्ञानं ययुं ते स्कन्धावारमान कला छि. ४५  
नक्षत्रादिक ज्योतिष्केानी गतिनुं ज्ञानं ययुं ते चार कला छि ४६ रोगोने भटाडवाना  
उपायेनुं ज्ञानं ते प्रतिचार कला छि. ४७ सामान्य रूपथी सैन्यरचनानुं ज्ञानं ययुं ते व्यूह  
कला छि. ४८ चक्राकाररूपमां सैन्यरचना करवी चक्रव्यूह कला छि. ४९ गरुडना  
आकारथी सैन्यनी रचना करवी तेनुं नाम गरुडव्यूह कला छि. ५० शकटना रूपमां  
सैन्यनी रचना करवानुं ज्ञानं ययुं ते शकटव्यूह कला छि. ५१ युद्ध करवानुं ज्ञानं ययुं  
ते युद्ध कला छि. ५२ मल्लयुद्ध करवानुं ज्ञानं ययुं ते मल्लयुद्ध के नियुद्धकला छि. ५३  
तलवार वगेरे करवातां अयंकर युद्ध करेयुं ते युद्ध युद्ध कला छि. ५४ अस्थि—टोहनी वगेरेथी  
प्रहार करवानी कुशणतानुं नाम अस्थियुद्ध कला छि. अथवा 'दृष्टि युद्ध' आ ५४मां

पाठः प्रतिद्वन्द्विनोश्चक्षुषो निर्निमेषपावस्थानं, तत्कलाम् ५५ । दृष्टियुद्धम्—मुष्टिभिः  
 प्रहरणम् ५६ । बाहुयुद्धम्—बाहुभिः प्रहरणम् ५७ । लतायुद्धम्—लतावृक्षमिव शत्रुं  
 गाढं परिवेष्ट्य प्रहरणम् ५८ । इष्वस्त्रम् नागवाणादिदिव्यस्त्रप्रक्षेपणम् ५९ ।  
 त्सरुप्रवादम्—त्सरुः—खड्गमुष्टिः, अवयवे समुदायोपचारात् त्सरुशब्देनात्र खड्गो  
 गृह्यते, तस्य प्रवादो यत्र शास्त्रे तत् त्सरुप्रवादं—खड्गशिक्षाशास्त्रमित्यर्थः ६० । धनुर्वे-  
 दम्—धनुःशिक्षणशास्त्रम् ६१ । हिरण्यपाक-सुवर्णपाकौ—रजत-सुवर्णयो रसायन क्रिया  
 तद्विषयकवलाद्वयम् ६२-६३ । मणिपाकम्—मणिनिर्माणकलाम् ६४ । धातुपाकम्—  
 रजत ताम्रादिधातुनिर्माण कलाम् ६५ । सूत्रखेल-वर्तखेल-नालिकाखेलाः लोकतः प्रत्येत-  
 व्याः ६६-६८ । पत्रच्छेदम्—अनेकपत्रेषु विवक्षित पत्रच्छेदनकलाम् ६९ । षट्क-

नाम अस्थियुद्धकला है। अथवा 'दृष्टियुद्ध' इस पाठ में प्रतिस्पर्धी की आंखों  
 को अपनी चितवन से निसेपरहित कर देना सो दृष्टियुद्ध है, ५५ । मुष्टियों से प्रहार  
 करना, इसका नाम मुष्टियुद्धकला है ५६ । बाहुओं से प्रहार करना, इसका नाम-बाहु  
 युद्धकला है, ५७ । लता जैसे वृक्षां को लपेट लेती है, इसी प्रकार से शत्रु को घेरे  
 में डालते हुवे गाढरूप से लपेटकर फिर उस पर प्रहार करना, लतायुद्ध है, ५८ ।  
 नागवाण आदि दिव्यरत्नों का प्रक्षेपण करना, इसका नाम-इष्वस्त्रकला है, ५९ ।  
 त्सरुशब्द का अर्थ तलवार की मूठ है, यहां अवयव में समुदाय के उपचार से  
 त्सरुशब्द से खड्ग का ग्रहण किया गया है—इस खड्ग—तलवार को चलाने में  
 निपुण होना इसका नाम—त्सरुप्रवाद है ६० । धनुष चलाने की क्रिया में  
 निपुणता प्राप्त करना यह—धनुर्वेद कला है, ६१ । रजत और सोना को रसायन क्रिया  
 जानना वह हिरण्यरूप, सुवर्ण पाक कला है ६२-६३ । मणियों का निर्माण विधान को  
 जानना मणि निर्माण कला है, ६४ अथवा—रजत ताम्रादि धातुओं का निर्माण

शत्रुनी आंणोने पोतानी दृष्टिी निमेष रहित करवी ते दृष्टियुद्ध छे ५५. मुष्टिकाओथी  
 प्रहार करीने लडवुं ते मुष्टि युद्ध कला छे. ५६ बाहुओथी लडवुं ते बाहु युद्ध कला छे. ५७  
 लता जेम वृक्षोने परिवेष्टित करी ले छे तेमज शत्रुने आरे तरङ्ग घेरीने गाढरूपथी  
 तेने वञ्चे लधने तेनापर हुमलो करवो ते लतायुद्ध छे ५८. नागवाणु वगेरे दिव्यरत्नोतुं  
 प्रक्षेपणु करवुं तेतुं नाम इष्वस्त्रकला छे ५९. त्सरु शब्दोने अर्थ तरवारनी मूठ छे.  
 अही अवयवमां समुदायना उपचारथी त्सरु शब्दथी णङ्गुतुं अलणु करुं छे. णङ्गुने  
 अलाववामां कुशलता भेणववी तेतुं नाम त्सरुप्रवाद छे ६०. धनुष अलाववामां निपुणता  
 भेणववी ते धनुर्वेद कला छे ६१. रजत अने सुवर्णना रसायणुनी क्रिया जालीने रजत अने  
 हिरण्य पाक कला छे ६२-६३. मणिओना निर्माणुनी कला जालुवी ते मणि निर्माणुकला छे ६४. अथवा  
 रजत ताम्र वगेरे धातुओतुं निर्माणु करवुं आ धातुपाककला छे ६५. नटोनी जेम सूत्रपर-



च्छेद्यम् शत्रुसैन्येषु विवक्षित शत्रुहननम् ७० सजीवनिर्जीव-सजीव मृतधात्वादीनां सजीवकरणं सहजस्वरूपापादनम्, निर्जीवम् सुवर्णादिधातूनां प्रयोगविशेषेण मारणम्, पारदस्य मूर्च्छाप्रापणं वा ७१ । शकुनस्तम्-पक्षिशब्दम्, पक्षिशब्दज्ञानम्, यद्वा 'शकुनस्त'-शब्देन शकुनशास्त्रं गृह्यते, तेन वसन्तराजादिशकुनशास्त्रोक्तसर्वशकुन-ज्ञानं वा ७२ । इति आसां द्वासप्ततिकलानां क्रमन्यासः, कुत्रचिन्नामनिर्देशोऽपि च संग्रहसमयविपर्यासेन पृथक् पृथक् उपलभ्यतेऽतो यत्र यद्रूपः पाठो लभ्यते तत्र

करना यह—धातुपाक कला है, ६५ । नटों की तरह सूत्रपर—वर्त्तपर, और—नालिका पर चढ़ कर खेलना—ये तत्—तत् नामवाली कलाएँ हैं ६६-६८ । अनेकपत्रों में से किसी विवक्षित पत्र का छेदन करना पत्रच्छेद्य कला है. ६९ । शत्रु की सेना में रह कर फिर विवक्षित शत्रु को मार देना यह कटकच्छेद्य कला है. ७० । भस्मसात् किये गये सुवर्णादि धातुओं को निस्त्य भस्म होने से पहले तक प्रयोजन विशेष के आजाने पर उस भस्म को पुनः सुवर्ण कर देना, तथा—एक राज्य से दूसरे राज्य में सुवर्ण को ले जाने का राजकीय प्रतिबन्ध रहने पर उन वाञ्छनीय सुवर्णादिधातुओं को प्रयोगविशेष से मारना, अथवा—पारे को मूर्च्छित करना—अर्थात्—अजीर्णत्व—नपुंसकत्व आदि अट्टारह दोषों को पारों से निकाल देना यह सजीव निर्जीव कला है. ७१ । पक्षियों की बोली को पहिचान लेना. अर्थात्—वसन्त राज आदि कृत शकुनशास्त्रदृष्टि से सब पक्षियों का ज्ञान होना यह—शकुनस्त कला है ७२ । इन बहत्तर कलाओं का क्रम और कहीं कहीं उनका नाम निर्देश भी संग्रह समय की भिन्नसा से पृथक् पृथक् रूपसे उपलब्ध—प्राप्त

वर्त्तपर અને નાલીકાપર ચઢીને રમવું એ તત્-તત્ નામવાળી કળાઓ છે. ૬૬-૬૮ અનેક પત્રોમાંથી કોઈ ખાસ પત્રનું છેદન કરવું પત્રચ્છેદકલા છે. ૬૯ શત્રુની સેનામાં રહીને પછી કોઈ વિશેષ શત્રુને જ મારવું કટકચ્છેદ કલા છે. ૭૦ ભસ્મરૂપમાં પરિણત થયેલા સુવર્ણાદિ ધાતુઓને નિસ્ત્ય ભસ્મ હોવાથી પહેલાં પ્રયોજન વિશેષને લીધે ફરી ભસ્મ ને સુવર્ણ વગેરે બનાવવું તેમજ એક રાજ્યમાંથી બીજા રાજ્યમાં સુવર્ણને લઈ જવાનો રાજ-કીય પ્રતિબંધ હોવા છતાં એ તે વાંછનીય સુવર્ણાદિ ધાતુઓને પ્રયોગ વિષયથી મારવી કે પારને મૂર્ચ્છિત કરવો એટલે કે અજીર્ણત્વ વગેરે અઠાર દોષોને પારમાંથી કાઢવા આ સજીવ નિર્જીવકલા છે. ૭૧ પક્ષીઓની બોલીને સમજી લેવી એટલે કે વસંતરાજ વગેરે કૃત શકુનશાસ્ત્રની દૃષ્ટિએ બધા પક્ષીઓની બોલીને સમજવી શુભાશુભ બાણ્યું તે શકુનસ્ત કલા છે. ૭૨ આ બોંતેર કલાઓનો ક્રમ અને તેના નામ નિર્દેશ



तद्वृत्तेण व्याख्या विधेयेति तत्त्वम् । पूर्वोक्तप्रकारा द्वासप्ततिकलाः । त्रैलोक्यादौ  
 दृष्ट्वा ज्ञि शिक्षयिष्यतीति भावः ॥ सू० १७० ॥  
 मूलम्—तए णं से कलायरिए तं दृढपइण्णं दारगं लेहाइयाओ  
 गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ वावत्तरि कलाओ सुत्तओ  
 अत्थओ गंथओ य करणओ य सिक्खावेत्ता सेहावेत्ता अम्मा-  
 पिऊणं उवणेहिइ । तए णं तस्स दृढपइण्णस्स दारयस्स अम्मापि-  
 यरो तं कलायरियं विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगीवु-  
 मल्लालकारेणं सक्कारिस्सति, सम्भाणिस्सति, विउलं जीवियाहिं  
 पीइदाणं दलइस्सति, दलइत्ता, पडिविज्जेहिहि ॥ सू० १७१ ॥

छाया—ततः खलु स कलाधर्मस्तं दृढप्रतिज्ञं दारकं लेखादिहाः गणित-  
 प्रधानाः शकुनरुतपर्यसानाः द्वासप्तति कलाः सूत्रतश्च अर्थतश्च ग्रन्थतश्च करणतश्च  
 शिक्षयित्वा साधयित्वा अम्मा-पित्रोः उपनेष्यति । ततः खलु तस्य दृढप्रतिज्ञस्य

होता है इसलिये जहाँ जहाँ जिस जिस रूप से पाठ मिले वहाँ । उस उस रूपसे  
 व्याख्या समझनी चाहिए ॥ सू० १७० ॥

“तए णं से दृढपइण्णे—” इत्यादि—

मूलार्थ—‘तए णं’ इसके बाद ‘कलायरियं—’ कलाचार्यने ‘तं दृढपइण्णं—’  
 उस दृढप्रतिज्ञकुमार को ‘लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ—’ गणित प्रधान लेखा-  
 दिक कलाएं—‘सउणरुयपज्जवसाणाओ वावत्तरि कलाओ सुत्तओ अत्थओ गंथ-  
 ओ य करणओ य—सिक्खावेत्ता सेहावेत्ता अम्मापिऊणं उवणेहिइ—’ पहली लेह कला  
 से लेकर अन्तिम शकुनरुत कलातक जिन की संख्या ७२—प्रगट की जा चुकी है.

पणु संप्रति समुत्थानां लिप्तापणुथी नुद्वानुद्वारे प्राप्ता थाय छि. जेथी जथां जथां जे  
 जे इपथी पाठ भुजेल छि त्यां त्यां ते ते इपथी तेनी व्याख्या समजवी. ॥ सू० १७० ॥  
 तए णं से कलायरिए—इत्यादि ।

मूलार्थ—‘तए णं’ त्थारः पछी ‘कलायरिए’ कलाचार्ये ‘तं दृढपइण्णं’ ते दृढ  
 प्रतिज्ञ कुमारने ‘लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ’ गणित प्रधान लेखादिक कलाओ  
 ‘सउणरुयपज्जवसाणाओ वावत्तरि कलाओ सुत्तओ अत्थओ गंथओ य करणओ  
 य सिक्खावेत्ता सेहावेत्ता अम्मापिऊणं उवणेहिइ’ अन्तिम शकुनरुत कला सुधीनी  
 समस्त ७२ कलाओने सौथी पडेली सूत्र इपमां त्थारपछी अर्थइपमां अर्थइपमां

दारकस्य अम्बा-पित्रोः उपनेप्यति । ततः खलु तस्य दृढप्रतिज्ञस्य दारकस्य अम्बापितरौ तं कलाचार्य-विपुलेन अशनपानखादिमस्वादिमेन वस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेण सत्कारयिष्यतः, सम्मानयिष्यतः, विपुलं जीवितार्हं प्रीतिदानं दास्यतः दत्त्वा प्रतिविसर्जयिष्यतः ॥ सू० १७१ ॥

टीका—‘तए णं’ इत्यादि—ततः खलु स कलाचार्यः तं दृढप्रतिज्ञं दारकं लेखादिकाः—लेखः—अक्षरविन्यासः आदौ—प्राथम्ये यासां ताः—लेखग्रथमा इत्यर्थः, तथा—गणि-प्रधानाः—गणितं प्रधानं यासु ता—गणितमुख्या इत्यर्थः, तथा शकुन-रुतपर्यवसानाः—शकुनरुतं—पक्षिशब्दः पर्यवसाने—अन्ते यासां तांस्तथा—पक्षिशब्द-परिज्ञानान्ताः, द्वासप्तति—द्वासप्ततीसंख्यकाः पूर्वोक्ताः कला मंत्रतः शब्दनश्च, अर्थनश्च ग्रन्थतः ग्रन्थरूपेण तासां लेखनश्च, करणतः प्रयोगतश्च शिक्षयित्वा अक्षपाप्य, साधयित्वा साध्याः कारयित्वा तस्य दृढप्रतिज्ञस्य, अम्बापित्रोरन्तिके उपवेष्टुमिति प्राप्तिरिति । ततः खलु तस्य दृढप्रतिज्ञस्य दारकस्य अम्बापितरौ तं कलाचार्य-विपुलेन प्रचुरेण अशनपानखादिमस्वादिमेन वस्त्रगन्धमाल्यालङ्कारेण च सत्कारयिष्यतः सम्मानयिष्यतः, विपुलं प्रचुरं जिवितार्हं यावज्जीवं जीवितयोग्यं प्रीतिदानम् उपहारं, दास्यतः, दत्त्वा प्रतिविसर्जयिष्यतः ॥ सू. १७१ ॥

प्रथमतः सूत्र रूप से—वाद में अर्थ रूप से—ग्रन्थरूप से, एवं—तदुभय-सूत्र और अर्थ दोनों रूप से सिखलाकर, एवं—उन्हें पहले उन्हीं के हाथ से सिद्ध कराकर उसके मातापिता के पास उसको ले आवेगा—‘तए णं तरस ददपइण्णस्स दारयस्स अम्मापियरो तं कलायरियं विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थ-गंध-मल्लालंकारेणं सक्कारिस्संति—’ तब उस दृढप्रतिज्ञ कुमार के मातापिता उस कलाचार्य का विपुल अशन-पान-खादिम, एवं—स्वादिरूप चार प्रकार के आहार से, तथा—वस्त्र-गन्ध-माला और—अलङ्कारों से सत्कार करेंगे—‘सम्माणे-स्संति—’ विउलं जीवियारिहं, पीइयाणं दलइस्संति, दलइत्ता पडिविसिज्जेहिंति—’

अने करणइपमां प्रयोगइपमां शीणवी अने ते कलाओने पढेलां तेना-७ हाथवडे प्रयोगइपमां सिद्ध करावीने पछी तेने तेना मातापितानी पासे ७४४ ७४५. ‘तए णं तस्स ददपइण्णस्स दारयस्स अम्मापियरो तं कलायरियं विउलेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणं सक्कारिस्संति’ त्थारणाद ते दृढप्रतिज्ञ कुमारना मातापिता ते कलाचार्यने विपुल अशन-पान-खादिम—अने स्वादिमइप चार प्रकारना आहारथी तेम-७ वस्त्र गन्ध माला अने अलंकारेथी स तद्धृत करथे. “सम्माणे-स्संति विउलं जीवियारिहं, पीइयाणं दलइस्संति, दलइत्ता पडिविसिज्जेहिंति”

મૂલમ—તए णं से ददपइण्णे दारए उम्मुक्कवालभावे विण्णा-  
यपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुपत्ते वावत्तरिकलापंडिए णवंगसुत्तपडि-  
वोहए अट्टारसविहदेसिप्पगारभासाविसारए गाथरई गंधव्वणट्टकुत्तले  
सिंगारागारचारुवेसे संगयगयहसियभणियचेट्ठियविलाससंलावुल्लाव-  
निउणजुत्तोवयारकुत्तले हयजोही गयजोही रहजोही वाहुजोही वाहु-  
प्पमही अलंभोगसमत्थे साहस्सिए वियालयारी यावि भविस्सइ।सू. १७२।

છાયા—તતઃ સ્વલુ સ દ્વદ્વપ્રતિજ્ઞો દારક ઉન્મુક્તવાલભાવો વિજ્ઞાતપરિણત-  
માત્રો યૌવનકમનુગ્રાપ્તો દ્વાસપ્તતિકલાપણ્ડિતો નવાજ્ઞસુપ્રતિવોચકઃ અષ્ટાદશ-

સત્સમ્માન કરેંગે, ફિર-વિપુલ શ્રીતિદાન જો કિ-ઉનકો જીવનભર કે લિયે  
જીવિકા વા યોગ્ય હો સકેગા-દેંગે, યહ સવ કુછ કરકે, ફિર વે ઉસ કલા  
ચાર્ય કો વિસર્જિત કર દેંગે, । ટીકાર્થ—તપટ્ટ હૈ ॥ સૂ. ૧૭૧ ॥

“તए णं से ददपइण्णे दारए—इत्यादि—

મૂલાર્થ - “તए णं से ददपइण्णे—” ઇસકે વાદ વહ દૃઢપ્રતિજ્ઞ કુમાર જિસકા  
“ઉમ્મુક્કવાલભાવે વિણ્ણાયપરિણયમિત્તે—” વાલભાવ વ્યતીત હો ચલા હૈ, ઓર  
—વિજ્ઞાન જિસકા શીઘ્રતા સે પરિપક્વ અવસ્થા મેં પહુંચ ગયા હૈ. “જોવ્વણ-  
ગમણુપત્તે—” યૌવનાવસ્થાશાલી હુવા, “વાવત્તરિં કલાપંડિએ—ણવંગસુત્તપડિવોહએ—  
અટ્ટારસવિહદેસિપ્પગારભાસાવિસારએ—” ૭૨—કલાઓં મેં વિશેષરૂપસે  
નિણ્ણાત હુવા. સુપ્ત અપને નવાજ્ઞોં કો દો કાન-દો નેત્ર-દો નાસિકાછિદ્ર—એક જીભ

સન્માનીત કરશે પછી તેમની જીવિકા માટે પર્યાપ્ત થાય તેટલું પ્રીતિદાન તેમને  
આપશે. આ બધું કરીને પછી તેઓ તેમને વિસર્જિત કરશે.

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. ॥સૂ. ૧૭૧॥

“તए णं से ददपइण्णे दारए” इत्यादि ।

મૂલાર્થ—તए णं से ददपइण्णे” ત્યાર પછી તે દ્વદ્વપ્રતિજ્ઞ કુમાર-કે જેમનું  
“ઉમ્મુક્કવાલભાવે વિણ્ણાયપરિણયમિત્તે” બાળપણ પસાર થઇ ગયું છે અને જેમનું  
વિજ્ઞાન એકદમ પરિપક્વવાવસ્થા સુધી પહોંચી ગયું છે. “જોવ્વણગમણુપત્તે” યુવાવસ્થા  
સંપન્ન થશે. “વાવત્તરિં કલાપંડિએ ણવંગસુત્તપડિવોહએ—અટ્ટારસવિહદેસિપ્પ-  
ગારભાસાવિસારએ” ૭૨ કલાઓમાં વિશેષરૂપથી નિણ્ણાત થયેલો તે પોતાના સુપ્ત  
નવાજ્ઞોં-ને કાન, ને નેત્ર, ને નાસિકાછિદ્ર, એક જીભ, એક સ્પર્શન ઇન્દ્રિય, અને

विधदेशीप्रकारभाषाविशारदो गीतरतिः गान्धर्वनाटयकुशलः शृङ्गारागारचारुवेपः  
संगतगतहसितभणितचेष्टितविलाससंलापोल्लापनिपुणयुक्तोपचारकुशलो हययोधी रथयोधी।  
बाहुयोधी बाहुप्रमर्दी अलंभोगसमर्थः साहसिको विकालचारी चापि भविष्यति ।सू० १७२

एक रपर्शन, एवं-एक मन्-इनको व्यक्त-जागृत करता हुवा, अट्टारह प्रकारकी  
भाषाओं में विशारद हुवा. “गीयरई-गंधव्वणट्टकुसले-सिंगारागारचारुवेसे-  
संगयगयहसियभणियचेष्टियविलाससंलावुल्लावनिउणजुत्तोवयारकुसले-” गीत-  
एवं-रति में अनुरागयुक्त हुवा, गान्धर्व गान में-एवं नाटय क्रिया में  
पारङ्गत हुवा, तथा-शृङ्गारके गृह की तरह सुन्दर वेप से युक्त हुवा, समुचित गम-  
नमें-समुचितहास में-समुचित बोलने में-वातचीत करने में-समुचित चेष्टा में  
समुचित विलास में-नेत्र जनिन विकार में-समुचित संलाप में-एवं समुचित  
काकुभाषण में-दक्ष हुवा, तथा-समुचित व्यवहारों में कुशल हुवा, तथा-“हय  
जोही गयजोही-रहजोही-बाहुजोही-बाहुप्पमदी-अलं भोगसमर्थे-साहसिए-वियाल-  
यारी यावि भविसइ-” हययुद्ध करने में कुशल हुवा गजयुद्ध करने में कुशल  
हुवा, रथयोधी हुवा, बाहुप्रयोधी हुवा, बाहुप्रमर्दी हुवा, बाहु से कठिन भी  
वस्तु को चूर-र करने में समर्थ हुवा, भोग में समर्थ हुवा. । अकेलाही  
सहस्र संख्यक भटों के साथ युद्ध करने में समर्थ हुवा, । अथवा-साहसिक-  
अधिक साहस से युक्त हुवा, मध्यरात्रि में भी विचरण करनेवाला होगा. ।

એકમત-વ્યક્ત જાગૃત કરતો અઠાર પ્રકારની દેશીય ભાષાઓમાં વિશારદ થશે.  
“ગીયરૈ-ગંધવ્વણટ્ટકુસલે સિંગારાગારચારુવેસે સંગયગયહસિયભણિયચેષ્ટિય  
વિલાસસંલાવુલ્લાવનિઉણજુત્તોવયારકુસલે” ગીત અને રતિમાં અનુરાગયુક્ત થયેલો,  
ગાંધર્વગાનમાં અને નાટ્યક્રિયામાં પારંગત થયેલો તેમજ શૃંગાર ગૃહની  
જેમ સુદર વેષથી સુસજ્જ થયેલો તે દૃઢપ્રતિજ્ઞ સમુચિત ગમનમાં, સમુચિત હાલમાં  
સમુચિત બોલવામાં વાતચીત કરવામાં, સમુચિત ચેષ્ટામાં, સમુચિત વિલાસમાં-નેત્ર-  
જનિતવિકારમાં, સમુચિત સંલાપમાં અને સમુચિત કાકુ-ભાષણમાં પણ દક્ષ થઈ જશે.  
આ પ્રમાણે તે સમુચિત વ્યવહારોમાં કુશળ થશે. તેમજ “હયજોહી-ગયજોહી-રહ-  
જોહી-બાહુજોહી-બાહુપ્પમદી-અલંભોગસમર્થે-સાહસિય વિયાલયારી યાવિ ભવિ-  
સસઈ” હયયુદ્ધ કરવામાં ગજ યુદ્ધ કરવામાં કુશળ થશે. તે રથયોધી થશે, બાહુયોધી  
થશે, બાહુમર્દી થશે, બાહુથી અતિ કઠોર વસ્તુને ચૂર્ણ વિચૂર્ણ કરવામાં સમર્થ થશે.  
લોગમાં સમર્થ થશે. એકલો જ તે સહસ્ર સંખ્યક ભટોની સાથે યુદ્ધ કરવામાં  
સમર્થ થશે. અથવા સાહસિક-અધિક સાહસયુક્ત થશે. આમ તે મધ્યરાત્રિમાં પણ  
વિચરણ કરનાર થશે.

ટીકા—“તથા પં સે” इत्यादि-ततः खलु स दृढप्रतिज्ञो नाम दारकः उन्मुक्त-  
 वालभावः-व्यतिक्रान्तवाल्यावस्थो विज्ञातेपरिणतमात्रः-“विज्ञातं-विज्ञानं परिणत-  
 मात्रं-सद्यः परिपक्व यस्य स तथा-परिपक्वविज्ञान इत्यर्थः, यौवनवम्-युवावस्थाम्  
 अनुप्राप्तः-अनुगतो। द्वासप्ततिकलापण्डितः-पूर्वोक्तद्वासप्ततिकलाऽभिज्ञो नवान्न-  
 सुप्तप्रतिबोधकः-“द्वि-श्रोत्रे, द्वे-नेत्रे, द्वे, नासिके, एका जिह्वा एका त्वम् एकं  
 मनः” इत्येतेषां नवानां-नवसंख्यकानाम्-अज्ञानाम्-अवयावानां सुप्तानां बाल्या-  
 दव्यक्तचेतनावत्त्वात् सुप्तसंदृशानां प्रतिबोधकः यौवनाऽऽगमेन व्यक्तं चेतन्यं यस्य  
 स तथा-स्व स्व विषयग्रहणसमर्थ नवान्नयुक्त इत्यर्थः, तथा-अष्टादशविध देशीप्रकार-  
 भाषाविशारदः-अष्टादशविधायाम्-अष्टादशभेदायां, देशीप्रकारायां-देशीस्वरूपायां  
 भाषायां विशारदः-निष्णातः-अष्टादशभाषाऽभिज्ञ इत्यर्थः, तथा-गीतरतिः गीते गान्ते  
 रतिः-अनुरागो यस्य स तथा-गीतानुरागयुक्त इत्यर्थः, तथा-गान्धर्वनाट्यकुशलः-  
 गान्धर्वे-गन्धर्वस्येदं गा धर्वं तस्मिन्-गाने, नाट्ये-नटकर्मणि च-कुशलः-गान्धर्व-  
 विद्यायां च पारङ्गत इत्यर्थः, तथा-शृङ्गारागारचारुवेपः-शृङ्गारः-अलङ्कारादिकृता  
 शोभा तस्य अगारमिव-गृहमिव चारुवेपः-रुचिरवेपो यस्य स तथा-सविच्छिन्न्य-  
 लङ्कारालङ्कृतशरीर इत्यर्थः, तथा-संगतगतहसितभणितचेष्टितविलाससंलापोल्ला-  
 पनिपुण्युक्तोपचारकुशलः-संगतेषु-तत्र गतं गमनं हसितं-हासः भणितम्-उक्तिः  
 चेष्टितं-चेष्टा, विलासः-नेत्रजन्यो विकारः, तदुक्तं-“विलासो नेत्रजो ज्ञेयः”  
 इति, संलापः-परस्परभाषाणम्, उक्तं च-“संलापो भाषणं मिथः” इति, उल्लापः-  
 काका भाषणम्, उक्तं च-“उल्लापः काकुभाषणम्” इति, एतेषामितरेतरयोगद्रव्यः,

ટીકા—उसका स्पष्ट है. “नवान्नसुप्तप्रतिबोधक-” का-मतलब ऐसा है  
 कि बाल्यावस्था में जो-श्रोत्र-आदि अज्ञ अव्यक्त चेतनावाले होने से सुप्त जैसे  
 रहते हैं, वेही-यौवन अवस्था में व्यक्त चेतनावाले हो जाने से जागृत जैसे  
 हो जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यौवनावस्था में अपने अपने विषय  
 को ग्रहण करने में ये समर्थ हो जाते हैं। “विलासो नेत्र जो ज्ञेयः-संलापो  
 भाषणं मिथः-” इस कथन के अनुसार नेत्र विकार का नाम विलास, और-  
 भाषण का नाम-संलाप है। “उल्लापः काकुभाषणम्” के अनुसार काकुभाषण

ટીકા—આ સૂત્રનો અર્થ સ્પષ્ટ છે. “નવાન્નસુપ્તપ્રતિબોધકઃ”નો અર્થ આ  
 છે કે બાળપણમાં શ્રોત્ર (કાન) વગેરે અંગો સુપ્ત જેવાં હોય છે તેજ યુવાવસ્થામાં  
 જાગૃત જેવાં થઈ જાય છે. તાત્પર્ય આ છે કે યુવાવસ્થામાં એ અંગો પોતપોતાના  
 વિષયને ગ્રહણ કરવામાં સમર્થ થઈ જાય છે. “વિલાસો નેત્રજો જ્ઞેયઃ સંલાપો ભાષણં  
 મિથઃ” આ કથન મુજબ નેત્રજ વિકારનું નામ વિલાસ અને ભાષણનું નામ સંભળાય છે.  
 “ઉલ્લાપઃ કાકુભાષણમ્” મુજબ કાકુભાષણ સારંગભિંત વ્યંગપૂર્ણ વચ્ચેનાં છે

तेषु निपुणः—दक्षः, तथा-युक्त पचारकुशलः—युक्तेषु-समुचितेषु उपचारेषु-व्यवहारेषु कुशलः—ज्ञातुरः, पदद्वय-य कर्मधारयः, तथा-हययोधी-हयेन युध्यते-इत्येवंशीलः-हययुद्धकलाकुशल इत्यर्थः, एवं गजयोधी-स्थयोधी बाहुयोधी—इतिपदत्रयमुन्ने-यम्, तथा-बाहुप्रमर्दी—बाहुभ्यां प्रमर्दतीत्येवंशीलः—बाह्याघातेन कठिनह्यापि वस्तुन शृण्णीकरणशील इत्यर्थः, तथा-अश्मभोगसमर्थः—अत्यर्थं भोगानुभवसमर्थः. साह-स्रिकः-सहस्रेण युध्यते इति-सहस्रसंख्यकभटैः सह एकाकंचेव युद्धकर्ता, 'साहसिकः इतिद्वयापक्षेतु, अतिसाहसयुक्तः, तथा-विकालचारी-विकालेऽपि मध्यरात्रेऽपि चरती-त्येवं शीलः आहसाहसकत्वाद् मध्यरात्रेऽपि विचरणशीलश्चापि भविष्यतीति । सू० १७२।

तए णं तं दढपइणं दारगं अम्मापियरो उम्मुक्क-वालभावं जाव वियाल्यारिं च वियाणित्ता विउलेहिं अन्नभोगेहिं य पाणभोगेहिं य लयणभोगेहिं य वत्थभोगेहिं य सयणभोगेहिं य उव-निमंतिहिंति । ॥ सू० १७३ ॥

छाया—ततः खलु तं दृढप्रतिज्ञां दारकम् अम्मापितरौ उन्मुक्तवालभावं यावद् विकालचारिणं च विज्ञाय विपुलः अन्नभोगैश्च पानभोगैश्च लयनभोगैश्च वत्थभोगैश्च शयनभोगैश्च उपनिमन्त्रयिष्यतः । ॥ सू० १७३ ॥

समग्रार्भित व्यङ्गवचन को कहते हैं; या-वच्चों के द्वार का-का, क-कु आदि तोतली बेली को भी काक भाषण कहते हैं । ॥ सू० १७२ ॥

“तए णं दढपइणं दारगं—” इत्यादि—

मूलार्थ—“तए णं—” इसके बाद “तं दढपइणं दारगं—” उस दृढ प्रतिज्ञा दारक को “अम्मापियरो—” मातापिता “उम्मुक्कवालभावं जाव वियाल्यारिं च वियाणित्ता—” उन्मुक्तवालभाववाला यावत्-विकालचारी जानकर—“विउलेहिं अन्नभोगेहिं-पाणभोगेहिं—” विपुल अन्न भोगों से विपुल पानभोगों से—“लयणभोगेहिं य वत्थभोगेहिं य सयणभोगेहिं य उवनिमंतिहिंति—” विपुल लयन-

छ. अथवा जाणके वडे डा-डा-कु कु वगेरे ने तोतडी गोलीने यणु डाकु लापणु डडे छ. सू. ॥ १७२ ॥

“तए णं दढपइणं दारगं” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तए णं” त्वात् पछी “तं दढपइणं दारगं” ते दृढप्रतिज्ञा दारकने “अम्मापियरो” माता पिता “उम्मुक्कवालभावं जाव वियाल्यारिं च वियाणित्ता” उन्मुक्तवालभावयुक्तयावत् विकालचारी जानीने “विउलेहिं अन्नभोगेहिं य पाणभोगेहिं”



टीका—“तए ञं” इत्यादि—ततः खलु तं दृढप्रतिज्ञं दारकं अम्बा-पितरौ-माता-पितरौ उन्मुक्तवालभावं-व्यतिक्रान्तवाल्यावस्थं यावत्—यावत्पदेन ‘विज्ञातपरिणत-मात्रं यौवनकमनुप्राप्तं द्वादशप्रतिकलापण्डितं—नवाङ्गसुप्तप्रतिबोधकम् अष्टादशविध-देशीप्रकारभाषाविशारदं गीतरतिं गान्धर्वनाट्यकुशलं शृङ्गारागारचारुवेषं संगतगत-हसितभणितचेष्टितविलाससंलापोल्लापनिपुणयुक्तोपचारकुशलं हययोधिनं गजयोधिनं रथयोधिनं बाहुयोधिनं बाहुप्रमर्दिनम् अलम्भोगसमर्थं साहसिकम्’ इत्येतानि पदा-नि संग्राह्याणि, तथा विकालधारिणं च विज्ञाय विपुलैः—प्रचुरैः अन्नभोगैः—अन्न-रूपभोग्यपदार्थैः, पानभोगैः—पेयरूपभोग्यपदार्थैः, लयनभोगैः—प्रासादरूपभोग्य पदार्थैः, वस्त्रभोगैः—वसनरूपभोग्यपदार्थैः शयनभोगैः—शयनरूपभोग्यपदार्थैश्च उप-निमन्त्रयिष्यत इति । दृढप्रतिज्ञं दारकं यौवनोन्मुखं दृष्ट्वा तन्मातापितरौ अन्ना-दिभोगानुभोक्तुं प्रेरयिष्यत इति सूत्राशय इति । ॥सू० १७३॥

तनुभोगों से विपुलवस्त्ररूप भोग्य पदार्थों से उपनिमन्त्रित करेंगे । अर्थात् उसे अब अन्नादि भोग्य विषय के लिये स्वान्त्रता देंगे ।

टीका—स्पष्ट है, “उन्मुक्तवालभाव जाव—” में जो यह यावत् पद आया है, उससे—“विज्ञातपरिणतमात्रं, यौवनकमनुप्राप्तम्, द्वादश प्रतिकला पण्डितम्, नवाङ्गसुप्तप्रतिबोधकम्, अष्टादशविधदेशी प्रकार भाषाविशारद गीतरति, गान्धर्वनाट्य कुशलम्, शृङ्गारागारचारुवेषं, संगतगतहसितभणित-चेष्टितविलाससंलापोल्लाप निपुण युक्तोपचार कुशलं, हययोधिनम्, गजयोधिनम् रथयोधिनं, बाहुयोधिनं, बाहुप्रमर्दिनम् अलम्भोगसमर्थम्, साहसिकम् साह-सिकम्, इन् पीछे के पाठों का ग्रहण हुवा है । ॥ सू० १७३ ॥

विधुल अन्न भोगोत्थी, विपुल पान भोगोत्थी ‘लयनभोगेर्हि य वस्त्रभोगेर्हि य शयनभोगेर्हि य उपनिमन्त्रिहिंति’ विपुल लयन तनुभोगोत्थी, विपुल वस्त्ररूप भोग्य पदार्थोत्थी उपनिमन्त्रित करके ओटवे के तेने अन्न वगेरे भोग्य विषयक पदार्थोने लोगववानी छूट आपशे.

टीका—स्पष्ट छे. ‘उन्मुक्तवालभाव जाव’ मां ने यावत् पद आवेल छे तेथी “विज्ञातपरिणतमात्र, यौवनकमनुप्राप्तम्, द्वादशप्रतिकलापण्डितम् नवाङ्गसुप्त-प्रतिबोधकम्, अष्टादशविध देशी प्रकार भाषा विशारद, गीतरति, गान्धर्व नाट्य कुशलम् शृङ्गारागार आरुवेषं, संगतगतहसित लक्षित चेष्टित विलास संलापोल्लाप निपुण युक्तोपचारकुशल, हययोधिनम्, गजयोधिनम्, रथयोधिनम्, बाहुयोधिनम्, बाहुप्रमर्दिनम्, अलम्भोगसमर्थम्, साहसिकम्, साहसिकम् आ पाछणतुं अल्लु धयुं छे. ॥ १७३ ॥



मूलम्—तए णं दृढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अन्नभोएहिं  
जाव सयणभोएहिं णो सज्जिहिइ णो गिज्झिहिइ णो मुच्छिहिइ णो  
अज्झोववज्जिहिइ । से जहा णामए पउमुप्पलेइ वा पउमेइ वा जाव  
सयसहस्सपत्तेइ वा पंके जाए जले संबुद्धे णोर्वालिप्पइ पंकरणं, णो-  
वलिप्पइ जलरणं, एवामेव दृढपइण्णे वि दारए कामेहिं जाए  
भोगेहि संबुद्धे णोवलिप्पिहिइ कामरणं, णोवलिप्पिहिइ भोग-  
रणं, णोवलिप्पिहिइ मित्तणाइणियगसयणसंवधिपरिजणेणं । से  
णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिइ, मुंडे भवित्ता  
अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सइ । से णं अणगारे भविस्सइ-ईरियो  
समिए जाव सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते । तस्स णं भगवओ  
अणुत्तरेणं णाणेणं, एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्ज-  
वेणं मद्वेणं लाघवेणं खंतीए गुत्तीए अणुत्तरेणं सव्वसंजमसुचरिय  
तवफलणिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे कसिणे  
पडिपुण्णे निरावरणे णिव्वाघाए, केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिइ ।  
तए णं से भगवं अरहा जिणे केवली भविस्सइ, सदेवमणुयासुरस्स  
लोगस्स परियायं जाणिहिइ, तं जहा—आगइं गइं ठिइ चवणं उव-  
वायं तक्कं कडं मणोमाणसियं खइयं भुत्तं पडिसेविय आवीकस्सं  
रहोकम्मं अरहा अरहस्सभागी तं तं कालं मणवयकायजोगे वट्टमा-  
णाणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे  
विहरिस्सइ । ॥ सू० १७४ ॥

छाया—ततः खलु स दृढप्रतिज्ञो दारक स्तेषु विपुलेषु अन्नभोगेषु यावच्छ-  
यनभोगेषु नो सङ्क्षयति, नो गर्विष्यति, नो मूर्च्छिष्यति, नो अध्युपपत्स्यते ।  
तद्यथानाम-पद्मोत्पलमिति वा पद्ममिति वा यावत् शतसहस्रपत्रमिति वा पङ्के  
जातं जले वृद्धं नोपलिप्यते पङ्करजसा, नोपलिप्यते जलरजसा, एवमेव दृढ  
प्रतिज्ञोऽपि दारकः कामैर्जातो भोगैः संवर्द्धितो नोपलेप्स्यते कामरजसा, नो  
पलेप्स्यते भोगरजसा, नोपलेप्स्यते प्रियज्ञातिनिजक-वजनसम्बन्धिपरिजनेन ।

“तए णं दढपइण्णे दारए—” इत्यादि—

मूलार्थ—‘तए णं’ उसके बाद— ‘दढपइण्णे दारए तेहिं विउलेहिं अन्नभोगेहिं  
जाव सयणभोगेहिं—’ वह दढप्रतिज्ञ दारक उन विपुल अन्नरूप भोग्य पदार्थों  
में यावत्-शयनरूप भोग्य पदार्थों में—“णो सज्जिहिइ, णो गिज्झिहिइ, णो  
मुच्छिहिइ, णो अज्झोववज्जिहिइ—” आसक्ति नहीं करेगा, गृद्धिभावको प्राप्त  
नहीं होगा, मूर्च्छाभाव को प्राप्त नहीं होगा, उनमें—एक मनवाला नहीं बनेगा ।  
“से जहाणामए पउमुप्पलेइ वा, पउमेइ वा, जाव सयसहस्सपत्तेइ वा पंके जाए  
जले संवुद्धे णोवलिप्पइ पंकरयेणं णोवलिप्पइ जलरणं—” जैसे-पद्म, अथवा—  
उत्पल, यावत्-शत सहस्रपत्रोंवाला कमल पङ्क में पैदा होता है, जल में बढ़ता  
है, परन्तु—वह कीचड़ से जरा भी अंश में लिप्त नहीं होता है, पानीसे लिप्त  
नहीं होता है, “एवामेव दढपइण्णे वि दारए कामेहिं जाए भोगेहिं संवुद्धे, णो-  
वलिप्पिहिइ—कामरणं, णोवलिप्पिहिइ भोगरणं, णोवलिप्पिहिइ मित्तणाइ  
णियगसयणसंबंधिपरिजणेणं—” इसी तरह से वह दढप्रतिज्ञ दारक भी काम-

“तए णं दढपइण्णे दारए” इत्यादि ।

मूलार्थ—‘तए णं’ पणु “दढपइण्णे दारए ते हिं विउलेहिं अन्नभोगेहिं जाव  
सयणभोगेहिं” ते दढप्रतिज्ञ दारक ते विपुल अन्नरूप भोग्य पदार्थों में यावत् शय  
नरूप भोग्य पदार्थों में “णो सज्जिहिइ, णो गिज्झिहिइ, णो मुच्छिहिइ, णो अज्झोव-  
वज्जिहिइ” आसक्ति नतावशे नहि, गृद्धिभाव प्राप्त करशे नहि, मूर्च्छाभाव प्राप्त  
करशे नहि, तेमां तद्वत्तीन थशे नहि. -‘से जहाणामए पउमुप्पलेइवा, पउमेइवा  
जाव सयसहस्सपत्तेइवा पंके जाए जले संवुद्धे णोवलिप्पइ पंकरयेणं णोवलिप्पइ  
जलरणं” जेभ पद्म के उत्पल, यावत् शत सहस्रपत्र कमल पंके (कादव) में उत्पन्न  
होय छे, पाली में वृद्धि प्राप्त करे छे, यणु ते सहेण पणु कादवथी  
लिप्त थतुं नथी. “एवामेव दढपइण्णे वि दारए कामेहिं जाए भोगेहिं  
संवुद्धे, णोवलिप्पिहिइ कामरणं, णोवलिप्पिहिइ भोगरणं णोवलिप्पिहिइ, मित्त  
णाइ—णियगसयणसंबंधिपरिजणेणं” आ प्रमाणे ते दढप्रतिज्ञ दारकपणु कामथी

स खलु तथारूपाणां स्थविराणाम् अन्तिके केवलां बोधिं भवत्स्यते, मुण्डो भूत्वा आगारात् अगारितां प्रव्रजिष्यति । स खलु अनगारो भविष्यति ईर्या समितो यावत् सुहुतहुताशन इव तेजसा ज्वलन् । तस्य खलु भगवतोऽनुत्तरेण ज्ञानेन, एवं दर्शनेन चरित्रेण आलयेन विहारेण, आर्जवेन मार्दवेन लाघवेन क्षान्त्या गुप्त्या मुक्त्या अनुत्तरेण सर्वं संयमसुचरिततपः फल निर्वाणमार्गेण आत्मानं भाव-

से उत्पन्न होगा—भोगों से वर्धित होगा, फिर भी वह काम से लिप्त नहीं होगा, भोगों से लिप्त नहीं होगा, मित्र-ज्ञाति-निजक-सम्बन्धि जन, और-परि-जनों में लिप्त नहीं होगा । “से णं तहारूपाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहिं बुज्झिहिइ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सइ-” वह तो केवल तथारूपवाले स्थविरों के पास केवल बोधि को प्राप्त होगा “से णं अणगारे भविस्सइ ईरियासमिए जाव सुहुय हुयासणो इव तेयसा जलंते-” इस अगारावस्था में वह ईर्यासमिति आदि पांच समिति का पालन करेगा, यावत् अच्छीतरह जलती हुयी अग्नि की तरह वह अपने तैज से चमकेगा “तस्स णं भगवओ अणुत्तरेण णाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्जवेणं मद्दवेणं लाघवेणं खंतीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं सव्वसंजम सुचरियतवफलणिब्बाण-भग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स—” अनुत्तरज्ञान से-अनुत्तरदर्शन से-अनुत्तरचारित्र से-अप्रतिवद्ध विहार से-आर्जवसे—मार्दव से—लाघव से—क्षमा से गुप्ति से—त्यागसे-अनुत्तर सर्वसंयम से-सुचरित्र से-तप से फल से-एवं निर्वाण मार्ग से आत्मा को

उत्पन्न थशे, लोगथी वर्द्धित थशे, छतां ओ कामथी लिप्त थशे नडि, लोगोथी लिप्त थशे नडि, मित्र ज्ञाति, निजक संभंधिजन अने परिजनोभां लिप्त थशे नडि” “से णं तहारूपाणं थेराणं अंतिए—केवलं बोहिं बुज्झिहिइ—मुंडे भवित्ता अगारा-ओ अणगारियं पव्वइस्सइ” ते तो इकत तथाइप स्थाविरोनी पासो केवल बोधिने प्राप्त करशे. मुंडित थशे ओटले के अगारावस्थाभांथी अनगारावस्था प्राप्त करशे. से णं अणगारे भविस्सइ ईरिया समिए जाव सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते” आ अणुगारावस्थाभां ते ईर्यासमिति वगेरे पांच समितितुं पालन करशे. यावत् सारी रीते प्रवृत्तित अग्निनी जेम ते पोताना तेजथी अभकशे. “तस्स णं भगव-ओ—अणुत्तरेणं णाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्जवेणं मद्दवेणं लाघ-वेण खंतीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं सव्वसंजमसुचरिय तव फल णिब्बाण-भग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स” अनुत्तर ज्ञानथी, अनुत्तर दर्शनथी, अनुत्तर चारित्रथी, अप्रतिवद्ध विहारथी, आर्जवथी, मार्दवथी, लाघवथी, क्षमाथी, गुप्तिथी त्यागथी, अनुत्तर सर्व संयमथी, सुचरित्रथी, तपथी, इणथी, अने निर्माण मार्गथी

यमानस्य अनन्तम् अनुत्तरं कृत्स्नं प्रतिपूर्णं निरावरणं निर्व्याघातं केवलवर्ज्ञान-  
दर्शनं समुत्पत्स्यते । ततः खलु स भगवान् अर्हन् जिनः केवली भविष्यति,  
सदेवमनुजा-सुरस्य लोकस्य पर्यायं ज्ञायति, तद्यथा-आगतिं गतिं स्थितिं च्यवनम्  
उपपातं तर्कं कृतं मनोमानसिकं खादितं भुक्तं प्रतिसेवितम् आविष्कृतं रहःकर्म  
अरहा अरहस्य भागी तस्मिन्स्मिन् काले मनोवाक्यायोगे वर्तमानानां सर्वलोके  
सर्वजीवानां सर्वभावान् जानन् पश्यन् विहरिष्यति । ॥मू० १७४॥

भावित करते हुवे उस भगवान् दृढकुमार के—“अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे  
निरावरणे णिव्वाधाए केवलवरनाणदंसणेन समुपज्झिहिइ—” अनन्त-अनुत्तर-कृत्स्न-  
प्रतिपूर्ण-निरावरण-निर्व्याघात ऐसे केवल ज्ञान, और केवलदर्शन उत्पन्न होंगे—‘तए णं  
से भगवं अरहा जिणे केवली भविस्सइ—’ तब ये-दृढकुमार भगवान् अर्हन्त जिन  
केवली हो जावेंगे । “सदेवमाणुयासुरस्स लोगस्स परियायं जाणिहिइ, तं जहा  
आगइं, गइं, ठिइं चवणं, उववायं, तर्कं, कडं मणोमाणसियं खाइयं-भुत्तं-पडि  
सेवियं—” मनुज-देव-असुर सहित लोक की पर्याय को जान लेंगे, जैसे—आगतिक  
को-गति को-स्थिति को-च्यवन को-उपपात को तर्क को-कृत को मनोमा सिक  
को-खादित को-भुक्त को प्रतिसेवित को-प्रत्यक्ष में कृत को एकान्त में कृत  
को, इस तरह से-मनुज, देव, असुर सहित लोक की पर्याय को वे जानेंगे ।  
“अरहा अरहस्स भागी तं तं कालं मणवयणकायजोगे वड्डमाणणं सव्व-  
लोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे विहरिस्सइ—” इस तरह वे  
अनगार कि जिन को अप्रत्यक्ष कोई भी वस्तु नहीं रहेगी सावद्याचार से

आत्माने लावित करतां ते भगवान् दृढकुमारने “अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे  
निरावरणे णिव्वाधाए केवलवरनाणदंसणे समुपज्झिहिइ” अनन्त अनुत्तर  
कृत्स्न प्रतिपूर्ण निरावरण निर्व्याघात ऐसा केवलज्ञान अने केवलदर्शन उत्पन्न थशे.  
“तए णं से भगवं अरहा जिणे केवली भविरसइ” तब ये दृढकुमार भगवान् अर्हन्त  
जिन केवली थथ थशे. सदेवमाणुयासुरस्स लोगस्स परियायं जाणिहिइ, तं जहा  
आगइं, गइं, ठिइं, चवणं, उववायं, तर्कं, कडं, मणोमाणसियं खाइयं  
भुत्तं पडिसेवियं” मनुज, देव, असुर सहित लोक की पर्यायने जाणी वेशे, अटके  
के आगतिने, गतिने, स्थितिने, च्यवनने, उपपातने, तर्कने, कृतने, मनोमानसिकने  
खादितने, भुक्तने, प्रतिसेवितने प्रत्यक्षमां कृतने, एकान्तकृतने, आभ ते मनुज  
देव, असुर सहित लोक की पर्यायने जाणीशे. “अरहा अरहस्स भागी तं तं कालं  
मणवयणकायजोगे वड्डमाणणं सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे  
पासमाणे विहरिस्सइ” आ प्रमाणे ते अनगार के जेभना भाटे प्रत्यक्ष ऐवी केथ

टीका-तए णं से” इत्यादि-ततः खलु स दृढप्रतिज्ञो दारकः तेषु पूर्वोक्तेषु विपु-  
लेषु-प्रचुरेषु अन्नभोगेषु ‘यावत्’-यावत्पदेन-पानभोगेषु लयनभोगेषु वस्त्रभोगेषु  
इति समृद्धयते, तथा-शयनभोगेषु च नो समृद्धयति-आसक्तिं न करिष्यति नो  
गर्धिष्यति-गृद्धिमान् न भविष्यति, नोमूर्च्छिष्यति-मूर्च्छाभावं नो करिष्यति ना  
अध्युपपत्स्यते-तदेकमना नो भविष्यति । अमुमेवार्थं स दृष्टान् माह-“से जहा  
गामए” इत्यादि-यथा-येन प्रकारेण उत्पलं लोहप्रसिद्धं ‘नामकं’ इति वाक्पाल-  
ङ्कारे, पद्मोत्पलमिति वा, पद्ममिति वा-‘यावत्’-यावत्पदेन-‘कुसुममिति वा  
नलिनमिति वा सुभगमिति वा सुगन्धमिति वा पुण्डरीकमिति वा महापुण्डरीक-  
मिति वा शतपत्रमिति वा सहस्रपत्रमिति वा’ इति समृद्धयते, तथा-श-सहस्र-  
मिति वा-अत्र इतिशब्दः स्वरूपनिर्देशे, वा शाब्दो विकल्पे, पङ्के-कर्ममे जातं-

वर्जित होने के कारण सुस्पष्ट सकल आचारवाले होते हुवे उस उस काल  
में मन-वचन-काय-योग में वर्तमान इस लोक के समस्त जीवों के समस्त  
भावों को जानते हुवे, और-देखते हुवे भूमण्डल में विहार करेंगे ।

टीकार्थ-स्पष्ट है, परन्तु-इस में जो विशेषता है, वह इस प्रकार से  
है-वे दृढप्रतिज्ञदारक उन पूर्वोक्त विपुल अन्नभोगों में यावत्-पानभोगों  
में, तथा-लयनभोगों में वस्त्रभोगों में आसक्ति नहीं करेंगे, गृद्धियुक्त नहीं  
बनेंगे, मूर्च्छाभाव को नहीं धारण करेंगे, और-न उन में तल्लीन मन  
वाले होंगे, इस बात को दृष्टान्त द्वारा यों समझाया गया है-जैसे-पद्मोत्पल  
अथवा-पद्म, यावत्-कुसुम, अथवा-नलिन या-सुभग, या-सुगन्ध, या-पुण्डरीक, या  
-महापुण्डरीक, या-शतपत्र, या-सहस्रपत्र, ये सब कमलजाति के भेदरूप कमल

वस्तु आक्षेप रक्षेशे नहि सावधान्यारथी वर्जित होवा जहल सुस्पष्ट सकल आचारवाला  
थधने ते ते कालमां मनवचन, काय, योगमां वर्तमान आ लोकना समस्त लोकोने  
समस्त लोकोने जणुतां अने जेतां भूमंडलमां विहार करेशे.

टीकार्थः स्पष्ट छि. पणु आमां जे विशेषता छि ते आ प्रमाणे छि. ते दृढप्रतिज्ञ  
दारक ते विपुल अन्नभोगोमां यावत् पानभोगोमां, लयनभोगोमां, वस्त्रभोगोमां तेभज  
शयनभोगोमां आसक्त थशे नहि, गृद्धियुक्त जनशे नहि, मूर्च्छाभावयुक्त थशे नहि  
अने तेमां तल्लीन पणु थशे नहि. जेज वातने दृष्टान्त वडे आ प्रमाणे अभज-  
ववामां आवी छि के जेभ पद्मोत्पल अथवा पद्म यावत् कुसुम; अथवा नलिन के  
सुभग, के सुगन्ध, के पुण्डरीक, के महापुण्डरीक, के शतपत्र, के सहस्रपत्र आ. जधा  
कमल जातिना कमणो कर्म (कादव)मां उत्पन्न होय छि; पाणीमां दृद्धि पाये छि,

समुत्पन्न, जले संगृह्य-वृद्धिं गतमपि नोपलिप्यते-नोपलिप्तं भवति, पङ्करजसा, नोपलिप्यते जलरजसा, इत्थं दृष्टान्तमुक्त्वा दार्ष्टान्तिकमाह—‘एवमेव’ इत्यादि । एवमेव-अनेन प्रकारेणैव दृढप्रतिज्ञोऽपि दारकः कामैः जातोऽपि भोगैः संवृद्धो वृद्धिं गतोऽपि कामरजसा नोपलेप्यते-उपलिप्तो न भविष्यति, भोगरजसा नोपलेप्यते-उपलिप्तो न भविष्यति, तथा मित्रज्ञातिनिजकस्वजनसम्बन्धि परिजनेन—तत्र मित्राणि-सुहृदः, जातयः माता-पिता-भ्रात्रादयः निजकाः-स्वकीयाः पुत्रादयः, स्वजनाः-पितृव्यादयः सम्बन्धिनः—स्वश्वशुरपुत्रश्वशुरादयः, परिजनाः-दासीदामादयः एतेषां समाहारस्तेन सह नोपलेप्यते-उपलिप्तो नो भविष्यति । अपितु स खलु दृढप्रतिज्ञः अनगारो भविष्यति, कीदृशोऽनगारो भविष्यति? ईरियासमिह इत्यादि । ईर्यासमिह ईर्यासमिहे-युक्तः, ‘यावत् यावत्पदेन-भाषासमिह एषणासमिह आयानभंडमत्तनिकखेवणाममिह उच्चारपासवणखेलसिंघाणजल्लपरिष्ठापणिसाममिह मणगुप्ते वयगुप्ते कायगुप्ते गुप्ते गुप्तिदिह गुप्ते भयारी अममे अकिंचणे छिण्णगंधे

यद्यपि-कीचड से उत्पन्न होते हैं, जल में वृद्धि पाते हैं, परन्तु-फिर भी कीचड रजसे लिप्त नहीं होते हैं । जलरज से सम्बन्धित नहीं होते हैं, इसी प्रकार से-दृढप्रतिज्ञ भी दारक काम से उत्पन्न हुआ है-भोगों से संवर्धित हुआ है, फिर भी वह काम ज से उपलिप्त नहीं बनेगा, मित्रजनों से ज्ञातिजनों से माता पिता, भ्राता आदि वं से निजजनों से पुत्रादिकों से स्वजनों से पितृव्यादि कों से सम्बन्धित जनों से श्वशुर पुत्रश्वशुर आदि से, एवं परिजनों से दासीदास आदि कों से सम्बद्ध नहीं होगा । किन्तु वह दृढप्रतिज्ञ अनगार होगा । ईर्यासमिति का पालन करेगा, यावत् भाषा समिति का एषणा समिति का, आदानभण्डमात्र निक्षेपणसमिति का उच्चारणसवण खेल सिंघाण जल्ल परिष्ठापनिका समिति का पालन करेगा, मनोगुप्ति का वचन गुप्ति का कायगुप्ति का पालन करेगा यहां ऐसा समझना चाहिये । हित मितप्रिय वचन बोलना इसका नाम भाषासमिति है । इस

पण् छतां ओ शब्दवथी लिप्त यतां नथी. आभ ते दृढप्रतिज्ञ दारक पण् शब्दवथी उत्पन्न यथे लोकोथी संवर्द्धित यथे छतांओ ते शम्बरज्जथी उपलिप्त नहि यथे, मित्रजनोथी पुत्रादिजोथी स्वजनोथी पितृव्यादिजोथी संघंधीजनोथी श्वशुर, पुत्रश्वशुर वगैरेथी अने परिजनोथी, दासीदास वगैरेथी सम्बद्ध यथे नहि. पण् ते दृढप्रतिज्ञ अनगार यथे. धर्यासमितितुं पालन करेशे, यावत् भाषा समितितुं, ओषण्ण समितितुं, आदान लांडमात्र निक्षेपणसमितितुं उच्चारणसवण-खेल, सिंघाण जल्ल-परिष्ठापनिका समितितुं पालन करेशे. मनोगुप्ति, वचोगुप्ति, कायगुप्ति पालन करेशे. आभ अही सम्बन्धुं ओषण्णे, हित-मित प्रियवचन ओषण्णे तेनुं नाम ‘भाषा समिति छे.



छिण्णसोऽए निरुवलेवे कंसपईव मुक्ते।ए सखे इव निरंजणे जीवे विव अप्पडि-  
हयगई जच्चवाणगं विव जायरुवे आदरिसफलगे इव पगडभावे कुम्मे इव  
गुत्तिदिए, पुक्खरपत्तं व निरुवलेवे, गगणमिव गिरालवणे, अणिलो इव निरालए,  
चंदोइव सोमलेसे, सूरु इव दित्तेए, सागरो इव गंभीरे, विहग इव रव्वआ  
विप्पमुक्कं, मंदरो इव अप्पकंपे, सारथगलिलं इव सुद्धहियए, खग्गिविसागं इव  
एगजाए, भारंडपक्खीव अप्पमत्ते, कुंजरो इव सोंडीरो, वसभो इव जायत्थामे, सीहो  
इव दुद्धरिसे, वसुन्धरा इव सव्वफासविसहे' इति संग्राह्यम् । एतच्छाया च—भाषा-  
समित एषणासमित आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमितः उच्चारप्रस्रवणखेल-  
शिङ्घाणजल्लपरिष्ठापनिकासमितो मनोगुप्तो वचोगुप्तः कायगुप्तो गुप्तो गुप्ते-  
न्द्रियो गुप्तब्रह्मचारी अममः अकिञ्चनः, छिन्नग्रन्थः, छिन्नस्रोतः, निरुपलेपः,  
कांस्थपात्रीव मुक्तोयः, शङ्ख इव निरञ्जनः, जीव इव अग्रतिहतगतिः, जात-  
कनकमिव जातरूपः, आदर्शफलक इव प्रकटभावः, कूर्म इव गुप्तेन्द्रियः पुष्कर-  
पत्रमिव निरुपलेपः गगनमिव निरालम्बनः अनिल इव निरालयः, चन्द्र इव सोम-  
लेख्यः, सूर इव दीप्ततेजाः, सागर इव गम्भीरः, विहग इव सर्वतो विप्रमुक्तः,  
मन्दर इव अप्रकम्पः शारदसलिलमिव शुद्धहृदयः, खड्गविषाणमिव एकजातः,  
भारण्डपक्षीव अप्रमत्तः, कुञ्जर इव शोण्डीरः, वृषभ इव जातरथामा, सिंह इव  
दुर्द्वर्षः, वसुन्धरेव र्वस्पर्शविषहः-इति । तत्र भाषासमित—भाषासमितियुक्तः,  
एषणासमितः—एषणायां—भक्ताद्येषणायाम् उद्गमादिदोषवर्जनपूर्वकं समितः—समिति  
युक्तः, विशुद्धाहारादिग्रहणान्वेषणोपयोगयुक्त इत्यर्थः । तथा आदानभाण्डमात्रनिक्षे-  
पणासमितः—आदाने ग्रहणे—अस्य भाण्डामात्रयोरित्यनेन सम्बन्धः, प्रस्थासत्तिन्या-  
यात् साहचर्यात् देहली दीपन्यायाद् वा, भाण्डस्य—पात्रस्य मात्रस्य—वस्त्राद्युप-  
करणस्य च निक्षेपणायाम्—अवस्थापने समितः—प्रतिलेखनप्रमार्जनपूर्वकं प्रवृत्ति-

समिति से युक्त होना इसका नाम भाषासमिति युक्त है । भक्त आदिकी  
एषणा में उद्गमादि दोषवर्जनपूर्वक जो समित है न । इसका नाम एषणा-  
समिति है, अर्थात् विशुद्ध आहार आदि का ग्रहण करने और अन्वेषण करने में  
उपयोगयुक्त होना, उसका नाम—एषणासमित है । भाण्ड—पात्र—मात्र वस्त्रादि  
उपकरण का निक्षेपण रखने में एवं—अवस्थापन में समित होना, इसका

लक्ष्य वगेरेनी ओषणुभां उद्गमादि दोषवर्जनपूर्वक समित थसे, तेनुं नाम ओषणु  
समिति छे. ओटले के विशुद्ध आहार वगेरे अहणु करवा अने अन्वेषणु करवाभां  
उपयोग युक्त थपुं तेनुं नाम ओषणु समिति छे. लांड-पात्र-मात्र-वस्त्रादि उपकरणुना  
निक्षेपणुभां अने अवस्थानभां समितियुक्त थपुं तेनुं नाम आदानलांडमात्र निक्षेपणु



યુક્ત इत्थं, तथा—उच्चारप्रस्त्रवणखेलशिङ्घाणजल्लपरिष्ठापनिकाममिति:—तत्र उच्चारः—पुरीषं, प्रस्त्रवणं—मूत्र, खेलः—श्लेष्मा—उपलक्षणत्वान्निष्ठीवनस्यापि श्रूकइति भाषाप्रसिद्धस्यापि ग्रहणम् शिङ्घाणं नासिकामलं, जल्लः—स्वेदजमलम्, एतेषां परिष्ठापनिका, परिष्ठापना-परित्यागः, सैव परिष्ठापनिका, तस्या समितः—सम्-गुपयुक्तः, तथा—मनोगुप्तः—मनोगुप्तस्त्रिधा—तत्र आर्तशैद्र-ध्यानानुबन्धि कल्पनाजालवियोगरूपा प्रथमा १, शास्त्रानुसारिणी पर-लोकसाधिका धर्मध्यानानुबन्धिनी माध्यस्थ्यपरिणतिर्द्वितीया २, मनोवृत्तिनिरोधेन योगनिरोधावस्थाभाविनी आत्मरमणरूपा तृतीया ३, तदुक्तं योगशास्त्रे—

“विमुक्तकल्पनाजालं समत्वे सुप्रतिष्ठितम् ।

आत्मारामं मनस्तज्ज्ञं मनोगुप्तिरुदाहता ।१।” इति ।

નામ-આદાનભાષ્ડમાત્રનિક્ષેપણાસમિતિ હૈ, અર્થાત્-પ્રતિલેખન, પ્રમાર્જનપૂર્વક પ્રવૃત્તિ સે યુક્ત હોના. ઇસકા નામ આદાનભાષ્ડમાત્રનિક્ષેપણા સમિતિ હૈ । ઉચ્ચાર નામ-પુરીષકા હૈ, પ્રસ્ત્રવણ નામ-મૂત્ર કા હૈ, खेल નામ શ્લેષ્મા કા હૈ; ઉપલક્ષણ સે શ્રૂક કા મી યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ. । શિંગ્ઘાણનામ સે યહાં નાસિકા કા મલ ગૃહીત હોતા હૈ, (નાસામલં તુ સિંધાણં ઇતિ અમરઃ) । સ્વેદજ મૈલ કા નામ—જલ્લ હૈ. ઇનકી પરિષ્ઠાપનિકા મેં ત્યાગમેં સમિત હોના, ઇસકા નામ—ઉચ્ચારપ્રસ્ત્રવણखेलशिङ्घाणजल्लपरि-ष्ठापनसमिति હૈ । મનોગુપ્તિ-ત્રીન પ્રકાર કી હૈં, ઇનમેં-આર્ત શૈદ્ર ધ્યાનાનુ-બન્ધી કલ્પનાજાલ કા પરિત્યાગ વરના ઇસકા નામ પ્રથમ મનોગુપ્તિ હૈ—૧ શાસ્ત્રાનુસારિણી-પરલોક સાધિકા-ધર્મધ્યાનાનુબન્ધિની. એવં માધ્યસ્થ પરિણતિરૂપ દ્વિતીય મનોગુપ્તિ હૈ—૨ મનોવૃત્તિ કે નિરોધ સે યોગ નિરોધકરનેવાલી ભાવિની જો-આત્મરમણરૂપ ગુપ્તિ હૈ. વહ તૃતીય મનોગુપ્તિ હૈ. । યોગશાસ્ત્ર મેં કહા હૈ—

સમિતિ છે. એટલે કે પ્રતિલેખન, પ્રમાર્જનપૂર્વક, પ્રવૃત્તિયુક્ત થવું તે આદાન-લાંડ માત્ર નિક્ષેપણા સમિતિ છે. પુરીષનું નામ ઉચ્ચાર મૂત્રનું નામ પ્રસ્ત્રવણ, શ્લેષ્માનું નામ ખેલ છે. ઉપલક્ષણથી શ્રૂકનું પણ અહીં ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. શિંઘાણુ નામ અહીં નાસિકા મલ માટે પ્રયુક્ત થયેલ છે. (શિંઘાણં કાચપાત્રે ચ લેહ-નાસિકયર્મલે ઇતિ મેદિની કોષઃ) સ્વેદજમલનું નામ જલ્લ છે, એમની પરીષ્ઠા પનિકામાં-ત્યાગમાં સમિત થવું તેનું નામ ઉચ્ચાર પ્રસ્ત્રવણ ખેલ શિંઘાણુ જલ્લ પરિષ્ઠાપન સમિત છે. મનોગુપ્તિ ત્રણ પ્રકારની છે. આમાં આર્તશૈદ્રધ્યાનાનુબન્ધી કલ્પનાઓનો પરિત્યાગ કરવો તે પ્રથમ મનોગુપ્તિ છે. શાસ્ત્રાનુસારિણી પરલોક સાધિકા ધર્મધ્યાનાનુબન્ધિની અને માધ્યસ્થ પરિણતિરૂપ દ્વિતીય મનોગુપ્તિ છે. ૨, મનોવૃત્તિ ના નિરોધાવસ્થાભાવિની જે આત્મરક્ષણ ગુપ્તિ છે તે તૃતીય મનોગુપ્તિ છે. યોગશાસ્ત્રમાં

एवंविधया त्रिविधयाऽपि मनोगुप्त्या युक्त इत्यर्थः, तथा—वचोगुप्तः=वचन-  
गुप्तियुक्तः, वचनगुप्तिश्चतुर्विधा, तथाहि- सत्या १, मृषा २, सत्यामृषा ३,  
असत्यामृषा चेति। उक्तं च—

‘सच्चा तहेव मोसा य, सच्चा-मोसा तहेव य।

चउत्थी असच्चमोसाय, वयगुत्ती चउच्चिहा। (उत्त० २४ २२ गा०) इति,

छाया—“सत्या तथैव मृषा च, सत्यामृषा तथैव च।

चतुर्थ्यसत्यमृषा च, वचोगुप्तिश्चतुर्विधा। इति।

तथा-कायगुप्तः कायगुप्तियुक्तः, कायगुप्तिस्तु गमनागमनप्रचलनादि  
क्रियाणां गोपनम्, सा द्विविधा— चेष्टानिवृत्तिरूपं १, यथागमं

जिसमें—रूपना जाल विमुक्त हों, और—समत्व में जो सुप्रतिष्ठित हो—ऐसा  
मन आत्माराम है—आत्मारूपी उद्यान (वाग) है. इसमें—रमण करना मनोगुप्ति  
है.। इस प्रकार की तीन गुप्तियों से मनका युक्त होना इसका-नाम  
मनोगुप्ति से गुप्त होना है.। इसी प्रकार से वचनगुप्ति से युक्त  
होना सो—वचनगुप्ति से गुप्त होना है, वचनगुप्ति चार प्रकार की है,—सत्या-  
वचोगुप्ति—१ मृषावचोगुप्ति—२ सत्यामृषावचोगुप्ति—३ और—असत्यामृषावचो-  
गुप्ति है—४ उक्तञ्च—“सच्चा तहेव मोसाय सच्चा-मोसा तहेवय.।

चउत्थी असच्च मोसा-य वयगुत्ती चउच्चिहा—॥१॥

(उत्त० २४—२२ गाथा-) कायगुप्ति से युक्त होना इसका नाम—काय गुप्त है—१  
गमनाऽऽगमनादिरूप प्रचलनादि क्रियाओं का गोपन करना कायगुप्ति है—२  
यह कायगुप्ति चेष्टानिवृत्तिरूप. एवं—यथागम चेष्टा नियमनरूप से दो प्रकार की

કહ્યું છે કે જેમાં કલ્પનાબદ્ધ વિમુક્ત હોય અને સમત્વમાં જે સુપ્રતિષ્ઠિત હોય એવું  
મન આત્મારામ છે. આત્મારૂપી ઉદ્યાન છે. આમાં રમણ કરવું તે મનોગુપ્તિ છે.

“વિમુક્તકલ્પનાજાલં સમત્વે સુપ્રતિષ્ઠિતમ્। આત્મારામં મનરતજ્ઞૈર્મનેત્રગુપ્તિ-  
રુદાહતા ॥૧॥ આ બાતની ત્રણ ગુપ્તિઓથી મનયુક્ત થવું તેનું નામ મનોગુપ્તિથી  
ગુપ્ત થવું છે. આ પ્રમાણે વચનગુપ્તિથી યુક્ત થવું તે વચનગુપ્તિથી ગુપ્ત થવું છે.  
વચનગુપ્તિ ચાર પ્રકારની છે. સત્યામનો ગુપ્તિ ૧, મૃષા મનોગુપ્તિ ૨, સત્યામૃષામનો-  
ગુપ્તિ ૩, અને અસત્યામૃષામનો ગુપ્તિ ૪.

કહ્યું છે;—“સच्चा तहेव मोसाय सच्चा-मोसा तहेव य।

चउत्थी असच्चमोसाय वय गुत्तीचउच्चिहा ॥१॥

(ઉત્ત० ૨૪—૨૨ ગાથા) કાયગુપ્તિથી યુક્ત થવું તેનું નામ કાયગુપ્ત છે. ૧, ગમના-  
ગમન—વગેરે રૂપ પ્રચલન વિગેરે ક્રિયાઓનું ગોપન કરવું કાયગુપ્તિ છે. ૨. આ  
કાય-ગુપ્તિ ચેષ્ટા નિવૃત્તિરૂપ અને યથાગમ ચેષ્ટા નિયમનરૂપથી બે પ્રકારની હોય છે.

ચેષ્ટાનિયમરૂપા ચ ૨ । તત્ર પરીપહોપસર્ગાદિ સંભવેઽપિ યત્કાયોત્સર્ગાદિ-  
કરુણાદિના કાયસ્ય નિશ્ચલતાકરણમ્ સર્વયોગનિરોધાવસ્થાયાં વા સર્વથા યત્  
કાયચેષ્ટાનિરોધનં સા પ્રથમા । ગુરુમાપૃચ્છ્ય શરીરસંસ્તારકભૂમ્યાદિપ્રતિલેખના  
પ્રમાર્જનાદિસમયોક્તક્રિયાકલાપપુરસ્સરશયનાસનાદિવિધેયમ્, તતઃ શયનાસન-  
નિષ્કેપાદાનાદિપુ ષ્વેચ્છયા ચેષ્ટાપરિહારેણ નિયતા-શાસ્ત્રનિયમાનુસારિણી યા  
કાયચેષ્ટા સા દ્વિતીયેતિ । ઉક્તં ચ-

“ઉપસર્ગપ્રસજ્ઞેઽપિ કાયોત્સર્ગજુષો મુનેઃ ।

સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય કાયગુપ્તિર્નિગદ્યતે । ૧ ॥

શયનાઽસનનિષ્કેપાઽદાનસંક્લેમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચેષ્ટાનિયમઃ કાયગુપ્તિસ્તુ સા પરા । ૨ ।

હોતી હૈ । इनमें परीपह-और उपसर्ग के आने पर भी कायोत्सर्गकरणरूप  
क्रिया से शरीर को निश्चल कर देना होता है, अथवा-सर्वयोग निरोधावस्था में  
सर्वथा जो काय की चेष्टा का निरोध किया जाता है वह चेष्टा निवृत्तिरूप  
प्रथम कायगुप्ति है । गुरु को पूछ कर शरीर, संस्तारक, भूमि आदि की  
प्रतिलेखना प्रमार्जना आदि के समय में उक्त क्रियाकलाप पुरस्सर जो-शयन-  
आसन आदि करना होते हैं-सो उन शयनासनादिकों के निक्षेपन रखने में, एवं-  
आदान आदि कों में अपनी इच्छा से चेष्टा के परिहार से नियत(रखने में) अर्थात्  
गुरु को पूछकर के शयनआदि करना-शास्त्रनियमानुसारिणी जो काय चेष्टा है  
वह-यथागमचेष्टा नियमनरूप द्वितीयकायगुप्ति है । २

ઉક્તં મી હૈ—“ઉપસર્ગપ્રસજ્ઞેઽપિ” ઇત્યાદિ

અર્થાત્—“ઉપસર્ગ આને પર કાયોત્સર્ગ મેં મનકો

સ્થિર રાખના યહ કાયગુપ્તિ હૈ । તથા.

આમાં પરીપહ અને ઉપસર્ગની સ્થિતિમાં પણ કાયોત્સર્ગકરણરૂપ ક્રિયાથી શરીરને  
નિશ્ચલ કરવામાં આવે છે. અથવા સર્વયોગ નિરોધાવસ્થામાં જે સર્વથા કાયચેષ્ટાનો  
નિરોધ કરવામાં આવે છે. અથવા સર્વયોગ નિરોધાવસ્થામાં જે સર્વથા કાયચેષ્ટાનો  
નિરોધ કરવામાં આવે છે તે ચેષ્ટા નિવૃત્તિરૂપ પ્રથમ કાયગુપ્તિ છે. ૧, ગુરુની આજ્ઞા  
મેળવીને શરીર સંસ્તારક, ભૂમિ વગેરેની પ્રતિલેખના, પ્રમાર્જના વગેરેના સમયે  
ઉપર્યુક્ત ક્રિયાકલાપ પુરસ્સર જે શયન આસન વગેરે વિધેય હોય છે તે શય-  
નાસનનિષ્કેપના નિષ્કેપમાં અને આદાન આદેક્ષામાં પોતાની ઇચ્છાથી ચેષ્ટાના પરિહારથી  
નિયતા-શાસ્ત્રનિયમાનુસારિણી જે કાયચેષ્ટા છે તે દ્વિતીય યથાગમ ચેષ્ટા નિયમનરૂપ  
દ્વિતીય કાયગુપ્તિ છે, ૨.

કહ્યું છે—ઉપસર્ગ પ્રસજ્ઞેઽપિ કાયોત્સર્ગજુષોમુનેઃ ।

સ્થિરીભાવઃ શરીરસ્ય કાયગુપ્તિર્નિગદ્યતે ॥૧॥

तथा—गुप्तः—अशुभयोगनिग्रहरूपगुप्त्या युक्तः, गुप्तब्रह्मचारी—गुप्तं नवभिर्ब्रह्म-  
चर्यगुप्तिभी रक्षितं ब्रह्म=मैथुनविरमणं चरति तच्छीलः, अममः—ममत्वरहितः,  
अकिञ्चनः—धर्मोपकरणातिरिक्तवस्तुरहितः, छिन्नग्रन्थः—ग्रन्थाति—बध्नाति आत्मानं  
कर्मणेति ग्रन्थः, स द्विविधो द्रव्यभावभेदात् द्रव्यतो—हिरण्यादि, भावतो मिथ्या-  
त्वादिः, स द्विविधो ग्रन्थच्छिन्नो येन स तथा, छिन्नस्रोताः—छिन्नसंसार-  
प्रवाहः, निरुपलेपः—कर्मबन्धहेतुरुपलेपो रागादिस्तेन रहितः, निरुपलेपत्वमेव  
सदृष्टान्तमाह—कांस्यपात्रीव मुक्ततोयः—मुक्तं—त्यक्तं तोयमिव तोयं संसारबन्ध-

शयनासन इत्यादि—शयन में, आसन में, लेने में रखने में, चलने में

काय को यतना पूर्वक रखना यह कायगुप्ति है

इस प्रकार से वे दृढप्रतिज्ञ अनगार इन पूर्वोक्त समितियों का तथा—गुप्तियों  
का पालन करनेवाले होंगे। तथा—वे गुप्त होंगे, अशुभ योगनिग्रहरूप गुप्ति  
से युक्त बनेंगे, गुप्तब्रह्मचारी होंगे, नौ वाटिका (वाड) द्वारा मैथुन विरमणरूप  
ब्रह्म की रक्षा करेंगे उत्तम-ममत्व रहित होंगे, वे-अकिञ्चन होंगे, धर्मोपकरण से  
अतिरिक्त अन्य वस्तुओं से विहीन होंगे। जो आत्मा को कर्म के साथ  
वान्धता है, वह ग्रन्थ है, यह—ग्रन्थ द्रव्य-ग्रन्थ, और-भावग्रन्थ के भेद से दो  
प्रकार का है। हिरण्य-सुवर्ण आदि बाह्यग्रन्थ है, एवं-मिथ्यात्व आदि भावग्रन्थ  
है, इन दोनों प्रकार के ग्रन्थ से वे रहित होंगे। संसारप्रवाह जिनका नष्ट  
हो चुका है, ऐसे होंगे, निरुपलेप होंगे, कर्मबन्धन का हेतु जो रागादिक  
उपलेप हैं उससे रहित होंगे। इसी बात को सूत्रकार दृष्टान्तद्वारा पुष्ट करते

शयनासननिक्षेपादाऽऽनसकर्मणेषु च ।

स्थानेषु चेष्टा नियमः कायगुप्तिस्तु सऽपरा ॥२॥

आ प्रमाणे ते दृढप्रतिज्ञ अनगार आ पूर्वोक्त समित्योऽन् तथा गुप्तिभ्योऽहं  
पालन करेशे, तेभञ्ज तेभ्यो गुप्त थशे, अशुभयोग निग्रहरूप गुप्तिधी युक्त अनशे,  
गुप्त ब्रह्मचारी थशे, नव वाटिकाद्वारा मैथुन विरमणरूप ब्रह्मनी रक्षा कंशे उत्तम  
ममत्वरहित थशे, ते अकिञ्चन ङशे, धर्मोपकरणातिरिक्त वस्तुभ्योऽथी रहित थशे, जे  
आत्माने कर्मनी साथे गांधे छे ते ग्रन्थ छे, आ ग्रंथ द्रव्यग्रंथ अने भावग्रंथना  
इयभां जे प्रकारने छे, हिरण्य-सुवर्ण वगेरे बाह्य ग्रंथ छे अने मिथ्यात्व वगेरे  
भावग्रंथ छे, आ जन्ने प्रकारेना ग्रंथोऽथी ते रहित थशे, जेभनो संसारप्रवाह  
नाश पाभ्यो छे ज्योवा तेभ्यो थशे, निरुपलेप थशे, कर्मबन्धनना हेतुरूप रागादिक  
उपलेपोऽथी तेभ्यो रहित थशे, जेवा वातने सूत्रकार दृष्टान्त द्वारा पुष्ट करे छे जे

हेतुत्वात् स्नेहो येन स तथा । यथा-कांस्यपात्र्यां पतितमपि जलं लिप्तं न भवति तथा संसारबन्धहेतुस्तस्मिन्नुपलिप्तो न भविष्यतीत्यर्थः, शङ्ख इव निरञ्जनः—अञ्जनमिवाञ्जनं-द्वेपादिकं तस्मान्निर्गतः—तद्रहितः, यथा—शङ्खे किमपि कज्जलादिद्रव्यं स्थितिं न लभते तथैव तस्मिन्ननगारे द्वेपादिकं न स्थायतीत्यर्थः, जीव इा अप्रतिहतगतिः—जीवो यथा अव्याहतगत्या सर्वत्र याति, तथाऽसौ देशनगरादिषु अप्रतिबन्धविहारित्वेन वादादिषु कुतीर्थिकमतनिराकरणसामर्थ्योपेतत्वेन च अस्खलितगतिर्भविष्यतीति । जात्यकनकमिव जातरूपः—तपःसंयमादि-समुद्भूतनैर्मल्यः. यथा शोधितं सुवर्णं निर्मलं भवति तथैवासौ रागादिरहितत्वेन निर्मलो भविष्यतीति, आदर्शफलक इव प्रकटभागः—आदर्शफलको यथा प्रतिबिम्बितान् सुखाद्यवयवान् यथाऽवस्थितं प्रकटी करोति, तथा तत्कृतधर्मदेश-

है—“कांस्यपात्रीव मुक्ततोयः—” कांसे के पात्र में पड़ा हुआ पानी जिस प्रकार पात्र में लिप्त नहीं होता है—उसी प्रकार से संसार बन्धन का हेतु राग—द्वेष इनमें—उपलिप्त नहीं होंगे. । शङ्ख की तरह वे निरञ्जन होंगे, जैसे—शङ्खमें कज्जलादि द्रव्य ठहर नहीं सकता है, उसी प्रकार से इनमें राग द्वेपादिक नहीं ठहरेंगे जीव की तरह ये अप्रतिहतगतिवाले होंगे, जीव जिस प्रकार अपनी अव्याहतगतिद्वारा सर्वत्र चला जाता है, उसी प्रकार से—देश नगरादिकों में अप्रतिबन्धविहारी होने से, एवं-वादादिकों में कुतीर्थिक मत निराकरण करने की सामर्थ्य से युक्त होने से अस्खलित गतिवाले होंगे. । वे जातिमान् कनक के प्रकार होंगे, जिस प्रकार जात्यकनक—श्रेष्ठ सुवर्ण निर्मल होता है—उसी प्रकार से ये तपः संयमादि से समुत्पन्न निर्मलतावाले होंगे, । आदर्श—दर्पण जिस प्रकार अपने में प्रतिबिम्बित हुये सुखादि अवयवों को यथाऽवस्थित प्रकट करता

“कांस्यपात्रीव मुक्ततोयः” કાંસાના પાત્રમાં પડેલું પાણી જેમ તેમાં લિપ્ત થતું નથી. તેમજ સંસાર બંધન હેતુ રાગદ્વેષમાં તેઓ ઉપલિપ્ત થતા નથી શંખની જેમ તેઓ નિરંજન થશે. જેમ શંખમાં કાજલ વગેરે દ્રવ્યો સ્થિર થતાં નથી. તેમજ તેઓમાં રાગ દ્વેષાદિક સ્થિર થશે નહિ. જીવની જેમ તેઓ અપ્રતિહત ગતિવાળા થશે. જીવ જેમ પોતાની અવ્યાહત ગતિદ્વારા સર્વત્ર ગતિશીલ હોય છે, તેમજ દેશનગરાદિકોમાં અપ્રતિબંધ વિહારી હોવાથી અને વાદાદિકોમાં કુતીર્થિકમત નિરાકરણમાં સામર્થ્યયુક્ત હોવાથી તેઓ અસ્ખલિત ગતિવાળા થશે. તેઓ જાત્યકનકની જેમ થશે. જેમ જાત્યકનક—શ્રેષ્ઠ સુવર્ણ-નિર્મળ હોય છે, તેમ તેઓ તપ સંયમ વગેરેથી સમુત્પન્ન નિર્મલતાયુક્ત થશે. આદર્શ—દર્પણ જેમ સ્વપ્રતિબિંબિત મુખાદિ અવયવો તે યથાવસ્થિત પ્રકટ કરે છે તેમ તેઓશ્રીની ધર્મદેશનાથી મનુષ્યચિત્તરૂપ દર્પણમાં જીવાજીવાદિ

नया जनानां चित्तदर्पणे जीवाजीवादिसकलपदार्थाः प्रकाशिष्यन्ते, इत्यर्थः, कूर्म इव गुप्तेन्द्रियः—कूर्मः—कच्छपः, यथा कूर्मो भयकारणे समुपपागते संवृतसर्वेन्द्रियो भवति, तथैवासौ संसारभ्रमणभयाद् विषयकषायसंरक्षितसकलेन्द्रियो भविष्यतीति । पुष्करपत्रमिव निरुपलेपः—यथा कमलपत्रं जलसंयोगेऽपि जलेन लिप्तं न भवति, तथैवासौ जलतुल्यस्वजनविषये वसन्नपि तत्सम्बन्धरहितो भविष्यतीति, गगनमिव निरालम्बनः—यथाऽऽकाशो निरवलम्बस्तिष्ठति तथैवासौ कुलग्रामनगराद्यालम्बनवर्जितो भविष्यतीति, अनिल इव निरालयः पवन-इव गृहरहितः, अप्रतिबन्धविहारित्वात्, चन्द्र इव सौम्यलेश्यः—अनुपतापपरिणामसम्पन्नः, सूर इव दीप्ततेजः द्रव्यतः शरीरदीप्त्या, भावतस्तपःप्रभृतिना देदीप्यमानः, सागर इव गम्भीरः—

है. उसी प्रकार उनकी धर्मदेशना से मनुष्यों के चित्तरूप दर्पण में जीवा जीवादिरूप सकलपदार्थ प्रकाशित होंगे, । कूर्म-कच्छप जिस प्रकार भयकारणों के उपस्थित होने पर अपनी इन्द्रियों को गुप्त कर लेता है, उसी प्रकार से यह भी संसारपरिभ्रमणभयसे—विषय तापों से अपनी इन्द्रियों की रक्षा करने वाले होंगे. । जैसे—कमलपत्र जल के संयोग में भी उस से लिप्त नहीं होता है. उसी प्रकार से ये जल तुल्य स्वजनों के बीच में रहते हुवे भी उनके विषय में सम्बन्ध विहीन होंगे. । गगन की तरह ये निरालम्ब होंगे. । अनिल-वायु की तरह ये निरालय होंगे, अनिल को जैसे कोई गृह नहीं होता है, उसी प्रकार से अप्रतिबन्धविहारी होंगे. । चन्द्र के समान ये सौम्यलेश्यावाले होंगे सूर्य की तरह दीप्ततेज होंगे तेज द्रव्य-और भाव की अपेक्षा दो प्रकार का कहा गया है. इनमें शरीरादि की दीप्तिरूप द्रव्य तेज. और तप-आदि से होनेवाला तेज भावतेज है. । सागर की तरह ये गम्भीर होंगे, हर्ष-शोक

इय सकल पदार्थ प्रकाशित थशे. कूर्म-कच्छप जेम लय उपस्थित थाय त्यारे पोताना अंगोने संकेत्यी वे छ तेम तेओ पणु संसार-परिभ्रमण लयथी विषयतापोथी पोतानी छिन्दियेनी रक्षा करनार थशे. जेम कमलपत्र पाणीनी संयोगावस्थाभां पणु तेथी लिप्त थतुं नथी तेम तेओ पाणीनी जेम स्वजनोनी वर्ये रहैवा छतांये तेमना विषयभां संबंध विहीन थशे. गगननी जेम तेओ निरालंय थशे. आकाश जेम अवलंघन वगर छ तेम तेओ कुल, ग्राम नगर वगेरे अवलंघथी रहित थशे. अनिलवायुनी जेम तेओ निरालय थशे अनिलने जेम छे छ घर नथी तेम तेओ पणु अप्रतिबंध विहारी थशे. चन्द्रनी जेम ओओ सौम्य लेश्यायुक्त थशे. सूर्यनी जेम तेओ दीप्त तेजवाणा थशे तेज द्रव्य अने भावनी अपेक्षाये ये प्रकारनुं छे. आभां शरीरादिनी दीप्तिइय द्रव्यतेज अने तपःप्रभृतिथी जयमान तेज भावतेज छे.



હર્ષશોકાદિકારણસંયોગેऽપિ નિર્વિકારચિત્તઃ, વિહગ ઇવ સર્વતો વિપ્રમુક્તઃ—  
પક્ષિવત્સજ્જરહિતઃ, પરિવારપરિત્યાગાત્ નિયતવાસરહિતત્વાચ્ચ, મન્દર ઇવ અપ્ર-  
કમ્પઃ—મેરુવત્ પરિપહોપસર્ગપવનૈરવિચલિતઃ, શારદસલિલમિવ શુદ્ધહૃદયઃ—યથા  
શરદૃતૌ જલં નિર્મલં ભવતિ તથા રાગદ્વેપરહિતત્વાન્નિર્મલચિત્તો ભવિષ્યતીતિ,  
સ્વર્ણવિપાણમિવ એકજાતઃ સ્વર્ણી—આરણ્યજીવઃ તસ્ય વિપાણં—શૃંગં તદ્વદ્  
એકજાતઃ—એકાકી રાગાદિસહાયરહિતઃ । તથા—ભારણ્ડપક્ષીવ—ભારણ્ડશ્વાસૌ  
પક્ષી ચ ભારણ્ડપક્ષી, અયં દ્વિજીવર્કસ્ત્રિચરણવાન્ દ્વાભ્યાં ગ્રીવાભ્યાં દ્વાભ્યાં મુખા-  
ભ્યાં ચ યુક્તઃ, દ્વયોર્જિવિયોરેકમેવોદરં ભવતિ, સ ચાપ્રમત્ત એવ વિહરતિ. તદ્વત્

આદિ કારણોં કે મિલને પર ખી इनके चित्त में कोई क्षोभ उत्पन्न नहीं हो  
सकेगा. निर्विकार चित्तवाले होंगे । पक्षी की तरह सर्वतः विप्रमुक्त होंगे,  
सर्वसङ्ग से रहित रहेंगे, परिवार आदि के परित्याग से और—नियत आवास  
से रहित होने से इनका ममत्वरूप सम्बन्ध किसी के साथ नहीं रहेगा. ।  
मेरु—मन्दर की तरह ये अप्रकम्प होंगे, अर्थात् परीपह—उपसर्गरूप पवन इन्हें  
विचलित नहीं कर सकेगा, शारद सलिल की तरह शुद्ध होंगे—जिस प्रकार  
शारदऋतु में जल निर्मल रहता है उसी प्रकार राग-द्वेष रहित से ये निर्मल  
चित्त रहेंगे. स्वर्णी विपाण—गेंडोंकाशृङ्ग की समान ये एकजात होंगे रागादिरूप  
सहायकों से रहित होने के कारण एकाकी रहेंगे. । तथा—भारण्ड पक्षी की  
तरह अप्रमत्त होंगे, भारण्डपक्षी दो जीववाला होता है. इसके चरण तीन  
होते हैं—दो ग्रीवाओं से—दो मुखों से यह युक्त होता है, इन दो  
जीवों का पेट एक होना है. यह अप्रमत्त होकर विचरणशील होता है, इसी

સાગરની જેમ તેઓ ગંભીર થશે. હર્ષ શોક વગેરે કારણો હોવા છતાં એ તેમના  
ચિત્તમાં કોઈપણ જાતનો વિકાર ઉત્પન્ન થશે નહિ. તેઓ નિર્વિકાર ચિત્તવાળા થશે;  
વિહગની જેમ તેઓ સર્વતઃ વિપ્રમુક્ત થશે. તેઓ સર્વસંગથી રહિત થશે. પરિવાર  
વગેરેના ત્યાગથી અને નિયત આવાસથી રહિત હોવાથી તેઓ મમત્વરૂપ સંબંધ  
કોઈની સાથે બાંધશે નહિ. મેરુ—મંદરની જેમ તેઓ અપ્રકંપ થશે. એટલે કે પરી-  
પહ ઉપસર્ગરૂપ પવન તેમને વિચલિત કરી શકશે નહિ. શારદ સલીલની જેમ તેઓ શુદ્ધ  
થશે. જેમ શરદઋતુમાં પાણી નિર્મળ રહે છે તેમ તેઓ પણ રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી  
નિર્મળ ચિત્તવાળા થશે. ખર્ણી વિપાણ—ગેંડાઓના શીંગડાની જેમ તેઓ એક જાત  
થશે. રાગાદિરૂપ સહાયકોથી રહિત હોવા બદલ એકાકી રહેશે. તેમજ ભારંડ પક્ષીની  
જેમ અપ્રમત્ત થશે, ભારંડપક્ષી બે જીવયુક્ત હોય છે. નેને ત્રણ પગ હોય છે, બી  
ગ્રીવાઓ, બે મુખોથી તે યુક્ત હોય છે. આ બન્ને જીવોનું પેટ એકજ હોય છે,



અપ્રમત્તઃ-તપઃસંયમાદિધર્મરક્ષણે પ્રમાદરહિતઃ । કુઞ્જર ઇવ શૌન્ડીરઃ-હસ્તીવ શૂરઃ-વ.પાગાદિરિપુમઞ્જનશીલઃ । વૃષભ ઇવ જાતસ્થામા-વૃષભવત્ સંજાતપરાક્રમઃ । સિંહ ઇવ દુર્ધર્ષઃ-સિંહવત્ પરીપહાદિ મૃગૈર્દુરતિક્રમઃ । વસુન્ધરેવ સર્વસ્પર્શવિપહઃ-વસુન્ધરા-પૃથ્વી યથા સર્વં સહ્યમસહ્યં વા સ્પર્શં સહતે તથૈવાગ્ન્યમ્ અનુકૂલપ્રતિકૂલપરીપહોપસર્ગસહનશીલઃ । તથા-સુહુતહુતાશન ઇવ તેજસા જ્વલન્-યથા ઘૃતાઘાહુતિભિરગ્નિઃ પ્રદીપ્તો ભવતિ તથૈવાગ્ન્યમપિ તપઃસંયમતેજસા જ્વલન્-દીપ્યમાનોऽનગારો ભવિષ્યતીતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ, તસ્ય-પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટય સ્વલુભગવતોऽનગારસ્ય અનુત્તરેણ-સર્વોત્કૃષ્ટેન જ્ઞાનેન, એવમ્-અનેન પ્રકારેણ-અનુત્તરત્વવિશિષ્ટેન દર્શનેન 'અનુત્તર' શબ્દસ્ય ચારિત્રાદૌ પ્રત્યેકત્ર સમ્બન્ધઃ, તતશ્ચ અનુ-

પ્રકાર યે મી તપસંયમ આદિકે સંરક્ષણ મેં પ્રમાદ રહિત હેાંગે । કુઞ્જર-હાથી કે સમાન યે શૂર હેાંગે, અર્થાત્-ઈપ આદિ રિપુપુજોં કા મઞ્જન શીલ હોંગે । વૃષભ કી તરહ યે જાત સ્થામા હેાંગે-ઉત્પન્ન પરાક્રમવાલે હેાંગે, સિંહ કી તરહ દુર્ધર્ષ પરીપહાદિમૃગોં દ્વારા દુર્ધર્ષ હેાંગે, પૃથ્વી વીં તરહ સર્વ સ્પર્શ સહ હેાંગે-પૃથ્વી જિસ પ્રકાર સર્વસહા એવં-અસહ્ય સ્પર્શ કો મી સહન કરતી હૈ-ઉસી પ્રકાર સે અનુકૂલ-પ્રતિકૂલ પરીપહ એવં-ઉપસર્ગ કા યે સહન કર્તા હેાંગે । સુહુત હુતાશન કી તરહ યે તેજ સે સદા જાજ્વલ્યમાન રહેંગે । જિસ પ્રકાર ઘૃતાદિક આહુતિ સે અગ્નિ અધિકાધિક પ્રજ્વલિત હો જાતી હૈ. ઉસી પ્રકાર યે મી તપ-સંયમ કે તેજ સે દેદીપ્યમાન અનગાર હેાંગે, ઇસ પ્રકાર સે ઇન પૂર્વોક્ત વિશેષણોં સે વિશિષ્ટ હુવે ઇન અનગાર ભગવાન્ દૃઢપ્રતિજ્ઞ કે સર્વોત્કૃષ્ટ જ્ઞાનસે-સર્વોત્કૃષ્ટ દર્શન સે સર્વોત્કૃષ્ટ ચારિત્ર સે-સર્વોત્કૃષ્ટ

આ અપ્રમત્ત થઇને વિચરણશીલ હોય છે. તેમ તેઓ પણ તપ સંયમ વગેરેનું રક્ષણ કરવામાં પ્રમાદ રહિત થશે, કુન્જર-હાથી ની જેમ તેઓ શૂર હશે. એટલે કે ક્ષાય વગેરે રિપુઓને નષ્ટ કરવામાં સમર્થ થશે. વૃષભની જેમ તેઓ જાતસ્થામા થશે. ઉત્પન્ન પરાક્રમવાળા થશે. સિંહની જેમ દુર્ધર્ષ-પરીપહાદિરિપ મૃગો વડે દુર્ધર્ષ હશે. વસુન્ધરાની જેમ સર્વસ્પર્શ સહ થશે, પૃથ્વી જેમ સર્વે સહ્યઃ-અસહ્ય સ્પર્શને પણ સહન કરે છે તેમ અનુકૂલ-પ્રતિકૂલ પરીપહ અને ઉપસર્ગને તેઓ સહન કરતા થશે. સુહુત હુતાશનની જેમ તેઓ તેજથી સદા જ્વલવ્યમાન રહેશે. જેમ ઘૃત વગેરેની આહુતિથી અગ્નિ વધારે અને વધારે પ્રજ્વલિત થઇ જાય છે તેમ તેઓ પણ તપ સંયમના તેજથી દૈદીપ્યમાન અનગાર થશે. આ પ્રમાણે આ પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી વિશિષ્ટ થયેલા તે ભગવાન અનગાર દૃઢપ્રતિજ્ઞ સર્વોત્કૃષ્ટ જ્ઞાનથી, સર્વોત્કૃષ્ટ દર્શનથી, સર્વોત્કૃષ્ટ ચારિત્રથી સર્વોત્કૃષ્ટ

त्तरेण चारित्र्येण अनुत्तरेण आलयेन—स्त्रीपशुपण्डकादिरहितवसतिसेवनेन, अनुत्तरेण विहारेण—विचरणेन, अनुत्तरेण आर्जवेन—सारल्येन, अनुत्तरेण मार्दवेन—मृदुत्वेन, अनुत्तरेण—लाघवेन द्रव्यनोऽल्पोपकरणरूपेण, भावतः—कृपायतनुत्वरूपेण, अनुत्तरया क्षान्त्या—क्षमागुणेन, अनुत्तरया गुप्त्या—मनोवाक्यायगुप्त्या अनुत्तरया मुक्त्या निर्लोभताया, अनुत्तरेण सर्वसंयमसुचरिततपः फलनिर्वाणमार्गेण—सर्वसंयमस्य सर्वथा मनोवाक्यानां निरोधस्य, तथा सुचरितस्य—आशंसादिदोषरहितस्य तपसो यत्फलं निर्वाणं—निर्वाणरूपं फलं तस्य मार्गेण आत्मानं भावयमानस्य अनन्तम्—निरवसानम् अनुत्तरम्—सर्वोत्कृष्टं कृत्स्नं—सकलं, प्रतिपूर्णं—निःशेषं, निरावरणम्—आवरणवर्जितम्, निर्व्याघानम्—अव्याहतम् केवलव ज्ञानदर्शनं—केवलं—सर्वोत्कृष्टत्वात् सहायवर्जितम् अतएव वरं—श्रेष्ठं यद् ज्ञानदर्शनं तत्—केवलज्ञानं केवलदर्शनं च समुपस्यते । ततः खलु स भगवान् अर्हन् जिनः केवली भविष्यति, तथा सोऽन्तगारः सदेवमनुजासुरस्य लोकस्य पर्यायं ज्ञास्यति, तद्यथा—आगति—देवल्लोका

निखद्य स्थान से—पशु पण्डकादि वर्जित वसति के सेवन से—अनुत्तर विहार से अनुत्तर आर्जव से—सारल्य से—अनुत्तर अल्पोपकरणरूप द्रव्य से, एवं—कृपाय तनूकरणरूप भाव से—अनुत्तरक्षमागुण से—अनुत्तरगुप्ति से अनुत्तर निर्लोभतारूप मुक्ति से अनुत्तर सर्वसंयम के—मन वचन काय के—विरोध के तथा—सुचरित—आशंसादि दोष रहित तप के निर्वाणरूप फलके मार्ग से आत्मा को भावित करने से अनन्त निर्जरा से उभयलोक की भावना रहित मोक्षमार्ग से आत्मा को भावित करने से अनुत्तर, सर्वोत्कृष्ट, कृत्स्न—सकल, प्रतिपूर्ण, आचरण वर्जित और—अव्याहत ऐसा सर्वोत्कृष्ट होने से सहायवर्जित, अतएव—श्रेष्ठ केवलज्ञान और—केवलदर्शन को प्राप्त करेंगे, तब—वे भगवान् अर्हन् जिन केवली हो जावेगे, तथा सदेव मनुजासुर लोककी पर्याय का ज्ञाता हो जावेगे, तथा वे आगति को—देवल्लोकादि से मनुष्य गति

आलापथी, पशुपण्डकादि वर्जित वसतिकाना सेवनथी, अनुत्तर विहारथी, अनुत्तर आर्जवथी, सारल्यथी, अनुत्तर अल्पोपकरणरूप द्रव्यथी, अने कृपाय तनूकरणरूप भावथी, अनुत्तर क्षमागुणथी, अनुत्तर गुप्तिथी, अनुत्तर निर्लोभतारूप मुक्तिथी, अनुत्तर सर्व संयमथी, मन वचन कायना विरोधना तेमन् सुचरित—आशंसादि दोषरहित तेमना निर्वाणरूप ज्ञाना मार्गथी आत्माने लाटित करवाथी, अनन्त निरवसान, अनुत्तर, सर्वोत्कृष्ट, कृत्स्न सकल, प्रतिपूर्ण, आवरण वर्जित अने अव्याहत अथवा सर्वोत्कृष्ट होवाथी सहाय वर्जित अथो श्रेष्ठ केवलज्ञान अने केवलदर्शनने प्राप्त करशे, तयारे ते भगवान् अर्हन् जिन केवली हो जावेगे, तथा सदेव मनुजसुरलोकनी

दिभ्यो मनुजगतावागमनं, गतिं-मनुष्यलोकाद् देवादिगतिषु गमनम्, स्थितिं-  
देवल्लोकादिष्ववस्थितिम्, च्यवनं-देवल्लोकादायुःक्षयेण पतनम्, उपपातं-देवनार-  
कयोर्जन्म, तर्कं-विचारम्, कृतं विहितं, मनोमानसिकम्-मनस्येव व्यवस्थितं  
मानसिकं-मनोगतं विचारं, क्षयितं-क्षयं प्राप्तं, भुक्तं-खादितं, प्रतिसेवितं-  
भोग्यवस्तुजातसेवनम्, आविष्कर्म-प्रत्यक्षे कृतम्, रहःकर्म-एकान्ते कृतम् । एवं  
स संदेवासुरमनुजस्य सर्वान् पर्यायान् ज्ञास्यतीति । अन एव सोऽनगारः अरहा-  
नास्ति रहः-अप्रत्यक्षं किमपि यस्य स तथा-सर्वज्ञः, तथा अरहस्यभागी-सा-  
वद्याचरणवर्जितत्वेन न रहस्यम्-एकान्तं भजते यः स तथा=सुस्पष्टसकलाचारश्च  
सन् तस्मिन् तस्मिन् काले मनोवाक्काययोगवर्तमानानां सर्वलोके स्थितानां सर्व  
जीवानां सर्वभावान्-समस्तान् भावान् जानन् पश्यंश्च विहरिष्यति-विहारं  
करिष्यतीति । ॥सू० १७४॥

में आगमन को, गति को-मनुष्य लोक से देवादिगतियों में गमन को, स्थिति  
को-देवल्लोकादिकां में अवस्थिति को च्यवन को-देवल्लोक से आयुःक्षय के  
बाद चवन को, उपपात को-देवनारकों के जन्म को, तर्क को-विचार को कृत-  
किये हुवे को, मनोमानसिक को, मन में व्यवस्थित विचारधारा को, क्षपित को  
क्षयप्राप्त को, भुक्त को-खादित को, प्रतिसेवित को-भोग्यवस्तु जात के सेवन  
को, आविष्कर्म को-प्रत्यक्ष में किये हुवे को, रहःकर्म को-एकान्त में किये गये  
को-इस तरह से वे देव-मनुजाऽसुर सहित लोक की सब पर्यायों को जानेगे ।  
अतएव-वे अनगार अरहाजिन की दृष्टि में अप्रत्यक्ष कुछ भी नहीं रहेगा,  
सर्वज्ञ अरहस्यभागी-सावद्याचरणवर्जित होने के कारण सुस्पष्ट सकलाचार के  
पालक बने हुवे, उस उप काल में मनोवाक्काय यंग में वर्तमान इसलोक  
सम्बन्धी सर्वजनों के सर्व भावों को जानते हुवे और-देखते हुवे विहार करेंगे।सू० १७४।

पर्यायाना ज्ञाता थशे. त्वादे ते आगतिने-देव लोकादिथी मनुष्य गतिमां आगमनने  
मनुष्य लोकांथी देवदि गतिमां गमनने. स्थितिने-देवल्लोकादिकेमां अवस्थितिने  
च्यवनने देवल्लोकाथी आयुक्षय पथी पतनने. उपपातने-देवनारकेना जन्मने-तर्कने-  
विचारने. कृत- कहेलाओने. मनोमानसिकने मनमां व्यवस्थित विचारधाराने.  
क्षपितने-क्षय प्राप्तने. भुक्तने-खादितने. प्रतिसेवितने-भोग्यवस्तु जातना  
सेवनने. आविष्कर्मने-प्रत्यक्षमां करेला कर्मेने. रहःकर्मने, एकान्तमां आचरेलां  
कर्मेने. आ प्रमाणे ते देव मनुज असुर सङ्गत लोकनी सर्व पर्यायो ते ज्ञाथशे  
तेथी ते अनगार अरहाजननी दृष्टिमां अप्रत्यक्ष ओपुं कंठ रहेशे नहि.  
तेमने सर्व-प्रत्यक्ष थछ जशे. सर्वज्ञ अरहस्यभागी सावद्याचरण वर्जित होवाथी  
सुस्पष्ट सकलाचाराना पालक थयेला काणमां मनोवाक्काय योगमां वर्तमान छल्लोक  
सम्बन्धी सर्वजनाना सर्वभावाने ज्ञाथतां अने जेतां बिहार करशे. ॥१७४॥

मूलम्—तए णं दढपइन्ने केवली एयारूवेणं विहारेणं विहर-  
माणे बहूइं वासाइं केवलिपरियायं पाउणिता अप्पणो आउसेसं  
आभोएत्ता बहूइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ, बहूइं भत्ताइं अणसणाए  
छेइस्सइ—जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावैकेसलोए वंभचेरवासे अण्हाणगं  
अदंतवणं अणुवहाणगं भूमिमेजाओ फलहसेजाओ परघरपवेसो  
लद्धावलद्धाइं साणावमाणाइं परेसिं हीलणाओ निंदणाओ खिस-  
णाओ तज्जणाओ ताडणाओ गरहणाओ उच्चावया विरूवरूवा वाघी-  
सपरीसहा उवसग्गा गोमकंटगा अहियासिज्जंति तमहं आराहिस्सइ,  
चरिमेहि ऊत्तासनीसासेहि सिज्जहिइ, बुज्जहिइ, मुच्चिहिइ परि-  
निव्वाहिइ सत्त्वदुक्खणसंतं करेहिइ । ॥ सू० १७५ ॥

छाया—ततः खलु दृढप्रतिज्ञः केवली एतद्रूपेण विहारेण विहरन् गृहनि  
वर्षाणि केवलिपर्यायं पालयित्वा आत्मन आयुश्शेषम् आभुञ्ज्य बहूनि भक्तानि  
प्रत्याख्यास्यति बहूनि भक्तानि अनशनेन छेत्स्यति, यस्यार्थाय क्रियते नग्न-

“तए णं दढपइण्णे केवली—” इत्यादि—

मूलार्थ—“तए णं” इसके बाद—“दढपइन्ने केवली—” वे दृढप्रतिज्ञ केवली—  
“एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे—” इस प्रकार के विहार से विहार करते हुवे—  
“बहूइं वासाइं केवलिपरियायं—” अनेक वर्षों तक केवलीपर्याय को—  
“पाउणिता—” पालकर के—“अप्पणो आउसेसं आभोएत्ता—” एवं अपने आयु  
के अन्त को जान करके—“बहूइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ—” अपने अनेक भक्तों  
का प्रत्याख्यान करेंगे—“बहूइं भत्ताइं अणसणाए छेइसइ—” अनेक भक्तों

“तए णं दढपइण्णे केवली” इत्यादि ।

मूलार्थ—“तएणं” त्थार पछी “दढपइन्ने केवली” ते दृढप्रतिज्ञ केवली  
“एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे” आ प्रमाणे विहार करतां “बहूइं वासाइं केवलि  
परियायं” धण्णा वर्षो सुधी केवली पर्यायन्तु “पाउणिता” पालन करशे. “अप्पणो  
आउसेसं आभोएत्ता” अने पोताना आयुध्थना अंत समयने जाण्णिने “बहूइं  
भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ” पोताना धण्णा लक्ष्णोन्तु प्रत्याख्यानकरशे बहूइं भत्ताइं अण-

भावः केशलोचो ब्रह्मचर्यवासः अस्ना-कम् अदन्तर्णः अनुपानत्कम् भूमिशय्याः फलकशय्याः परगृहप्रवेशः लब्धापलब्धानि मानापमानाः परेषांहीलनाः निन्दनाः खिसनाः तर्जनाः ताडनाः गर्हणाः उच्चावचाः विरूपरूपाः द्वाविंशतिः परीषहा उपसर्गाः ग्रामकण्टकाः अधिसह्यन्ते, तमर्थम् आराधयिष्यति, चरमैरुद्धासनिः श्वासैः सेत्स्यति भोत्स्यते मोक्षयते परिनिर्वास्यति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यति। सू. १७५।

का अनशन द्वारा छेदन करेंगे-अर्थात् संधारा करेंगे “जसद्वाए कीरइ, णग्गभावे केसलोए वंमचेरवासे-” इस प्रकार भक्तों का प्रत्याख्यान करके, और-अनशन द्वारा उनका छेदन करके वे दृढप्रतिज्ञ केवली जिस अर्थ को सिद्ध करने के लिये साधुजनों द्वारा नग्नभाव-अचेलत्व-परिमित-वस्त्रधारणत्व-केशलुञ्चन ब्रह्मचर्य-वास-” “अण्हाणगं, अदंतवणं-अणुवहाणगं, भूमिसेज्जाओ, फलहसेज्जाओ, परघरपवेसो, लद्धावलद्धाई, माणावमाणाई-” स्नान नहीं करना-दन्तधावन करने का त्याग करना-पग में पगखां मोझा आदि को नहीं पहनना-भूमिपर शयन करना-प्रसंगवश पाट पर सोना-भिक्षादिके निमित्त पर घर में प्रवेश करना-लाभाऽलाभ-मानाऽपमान-“परेसिंहीलणाओ -निंदणाओ - खिसणाओ - तज्जणाओ - ताडणाओ - गरहणाओ-उच्चावचा - विरूपरूपा-” दूसर्गेद्वाराकृत हीलना-निन्दना-खिसना-तर्जना-ताडना-गर्हणा-अनुकूल प्रतिकूल नाना प्रकार के -“वावीसपरीसहा उवसग्गा गामकंटगा अहिया सिज्जंति-” वाइस परीषह, तथा-उपसर्ग एवं-इन्द्रियों के प्रतिकूल कंटक के समान शब्दादिक सहन किये जाते हैं-” तमइं आराहिस्सइ, चरमेहिं ऊसासनीसासेहिं

सणाए छेइस्सइ” धृष्टां लक्ष्मणं अनशनो वडे छेदन करे। “जसद्वाए कीरइ णग्गभावे केसलोए, वेयचेरवासे” आ प्रमाणे लक्ष्मणं प्रत्याख्यान करीने अने अनशन द्वारा तेमहुं छेदन करीने ते दृढप्रतिज्ञ केवली ने अर्थनी सिद्धि भाटे साधुजनों वडे नग्नभाव अचेलत्व परिमित वस्त्र धारत्व, केशलुञ्चन, ब्रह्मचर्यवास, “अण्हाणगं अदंतवणं अणुवहाणगं, भूमिसेज्जाओ फलहसेज्जाओ, परघरपवेसो. लद्धावलद्धाई, माणावमाणाई-” स्नान रहित रहें, दन्तधावनने त्याग करवे, पगखान्या पहिरवा नहि, भूमिपर शयन करवुं इलक पर सुवुं भिक्षादि भाटे पर घरमां वुं लाल अलाल, मान अपमान-“परेसिं हीलणाओ निंदणाओ खिसणाओ तज्जणाओ ताडणाओ गरहणाओ उच्चावचा विरूपरूपा” भीलन्या वडे करायेल हीलना-निन्दना, खिसना, तर्जना, ताडना. गर्हणा. अनुकूल प्रतिकूल अनेक लतनी “वावीसपरीसहा उवसग्गा गामकंटगा अहियासिज्जंति” आवीस परीषहो तेमज् उपसर्ग अने इन्द्रियोना प्रतिकूल शब्द वगेरे सहन करवामां आवे छे, “तमइं आराहिस्सइ, चरमेहिं, ऊसासनीसासेहिं सिज्जहिं, बुज्जहिं, मुच्चिहिं,

टीका—“तए णं” इत्यादि-ततः खलु दृढप्रतिज्ञः केवली एतद्रूपेण-पूर्वोक्तविधेन विहारेण विहरन्-विचरन् बहूनि वर्षाणि केवलपर्यायं पालयिष्यामनः-स्वस्य, आयुश्शेषम्-आयुषोर वसानम् आभुज्य-परिज्ञाय बहूनि भक्तानि प्रत्याख्यास्यति, ततो बहूनि भक्तानि अनशनेन छेत्स्यति । इत्थं भक्तानि प्रत्याख्याय अनशनेन छित्त्वा च स दृढप्रतिज्ञः केवली, यस्यार्थाय-यन्मोक्ष-निमित्तं क्रियते साधुभिः-नग्नभावः-अचेतत्वं-परिमितवस्त्रधारित्वं केशलोचः-स्वपरहस्तेन केशोत्पाटनं, ब्रह्मचर्यवासः-ब्रह्मचर्यधारित्वम्, अस्नानकम्-स्नानामात्रः अदन्तवर्णः-दन्तोज्ज्वलीकरणाभावः, अनुपानस्कम्-उपानत्परिधानाभावः,

सिञ्जिह्विह, बुज्जिह्विह, मुच्चिह्विह, परिनिव्वाहिह, सव्वदुक्खाणमंतं करेहिह-” उस-मोक्षरूपी अर्थ भी आराधना करेगे, और-आराधना करके अन्तिमश्वासोच्छ्वास से सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, मुक्त हो जावेंगे, परिनिर्वात शिथिलीभूत हो जावेंगे, एवं-समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ।

टीकार्थ-इस प्रकार के विहार से विचरते हुवे वे दृढप्रतिज्ञ केवली अनेक वर्षों तक केवली पर्याय में विराजमान रहेंगे । जब-उनके आयुकर्मका पूर्ण-रूप से अन्त होने का समय आ जावेगा, तब-वे इस बात को जानकर अनेक भक्तों का प्रत्याख्यान करदेंगे, अनशन द्वारा अनेक भक्तों का छेदन करदेंगे । इस प्रकार भक्त प्रत्याख्यान करके-एवं-अनशन द्वारा उसका छेदन करके, वे दृढप्रतिज्ञ केवली जिसके लिये साधुजन नग्नभाव धारण करते हैं । अर्थात्-परिमित वस्त्रों को रखते हैं-अपने हाथों से केशों का लुञ्चन करते हैं पूर्णरूप से ब्रह्मचर्यावस्था में रहते हैं. मनवचनकाय से स्नान करने का परित्याग करते हैं-दन्तधावन का सर्वथा परिहार करते हैं, पगरखे-मोजा का पहिरना

परिनिव्वाहिह, सव्वदुक्खाणमंतं करेहिह” ते अर्थनी आराधना करीने अन्तिम श्वासोच्छ्वासथी सिद्ध थय जशे. बुद्ध थय जशे. मुक्त थय जशे. परिनिर्वाताशयली-भूत थय जशे. अने समस्तदुःखानो अंत करशे.

टीकार्थ-आ प्रमाणे विहरता दृढप्रतिज्ञ केवली घण्टां वर्षों सुधी केवली पर्यायमां विराजमान रहेशे. ज्यारे तेमना आधुप्यनी सभासिनो-समय आवशेत्यारे तेओ आ बात ज्ञानीने अनेक लकतोलुं प्रत्याख्यान करशे. अनशन वडे घण्टा लकतोलुं छेदन करशे. आ प्रमाणे लकतप्रत्याख्यान करीने अने अनशन वडे तेमनुं छेदन करीने ते दृढप्रतिज्ञ केवली जेना भाटे साधुजन नग्नभाव धारण करे छे ओटवे के परिमित वस्त्रो राजे छे, पोताना हाथो वडे केशलुञ्चन करे छे. पूर्णरूपथी ब्रह्मचर्यावस्थाभां रहे छे. मन. वचन. कायथी स्नान करवानो परित्याग करे छे. दंतधावनो सर्वथा



उपलक्षणात् शकटाश्वादि वाहनराहित्यम्, भूमिशय्याः—भूमौ शयनानि, फलकशय्याः—फलकेषु शयनानि, आहाराद्यर्थं परगृहप्रवेशश्च । ‘भूमिशय्याः—फलकशय्याः’ इति पदद्वये ‘क्रियते’ इति बहुत्वेन विपरिणमय्य समन्वेतव्यमिति । तथा—तैः साधुभिः लब्धापलब्धानि-लाभालाभाः, मानापमानाः—हस्मानतिरस्काराः, तथा-परेषाम्-अन्येषाम्-परकृता इत्यर्थः, हीलनाः—मर्मोद्घाटनानि, निन्दनाः—निन्दाः—जुगुप्साभाषण-रूपाः, खिसनाः—‘धिकं त्वां मुण्ड !’ इत्यादिरूपाः, तर्जनाः—अङ्गुलि-प्रदर्शन-पूर्वकं ‘ज्ञास्यसि रे जाल्म !’ इत्यादिवचनरूपाः, गर्हणाः—‘चौरोऽयं लम्पटो-ऽयम्’ इत्यादिवचनरूपाः—तथा—उच्चावचा—अनुकूलप्रतिकूलाः, विरूपरूपाः—नाना प्रकाराः, द्वाविंशतिः—द्वाविंशतिसंख्यकाः परीषहाः—क्षुधादिरूपाः, उपसर्गाः—

छोड देते हैं । उपलक्षण से गाडी की सवारी करना, घोड़े आदि वाहन पर बैठना आदि-आदि को छोड देते हैं, भूमि पर शयन करते हैं, अथवा काठ के पट्टियो-तकथा आदिपर शयन करते हैं, आहार आदि प्रयोजन से परघर प्रवेश करते हैं, लाभालाभ में जो समान भाव रखते हैं, मानाऽपमान की जो थोड़ी सी भी अपेक्षा नहीं रखते हैं । तथा दूसरों द्वारा कृत हीलनाओं को—मर्मोद्घाटन वचनों को—निन्दाओं को जुगुप्सा भाषणरूप वचनों को—खिसनाओं को—“हे मुण्ड-? तुझे धिक्कार” इत्यादिरूप वचनों को तर्जनाओं को, अङ्गुली प्रदर्शनपूर्वक “हे जाल्म ? तुझे खबर पड़ेगी—” इत्यादि रूप वचनों को—गर्हणाओं को, “यह चोर है, यह—लम्पट है—” इत्यादिरूप वचनों को तथा—अनुकूल प्रतिकूल नाना प्रकार के क्षुधादिरूप २२ चाईस—परीषहों को, तथा देवादिकृत उपसर्गों को, एवं-ग्रामकण्टकों को—ग्रामों को—इन्द्रिय समूह

त्याग करे छे. पणरणा मोल पहेरता नथी. उपलक्षणी गाडीनी सवारी करवी. घोडा वगेरे वाहन पर जेसवुं वगेरेने त्यल दे छे. भूमि पर शयन करे छे. लाड्डाना पाटिया वगेरे पर सूवे छे. आहार आदि प्रयोजनोने लीधे ज परघरमां प्रवेश करे छे. लाभ अलाभमां. समानभाव राखे छे. मान अपमाननी जे लग्गीरे दरकार राखता नथी. तेमज भीजणो द्वारा करायेल डीलनाओने. मर्मोद्घाटक वचनोने. निंदाओने जुगुप्सा भाषणरूप वचनोने जिंसनाओने “हे मुण्ड तने धिक्कार छे !” वगेरे रूप वचनोने. तर्जनाओने अंगुली प्रदर्शनपूर्वक “हे जाल्म ! पछी तने जणर जणर पडशे” वगेरे रूप वचनोने. गर्हणाओने. “आ चोर छे. आ लम्पट छे” इत्यादिरूप वचनोने तेमज अनुकूल प्रतिकूल नाना प्रकारनी क्षुधादिरूप २२ प्रकारना परिषहोने तथा देवादिकृत उपद्रवोने अने ग्रामकण्टकोने. ग्रामोने इन्द्रियसमूहने दुःखोत्पादक



देवादिकृतोपद्रवाः, ग्रामकण्टकाः—ग्रामः इन्द्रियसमूहस्तस्य कण्टका इव कण्टकाः—  
इन्द्रियप्रतिकूलशब्दादयः. दुःखोत्पादकत्वान्मुक्तिमार्गे विघ्नहेतुत्वादेर्षां कण्टकत्वम्  
क्षुद्रजनरूक्षाऽऽलापा वा यस्य कुते अधिसहन्ते, तं-मोक्षरूपम् अर्थम्-आराधयि-  
ष्यति, आराध्य चरमैः अन्तिमैः उच्छ्वासनिश्वासैः सेत्स्यति, मवलकार्यकारितया  
सिद्धौ भविष्यति, भोत्स्यते—विमलकेवलान्ऽऽलोकेन सकललोकालोकं ज्ञास्यति.  
मोक्षते—पर्वधर्मभ्यो मुक्तो भविष्यति-परिनिर्वाप्त्यति समस्तधर्मकृतावकाररहितत्वेन  
स्वस्थो भविष्यति. सर्वदुःखानां—शरीरमनःसम्बन्धिसमस्तक्लेशानाम् अन्तं नाशं  
करिष्यति—अव्यावाधिसुखभाग् भविष्यतीत्यर्थः । ॥सू० १७५॥

शास्त्रमुपसंहारं ग्राह—

मूलम—सेवं भन्ते ! सेवं भन्ते ! भगवं गोयमे समणं भगवं  
महावीरं वन्दइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तपसा अप्पाणं  
भावेमाणे विहरइ । ॥सू० १७६॥

छाया—१देवं भदन्त ! तदेवं भदना ! इति भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं  
महावीरं वन्दते नमस्यति, वंदित्वा नमस्यित्वा संयमेन तपसा आत्मानं  
भावयमानो विहरति ॥सू० १७६॥

को- दुःखोत्पादक होने से एवं-मुक्तिमार्ग में विघ्न के हेतुभूत होनेसे कण्टक-  
रूप प्रतिकूल शब्दादिकीं को, अथवा-क्षुद्रजनों के रूक्षालापों को, जिसके  
निमित्त सहते हैं उस मोक्षरूप अर्थ की आराधना करके फिर वे-अन्तिम  
श्वासेच्छ्वास से सकल कार्य को कर चुकने से—कृतकृत्य हो जाने से सिद्ध  
हो जावेंगे, विमल केवल ज्ञानालोक से सकल लोकालोक का ज्ञाता बन  
जावेंगे, समस्त धर्मों से छूट जावेंगे, स्वस्थ हो जावेंगे, और—शरीरसम्बन्धी  
एवं-मन सम्बन्धी समस्त क्लेशों का नाश करेंगे, अर्थात्—अव्यावाधिसुख का  
मोक्ता बनेंगे. ॥ सू० १७५ ॥

छोवाथी અને મુક્તિમાર્ગમાં વિઘ્નના હેતુભૂત હોવાથી અને કંટકરૂપ પ્રતિકૂલ શબ્દા-  
દિકેને અથવા ક્ષુદ્રજનોના રૂક્ષ આલાપોને જેના માટે સહન કરે છે તે મોક્ષરૂપ  
અર્થની આરાધના કરશે. આરાધના કરીને પછી તેઓ અંતિમ શ્વાસોચ્છવાસથી સકલ  
કાર્યોને કરી લેવાથી કૃતકૃત્ય થઈ જવાથી સિદ્ધ થઈ જશે. વિમલ કેવલજ્ઞાનાલોકથી  
સકલ લોકલોકના જ્ઞાતા થઈ જશે સમસ્ત ધર્મોથી મુક્ત થઈ જશે. સ્વસ્થ થઈ જશે  
અને શરીર સંબંધી અને મનસંબંધી સમસ્ત ક્લેશોનો નાશ કરશે. એટલે કે તેઓ  
અવ્યાવાધ સુખ લોકતા થઈ જશે. ॥સૂ० ૧૭૫॥

ટીકા—“સેવં મંતે” इत्यादि—हे भदन्त । यद् भवद्भिरुक्तं तत् एवम्-  
इत्थम्, वास्तविकमिति यावत्, तदेवं भदन्त ? इति विप्सा भगवद्वचने श्रद्धा-  
तिशयं प्रकटयति, इति—अनेन प्रकारेण उक्त्वा भगवान् गौतमः श्रमणं  
भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्सित्वा संयमेन तपसा  
आत्मानं भावयमानो विहरतीति ॥सू० १७६॥

श्री

अथ राजप्रश्रीयसूत्र य प्रशस्तिः—

गुर्जराभिधदेशेऽरिमन् पुरं वीरमगामकम् ।

आरण-श्रावः श्रेणिसौधमण्डि-वीथिकम् ॥ १ ॥

ग्रामाद् ग्रामान्तरं पङ्क्तिः साधुभिर्विहरन्निह ।

निर्वोढुं सांसीं यात्रां परुद्वैशाख आगमम् ॥ २ ॥

‘સેવં મંતે-? સેવં મંતે-?’ ભગવં યોગમે—‘इत्यादि—

મૂલાર્થ—‘સેવં મંતે-? સેવં મંતે-?’ હે ભદન્ત-? જૈસા આપને કહા હૈ  
વહ વૈસા હી હૈ, અર્થાત્—આપને જો અપની દિવ્યધ્વનિ દ્વારા પ્રકટ કિયા  
હૈ વહ વાસ્તવિક હી હૈ સર્વથા સત્ય હી હૈ- । इस प्रकार कहकर—“भगव  
गोयमे—” भगवान् गौतमने ‘समणं भगव वंदइ नमंसइ—’ श्रमण भगवान्  
को वन्दना की गुणतुति की, और-उन्हें नमस्कार किया—“वन्दित्ता नमंसित्ता  
संजमेणं तपसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ—” वन्दना नमस्कार कर फिर—वे  
संयम से और—तप से आत्मा को भावित करते हुवे अपने स्थान पर  
विराजमान हो गये ।

ટીકાર્થ—સ્પષ્ટ હૈ—‘સેવં મંતે-? સેવં મંતે-?’ એના જો દો બાર કહા  
ગયા હૈ વહ ભગવદ્વચન મેં શ્રદ્ધાતિશય પ્રકટ કરને કે લિયે કહા ગયા હૈ. ॥સૂ० ૧૭૬

‘સેવં મંતે ? સેવં મંતે ? ભગવં ગોયમે इत्यादि ।

મૂલાર્થ—“સેવં મંતે ! સેવં મંતે !” હે ભદન્ત ! જે પ્રમાણે આપશ્રીએ કહ્યું  
છે તે તેમજ છે એટલે કે આપશ્રીએ પોતાની દિવ્યધ્વનિદ્વારા જે કંઈ કહ્યું છે તે  
વાસ્તવિક જ છે. સર્વથા સત્ય છે આ પ્રમાણે કહીને “ભગવં ગોયમે” ભગવાન ગૌતમે  
સમણં ભગવં વંદइ નમंसइ” શ્રમણ ભગવાનને વંદના કરી; ગુણ સ્તુતિ કરી અને  
તેમને નમસ્કાર કર્યાં “વંદિત્તા નમंसિત્તા સંજમેણં તપસા અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરइ”  
વંદના તેમજ નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપશ્રી આત્માને ભાવિત કરતાં  
પોતાના સ્થાને વિરાજમાન થઈ ગયા.

ટીકાર્થ સ્પષ્ટ છે. “સેવં મંતે ! સેવં મંતે !” આમ જ બે વખત કહેવામાં  
આવ્યું છે તે ભગવદ્ વચનમાં અતિ શ્રદ્ધા પ્રગટ કરવા માટે છે. ॥ ૧૭૬ ॥

પુરે વીરમગામેઽસ્મિન્ સદ્ધર્મન્યા વ્યથામ્ ।  
 રાજપ્રશ્નીયસૂત્રસ્ય ટીકામેનાં સુવોધિનીમ્ ॥ ૩ ॥  
 વૈશાખસ્ય સિતે પક્ષે તૃતીયાયાં ગુરોર્દિને ।  
 ત્રયોદશાધિકે વર્ષે દ્વિસહસ્રે ચ વૈક્રમે ॥ ૪ ॥  
 અત્રત્યઃ સદ્યો મિલત્સમુદયઃ શ્રી જૈનસદ્ધો મિથઃ—  
 પ્રેમાઽભક્તહૃદઃ સદા નિજકૃતૌ ધર્મે ચ વદ્ધાઽઽદરઃ ॥  
 શુદ્ધસ્થાનકવાસિધર્મમહિમપ્રોદ્ધાવકઃ શ્રાવકા—  
 ઽઽચારૈઃ સ્વ્યાતિમુપાગતો ત્રિજગતે સમ્યક્ત્વસંશોભિતઃ ॥૫॥

### “ પ્રશસ્તિ કા અર્થ ”

ગુજરાત પ્રાંત મેં વીરમગામ નામકા શહેર હૈ, યહાં કે માંગ દુકાનો  
 એવં શ્રાવકજનોં કે સુન્દર-સુન્દર ઘરોં સે યુક્ત હૈં । એક ગામ સે દૂસરે ગામ  
 મેં વિહાર કરતે હુવે છહ મુનિયોં કે સાથ-યહાં સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કાને  
 કે બિયે ગતવર્ષ કે વૈશાખ માસ મેં અર્થાત્ વિ.સંવત્ ૨૦૧૨ કે વૈશાખમેં આયે । યહાં કે  
 શ્રીસંઘ કી યહીં પર વિરાજને કી વિનન્તી સે યહાં મૈને રાજપ્રશ્નીય સૂત્ર કી ઇસ  
 સુવોધિની ટીકા કો સમ્પૂર્ણ કિયા. । યહ સમય વૈશાખ શુક્લ અક્ષય તૃતીયા  
 ગુરુવાર વિક્રમ સંવત્ ૨૦૧૩ કા થા. । યહાં કા જૈન શ્રીસંઘ શુદ્ધ સ્થાનકવાસી ધર્મ  
 મેં તત્પર હૈ, ધર્મ કે પ્રતિ ઇસકે હૃદય સે વહુત અધિક આદરભાવ હૈ, ઔર-  
 યહ શ્રી સંઘ પ્રેમાલુ હૈ, તથા શુદ્ધ સ્થાનકવાસી ધર્મ કાં દીપાને વાલા હૈ. હૃદય  
 મેં ઇસકે અતિ અધિક દયાભાવ વના રહતા હૈ । શ્રાવક સમ્બન્ધી આચાર  
 વિવાર સે યહ પ્રસિદ્ધિ કો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ, જૈનધર્મ કે પ્રતિ અધિક

### પ્રશસ્તિનો અર્થ:—

ગુજરાત પ્રાંતમાં વીરમગામ નામક એક નગર છે આ નગરની શેરીઓ અને દુકાનો  
 શ્રાવકજનોના લગ્ન મકાનોથી યુક્ત છે એક ગામથી બીજે ગામ વિહાર કરતાં કરતાં છ  
 મુનિઓની સાથે વૈશાખ માસમાં અહીં સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે આવ્યા અહીં-  
 ના “શ્રીસંઘે” આપશ્રીને અહીંજ બિરાજવાની વિનંતી કરી તે તે સમયમાં જ  
 મેં ત્યાં રહીને રાજપ્રશ્નીય સૂત્રની આ સુવોધિની ટીકા સંપૂર્ણ કરી આ સમય  
 વૈશાખ શુક્લ અક્ષય તૃતીયા ત્રિક્રમ સંવત ૨૦૧૩ ગુરુવારનો હતો અહીંનો જૈન  
 શ્રીસંઘ શુદ્ધ સ્થાનકવાસી છે; ધર્મ પ્રત્યે એના હૃદયમાં ખૂબજ આદરભાવ છે  
 આ શ્રીસંઘ પ્રેમળ છે તેમજ શુદ્ધ સ્થાનકવાસી ધર્મને દીપાવનાર છે એના હૃદય  
 માં અત્યધિક દયાભાવ નિવાસ કરે છે શ્રાવક સંબંધી આચારવિચારોથી એ જગતમાં  
 પ્રસિદ્ધ છે જૈનધર્મ પ્રત્યે અધિકાધિક અનુરાગી હોવા બદલ સમ્યક્વથી સુશોભિત

देवाधिदेवे भुवनैकनाथे तीर्थङ्करे तत्कथिते च धर्मे ।  
श्रद्धां दधानं प्रतिवेश्म भाति सुश्राविकाश्रावकवृन्दमत्र ॥६॥  
आचारपूताः समदृष्टिभूता जैनागमाऽऽचारनिदर्शरूपाः ॥  
अस्मिन् पुरे सन्ति मृदुस्वाभावा जैनाः ममस्ता गुरुभक्तिभाजः ॥७॥

इतिश्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-  
कलापालाप-प्रविशुद्भगवत्पद्मनैकग्रन्थ-निर्मापक-वादिमानमर्दक श्री शाह  
छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त 'जैनशास्त्राचार्य' पदभूषित-कोल्हापुर-  
राजगुरु - बालब्रह्मचारि - जैनशास्त्राचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-  
घासीलालव्रतिविरचितायां सुवोधिनीख्यायां व्याख्यायां  
“राजप्रश्रीयसूत्रम्” सम्पूर्णम्

अनुरागी होने के कारण यह सम्प्रत्यक्ष से सुशोभित है । भुवनैकनाथदेवाधि-  
देव तीर्थंकर के ऊपर, एवं-तीर्थङ्कर प्रतिपादित धर्म के ऊपर श्रद्धाशील श्रावक-  
एवं-श्राविकाएँ हाएक घर में यहां हैं । इन सबों का आचार-विचार जैन-  
मर्यादा के अनुरूप है दूसरों के लिये ये-इस विषय में सर्वथा अनुकरणीय हैं ।  
इनका स्वभाव मृदु है, यहां के श्रावको काचित्त गुरु की धर्मभक्ति में सदा  
प्रेमयुक्त बना रहता है, इन्ही सब कारणों से ये समदृष्टि हैं ॥

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत  
राजप्रश्रीयसूत्र की 'सुवोधिनी' व्याख्या समाप्त ॥  
॥ राजप्रश्रीयसूत्र समाप्त ॥

छे भुवनैकनाथ-देवाधिदेव तीर्थंकर पर अने तीर्थंकर प्रतिपादित धर्म पर श्रद्धाशील  
श्रावक अने श्राविकाओ अडीं दरेकेदरेक घरमां निवास करे छे आ सर्वनां आचार-  
विचारो जैन मर्यादाअनुसरे छे जीवजाओना भाटे ओओ आ जागतमां संपूर्णपण्णे अनु-  
करणीय छे ओमनो स्वभाव मृदु छे अडींना श्रावकोअनु चित्त अइनी धर्मलक्षितमां  
अहा प्रेमयुक्त अनी रहे छे आ अघा करण्णोथी ओ अघा समदृष्टि छे ”

श्री जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री घासीलालजी महाराजकृत  
राजप्रश्रीयसूत्रनी सुवोधिनी व्याख्या समाप्त

परुद्वैशाखो इति गतवर्षवैशाखे इत्यर्थः



